स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्गत अधिनियम संख्या 10, 1999 द्वारा स्थापित)

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGZY/BY-08
फ़िज़ियोलॉजी

प्रथम खण्ड

प्राणी शरीरक्रियाविज्ञान-I

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, इलाहाबाद - 211013

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGZY/BY-08
फ़िज़ियोलॉजी

खंड
1

प्राणी शरीरक्रियाविज्ञान—1

इकाई 1

पोषण, अशन, पाचन 7

इकाई 2

श्वसन 35

इकाई 3

परिसंचरण 61

इकाई 4

उत्सर्जन 82

इकाई 5

परासरणीय एवं आयनी नियमन 103

फिज़ियोलॉजी

फिज़ियोलॉजी अर्थात् शरीरक्रियाविज्ञान जीवधारियों तथा उनके रचक भागों के कार्यों का अध्ययन है। आप सजीवों में अवकोशिका स्तर से लेकर समन्वित सम्पूर्ण जीवधारियों में कार्य करने वाली क्रियाविधियों का भौतिक एवं रासायनिक तौर पर अध्ययन करेंगे।

कोशिका जैविकी (LSE-01) के पाठ्यक्रम द्वारा आप उस अंतर्निहित एकता से परिचित हो गए होंगे जो कोशिकाओं के कार्य करने में पायी जाती है। आपने उस पाठ्यक्रम में सीखा था कि पौधों तथा प्राणियों की आण्विक क्रियाविधियों में एक अति सुव्यक्त समानता पायी जाती है भले ही वे अपचयी दिशामार्ग की क्रियाविधियां हो अथवा जैव संश्लेषण की। आप देखेंगे कि कोशिकीय कार्यों को समझने का आधार प्रदान करने वाली संकल्पनाएं तथा सिद्धांत बहुत ज्यादा नहीं हैं क्योंकि विकास का क्रम संरक्षी भी है तथा नवनिर्माता भी। फिर भी, यह एक असाधारण बात है कि समानताएं कोशिका स्तर तक ही सीमित हैं और पौधों तथा प्राणियों के उच्चतर स्तरों पर उनकी कार्यप्रणाली में एक विशाल विविधता देखने को मिलती है। आप देखेंगे कि संघटना के निम्नतर स्तरों पर अब भी समानताएं मौजूद हैं और अंतर उच्चतर पौधों एवं उच्चतर प्राणियों के बीच बढ़ता ही चला गया है।

उदाहरण के लिए, पौधों में अपने आहार का संश्लेषण करने हेतु एक विलक्षण क्रियाविधि विकसित हुई है और प्राणियों को विषमपोषी होने के कारण अपने पोषण के लिये पौधों पर निर्भर होना पड़ता है। इसलिये पोषण-विधि के अलावा अंतर्गृहित आहार के पाचन-अवशोषण आदि की क्रिया भी पौधों तथा प्राणियों में अलग-अलग होती है। प्राणियों में एक सुगठित पाचन-तंत्र एवं उससे संबद्ध ग्रंथियां विकसित हो चुकी हैं। उनमें एक कारगर पम्पिंग-क्रियाविधि पर आधारित परिवहन तंत्र होता है ताकि उसके द्वारा पोषक तत्वों तथा अन्य पदार्थों का वितरण, श्वसन गैसों का पहुंचाना और अपशिष्ट पदार्थों का निकालना हो सके। पौधों में हृदय जैसी पम्प व्यवस्था तो नहीं होती, फिर भी उनमें एक परिवहन-तंत्र होता है जिसके द्वारा विभिन्न खनिज, जल, आहार, अणु तथा अन्य पदार्थ जैसे कि हॉर्मोन पादप के सभी भागों को पहुंचाए जाते रहते हैं। श्वसन क्रियाविधि कोशिकीय स्तर पर तो समान ही होती है मगर जीवधारी स्तर पर गैस विनिमय के लिये पौधों तथा प्राणियों में अलग-अलग तंत्र विकसित हुए हैं।

एक महत्वपूर्ण कार्यिकीय अंतर यह है कि पौधों में निम्नतर प्राणियों की तरह उद्दीपनों के प्रति अनुक्रिया होने के बावजूद उनमें उच्चतर प्राणियों के जैसा कोई सुगठित तंत्रिका-तंत्र नहीं होता।

फिज़ियोलॉजी के इस पाठ्यक्रम में प्राणियों तथा पौधों की आंतरिक क्रियाविधियां एवं उनसे संबद्ध मूलभूत सिद्धांतों की विषयधारा को रखा गया है। पहले तथा दूसरे खंड में प्राणि-कार्यिकी का विवरण है तथा तीसरे एवं चौथे खंड में पादप कार्यिकी का विवरण दिया गया है।

खंड 1 प्राणी शरीरक्रियाविज्ञान-1

इस खंड में प्राणियों के शरीरक्रियाविज्ञान अर्थात फिज़ियोलॉजी का वर्णन किया गया है। आप पढ़ेंगे कि प्राणी किस प्रकार खाते हैं, सांस लेते हैं, किस प्रकार अपने अपशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं तथा किस प्रकार एक भीतरी साम्यावस्था बनाए रखते हैं। अध्ययन में सुविधा की दृष्टि से प्राणियों की फिज़ियोलॉजी को कई प्रक्रियाओं में विभाजित किया जा सकता है जैसे श्वसन, परिसंचरण, पाचन तथा अवशोषण, उत्सर्जन आदि। लेकिन हमें एक बात याद रखनी चाहिए कि इनमें से कोई भी प्रक्रिया अलग-अलग रहकर कार्य नहीं करती। ये सभी परस्पर जुड़ी हैं तथा एक दूसरे पर निर्भर होती हैं। उदाहरण के लिए, मस्तिष्क तभी तक कार्य कर सकता है जब तक उसमें हृदय द्वारा पम्पित रक्त की सप्लाई पहुंचती रहे जिसमें ऑक्सीजन तथा ग्लूकोज़ ले जाया जाता है। इसी तरह हृदय को भी यदि परिसंचरणशील रक्त द्वारा फेफड़ों से सप्लाई की गयी ऑक्सीजन न मिले, तो वह कुछ ही मिनट में धड़कना बंद कर देगा। और फिर फेफड़े भी तब तक कार्य नहीं कर सकते जब तक उनकी श्वसन पेशियों को मस्तिष्क से आदेश न मिले। इस प्रकार के कई उदाहरण उप कोशिकीय स्तर पर भी दिए जा सकते हैं।

क्योंकि आपको कोशिकीय स्तर (LSE-01) पर कार्य-क्रिया की मूलभूत जानकारी प्राप्त हो चुकी है, हम समझते हैं कि अब एक तुलनात्मक आधार पर जीवधारियों की फिज़ियोलॉजी का अध्ययन करना अधिक सार्थक होगा। अपने-अपने भिन्न पर्यावरणों की सीमाओं के भीतर जीवन बिताने की समस्याओं को विभिन्न प्राणियों ने किस तरह सुलझाया है इसका अध्ययन करके हम फिज़ियोलॉजी के उन सामान्य सिद्धांतों की भीतरी झलक प्राप्त कर सकेंगे जो अन्यथा अनदेखे रह जाते हैं। इसलिए विविध फिज़ियोलॉजीय कार्यों के अध्ययन में हमने विभिन्न प्राणियों में एक तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाया है। फिर भी इन कार्यों के स्पष्टीकरण के लिए मानव समेत अन्य स्तनधारियों से अधिक उदाहरण लिए गए हैं। इन प्राणियों में होने वाली क्रियाएं बहुत कुछ अन्य कशेरुकियों में भी होती है। जहां कहीं कोई तथ्य अथवा प्रेक्षण किसी एक स्पीशीज़ या मानव में ही पाया जाता है तब उस स्पीशीज़ का उल्लेख किया गया है।

इस खंड का प्रारम्भ प्राणियों द्वारा ऊर्जा-सप्लाई ग्रहण करने की विधि के वर्णन से किया गया है अर्थात् इकाई-1 **पोषण, अशन, पाचन** में भोजन के विवरण से आहार ग्रहण के विभिन्न अनुकूलनों का विवेचन किया गया है। इसी इकाई में आगे चलकर कशेरुकियों में भोजन के पाचन तथा अवशोषण का वर्णन किया गया है।

दूसरी इकाई **श्वसन** में समझाया गया है कि प्राणी चाहे जल में रहते हों या थल में, अपने पर्यावरण से किस प्रकार ऑक्सीजन प्राप्त करते हैं। इस इकाई में रक्त में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाईऑक्साइड के परिवहन और इसके साथ-साथ उन श्वसन वर्णकों पर भी दृष्टि डाली गयी है जो रक्त और ऊतकों के बीच इन दो गैसों की गति को सरल बनाने के लिए प्राणियों में विकसित हुए हैं। इकाई 3 **परिसंचरण** में देह-तरलों के परिसंचरण की चर्चा की गई है तथा यह भी बताया गया है कि किस प्रकार ऊतकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इन देह-तरलों का नियंत्रण होता है। इसमें अधिक जोर स्तनधारीय परिसंचरण पर दिया गया है क्योंकि इसकी जानकारी सबसे अच्छी तरह से मिल चुकी है।

प्राणियों में भीतरी पर्यावरण के नियंत्रण के लिये आवश्यक यह है, कि जल तथा पोषकों की उचित मात्राएं शरीर में रोकी रखी जाएं। साथ ही साथ एक समस्या यह है कि ऐमीनो अम्लों तथा प्रोटीनों के अपचय के दौरान जो विषैले अपशिष्ट पदार्थ इकट्ठा होते हैं उन्हें किस प्रकार बाहर निकाला जाए। इकाई 4 **उत्सर्जन**, में प्राणियों में प्रोटीन-अपचय के नाइट्रोजन युक्त अंतिम उत्पादों को बाहर निकालने की क्रियाविधियों का वर्णन किया गया है। विभिन्न प्राणियों के उत्सर्गी अंगों की संरचना तथा उनके कार्यों का भी इस इकाई में विवेचन किया गया है।

इकाई 5 **परासरणी एवं आयनी नियमन** में परासरणी पर्यावरण तथा वृक्क, गिल अथवा क्लोम एवं लवण ग्रंथियों जैसे अंगों में परासरणनियमन प्रक्रियाओं को लिया गया है। इसमें अनेक हॉर्मोनों द्वारा उनके नियमन की भी चर्चा की गयी है और इस प्रकार विविध अंग-तंत्रों की कार्य-क्रिया एवं उनके नियमन के बीच के सहसंबंध पर भी बल दिया गया है।

अध्ययन दर्शिका

इस खंड का अध्ययन आरम्भ करने से पूर्व आपको कोशिका जैविकी (LSE-01) का पाठ्यक्रम पढ़ना चाहिए। हम यह मानकर चलते हैं कि आप कोशिकीय श्वसन, झिल्ली संरचना तथा कोशिका के भीतर की परिवहन प्रक्रियाओं की मूलभूत संकल्पनाओं से परिचित हैं। हमने यह भी प्रयत्न किया है कि फिज़ियोलॉजी के सिद्धांतों को आधारभूत भौतिकी एवं रसायनिकी शैली में समझ सकने योग्य बनाया जा सके। यदि और अधिक जानकारी की आवश्यकता हो तो हमारा सुझाव है कि आप NCERT की XI तथा XII कक्षा की भौतिकी एवं रसायनिकी की पाठ्य-पुस्तकें अपने निकट रखें।

किसी विशिष्ट संकल्पना को समझाने में अति महत्वपूर्ण कुछ रोचक प्रयोग सारे मूलपाठ में बॉक्स में दिए गए हैं। इन्हें इसलिए शामिल किया गया है ताकि आपको आभास हो सके कि वैज्ञानिक गण किस प्रकार काम करते हैं और निर्णयों पर पहुंचते हैं। अंत में दी गयी शब्दावली आपके लिए खास तौर से लाभप्रद होगी यदि आप इकाइयों को आगे-पीछे किसी और क्रम में पढ़ना चाहें।

उद्देश्य

इस खंड को पढ़ने के बाद आप:

- प्राणियों में पोषण के घटकों, अशन विधियों तथा पाचन-क्रिया एवं अवशोषण का विवेचन कर सकेंगे,
- जलीय तथा थलीय प्राणियों में श्वसन विधियों की तुलना कर सकेंगे और गैसों का परिवहन समझा सकेंगे,
- स्तनधारियों पर विशेष बल देते हुए प्राणियों में तरलों के परिसंचरण का वर्णन कर सकेंगे,
- विषैले अपशिष्ट पदार्थों के निकास के लिए प्राणियों में अपनायी गयी क्रियाविधियों का विवेचन कर सकेंगे, तथा
- जलीय तथा थलीय प्राणियों में आयनी तथा परासरणी संतुलन का नियमन करते समय आने वाली समस्याओं का विवेचन कर सकेंगे।

इकाई 1 पोषण, अशन, पाचन

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
1.2 पोषण
प्रोटीन
कार्बोहाईड्रेट
लिपिड
विटामिन
खनिज एवं ट्रेस तत्व
1.3 अशन विधियां
छोटे कणों का अशन
खाद्य स्थूलों का अशन
द्रवों का अशन
1.4 पाचन
अंतःकोशीकी पाचन
पाचन क्षेत्र
पाचक एन्ज़ाइम
पाचन नली का अनुरक्षण
पाचन क्रिया का समन्वयन
1.5 अवशोषण
1.6 ऊर्जा उपापचय
1.7 सारांश
1.8 अंत में कुछ प्रश्न
1.9 उत्तर

1.1 प्रस्तावना

सभी जीव जन्तुओं को जीवित रहने के लिए अपने पर्यावरण से लगातार खाद्य सामग्री एकत्र करनी पड़ती है जिससे वह ऊर्जा प्राप्त कर सके। आपको (FST-1) इकाई 14 से वह याद होगा कि सारे जीव जंतु विषमपोषी होते हैं क्योंकि वह जीवित रहने के लिये पेड़-पौधों द्वारा संश्लेषित कार्बनिक यौगिकों पर निर्भर रहते हैं। स्वपोशी पेड़-पौधे और रसायन संश्लषी जीवाणु (chemosynthetic bacteria) को छोड़ कर जीवों में सीमित संश्लेषण शक्ति होती है।

LSE-01 में आपने यह पढ़ा कि कोशिकीय उपापचय से जीव के विभिन्न कार्यों के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है जैसे कि चलना, उत्सर्जन, परासरणनियमन, नये पदार्थों का संश्लेषण आदि, जोकि जीव के वृद्धि और जनन के लिए आवश्यक है। प्रक्रियाओं के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है और उसे जुटाने के लिये पोषक चाहिये जो आहार से मिलते हैं। इसके अलावा जन्तुओं को ऐमिनो अम्ल, विटामिन और खनिज की आवश्यकता होती है जिनमें से कुछ का वह संश्लेषण नहीं कर सकते हैं। पोषण का अध्ययन करते समय ऊर्जा पूर्ति के लिये खाद्य की आवश्यकता और विशिष्ट खाद्य पदार्थों की आवश्यकता पर ज़ोर दिया जाता है।

जन्तुओं की खाद्य एकत्र करने की और अन्तर्ग्रहण की क्रिया को अशन कहते हैं। अलग-अलग वर्ग के जन्तुओं ने विभिन्न प्रकार की अशन विधियों को विकसित किया है। लगभग सभी प्रकार के खाद्य

सामग्री चाहे वो पेड़ पौधे या पशु से प्राप्त हुई है, को पाचन क्रिया द्वारा सरल यौगिकों में परिवर्तित करना आवश्यक है। खाद्य सामग्री के पाचन व अवशोषण से पोषण और उपापचय के बीच की अनिवार्य कड़ी बनती है। इस इकाई में हम पहले खाद्य पदार्थों के स्वरूप व उनके घटक तथा विशेष अशन विधियों पर विचार करेंगे क्योंकि आहार को प्राप्त करने की अशन विधियां व खाये गये भोजन के स्वरूप में एक सम्बन्ध है। इसके उपरान्त हम पाचन व पोषक पदार्थों के अवशोषण पर विचार करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- अनिवार्य व गैर-अनिवार्य पोषकों के बीच भेद कर सकेंगे व यह बता सकेंगे कि विभिन्न जन्तुओं की अनिवार्य खाद्य पदार्थों की आवश्यकता क्यों एक दूसरे से भिन्न है।
- उपलब्ध खाद्य से सम्बन्धित जीव जन्तुओं में विकसित अशन विधियों का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट व वसा के अन्तःकोषिकी और कोषिका बाह्य पाचन में भेद कर सकेंगे व जठरांत्र हॉर्मोनों का कार्य समझा सकेंगे।
- आहारनली से खाद्यों के अवशोषण की प्रक्रिया को संक्षेप में बतला सकेंगे।
- प्राणियों के ऊर्जा उपापचय को उनकी ऑक्सीजन खपत से जोड़ते हुये स्पष्ट कर सकेंगे।

1.2 पोषण

जैसा कि पहले भी कह चुके हैं, सारे जन्तु विषमपोषी होते हैं और पर्यावरण से खाद्य लेते हैं। यह खाद्य किन तत्वों का होता है? यदि विभिन्न जन्तुओं के आहार के आधारभूत तत्व देखें जाये तो प्रायः यह सभी प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, वसा, जल, खनिज व विटामिनों के बने होते हैं। सभी जन्तुओं को विभिन्न मात्राओं में उपरोक्त पोषकों की ही आवश्यकता होती है। परन्तु उनमें से कुछ पोषक ही प्रमुखता ईंधन की तरह काम में लाये जाते हैं (कार्बोहाईड्रेट व वसा) जबकि अन्य पोषक संरचनात्मक व प्रकार्यक कार्यों के लिये ही प्रमुखतः उपलब्ध होते हैं (प्रोटीन, खनिज और विटामीन)। फिर भी प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट और वसा सभी शरीर में ऊर्जा के लिये ईंधन का स्रोत बन सकते हैं। पर कोई भी जीव केवल ईंधन पर जीवित नहीं रह सकता। अतः एक संतुलित आहार चाहिए जो शरीर में ऊर्जा, वृद्धि, पोषण, जनन और शरीरक्रिया नियमन की आवश्यकता को पूरा कर सके। आइये अब जन्तुओं के आहार के संबंध में इन विभिन्न खाद्य वर्गों के महत्व पर विचार करें।

1.2.1 प्रोटीन

अनिवार्य और गैर अनिवार्य ऐमीनो अम्ल शब्द अपने आप में इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं क्योंकि गैर अनिवार्य ऐमीनो अम्ल भी शरीर के लिये उतने ही आवश्यक हैं। शायद यह ऐमीनो अम्ल इतने अधिक महत्वपूर्ण हैं कि शरीर में उन्हें अपने आप बनाने की क्षमता भी विकसित की है जिससे उसे केवल इनकी बाहरी खुराक के मिलने पर नहीं निर्भर रहना पड़े।

कोशिकाओं में प्रोटीन का लगातार संश्लेषण होता है क्योंकि प्रोटीन वृद्धि के लिये सबसे आवश्यक घटक है। प्रोटीन, ऐमीनो अम्ल के बने होते हैं जोकि सबसे अधिक मात्रा में आहार से प्राप्त होते हैं और कुछ मात्रा में शरीर के प्रोटीन के विघटन से भी प्राप्त होते हैं। प्रायः सभी प्रोटीन, 20 ऐमीनो अम्ल के विभिन्न संयोजकों से बनते हैं। फिर भी यह आवश्यक नहीं है कि सभी 20 ऐमीनो अम्ल भोजन द्वारा पहुंचाये जायें। कुछ ऐमीनो अम्लों का संश्लेषन शरीर में हो सकता है जबकि कुछ अन्य केवल आहार से ही प्राप्त हो सकते हैं। वह ऐमीनो अम्ल जो कि आहार से ही प्राप्त किये जाते हैं उन्हें **अनिवार्य ऐमीनो अम्ल** (essential amino acid) कहा जाता है व अन्य को **गैर-अनिवार्य** (non-essential) कहा जाता है।

अलग-अलग जीवों को विभिन्न अनिवार्य ऐमीनो अम्लों की जरूरत होती है। कुछ जीवाणुओं के वृद्धि-माध्यम में पर्याप्त मात्रा में केवल एक ही ऐमीनो अम्ल की आवश्यकता होती है जिससे वह आवश्यकता अनुसार बाकी सब ऐमीनो अम्ल बना लेते हैं। दूसरी तरफ, स्तनधारी जीव किसी भी

प्रकार अपना प्रोटीन केवल एक ऐमीनो अम्ल से नहीं प्राप्त कर सकते हैं। अब यह किस प्रकार पता किया जाए कि कौन-सा ऐमीनो अम्ल अनिवार्य है और कौन-सा गैर-अनिवार्य? पोषण आवश्यकता को निष्कासन प्रयोग द्वारा निर्धारित किया जाता है जैसे कि, आहार में से एक पोषक तत्व को हटा कर जीव की वृद्धि व स्वास्थ्य का निरीक्षण किया जाता है। इस प्रकार यह निर्धारित किया गया कि चूहों की वृद्धि व स्वास्थ्य के लिये 10 ऐमीनो अम्ल आवश्यक हैं (तालिका 1.1 देखिए)।

तालिका 1.1 : मानव व चूहों में आहार की आवश्यकता के अनुसार ऐमीनो अम्लों की सूची।

अनिवार्य		गैर-अनिवार्य	
चूहे	**मानव**	**चूहे**	**मानव**
लाइसीन	फिनाइलएलानीन	ग्लाइसिन	ग्लाइसीन
ट्रिप्टोफान	लाईसीन	एलानीन	एलानीन
हिस्टीडीन	आइसोल्यूसीन	सिरीन	सिरीन
फिनाइलएलानीन	ल्यूसीन	सिस्टीन	टाइरोसिन
ल्यूसीन	वेलीन	टाइरोसिन	ऐस्पार्टेट
आइसोल्यूसीन	मेथाइओनीन	ऐस्पार्टेट	ग्लूटामेट
थीरोनीन	सिस्टीन	ग्लूटामेट	प्रोलीन
मेथाइओनीन	ट्रिप्टोफान	प्रोलीन	हाइड्रॉक्सीप्रोलीन
वेलीन	थीरोनीन	हाइड्रॉक्सीप्रोलीन	सिट्रलीन
आर्जिनिन		सिट्रलीन	हिस्टीडीन
			आर्जिनिन

चूहों में आर्जिनीन को छोड़कर किसी भी अनिवार्य ऐमीनो अम्ल की कमी से पोषण विकार एवं मृत्यु तक हो सकती है। चूहे यद्यपि आर्जिनीन बनाने में सक्षम हैं परन्तु यह क्रिया इतनी धीमी होती है कि पर्याप्त मात्रा में वृद्धि के लिये आर्जिनीन उपलब्ध नहीं हो पाता।

जीव को खुराक में किसी ऐमीनो अम्ल की कितनी आवश्यकता है यह उसकी शारीरिक कोशिकाओं की **संश्लेषण सामर्थ्य** पर निर्भर करता है। वह जीव जिनकी कि संश्लेषण क्षमता बहुत अधिक है जैसे कि जीवाणु (जैसा कि पहले बताया है) को कुछ ही अनिवार्य ऐमीनो अम्लों की जरूरत होती है। स्तनधारी जीव जिन्हें कि कई ऐमीनो अम्लों की जरूरत होती है उनमें **संश्लेषण असमर्थता** होती है।

1.2.2 कार्बोहाइड्रेट

जीव जन्तुओं की 55 से 70 प्रतिशत ऊर्जा कार्बोहाईड्रेट से ही प्राप्त होती है हालांकि वसा व प्रोटीन के विघटन से भी ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। प्रायः सभी जन्तुओं में यह प्रक्रिया तभी आवश्यक होती है जबकि आहार में कार्बोहाईड्रेट की मात्रा काफी कम हो। इससे भिन्न, *ड्रोसोफिला* (*Drosophila*) अपनी उड़ान की मांसपेशियों की ऊर्जा के लिये केवल कार्बोहाईड्रेट का ही प्रयोग करता है जिसके खत्म होने के पश्चात वह उड़ नहीं सकता जबकि उसके शरीर में संचित वसा अन्य उपापचय के लिये कार्य में लायी जाती है। दूसरी तरफ टिड्डी (locust) अपनी लम्बी उड़ानों के लिये केवल लिपिड का ही प्रयोग करती है।

प्रायः अधिकतर प्राणी ऊर्जा प्राप्त करने के लिये विभिन्न प्रकार की हैक्सोस शर्करा (hexose sugar) जैसे कि ग्लूकोस, फ्रक्टोस, मैनोस व गैलैक्टोस का इस्तेमाल करते हैं। इस प्रकार ऐमीनो अम्ल की तरह किसी भी प्रकार का कार्बोहाइड्रेट शरीर के लिये अनिवार्य नहीं होता। यद्यपि कोई भी कार्बोहाईड्रेट शरीर के लिये अनिवार्य नहीं है फिर भी कुछ जीव एक प्रकार के कार्बोहाइड्रेट पर ज्यादा वृद्धि करते हैं। यह बात नीचे दिये गये प्रयोग द्वारा स्पष्ट हो जाती है। मालटोस शर्करा लेने पर युवा टिड्डियों की **इष्टतम** वृद्धि होती है जबकि उनको किसी भी प्रकार का कार्बोहाइड्रेट न देने पर वृद्धि **न्यूनतम** थी। अन्य शर्करा देने पर **उपानुकूलतम** (sub-optional) वृद्धि होती है। इस भिन्नता का क्या कारण हो सकता है? इसका एक प्रमुख कारण यह हो सकता है कि भिन्न प्रकार की शर्करा आहार नली की

उपकला कोशिकाओं को भिन्न गति से पार करके रक्त में पहुंचती है। उपरोक्त प्रयोग के आधार पर कहा जा सकता है कि विभिन्न कीट अलग-अलग प्रकार की शर्करा को वरीयता देते हैं। ऐसे पोषक **वरीय पोषक** (preferred nutrient) कहलाते हैं।

1.2.3 लिपिड

प्रत्येक जीव के ऊतक में लिपिड या वसा होती है, जोकि कोशिका झिल्ली का अत्यावश्यक अंग है। कई ऊतक इसे विशेष प्रकार से जमा भी करते हैं। लिपिड शरीर की ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। यह ऊष्मा रोधन, स्टीरॉयड हॉरमोन के संश्लेषण, पैडिंग व वसा में विलयनशील विटामिनों के वाहक का कार्य भी करते हैं। कई प्राणी बहुत कम वसा वाले या वसा रहित आहार पर भी जीवित रह सकते हैं क्योंकि प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट से भी वसा बन सकती है। परन्तु कई जन्तुओं की संश्लेषण क्रिया असंतृप्त वसा अम्ल व कोलेस्टेरॉल को बनाने में प्रवीण नहीं होती। परन्तु कशेरुकी प्राणी अपना कोलेस्टेरॉल संश्लेषण अपने आप करते हैं। यहां तक कि मनुष्य के आहार में अधिक कोलेस्टेरॉल हो तो उसे हानिकारक समझा जाता है क्योंकि धमनियों के कठोर होने व ऐथिरोस्क्लेरोसिस का मुख्य कारण यही कोलेस्टेरॉल है। दूसरी तरफ कीट अपना कोलेस्टेरॉल संश्लेषण उसके पूर्वगामी मिश्रों से नहीं कर पाते। अतः उनके आहार में कोलेस्टेरॉल आवश्यक है। चूहों पर प्रयोग द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि तीन वसा अम्ल—**लिनोलेइक, लिनोलेनिक व अरैकिडोनिक** अम्ल का संश्लेषण नहीं होता है अतः इन्हें **अनिवार्य वसा अम्ल** कहा जाता है।

कई कीट, पक्षी और कुछ स्तनधारियों को भी आहार में इसी प्रकार के वसा अम्लों की आवश्यकता होती है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जन्तुओं में ऐमीनो अम्ल की अपेक्षा लिपिड संश्लेषण की योग्यता अधिक होती है।

1.2.4 विटामिन

जानवरों के लिये केवल कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन व वसा के भोजन पर स्वस्थ जीवन व्यतीत करना संभव नहीं है। उनको विटामिनों का मिलना भी आवश्यक है जो बहुत कम मात्रा में (मिलीग्राम या माइक्रोग्राम) भी पर्याप्त है। यह उपापचय अभिक्रिया में कोएन्ज़ाइम का कार्य करते हैं। आपके लिए FST-01 की इकाई 21 फिर से पढ़ना लाभदायक होगा जहां विटामिनों की सूची, उनका मुख्य कार्य व खाने के स्रोत के बारे में लिखा है। तालिका 1.2 से आपको ज्यादा विस्तार से विटामिनों की सूची, जोकि मनुष्य व जानवरों के पोषण में जरूरी हैं व उनके विभिन्न कार्यों का सर्वेक्षण मिलेगा। विभिन्न जानवरों की स्पीशीज़ में विटामिन संश्लेषण की क्षमता भी भिन्न होती है। और जो अनिवार्य विटामिन बनाये नहीं जा सकते वह आहार द्वारा ही प्राप्त करने होते हैं। जैसेकि प्रायः सभी जानवर विटामिन C बना सकते हैं पर मनुष्य में यह क्षमता नहीं होती है। मनुष्य अपने विटामिन K व B_{12} के लिये भी अपनी आंत्र के अन्दर रहने वाले जीवाणुओं पर निर्भर करता है। वसा में विलेय होने वाले विटामिन A, D, E और K शरीर की वसा के भंडारों में संचित किये जा सकते हैं पर जो विटामिन पानी में विलेय होते हैं, जैसेकि विटामिन B या C इनका लगातार आहार में मिलना आवश्यक है क्योंकि इनका बराबर मूत्र द्वारा शरीर से निष्कासन हो जाता है।

विटामिन K का कार्य पक्षियों पर प्रयोग करते समय ज्ञात हुआ। कोलेस्टेरॉल संश्लेषण का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पक्षियों को कोलेस्टेरॉल रहित आहार दिया गया। उन पक्षियों को बहुत अधिक रक्त स्रवण हुआ जिसका कारण विटामिन K की हीनता या कमी था। केवल इसके उपरांत ही स्तनधारियों में विटामिन K की आवश्यकता का पता चला।

1.2.5 खनिज एवं ट्रेस तत्व

ऑक्सीजन, कार्बन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन, शरीर में सबसे अधिक मात्रा में पाये जाने वाले तत्व हैं जोकि एक स्तनधारी के भार का 96 प्रतिशत होते हैं। इनके अतिरिक्त कैल्सियम, फ़ॉस्फ़ोरस, पोटैशियम, सल्फर, सोडियम, क्लोरीन और मैग्नीशियम शरीर भार का लगभग 4 प्रतिशत बनाते हैं। इसके इलावा पन्द्रह तत्व और हैं जोकि स्तनधारियों के लिये आवश्यक हैं परन्तु जो शरीर भार में 0.01 प्रतिशत से भी कम मात्रा में हैं। जीवन के लिये 90 प्राकृतिक तत्वों में से कितने आवश्यक हैं, यह कई जानवरों के लिये अभी पता नहीं चला है परन्तु मानव में 26 तत्व आवश्यक माने गये हैं।

तालिका 1.3 मनुष्य ऊतकों में तत्वों की अनुमानित मात्रा दर्शाता है। यह हम सबको ज्ञात है कि कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन पानी में और शरीर के अन्य रचक घटकों में पाये जाते हैं जिनमें

तालिका 1.2 : विटामिन और उनके अभिलक्षण

नाम, फार्मूला और विलयता	महत्वपूर्ण स्रोत	कार्य	मनुष्य व अन्य प्राणियों में हीनता के लक्षण
लिपिड में विलेय विटामिन			
A ($C_{20}H_{30}O$) जीरोफ्थेलमिया निरोधक	वनस्पति रूप (केरोटीन ($C_{40}H_{56}$)) हरी पत्तियों, गाजर इत्यादि में। यकृत में यह प्राणी रूप ($C_{20}H_{30}O$) में परिवर्तित हो जाता है। मत्स्य यकृत तेल (शार्क तेल) में होता है, अंडे के पीले भाग व दूध और मक्खन में दोनों रूपों में होता है।	एपिथिलियमी ऊतक की अखंडता बनाये रखना विशेषकर श्लेष्मल झिल्ली को, आँख के रेटिना में विजुअल पर्पल (visual purple) का अंग	जीरोफ्थेलमिया (xeropthalmia), कार्निया सूखना, आंसूओं का न बनना, फायनोडर्मा (phynoderma), रतौंधी, कम वृद्धि होना, गोपकोष कूप, आवाज भारी होना (पक्षियों में)
D ($C_{28}H_{44}O$) रिकेट्स निरोधक	मत्स्य यकृत के तेल विशेषकर टूना मछली का, वीफ वसा तथा त्वचा पर पराबैंगनी विकिरण का प्रभाव	केल्सियम और फास्फोरस उपापचय नियमन, केल्सियम के आहार नाल से अवशोषण व वृद्धि में काम आता है।	युवाओं में सूखे का रोग (richets) जिसमें हड्डियाँ, मुलायम, कमजोर और विरूपित हो जाती हैं। यह रोग एशिया की नारियों में ज्यादा देखने में आता है।
E ($C_{29}H_{50}O_2$) टोकोफेराल वन्ध्यारोधी (antisterility)	हरी पत्तियां, गेंहू के अंकुर का तेल और अन्य सब्जियाँ, वसा, मांस, दूध	प्रति उपचायी (antioxidant) झिल्ली की अखंडता बनाये रखना	नर मुर्गों व चूहों में वंध्यता, वृषण का अपह्रासन, शुक्राणुजनन का रुकना, भ्रुणीय वृद्धि अनियमित होती है, युवा जीवों में चूषण प्रक्षघात और पेशीय दुष्पोषण
K ($C_{31}H_{46}O_2$) प्रतिरक्तस्रावी (antihaemorrhagic)	हरी पत्तियां कुछ जीवाणु जैसे कि आँत में पाये जाते हैं।	यकृत में प्रोथ्रोम्बिन बनने के लिए अनिवार्य, रक्त स्कंदन के लिए आवश्यक	रक्त स्कंदन नहीं होता है
जलविलेय विटामिन			
B काम्पलेक्स थायेमीन B_1 ($C_{12}H_{17}ON_4S$) एंटीन्यूरेटिक (antineuretic)	यीस्ट, अनाज के कुल्ले (गेंहू, मूंगफली और शिंबी बीज), जड़ें, अंडे को पीतक, यकृत, वसा रहित मांस	कार्बोहाइड्रेट उपापचयन में आवश्यक, थायेमीन पाइरोफास्फेट का घटक जो पाइरूवेट उपापचयन में काम आता है (पौधों में जड की वृद्धि का उद्दीपन	पालिश चावल अधिक मात्रा में खाने से बेरीबेरी होती है भूख बंद हो जाती है, आहार नाल में गति कम होती है, वृद्धि बंद हो जाती है तथा पक्षियों में पालीन्यूराइटिस (polyneuritis) (तंत्रिकाओं में सूजन) होती है।
राइबोफ्लेविन (B_2) ($C_{17}H_{20}O_6N_4$)	हरी पत्तियां, दूध, अंडे, यकृत, यीस्ट	वृद्धि के लिए अनिवार्य : आहार के मध्यवर्ती उपापचयन और इलेक्ट्रॉन अभिगमन से संबंधित एंजाइम के प्रोस्थेटिक समूह को बनाता है।	कीलोसिस (chelosis) (मुंह के दोनों किनारों में दरारें पड़ना व सूजन आना) पाचन में खराबी, कुत्ते में पीला जिगर (yellow liver), चूजों में मुड़े हुए पंजों वाला लकवा, मोतिया
निकोटिनिक अम्ल ($C_6H_5O_5N$) एंटीपेलागरिक (antipellagric)	हरी पत्तियां, अंडे का पीतक, मांस, यकृत, यीस्ट	निकोटिनामाइड एडिनीन डाइन्यूक्लियोटाइड (NAD) के विहाइड्रोजनीकरण की अभिक्रिया में कारक	मनुष्य और बंदरों में पैलेग्रा (pellagra), सुअर में स्वाइन पेलेग्रा, कुत्तों में काली जीव्हा (black tongue) पक्षियों में पैलेग्रा
फोलिक अम्ल ($C_{19}H_{19}O_6N_7$)	हरी पत्तियां, यकृत, सोयाबीन, यीस्ट, अंडे का पीतक	रक्त कोशिकाओं की संरचना और शरीर वृद्धि के लिये अनिवार्य, उपापचयन में एकक-कार्बन यूनिटों के स्थानांतरण में कोएन्जाइम	मनुष्य में एनीमिया (अरक्तता), गुर्दों से रक्त स्राव और आंत्र से दोषी अवशोषण, बंदरों में साइटोपीनिया (रक्त में कोशिकाओं की कमी), चूजों और चूहों की वृद्धि में कमी और एनीमिया
पायरोडाक्सीन (B_6) ($C_8H_{12}O_2N$)	यीस्ट, अनाज, दालें, मांस, अंडे, दूध, यकृत	ऊतकों में पाइरीडाक्सल फास्फेट के रूप में होता है जो एमीनो अम्ल के ट्रांसएमिनेशन और विकार्बोक्सिलकरण में कोएन्जाइम का कार्य करता है।	कुत्तों व सूअर में एनीमिया, युवा जंतुओं में धीमी गति से वृद्धि
बायोटिन ($C_{10}H_{16}O_3N_2S$)	यीस्ट, गन्ने का शीरा, मूंगफली, अंडे का पीतक, दूध और यकृत, और फल	वृद्धि के लिए अनिवार्य, CO_2 के यौगिकरण में, वसा अम्ल के ऑक्सीकरण और संश्लेषण में कारक	चर्म रोग; चूहों और चूजों में त्वचा मोटी हो जाती है। पक्षियों में पेरोसिस (perosis)
सायानोकोबेलामिन (B_{12}) ($C_{63}H_{90}N_{14}O_{14}PCo$)	यकृत, मछली, मांस, दूध, अंडे का पीतक, शुक्ति (oyster), जीवाणु, *स्ट्रेप्टोमायसिस* के किण्वन (fermentation) द्वारा	रक्त कोशिकाओं का संरचक, वृद्धि के लिए आवश्यक, [illegible] म्ल उपापचयन में [illegible] के स्थानांतरण में [illegible] है।	प्रणाशी रक्ताल्पता (pernicious anaemia) युवा जंतुओं में मंद गति से वृद्धि तथा रोमन्थी जंतुओं में वेस्टिंग रोग (wasting disease)
एस्कॉर्बिक अम्ल ($C_6H_8O_6$)	निम्बु वंश के फल, टमाटर, सब्जियां (प्राइमेट और गिनी पिग को छोड़कर अन्य जानवरों द्वारा भी निर्मित हैं)	कोशिका भित्ती को अखंडता को बनाये रखता है। अंतः कोशिकी सीमेंट की रचना में काम आता है।	मनुष्य और गिनी पिग में स्कर्वी (श्लेष्मा झिल्ली, त्वचा के नीचे और जोड़ों में रक्त स्राव)

Source: TI Storer, R.L. Usinger, R.C. Stebbins and J.W. Nybakken, *General Zoology*, 6th edition, McGraw-Hill, N. York 1979.

तालिका 1.3 : मनुष्य ऊतक की रचना

तत्व	शरीर भार का प्रतिशत
ऑक्सीजन	65.0
कार्बन	18.0
हाइड्रोजन	10.0
नाइट्रोजन	3.0
कैल्सियम	1.93
फ़ॉस्फ़ोरस	1.12
पोटैशियम	0.35
सल्फर	0.25
सोडियम	0.15
क्लोरीन	0.15
मैग्नीशियम	0.05

कि नाइट्रोजन, सल्फर व फ़ॉस्फ़ोरस भी होते हैं। प्राणियों के कंकाल ढांचे का सबसे महत्वपूर्ण भाग कैल्सियम है और इसकी मांसपेशियों के संकुचन में फ़िज़ियोलॉजीय भूमिका इकाई 6 में पढ़ी जायेगी। यदि कैल्सियम स्तर आधे से भी कम हो जाये तो भयंकर धनुस्तम्भी संकुचन (fatal tetanic cramps) या मृत्यु हो सकती है।

तालिका 1.4 : महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की शरीरक्रियात्मक भूमिका

तत्व और स्रोत	शरीरक्रियात्मक कार्य	हीनताजन्य रोग
सोडियम (Na) खाने में डाला गया नमक	प्राथमिक कोशिकाबाह्य धनायन, प्लाज़्मा आयतन का नियमन, अम्ल-क्षारक संतुलन बनाये रखना, तंत्रिका और पेशी प्रक्रमों का नियमन	सामान्य आहार में अज्ञात। रोग अवस्था या चोट लगने पर हीनता उत्पन्न होती है।
पोटेशियम (K)	प्राथमिक अंतःकोशिकी धनायन, तंत्रिका और पेशीय प्रक्रमों तथा अम्ल-क्षारक संतुलन का नियमन	रोग अवस्था, चोट लगने पर या डाइयूरेटिक इलाज के उपरांत हीनता, पक्षपात, मानसिक अस्पष्टता और पेशियों में कमजोरी उत्पन्न होती है।
कैल्सियम (Ca) दूध से बने पदार्थ, हरी फलीदार सब्जियां	दांत व हड्डियों का रचक, तंत्रिका, पेशीय प्रक्रमों का नियमन, रक्त स्कंदन में आवश्यक	बच्चों में रिकेट्स (rickets), व्यस्क में अस्तिमृदुता (osteomalacia)
फॉस्फोरस (P) खाद्य में डाला गया फॉस्फेट	हड्डी की रचना में काम आता है DNA, RNA, ATP इत्यादि का घटक, ऊर्जा उपापचयन में आवश्यक	बच्चों में रिकेट्स, व्यस्क में अस्तिमृदुता
मैग्नीशियम (Mn) पत्तेदार हरी सब्जियां	हड्डी और दांत की रचना में काम आता है, कार्बोहाइड्रेट उपापचयन में आवश्यक	दस्त या अपावशोषण (malabsorption) और मदरोन्मत्तता (alcoholism) में द्वितीयक रोग
क्लोरीन (Cl) नमक	मुख्य कोशिकाबाह्य ऋणायन, परासरणीय तथा अम्ल-क्षारक संतुलन में आवश्यक, जठर अम्ल का घटक	नमक रहित आहार पर आश्रित बच्चों में रोग उत्पन्न होता है। उल्टी, डाइयूरेटिक इलाज के दौरान तथा वृक्क के रोगों में उत्पन्न होता है।

पहला निर्णायक सबूत कि कोबाल्ट एक अनिवार्य ट्रेस तत्व है, आस्ट्रेलिया में प्राप्त हुआ जहाँ कि पशु व भेड़ों का एक भयानक रोग फैला। कोबाल्ट की थोड़ी मात्रा खुराक में डालने से पशुओं को इस रोग से बचाया जा सका। हर एक भेड़ को एक सिरैमिक से लिपटी कोबाल्ट की गेंद खिलायी जाती है जो कि उनके रोमन्थी जठर में बैठ जाती है व जिससे वर्षों तक धीरे-धीरे कोबाल्ट प्राप्त होता रहता है।

खनिज पदार्थ की आवश्यकता, अनाज, फलीदार, पत्तियों वाली हरी सब्जियों, मांस व दूध से बने पदार्थों से पूरी हो जाती है।

अतिरिक्त 15 तत्व जो कि शरीर के भार का केवल 0.01 प्रतिशत बनाते हैं इतनी कम मात्रा में प्राप्त होते हैं कि उन्हें ट्रेस या लेश तत्वों की सूची में रखा जाता है। ये भी आवश्यक माने जाते हैं और तालिका 1.5 में बताए गये हैं। हालांकि यह तत्व बहुत कम मात्रा में होते हैं परन्तु यह अनिवार्य ऐमीनो अम्ल की भांति ही आवश्यक होते हैं। उदाहरणतः कोबाल्ट की जरूरत B_{12} विटामिन में होती है और इसकी कमी के द्वारा भयंकर आरक्तता (anaemia) हो जाती है। रोमन्थियों (ruminents) के रोमन्थी जठर में ही जीवाणुओं द्वारा विटामिन B_{12} तभी बनाया जाता है यदि आहार में उचित मात्रा में कोबाल्ट हो।

तालिका 1.5 : आवश्यक ट्रेस तत्वों की शरीरक्रियात्मक भूमिका

तत्व व स्रोत	शरीरक्रियात्मक भूमिका	हीनता जन्य रोग
लौह (Fe) लोहे के बर्तन, सब्जियां, माँस, फल	हीमोग्लोबिन तथा साइट्रोक्रोम में हीम समूह का घटक,	अरक्तता (anaemia)
ताम्र (Cu)	हीमोग्लोबिन तथा हड्डियों की संरचना में आवश्यक, साइट्रोक्रोम का घटक	अरक्तता, कुपोषण के दौरान हीनता मेन्के सिन्ड्रोम (Menke's syndrome)
आयोडिन (I) आयोडीनयुक्त नमक, समुद्र उत्पन्न आहार	थाइराइड हॉर्मोन का घटक	बच्चों में क्रेटिनता (cretinism), व्यस्क में ग्वाइटर (goiter)
मैंगनीज़ (Mn)	यूरिया बनाने में, प्रोटीन उपापचय में, ग्लाइकोलिसिस और सिटरिक अम्ल चक्र में	मनुष्य में अज्ञात
कोबाल्ट (Co) प्राणियों से प्राप्त आहार	विटामिन B_{12} का घटक, रक्ताणु की रचना में आवश्यक,	B_{12} हीनता
ज़िंक (Zn)	अनेक एंजाइमों का घटक, सूंघने और स्वाद से संबंधित इंद्रियों के लिये आवश्यक	हाइपोगोनेडिज्म (hypogonadism), वृद्धि में रुकाव, जख्म भरने में देर, सूंघने व स्वाद महसूस करने में कमी
मोलीबडेमन (Mo)	कुछ एंजाइमों का घटक	आन्त्रेतर पोषण (parenteral nutrition) संबंधित हीनता होती है
फ्लोरीन (F) पीने के पानी में	दांतों में मजबूती के लिए	दांतों में केरीज अर्थात् दांतों का सड़ना
सेलिनियम (Se)	वसा उपापचयन में आवश्यकता	जहां नमक की मात्रा कम होती है, पेरेन्टल पोषण के दौरान हीनता होती है।
क्रोमियम (Cr)	ग्लूकोस उपापचयन में आवश्यकता	ग्लूकोस सह्यता (tolerence) में कमी।

ट्रेस तत्व आहार में मिल जाते हैं यदि, साबुत अनाज, दालें, हरी पत्ती वाली सब्जियां, मांस, और दूध से बने पदार्थ का प्रयोग किया जाए।

कुछ ट्रेस तत्व अधिक विकसित जन्तुओं के लिये अनिवार्य होते हैं जबकि कुछ अन्य इतने आवश्यक नहीं होते। फ्लोरीन यद्यपि चूहों के जीवन के लिये अनिवार्य है परन्तु मनुष्यों के लिये अनिवार्य नहीं है, हालांकि उसका अपना महत्व दांत में केरीज (caries) की रोकथाम और इलाज में है। हर एक ट्रेस तत्व का कार्य जानना कठिन है व इसके लिये अभी और अनुसंधान की आवश्यकता है।

1.2.6 जल

हर जीवित ऊतक का सबसे महत्वपूर्ण अंग जल है। यह कई प्राणियों के शरीर का 95% से अधिक आद्र भार बनाता है। हमें ज्ञात है कि शरीर से जल का निकास पसीने, मूत्र और श्वसन प्रष्ठ से वाष्पीकरण द्वारा होता है। इसलिये इसकी पूर्ति होना आवश्यक है। जल पीने, खाना खाने से व छोटी मात्रा में उपापचय क्रियाओं, जैसे कि वसा, प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट के संश्लेषण द्वारा शरीर में जल की आपूर्ति होती रहती है।

बोध प्रश्न 1

अ) क्रम I में दिये गये शब्दों को क्रम II में दिये गये वर्णन से मिलायें।

I	II
i) संश्लेषण सामर्थ्य	क) ऐमिनो अम्ल जोकि वृद्धि के लिये अनिवार्य है पर जिन्हें आहार में देना पड़ता है।
ii) संश्लेषण असमर्थता	ख) अधिकांश जीवाणु अपनी जरूरत के सभी ऐमिनो अम्ल अपने वृद्धि माध्यम के केवल एक पोषक से बना लेते हैं।
iii) अनिवार्य पोषक	ग) मानव नान स्टेरॉल पूर्वगामी से कोलेस्ट्रोल का संश्लेषण कर सकता है पर कीट नहीं।

ज) ऐसा क्यों है कि पालतू कुत्ते व बिल्लियों के आहार में फलों की आवश्यकता नहीं होती जबकि मनुष्य को होती है।

1.3 अशन विधियां

प्रत्येक जीव ने पर्यावरण से उचित भोजन प्राप्त करने के सफल तरीके विकसित किये हैं। अतः हम देखते हैं कि जिस प्रकार का भोजन जन्तु प्राप्त कर पाते हैं उसी के अनुसार विभिन्न अशन विधियां या तरीके हैं। तालिका 1.6 जन्तु समूहों की मुख्य अशन विधियों की सूची, उपलब्ध आहार के अनुसार देती है। यहां पर प्रत्येक आहार प्राप्त करने की विधि की चर्चा करना संभव नहीं है परन्तु एक संक्षिप्त चर्चा में हम विभिन्न अशन साधनों के मूल सिद्धांतों की जांच करेंगे। तालिका 1.6 से आपको यह ज्ञात होगा कि अलग-अलग वर्ग के जन्तु जो एक से आवास में रहते हैं वह एक ही प्रकार से आहार प्राप्त करते हैं।

उदाहरणतः कई समुद्री जन्तु (एनेलिडस्, मोलस्क, क्रस्टेशियनस्) **निस्यंदक भोजी** (filter feeders) है यद्यपि निस्यंद से सम्बन्धित उनके अंग एक दूसरे से शरीरीय मेल नहीं खाते।

तालिका 1.6 : आहार के अनुसार विधियों का वर्गीकरण

भोजन के प्रकार	अशन विधि	जीव जो यह विधि प्रयोग करते हैं
छोटे कण	पाचन धानी	अमीबा, रेडियोलेरियन्स
	पक्षमाभ (सीलिया)	सीलियेट (पक्षमाभी प्राणी), स्पंज, द्विकपाटी (bivalves), टेडपोल
	श्लेष्मल पाश	गैस्ट्रोपॉड, ट्यूनिकेट,
	टेन्टेकल	समुद्री ककड़ी (sea cucumber)
	निस्यंदक भोजी	छोटे क्रस्टेशियन, हेरिंग, बैलीन ह्वेल, फ्लेमिंगो, समुद्रीकाक (petrel)
बड़े आकार के खाद्य पदार्थ	निष्क्रिय खाद्य पदार्थों का अन्तर्ग्रहण	अपरदभोजी, केंचुए,
	खुर्चना, चबाना व भेदन करना	समुद्री अर्चिन, घोंघे कीट, कशेरुकी प्राणी
	आहार को पकड़ना व निगलना	सीलेन्ट्रेट, मछलियाँ, सर्प, चमगादड़ पक्षी
द्रव या मुलायम ऊतक	पादप का रस या नेक्टर चूसना	एफिड, मधुमक्खी, गुंज पक्षी (humming bird)
	रक्त का अन्तर्ग्रहण	जोंक, कीट, किलनी (tick) वेम्पायर चमगादड़
	दूध या समान द्रव का चूसना	स्तनधारियों के शिशु, चिड़िया
	बाह्य पाचन	मकड़ी
	देह सतह द्वारा अवशोषण	परजीवी जन्तु जैसे कि फीता कृमि
कार्बनिक घोल	तनु घोल से उद्ग्रहण	जलयी अकशेरुकी प्राणी
सहजीवियों द्वारा पोषकों की सप्लाई	अन्तःकोशिकी सहजीवी शैवाल	पैरामीसियम, स्पंज, प्रवाल जीव, हाइड्रा, क्लॉम

1.3.1 छोटे कणों का अशन

सूक्ष्म जीवाणु व शैवाल सीधे ही कोशिका के अन्दर पाचन धानी (digestive vacuole) द्वारा ग्रहण किये जा सकते हैं। परन्तु छोटे कणों का भोजन ग्रहण करने के सबसे सफल तरीके निस्यंदक अशन (filter feeding) या निलंबन अशन (suspension feeding) है। कणों के रूप में अपरद व जीवित और मृत प्लवक होते हैं। अधिकतर निस्यंदी भोजी पक्षमाभी सतह (ciliated surface) का प्रयोग करके ऐसे प्रवाह पैदा करते हैं जो कि भोजन के कण उनके मुख तक पहुंचाते हैं। जन्तु भोजन के निलंबित कणों को पानी में से अलग करने के लिये फ़िल्टर जैसी संरचनाओं का प्रयोग करते हैं। इस निलंबन के कार्य में उन्हें श्लेष्म (mucous) द्वारा सहायता मिलती है क्योंकि श्लेष्म में भोजन के कण चिपक जाते हैं। स्पन्जों की देह गुहा (body cavity) में कीपकोशिकाएं (choanoaytes) होती हैं जिनके द्वारा शरीर के अन्दर एक जल प्रवाह उत्पन्न होता है। देह भित्ति (body wall) में कई छेद याने ऑस्टिया होते हैं व पानी कशाभी कक्षों (flagelleted chambers) से गुजरता हुआ देह गुहा में पहुंचता है (चित्र 1.1)। भोजन के कण कशाभ (flagella) में फसते हैं और कीपकोशिकाओं की सतह पर केन्द्रित किये जाते हैं। यह कीपकोशिकाएं भक्षकाणुक्रिया (phagocytosis) द्वारा उन्हें अंतर्ग्रहित करती हैं।

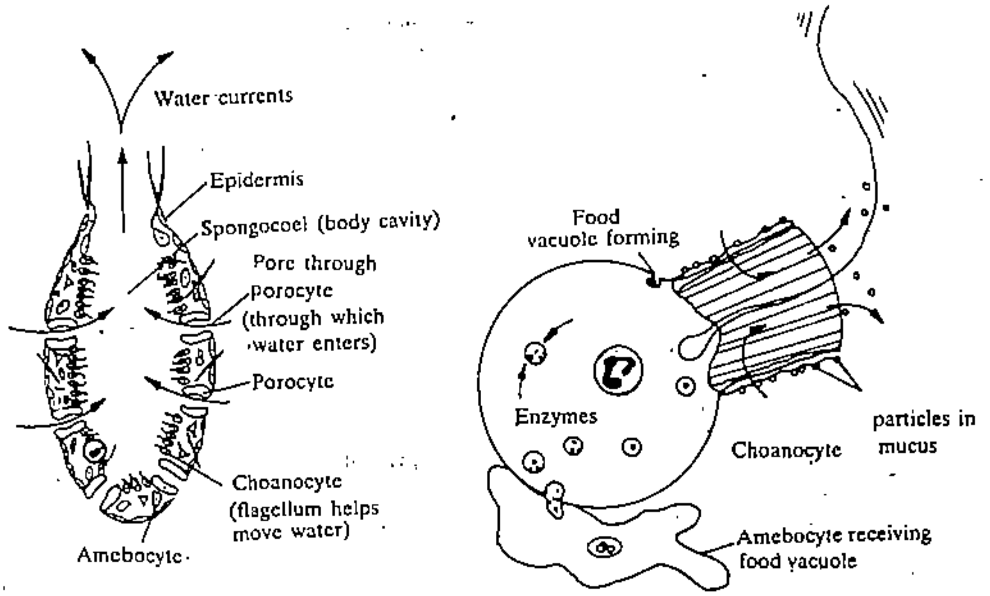

चित्र 1.1 : स्पंज अपना आहार समुद्र के पानी को फिल्टर करके प्राप्त करते हैं। भोजन के कण कॉलर कोशिकाओं अथवा कीपकोशिकाओं के ऊपर से जाते हैं और इनके अन्दर भक्षकाणुक्रिया (phagocytosis) द्वारा प्रविष्ट होते हैं।

इससे ज्यादा जटिल निस्यंदक के तरीके नलिका या ट्यूबों में रहने वाले पॉलीकीटस् में देखे जाते हैं जोकि भोजन को पकड़ने के लिये टेन्टेकल अथवा स्पर्शक की सहायता लेते हैं। निस्यंदक भोजी में स्थानबद्ध (sessile) और मुक्त रहने वाले दो प्रकार के प्राणी हैं। स्थानबद्ध प्राणी जो मिलता है वही ग्रहण करते हैं यद्यपि कुछ प्राणी आकार के अनुसार आहार का चयन करते हैं। उदाहरण के तौर पर *साबेला (Sabella)* जो कि एक ट्यूब में रहने वाला पॉलीकीट है, बड़े रेत के कण छोड़ कर केवल छोटे भोजन के कण को ही खाद्य खांच (food groove) में प्रविष्ट होने देता है (चित्र 1.2 a)।

मुक्त रूप से तैरने वाले जन्तु अपनी इच्छानुसार भोजन ग्रहण करते हैं। इनके कई उदाहरण हैं जैसे अनके सूक्ष्म क्रस्टेशियन, हेरिंग (herring), मेनहेडिन (menhaden) व बासकिंग शार्क (basking shark) जैसी मछलियां, कई पक्षी जैसे फ्लेमिंगो (flamingo), पेलिकन (pelican) व सबसे बड़ा स्तनधारी बेलीन व्हेल (baleen whale) है।

मछलियों में हेरिंग के क्लोम कर्षणी (gill rakers) (चित्र 1.2 b) होते हैं जोकि प्लवक पकड़ने की छलनी का काम करते हैं। बास्किंग शार्क केवल प्लवक का ही भोजन करती है और 1 घंटे में 200 टन पानी को फिल्टर करती है।

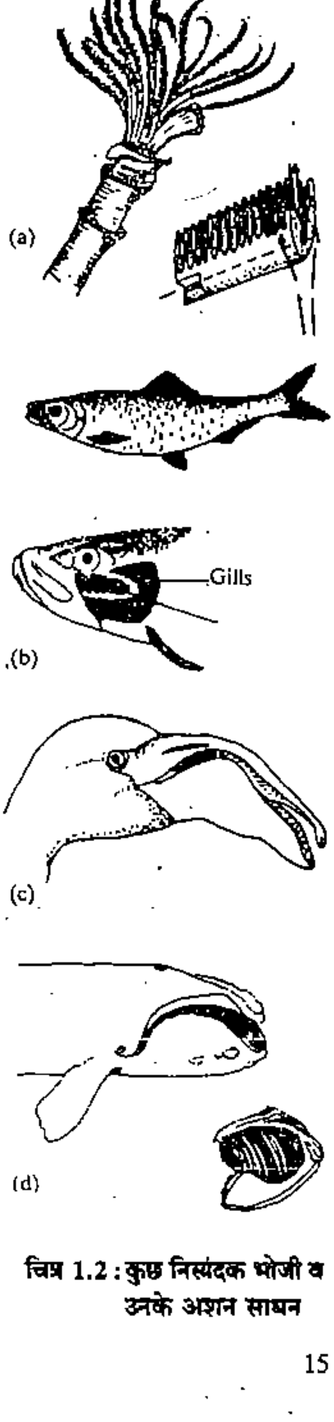

चित्र 1.2 : कुछ निस्यंदक भोजी व उनके अशन साधन

फ्लेमिंगो भी एक प्लवक खाने वाला पक्षी है जोकि अपनी चोंच को छलनी की तरह इस्तेमाल करके छोटे जीवों को पानी से पकड़ता है (चित्र 1.2 c) परन्तु बेलीन व्हेल खासतौर पर निस्यंदक अशन के लिये उपयुक्त है। उसका निस्यंदी अशन साधन कई श्रृंगी पट्टिकाओं (horny plate) की शृंखला होती है (चित्र 1.2 d)। जब व्हेल तैरती है तो पानी इन पट्टिकाओं के बीच से बहता है और प्लवक उनके बीच में फंस जाते हैं।

1.3.2 खाद्य स्थूलों का अशन

निस्यंदक भोजी (जोकि सिर्फ पानी में भोजन करते हैं) के विपरीत ठोस भोजन खाने वाले जन्तु केवल पानी तक सीमित नहीं रहते, और उनमें अपने अशन के तरीकों के अनुसार विभिन्न प्रकार के अनुकूलन होते हैं। केंचुए जैसे प्राणी जिस मिट्टी में रहते हैं उसी का अंतर्ग्रहण करते हैं और जब मिट्टी आहार

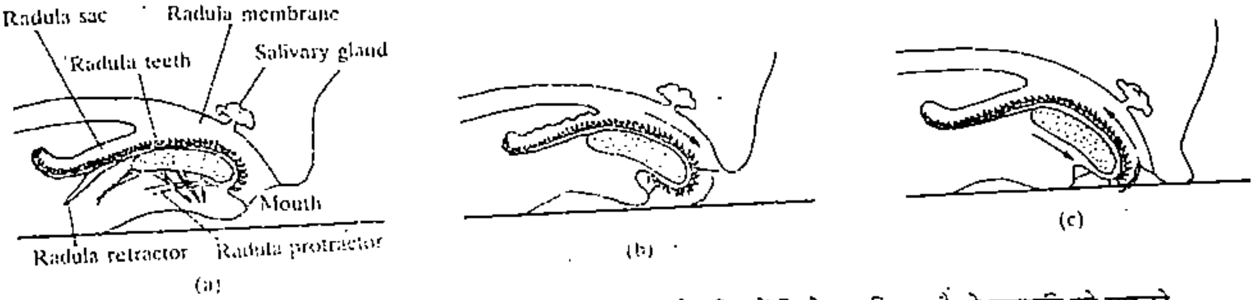

चित्र 1.3 : a) गैस्टोपॉड के सर का सममितार्धी परिच्छेद जिसमें कि रेडुला दिखता है जो वनस्पति को खुरचने व काटने के काम आता है।
b) रैडुला का अपाकुंचन (protraction)
c) रैडुला का आकुंचन (retraction)

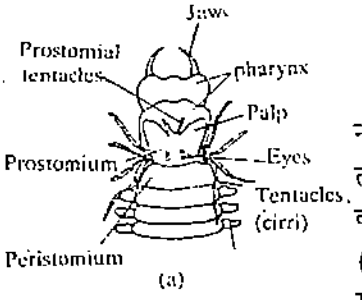

नली में से गुज़रती है तो उसके जैव पदार्थों का पाचन करते हैं। कई जानवर चबाने व खुरचने के तरीके अपना कर भोजन ग्रहण करते हैं। इनका भोजन प्रायः पेड़-पौधों का होता है। कई कीट, अकशेरुकी व कुछ शाकाहारी कशेरुकी भी यह तरीका अपनाते हैं। गैस्ट्रोपोड एक रेती जैसी संरचना जिसको **रैडुला** (radula) अर्थात् **रेतीजिव्हा** कहा जाता है का इस्तेमाल चट्टानों से शैवाल या अन्य वनस्पति को खुरचने में करते हैं (चित्र 1.3)।

अधिकतर माँसाहारी प्राणी सीधे अपने भोजन को पकड़कर समूचा निगल लेते हैं। परन्तु कुछ ही अकशेरुकी इस प्रकार भोजन प्राप्त करते हैं और इसका एक रोचक उदाहरण है नेरीस (*Neries*) नामक एक माँसाहारी पॉलीकीट, जिसके एक मांसल फेरिंक्स (pharynx) अथवा ग्रसनी है जिसमें काईटिनी जबड़े होते हैं। यह बाहर की तरफ निकल कर शिकार पकड़ने में सहायक होते हैं (चित्र 1.4)। एक बार शिकार पकड़ में आ जाने के बाद फेरिंक्स को अन्दर खींच लिया जाता है और शिकार निगल लिया जाता है। निम्न कोटि के कशेरुकी प्राणी (मछली) के दांत मुख्यतः शिकार को पकड़ने में सहायक होते हैं जिससे वह बचकर निकल न सके और निगल लिया जाये। इसका एक सुपरिचित उदाहरण सर्प है (चित्र 1.5)। उसके दांत पीछे की ओर मुड़े होते हैं, जबड़े फैल सकते हैं और पेट कभी-कभार मिलने वाले बड़े शिकार को ग्रहण करने का आदी होता है। पक्षियों के दाँत नहीं होते परन्तु उनकी चोंच शिकार पकड़ने व चीरने के लिये अनुकूलित होती है (चित्र 1.6)।

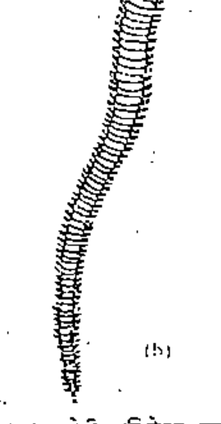

चित्र 1.4 : *नेरीस विरेन्स*, एक पोलीकोट (a) बहिर्वलित जबड़े के साथ शिकार पकड़ने वाला आगे का हिस्सा, (b) बाहरी ढांचा।

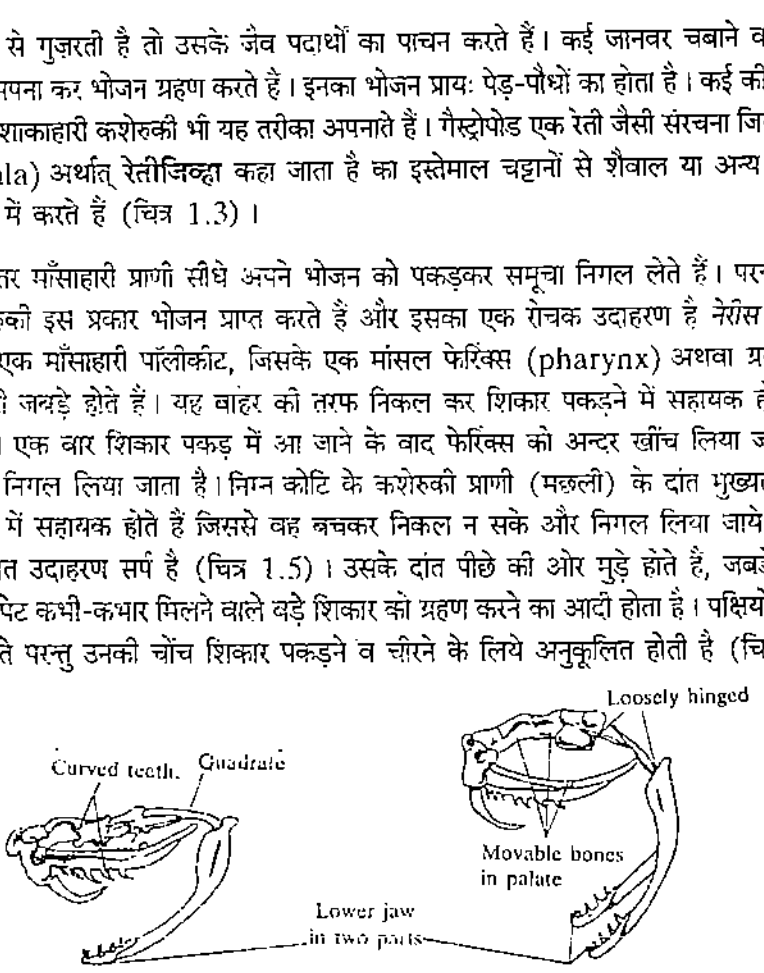

चित्र 1.5 : सर्प शिकार को फाड़ या चबा नहीं सकते वह शिकार को पूरा निगल लेते हैं। उनका मुख बहुत लचीला होता है उनके सर व जबड़े की हड्डियों की बनावट के कारण नीचे का जबड़ा ढीली तरह से क्वाड्रेट हड्डी से जुड़ा है और तालू की हड्डियां भी गतिशील होती है। यह शिकार को फैले हुए मुख के अन्दर लाने में सहायक होती हैं।

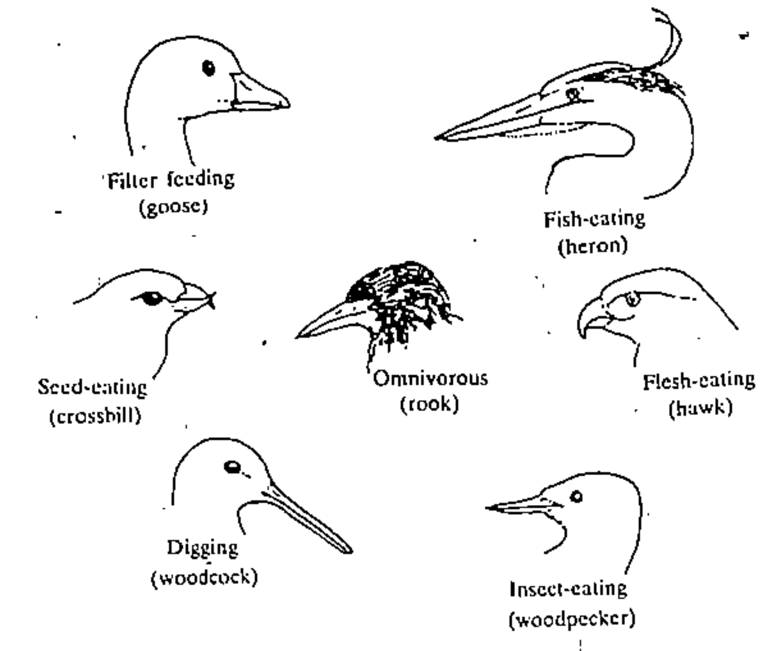

चित्र 1.6 : विभिन्न प्रकार की चोंच जोकि विभिन्न प्रकार की अशन विधियों के अनुकूल है।

असली चर्वण केवल स्तनधारियों में ही पाया जाता है उनके दाँत इसी कार्य के लिये उपयुक्त हैं। स्तनधारियों में चार प्रकार के दाँत होते हैं (चित्र 2.7) और प्रत्येक अलग प्रकार के अशन के अनुकूल होता है। कृतंक (incisors) दंत काटने व छीलने के लिये अनुकूलित होते हैं। रदनक दंत (canines) पकड़ने व भेदने के लिये, अग्रचर्वणक दंत (premolers) पीसने के लिये और चर्वणक दाड़ (molars) पीसने व चबाने के लिये। दाँतों का आकार व संख्या प्राणी के आहार के अनुसार होती है।

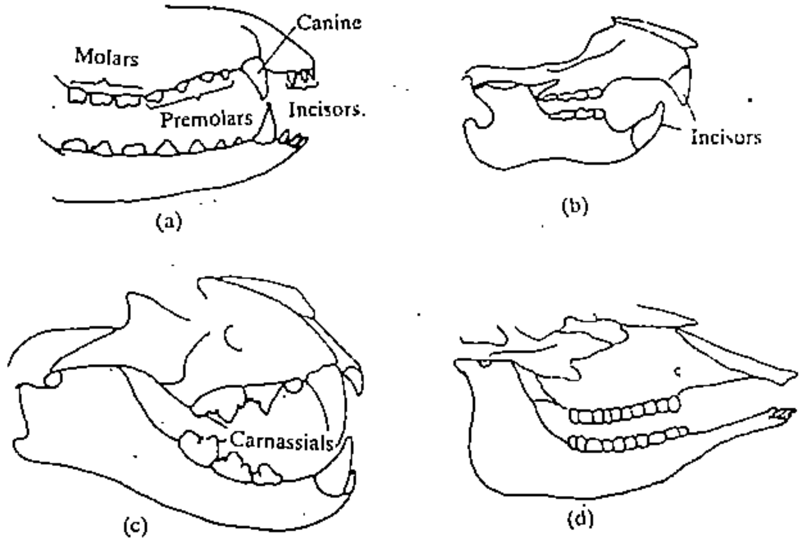

चित्र 1.7 : स्तनधारियों के दाँत (a) एक साधारण स्तनधारी के दाँत (b) गिलहरी (c) अफ्रीकी शेर (d) बैल।

1.3.3 द्रवों का अशन

द्रवों का अशन करने वाले जन्तुओं की अशन युक्तियां अति विशिष्ट होती हैं। कई प्रोटोजोआ, अंतः-परजीवी (endoparasites) और जलीय अकशेरुकी जन्तु पर्यावरण से पोषक अणु अपनी अध्यावरण (integument) द्वारा प्राप्त करते हैं। उदाहरणतः अंतःपरजीवी जिनमें परजीवी प्रोटोजोआ, फीताकृमि पर्णाभ (flukes), कई मोलस्क और क्रस्टेशियन हैं, यह जिस जन्तु पर निर्भर करते हैं उसके ऊतकों या आहार नली के द्रवों से घिरे होते हैं। यह द्रव अत्याधिक पोषक होते हैं। इन परपोषियों का अपना

मकड़ी द्रव्य पदार्थों पर भोजन करने वाले जीवों का एक रोचक उदाहरण है। उसका शिकार प्रायः उससे आकार में बड़ा व एक कड़ी काईटिन वाली सतह से ढका होता है। मकड़ी अतः अपने खोखले जबड़ों से उस कड़ी सतह को भेदती है और अपने पाचन द्रव्यों को शिकार के शरीर में डालती है। इन द्रव्यों से शिकार के ऊतक को द्रव्यमान करके मकड़ी वापस चूस लेती है।

पाचन तंत्र नहीं होता। हम सब इन कीटों से परिचित हैं जिनके भेदने व चूसने के अंग अच्छी तरह उन्नत होते हैं। ऐनेलिड, मच्छर, खटमल, जूं व जोंक इनके कुछ उदाहरण हैं। यह प्रतिसकंदक (anti-coagulant) का इस्तेमाल करते हैं जिससे कि रक्त जोकि इनके जबड़ों के भेदने से खून की धमनियों से निकला है, उसका थक्का न बन पाये।

बोध प्रश्न 2

क) आपने एक गिलहरी, गाय व कुत्ते को जरूर खाते हुए देखा होगा, आपके अनुसार उनकी दंत शैली में क्या भिन्नताएं होनी चाहिए?

....

....

....

ख) कॉलम अ के अशन उपकरण को कॉलम ब के भोजन से मिलायें।

(अ)		(ब)
1) रेडुला	क)	रक्त, पौधों का रस
2) पक्ष्माभ	ख)	मिट्टी में अपरद
3) श्लेष्म शीट	ग)	भोजन के बड़े स्थूल
4) चुषण मुखांग	घ)	चट्टानों पर शैवाल
5) दाँत	च)	निलंबित कण

1.4 पाचन

इससे पहले भागों में हमने पोषक तत्वों की जरूरत और विषमपोशी जीवों द्वारा विभिन्न प्रकार से पोषण प्राप्त करने के तरीकों पर विचार किया। भोजन चाहे वृद्धि के लिये या शरीर को ऊर्जा देने के लिये हो, भोजन के बड़े अणुओं को छोटे सरल संघटकों में परिवर्तित करना आवश्यक है जिससे कि वह शरीर में प्रयोग किया जा सके। **वह क्रिया जिसके द्वारा भोजन को छोटे सरल आण्विक अंशों में परिवर्तित किया जाता है उसे पाचन कहते हैं।** यह पाचन क्रिया एन्जाइम द्वारा होती है और यह कोशिका के भीतर अंतःकोशिकी या कोशिका के बाहर कोशिकाबाह्य प्रायः विशिष्ट पाचन क्षेत्र में होती है।

पहले हम अंतःकोशिकी पाचन पर विचार करते हैं और यह देखते हैं कि यह कोशिकाबाह्य पाचन से किस प्रकार भिन्न है।

1.4.1 अंतःकोशिकी पाचन

यह हम सबको ज्ञात है कि एक कोशिका वाले जीवों का अलग कोई पाचन तंत्र या नाल नहीं होता। जीवन के सारे कार्य एक ही कोशिका के भीतर चलते हैं। भोजन, कोशिका के अन्दर सीधा भक्षकाणुक्रिया या ऐन्डोसाइटोसिस से लिया जाता है और फिर एन्जाइम की सहायता से पाचन धानी में पाचित किया जाता है। चित्र 1.8 *अमीबा* में ऐन्डोसाइटोसिस के तरीके को दर्शाता है। इसी प्रकार का अंतःकोशिकी पाचन स्पंज, कुछ सीलेन्टरेट (coelentrate), टेनोफोर (ctenophore), टर्बिलेरियन (turbellarian) में होता है। यद्यपि इस क्रिया को अंतःकोशिकी पाचन करार दिया गया है, खाद्य पदार्थ वास्तव में कोशिकीय पदार्थों से एक झिल्ली द्वारा अलग रहते हैं जिसे पाचन के बाद पार कर सकते हैं। कुछ सीलेन्टरेट और प्लेटिहेल्मिन्थ (platyhelminthas) में, आहार नली या आंत्र होती है और यहां कोशिकाबाह्य पाचन जिसमें एन्जाइम का स्रावण गुहा के अंदर होता है, के साथ-साथ अंतःकोशिकी पाचन भी होता है जिसमें एंजाइम का स्रावण गुहा की सतह से लगी कोशिकाओं में होता है। फिर भी ऐनेलिड व मोलस्क में कोशिकाबाह्य की बजाय अंतःकोशिकी पाचन

ज्यादा होता है। नेमाटोड, (nematode), कीट, इकाइनोडर्म (echinoderm) व कशेरुकी प्राणियों में पाचन पूर्ण रूप से कोशिकाबाह्य होता है।

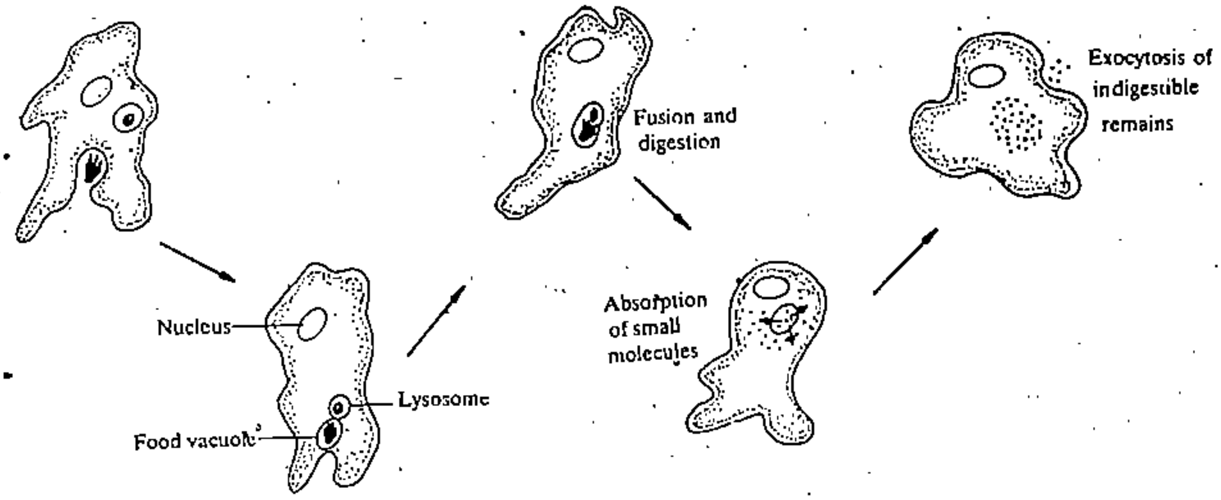

चित्र 1.8 : अमीबा में पाचन क्रिया।

1.4.2 पाचन क्षेत्र

कोशिकाबाह्य पाचन एक ट्यूब या नली जैसी गुहा जो जीव के पूरी लम्बाई में फैली होती है, में किया जाता है। फ्लेटवर्म से उच्चतर सभी प्राणी वर्गों में ट्यूब जैसी पाचन नली व्यवस्था होती है जो दोनों किनारों से खुली होती है। कोशिकाबाह्य पाचन के विकास के द्वारा जीवों को लगातार छोटे कणों को खाने से मुक्ति मिली। प्राणी द्वारा अब भोजन के बड़े स्थूल अंतर्ग्रहित किये जा सकते थे। पाचन क्षेत्र का संगठन होने से भोजन एक ही दिशा में जाता है जिससे कि वह पाचन के खास क्षेत्रों से गुजर सके (चित्र 1.9)।

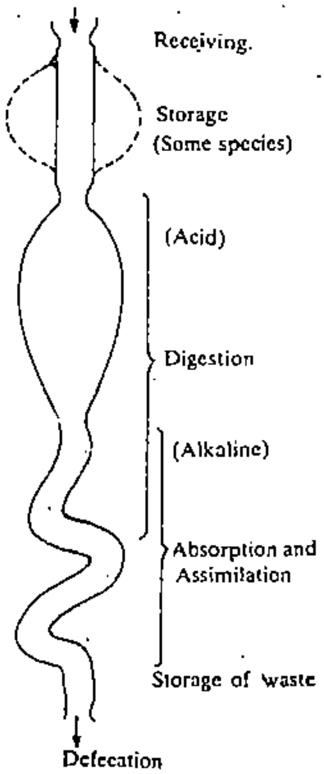

चित्र 1.9 : सामान्य पाचन क्षेत्र। एक दिशा में भोजन जाने से, पाचन अनुक्रमिक तरह से होता है। कटी हुई लकीरें कुछ जानवरों के क्रॉप दर्शाती हैं।

सामान्यतः उत्तरजन्तु अर्थात् मैटाजोअन (metazoan) का पाचन तंत्र चार प्रमुख क्षेत्रों में विभाजित होता है।

- अभिगृहण क्षेत्र
- चालान व संचयन क्षेत्र
- पाचन व अवशोषण क्षेत्र
- चालन व मल बनने का क्षेत्र

अभिग्रहण (reception) का क्षेत्र चबाने व चर्वण के खास उपकरणों (जैसे दांत) से संयुक्त होता है। संघर्ष करते शिकार का पक्षाघात करना (लार में विषैले एंजाइम द्वारा), पाचन को आरम्भ करना व श्लेष्म द्वारा भोजन का स्नेहन करने का कार्य भी अभिग्रहण क्षेत्र में ही होता है।

कशेरुकी व कुछ अकशेरुकी प्राणियों में ग्रासिका अर्थात् इसोफेगस (oesophagus), बोलस (bolus) (चबाये भोजन का स्थूल) को क्रमाकुंचन (peristalsis) द्वारा मुख गुहिका (buccal cavity) से चालित करता है। कुछ प्राणियों में इस क्षेत्र में संचयन करने के लिये क्रॉप (crop) भी होता है। चिड़ियों में इस क्रॉप का उपयोग पाचन व हल्के किण्वन के लिये किया जाता है। बाद में यह भोजन चिड़िया अपने बच्चों के लिये उद्गलित करती है। यह संचय क्षेत्र जन्तुओं को उस समय भोजन प्रदान करता है जब भोजन की कमी होती है। उदाहरणतः जोंक बड़ी मात्रा में रक्त का भोजन कभी-कभी लेती है और इसको एक माह तक धीरे-धीरे पाचित करती है। शाकाहारी जन्तु जल्दी से लिये गये भोजन को घंटों तक चर्वण करते हैं व इसे अपने पेट में बाद के लिये संचित करते हैं।

तीसरे क्षेत्र या पाचन क्षेत्र में भोजन को एन्ज़ाइम द्वारा ऐसे रूप में परिवर्तित करा जाता है जो आसानी से जीव अवशोषित कर सके। जैसे-जैसे भोजन पाचित होता है, अवशोषित भोजन रक्त धारा में चला

जाता है और वह भोजन जिसका अवशोषण नहीं होता आहार नली के आखिरी क्षेत्र में कुछ देर के लिये संचित होता है। यहां उसमें से आधिक्य जल निष्कासित किया जाता है और उसके अपाचित कणों को गठित करके मल में परिवर्तित करा जाता है। अंत में मल शरीर से निष्कासित किया जाता है। कशेरुकी प्राणियों में यह कार्य बृहदांत्र (larger intestines) में किया जाता है।

उच्च कशेरुकी प्राणियों में आहार नली का हर क्षेत्र एक विशेष रूप से एक ही कार्य के लिये नियुक्त है। पाचन संबंधित एन्ज़ाइम ग्रंथियों व आहार नली की दीवार या भित्ती में बनाये जाते हैं। अवशोषण प्राथमिक तौर से आंत्र में किया जाता है।

1.4.3 पाचक एन्ज़ाइम

अब हम पाचन के आम सिद्धान्तों के बारे में बात करेंगे जो कि सभी पशुओं से संबंधित है। पहले हम उन पाचक एन्ज़ाइम के बारे में पढ़ेंगे जोकि बड़े खाद्य अणुओं को छोटे विलयशील अणुओं में परिवर्तित कर देते हैं, इस क्रिया के लिये पानी की आवश्यकता होती है और इसको **जल-अपघटन** (hydrolysis) कहते हैं। इस भाग को पढ़ने से पहले आप LSE-01 इकाई 9 और 10 को संक्षेप में दोहरालें जिसमें एन्ज़ाइम की प्रकृति और गुणों के बारे में बताया गया है। पाचक एन्ज़ाइम आम एन्ज़ाइम से निम्नलिखित कारणों से भिन्न हैः

क) पाचक एन्ज़ाइम बहुत ज्यादा विशिष्ट नहीं होते हैं वरन् उनमें समूह विशिष्टता होती है। उदाहरणतः जो एन्ज़ाइम कार्बोहाइड्रेट के पाचन में काम आते हैं वो पशुओं और पेड़-पौधों दोनों के पॉलीसेकराइड का पाचन कर सकते हैं।

ख) हालांकि एंज़ाइम जो विभिन्न पशुओं में एक सा ही काम करते हैं उनको एक नाम दिया जाता है, वो रासायनिक तौर पर समान नहीं होते, जैसे कि ट्रिप्सिन (trypsin) (जो प्रोटीन का जल अपघटक एन्ज़ाइम है) मनुष्य और मछली में अलग-अलग तरह का होता है। उसके काम करने के अनुकूलतम तापमान और pH में भी अन्तर होता है। जैसे कशेरुकी अग्नाशय अर्थात् पैनक्रिया से उपलब्ध ट्रिप्सिन pH 7-9 के बीच काम करता है परन्तु रेशम कीट में ट्रिप्सिन रेन्ज pH 6.2-9 के बीच है।

ग) पाचक एन्ज़ाइम जो कि अग्नाशय से प्राप्त होते हैं और ज्यादातर जो प्रोटीन का पाचन करते हैं वो निष्क्रीय रूप में स्रावित होते हैं।

पाचक एंज़ाइम मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं:

i) प्रोटिएसिस (proteases) जो प्रोटीन के पेपटाइड बंधन का जल अपघटन करते हैं

ii) कार्बोहाइड्रेसिस (carbohydrases) जो कि कार्बोहाइड्रेट ग्लाइकोसिडिक बंधनों का जल अपघटन करते हैं।

iii) लाइपेस (lipases) जो वसा के एस्टर बंधनों का जल अपघटन करते हैं।

प्रोटीन पाचन

प्रोटीन का पाचन करने वाले एन्ज़ाइम मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं प्रोटीन अणु में ये एन्ज़ाइम जिस जगह पर काम करते हैं उसके अनुसार ये **एन्डोपेप्टीडेस** (endopeptidasc) या **एक्सोपेप्टीडेस** (exopeptidascs) कहलाते हैं। एन्डोपेप्टीडेस प्रोटीन अणु के भीतरी भाग में काम करते हैं जिससे लम्बी पेप्टाइट शृंखला छोटे-छोटे टुकड़ों में टूट जायें और एक्सोपेप्टीडेस क्रिया के लिये अनेक साइट (sites) या स्थल उपलब्ध हो जाते हैं।

एक्सोपेप्टीडेस, पेप्टाइड शृखला के अंतिम सिरो पर काम करता है, जिससे ऐमीनो अम्ल, डाईपेप्टाइड और ट्राइपेप्टाइड मुक्त होते हैं। एन्डोपेप्टीडेस और एक्सोपेप्टीडेस कई प्रकार के होते हैं जो तालिका 1.7 में दर्शाये गये हैं।

इस तालिका में हम यह देखते हैं कि एक्सोपेप्टिडेस और एन्डोपेप्टिडेस एक खास पेप्टाइड आबन्ध को तोड़ते हैं और यह उसके रासायनिक ग्रुप पर निर्भर करता है पर निष्क्रिय रूप में स्रवित प्रोटीन पाचक एन्ज़ाइम को एक सक्रियक और स्वोत्प्रेरक (autocatalysts) की ज़रूरत पड़ती है जो उसे सक्रिय

तालिका 1.7 : प्राणियों में प्रोटिएसस्

कोशिकाबाह्य एन्ज़ाइम निष्क्रिय रूप $\xrightarrow[\text{स्वोत्प्रेरक}]{\text{सक्रिय}}$ सक्रिय रूप	प्रभावित पेप्टाइड बंध
एन्डोपेप्टिडेसस	
पेप्सिनोजन $\xrightarrow[\text{पेप्सिन}]{HCl}$ पेप्सिन	एरोमैटिक ऐमीनो अम्ल में (टाइरोसिन व फेनिलएलानिन) ऐमीनो समूह का बंध
ट्रिप्सिनोजन $\xrightarrow[\text{ट्रिप्सिन}]{\text{एन्टरोकाइनेज़}}$ ट्रिप्सिन	आर्जिनिन या लाइसिन के कार्बोक्सिल समूह से बंध
काइमोट्रिप्सिनोजन $\xrightarrow{\text{ट्रिप्सिन.}}$ काइमोट्रिप्सिन	एरोमैटिक ऐमीनो अम्ल (ट्रिप्टोफैन, टाइरोसिन, फेनिल-एलानिन) में कार्बोक्सिल समूह से बंध, यदि मेथायोनीन व ल्यूसिन उपस्थित होते हैं तो उनके निकटवर्ती बंध भी टूटते हैं
एक्सोपेप्टिडेसस्	
एमीनोपोप्टिडेस (Mn^{2+}, Mg^{2+}, Zn^{2+})	मुक्त ऐमीनो समूह युक्त अंतिम ऐमीनो अम्ल के बंध
कार्बोक्सीपेप्टिडेस (Zn^{2+}) ट्रिप्सिन	मुक्त कार्बोक्सिल समूह युक्त ऐमीनो अम्ल के बंध
डाइपेप्टिडेस (Mn^{2+} Mg^{2+} Zn^{2+})	दो ऐमीनो अम्लों के बीच के बंध

रूप में परिवर्तित कर देते हैं। जैसे पेप्सिनोजन कशेरुकी आमाशय से स्रावित होता है और आमाशय HCl भी स्रावित करता है जो कि माध्यम को अम्लीय कर देता है जिससे पेप्सिनोजन पेप्सिन में परिवर्तित हो जाता है। अब यह पेप्सिन ही डाइकार्बोक्सिलिक और ऐरोमैटिक ऐमीनो अम्लों के बीच के पेप्टाइड बंध का जल अपघटन करता है (चित्र 1.10 a)। इस तरह से पोलीपेप्टाइड के छोटे-छोटे टुकड़े बन जाते हैं।

अकशेरुकी प्राणियों में पेप्सिन नहीं होता है और उनका मुख्य एन्डोपेप्टिडेस ट्रिप्सिन की तरह होता है। चित्र 1.10 (a) को फिर से देखिए काइमोट्रिप्सिन भी ऐरोमैटिक ऐमीनो अम्ल के पेप्टाइड बंध को तोड़ता है परन्तु अंतिम कार्बोक्सिल ग्रुप वाले छोर को जबकि पेप्सिन उसके ऐमीनो ग्रुप वाले छोर के पेप्टाई बंध को तोड़ता है।

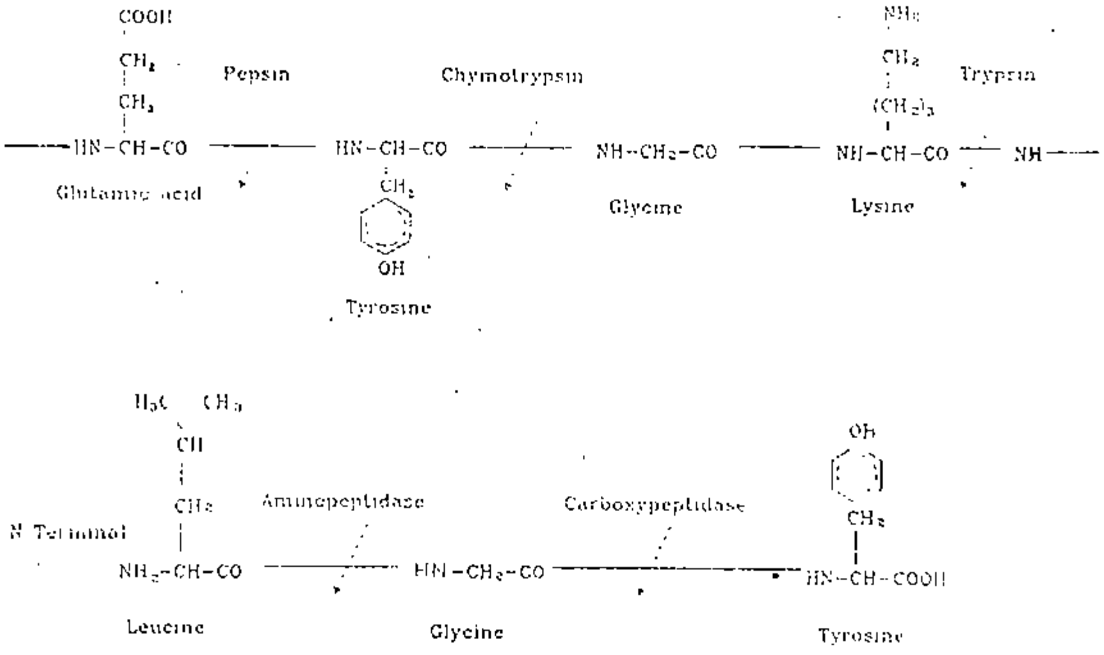

चित्र 1.10 : प्रोटीन पाचन के एन्ज़ाइम a) प्रोटीन खंड के विशिष्ट पेप्टाइड बंध पर काम करते हुए। b) ट्राइपेप्टाइड का विखंडन; परन्तु दोनों एक्सोपेप्टिडेस एक ही ट्राइपेप्टाइड पर काम नहीं कर सकते।

ट्रिप्सिन, अग्न्याशय (pancreas) से निष्क्रिय रूप से स्रावित होता है जिसको **ट्रिप्सिनोजन** कहते हैं। यह आंत की ग्रंथियों से स्रावित एन्टेरोकाइनेस के द्वारा सक्रिय रूप में परिवर्तित होता है। जैसे-जैसे ट्रिप्सिन बनता है वह और ट्रिप्सिनोजन को ट्रिप्सिन में परिवर्तित करता रहता है। इसको **स्वोत्प्रेरक**

सक्रियण (autocatalytical activation) कहते हैं। ट्रिप्सिन क्षारिय माध्यम pH 7-9 में काम करता है। यह आर्जिनीन और लाइसीन जैसे क्षारीय ऐमीनो अम्लों के निकटवर्ती बंध को तोड़ता है।

पोलीपेप्टाइड के टुकड़े का पाचन एक्सोपेप्टिडेस द्वारा होता है। कार्बोक्सीपेप्टिडेस को काम करने के लिये Zn^{2+} और ट्रिप्सिन की जरूरत होती है। बाकी एक्सोपेप्टिडेस सक्रिय रूप से स्रावित होते हैं लेकिन उनकी सक्रियता बढ़ाने के लिये सहकारक (cofactor) के रूप में धातु आयन की जरूरत पड़ती है।

चित्र 1.10 (b) से यह ज्ञात होता है कि ऐमीनो पेप्टिडेस पेप्टाइड शृंखला के ऐसे अन्तिम ऐमीनो अम्ल को अलग करता है जिसमें मुक्त ऐमीनो ग्रुप होते हैं और कार्बोक्सी पेप्टिडेस उन अन्तिम एमीनो अम्लों को अलग करता है जिनमें मुक्त कार्बोक्सिल ग्रुप होते हैं। इस तरह से ये एन्ज़ाइम दोनों छोर से पेप्टाइड अलग करते रहते हैं और अंत में केवल डाइपेप्टाइड रह जाते हैं जिनमे सिर्फ दो ऐमीनो अम्ल होते हैं। इन युग्मित ऐमीनो अम्ल के बंध डाइपेप्टिडेस द्वारा विखंडित करे जाते हैं और इस प्रकार ये ऐमीनो अम्ल मुक्त हो जाते हैं जो अब आंत्र कोशिकाओं द्वारा अवशोषित किये जा सकते हैं।

कार्बोहाइड्रेट पाचन

सरल शर्करा जैसे कि ग्लूकोस और फ्रक्टोस का अवशोषण और उपापचयन सीधे हो जाता है परन्तु डाइसैकराइड जैसे कि सुक्रोस या लैकटोस और पोलीसैकैराइड जैसे कि स्टार्च और ग्लाइकोजन का मोनोसैकराइड में परिवर्तित होना आवश्यक है जिससे वह उपापचयी पथ में इस्तेमाल हो सके। **कार्बोहाइड्रेस** (carbohydrases) जोकि कार्बोहाइड्रेट का पाचन करते हैं दो श्रेणी में डाले जाते हैं:

i) **पोलीसैकरेस** (polysaccharases) जोकि पौलीसैकराइड को डाईसैकराइड और ट्राइसैकराइड में विखंडित कर देते हैं।

ii) **ग्लाइकोसिडेस** (glycosidases), जोकि डाइसैकराइड और ट्राइसैकराइड को मोनोसैकराइड में विखंडित कर देते हैं।

कार्बोहाइड्रेट का पाचन भी प्रोटीन की तरह कई चरणों में होता है। तालिका 1.8 में कार्बोहाइड्रेट पाचन के चरण व उनमें काम आने वाले एन्ज़ाइमों की सूची है।

तालिका 1.8 : कार्बोहाइड्रेट का पाचन

पोलीसैकराइड ($C_6H_{10}O_5$)	पोलीसैकरोस →	डाइसैकराइड $C_{12}H_{22}O_{11}$	ग्लाइकोसिडेसस् →	मोनोसैकराइड ($C_nH_{2n}O_n$)
ग्लाइकोजन (पशु)	एमिलेस →	माल्टोस	माल्टेस →	ग्लूकोस
स्टार्च (पेड़-पौधे)	एमिलेस →	माल्टोस	माल्टेस →	ग्लूकोस
सेलुलोस (पशु और पेड़ पौधे)	सेलुलेसस् →	सेलोबायोस	सेलोबायोसस् →	ग्लूकोस
		ट्रिहेलोस (कीट व कुछ पौधे)	ट्रिहेलेस →	ग्लूकोस
		लैक्टोस	लैक्टेस →	गैलेक्टोस ग्लूकोस
		सूक्रोस	इनवर्टेस →	फ्रक्टोस ग्लूकोस

कशेरुकी और अकशेरुकी जीव-जन्तुओं में कार्बोहाइड्रेट का पाचन एक सा होता है। तालिका 1.8 में दिखाये गये सारे एन्ज़ाइम सारे पशुओं में काम नहीं आते हैं। पशुओं के आहार के अनुसार उनमें ये एन्ज़ाइम होते हैं। ऐमिलेस और माल्टेस सबमें मिलते हैं। ऐमिलेस का स्राव मनुष्य की लार के साथ और अधिक मात्रा में अग्न्याशय से होता है।

पशुओं में एन्ज़ाइम का उत्पादन उनके अनुवांशिक गुणों और एन्ज़ाइम विप्रेरण (enzyme activation) पर निर्भर करता है। जैसे कि आंत्र के विलाई से माल्टेस का उत्पादन और सूक्रेस का उत्पादन शक्कर अन्तर्ग्रहण पर निर्भर करता है। अगर ज्यादा माल्टोस और सूक्रोस युक्त खाना खाया जाता है तो दो से पांच दिनों के भीतर आंत्र से ज्यादा माल्टेस और सूक्रेस बनने लगता है। शैशव के बाद जब आंत्र बढ़ती है तब मनुष्य में लैक्टेस का उत्पादन कम हो जाता है। यहाँ तक कि लैक्टेस का उत्पादन किसी-किसी व्यक्ति में तो बिल्कुल बंद हो जाता है और तब इस शर्क़रा का अपघटन भी बन्द हो जाता है।

आयु बढ़ने के साथ-साथ 2-18% कॉकेशन लोगों में और 95-100% पूर्वनिवासी तथा अफ्रीकी लोगों में लैक्टेस उत्पन्न करने की क्षमता समाप्त होने लगती है। ये दूध को नहीं पचा पाते हैं और इसलिये इनकी आहार नली में दूध का किण्वन होने लगता है। परन्तु दही और पनीर के सेवन से ऐसी कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती क्योंकि इन पदार्थों में जीवाणु क्रिया के फलस्वरूप 2% से भी कम लैक्टोस होता है।

अब हम सेलुलोस के पाचन के बारे में पढ़ेंगे। ये पेड़-पौधों का सबसे जरूरी संरचनात्मक पदार्थ है और शाकाहारी जन्तुओं के आहार का मुख्य अंगभूत है। लेकिन बहुत कम पशुओं में इसका पाचक एंज़ाइम सेलुलेस पाया जाता है। तब पशु जो पेड़-पौधे खाते हैं, इस कार्बोहाइड्रेट का पाचन कैसे करते हैं? सेलुलेस एन्ज़ाइम का संश्लेषण कई जीवाणु और प्रोटिस्टन (protistans) में होता है जोकि कई कीट और शाकाहारियों में सहजीवी है। ये जीवाणु रोमन्थियों (जैसे की गाय, भेड़ आदि) के पेट में रहते हैं और सेलुलोस का विखंडन करते हैं। विखंडन के पदार्थ रोमन्थियों द्वारा उपयोग में लाये जाते हैं। कुछ अकशेरुकी जन्तुओं में जैसे कि, सिल्वर फिश *टेनोटेपिस्मा लिनियेटा (Ctenolepisma lineata)* में सेलुलेस होता है लेकिन ये कीड़ा सिर्फ सेलुलोस के आहार पर जीवित नहीं रह सकता है। कुछ और अकशेरुकी जन्तुओं में भी सेलुलेस होता है लेकिन वो बिना सहजीवक की मदद से पूरी तरह से सेलुलोस का पाचन नहीं करते हैं।

दीमक की आंत में रहने वाले सहजीवी फ्लेजिलेट अवायुजीवी है। इसी कारण से यदि दीमक को ऐसे वातावरण में रखा जाये जहाँ ऑक्सीजन का वायुमंडलीय दाब 3.5 atm हो तो, सहजीवी फ्लेजिलेट आधे घंटे में मर जाते हैं। अब यह दीमक लकड़ी के आहार पर जीवित नहीं रह सकती यद्यपि इनकी आंत में अन्य जीवाणु जीवित होते हैं। इस परीक्षण से यह पता चलता है कि दीमक में अन्य जीवाणु के अपेक्षा अवायुजीवी प्रोटोज़ोआ ही सेलुलोस के पाचन के लिये उत्तरदायी हैं।

लिपिड पाचन

वसा का पाचन कशेरुकी और अकशेरुकी जन्तुओं में एक सा होता है। **लाइपेस** वो एन्ज़ाइम होते हैं जोकि वसा का जल अपघटन करते है। एक ही लाइपेस वसा के विखंडन के हर चरण का उत्प्रेरण कर सकता है। कशेरुकी अग्न्याशय वसा के विखंडन के लिये लाइपेस का स्रावण करता है। परन्तु विखंडन से पूर्व यह आवश्यक है कि एक अपमार्जक तरह की क्रिया द्वारा वसा के बिन्दुओं का पायसीकरण (emulsification) हो जाये। यकृत से निकले पित्त लवण (bile salt) लेसिथिन और कॉलेस्टरॉल मिसल (miscelles) की रचना करके इस काम को करते हैं। यह क्षारीय माध्यम में वसा-जल अंतरावस्था के प्रष्ट तनाव को कम करते हैं जिससे वसा की बहुत छोटी बूंदें बन जाती हैं। अब लाइपेस उन पायसीकृत बूंदों का पाचन कर लेते हैं। इस क्रिया से जो वसा अम्ल और मोनोग्लीसरेट बनते हैं वह पित्त लवण द्वारा विलयशील रहते हैं और उनका अवशोषण हो जाता है।

ग्लीसरॉल (glycerol) जल में विलयशील है और आसानी से उसका अवशोषण और उपापचयन हो जाता है। कुछ वसा जैसे मक्खन सीधे आंत्र की उपकला (एपेथीलियम) से बिना जल अपघटन के अवशोषित हो जाता है।

1.4.4 पाचन नली का अनुरक्षण

पाचक एन्ज़ाइम के बारे में पढ़ने के बाद आप यह सोचते होंगे कि इन एन्ज़ाइमो से आहार नली की उपकला को क्षति क्यों नहीं पहुंचती? क्योंकि पशुओं में बहुत से सुरक्षा साधन होते हैं जिससे आहार नली की उपकला का स्वपाचन नहीं होता। कशेरुकी जन्तुओं के श्लेष्मा कोशिकाओं द्वारा मामूली सा क्षारीय श्लेष्मा का स्रावण होता है जो आहार का स्नेहन करता है और उपकला की कोशिकाओं को संक्षारक (corrosive) से बचाता है। इसके साथ ही उपकला की कोशिका की बाहरी सतह के पार्श्व प्रष्ट आपस में मजबूती से जुड़े होते हैं जिससे कि स्राव उनके अन्दर प्रवेश नहीं कर सकते हैं। परीक्षणों से ये ज्ञात हुआ है कि चूहों में आहार नली की आन्तरिक सतह का हर तीसरे दिन और मनुष्य में 5-6 दिनों में नवीकरण हो जाता है। अकशेरुकी जन्तुओं में भी समान प्रक्रिया होती है। कीटों में अग्रांत

(foregut) और पश्चांत्र (hindgut) में क्यूटिकल की सतह होती है। इस सतह का नाम इन्टिमा (initima) है। सिर्फ मध्यांत्र (midgut) की वह उपकला कोशिकाएं जहाँ सारा पाचन कार्य होता है आरक्षित होती हैं। कई कीटों में मध्यांत्र की सतह पर एक बारीक झिल्ली होती है जिसे पेरिट्रोफिक झिल्ली (peritrophic membrane) कहते हैं। यह कशेरुकी श्लेष्मक झिल्ली की तरह होती है।

1.4.5 पाचन क्रिया का समन्वयन

आप यह पढ़ चुके हैं कि पाचन एक ऐसी क्रिया है जिसमें आहार के बड़े अणु कई चरणों में विखंडित होकर अपने रचक पदार्थों में परिवर्तित होते हैं। आद्य उत्तरजन्तु (primitive metazoans) जो अनवरत् भोजी है, उसकी एन्ज़ाइम स्रावी कोशिकाएं निरंतर स्राव करती हैं। उच्चतर पशुओं में आमाशय से आंत्र में भोजन के गमन और फिर सही समय पर पाचक एन्ज़ाइमों के स्राव के नियंत्रण के लिये कुछ प्रथक और अधिक सूक्ष्म तरीकों की आवश्यकता होती है। पाचन क्रिया के समन्वयन में हमें तंत्रिका तंत्र और हॉर्मोन क्रियाओं के पारस्परिक प्रभाव का बहुत सुन्दर उदाहरण मिलता है। स्तनधारियों के मुंह में लार का नियंत्रण पूरी तरह से तंत्रिक है। जठरीय स्रवण हॉर्मोनी और तंत्रिक नियन्त्रण में हैं। आंत्र से स्रवण धीमी गीत से होता है और हॉर्मोनों द्वारा नियन्त्रित है। जठरांत्रिय (gastro-intestinal) स्रवण मुख्य रूप से **जठरांत्र हॉर्मोनों** (gastro-intestinal) के नियन्त्रण में होता है। ये हॉर्मोन जठरीय और आंत्र के म्यूकोसा में स्थित अंतःस्रावी ग्रन्थियों से स्रावित होते हैं।

जठरांत्रीय हॉर्मोन

स्तनधारियों में तीन मुख्य प्रकार के जठरांत्रीय हॉर्मोन होते हैं — सेक्रटिन (secretin), ग्रैस्ट्रिन (gastrin) और कोलेसिस्टोकाइनिन CCK (cholecystokinin) इसके अतिरिक्त कई और हॉर्मोन भी हैं जो सभी पेप्टाइड होते हैं। तालिका 9.1 में केवल तीन मुख्य हॉर्मोन के प्रभाव बताए गये हैं।

तालिका 1.9 : स्तनधारियों के जठरांत्रीय हॉर्मोन (−) संदमन का और (+) सक्रियण का चिन्ह हैं।
हॉर्मोन जो कि बाकी दो से ज्यादा जरूरी है का संकेतक + + + है।

	गैस्ट्रिन	सेक्रेटिन	कोलेसिस्टोकाइनिन
स्रवण	अमाशय द्वारा	डुओडिनम द्वारा	डुओडिनम द्वारा
स्रवण के लिये उद्दीपक	पेप्टाइड परानुकम्पी तंत्रिकाएं	अम्ल (HCl)	एमीनो अम्ल वसाअम्ल
प्रभाव			
1) जठरीय गतिशीलता पर :	+	—	—
2) जठरीय HCl के स्रवण पर	+ + +	—	—
3) अग्न्याशया स्रवण पर :			
बाइकार्बोनेट	+	+ + +	+
एन्ज़ाइम	+	+	+ + +

गैस्ट्रिन स्रवण HCl की मात्रा पर नियंत्रण करता है और HCl उपस्थित होता है तो गैस्ट्रिन स्रवण रुक जाता है। सेक्रेटिन का स्रवण अम्लीय अवस्थाओं में (कम pH) में होता है। पाचित वसा और पित्त की उपस्थिति में जिस अग्न्याशय रस स्राव का शुरू होता है उसमें एन्ज़ाइम कम और अम्लीय काइम (chyme) का निराकरण करने वाले लवण ज्यादा होते हैं। CCK का स्रवण तब होता है जब अध पचे प्रोटीन या HCl उपस्थित होते हैं। उससे ऐसे अग्न्याशय रस का प्रवाह शुरू होता है जिसमें एन्ज़ाइम अधिक होते हैं। चित्र 1.11 में कुछ जठरांत्र हॉर्मोनों के प्रभाव का सारांश दिया गया है

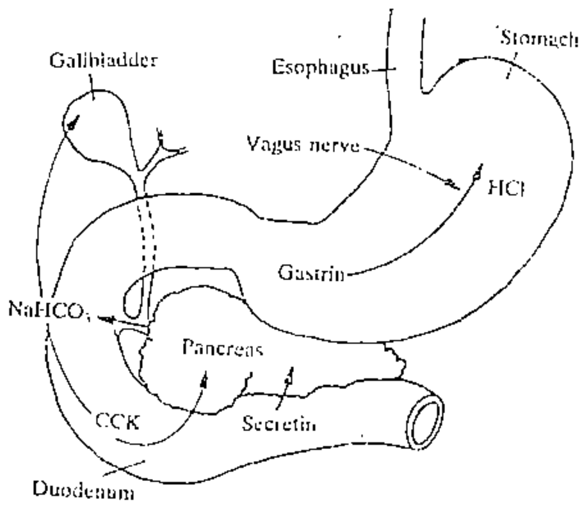

चित्र 1.11 : कई जठरांत्र हार्मोनों का प्रभाव।

जठर के प्रसार, उसमें उपस्थित प्रोटीन और वेगस तंत्रिका द्वारा उद्दीपन की प्रतिक्रिया में गैस्ट्रिन का स्रवण होता है। जठर के निचले भाग से जो गैस्ट्रिन निकलता है वो HCl के स्रवण और पेप्सिन स्रावी कोशिकाओं को उत्तेजित करता है। कोलेसिस्टोकाइनिन (CCK) अग्न्याशय को उत्तेजित करता है जिससे काइम का निराकरण करने वाले पाचन एन्ज़ाइम और क्षारक का स्रवण होता है। CCK पित्ताशय को सिकोड़ता है जिससे पित्त नमक का स्रवण होता है। CCK का स्रवण तब होता है जब ऐमीनो अम्ल और वसा अम्ल जठर से डुओडिनम (duodenum) में आते हैं।

बोध प्रश्न 3

क) पाचन क्षेत्र में मुख और गुदा के होने से क्या लाभ होता है।

....

....

ख) सही उत्तर का चयन कीजिए।

पाचन किसके द्वारा किया जाता है?

i) अम्ल ii) एन्ज़ाइम iii) क्षारीय घोल iv) विटामिन व खनिज

ग) रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरें:

पाचन क्रिया में प्रोटीन .... में बदले जाते हैं, कार्बोहाइड्रेट .... में, वसा .... व .... में परिवर्तित होते हैं।

घ) तीन हॉर्मोन पाचन रसों को उत्तेजित करते हैं .... जठर रसों का उत्तेजन, ... बाइकार्बोनेट आयन के मोचन को उत्तेजित करता है। .... पित्त व अग्न्याशय एन्ज़ाइमों के स्रवण को उत्तेजित करता है।

1.5 अवशोषण

मोनोसैकराइड, ऐमीनो अम्ल व पाचन के अन्य उत्पादन प्राणियों के अन्य ऊतकों तक भी पहुंचने चाहिए। वह विधि जिसके द्वारा पाचित भोजन आहार नली से रक्तधारा में प्रविष्ट होता है उसे अवशोषण (absorption) कहते हैं।

अंतःकोशिकी पाचन में पाचन व अवशोषण एक ही कोशिका में होती है। परन्तु बहुकोशिक जीवों में एन्ज़ाइम बनाने पाचन व अवशोषण के लिये आहार नली के खास ऊतक व अलग-अलग क्षेत्र होते

हैं। इस भाग में हम कशेरुकी जीवों में कोशिकाबाह्य पाचन द्वारा मोचित ऐमीनो अम्ल, शर्करा व वसा के अवशोषण के बारे में पढ़ेंगे। जैसा कि आपको ज्ञात है कशेरुकी जीवों में आंत्र की भित्ति कई वलनों में मुड़ी रहती है जिससे उसकी अवशोषण सतह बढ़ जाती है। इन वलनों की सतह पर उंगली के आकार के सूक्ष्म विलाई (villi) की एक कतार होती है (चित्र 1.12) यह खास अवशोषण के लिये होते हैं जिनकी क्रोड में आहार-नली की रक्त वाहिकाओं से उत्पन्न रक्त केशिका जाल होता है। प्रत्येक विलस के भीतर बीच में एक लसीका वाहिका (lymph vessels) होती है जिसे **लैक्टियल** (lacteal) कहते हैं जिसका एक सिरा बन्द होता है यह विलस के सिरे से शुरू होकर आहार नली की प्रमुख लसीका वाहिकाओं में खुलती है। लिपिड प्रमुखतः लैक्टियल व ऐमीनो अम्ल और शर्करा रक्त केशिकाओं में अवशोषित किये जाते हैं। विलस और आंत्र के वलनों में चिकनी माँस-पेशियां होती हैं जिनके सिकुड़ने से विलस आंत्र के भोजन के समीप आ पाता है, और लैक्टियल, लसीका वाहिकाओं और छोटी रक्त धमनियों में प्रवाह भी बना रहता है।

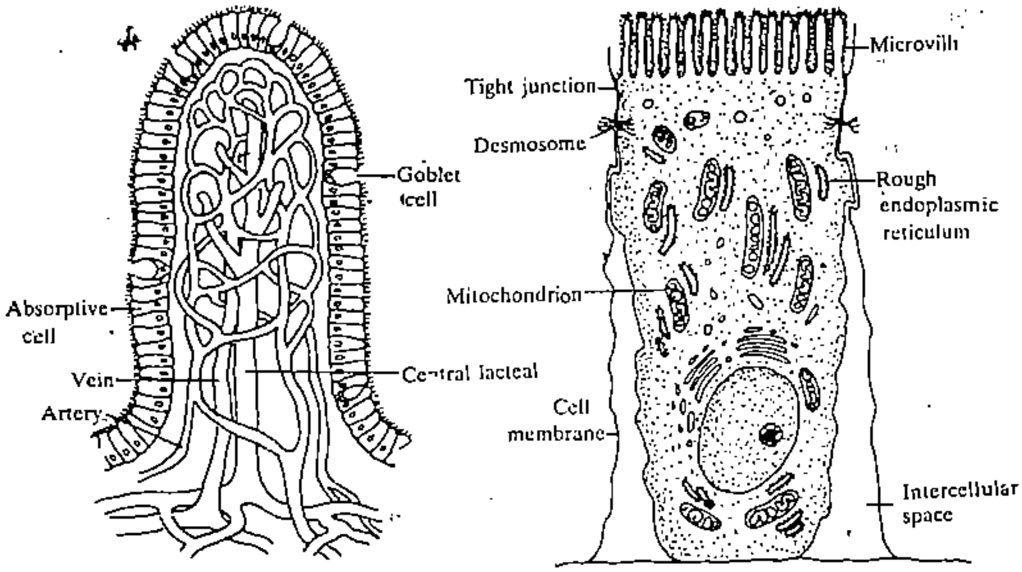

चित्र 1.12 : स्तनधारियों की क्षुद्रांत की आंतरिक सतह (a) विलस की पाचक एपिथीलियम जोकि अवशोषी कोशिका (absorptive cell) और कुछ कलश कोशिकाओं (goblet cells) की बनी होती है। (b) एक अवशोषी कोशिका। ऊपरी भाग में सूक्ष्म विलाई (micro villi) का ब्रुश जैसा किनारा है।

आइये पढ़ें कि पाचित भोजन की अवशोषण प्रक्रियाएं क्या हैं आप LSE-01 इकाई 7 में झिल्ली द्वारा वहन प्रक्रियाओं के बारे में पढ़ चुके हैं। संक्षेप में ये प्रक्रियायें निम्न हैं।

विसरण (निष्क्रिय): किसी भी पदार्थ का उसकी विद्युत रासायनिक प्रवणता (electrochemical gradient) की ओर वहन होता है। इस प्रक्रिया के अन्त में कोशिका के बाहर तथा भीतर की सांद्रता एक समान हो जाती है।

मध्यास्थातक द्वारा वाहन: किसी भी पदार्थ का वहन उसके सांद्रण प्रवणता की ओर झिल्ली में स्थित विशेष अणुओं द्वारा होता है। इस प्रक्रिया के अंत में कोशिका के भीतर की सांद्रता कोशिकाबाह्य सांद्रता से कभी भी अधिक नहीं होती है।

सक्रिय वहन : झिल्ली में स्थित विशेष अणुओं द्वारा किसी भी पदार्थ का वहन उसकी विद्युत-रासायनिक प्रवणता के विपरीत दिशा में होता है इस प्रक्रिया के अंत में ये पदार्थ कोशिका में एकत्र हो जाते हैं।

यह तीनों वहन प्रक्रियाएं सभी जीव समूह में होती है। शर्करा व ऐमीनो अम्लों का वहन, झिल्लियों में स्थित अणुओं द्वारा होता है, जोकि सोडियम पम्प पर निर्भर है। यह वहन प्रक्रियाएं साइनाइड जैसे निरोधक यौगिकों द्वारा रुक जाती है। कुछ प्रकार की शर्कराएं जैसे कि फ्रक्टोस का उनकी अपनी सांद्रण प्रवणता की ओर मध्यस्थतक द्वारा वहन होता है। इस प्रक्रिया में सांद्रण प्रवणता के अलावा कोई और ऊर्जा नहीं इस्तेमाल होती है। ग्लूकोस, गैलेक्टोस व ऐमीनो अम्ल कोशिका झिल्ली के विशेष वहन

अणुओं द्वारा अवशोषित किये जाते हैं। यह वहन आहार नली में आंत्र के अवकाश तथा उपकला कोशिका के द्रव्य के बीच उपस्थित सोडियम प्रवणता पर निर्भर करता है। ग्लूकोस के अवशोषण में जो अणु कार्य करते हैं उन्हें **सहवहन अणु** अर्थात् **कोट्रांसपोरटर** (cotransporter) कहते हैं क्योंकि यह एक ग्लूकोस के अणु का सोडियम आयन के साथ योग करते हैं उसमें जो ऊर्जा लगती है वह सोडियम आयन के अपने ग्रेडिएन्ट के अनुरूप चलने से मिलती है। यद्यपि उपकला कोशिकाओं में ग्लूकोस का अधिक सांद्रण हो तब भी सहवहन अणु की सहायता से आंत्र के अस्तर की कोशिकाएं भोजन में स्थित सूक्ष्म मात्र के ग्लूकोस को भी अवशोषित कर लेती हैं। इस सहवहन प्रक्रिया के बाद कोशिका में एकत्र सोडियम आयन ATP से प्राप्त ऊर्जा की सहायता से, सक्रिय वहन द्वारा कोशिका से बाहर वहित कर दिये जाते हैं। उपकला कोशिका से रक्त में ग्लूकोस का वहन उसकी सांद्रता प्रवणता की ओर, एक अन्य वहन अणु, Glu T_2 द्वारा होता है (चित्र 1.13)। Glu T_2 ग्लूकोस का वहन रक्त में उपस्थित शर्करा की मात्रा के अनुपात में करता है। यदि रक्त में ग्लूकोस की मात्रा अधिक है तो वहन प्रक्रिया धीमी हो जाएगी और यदि रक्त में ग्लूकोस की मात्रा कम है तो ग्लूकोस वहन प्रक्रिया तेज हो जाएगी।

Glu T2 पांच ग्लूकोस अभिगमन अणुओं में से एक है जोकि ग्लूकोस को झिल्ली के पार ले जाता है। यह ट्रांसपोर्टर अपने कार्य व आकार में सामान्यतः एक जैसे हैं व उनके क्रम इनकी खोज के अनुसार पड़े हैं। यह ट्रांसपोर्टर अपना आकार बदलते हैं, एक रूप कोशिकाबाह्य ग्लूकोस के साथ बंधता है व दूसरा रूप अंतःकोशिका में ग्लूकोस में बंधता है। यह बांधना और अभिगमन एक फिलप फ्लीप तरीके से बड़ी जल्दी-जल्दी होते हैं।

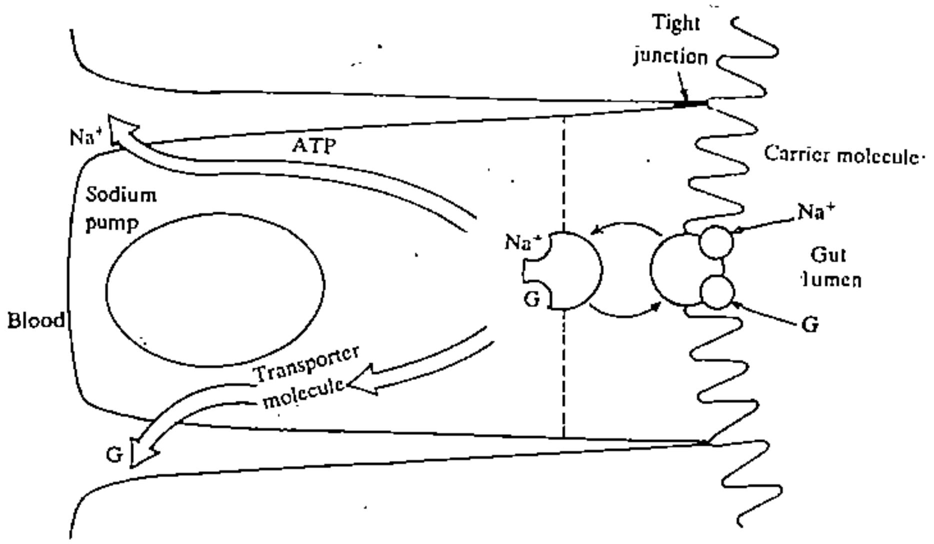

चित्र 1.13 : ग्लूकोस अवशोषण की प्रक्रिया। झिल्ली में स्थित वहन अणुओं द्वारा ग्लूकोस तथा सोडियम आयन का साथ-साथ वहन होता है। कोशिका में एकत्र सोडियम आयन ATP पम्प द्वारा निष्कासित कर दिया जाता है तथा ग्लूकोस एक अन्य वहन अणु द्वारा रक्त में वाहित कर दिया जाता है।

प्रायोगिक प्रमाण यह दर्शाते हैं कि स्तनधारियों की आहार नली में ऐमीनो अम्ल के लिये चार प्रकार की वहन प्रक्रियाएं होती हैं। दो उदासीन ऐमीनों अम्ल, एक क्षारीय और एक अम्लीय ऐमीनो अम्ल के लिये होती हैं। एक और अभिगमन प्रणाली डाइपैप्डाइड व ट्राइपैप्टाइड के लिये होती है। कोशिका के भीतर आकर यह सभी अणु अंतःकोशिकी पेप्टिडेसस् द्वारा अपने मूल ऐमीनो अम्लो में परिवर्तित हो जाते हैं। शर्करा व ऐमीनो अम्ल परिसंचरण तंत्र में प्रविष्ट होते हैं जहां से सोडियम प्रवणता की सहायता से वहन प्रक्रिया द्वारा ऐमीनो अम्ल व ग्लूकोस शरीर के विभिन्न ऊतकों तक पहुंचते हैं।

लिपिड का अवशोषण ऐमीनो अम्ल व मोनोसैकराइड से भिन्न होता है। चित्र 1.14 में यह प्रक्रिया दर्शायी गयी है। मुक्त वसा अम्ल, मोनोग्लिसराइड व लाइसोलेसिथिन मिसेल से निकलकर सूक्ष्मविलाई की झिल्ली द्वारा होकर उपकला कोशिकाओं में प्रवेश करते हैं। समूचे मिसेल भी उपकला कोशिका में वाहित हो सकते हैं। इन दोनों ही सूरतों में कोशिका में इनसे ट्राइग्लिसराइड व फॉसफोलिपिड का पुनःसंश्लेषण होता है। उपकला कोशिका में ही ट्राइग्लिसराइड, फॉसफोलिपिड और कोलेस्ट्रॉल प्रोटीन के साथ मिलकर छोटे-छोटे कण बनाते हैं जिन्हें काइलोमाइक्रोन (chylomicrons) कहते हैं। ये काइलोमाइक्रोन विलाई में लैक्टियल द्वारा एकत्र कर लिये जाते हैं। अवशोषित लिपिड इस प्रकार लसीका वाहिनियों द्वारा शिरा रुधिर में पहुंच जाते हैं।

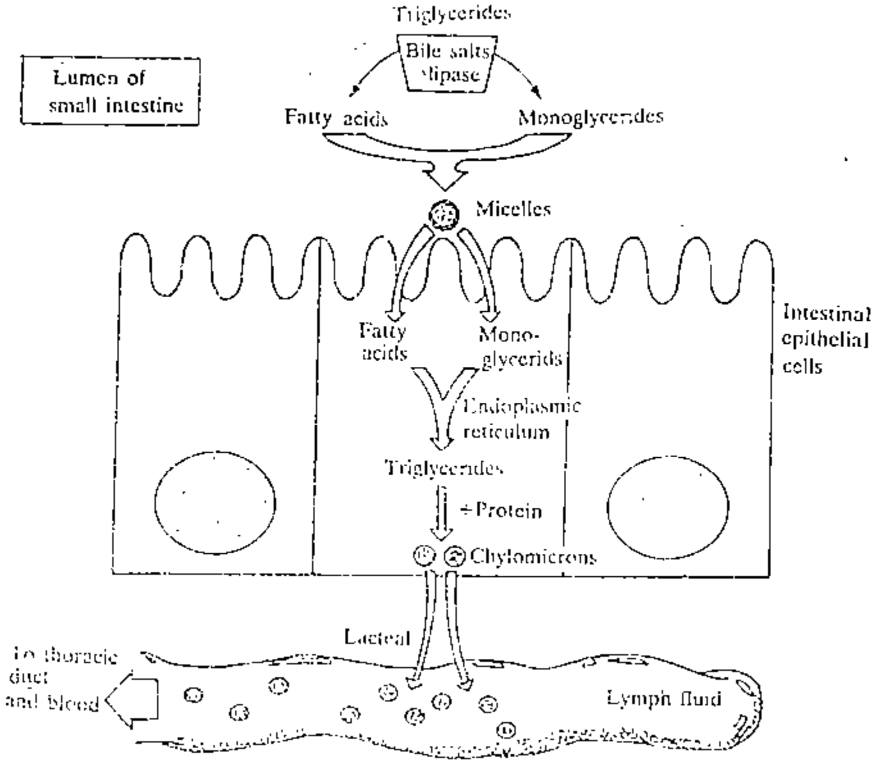

चित्र 1.14 : क्षुद्रांत के मिसेल के वसा अम्ल व मोनोग्लिसराईड उपकला कोशिका द्वारा अवशोषित होकर ट्राइग्लिसाइड पुनः संश्लेषण करते हैं। फिर यह प्रोटीन के साथ मिलकर काइलोमाइक्रॉन बनाते हैं जो कि क्षुद्रांत की लैक्टियल में प्रविष्ट होते हैं।

बोध प्रश्न 4

मानव आहार नली व सम्बंधित ग्रन्थियों को दर्शाते हुए निम्न चित्र में बतायें :

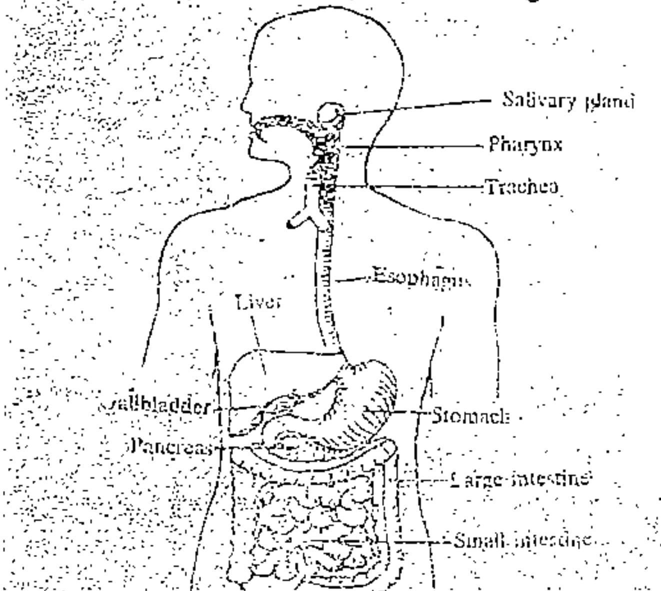

(क) मानव एन्जाइम कहाँ-कहाँ क्रियाशील है?

(ख) कौन से एन्जाइम कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन व वसा का पाचन करते हैं?

1.6 ऊर्जा उपापचय

इकाई के पिछले भागों में आपने पढ़ा कि किस प्रकार आहार के पाचन फलस्वरूप उत्पन्न ऐमीनो अम्ल, शर्करा व वसा अम्ल अवशोषित होकर शरीर के विभिन्न ऊतकों तक पहुंचाते हैं। इन यौगिकों के ऑक्सीकरण द्वारा जन्तुओं को आवश्यकतानुसार रासायनिक ऊर्जा प्राप्त होती है। जन्तुओं में इस रासायनिक ऊर्जा के उपयोग को **ऊर्जा उपापचय** (energy metabolism) कहते हैं। आपने भाग 1.2 में यह भी पढ़ा कि सामान्यतः कार्बोहाइड्रेट व वसा ही ऊर्जा का स्रोत होते हैं परन्तु आवश्यकता पड़ने पर अन्य कार्बनिक यौगिक भी ऊर्जा उपापचय में काम आते हैं।

हम ऑक्सीकरणीय उपापचयन (oxidative metabolism) के दौरान किस प्रकार उपापचयन दर या फिर मोचित ऊर्जा को माप सकते हैं? एक तरीका यह हो सकता है कि जीवों द्वारा प्रति इकाई समय में कुल ऊष्मा उत्पादन को मापा जाये। यह माप जीव का **उपापचय दर** है। उपापचय दर मापने का सूत्र या फार्मूला निम्नलिखित है :

ऊर्जा अंतर्ग्रहण की दर – प्रति इकाई समय में ऊर्जा हानि की दर = उपापचयन दर

हम दिये गये समय में जो भी भोजन खाते हैं उसमें उपस्थित रासायनिक ऊर्जा ही हमारी ऊर्जा अंतर्ग्रहण की मात्रा है। ऊर्जा हानि रासायनिक ऊर्जा की वो मात्रा है जो उसी दिये गये समय के दौरान निष्कासित मल मूत्र में उपस्थित होती है। भोजन और उत्सर्ग को **बॉम्ब कैलोरीमीटर** (bomb calorimeter) में जला कर उनकी रासायनिक ऊर्जा की मात्रा का पता लगाया जा सकता है। जिस पदार्थ की ऊर्जा मात्रा का पता लगाना है उसे पानी से घिरे प्रकोष्ठ में ऑक्सीजन की मदद से जलाया जाता है।

(चित्र 1.15) और पानी के ताप के बढ़ने से उत्पादित ऊष्मा का माप लगाया जा सकता है। तालिका 1.10 में खाद्य पदार्थों की बॉम्ब कैलोरीमीटर और जन्तु शरीर में मापी गयी ऊर्जा को कैलोरी में दिया गया है।

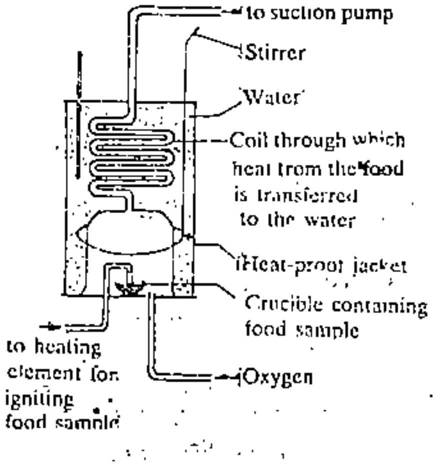

चित्र 1.15 : बॉम्ब कैलोरीमीटर

तालिका 1.10 : भोजन पदार्थों की ऊर्जा मात्रा

भोजन पदार्थ	किलो कैलोरी प्रति ग्राम	
	बॉम्ब कैलोरीमीटर में	शरीर में
कार्बोहाइड्रेट	4.1	4.0
लिपिड	9.4	9.0
प्रोटीन	5.6	4.1

यह माप केवल एक औसत माप है। बॉम्ब कैलोरीमीटर की तरह ही जन्तु शरीर में ऑक्सीकरणीय अवकर्षण के दौरान कार्बोहाइड्रेट व लिपिड कार्बन डाइऑक्साइड और जल में परिवर्तित हो जाते हैं।

परन्तु जन्तु शरीर में प्रोटीन का सम्पूर्ण अवकर्षण नहीं होता क्योंकि प्रोटीन उपापचय का अन्तिम उत्पादन यूरिया है जिसमें कुछ ऊर्जा बाकी रह जाती है। इसलिये शरीर में प्रोटीन द्वारा उत्पन्न ऊर्जा की मात्रा बॉम्ब कैलोरीमीटर की अपेक्षा कम होती है (4.1 किलो कैलोरी प्रति ग्राम) इस प्रकार आप देख सकते हैं कि एक ग्राम वसा से प्राप्त होने वाली ऊर्जा, एक ग्राम प्रोटीन या कार्बोहाइड्रेट से प्राप्त ऊर्जा से कहीं अधिक है।

शरीर के उपापचय क्रियाओं से जो ऊष्मा प्राप्त होती है उससे शरीर का तापमान स्थायी रहता है। सामान्यतः समतापी (warm blooded) जन्तु जैसे पक्षियों तथा स्तनधारियों में एक खास नियमन प्रणाली होती है जिससे कि शरीर में ऊष्मा का उत्पादन पर्यावरणीय स्थितियों के अनुकूल होता है। तापमान के नियंत्रण के बारे में ज्यादा जानकारी खंड 2 की इकाई 7 में दी जायेगी।

किसी भी जन्तु की ऑक्सीजन खपत की मात्रा से उसके उपापचयन दर का पता लगाया जा सकता है। उपापचय दर का अनुमान लगाने के लिये ऑक्सीजन खपत एक अच्छा मापदंड है क्योंकि उपापचय में प्रत्येक लिटर ऑक्सीजन खपत से किसी भी प्रकार से खाद्य पदार्थ से ऊष्मा का उत्पादन समान मात्रा में होता है (तालिका 1.11 देखें)। कार्बोहाइड्रेट द्वारा एक लीटर ऑक्सीजन की खपत से 5 किलो कैलोरी ऊष्मा प्राप्त होती है जोकि प्रोटीन द्वारा एक लीटर ऑक्सीजन की खपत से प्राप्त 4.5 किलो कैलोरी ऊष्मा से केवल 10% ही अधिक है। इसलिये औसतन उपापचय दर 4.8 किलो कैलोरी प्रति लिटर ऑक्सीजन मानी गयी है।

तालिका 1.11 : विभिन्न खाद्यपदार्थों द्वारा ऊष्मा उत्पादन और उनका श्वसन भागफल (Respiratory Quotient : RQ)

	किलो कैलोरी में ऊष्मा उत्पादन		
	प्रति लिटर O_2 खपत द्वारा	प्रति लिटर उत्पन्न CO_2 द्वारा	$RQ = \frac{CO_2 \text{ उत्पन्न मात्रा}}{O_2 \text{ खपत मात्रा}}$
कार्बोहाइड्रेट	5.05	5.05	1.00
वसा	4.75	6.67	0.71
प्रोटीन	4.46	5.57	0.81

श्वसन भागफल

तालिका 1.11 में आप ऊष्मा उत्पादन के दौरान ऑक्सीजन खपत की मात्रा और उत्पन्न कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा के अनुपात को देख सकते हैं। इस अनुपात को **श्वसन भागफल** या RQ (respiratory quotient) कहते हैं। यह ऊर्जा उपापचय में एक महत्वपूर्ण धारणा है।

तालिका से यह पता लगता है कि RQ सामान्यतः 0.7 व 1 के बीच होता है। 0.7 के लगभग RQ यह दर्शाता है कि वसा का उपापचय हो रहा है और 1.0 के लगभग RQ यह दर्शाता है कि कार्बोहाइड्रेट का उपापचय हो रहा है। 0.7 और 1.00 के बीच का RQ यह दर्शाता है कि प्रोटीन अथवा मिश्रित भोजन का उपापचय हो रहा है। कई बार जन्तु भोजन की सम्पूर्ण ऊर्जा का उपभोग नहीं कर पाते क्योंकि वह भोजन को पूरी तरह नहीं पचा पाते। साथ ही भोजन का कुछ अंश यूरिया व अमोनिया के रूप में शरीर से उत्सर्जित हो जाता है।

सामान्यतः यह देखा गया है कि जन्तु अपनी ऑक्सीजन खपत के अनुपात से अधिक भोजन लेते हैं क्योंकि ऊर्जा प्राप्ति के अलावा उन्हें अपने शरीर को भी बनाए रखना है। यदि जन्तु का वजन अधिक है तो प्रति इकाई समय में प्रति इकाई ऊर्जा प्राप्ति के लिये उसकी ऑक्सीजन खपत मात्रा कम होगी। उदाहरण के लिये, छोटे जन्तु जैसे चूहे और श्रू (shrew) की उपापचयन दर हाथी जैसे बड़े जन्तु की अपेक्षा काफी अधिक होती है। ऐसा उनकी ऑक्सीजन खपत मात्रा से पता चलता है। इसीलिये छोटे जन्तुओं को लगातार भोजन करने की आवश्यकता पड़ती है जबकि हाथी जैसा बड़ा जानवर जिसकी उपापचयन दर कम है, अधिक समय तक बिना भोजन के जीवित रह सकता है।

ऊर्जा संचयन

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं खाद्य अंतर्ग्रहण और ऊर्जा व्यय, जीवों में लगभग समान होता है। यदि ऊर्जा व्यय भोजन अंतर्ग्रहण से अधिक है तब अधिक ऊर्जा प्राप्ति के लिये शरीर अपनी संचित वसा का प्रयोग करता है। इसके विपरीत यदि खाद्य अंतर्ग्रहण, ऊर्जा व्यय में अधिक है तब अतिरिक्त खाद्य पदार्थ शरीर में वसा के रूप में संचित हो जाता है। जैसे कि अत्याधिक कार्बोहाइड्रेटस् वसा में बदला जाता है और फलस्वरूप RQ1 से अधिक हो जाता है। ऐसा इसलिये होता है क्योंकि वसा में ऑक्सीजन कम होती है पर कार्बोहाइड्रेट में ऑक्सीजन अधिक होती है जो उपापचय में इस्तेमाल हो जाती है। इसी कारण से कार्बोहाइड्रेट उपापचयन में ऑक्सीजन अंतःग्रहण कम होता है जिससे कार्बन डाइऑक्साइड-ऑक्सीजन अनुपात में वृद्धि होती है। इसलिये ऊर्जा का संचय करने के लिये वसा आदर्श पदार्थ है, यह हल्की भी है और कार्बोहाइड्रेट से दुगनी ऊर्जा प्रदान करती है। प्रवासी पक्षी (migratory birds) जिनको बिना रुके 1000 किलोमीटर तक उड़ना होता है, उनका शरीर भार 40 से 50 प्रतिशत तक वसा से बना होता है। फिर भी कुछ कार्बोहाइड्रेट ऊर्जा संचय में महत्वपूर्ण होते हैं। ग्लाइकोजन जो एक स्टार्च की तरह का कार्बोहाइड्रेट पॉलीमर है, कशेरुकी जन्तुओं के यकृत व मांसपेशियों में संचित किया जाता है। जब अधिक व्यायाम के दौरान मांसपेशियों को रक्त से पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन नहीं प्राप्त हो पाती, तब ग्लाइकोजन ऊर्जा का स्रोत बनता है। ग्लाइकोजन के विखंडन से सीधे ग्लूकोस 6 फॉसफेट प्राप्त होता है जो कार्बोहाइड्रेट उपापचय के लिये ऊर्जा प्रदान करता है। यह प्रक्रिया वसा की विखंडन प्रक्रिया से काफी सरल है।

दूसरी तरफ कई जन्तु जो अधिक गतिशील नहीं हैं वो भी ग्लाइकोजन को अतिरिक्त ऊर्जा का स्रोत बनाते हैं। इसी प्रकार सीप, आयेस्टर और कई आंत्र में रहने वाले परजीवी जैसे *ऐस्कारिस (Ascaris)* ग्लाइकोजन के रूप में ऊर्जा संचयन करते हैं। यह जन्तु अवायुजीवी परिस्थितियों में रहते हैं तथा ग्लाइकोजन के एसिटिक अम्ल के विखंडन द्वारा ऊर्जा प्राप्त करते हैं।

बोध प्रश्न 5

ऐसा क्यों पाया जाता है कि एक व्यक्ति जो वजन घटाने के लिये सीमित भोजन लेता है और जिसके आहार में वसा की मात्रा बिल्कुल नहीं है परन्तु चावल व मिठाई की मात्रा अधिक है, कुछ समय पश्चात् उसे ज्ञात होता है कि उसका वजन अभी भी बढ़ रहा है?

....

....

1.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- सब विषमपोषी जन्तुओं को संतुलित आहार की जरूरत होती है जो उनके जीवित रहने तथा बढ़ने के लिये और उनकी ऊर्जा पूर्ति में काम आता है। पोषक जो कि जन्तुओं को सिर्फ आहार द्वारा ही मिल सकते हैं उन्हें अनिवार्य पोषक कहते हैं। जन्तुओं में इन अनिवार्य पोषकों की जरूरत की मात्रा से यह पता चलता है कि उनका संश्लेषण सामर्थ्य कितना है। जन्तुओं को एक इष्टतम मात्रा में पोषकों की आवश्यकता होती है अगर वो उसको नहीं मिलती है तो न्यूनता सिनड्रोम हो जाता है और उनकी वृद्धि कम हो जाती है।
- जन्तुओं को भोजन कई तरीकों से मिलता है जैसे कि शरीर की बाहरी सतह से अवशोषण द्वारा, एन्डोसाइटोसिस, निस्यंदक अशन, श्लेष्मल ट्रैप, चुषण, काटने और चबाने द्वारा। अशन [illegible] भोजन के प्रकार पर निर्भर करती हैं।
- पाचन वो क्रिया है जिसमें खाद्य के जटिल अणुओं को सरल घटकों में विखंडित किया जाता है। रासायनिक पाचन दो प्रकार से होता है अंतःकोशिकी और कोषिकावाह्य। अंतःकोशिका पाचन

आद्य जन्तुओं में होता है और कोषिकाबाह्य पाचन अधिक विकसित जन्तुओं में होता है। प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और लिपिड का पाचन एक क्रमिक प्रक्रिया है जिसमें बड़े अणुओं का विशिष्ट एन्ज़ाइमो द्वारा विखंडन होता है। लाइपेस की अपेक्षा कार्बोहाइड्रेस व प्रोटिएस अधिक विशिष्ट होते हैं। पाचक रसों का स्रवण और चिकनी पेशी की गतिशीलता तंत्रिक और हॉर्मोनी नियंत्रण में रहता हैं। सभी जठरांत्र हॉर्मोन पेप्टाइड होते हैं। आहार नली की अंतःस्रावी कोशिकाएं, भोजन द्वारा सीधे तथा तंत्रिक उद्दीपन से सक्रिय होकर हॉर्मोन का स्रवण करती है।

- पाचन क्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न पदार्थों को आंत्र कोशिकाएं अवशोषित करके रक्त वाहिकाओं तथा लसिका वाहिनियों में पहुंचा देती है।
- कुछ शर्कराओं का वहन मध्यस्तक विसरण द्वारा होता है जिसमें ऊर्जा की आवश्यकता नहीं पड़ती है। लेकिन अधिकतर शर्कराओं और ऐमीनो अम्लों का वहन Na^+ के साथ वहन अणुओं द्वारा होता है जिसके लिये ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। वसा पाचन के उत्पाद कोशिका झिल्ली द्वारा विसरण प्रक्रिया से अवशोषित होते हैं।
- अवशोषित पोषक तत्व शरीर के उपापचय के लिये ऊर्जा प्रदान करते हैं। जो रासायनिक ऊर्जा उपापचय में काम आती हैं उसको ऊष्मा के रूप में नापा जा सकता है। एक ही प्रकार के भोजन के ऑक्सीकरण द्वारा जल और कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित होने की प्रक्रिया के दौरान समान मात्रा में ऑक्सीजन की जरूरत होती है तथा समान मात्रा में ही ऊष्मा उत्पादन होता है। इसी ऊष्मा के उत्पादन और ऑक्सीजन खपत से जन्तुओं की उपापचय दर पता चलता है। श्वसन भागफल से ये पता चलता है कि वसा, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के उपापचयन का कितना अनुपात है।

1.8 अंत में कुछ प्रश्न

1) अनिवार्य पोषक क्या हैं? ऐसा क्यों है कि कुछ पोषक तत्व कुछ जन्तुओं के लिये जरूरी है और कुछ के लिये नहीं?

....

....

....

2) अंतःकोषकीय और कोशिकाबाह्य पाचन की विशेषताओं की एक तालिका बनाइये और यह बताइये कि कोषिकाबाह्य पाचन से क्या लाभ हैं?

....

....

....

....

3) जन्तुओं में आहार नली की आंतरिक सतह का पाचन क्यों नहीं होता?

....

....

4) पाचन क्रिया से भोजन के कौन से अंतिम उत्पाद बनते हैं जो आहार नली द्वारा अवशोषित किये जाते हैं। वसा का अवशोषण प्रोटीन और शर्करा के अवशोषण से किस प्रकार भिन्न है?

....

....

....

....

1.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) अ) क) (i) मिलता है
ख) (ii) मिलता है
ग) (iii) मिलता है

ब) क्योंकि ये पशु विटामिन C का संश्लेषण कर सकते हैं जबकी मनुष्य और फल खाने वाले स्तनधारी जानवर इसका संश्लेषण नहीं कर सकते हैं।

2) क) गिलहरी के तेज कृंतक दंत रदन के काम आते हैं, गाय के चर्वणक दंत चर्वण के काम आते हैं, कुत्ते के नुकीले रदनक दंत भेदने और खाद्य पदार्थों को काटने के काम आते हैं।

ख) क) से 1 मिलता है
ख) से 2 मिलता है
ग) से 3 मिलता है
घ) से 4 मिलता है
च) से 5 मिलता है।

3) क) आहार नली के विभिन्न भागों में एक समय में पाचन क्रिया की भिन्न प्रक्रियाएं होती हैं
ख) (ii)
ग) ऐमीनो अम्ल, मोनोसैकराईडस्, वसा अम्ल और ग्लीसरॉल
घ) गैस्ट्रिन, सेक्रिटिन, कोलेसिस्टोकाइनिन

4) क) 1) लार ग्रन्थि
2) जठर
3) अग्न्याशय
4) पित्त ग्रन्थि
5) यकृत
6) क्षुद्रांत्र

ख) कार्बोहाइड्रेट एमिइलेस, सूक्रेस, मालटेस, लैक्टेस। प्रोटीन-पेप्सिन, ट्रिप्सिन, काईमोट्रिप्सिन, कार्वोक्सिल पेप्टिडेस
लिपिड-लाइपेस

5) ज्यादा कार्बोहाइड्रेट अगर खाया जाता है तो उसका इस्तेमाल उपापचय में नहीं होता और वो वसा में बदल कर शरीर में जमा हो जाता है इसलिये वजन बढ़ाता है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) अनिवार्य पोषक वो होते हैं जो पशुओं के जीवन संचालन के लिये आवश्यक होते हैं लेकिन जिनका वो संश्लेषन नहीं कर पाते हैं। पोषक की आवश्यकता हर पशु में अलग प्रकार की होती है क्योंकि संश्लेषण करने की क्षमता अनुवांशिक और जाति विशिष्ट होती है। उदाहरणतः, प्रायः सभी कशेरुकी जन्तु विटामिन C का संश्लेषण कर सकते हैं पर मनुष्यों व कुछ अन्य फल खाने वाले स्तनधारियों में यह संश्लेषण सामर्थ्य खत्म हो चुका है। इसीलिये विटामीन C हम लोगों के लिये अनिवार्य है।

2)

	अंतःकोशिकी पाचन		कोशिकाबाह्य पाचन
i)	छोटे कणों का अन्तर्ग्रहण	i)	बड़े खाद्य पदार्थों का अन्तर्ग्रहण
ii)	पाचक एन्ज़ाइम एक छोटी सी जगह में बन्द होते हैं और एक बारी में सिर्फ एक ही तरह का एन्ज़ाइम पाचन क्रिया में सक्रिय होता है।	ii)	इसमें ज्यादातर एक विकसित आहार नली है। जिसमें एक ही समय में अलग-अलग भागों में विभिन्न एन्ज़ाइम एक साथ पाचन क्रिया करते हैं। भोजन का सम्पूर्ण पाचन कई चरणों में होता है।

iii) लगातार अशन के लिये उपयुक्त हैं	iii) लगातार अशन की आवश्यकता नहीं पड़ती अधिक विकसित जन्तुओं में मुंह तथा गुदा होता है जिससे भोजन का प्रवाह एक ही दिशा में होता है।

अधिक विकसित जन्तुओं में बाह्यकोशिकीय पाचन ज्यादा लाभकारी है क्योंकि उनको लगातार अशन नही करना होता और पाचन क्रिया कई चरणों में होती है जिससे एक ही समय में केवल कुछ ही कोशिकाएं पाचन क्रिया में सक्रिय होती हैं।

3) एक श्लेष्म की सतह का स्रवण गोब्लेट कोशिका से होता है और अधिकतर पाचक एन्ज़ाइम विशेषतया प्रोटीएज निष्क्रिय रूप में रहते हैं।

4) i) कार्बोहाइड्रेट जल अपघटन से मोनोसैकराइड में बदल जाता है और प्रोटीन ऐमीनो अम्लों में और वसा मुक्त वसा अम्ल और ग्लीसरोल में। ऐमीनो अम्ल और ग्लूकोस आंत्र की उपकला कोशिकाओं में वाहक अथवा संवाहक प्रोटीन अणु के साथ सोडियम आयन पम्प द्वारा ले जाये जाते हैं। मुक्त वसा अम्ल या मोनोग्लिसराइड पित्त लवण के साथ मिसेल बनाते हैं और फिर उपकला कोशिका में विसरण द्वारा प्रवेश करते हैं।

ii) ऐमीनो अम्ल और ग्लूकोस रक्त में एक अन्य वहन अणु द्वारा पहुंचाए जाते हैं जबकि वसा अम्ल और मोनोग्लिसराइड काइलोमाइक्रोन बनाते हैं जो लैक्टियल द्वारा होते हुए रक्त में प्रवेश कर जाते हैं।

इकाई 2 श्वसन

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
  उद्देश्य
2.2 श्वसन गैसें
  गैस का आंशिक दाब
  घुलनशीलता
  गैस विसरण
2.3 श्वसन विधियां
2.4 गिल
  गिल का संवातन
  गैस विनिमय
2.5 फेफड़े
  स्तनधारियों के फेफड़े
  श्वसन नियमन
  पानी के अंदर तैरने और गोताखोरी के लिये अनुकूलन
2.6 वातक
2.7 रक्त में गैसों का परिवहन
  हीमोग्लोबिन
  रक्त में ऑक्सीजन परिवहन
  रक्त में कार्बन डाइऑक्साइड पारवहन
2.8 सारांश
2.9 अंत में कुछ प्रश्न
2.10 उत्तर

2.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 1 में पढ़ा कि लगभग समस्त जीव-जन्तु अपनी ऊर्जा पूर्ति के लिए खाद्य पदार्थों के ऑक्सीकरण पर निर्भर करते हैं। अपने उपापचयन में जीव ऑक्सीजन का उपयोग करते हैं तथा कार्बन डाइऑक्साइड का निष्कासन करते हैं। ऑक्सीजन ग्रहण करने तथा कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ने की क्रिया को **श्वसन** कहते हैं जो संपूर्ण जीव तथा कोशिका दोनों ही में होने वाली क्रियाओं पर लागू होती है। आप LSE-01 में कोशिकीय श्वसन गतिकी से अवगत हो चुके हैं। यह इकाई जंतुओं द्वारा पर्यावरण से ऑक्सीजन ग्रहण करने तथा इसके कोशिका में वितरण जहां इसका प्रयोग कोशिकीय श्वसन में होता है, पर प्रकाश डालता है । आप यह भी पढ़ेंगे कि यही वितरण प्रणाली किस प्रकार से कार्बन डाइऑक्साइड या उपापचयी उत्सर्ग को शरीर से अलग करता है। जन्तु जिस माध्यम में रहते हैं उसी से ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। जलीय प्राणी जल से ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं तथा स्थलीय प्राणी वायु से।

इस इकाई के आरंभ में गैस के भौतिक गुणों का वर्णन किया गया है; क्योंकि श्वसन फिज़ियोलॉजी को समझने के लिये गैस के भौतिक गुणों की जानकारी आवश्यक है। ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड शरीर में प्रवेश करने या बाहर निकलने के लिए जीवित ... रोधिका को पार करते है। साधारण जन्तुओं में त्वचा या प्लाज़्मा झिल्ली के द्वारा गैस विनिमय ... उदाहरण, एककोशिक जन्तु) । अधिकांश बहुकोशिक जन्तुओं में यह क्रियाविधि काफी विकसि... जटिल होती है जिससे रक्त और श्वसन माध्यम एक बड़ी श्वसन सतह द्वारा एक दूसरे के संपर्क में रहते हैं। फिर भी सबसे श्रेष्ठ श्वसन युक्ति वह है जो जन्तु के निवास माध्यम के सर्वथा अनुकूल हो।

यहां आप तीन प्रकार की श्वसन विधियों के बारे में पढ़ेंगे। टीलियोस्ट **गिल** अथवा **क्लोम**, ऐसे अंग हैं जो जल में विलेय ऑक्सीजन को ग्रहण करते हैं; स्तनधारियों के **फेफड़े** जो वायु से ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं तथा कीट में पाये जाने वाला **वातक तंत्र** (tracheal system) जो बिना परिसंचरण तंत्र के ही श्वसन गैसों का ग्रहण तथा निष्कासन करता है। श्वसन अंगों द्वारा श्वसन गैसों के ग्रहण और निष्कासन का नियमन भी एक आवश्यक क्रिया है, खासकर जब हम यह देखते हैं कि शरीर में ऑक्सीजन की आवश्यकता कई बार सामान्य से अधिक हो जाती है जैसे व्यायाम के दौरान। हम इस नियमन की चर्चा भी सक्षेप में करेंगे।

आगे इकाई में आप यह भी पढ़ेंगे कि श्वसन वर्णक (respiratory pigments) ऑक्सीजन वहन में किस प्रकार सहायक होते हैं। आप देखेंगे कि श्वसन क्रिया की विवेचना में हम लोग परिसंचरण तंत्र का यथासंभव उल्लेख करेंगे क्योंकि एक तंत्र का अध्ययन दूसरे तंत्रों के बिना नहीं किया जा सकता। जैसे-जैसे आप पाठ्यक्रम को पढ़ेंगे आप जानेंगे कि जन्तुओं में समस्त तंत्र समाकलित विधि में कार्य करते हैं तथा कोई भी तंत्र अकेला कार्य नहीं कर सकता। अगली इकाई में हम लोग परिसंचरण तंत्र पर विस्तार से विचार करेंगे तथा इस इकाई से फिर तालमेल बैठायेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप :

- जन्तुओं में वातावरण और श्वसन सतह के बीच गैस विनिमय के महत्व को समझा सकेंगे।
- गिल, फेफड़े और वातक के संरचनात्मक तथा प्रकार्यात्मक विभेदन और उनके लाभ एवं कमियों का विवरण कर सकेंगे।
- अस्थिल मीन की गिल में प्रतिधारा विनमय क्रियाविधि का विवरण कर सकेंगे तथा उसके अनुकूलन का महत्व समझा सकेंगे।
- जन्तुओं के रक्त तथा ऊतक में गैस अभिगमन की क्रिया का विवरण कर सकेंगे।
- ऑक्सीजन स्थानांतरण में हीमोग्लोबिन का महत्व समझा सकेंगे और कार्बन डाइऑक्साइड अभिगमन से उसकी तुलना कर सकेंगे।

2.2 श्वसन गैसें

दाब के लिये SI यूनिट Pa (पास्कल) है परन्तु इस इकाई में हमने mm Hg का प्रयोग किया है क्योंकि अभी भी श्वसन क्रिया और परिसंचरण प्रक्रमों में दाब को इसी पुराने mm Hg में मापा जाता है और इन क्रियाओं से संबंधित बहुत सी जानकारी अभी भी mm Hg में ही मिलती है।

श्वसन क्रियाविधि या गैस विनिमय को समझने के लिए श्वसन गैसों, उनकी घुलनशीलता तथा विसरण प्रक्रम का आधारभूत ज्ञान होना आवश्यक है। ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन गैस शरीरक्रियात्मक दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। वायुमंडल में आण्विक ऑक्सीजन 27% और कार्बन डाइऑक्साइड केवल 0.2% होती है जबकि नाइट्रोजन 78% होती है। हवा में उपस्थित समस्त गैस मिलकर दाब डालती है जो एक ऐटमोस्फियर (760 mm Hg) या 101.3 kPa होता है।

अधिकांश ऑक्सीजन हवा में होती है किन्तु कुछ जल और मृदा जल में भी घुली होती है। इसलिये किसी भी जन्तु का ऑक्सीजन माध्यम या श्वसन माध्यम जल या हवा होता है। गैसों की रचना और वायु तथा पानी के भौतिक गुणों की तुलना से स्थलीय तथा जलीय जन्तुओं में श्वसन की कठिनाइयों से बचने के लिए अनुकूलनों के महत्व का ज्ञान होता है। उदाहरण के तौर पर वायु में ऑक्सीजन की मात्रा गैस संतृप्त पानी की अपेक्षा लगभग 20 गुनी होती है। ऑक्सीजन की विसरण दर हवा में पानी की अपेक्षा अत्यधिक होती है। इसके अतिरिक्त एक और कठिनाई है—कार्बन डाइऑक्साइड तेजी से वायु से जल में विसरित होती है। इसलिये कार्बन डाइऑक्साइड का जल और वायु से विलोपन समान नहीं है।

वातावरण की भौतिक विशेषता के कारण विभिन्न माध्यमों से ऑक्सीजन निष्कर्षण में कई समस्याएं होती हैं। इसलिये श्वसन की कार्यकी को समझने के लिए हमें गैसों के भौतिक गुणों का ज्ञान होना आवश्यक है। श्वसनांगों या ऊतक स्तर पर ऑक्सीजन या कार्बन डाइऑक्साइड विनिमय, आंशिक दाब, सांद्रता और गैसों के विनिमय पर निर्भर करता है। चलिये हम उन्हें एक के बाद एक देखें।

2.2.1 गैस का आंशिक दाब

गैसों के मिश्रण में किसी एक गैस की क्रिया (जैसे कि वायु प्रभाव्य श्वसन झिल्ली से ऑक्सीजन विसरण की दर) अधिकांशतः उसके आंशिक दाब P पर निर्भर करती है। एक ऐसे कक्ष की कल्पना कीजिए जिसमें कई गैसें हैं। उनमें प्रत्येक गैस का अपना अलग दाब होगा और उन सब गैसों के दाब का योग उस कक्ष के कुल दाब के बराबर होगा। प्रत्येक गैस का आंशिक दाब गैस मिश्रण के कुल, आयतन में उसके अपने आयतन के अनुपात में होता है। आंशिक दाब निम्न विधि द्वारा परिकलित किया जा सकता है।

$$P = \frac{x}{100} P \qquad (1)$$

x = गैस विशेष का मिश्रण में प्रतिशत आयतन

P = मिश्रण का संपूर्ण दाब (101.3 kPa या 760 mm Hg शुष्क वायु में)

इस प्रकार हम प्रत्येक गैस के आंशिक दाब का परिकलन कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, समुद्री सतह पर वायुमंडलीय दाब 760 mm Hg और वायु में ऑक्सीजन लगभग 21% है। अतः ऑक्सीजन का आंशिक दाब निम्न होगा :

$$Po_2 = \frac{21}{100} \times 760$$
$$= 359 \text{ mm Hg}$$

इसी प्रकार कार्बन डाइऑक्साइड का आंशिक दाब होगा

$$Pco_2 = \frac{0.03}{100} \times 760$$
$$= 0.228 \text{ mm Hg}$$

जब किसी गैस का आंशिक दाब परिकलित करते हैं तो यह याद रखना चाहिए कि वायुमंडलीय दाब में जलवाष्प का दाब भी सम्मिलित होता है। जलवाष्प की मात्रा तापमान पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए 37°C तापमान और 760 mm Hg दाब पर जलवाष्प का आंशिक दाब P_{WV} 47. 26 mm Hg होता है। ऐसी परिस्थिति में कुल दाब में गैस का दाब केवल 712 mm Hg होता है। अतः समीकरण बदल कर निम्नलिखित हो जाता है :

$$P = \frac{x}{100} (P\text{-}P_{WV}) \qquad \ldots \quad (2)$$

श्वसन क्रियाओं के लिए समीकरण (2) ज्यादा उपयुक्त है क्योंकि श्वसन सतह पर जलवाष्प की प्रवणता वायुमंडल की ओर होती है और श्वसन सतह से जल का वाष्पन होता है।

2.2.2 घुलनशीलता

किसी भी गैस की द्रव्य में घुलनशीलता उसके आंशिक दाब, तापमान व उस द्रव्य में उपस्थित अन्य विलेयों पर निर्भर करती है। तालिका 2.1 विभिन्न तापमानों पर ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड व नाइट्रोजन की घुलनशीलता को दर्शाती है। आप देख सकते हैं कि कार्बन डाइऑक्साइड की घुलनशीलता ऑक्सीजन के मुकाबले अधिक है और जैसे तापमान बढ़ता जाता है घुलनशीलता घटती जाती है।

अधिकांश लोग अनुभव के द्वारा जानते हैं कि तापक्रम बढ़ने के साथ घुलनशीलता घटती है। जब आप पानी को उबलने के लिए रखते हैं तो किनारे पर जो बुलबुले उबलने के पहले बनते हैं वे गैसों के होते हैं। जैसे-जैसे तापक्रम बढ़ता है गैस द्रव से बाहर निकलती है।

तालिका 2.1 : गैस की CM^3 पानी में घुलनशीलता

तापमान (°C)	गैस		
	CO_2	O_2	N_2
0	1.173	0.0489	0.0239
10	1.194	0.0380	0.0196
20	0.879	0.0310	0.0164
30	0.665	0.0261	0.0138

यह भी जानना आवश्यक है कि गैसों की घुलनशीलता विलेय की उपस्थित या लवणता होने पर घट जाती है। तालिका 2.2 विभिन्न तापमानों पर अलवणीय और समुद्री जलों में ऑक्सीजन की घुलनशीलता दर्शाता है।

तालिका 2.2 : वायुमंडलीय साम्यावस्था में अलवणीय तथा समुद्री जल में ऑक्सीजन की घुलित मात्रा पर तापमान का प्रभाव

तापमान (°C)	अलवणीय जल ($ml\ O_2$/l जल)	समुद्री जल ($ml\ O_2$/l जल)
0	10.29	7.97
10	8.02	6.35
15	7.22	5.79
20	6.57	5.31
30	5.57	4.46

2.2.3 गैस विसरण

गैस का विसरण उच्च आंशिक दाब वाली प्रावस्था से कम दाब वाली प्रावस्था की तरफ होता है। आंशिक दाब प्रवणता की ओर यह विसरण तभी रुकता है जब दाब दोनों प्रावस्थाओं में बराबर हो जाता है। ऐसा जल विलयनों, गैस मिश्रण तथा गैस-जल अंतरावस्था, सब में ही होता है। ऐसा बहुत कम होता है कि आंशिक दाब प्रवणता की ओर गैस विसरण का तात्पर्य सांद्रण प्रवणता की ओर विसरण से ही हो।

जन्तुओं के श्वसन अंगों में गैसों का विसरण वातावरण तथा जीव के बीच में होता है। जन्तुओं में ऑक्सीजन प्रवेश करती है और कार्बन डाइऑक्साइड बाहर निकलती है। बाद के भागों में हम देखेंगे कि फेफड़ों में संवहन द्रवों और हवा की अंतरावस्था में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड का विसरण उसकी आंशिक दाब प्रवणता पर निर्भर करता है। शरीर के अंदर केशिका (capillary) स्तर पर अंतःकोशिकी द्रव और संवहन द्रव में विपरीत आंशिक दाब प्रवणता उत्पन्न होती है जिस कारण से श्वसन गैसें विपरीत दिशाओं में विसरित होती हैं।

गैसीय विसरण के भौतिक आधार को समझने के बाद अब हम यह देखेंगे कि इन परिस्थितियों में जन्तु किस प्रकार रहते हैं। सर्वप्रथम हम जन्तुओं में श्वसन गैस विनिमय की विभिन्न विधियों की विवेचना करेंगे।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित कथनों में से कौन से सही हैं :

i) घोल में गैस का आंशिक दाब वायुमंडल में उस गैस के आंशिक दाब जो घोल से साम्यावस्था में है के बराबर है। ☐

ii) जैसे-जैसे तापक्रम कम होता है गैस की घुलनशीलता कम होती है। ☐

iii) पानी प्रतिदर्श पर से जैसे-जैसे गैस का आंशिक दाब घटता है, गैस घोल से बाहर निकलने लगती है। ☐

iv) गैस की आंशिक दाब प्रवणता विसरण हमेशा उसकी सांद्रण प्रवणता की ओर होता है। ☐

ख) मान लीजिए कि 30°C तापमान और 735.18 दाब पर हवा में 18.00 mm Hg दाब पर जलवाष्प है। इस संतृप्त हवा में ऑक्सीजन का आंशिक दाब क्या होगा?

....

....

2.3 श्वसन विधियां

शरीर की सतह से अनेक छोटे जीव विसरण द्वारा ऑक्सीजन प्राप्त करते हैं। उनमें न तो कोई विशेष श्वसन अंग होते हैं और न ही उनमें रक्त परिसंचरण होता है। बड़े एवं जटिल जन्तु विशिष्ट सतह के द्वारा गैस विनिमय करते हैं तथा उनमें एक रक्त प्रणाली द्वारा ऑक्सीजन अभिगमन होता है जो विसरण की अपेक्षा अधिक तीव्र होता है।

उपापचयन आवश्यकता और जीवद्रव्य (protoplasm) में विसरण दर पर आधारित परिकलन से यह ज्ञात होता है कि यदि जीव का व्यास 1 mm से अधिक है तो उसमें ऑक्सीजन पूर्ति केवल विसरण द्वारा नहीं हो सकती है। उदाहरण के लिये, प्रोटोज़ोआ और चपटे कृमि (flat worm) को देख सकते हैं। यह जन्तु या तो बहुत छोटे हैं या इनकी उपापचय दर बहुत कम है। जैसे कि बड़े आकार के स्थली अटकृमि अर्थात् प्लैनेरियन (giant-land planarians) 50 सेंटीमीटर लम्बे हो सकते हैं परन्तु ये चपटे होते हैं जिससे इनकी सतह इनके भार के अनुपात में अधिक बड़ी होती है। इसलिये केवल विसरण द्वारा ही इनमें ऑक्सीजन आपूर्ति हो जाती है। इसी तरह सीलेन्टरेट, स्पंज और प्रवाल भी बहुत बड़े आकार के हो सकते हैं परन्तु इनकी उपापचयन आवश्यकता बहुत ही कम होती है। स्पंज और प्रवाल में पक्ष्माभ (cilia) की सहायता से नाल तंत्र की कोशिकाओं की सतह पर जल का निरंतर प्रवाह बना रहता है। इस प्रकार बगैर परिसंचरण तंत्र तथा श्वसन वर्णकों के ही गैस विनमय होता रहता है। जिन जन्तुओं में कुशल परिसंचरण तंत्र और पारगम्य संवहनी (vascular) त्वचा होती है, उनमें गैस विनमय त्वचा द्वारा होता है। इसलिये हम देखते हैं कि केंचुए, जोंक और बहुत से मत्स्य लार्वा उन जन्तुओं में से है जो ऑक्सीजन अपने शरीर की सतह द्वारा प्राप्त करते हैं। अनेक उभयचर और मछलियों जैसे बड़े जन्तु भी आवश्यकता पड़ने पर गिल और फेफड़ों द्वारा श्वसन क्रिया के अतिरिक्त तवक् श्वसन (cutaneous respiration) का इस्तेमाल करते हैं।

जैली फिश बहुत बड़ी हो सकती है। इसमें 1 प्रतिशत से कम कार्बनिक पदार्थ होता है तथा शेष 99 प्रतिशत पानी और नमक। इसका औसत ऑक्सीजन खपत दर बहुत कम होता है। क्रियाशील उपापचय कोशिका सतह के पास स्थित होती है इसलिए मात्र विसरण गैस विनिमय के लिए पर्याप्त है। आपने जलशाला में मछली को देखा होगा।

त्वचा द्वारा श्वसन की क्षमता सबसे अधिक ईल (eel) और नम संवहिनी त्वचा वाले उभयचरों में विकसित हुई। त्वचा द्वारा कम से कम श्वसन, शुष्क त्वचा वाले टोड में, 20 प्रतिशत होता है, यूरोडल (urodele) *ट्राइट्यूरस एल्पेस्ट्रस (Triturus alpestris)* में 76 प्रतिशत और विशाल सैलामैंडर *क्रप्टोब्रैंकस ऐलिजैनिएन्सिस (Cryptobranchus alleganiensis)* में 98 प्रतिशत से भी अधिक होता है। यह जलीय उभयचर, सबसे बड़ा जन्तु है, जो पूरी तरह से, अपनी त्वचा पर श्वसन के लिये निर्भर करता है। *क्रिप्टोब्रैंकस* की लंबाई 25 से 60 सेंटीमीटर होती है, और भार 1 किलो से भी अधिक हो सकता है। इनमें गिल नहीं होते और फेफड़े अवशेषित होने के कारण श्वसन क्रिया में योगदान नहीं दे पाते हैं।

अधिक उपापचय दर वाले बड़े आकार के जन्तुओं के श्वसन अंग विशिष्ट होते हैं। इन अंगों की श्वसन सतह बहुत पतली होती है जिससे गैस विनिमयन में सहायता हो जाती है (चित्र 2.1)।

श्वसन अंग निम्न प्रकार के होते हैं :

- वह जिनमें श्वसन सतह बाहर की तरफ उलट कर **बहिर्वलन** बनाती है। उन्हें गिल या क्लोम कहते हैं।
- वह जिनमें श्वसन सतह अंदर की तरफ उलट कर **अंतर्वलन** बनाती है। इन्हें फेफड़े या फुफ्फुस कहते हैं। हमारे अपने फेफड़े ऐसे अंतर्वलन का उदाहरण है।

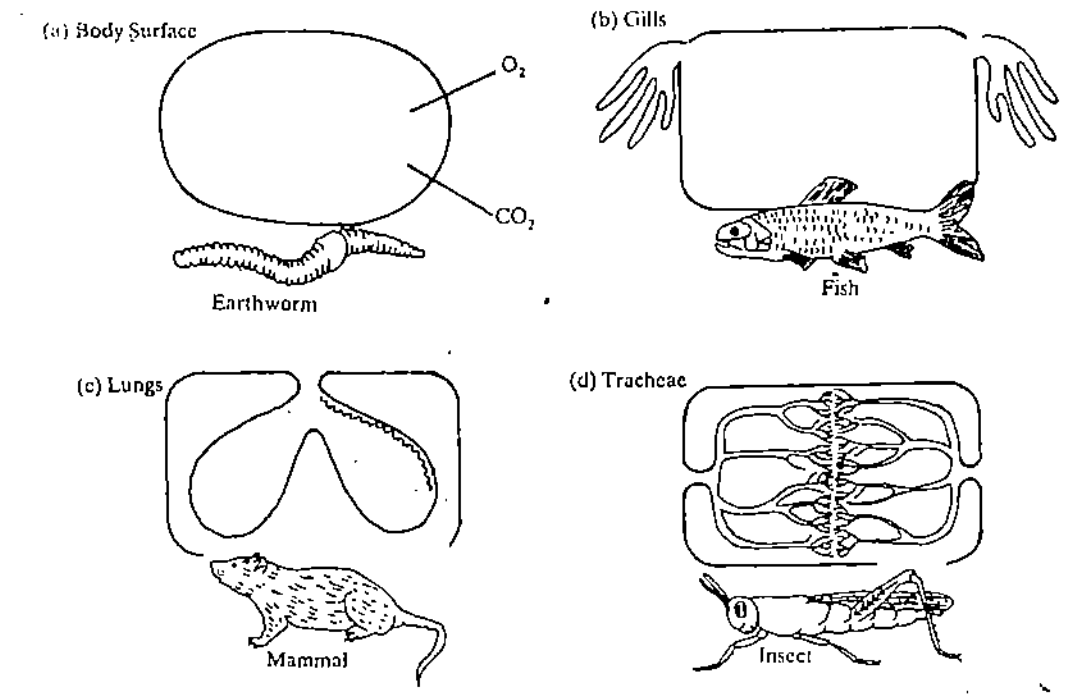

चित्र 2.1 : कुछ जलीय जन्तु तथा नम त्वचा वाले जन्तु अपनी त्वचा से सीधे गैस विनिमय कर सकते हैं, (a) जो जल के सीधे संपर्क में हैं। (b) गिल जो अधिक वलनों वाले बाहरी ऊतक हैं। जिनकी बृहत् सतह और जल में गैस विनिमय होता है। यह सामान्यतः बड़े जन्तुओं में पायी जाती है। (c) स्थलीय जन्तु में बृहत् शाखाओं वाली अंतःसतह द्वारा वायुमंडल से गैस विनिमय है। यह सतह सुरक्षित रहती है। बहुत से कशेरुकी जन्तुओं में थैले जैसे फेफड़े होते हैं। (d) कीट तथा कुछ अन्य संधिपादों में अनेक शाखा वाला वातक तंत्र होता है।

कीटों में एक विशेष श्वसन तंत्र होता है। कीट के शरीर की सतह पर छोटे-छोटे छिद्र होते हैं जो छोटी नलिका या वातकों (trachea) से सतह पर जुड़ी होती है और शरीर के अंदर चारों तरफ फैली होती है। इन्हीं शाखाओं के द्वारा गैस सीधे कोशिकाओं में विसरित होती है।

साधारण तौर पर गिल जलीय श्वसन और फेफड़े वायवीय श्वसन के लिए होते हैं। सचमुच प्रभावी होने के लिए श्वसन अंगों का क्षेत्रफल बड़ा, क्यूटिकल पतली और बराबर नम होनी चाहिए जिससे गैसों का विसरण हो सके। अब हम विशेष श्वसन अंगों पर विचार करेंगे जो जल में तथा थल में रहने वाले जन्तुओं में होते हैं।

बोध प्रश्न 2

पैरामीशियम और जेलीफिश में ऑक्सीजन की आपूर्ति के लिए केवल विसरण ही क्यों पर्याप्त है?

....

....

2.4 गिल

गिल अत्याधिक वाहिकायित विस्तार है जो गैस विनिमय झिल्ली का कार्य करती है। सबसे साधारण गिल वह है जिसका शरीर की सतह से विस्तार होता है जैसे कि समुद्री कम्बु (sea slugs), समुद्री तारा (sea stars) तथा धीमी गति से चलने वाले अन्य जलीय प्राणियों में होता है। गिल की जटिलता उनके द्वारा ऑक्सीजन प्राप्त करने की मांग पर निर्भर होती है। जिन जन्तुओं को ऑक्सीजन की आवश्यकता अधिक होती है उनके गिल की संरचना विस्तृत होती है। टीलीयोस्ट मछली का गिल जलीय जन्तुओं के श्वसनी सतह का प्रतिरूप माना गया है। इसके पहले कि हम गिल की संरचना पर विस्तार से विचार करें, हम यह देखेंगे कि किस प्रकार से गिल में संवातन (ventilation) होता

है जिससे श्वसनीय सतह में जो कि पर्यावरण के संपर्क में रहती है ऑक्सीजन की कमी या कार्बन डाइऑक्साइड का संचय न हो सके और वातावरण (इस संदर्भ में पानी) बराबर बदलता रहे या ताजा रहे।

2.4.1 गिल का संवातन

गिल सतह पर पानी के बहाव को बढ़ाने के लिए कई प्रकार की यांत्रिक प्रक्रियाएं प्रयोग में लाई जाती है। गिल सतह के ऊपर पानी के बहाव को दो प्रकार से बढ़ाया जा सकता है।

1) गिल की गति के द्वारा, जैसा कि छोटे प्राणियों में होता है। कुछ कीट लार्वा इसी विधि का प्रयोग करते हैं किन्तु यह कोई बहुत ही दक्षतापूर्ण और व्यावहारिक विधि नहीं है। गति प्रतिरोध से निपटने के लिए बल की आवश्यकता अधिक होती है और गिल की गति के लिए आवश्यक ऊर्जा भी उसी अनुपात में बढ़ती है। अधिकांश बड़े जन्तुओं में गिल की गति के लिए उसकी यांत्रिक शक्ति का भी बढ़ना आवश्यक हो जाएगा।

2) गिल के ऊपर पानी बहने के द्वारा। यह पक्ष्माभ विस्पद (ciliary action) के द्वारा होता है जैसे कि शंकु तथा सीपी में। स्पंजों में पानी की गति कशाभिका चलन के द्वारा ऑस्ट्रिया से होती है। मछली तथा केकड़ों में पानी की गति यांत्रिक पम्प जैसी क्रिया द्वारा होती है। कई जलीय जन्तुओं में पानी का परिसंचरण चलन के द्वारा होता है। कई पेलैजिक मछलियाँ विशेषकर ट्यूना तेजी से पानी में तैरती हं जिससे तेजी से पानी गिल के ऊपर बहता है। ऑक्टोपस या स्क्विड अपने गिल को मैंटल या प्रवार गुहा में पानी लेने के द्वारा संवातित करते हैं तथा साइफेन के द्वारा उसे बाहर निकाल देते हैं। यह जेट नोदन चलन में भी सहायक होता है।

2.4.2 गैस विनिमय

गिल की सतह का क्षेत्रफल इतना बड़ा होना चाहिए जिससे प्रचुरता के साथ गैस विनिमय हो सके। इसलिये अत्याधिक सक्रिय मछली के गिल का क्षेत्रफल अपेक्षाकृत बड़ा होता है। चित्र 2.2 अत्याधिक सक्रिय तथा अधस्तल जीवी सुस्त मछली की तुलना करता है। पर्याप्त गैस विनिमय के लिये पर्याप्त बहाव और गिल तथा पानी के बीच निकट का संबंध होता है। हम अस्थिल (bony) मछली की गिल संरचना को विस्तार से देखें।

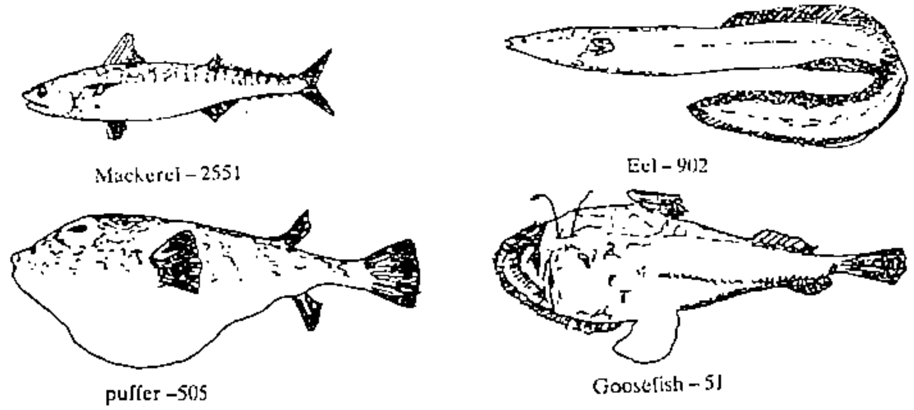

चित्र 2.2 : तेज तैरने वाली मछली जैसे मेकेरल का गिल क्षेत्रफल सुस्त तथा अधस्थलीय मछलियों की अपेक्षा अधिक होता है। मछली के संपूर्ण गिल सतह क्षेत्रफल के यूनिट प्रति ग्राम वजन में लिखे गये हैं।

गिल गुहा में गिल स्थित होती है। यह गुहा इस भंगुर अंग को सुरक्षा प्रदान करती है और गिल के ऊपर पानी को कुशलतापूर्वक बहने देती है। मछली की गिल दोनों तरफ अनेक **गिल आर्च** की बनी होती है। गिल आर्च प्रच्छदी (opercular) तथा मुख गुहिका को अलग करती है। प्रत्येक गिल आर्च से **गिल तंतुओं** (filaments) की दो पंक्तियां निकलती हैं। चित्र 2.3 गिल आर्च पर गिल तंतु की व्यवस्था को दर्शाती है। निकटवर्ती आर्चों के तंतुओं के अग्रसिरे मिलकर छलनी की भांति एक रचना बनाते हैं जिससे पानी का उनके बहाव उनके बीच से होता है।

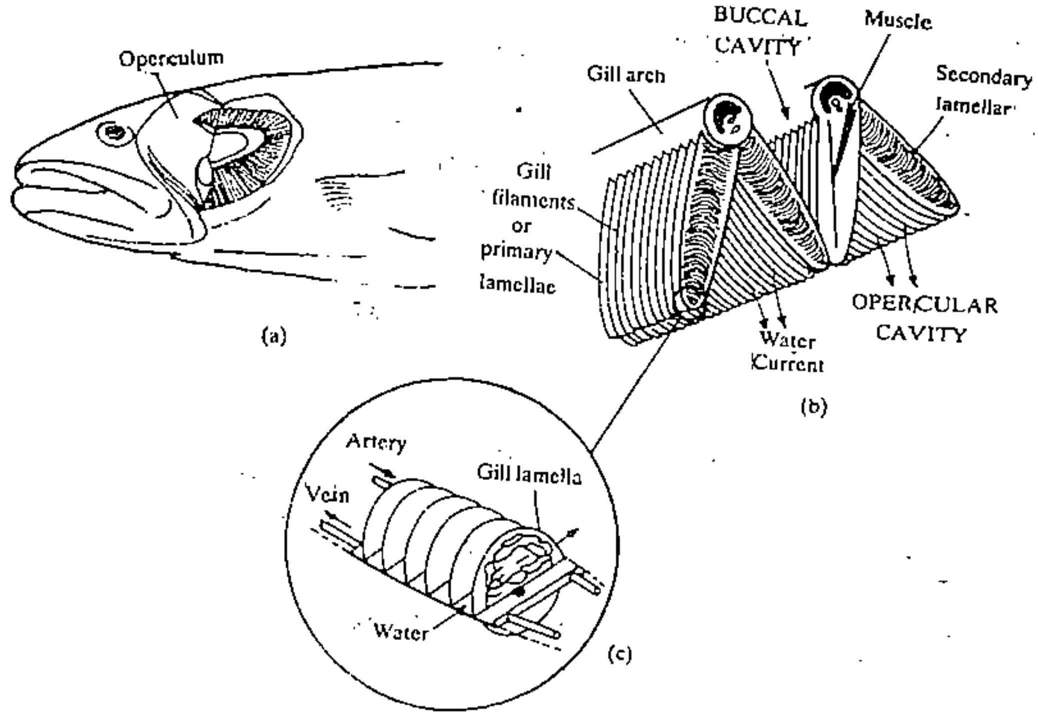

चित्र 2.3 : (a) मछली की बायीं प्रच्छद के नीचे स्थित गिल आर्च जो प्रच्छद को उठा कर दर्शाया गया है।
(b) दो निकटवर्ती गिल आर्च का भाग जिसमें उनके तंतु नजर आ रहे हैं। ध्यान दीजिए कि तंतुओं के अग्रसिरे आपस में स्पर्श करते हैं और पानी के प्रवाह के लिए छलनी सी बनाते हैं। पानी मुख में से होकर गिल के ऊपर से बहता है। ऐरो पानी का बहाव दर्शाता है।
(c) एक तंतु का हिस्सा जिसमें चपटी पटलिकाएं (lamellae) दिखाई दे रही हैं। पानी का प्रवाह रक्त प्रवाह की विपरीत दिशा में होता है।

प्रत्येक गिल तंतु में एक ऊपरी और एक निचली चपटी **पटलिकाओं** (lamellae) की पंक्ति होती है। क्रामक गिल तंतु की पटलिकाएं सस्पर्शी होती हैं। जब पानी इनके बीच से एक दिशा में तथा रक्त दूसरी दिशा में बहता है तब इन्हीं पटलिकाओं में गैस विनिमय होता है। इसे हम **विपरीत** या **प्रतिधारा प्रवाह** (counter current exchange) कहते हैं। इस प्रकार के बहाव का अत्यधिक महत्व है। जब रक्त पटलिका से बाहर जाने की स्थिति में होता है वह पानी से संपर्क करता है जो ऑक्सीजन युक्त होता है। इस प्रकार रक्त ऑक्सीजन को पानी से ग्रहण कर लेता है। यह मछली के रक्त को सर्वाधिक ऑक्सीजन स्तर देने में सहायक होता है।

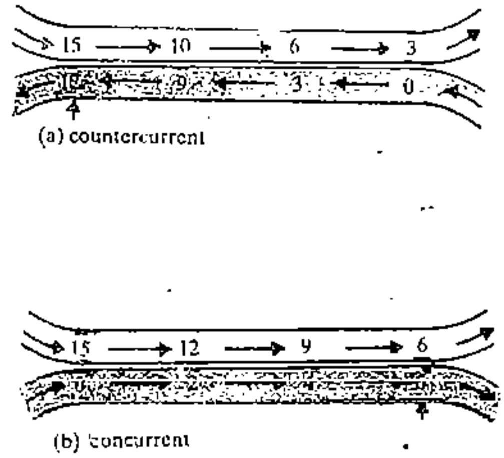

चित्र 2.4 : (a) प्रतिधारा प्रवाह द्वारा रक्त में ऑक्सीजन का बेहतर अवशोषण होता है। चित्र में दिए गये अंक पानी और रक्त में ऑक्सीजन के आंशिक दाब Po_2 को बताते हैं। गिल में कम Po_2 वाला रक्त पहुंचता है और जब गिल तंतुओं से वापस शरीर में जाता है तो उसका Po_2 पानी के Po_2 के लगभग बराबर होता है। (b) यदि रक्त और पानी एक ही दिशा में प्रवाह करते हैं — संगामी प्रवाह तो दोनों में Po_2 का सांद्रण बराबर होते ही विनिमय रुक जाता है। रक्त का Po_2 गिल से निष्कासित पानी के Po_2 से अधिक नहीं हो सकेगा। प्रतिधारा प्रवाह द्वारा पानी को गिल के ऊपर से पम्पित करने में ऊर्जा का खर्च भी कम होगा।

चित्र 2.4 प्रतिधारा प्रवाह के लाभ दर्शाता है। आपको याद रखना चाहिए कि (क) पानी से रक्त में ऑक्सीजन विसरण दोनों माध्यमों के बीच ऑक्सीजन के आंशिक दाब की प्रवणता पर निर्भर करता है। (ख) गैस विनिमय का सबसे सफल तंत्र वही हो सकता है जिसमें गिल से होकर निकलने वाले रक्त में ऑक्सीजन सबसे अधिक आंशिक दाब पर रहे। अगर हम यह मानें कि गिल में प्रवेश करते रक्त में ऑक्सीजन बिल्कुल नहीं है, और रक्त और जल प्रवाह दोनों एक ही दिशा में होते हैं, यानि कि **संगामी प्रवाह** (जैसा कि चित्र 2.4 (b) में दिखाया गया है) तो हम देखेंगे कि जब रक्त और पानी संपर्क में आते हैं, तो पानी से रक्त की तरफ ऑक्सीजन की अत्यधिक प्रवणता होती है और पानी से रक्त में ऑक्सीजन अंतरण उच्च दर पर तब तक होता रहता है जब तक की साम्यावस्था प्राप्त नहीं होती। अब चित्र 2.4 (a) को देखिये। यह प्रतिधारा प्रवाह को दर्शाती है। जब रक्त जिसमें ऑक्सीजन बिल्कुल नहीं है, पानी के संपर्क में पहले पहल आता है, तब पानी में Po_2 भी कम होता है क्योंकि यहां तक पहुंचते हुए पानी में ऑक्सीजन की कमी होती रहती है। परन्तु इतनी ऑक्सीजन फिर भी रहती है कि एक दाब प्रवणता बनी रहे। जैसे-जैसे रक्त प्रवाह होता है वह अधिक ऑक्सीजन युक्त पानी के संपर्क में रहता है और रक्त का Po_2 धीरे-धीरे बढ़ता रहता है। केशिका के हर भाग में Po_2 प्रवणता इतनी ज़रूर रहती है कि पानी से रक्त में ऑक्सीजन अभिगमन हो सके। कुल नतीजा यह होता है कि गिल में प्रतिधारा प्रवाह के कारण जल में विलेय ऑक्सीजन का 80 प्रतिशत से भी अधिक अंश, रक्त में स्थानान्तरित हो जाता है।

टीलियोस्ट मछलियां गिल के ऊपर पानी बहाने के लिए मुख और प्रच्छदी आवरण (opercular cover) के पम्पन कार्य का इस्तेमाल करती है। पानी मुख द्वारा अंदर लिया जाता है, गिल के ऊपर से बहता हुआ प्रच्छदी विदरो (opercular clefts) से बाहर निकल जाता है। मुख गुहा और प्रच्छदी विदर के प्रवेश मार्ग पर वेल्व बने होते हैं जिनके कारण **एकतरफा जल प्रवाह** बना रहता है। मुख गुहिका के तले को और जबड़े को नीचा करने से मुख गुहिका का आयतन बढ़ता जाता है और प्रच्छदी गुहिका का आयतन प्रच्छदी आवरण के बाहर की तरफ निकलने से बढ़ाया जाता है तथा अंदर की तरफ आने से कम किया जाता है। दोनों गुहिकाओं के आयतन को बदलने की क्रिया समकालिक है परन्तु श्वसन क्रिया चक्रण में गिल के दोनों तरफ दाब में अंतर बना रहता है। प्रच्छदी गुहिका में दाब सदैव, मुख गुहिका में दाब से कुछ कम रहता है और इसी कारण पानी का प्रवाह निरंतर बना रहता है।

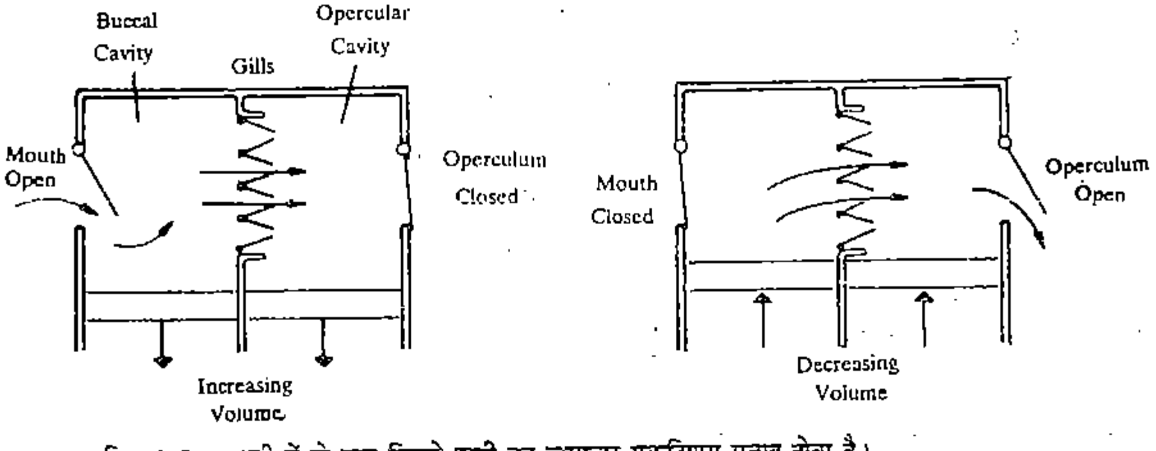

चित्र 2.5 : मछली में दो पम्प जिनसे पानी का लगातार एकदिशय प्रवाह होता है।

ऐसा बहुत पहले से ज्ञात है कि कुछ मछलियां जैसे कि बड़ी ट्यूना को उनके प्राकृतिक आवास से बाहर काफी समय तक जीवित नहीं रखा जा सकता है जब तक कि उन्हें गोलाकर तालाब में जहां वे लगातार तैर सकें, न रखा जाये। मछली अपना मुख आंशिक रूप से खोल कर तैरती है और कोई भी दृश्य श्वसन नहीं करती है। पानी बराबर उनकी गिलों के ऊपर से बहता है। इसको पुमेष संवातन (ram ventilation) कहते हैं।

अब ऐसा ज्ञात हुआ है कि बहुत सी मछलियां कम गति से तैरते हुए पम्प क्रिया द्वारा श्वसन करती हैं और तेज गति पर पुमेष संवातन द्वारा। इस स्थिति में श्वसन का कार्य प्रच्छादी पम्प पेशी के बदले शरीर तथा पूंछ की पेशियों को करना पड़ता है। जहां तक ऊर्जा उपभोग का प्रश्न है पुमेष संवातन प्रच्छादी पम्प की अपेक्षा तेज गति पर अधिक मितव्ययी है जो कि तेज तैरने में जरूरी है।

बोध प्रश्न 3

पानी के मुकाबले में हवा में ज्यादा ऑक्सीजन होती है, फिर भी मछली को पानी से निकालने पर श्वासावरोधन हो जाता है। इस बात के अलावा कि मछली अपने गिल का भार हवा में नहीं संभाल पाती है, दूसरा क्या कारण है कि श्वासावरोधन होता है?

....

....

आपने देखा कि पानी में श्वसन को कुछ साधारण भौतिक सिद्धांतों के आधार पर समझाया जा सकता है। चलिये अब हम श्वसन गैस विनिमय उन जन्तुओं में देखें जो हवा में श्वसन करते हैं।

2.5 फेफड़े

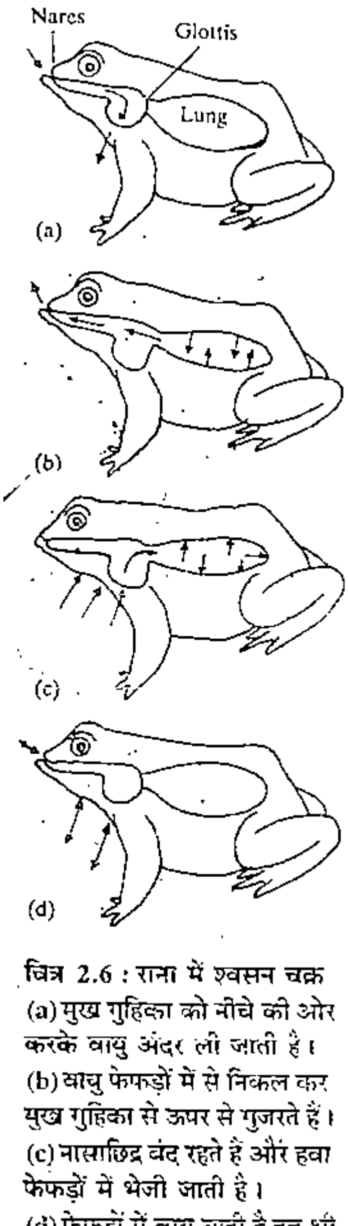

चित्र 2.6 : राना में श्वसन चक्र
(a) मुख गुहिका को नीचे की ओर करके वायु अंदर ली जाती है।
(b) वायु फेफड़ों में से निकल कर मुख गुहिका से ऊपर से गुजरते हैं।
(c) नासाछिद्र बंद रहते हैं और हवा फेफड़ों में भेजी जाती है।
(d) फेफड़ों में वायु रहती है तब भी श्वसन चक्र फिर से शुरू हो जाता है।

पिछले भाग में आपने पढ़ा कि हवा में पानी की अपेक्षा अधिक ऑक्सीजन होती है। वायुमंडल लगातार सभी स्थानों पर ऑक्सीजन पहुंचाता है। इसमें सबसे बड़ी असुविधा यह है कि हवा गैस विनिमय झिल्ली को सुखा देता है। इससे उभरने के लिए स्थलीय जन्तुओं को अत्याधिक नम परिस्थिति में रहना पड़ता है या वे कोई ऐसा तरीका अपनाते हैं जिससे श्वसन सतह को नम रखा जा सके। श्वसन सतह को शरीर के अंदर की ओर मोड़ने से पानी की हानि को कम से कम किया जा सकता है जो उभयचर, सरीसृप, पक्षी तथा स्तनधारी में फेफड़े और कीटों में वातक तंत्र को जन्म देता है। इससे पहले कि हम स्थलीय श्वसन तरीकों का वर्णन करें, हम वायुवीय श्वसन के कुछ मुख्य लाभों का निरीक्षण करें। अगर हम पानी और हवा दोनों की तुलना करें तो हम देखते हैं कि 15°C पर वायुमंडलीय सम्यावस्था पर पानी में केवल 7 ml ऑक्सीजन प्रति लीटर है। इसके विपरीत 1 लीटर वायु में 200 ml ऑक्सीजन है। पानी हवा की अपेक्षा अधिक विस्कासी है, इसलिये जलीय प्राणी की श्वसन सतह के ऊपर बहने के लिए अधिक ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त ऑक्सीजन जल की अपेक्षा वायु में 10,000 गुना अधिक विसरित होती है। इसलिए फेफड़ों में यह कई मिली मीटर तक विसरित हो जाती है, जबकि मछली के गिल में पानी से श्वसन सतह तक विसरण केवल मिली मीटर का लघु अंश ही होता है। स्थलीय जन्तुओं की श्वसन गुहा में ऑक्सीजन का प्रवाह जीवों की ऑक्सीजन मांग के अनुरूप भली भांति नियंत्रित होता है।

फेफड़े साधारण भी हो सकते हैं जिसमें वायु विनिमय पर्यावरण से केवल विसरण द्वारा होता है। इन्हें **विसरण फेफड़े** कहते हैं और ये छोटे जन्तुओं में पाये जाते हैं जैसे पलमोनेट घोंघा, छोटे बिच्छू तथा कुछ आइसोपॉड और मकड़ी। दूसरे प्रकार के **संवातन फेफड़े** (ventilation lungs) कशेरुकी की विशेषता है। हवा एक नलिका द्वारा स्फीती फेफड़ों (inflatable lungs) में जाती है जहां वायु विनिमय होता है और ऑक्सीजन हीन तथा कार्बन डाइऑक्साइड युक्त हवा उसी नलिका द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। इसे हवा का **ज्वारीय प्रवाह** (tidal flow) कहते हैं। फेफड़े का संवातन दो प्रकार से होता है।

1) दाब पम्प विधि द्वारा जैसा कि उभयचर में होता है, चित्र 2.9 मेंढक में संवातन क्रिया दर्शाता है। फेफड़े की स्फीति, मुख ग्रसनी पम्प (buccopharyngeal pump) के दाब पर निर्भर करती है। नासछिद्र खुले होते हैं जबकि घांटी बंद रहती है (वायु फेफड़े में नहीं प्रवेश करती)। मुख गुहिका का फर्श क्रमशः उठाया और गिराया जाता है (चित्र 2.6 a)। अनियमित अंतराल में घांटी खुलती है और नासछिद्र बंद हो जाते हैं। मुख गुहिका फर्श उठता है जो हवा को फेफड़े में ढकेल देता है। परिणामस्वरूप मेंढक वायु को कई बार उच्छवासन के बगैर अंदर ले सकता है तथा अपने शरीर को काफी फुला सकता है।

2) चूषण पम्प (suction pump) के प्रयोग द्वारा। उच्छवासन (exhalation) निश्चेष्ट हो सकता है और अंतःश्वसन (inhalation) पेशीय संकुचन के द्वारा या स्तनधारियों की भाँति, डायाफ्राम तथा बाह्य अंतरापर्शुक पेशी (intercostal muscles) के संकुचन द्वारा जो पसली पिंजर को उठाता है। यह पार्श्व स्थान (pleural space) में दाब को घटाता है जिससे फेफड़े फूल जाते हैं और वायु अंदर चली जाती है।

2.5.1 स्तनधारियों के फेफड़े

इस इकाई में हम मुख्यतः स्तनधारियों के फेफड़ों का अध्ययन करेंगे क्योंकि ये वायुवीय श्वसन में काम आने वाली श्वसनीय सतह का सबसे अच्छा उदाहरण है। इस अध्ययन के लिए हम मानव फेफड़ों को उदाहरण रूप में चित्र 2.7 में दर्शा रहे हैं।

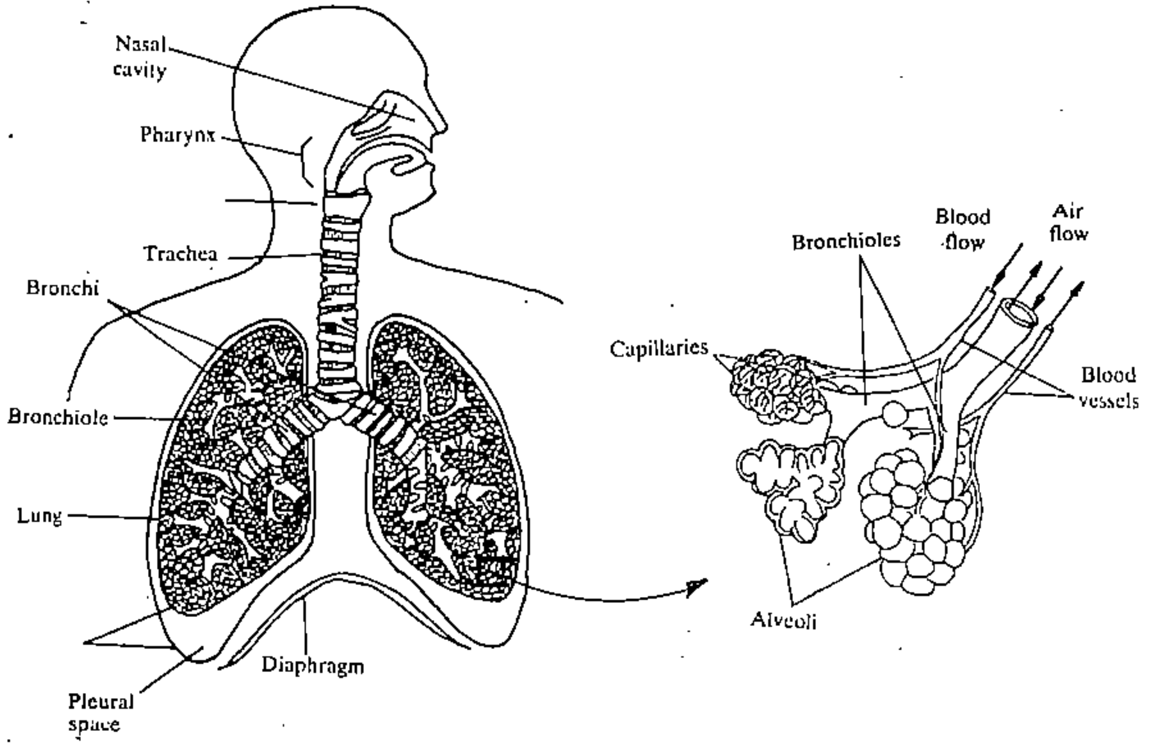

चित्र 2.7 : मानव तथा अन्य स्तनधारियों में वायु पथ में नासिकाछिद्र, नसिका, मुख गुहा, ग्रसनी, लेरिंक्स, श्वसनली, श्वसनिया तथा श्वसनिकाएं होती हैं। श्वसनिकाएं अंत में कई कूपिकाओं में समाप्त होती हैं। (आन्तराचित्र देखिए) स्पंजी फेफड़े खंडों में विभाजित होते हैं। दाहिने फेफड़े में तीन खंड तथा बाएं फेफड़े में दो खंड होते हैं। पेशीय डायाफ्राम वक्ष गुहा को धड़ क्षेत्र से अलग करता है।

जब हम श्वास लेते हैं तो हवा श्वास नली या ट्रेकिया में प्रवेश करती है जो दाईं और बाईं **श्वसनी** (bronchi) में विभाजित हो जाती है जो पुनः अनेक बार विभाजित होकर **श्वसनिका** (bronchioles) बनाती हैं। श्वसनिका की सूक्ष्म शाखाएं कूपिकाकोश (alveolar sacs) में जाती है जो छोटे-छोटे कोशों का गुच्छा होता है। प्रत्येक कोश का व्यास 150 से 300 माइक्रोन या माइक्रोमीटर तक होता है। कूपिका (alveolus) की दीवार पतली होती है तथा फुप्फुस धमनी की केशिकाएं कूपिकाओं की संवहनी सतह पर विस्तारपूर्वक फैली होती है। मनुष्यों के एक जोड़ी फेफड़ों में लगभग 30 करोड़ कूपिकाएं होती हैं तथा उनका पूरा सतह क्षेत्र लगभग 70 वर्ग मीटर के बराबर होता है। यह एक टेनिस के मैदान के बराबर है। गैस विनिमय केवल कूपिका में होता है। ट्रैकिया, श्वसनी तथा उनकी शाखाएं केवल फेफड़ों को वायुमंडल से जोड़ने वाली नलिकाएं हैं। जब हम श्वास बाहर निकालते हैं तो यह नलिकाएं प्रयुक्त गैस से भरी रहती हैं। और जब हम श्वास अंदर लेते हैं तो यह प्रयुक्त गैस एक बार पुनः फेफड़ों में ढकेल दी जाती है (इसके पहले की शुद्ध वायु प्रवेश करे)।

मेंढक के फेफड़े की सतह का मापन दर्शाता है कि 1 cm^2 फेफड़े की ऊतक में कुल 20 cm^2 गैस विनिमय सतह होती है, चूहे के लिए यह संगत अंक 800 cm^2 प्रति cm^2 फेफड़ा सतह होती है। यह दर्शाता है कि सतह का वृहत् क्षेत्रफल समतापी जन्तुओं में अधिक उपापचय दर पर निर्भर करता है।

इस प्रकार नलिका की वायु फेफड़ों में प्रवेश करने वाली ताज़ी हवा के आयतन को कम करती है। इसलिए इस स्थान को **शरीरीय डेड स्पेस** (anatomical dead space) कहते हैं जिसका आयतन 150 cm^3 होता है। एक श्वसन में अंतःश्वसीय वायु के आयतन को **ज्वारीय आयतन** (tidal volume) कहते हैं तथा एक साधारण मनुष्य में आराम की स्थिति में यह लगभग 500 cm^3 होता है जिसमें डेड स्पेस 150 cm^3 होता है। इस प्रकार केवल 350 cm^3 ($500 - 150 = 350$) ताजी हवा कूपिका तक पहुंचती है। व्यायाम के समय डेड स्पेस आयतन का कोई महत्व नहीं होता।

यदि यह माना जाये कि व्यायाम के समय एक आदमी एक श्वास में 3000 cm^3 हवा का अंतःश्वसन करता है, उस स्थिति में 150 cm^3 सार्थक नहीं होती है। कितना भी कोई प्रयत्न करे फेफड़े कभी भी पूर्ण रिक्त नहीं होते। उसमें 1650 cm^3 हवा शेष रहती है जिसे **अवशेषी वायु** (residual volume air) कहते हैं। अन्तःश्वसन में 350 cm^3 ताजी हवा प्रवेश करती है और 1650 cm^3 हवा जो फेफड़े में पहले से रहती है उससे मिलती है। हवा का नवीनीकरण 1/5 हिस्सा होता है। इस प्रकार फेफड़े में बराबर 15 प्रतिशत ऑक्सीजन और 5 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड होती है। व्यायाम के समय भी यही स्थिति होती है क्योंकि व्यायाम के समय बढ़ा हुई संवातन शरीर की ऑक्सीजन की आवश्यकता के अनुरूप होता है।

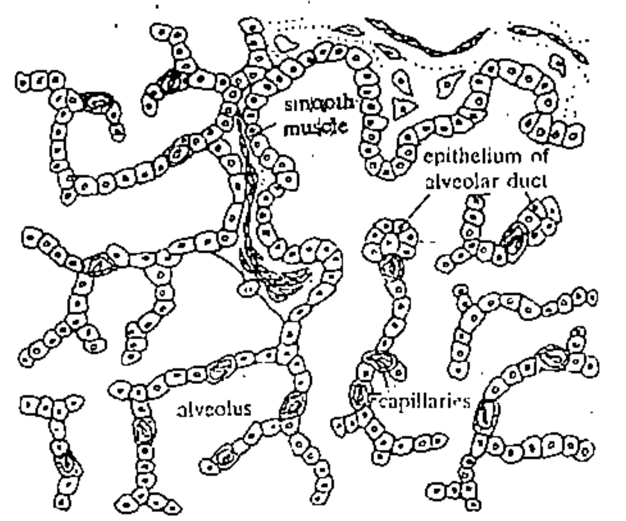

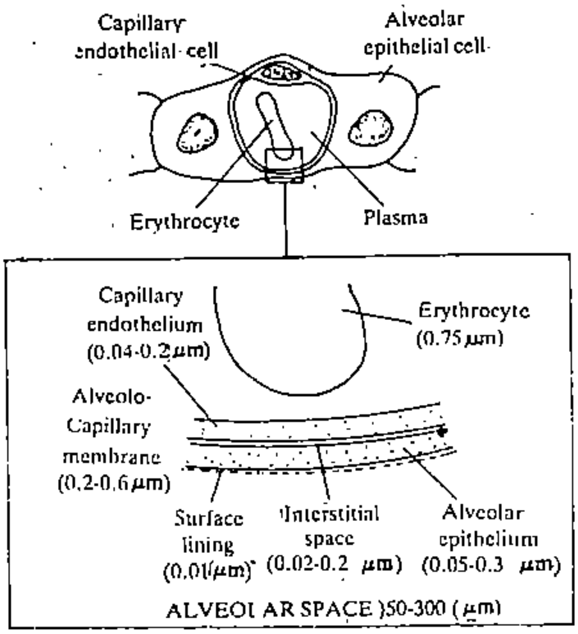

चित्र 2.8 : मनुष्य के फेफड़ों की सूक्ष्म संरचना। (a) श्वसन एपिथीलियम और संबंधित ऊतकों की संरचना (b) और (c) अधिक आवर्धन पर कूपिका-केशिका झिल्ली (alveolar capillary membrane)। यह झिल्ली कूपिका में वायु को केशिका में रक्त से अलग रखती है।

चित्र 2.8 में आप देख सकते हैं कि कूपिका-केशिका की दीवार 0.2 से 0.6 माइक्रॉन पतली होती है। यह झिल्ली संवहनी द्रव्य को कूपिका के अंदर के स्थान से अलग करती है। यहीं पर गैस विनिमय होता है। जहां भी गैस विनिमय होता है वहां रोधिका अवश्य पतली होनी चाहिए जैसी कूपिका झिल्ली में होती है।

कूपिका के अंदर का स्थान जिसमें वायु आती है, कूपिका एपिथीलियम से बना होता है। इसकी सतह पर एक लाइपोप्रोटीन का मिश्रण होता है जिसे **लंग सरफेक्टेन्ट** (lung surfectant) कहते हैं। यह कूपिका में अंतरावस्था पर जिसके दोनों ओर ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड की विपरीत प्रवणता होती है, सतह तनाव को दूर करती है। सरफेक्टेन्ट का दूसरा कार्य नवजात शिशु को पहली श्वास लेने में मदद करना है। जन्म से पहले कूपिकाएं निपात होतीं है तथा इनके बीच पानी की पतली सतह होती है जो उनके खुलने में कठिनाई उत्पन्न करती है जिस प्रकार कि एक गीले प्लास्टिक के थैले को खोलने में कठिनाई होती है। सरफेक्टेन्ट के कारण फेफड़ों को खोलने में पेशियों पर कम जोर पड़ता है।

कूपिका में विनिमय

रक्त जो हृदय से फेफड़ों में जाता है, वह शरीर ऊतकों से होकर जाता है जहाँ माइटोकान्ड्रिया में श्वसन द्वारा उसका ऑक्सीजन अंश अवक्षयित हो जाता है। इस प्रकार रक्त में ऑक्सीजन का आंशिक दाब कम होता है (Po_2 = लगभग 40 mm Hg)। शरीर में उपापचयन द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड का आंशिक दाब बढ़ जाता है तथा कूपिका में प्रवेश करने वाले रक्त का Pco_2 45 mm Hg होता है। इस प्रकार वायुमंडलीय O_2 और CO_2 के आंशिक दाब के मुकाबले, फेफड़ों में प्रवेश करने वाले रक्त में Pco_2 अधिक और Po_2 कम होता है। क्योंकि कूपिकाओं में Po_2 अधिक और Pco_2

कम होता है इसलिये गैस विनिमय दाब प्रवणता की ओर होता है। यह विनिमय प्रकम चित्र 2.9 में दर्शाया गया है।

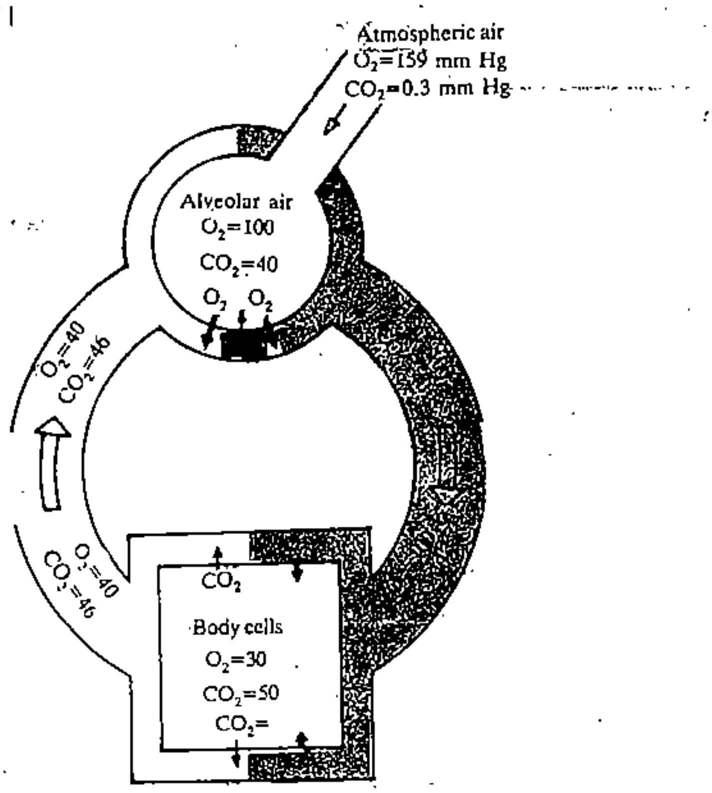

चित्र 2.9 : फेफड़ों में श्वसन गैसों का विनिमयन। चित्र में आंशिक दाब की संख्या mm Hg में दर्शाई गई है।

2.5.2 श्वसन नियमन

जब कभी शरीर में ऑक्सीजन की आवश्यकता बढ़ जाती है, तब श्वसन अंगों का संवातन भी बढ़ जाता है। इसी प्रकार जब कभी श्वसन माध्यम में ऑक्सीजन की कमी होती है तब भी संवातन बढ़ जाता है या फिर शरीर अंतःश्वसन में ली गयी वायु में से सामान्य से अधिक ऑक्सीजन प्राप्त कर लेता है या फिर ये दोनों ही क्रियाएं होनी चाहिए।

पक्षियों तथा स्तनधारियों जैसे नियततापी जन्तुओं में संवातन का नियमन फेफड़ों में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड सांद्रता द्वारा होता है। यदि हम निश्वासित हवा (inhaled air) में कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता बढ़ा कर 5 प्रतिशत कर दें जो कि सामान्यतः फेफड़ों में पायी जाती है, तो संवातन गति बहुत बढ़ जाती है और श्वसनीय संवातन आयतन (respiratory ventilation volume) सामान्य से कई गुना बढ़ जाता है। इससे अधिक कार्बन डाइऑक्साइड सांद्रता खतरनाक हो जाती है।

इसके मुकाबले में ऑक्सीजन सांद्रता का संवातन पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। यदि ऑक्सीजन सांद्रण घटाकर 21 प्रतिशत से 18.5 प्रतिशत कर दिया जाए तो वस्तुतः कोई प्रभाव नहीं दिखाई देता है।

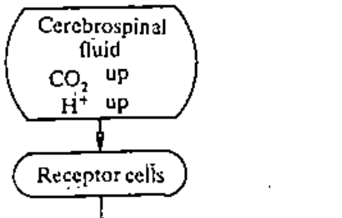

चित्र 2.10 : ग्राही कोशिकाओं पर कार्बन डाइऑक्साइड का प्रभाव।

डायफ्रॉम और अंतरापर्शुक पेशियों (intercostal muscles) के लयबद्ध संकुचन का नियमन मस्तिष्क में मेडुल ऑब्लॉन्गाटा (medulla oblongata) और पॉनस् (pons) में स्थित श्वसन केन्द्र द्वारा होता है। अंतःश्वसन तथा उच्छ्वासन के नियमन के लिए पृथक तंत्रिका कोशिकाएं होती हैं जो क्रमानुसार काम करती हैं। यह श्वसन केन्द्र बढ़ी हुई कार्बन डाइऑक्साइड सांद्रता तथा रुधिर में अम्लता के प्रति संवेदनशील होता है। यह अजीब बात है कि चाहे उपापचयन में ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है फिर भी श्वसन केन्द्र ऑक्सीजन की कम मात्रा के प्रति बहुत संवेदनशील नहीं होता। परन्तु हृदय के समीप महाधमनी चाप (aortic arches) तथा ग्रीवा चाप (carotid arches) में स्थित रसोग्राही (chemoreceptors) ऑक्सीजन के आंशिक दाब कम होने पर श्वसन की गति व गहराई को बढ़ा देते हैं। चित्र 2.10 इस नियमन क्रिया को दर्शाता है।

इसके विपरीत, जलीय जंतु जो गिल द्वारा श्वसन क्रिया करते हैं, ऑक्सीजन की सांद्रता के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। श्वसन माध्यम में यदि ऑक्सीजन की कमी होती है तो बहुत-सी जलीय स्पीशीज़

में श्वसन गति तीव्र हो जाती है। उभयचरों में टेडपोल की श्वसन क्रिया का नियमन ऑक्सीजन सांद्रता पर निर्भर करता है जबकि व्यस्क मेढकों में यह क्रिया कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता पर निर्भर करती है।

बोध प्रश्न 4

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य बताइये?

i) फेफड़ों में सरफेक्टेन्ट कूपिकाओं में पृष्ठ तनाव को बढ़ाता है जिससे कूपिकाएं दब न सकें।

ii) ज्वरीय वायु आयत एक बार के अंतःश्वसन का आयतन को कहते हैं।

iii) श्वसन नली, श्वसनिक आदि में मौजूद वायु के आयतन को शरीरिय डेड स्पेस कहते हैं।

iv) फेफड़ों की कार्बन डाइऑक्साइड सांद्रता बनाए रखने के लिए अवशेषी वायु बहुत आवश्यक है।

v) जंतुओं में श्वसन क्रिया, मस्तिष्क के एक भाग सेरिब्रम द्वारा नियमित होती है।

2.5.3 पानी के अंदर तैरने और गोताखोरी के लिए अनुकूलन

स्तनधारी और पक्षी पानी के अंदर तैरते समय श्वास तो नहीं लेते परन्तु उनके फेफड़ों में कार्बन डाइऑक्साइड जमा होती रहती है। जैसे-जैसे फेफड़ों में कार्बन डाइऑक्साइड जमा होती है अंतःश्वसन के लिये उद्दीपन होता है और पानी के अंदर से तैराक सतह पर श्वास लेने के लिए आता है। स्तनधारियों की बहुत सी स्पीशीज़, उदाहरण के लिए, ऊदबिलाव (otter), बीवर, सील और ह्वेल में पानी के अंदर रहने के लिए अनुकूलन पाये जाते हैं। स्पर्म ह्वेल (sperm whale) में सबसे बेहतर अनुकूलन पाए जाते हैं। यह श्वसन क्रिया में बिना किसी काठनाई के एक घंटे से भी अधिक समय तक, समुद्र में 1000 मीटर गहराई तक रह सकती है। पानी के अंदर रहने की और गोता लगाने की फिज़ियोलॉजी बहुत ही रोचक है। परन्तु इस इकाई में हम इसकी विस्तार से विवेचना नहीं कर सकते हैं। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि गोताखोर स्तनधारियों को अपनी ऑक्सीजन ज्यादा से ज्यादा समय के लिए बचा कर रखनी पड़ती है। इस कार्य के लिए उनमें कई अनुकूलन विकसित हुए हैं। जो इस प्रकार हैं :

1) हृदय गति कम हो जाती है और इसके साथ माँसपेशियों, त्वचा तथा शरीर के अंतरंगों में रक्त की सप्लाई कम हो जाती है ताकि हृदय और मस्तिष्क में पर्याप्त रक्त सप्लाई बनी रहे। कुछ स्तनधारियों में नासिका में कुछ ग्राही कोशिकाएं होती हैं जो पानी से उद्दीप्त होकर हृदय गति कम कर देते हैं।

2) गोताखोर कशेरुकि जंतुओं में अन्य जंतुओं की तुलना में रक्त की मात्रा अधिक होती है तथा शिरा रुधिर का भंडार भी बड़ा होता है।

3) गहरा गोता लगाते समय पानी के दाब के कारण फेफड़े आंशिक रूप से पिचक जाते हैं या दब जाते हैं और केशिका परिसंचरण भी कम हो जाता है जिससे रक्त में घुली वायु भी कम हो जाती है।

ऐसे स्तनधारियों की तरह मनुष्य पानी के अंदर रहने में सफल नहीं हो पाया क्योंकि उसकी श्वसन कार्यकी पानी में रहने के अनुकूलित नहीं है। इसी कारण से मानव गोताखोरों को कई तरह की कठिनाइयां होती हैं। उसमें सबसे महत्वपूर्ण है ---- पानी का दाब। हर 10 मीटर गहराई पर दाब 1 एटमोस्फियर (101.3 किलो पस्कल) बढ़ जाता है। अर्थात् समुद्र की सतह से 10 मीटर नीचे दाब सतह के दाब से दुगना हो जाता है और प्लाज़्मा अर्थात् जीवद्रव्य में घुलनशील गैसों की मात्रा भी दुगनी हो जाएगी। रक्त में घुलनशील ऑक्सीजन और नाइट्रोजन की सांद्रता बढ़ने के गंभीर परिणाम हो सकते हैं। यदि Po_2 बढ़कर 2.5 एटमोस्फियर हो जाती है तो बहुत शीघ्र **ऑक्सीजन आविषालुता** (oxygen toxicity) होने लगती है, क्योंकि एंज़ाइम का ऑक्सीकरण और बहुत-सी विनाशकारी अभिक्रियाएं होने लगती हैं जिनसे तंत्रिका तंत्र क्षतिग्रस्त हो जाता है और इसी कारण अधिक गहराई में जाने वाले गोताखोर शुद्ध ऑक्सीजन के बदले गैस मिश्रण का इस्तेमाल करते हैं। रक्त में अधिक दाब पर घुली हुई नाइट्रोजन से **नाइट्रोजन नार्कोसिस** (nitrogen narcosis) हो जाती है। यह स्थिति नशे की

स्थिति से मिलती-जुलती है। यदि गोताख़ोर बहुत तेज गति से पानी की सतह पर आ जाते हैं तो एक और खतरा पैदा हो जाता है। रक्त में घुली हुई गैसें प्रसरित हो जाती हैं और उनके बुलबुले बनने से परिसंचरण तंत्र में **एम्बोलाई** (emboli) अर्थात् अंतःशूल्य बन जाते हैं।

पानी के अंदर कम गहराई पर **अतिसंवातन** (hyperventilation) करने से तैराक की जान खतरे में पड़ सकती है। अतिसंवातन से उसकी कूपिकाओं में कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता कम हो जाती है और उससे संबंधित श्वसन क्रिया के लिए उद्दीपन देर से होता है। इस कारण तैराक को सांस लेने की आवश्यकता महसूस ही नहीं होती है परन्तु ऑक्सीजन निरंतर शरीर में इस्तेमाल होती रहती है और क्योंकि Po_2 ग्राही कोशिकाएं Pco_2 ग्राही कोशिकाओं की तरह संवेदनशील नहीं होती हैं, तैराक में ऑक्सीजन की कमी होने पर भी महसूस नहीं होती और वह अचेत हो कर डूब सकता है।

2.6 वातक

स्थलीय पर्यावरण में अत्यंत सफल जन्तु कीटों में एक अलग प्रकार का श्वसन तंत्र विकसित हुआ है जो बाकी स्थलीय जंतुओं से बिल्कुल पृथक है। यह है, **वातक तंत्र** (tracheal system)। कीटों के अलावा अन्य संदिपाद जैसे कि मिलीपीड, सेन्टिपीड (कानखजूरा), कुछ ऐरैक्निड और स्थलीय क्रस्टेशियाई के श्वसन अंग वातक (trachea) होते हैं।

वातक तंत्र वायु से भरी नलियों का तंत्र है। इसमें वातकीनाल (tracheal tubes) होती है जो बहुत महीन केशिकाओं के समान शाखित होकर लघुवातक (tracheoles) कहलाती है। इन लघुवातकों के सिरे कीट शरीर की कोशिकाओं के निकटस्थ होती है। कभी-कभी ये कोशिका झिल्ली से इस तरह जुड़ी रहती है कि ऐसा प्रतीत होता है जैसे झिल्ली को पार करके कोशिका में प्रवेश कर गयी हो। वातक का व्यास 1 से 2 mm तक हो सकता है और लघुवातक का व्यास 0.6 से 0.8 mm के बीच होता है। मोटी वातकों में क्यूटिकल की दीवार में स्थूल बन जाते हैं जिनसे नाल को सहारा मिलता है और वह पिचकती/दबती नहीं है। यह स्थूलन **टेनिडिया** (taenidia) कहलाते हैं। जैसे-जैसे वातक नाल शाखित होती है उसकी दीवारें पतली होती जाती हैं और लघुवातकों के सिरे का व्यास केवल 5 μm होता है। चित्र 2.11 कुछ कीटों में वातक तंत्र की संरचना दर्शाता है।

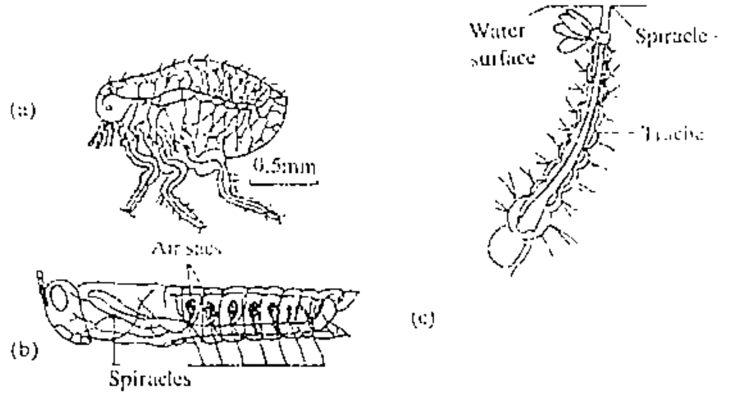

चित्र 2.11 : कीट मे वातक तंत्र के कुछ रूपांतर (a) मूल प्रतिमान (b) यांत्रिक संवातन वाले वायुकोश (c) जलीय कीटों में सिरे का श्वासरंध्र।

वातक नाल **श्वासरंध्र** (spiracles) द्वारा बाहर को खुलते हैं। यह साधारणतः 10 जोड़े होते हैं। इनको बंद रखने के लिए अवरोधक होते हैं जो पेशियों तथा फिल्टरों से युक्त होते हैं। अवरोधकों से जल का संरक्षण भी होता है। वातक नाल तथा लघुवातकों के सिरों से पानी आ जा सकता है और इनमें कुछ तरल पदार्थ रहता है। यह तरल कोशिकाओं से केशिका क्रिया (capillary action) द्वारा लघुवातकों में चला जाता है। निष्क्रिय अवस्था में लघुवातकों के सिरों में तरल भरा रहता है परन्तु क्रिया के दौरान कोशिका में मेटाबोलाइट जमा हो जाते हैं और कोशिका द्रव अतिपरासरण दाबी (hypertonic) हो जाता है तथा लघुवातकों के सिरे से तरल वापस कोशिकाओं में खिंच जाता है और अधिक ऑक्सीजन लघुवातकों में जाने लगती है। इस प्रकार उन ऊतकों में जहां सक्रिय उपापचयन होता है अधिक ऑक्सीजन की सप्लाई हो जाती है।

वातक तंत्र का संवातन

विभिन्न कीटों की स्पीशीज़ में वातक नाल का संवातन अलग-अलग तरीकों से होता है। परन्तु नाल में वायु का संचालन दो प्रकार से होता है, विसरण द्वारा व निश्चेष्ट चूषण संवातन (passive suction ventilation) द्वारा।

विसरण द्वारा : अधिकतर कीटों में गैस विनमयन और ऑक्सीजन आपूर्ति विसरण प्रक्रिया द्वारा होती है। इसी प्रकार कुछ बड़े परन्तु निश्क्रिय कीट जैसे कि कुछ बड़ी इल्लियां अपने श्वसन तंत्र का सक्रिय रूप से संवातन नहीं करते हैं। यदि उनके श्वासरंध्री मुख सदा खुले रहते हैं तो गैस विनिमय के लिए विसरण ही काफी है।

निश्चेष्ट चूषण संवातन : बहुत से फुर्तीले कीट और शुष्क वातावरण में रहने वाले कीटों में केवल विसरण ही गैस विनिमय के लिए पर्याप्त नहीं है। उड़ने वाले कीट को निरंतर ऑक्सीजन सप्लाई की आवश्यकता रहती है, इसलिए इनकी उड्डयन पेशियों (flight muscles) में लघुवातकों का जाल होता है। यदि इन कीटों के श्वासरंध्र सदा खुले रहें तो इनके शरीर से पानी का वाष्पन हो जायेगा। इस समस्या के समाधान के लिये इन कीटों में वायु प्रवाह की दिशा और उसकी मात्रा दोनों पर नियंत्रण रहता है। उदाहरण के लिए, टिड्डी अपने श्वासरंध्र मुखों को क्रमशः खोलती व बंद करती है। इस क्रिया पर उसका सूक्ष्म नियंत्रण होता है जिससे वायु प्रवाह नियमित रूप से होता है। वायु अग्र श्वासरंध्र से होकर पिछले श्वासरंध्रों से निकलती है जिससे एकदिशीय वायु प्रवाह बना रहता है। परन्तु बड़े से बड़े और फुर्तीले कीटों में भी लघुवातकों में गैस विनिमय विसरण द्वारा ही होता है।

कुछ कीट स्पीशीज़ में एक बहुत ही रोचक श्वासरंध्र नियंत्रण प्रणाली देखी जाती है। श्वासरंध्र ज्यादा समय के लिए कस कर बंद रहते हैं। जब कीट को ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है तो श्वासरंध्र मुख आंशिक रूप से खुलते हैं और तत्काल बंद हो जाते हैं। श्वासरंध्र के फड़फड़ाने के कारण वायु का प्रवाह भी बना रहता है और पानी का वाष्पन भी अधिक नहीं होता है। एक बार ऑक्सीजन का आंशिक दाब उच्च स्तर पर पहुंच जाता है तो श्वासरंध्र बंद हो जाते हैं।

जब ऊतकों में ऑक्सीजन का उपयोग होता है तो कार्बन डाईआक्साइड का बाइकार्बोनेट के रूप में अस्थायी संचयन होता है। इस तरह Pco_2 स्तर **सह्य सीमा** (tolerable limits) में रहता है। जब Pco_2 क्रांतिक सीमा पर पहुंच जाता है तब श्वासरंध्र मुख पूरी तरह खुल जाते हैं और कार्बन का **स्फोटक निष्कासन** होता है और यह चक्र फिर दोहराया जाता है।

कोश वातक नाल के गुब्बारेनुमा विस्तार है (चित्र 2.11 b)। इनका फूलना और पिचकना हीमोलिम्फ अर्थात् रुधिरलसीका के दाब और शरीर की माँसपेशियों के संकुचन पर निर्भर करता है चित्र 2.11 (c)। अर्थात् रुधिरलसीका के दाब और शरीर की माँसपेशियों के संकुचन पर निर्भर करता है। चित्र 2.11 (c) जलीय कीटों में पाये जाने वाला रूपांतरण है। अधिकांश श्वासरंध्र कार्यरत नहीं होते केवल अंतिम दो बाहर की ओर खुलते हैं। ये इस प्रकार स्थित होते हैं कि कीट सतह पर आकर विसरण या श्वसन क्रिया द्वारा वायुमंडल से ऑक्सीजन से संपर्क कर सकें। मच्छर के लार्वे इसका उदाहरण हैं।

अनेक जलीय कीट स्पीशीज़ में वातक गिल (tracheal gills) होते हैं जो विसरण द्वारा वातक नाल में वायु की आपूर्ति करते हैं। कुछ जलीय कीट शरीर की सतह पर वायु का बुलबुला धारण करते हैं जिससे ऑक्सीजन का अस्थाई भंडारण होता है और पानी के अंदर यह वायु का बुलबुला वातक नाल में ऑक्सीजन की आपूर्ति करता है। अन्य कुछ जलीय कीटों में शरीर के ऊपर जल प्रत्याकर्षी रोये होते हैं जो वायु की सतत मात्रा को शरीर की सतह के निकट बनाये रखते हैं। यह वायु की पतली सी पर्त प्लैस्ट्रॉन (plastron) कहलाती है। यदि पानी में वायु की पर्त की पर्याप्त मात्रा रहती है तो प्लैस्ट्रॉन वाले कीट कई महीनों तक पानी के अंदर डूबे रह सकते हैं।

एक निःश्वसन, वायु क्षमता का एक तिहाई से आधा भाग तक खाली कर सकता है जिससे श्वसन तंत्र के लगभग आधा आयतन का नवीकरण हो सकता है। यह नवीनीकरण की प्रक्रिया स्तनधारी जंतुओं की आराम की स्थिति में कहीं कम होती है क्योंकि उनकी एक श्वास में तंत्र में स्थित हवा का केवल 1/5 वें भाग का ही नवीकरण हो सकता है।

श्वासरंध्रों का खुलना और बंद होना श्वसन गति के तुल्यकालन होता है तथा ऑक्सीजन की कमी या कार्बन डाइऑक्साइड की अधिकता के द्वारा नियंत्रित होता है। कार्बन डाईऑक्साइड श्वासरंध्रों के

खुलने में मुख्य उद्दीपन का कार्य करता है। उदाहरण के लिए तिलचट्टे में वायु 1% कार्बन डाइऑक्साइड का प्रभाव अवगम्य होता है, 2% कार्बन डाईऑक्साइड श्वासरंध्रों को खुली रखती है और 3% उनको विस्तृत करती है।

बोध प्रश्न 5

क) अगर कार्बन डाईऑक्साइड की एक धारा कीटों के श्वासरंध्रों की ओर निर्देशित की जाती है तो अवगम्य प्रभाव क्या होगा?

....

....

....

ख) मिट्टी के तेल का खुली नलियों या रुद्ध जल में डालना किस प्रकार मच्छरों के प्रजनन को रोकता है?

....

....

....

हमने देखा कि किस प्रकार श्वसन अंगों में गैस विनिमय होता है और विशेष अनुकूलन के द्वारा पर्याप्त ऑक्सीजन की प्राप्ति और कार्बन डाइऑक्साइड का विसर्जन होता है। दूसरे भाग में हम देखेंगे कि किस प्रकार रक्त इन दो विशेष गैसों का परिवहन श्वसनांगों और उपापचयी ऊतक के बीच करता है।

2.7 रक्त में गैसों का परिवहन

हम जानते हैं कि जन्तुओं के शरीर में बराबर दो प्रकार के गैस विनिमय होते रहते हैं — एक श्वसन सतह तथा बाह्य वायुमंडल अंतरावस्था पर और दूसरा, समस्त ऊतकों में। दोनों में एक ही प्रकार का सिद्धांत लागू होता है — **दाब प्रवणता के आधार पर निश्चेष्ट विसरण**। कई अकशेरुकी में ऑक्सीजन तथा कार्बन डाइऑक्साइड का परिवहन रक्त या हीमोलिम्फ में घुल कर होता है। साधारण घोल में ऑक्सीजन की उदवाह मात्रा कम होती है अतः विकसित जंतुओं में (बहुत से अकशेरुकी और समस्त कशेरुकी) उत्क्रम्य परिबद्ध ऑक्सीजन तथा कार्बन डाईऑक्साइड का परिवहन ऑक्सीजन वाहक प्रोटीन के द्वारा होता है। इन प्रोटीनों में प्रायः लोहा या तांबा धातु होती है तथा ये रंजित होती है। इन्हें **श्वसन वर्णक** कहते हैं। तालिका 2.3 में साधारण श्वसन वर्णक, उनके अणुभार और जन्तु जगत में उनकी उपस्थिति दी गई है।

तालिका 2.3 : सामान्य श्वसन वर्णक, उनके गुण तथा जंतु जगत में उनकी उपस्थिति

वर्णक	रंग	स्थान	अणुभार	ऑक्सीजन (आयतन %)	जंतु
हीमोसइनिन (तांबा युक्त)	नीला	प्लाज़्मा	$3 - 6.8 \times 10^6$	1–5	मोलस्क
			$4 - 8 \times 10^5$	1 – 4	क्रस्टेशियन
हीमएरिथ्रिन (लौह युक्त)	लाल	कणिका	6.6×10^4	2	एनेलिड
क्लोरोक्रुओरिन (लौह युक्त)	हरा	प्लाज़्मा	3.4×10^6	9	एनेलिड
हीमोग्लोबिन (लौह युक्त)	लाल	कणिका	6.8×10^4	15 – 30	स्तनधारी
				10 – 25	पक्षी
				7 – 12	सरीसृप
				6 – 13	उभयचर
				1 – 16	ग्नेथोस्टोम मत्स्य
			1.7×10^4	1.2	साइक्लोस्टोम मत्स्य
		प्लाज़्मा	3.0×10^6	5 – 15	एनेलिड
			1.5×10^6	1 – 6	मोलस्क

2.7.1 हीमोग्लोबिन

श्वसन वर्णकों में हम हीमोग्लोबिन को कुछ विस्तार में पढ़ेंगे क्योंकि यह बहुत ही परिचित, व्यापक तथा सक्षम श्वसन वर्णक है। आप तालिका 2.3 में देख सकते हैं कि सक्षम हीमोग्लोबिन वो होते हैं जो कोशिका में स्थित होते हैं तथा ऑक्सीजन की अधिक मात्रा से संयोग करते हैं जैसा चित्र 2.12 में भी दर्शाया गया है। जितनी हीमोग्लोबिन की मात्रा कोशिका में स्थित होती है अगर वह प्लाज्मा में स्वतंत्र रूप से स्थित होती तो रक्त की विस्कासिता शर्बत की भांति होती। इसके अतिरिक्त कोशिका में स्थित होने से एक स्थाई वातावरण बनता है क्योंकि ऑक्सीजन तथा हीमोग्लोबिन की क्रिया रक्त में आयन की सांद्रता और कार्बनिक यौगिक पर निर्भर करती है।

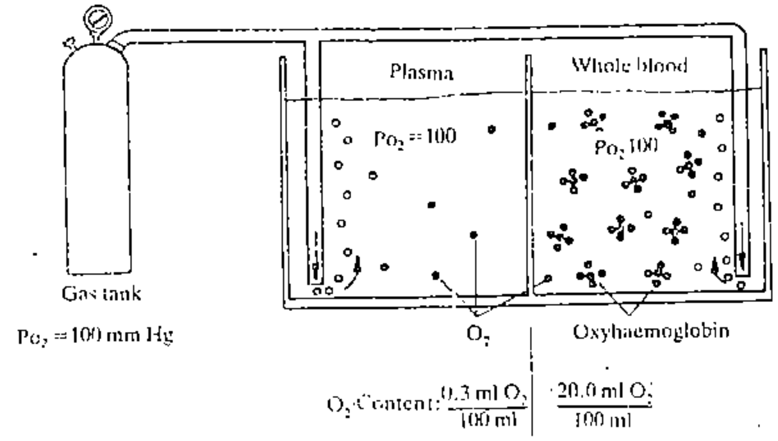

चित्र 2.12 : गैस मिश्रण तथा संपूर्ण रक्त और रक्त प्लाज्मा साम्यवस्था में विलेय ऑक्सीजन (मुक्त काले बिन्दु) समान है इस कारण उनका Po_2 भी समान है। परन्तु संपूर्ण रक्त में O_2 की मात्रा प्लाज्मा से अधिक है क्योंकि हीमोग्लोबिन-ऑक्सीजन संयोजन होता है।

आप हीमोग्लोबिन की संरचना संक्षेप में कोशिका जैविकी (LSE-01) इकाई 5 में पढ़ चुके हैं। अब हम इसकी संरचना विस्तार से पढ़ेंगे।

जीवाणु, पादप और जंतुओं में पॉर्फिरिन (porphyrin) नामक यौगिक समूह पाये जाते हैं। यह समूह धातु से मिलकर कई प्रकार के धात्वीय पॉर्फिरिन बनाते हैं। उदाहरण के लिये क्लोरोफिल जिसके बारे में आप खंड-3 में पढ़ेंगे, एक मैग्नीसियम पॉर्फिरिन है और साइटोक्रोम जिनमें पॉर्फिरिन समूह होते हैं, अंतःकोशिकीय ऑक्सीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जब प्रोटोपार्फिरिन IX में फेरस लोह Fe^{++} मिलता है तो फेरस पॉर्फिरिन अर्थात् हीम (haem) की संरचना होती है। इसकी आण्विक संरचना चित्र 2.13 में दिखाई गई है।

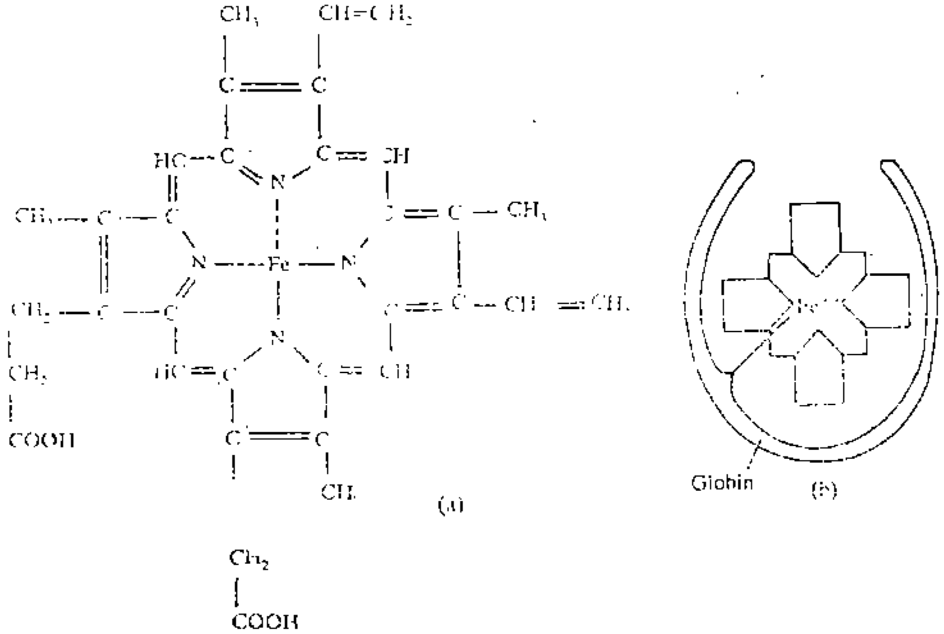

चित्र 2.13 : (a) हीम समूह की रासायनिक संरचना। (b) हीमोग्लोबिन के एक उपएकक का रेखाचित्र।

फेरस लोह परमाणु पॉर्फिरिन वलय के चार नाइट्रोजन से संयोजन करता है। यह फेरस परमाणु दो अन्य बंध बनाता है। एक, ऑक्सीजन परमाणु से संयुक्त होकर ऑक्सीहीमोग्लोबिन (oxyhaemoglobin) तथा दूसरा बंध ग्लोबिन के एक ऐमीनो अम्ल से (चित्र 2.13 b))। समस्त हीमोग्लोबिन का हीम भाग एक प्रकार का होता है परन्तु ग्लोबिन समूह के ऐमीनो अम्लों का क्रम भिन्न होता है।

मायोग्लोबिन द्वारा ऑक्सीजन संग्रह विशेषकर हृदय के कार्यविधि में सहायक होता है। सिस्टोल के वक्त जब कोरोनरी रक्त बहाव सबसे अधिक होता है, यह ऑक्सीजन संग्रह का कार्य करता है और जब सिस्टोल के वक्त कोरोनरी धमनियां रक्तहीन हो जाती है, संग्रहित ऑक्सीजन मुक्त कर दी जाती है।

हम हीमोग्लोबिन की संरचना को **मायोग्लोबिन** (myoglobin) की रचना से समझ सकते हैं। मायोग्लोबिन एकलकी अर्थात् मोनोमेरिक (monomeric) रूप है। उसमें केवल एक पॉलीपेप्टाइड शृंखला, ग्लोबिन होती है जिसमें हीम भाग अंतःस्थापित होता है। मायोग्लोबिन कशेरुकी के रेखित पेशियों में पाया जाता है और केवल ऑक्सीजन के एक अणु से संयुक्त हो सकता है। कशेरुकी हीमोग्लोबिन चार पॉलीपेप्टाइड शृंखला के पुंज से बना चतुष्य (tetramer) है जिसकी प्रत्येक पॉलीपेप्टाइड शृंखला में हीम समूह होता है। इस तरह प्रत्येक हीमोग्लोबिन चार ऑक्सीजन अणुओं से उत्क्रमणीय अभिक्रिया में ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाता है। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में यौगिक को डीऑक्सीहीमोग्लोबिन (deoxyhaemoglobin) कहते हैं। मनुष्य की हीमोग्लोबिन में दो मोनोमर एक प्रकार के होते हैं जिन्हे β मोनोमर कहते हैं तथा बाकि दो α मोनोमर कहलाते हैं। आपको हीमोग्लोबिन की विशिष्ट चतुर्थक संरचना इकाई 5, LSE-01 से याद होगी।

करीब-करीब सभी कशेरुकी हीमोग्लोबिन चतुष्टय हैं परन्तु अकशेरुकी हीमोग्लोबिन कई प्रकार के होते हैं। इनमें महत्वपूर्ण बात यह है कि उपएकक मिलकर अपेक्षाकृत अधिक अणुभार के बड़े समूह बनाते हैं (तालिका 2.3 देखिये)।

स्तनधारियों के रक्त में मुक्त ऑक्सीजन की विलीन मात्रा लगभग 0.2 ml ऑक्सीजन प्रति 100 ml होती है। रक्त में हीमोग्लोबिन से संयुक्त ऑक्सीजन 20 ml प्रति 100 ml होती है। इस प्रकार जन्तुओं के श्वसन वर्णक में विलीन मुक्त ऑक्सीजन लगभग नगण्य होती है। केवल अंटार्कटिक मछली हैं जिसमें श्वसन वर्णक बिल्कुल नहीं पाए जाते। इसका स्पष्टीकरण इस तथ्य पर आधारित है कि कम तापक्रम पर उपापचय दर कम होती है तथा दूसरे गैसों की भांति ऑक्सीजन की घुलनशीलता कम तापक्रम पर अधिक होती है।

2.7.2 रक्त में ऑक्सीजन परिवहन

जन्तुओं का आवास कहीं भी हो चाहे वह स्थल हो, जहां प्रति लिटर हवा में 210 ml ऑक्सीजन है या अलवणीय जल, जिसमें ऑक्सीजन 8.0 ml प्रति लिटर या समुद्री जल, जिसमें ऑक्सीजन 6.4 ml प्रति लिटर होती है; उनमें विकसित श्वसन वर्णक ऑक्सीजन का उद्भारण तथा ऑक्सीजन अभरित करने के लिए अनुकूलित होते हैं। उद्भरण (loading) तथा अभारण (unloading) क्रिया को निम्न प्रकार से लिखा जा सकता है :

$$\text{(हीमोग्लोबिन) } Hb + O_2 \xrightarrow[\text{ऊतक}]{\text{श्वसन सतह}} Hb\,O_2 \text{ (ऑक्सीहीमोग्लोबिन)}$$

इस क्रिया की दिशा वातावरण में ऑक्सीजन के आंशिक दाब तथा हीमोग्लोबिन और ऑक्सीजन के बीच बंधुता पर निर्भर करती है।

फेफड़ों में जहां Po_2 अधिक होता है लगभग सभी डीऑक्सीहीमोग्लोबिन अणु ऑक्सीजन से संयोजन करते हैं। दैहिक कोशिकाओं में Po_2 कम होता है, अतः यह अभारण को प्रेरित करती है। इसी प्रकार दृढ़ बंधुता उद्भारण तथा निर्बल बंधुता अभारण को प्रेरित करता है। हीमोग्लोबिन के आबंध सामर्थ्य के कारण 97 प्रतिशत हीमोग्लोबिन फेफड़े से निर्गमन के पूर्व ऑक्सीजन से संयोजन करता है। यही आबंध ऊतक में अभारण के लिए पर्याप्त रूप से निर्बल होता है। आराम की स्थिति में 22% ऑक्सीजन अभारित होती है। यह मात्रा शरीर में ऑक्सीजन की आवश्यकता की पूर्ति करती है और पर्याप्त आरक्षित भंडार रखती है जिसे आपातकाल में उपयोग किया जाता है।

हीमोग्लोबिन की बंधुता ऑक्सीजन की अपेक्षा कार्बन मोनोक्साइड के प्रति अधिक होती है। यह बंधन 210 गुना अधिक मजबूत होता है। कार्बन मोनोक्साइड हीमोग्लोबिन से ऑक्सीजन हटाती है तथा रक्त से जुड़ कर ऊतकों में जाती है। ऑक्सीजन का परिवहन क्षतिग्रस्त हो जाता है जिसके गंभीर परिणाम होते हैं यहां तक कि मृत्यु भी हो सकती है।

ऑक्सीजन वियोजन चक्र

पूर्ण रूप से संतृप्त अर्थात् ऑक्सीजनीकृत रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा का परिकलन किया जा सकता है। यह रक्त की **ऑक्सीजन वहन क्षमता** (oxygen carrying capacity) है और विभिन्न स्पीशीज़ में भिन्न होती है। मनुष्य में ऑक्सीजन वहन क्षमता 20 ml ऑक्सीजन प्रति 100 ml रक्त होती है। परिवेशी ऑक्सीजन सांद्रता तथा वहन क्षमता के संबंध का आलेख ऑक्सीजन वियोजन

वक्रों (oxygen dissociation curves) द्वारा दिखाया जा सकता है। यह वक्र रक्त के नमूने को ऑक्सीजन के अलग-अलग आंशिक दाब के प्रभाव में रख कर प्राप्त किया जाता है। ऑक्सीजन के विभिन्न आंशिक दाबों पर संतृप्त ऑक्सीहीमोग्लोबिन के प्रतिशत को आलेखित किया जाता है।

चित्र 2.14 ऑक्सीजन वियोजन का सिग्माभ वक्र (sigmoid curve) दर्शाता है। आलेख से हम देख सकते हैं कि किस प्रकार हीमोग्लोबिन श्वसन वर्णक का कार्य करता है। फेफड़ों में पूर्ण संतृप्त अवस्था होती है जहां धमनीय दाब 95 mm Hg के ऊपर होता है और ऊतक में ऑक्सीजन के कम आंशिक दाब (लगभग 40 mm Hg) के कारण ऑक्सीजन का अभारण होता है।

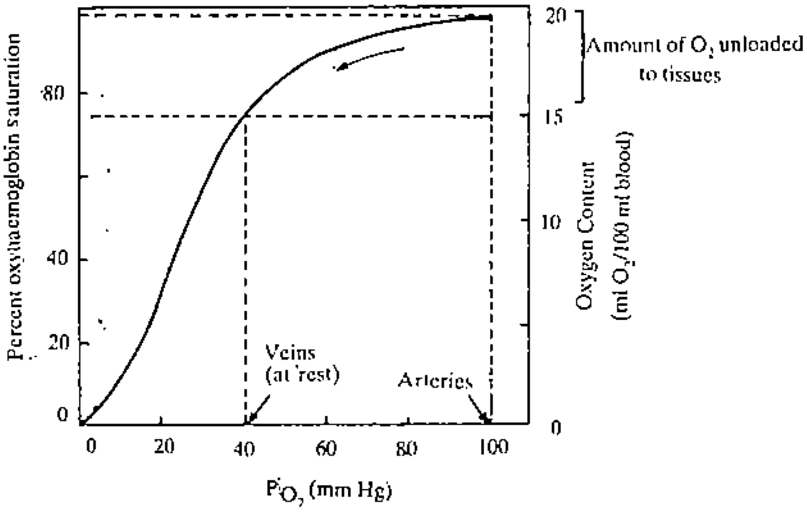

चित्र 2.14 : ऑक्सीजन वियोजन वक्र प्रदर्शित करता है कि किस प्रकार हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन बांधने की क्षमता, ऑक्सीजन के आंशिक दाब पर निर्भर करती है। जब रक्त धमनियों से शिराओं में जाता है तो ऑक्सीहीमोग्लोबिन का 22% ह्रास होता है। परिणामतः 100 ml रक्त से लगभग 5 ml ऑक्सीजन का अभारण होता है।

वक्र यह भी प्रदर्शित करता है कि Po_2 मान में परिवर्तन संतृप्त ऑक्सीजन प्रतिशत में भारी अंतर उत्पन्न करता है। आराम की स्थिति में धमनी और शिरा के ऑक्सीजन मान में अंतर $97 - 75 = 22$ प्रतिशत अभारण प्रदर्शित करता है। हल्के व्यायाम में यह अभारण 39% होता है। इसके विपरीत मायोग्लोबिन वक्र समकोणिक या आयताकार होता है (चित्र 2.15)। बहुत कम Po_2 (5 mm Hg या कम) पर ही अभारण होता है। मायोग्लोबिन पेशीय कोशिका में रक्त से माइटोकॉन्ड्रिया में ऑक्सीजन स्थानांतरण में मध्यस्थ का कार्य करता है। इसे ऑक्सीजन का सुग्मीकृत विसरण (facilitated diffusion) कहते हैं। चित्र 2.15 से यह भी पता चलता है कि मायोग्लोबिन तब तक ऑक्सीजन संतृप्त रहता है जब तक कि परिवेशी तरलों में Po_2 मान बहुत कम न हो जाये।

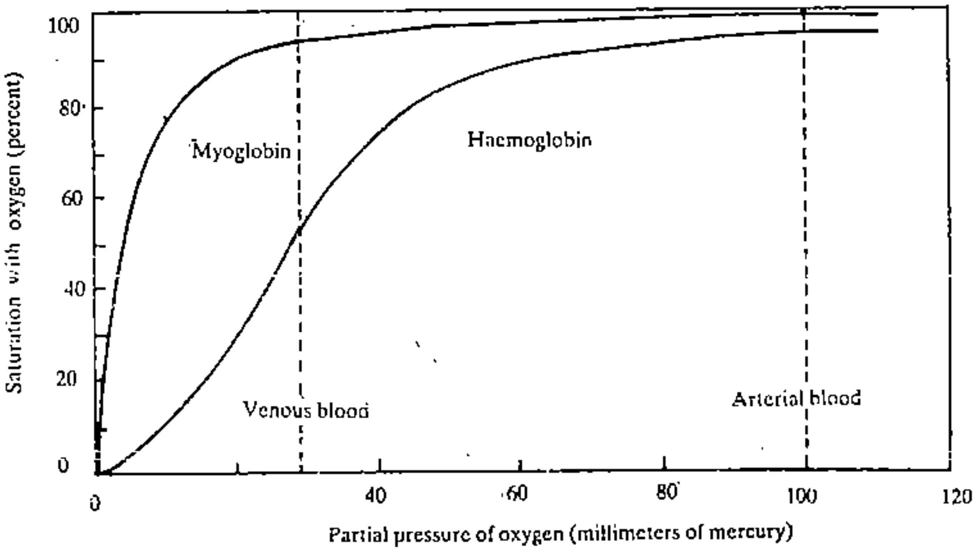

चित्र 2.15 : हीमोग्लोबिन और मायोग्लोबिन के वियोजन वक्र की तुलना। मायोग्लोबिन और ऑक्सीजन में बहुत अधिक बंधुता है। जैसा कि शिरा रक्त में उसके ऑक्सीजन मान द्वारा पता चलता है।

चित्र से आप यह भी देख सकते हैं कि 20 mm Hg दाब पर रक्त में हीमोग्लोबिन केवल 30 प्रतिशत संतृप्त रहता है परन्तु पेशियों में मायोग्लोबिन 80 प्रतिशत से भी अधिक संतृप्त रहता है।

आण्विक मायनों में एक सिग्माभी वक्र कैसे उभरता है? चित्र 2.14 में वक्र के उस भाग को देखिए जहां Po_2 मान कम है। प्रारम्भ में स्लोप अधिक नहीं है परन्तु एक मान (20 mm Hg) तक इसका प्रावण्य बहुत ज्यादा हो जाता है। अर्थात् हीमोग्लोबिन कम Po_2 पर ऑक्सीजन से संयोजन नहीं करता है परन्तु जैसे-जैसे वर्णक का ऑक्सीजनीकरण होता है, इसकी ऑक्सीजन बंधुता उतनी ही अधिक हो जाती है। परन्तु मायोग्लोबिन के वक्र (चित्र 2.15) में ऑक्सीजन बंधता में वृद्धि नहीं दिखाई देती। मायोग्लोबिन में हीम और ऑक्सीजन का संयोजन स्वतंत्र होता है। जबकि हीमोग्लोबिन के 4 उपएककों में से एक के साथ ऑक्सीजन संयोजन होने से बाकि निकटतम हीम अणुओं की ऑक्सीजन बंधुता बढ़ जाती है। इस क्रिया को **सक्रिय स्थलों में सहकारिता** (cooperativity between active sites) कहते हैं। आइए अब यह समझें कि किस प्रकार सक्रिय स्थलों की सहकारिता ऑक्सीजन आबंधन को प्रभावित करती है। यह जाना जा चुका है कि हीमोग्लोबिन दो विनमेय रूपों में पायी जाती है। एक T (टेन्स अर्थात् तनाव संरचना) और दूसरी R (रिलिज़ अर्थात् मोचित संरचना)। T संरचना की ऑक्सीजन के प्रति अपेक्षाकृत कम बंधता होती है और R संरचना की अधिक बंधता होती है। T संरचना के एक उपएकक द्वारा ऑक्सीजन संयोजन से संपूर्ण सम्मिश्रण R संरचना में बदल जाता है जो T संरचना हीम समूह के मुकाबले सौ गुना अधिक शीघ्रता से ऑक्सीजन से संयोजन करता है।

रक्त के किसी नमूने का ऑक्सीजन वियोजन वक्र कई कारकों द्वारा प्रभावित होता है। इनमें से अतिमहत्वपूर्ण कारक निम्न हैं :

1) तापमान
2) pH
3) कार्बन डाइऑक्साइड
4) कार्बनिक फ़ॉस्फ़ेट

अधिक तापमान पर हीमोग्लोबिन बड़ी सरलता से ऑक्सीजन मोचन करता है और वियोजन वक्र दाहिनी ओर विस्थापित होता है। यह शरीर क्रिया में महत्वपूर्ण है क्योंकि अधिक तापमान का अर्थ है अधिक उपापचय दर या ऑक्सीजन की आवश्यकता।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव pH का होता है। कार्बन डाइऑक्साइड या दूसरे अम्लों की अधिकता प्लाज़्मा के pH को कम कर देता है और वियोजन वक्र दाहिनी ओर विस्थापित हो जाता है (चित्र 2.16)। कार्बन डाईऑक्साइड की अधिक सांद्रता पर किसी भी ऑक्सीजन दाब पर अधिक ऑक्सीजन मुक्त होती है। इस प्रभाव को **बोहर प्रभाव** (Bohr's effect) कहते हैं जिसे डैनिश वैज्ञानिक के नाम

बुखार या कसरत के वक्त ऑक्सीजन प्रयोग की दर अधिक होती है इसलिए हीमोग्लोबिन की अधिक तापमान पर सुगमता से ऑक्सीजन को मुक्त करने की प्रक्रिया लाभदायक सिद्ध होती है।

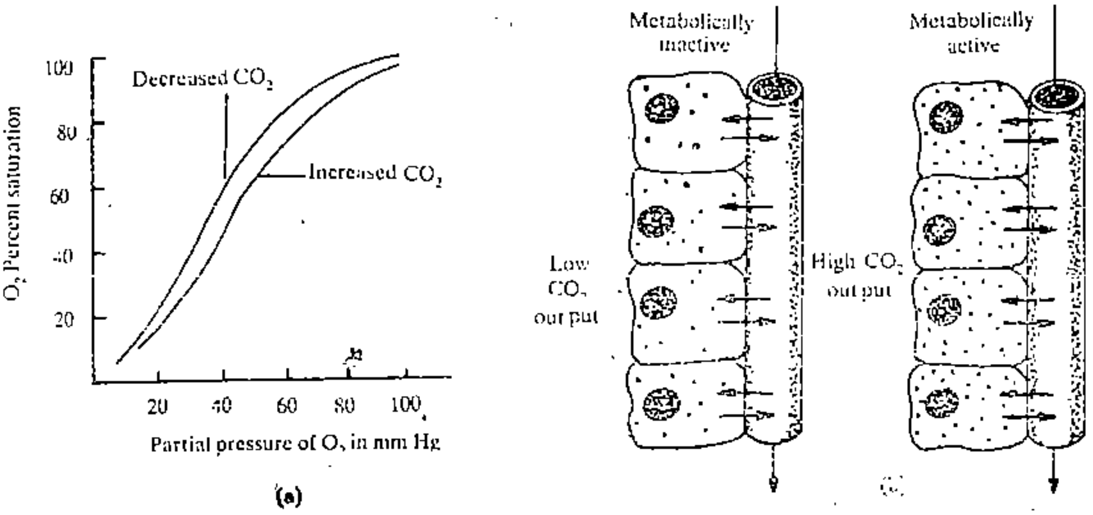

(a)

चित्र 2.16 : बोहर प्रभाव : बढ़ती हुई अम्लता क साथ-साथ ऑक्सीहीमोग्लोबिन से भी अधिक ऑक्सीजन मुक्त होती है। (a) अम्लता बढ़ने के साथ ऑक्सीजन वियोजन वक्र दाहिनी ओर खिसक जाता है। (b) उपापचयन में अधिक सक्रिय कोशिकाओं में अधिक ऑक्सीजन आपूर्ति होती है।

पर, जिसने सर्वप्रथम इसका वर्णन किया, रखा गया है। अतः जैसे-जैसे ऊतकों से श्वसन क्रिया द्वारा कार्बन डाईऑक्साइड रक्त में प्रवेश करती है यह अधिक ऑक्सीजन विमोचन को प्रोत्साहित करती है। यह एक महत्वपूर्ण लक्षण है क्योंकि इस प्रकार उन ऊतकों को अधिक ऑक्सीजन मिलती है जिनको इसकी अत्यधिक आवश्यकता होती है। बोहर प्रभाव के कारण फेफड़ों में अधिक ऑक्सीजन उद्भारण तथा ऊतकों में अधिक ऑक्सीजन अभारण होता है। कार्बन डाइऑक्साइड हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन बंधुता को कम करता है चाहे pH अपरिवर्ती रखा जाये। यह प्रभाव हीमोग्लोबिन अणु के अंतस्थ ऐमीनो समूह और कार्बन डाईऑक्साइड के बंधन के कारण होता है परन्तु यह अणु का वह स्थान नहीं है जहां ऑक्सीजन परिबद्ध होता है।

लाल रक्त कोशिका में 2, 3 DPG महत्वपूर्णता रक्तबैंकों में पहचानी जाती है। पुराने भंडारित लाल रक्त कोशिकाओं में 2, 3 DPG बनाने की क्षमता नष्ट हो जाती है तब ऐसी कोशिकाओं की ऑक्सीजन आभारण क्षमता कम हो जाती है। रक्त भंडारन की आधुनिक तकनीकों में रक्त में श्वसन के लिये ऊर्जा प्रदान करने वाले पदार्थ और फ़ास्फ़ेट के स्रोत मिलाये जाते हैं जिससे 2, 3 DPG का निर्माण होता रहे।

लाल रुधिर कणिका में कार्बनिक फ़ॉस्फ़ेट की उपस्थिति ऑक्सीजन वियोजक वक्र की अनेक विशिष्टताओं का स्पष्टीकरण देता है। पहले यह सोचा जाता था कि लाल रुधिर कणिका हीमोग्लोबिन से भरा एक थैला है जिसकी अपनी कोई उपापचय क्रिया नहीं होती क्योंकि इसमें केन्द्रक अनुपस्थित होता है। अब यह ज्ञात है कि यह कार्बोहाइड्रेट उपापचय में सक्रिय है और लाल रुधिर कणिका में ATP और 2, 3 डाइफास्फ़ोग्लिसरेट (DPG) की उच्च मात्रा है, 2,3 − DPG ग्लाइकोलिसिस का उत्पाद है और यह ग्लोबिन की β शृंखला से आबंधित होता है। इसके कारण से ऑक्सीजन बंधता कम होती है। शुद्ध हीमोग्लोबिन की पूर्ण रक्त की अपेक्षा ऑक्सीजन बंधुता अधिक होती है (पूर्ण रक्त का वियोजक वक्र बायीं ओर अधिक विस्थापित होता है)। अगर डाइफ़ास्फ़ोग्लिसरेट का हीमोग्लोबिन घोल से योग कराया जाए तो घोल की ऑक्सीजन बंधुता कम हो जाती है और अखंड कोशिका के समान हो जाती है।

2, 3 DPG का प्रभाव माता के रुधिर से भ्रूण अर्थात् गर्भ रुधिर में ऑक्सीजन स्थानांतरण में महत्वपूर्ण है। गर्भ रुधिर की हीमोग्लोबिन और वयस्क हीमोग्लोबिन की संरचना में अंतर है। गर्भ हीमोग्लोबिन में 2 β (बीटा) शृंखला की अपेक्षा 2δ (डेल्टा) शृंखला होती है। इसलिए गर्भ हीमोग्लोबिन 2, 3 DPG से संयोजन नहीं कर सकता है और उसकी ऑक्सीजन के प्रति बंधुता किसी भी Po_2 पर अधिक होती है। गर्भ रक्त की अधिक ऑक्सीजन बंधुता के कारण ही माता से गर्भ में ऑक्सीजन स्थानांतरित होती है।

बोध प्रश्न 6

निम्नलिखित से सही कथन चुनिये

i) वयस्क हीमोग्लोबिन में चार एक से उपएकक और एक हीम समूह होता है। ☐

ii) जब हीम और ग्लोबिन प्रभाजनों को अलग किया जाता है तो हीम ऑक्सीजन के साथ उत्क्रमणीय संयोजन करता है। ☐

iii) रक्त में कार्बन डाईऑक्साइड की सांद्रता अधिक होने पर बोहर प्रभाव के कारण ऑक्सीजन का ऊतकों में स्थानांतरण होता है। ☐

iv) 2, 3 DPG के कारण माता से गर्भ में ऑक्सीजन स्थानांतरण में अवरोधन होता है। ☐

v) हीमोग्लोबिन के एक उपएकक का ऑक्सीजन से संयोजन होने पर दूसरे उपएककों का ऑक्सीजन से संयोजन सुगमीकृत हो जाता है। ☐

2.7.3 रक्त में कार्बन डाईऑक्साइड परिवहन

वही परिवहन तंत्र जो ऑक्सीजन को ऊतकों तक लाता है कार्बन डाईऑक्साइड को श्वसन सतह के पार वायुमंडल में ले जाता है। यद्यपि ऑक्सीजन केवल हीमोग्लोबिन के द्वारा परिवाहित होता है, कार्बन डाइऑक्साइड का तीन प्रकार से परिवहन होता है।

1) प्लाज्मा तथा लाल कोशिका में विलीन (लगभग 8%) कार्बन डाईऑक्साइड के रूप में।

2) कार्बेमीनोहीमोग्लोबिन (carbaminohaemoglobin) के रूप में रक्त के संपूर्ण कार्बन डाईऑक्साइड का लगभग 25 प्रतिशत हीमोग्लोबिन में ऐमीनो ग्रुप से संवद्ध होकर संवाहित होता है।

$$\text{हीमोग्लोबिन} - N\begin{matrix} H \\ H \end{matrix} + CO_2 \longrightarrow H^+ + \text{हीमोग्लोबिन} - NHCOO^-$$

इसके उपरांत यह फेफ़ड़े में ले जाया जाता है जहां हीमोग्लोबिन इसे ऑक्सीजन के विनिमय में निर्मुक्त करता है।

3) अधिकांश कार्बन डाइऑक्साइड कार्बोनिक अम्ल और कार्बोनेट के रूप में रक्त द्वारा संवाहित होती है।

कार्बन डाईऑक्साइड पानी से संयोग कर कार्बोनिक अम्ल बनाता है।

$$CO_2 + H_2O \rightleftharpoons H_2CO_3$$

यह क्रिया स्वतः प्लाज़्मा में बहुत धीमी गति से होती है किन्तु रक्त में एन्ज़ाइम कार्बोनिक एनहाइड्रेज़ (carbonic anhydrase) की उत्प्रेरक क्रिया के द्वारा अधिक तेजी से होती है। यह एन्ज़ाइम केवल लाल रक्त कोशिकाओं में पाई जाती है। ऊतकों की केशिकाओं में Pco_2 की अधिकता कार्बोनिक अम्ल के निर्माण में सहायक होती है। लाल रक्त कोशिका में कार्बोनिक अम्ल तेजी से हाइड्रोजन आयन (H^+) और कार्बोनेट (HCO_3^-) में विभाजित हो जाता है।

$$H_2CO_3 \longrightarrow H^+ + HCO_3^-$$

विमोचित H^+ हीमोग्लोबिन के संयोग से उभय प्रतिरोधित हो जाते हैं और HCO_3^- कोशिका से बाहर निकल जाते हैं। इस प्रकार कोशिका के अंदर धनात्मक आवेश का लाभ होता है। यह क्लोराइड आयन (Cl^-) को आकर्षित करता है जो लाल रुधिर कोशिका के अंदर प्रवेश करता है। जब रक्त ऊतक केशिका में प्रवाह करता है तो ऋणायन के विनिमय को **क्लोराइड शिफ्ट** (chloride shift) कहते हैं (चित्र 2.17 (a))। लाल रक्त कोशिकाए Cl^- तथा HCO_3^- के लिए परागम्य हैं क्योंकि इन कोशिकाओं की झिल्ली में विशेष संवाहक प्रोटीन बैंड III प्रोटीन Cl^- तथा HCO_3^- से बंध बनाकर उनका झिल्ली के पार विपरीत दिशाओं में स्थानांतरण करते हैं।

कार्बोनिक अम्ल का निर्माण ऑक्सीजन के अभारण को बढ़ाता है (बोहर प्रभाव) और ऑक्सीजन अभारिता रक्त की कार्बोनिक अम्ल बनाने की योग्यता और फलस्वरूप कार्बन डाईऑक्साइड परिवहन को बढ़ाती है। जब रक्त फुप्फुसी केशिका में पहुंचता है तो डीऑक्सीहीमोग्लोबिन, ऑक्सीहीमोग्लोबिन में परिवर्तित हो जाता है जो H^+ के लिए कम बंधुता रखता है। H^+ आयन लाल रुधिर कोशिका में निर्मुक्त होता है। यह प्लाज्मा से HCO_3^- को आकर्षित करता है जो H^+ से संयोग कर H_2CO_3 का निर्माण करता है।

$$H^+ + HCO_3^- \longrightarrow H_2CO_3$$

फुप्फुसी वाहिकाओं के निम्न Pco_2 के वातावरण में कार्बोनिक एनहाइड्रेस, कार्बोनिक अम्ल को उत्प्रेरित करके CO_2 और पानी बनाता है।

$$H_2CO_3 \xrightarrow[\text{निम्न } Pco_2]{\text{कार्बोनिक एनहाइड्रेस}} H_2O + CO_2$$

इस प्रकार फेफड़ों की कोशिकाओं में विपरीत क्लोराइड शिफ्ट (reverse chloride shift) होता है जिससे कार्बोनिक अम्ल तथा बाईकार्बोनेट CO_2 में परिवर्तित होकर बाहर निष्कासित होता है (चित्र 2.17 b)।

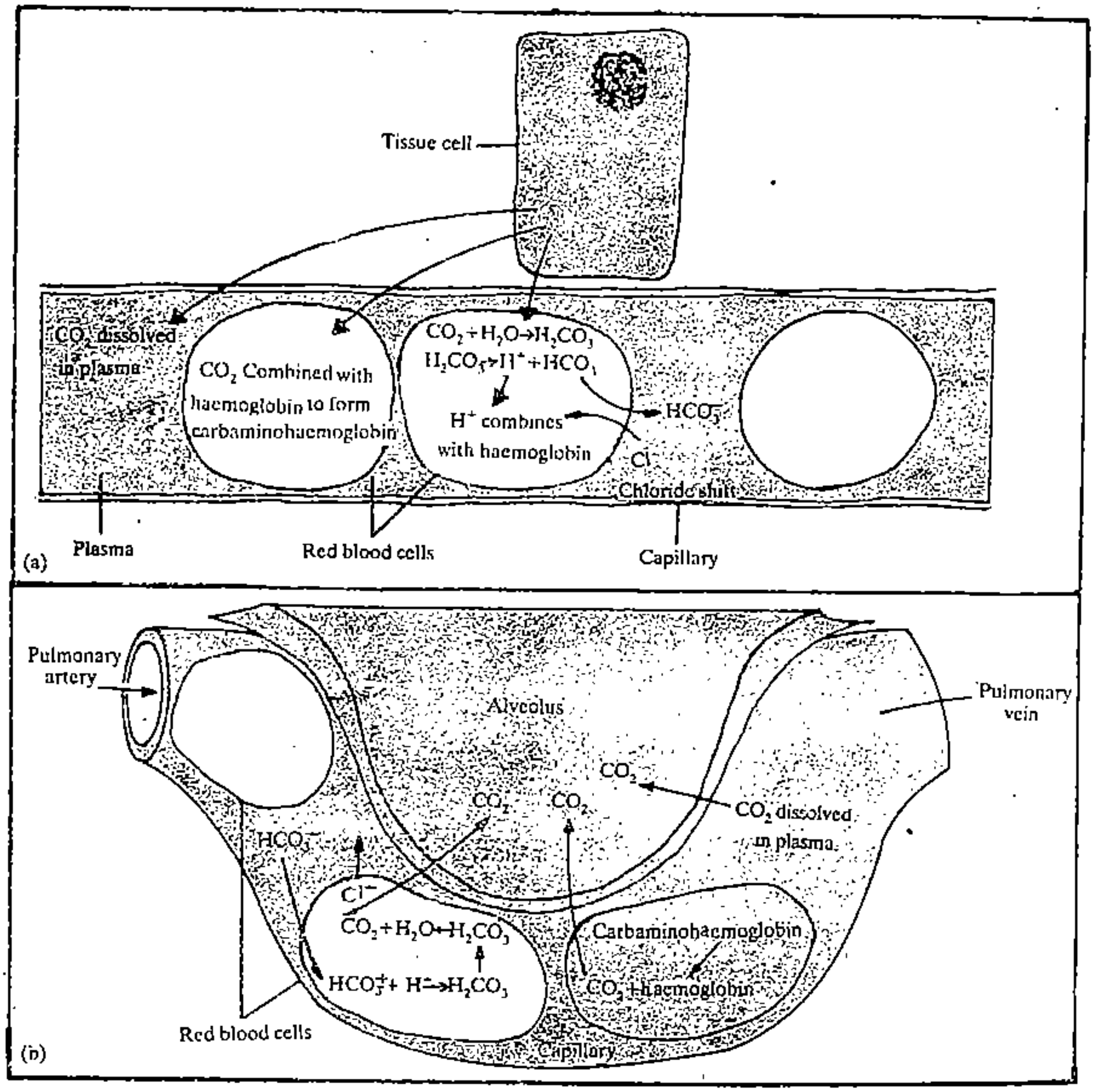

चित्र 2.17 : रक्त में कार्बन डाईऑक्साइड परिवहन (a) क्लोराइड शिफ्ट क्रिया में कार्बन डाईऑक्साइड का परिवहन तीन प्रकार से होता है : विलीन CO_2 गैस के रूप में, कार्बमीनोहीमोग्लोबिन के रूप में और कार्बोनिक अम्ल तथा बाइकार्बोनेट के रूप में। (b) फुप्फुसी केशिकाओं में रक्त से कार्बन डाइऑक्साइड का विमोचन होता है। विपरीत क्लोराइड शिफ्ट द्वारा कार्बोनिक अम्ल का कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी में रूपांतरण होता है।

2.8 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

जन्तुओं में गैस विनिमय का कार्यकीय आधार कुछ सामान्य भौतिक सिद्धांतों पर निर्भर है। जैसे कि गैसों की विलेयता, उनके विसरण दर जो पुनः गैसों की प्रकृति पर निर्भर है, उनके आंशिक दाब, उनके तापमान और अन्य विलेयों की उपस्थिति।

जन्तुओं में गैस विनिमय विधि के चार आधारभूत प्रकार होते हैं जैसे शारीरिक सतह, गिल, फेफड़े और वातक द्वारा विसरण। श्वसन सतह की बनावट तथा श्वसन विधि का संबंध उस माध्यम की प्रकृति से होता है जिसमें जन्तु निवास करते हैं।

अधिसंख्य जलीय जन्तुओं में गैस विनिमय गिल के द्वारा होता है जो श्वसन सतह का बाह्यवलन होता है। मत्स्य गिल, गिल आर्चों का बना होता है, जिन पर गिल तंतुओं की पंक्तियां होतीं हैं। इनके प्लेट की भाँति पटलिकाओं में विस्तृत केशिका जाल होते हैं। पटलिका के चारों ओर पानी बहता है जो रक्त के बहाव के विपरीत होता है और प्रभावी प्रतिधारा बनाता है। पानी में ऑक्सीजन का विसरण

धीमी गति से होता है इसलिए जलीय जंतु को श्वसन सतह के ऊपर पानी की भारी मात्रा के प्रवाह के लिए काफी ऊर्जा का प्रयोग करना पड़ता है।

कशेरुकी फेफड़े श्वसन सतह का आंतरिक वलन है तथा अत्यधिक शाखित होते हैं जिनमें असंख्य वायु कोश या कूपिकाएं होती हैं जो केशिकाओं से घनिष्ठता से संबद्ध होती हैं और वायु के ज्वारीय बहाव के द्वारा संवातित होती हैं।

फेफड़े में गैस विनिमय कूपिका में होता है जहां ऑक्सीजन का आंशिक दाब रक्त की अपेक्षा अधिक होता है अतः कूपिका से ऑक्सीजन रक्त में विसरित होती है। शरीर ऊतकों में ऑक्सीजन का आंशिक दाब कम होता है अतः ऑक्सीजन रक्त से ऊतकों में विसरित होती है। श्वसन, Pco_2 के स्तर तथा मस्तिष्क में श्वसन केन्द्र जो रक्त में Pco_2 के प्रति संवेदी होता है द्वारा नियंत्रित होता है।

कीटों में गैस विनिमय एक अलग तंत्र द्वारा होता है। यह वातक तंत्र परिवहन तंत्र के अतिरिक्त होता है।

श्वसन गैस मुख्यतः रक्त में श्वसन वर्णकों के द्वारा परिवाहित होती है। इसमें सबसे ज्यादा जाना माना हीमोग्लोबिन है जो ऑक्सीजन से संपर्क करके ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाता है। ऑक्सीजन वियोजन वक्र Po_2 के विभिन्न स्तर पर ऑक्सीहीमोग्लोबिन संतृप्ति प्रतिशत दर्शाता है। रक्त में CO_2 मात्रा, pH, अन्य कार्बनिक यौगिक और तापमान इस वक्र को प्रभावित करते हैं। pH में गिरावट हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन बंधुता को कम करती है तथा pH में उत्थान हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन बंधुता को बढ़ाता है। इसे बोहर प्रभाव कहते हैं। घटती बंधुता ऊतकों में ऑक्सीजन अभारित करती है। 2, 3 DPG की उपस्थिति में भी ऑक्सीजन बंधुता कम हो जाती है।

लाल रक्त कोशिका में कार्बोनिक अम्ल निर्माण द्वारा कार्बन डाईऑक्साइड का फेफड़ों में परिवहन होता है। ऊतकों में अधिक Pco_2 इस क्रिया को इष्ट करती है। कार्बनिक अम्ल H^+ और HCO_3^- में आयनित हो जाता है। H^+ हीमोग्लोबिन के द्वारा उभय प्रतिरोधित होता है परन्तु ऋणायन संतुलन क्लोराइड शिफ्ट द्वारा नियंत्रित रहता है। फुफ्फुसी केशिका में विपरीत क्लोराइड शिफ्ट होता है और कार्बोनिक अम्ल के विघटन से कार्बन डाइऑक्साइड और पानी प्राप्त होता है तथा कार्बन डाइऑक्साइड साँस द्वारा शरीर से बाहर निकल जाती है।

2.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) मत्स्य गिल में पानी और रक्त का प्रवाह प्रतिरोधी होता है। इससे आप क्या समझ सकते हैं और यह गैस विनिमय की सक्षमता को कैसे प्रभावित करता है? इस क्रिया की मनुष्य के फेफड़ों में ऑक्सीजन निष्कर्षण से तुलना कीजिए।

....

....

....

....

2) ऑक्सीजन और हीमोग्लोबिन की अभिक्रिया का समीकरण लिखें। इस अभिक्रिया की दर व दिशा पर किन कारकों का प्रभाव पड़ता है?

....

....

....

....

3) रक्त में श्वसन गैसों के परिवहन की समस्या का समाधान कीट में किस प्रकार होता है? क्या उनमें विकसित श्वसन तंत्र स्तनधारियों में विकसित श्वसन तंत्र से बेहतर है?

....

....

....

....

4) स्तनधारियों के रक्त में कार्बन डाईऑक्साइड की क्या क्रियाएं होती हैं? इसमें कार्बोनिक एनहाइड्रेस की क्या भूमिका है?

....

....

....

....

2.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) i) और iii) सही हैं।

   ख) यह जानते हुए कि हवा में ऑक्सीजन 21 प्रतिशत है।

$$P_{O_2} = \frac{21 \times 735.18 - 18}{100} = 150 \text{ mm Hg.}$$

2) दोनों का सतह आयतन अनुपात अधिक है जैली फिश में सतह के नीचे ही सारी कोशिकाएं होती हैं इसलिए गैस विनिमय विसरण द्वारा पर्याप्त होता है।

3) जल से निकल कर मछली के गिल पिचक कर आपस में चिपक जाते हैं इस तरह उनकी श्वसन सतह का विस्तार भी कम हो जाता है। हर श्वसन सतह को गीला रखना पड़ता है और गिल हवा में बिल्कुल सूख जाते हैं।

4) i) असत्य ii) सत्य iii) सत्य iv) सत्य v) असत्य

5) क) श्वासरंध्र मुख पूरी तरह से खुल जायेंगे।

   ख) पानी की सतह पर मिट्टी के तेल की एक परत बन जायेगी और मच्छर के लार्वा सतह पर आकर श्वसन नहीं कर पायेंगे।

6) iii) और v)

अंत में कुछ प्रश्न

1) भाग 2.4 और 2.5.1 देखिये

2) उपभाग 2.7.2 देखिये

3) वातक तंत्र के विकास द्वारा। इस प्रकार आक्सीजन सीधे कोशिकाओं तक पहुंच जाती है और परिसंचरण तंत्र की जरूरत इस काम के लिये नहीं होती। कोई भी तंत्र एक दूसरे से बेहतर नहीं है। दोनों तंत्र अपने वातावरण के अनुकूल है।

4) उपभाग 2.7.3 देखिये

इकाई 3 परिसंचरण

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
3.2 देह तरल
संयोजन
रक्त प्लाज़्मा
3.3 परिसंचरण की सामान्य रूपरेखा
3.4 स्तनधारियों का हृदय
हृदय का उत्तेजन
हृदयी निर्गम
3.5 रक्त वाहिकाएं
रक्त प्रवाह
धमनियाँ
शिराएं
केशिकाएं
व्यायाम के समय रक्त प्रवाह
लसीका तंत्र
3.6 हीमोस्टेटिक क्रियाविधियां
3.7 सारांश
3.8 अंत में कुछ प्रश्न
3.9 उत्तर

3.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 2 में पढ़ा कि कोशिका श्वसन के लिए ऑक्सीजन की लगातार आवश्यकता होती हैं और कार्बन डाइऑक्साइड जैसे अपशिष्ट उत्पाद का निष्कासन भी आवश्यक है। उपापचयन क्रिया में पदार्थों का इस्तेमाल होता है और उत्पादित पदार्थों को सारे शरीर में पहुंचाया जाता है। छोटे जीवों में यह विसरण क्रिया द्वारा हो जाता है और इनमें परिसंचरण तंत्र नहीं होता परन्तु प्रत्येक जन्तु में जो अधिक विकसित हैं और जिसमें उपापचयन दर उच्च है, परिसंचरण तंत्र की आवश्यकता होती है।

इस इकाई में हम कशेरुकी के देह तरल के संयोजन और उनके कार्यों के बारे में पढ़ेंगे। स्तनधारियों के परिसंचरण तंत्र पर अधिक जोर दिया गया है क्योंकि इसकी जानकारी सबसे अधिक है। परिसंचरण तंत्र की सामान्य रूपरेखा और रक्त परिसंचरण से संबंधित मुख्य सिद्धांतों की विवेचना की गयी है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- देह तरल के संयोजन और उनके कार्यों का वर्णन कर सकेंगे।
- मुक्त और बंद परिसंचरण तंत्र में भेद कर सकेंगे।
- परिसंचरण तंत्र के सिद्धांतों की विवेचना कर सकेंगे।
- स्तनधारी जन्तुओं के हृदय, हृदयी निर्गम, हृदय गति नियंत्रण और रक्त परिसंचरण के प्रसंग में रक्त के गुणों का वर्णन कर सकेंगे।
- धमनियों और शिराओं में रक्त प्रवाह और रक्त दाब की विवेचना कर सकेंगे।
- केशिका जाल में तरल विनिमयन और सूक्ष्म परिसंचरण की क्रियाविधि को समझा सकेंगे।
- हीमोस्टेटिक क्रियाविधि की विवेचना कर सकेंगे।

3.2 देह तरल

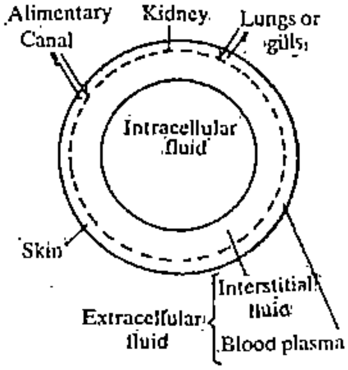

चित्र 3.1 : देह के तरल कक्ष। वातावरण से सम्पूर्ण विनिमय प्लाज़्मा के माध्यम से होता है।

प्रमाणों के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि जीवन का उद्भव आदि सागर में हुआ। इसलिए यह आश्चर्यजनक नहीं है कि प्रारंभिक जंतुओं के जीव द्रव में और सागर के जल के गुणों में समानता थी, तथा सागर के जल के स्थायी पर्यावरण पर जीवन क्रिया घनिष्ठता से निर्भर हुई।

बहुकोशिकीय जीव जंतुओं के विकास के लिए देह तरल जैसे कि ऊतक द्रव, रक्त व लसीका का विकास भी आवश्यक था जिससे देह कोशिकाओं को स्थायी, अपेक्षाकृत स्थिर वातावरण मिले तथा सभी कोशिकाओं और कोशिका परतों के बीच अवकाश भर सके। देह तरल की दो मुख्य प्रवस्थाएं होती हैं—**अंत:कोशिकीय** (intracellular) और **बाह्यकोशिकीय** (extracellular)। बाह्यकोशिकीय तरल को **रक्त प्लाज़्मा** और **अंतराकाशी द्रव** (interstitial fluid) में विभाजित किया जा सकता है (चित्र 3.1)।

रक्त प्लाज़्मा रक्त वाहिकाओं में और अंतराकाशी द्रव कोशिकाओं के चारों ओर के अवकाशों में होता है। रक्त वाहिकाओं और कोशिकाओं में पोषक और गैस विनिमय इसी द्रव्य के माध्यम से होता है। अंतराकाशी द्रव कोशिका भित्ती द्वारा रक्त प्लाज़्मा के निरंतर छनन से बनता है।

3.2.1 संयोजन

सारे देह तरल, जैसे कि प्लाज़्मा, अंतराकाशी द्रव और अंत:कोशिकीय द्रव, अधिकांश मात्रा में जल ही होते हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि हमारा ठोस रूप अधिकांश जल होता है यानिकी, 70 प्रतिशत शरीर भार जल ही है। इसमें 50 प्रतिशत अंत:कोशिकीय और 15 प्रतिशत अंतराकाशी द्रव है, तथा 5 प्रतिशत रक्त प्लाज़्मा होता है। जल को छोड़कर देह तरल अन्य कार्बनिक तथा अकार्बनिक तत्वों का बना होता है। इसमें अधिकांश विद्युत् अपघट्य अर्थात् इलेक्ट्रोलाइट और प्रोटीन होते हैं। चित्र 3.2 में अंत:कोशिकीय और बाह्यकोशिकीय द्रव में भिन्नता प्रदर्शित की गई है। ये भिन्नता हमेशा बनी रहती है, हालांकि कोशिका से तत्वों का लगातार ही आदान प्रदान होता है।

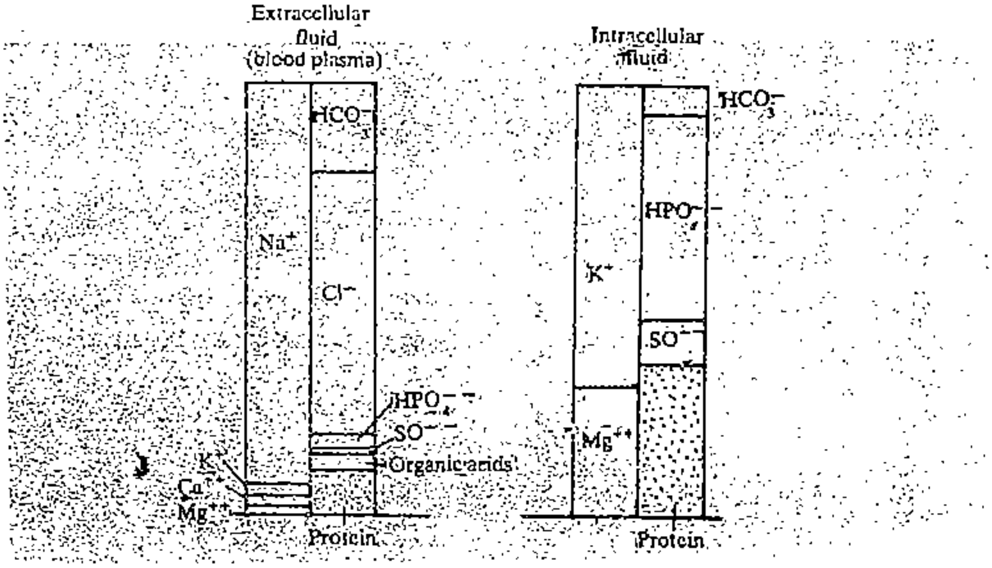

चित्र 3.2 : देह तरल का इलेक्ट्रोलाइट संयोजन। हर इलेक्ट्रोलाइट का सांद्रण दिखाया गया है। प्रत्येक द्रव में ऋणायन और धनायन की समान मात्रा पाई जाती है। अंत:कोशिकीय द्रव में प्रोटीन अधिक है और Na^+ तथा Cl^- बहुत ही कम होते हैं।

नाइडेरियन (cnidarian) तथा चपटे कृमि (flat worm) जैसे निम्न अकशेरुकी जीव जिनमें परिसंचरण तंत्र नहीं होता है, उनमें रक्त भी नहीं होता है, केवल साफ पानी जैसा तरल पदार्थ होता है जिसमें कुछ भक्षकाणु (phagocytes), प्रोटीन और लवण का मिश्रण होता है जैसा कि समुद्री पानी में पाया जाता है। अधिक विकसित अकशेरुकी जंतुओं में हीमोलिम्फ (haemolymph) होता है जिसकी संरचना निम्न अकशेरुकी जंतुओं के मुकाबले जटिल होती है। कशेरुकी जंतुओं का रक्त एक

जटिल द्रव है जिसमें प्लाज़्मा तथा रक्त कोशिकाएं या कणिकाएं (रक्ताणु, श्वताणु तथा पट्टिकाएं) होती हैं।

आपने LSE-01 इकाई 19 में रक्त की विभिन्न कोशिकाओं के बारे में पढ़ा होगा। तालिका 3.1 में मनुष्य के रक्त प्लाज़्मा के संघटकों की सूची दी गई है। अपनी संरचना के कारण रक्त ऐसा परिवहन तंत्र है जो शरीर के अंगों में जहां विसरण अपर्याप्त है, मेटाबोलाइट, पोषक इत्यादि का परिवहन तेज गति से करता है।

तालिका 3.1 : रक्त प्लाज्मा के मुख्य घटक और उनके कार्य

घटक	प्रतिशत	कार्य
1) जल	90.9	रक्त आयतन और दाव बनाये रखना, लसीका का संयोजन, कोशिकाओं में जल आपूर्ति तथा अन्य पदार्थों का वाहक
2) खनिज आयन	1.0 से कम	परासरणीय संतुलन कायम रखना तथा बफर क्षमता को संतुलित रखना, ऊतक कोशिकाओं पर विभिन्न प्रभाव
3) प्लाज्मा प्रोटीन	7.0	परासरणीय संतुलन कायम रखना, रक्त का थक्का बनाने में आवश्यक
फाइब्रिनाजन प्रोथ्राम्बिन	(0.3)	
ऐल्यूमिन	(4.0)	परासरणीय दाव को कायम रखना, रक्त आयतन का नियमन तथा रक्त में संवाहक प्रोटीन
ग्लोबुलिन	(2.7)	प्रतिरक्षात्मक अभिक्रिया से संबंधित तथा कुछ निश्चित अणुओं का संवहन
4) ग्लूकोस, अन्य कार्बनिक मेटाबोलाइट	2.0	कोशिकाओं से पारगमन के दौरान रक्त में वहन
5) यूरिया, विभिन्न खाद्य, हॉर्मोन इत्यादि	—	कोशिकाओं से पारगमन के दौरान रक्त में वहन

श्रेणी 1-4 के घटकों की रक्त में सांद्रता एक समान रहती है परन्तु श्रेणी 5 के पदार्थों की सांद्रता बदलती रहती है।

घटक	कार्य
1) लाल रक्त कोशिका (एरिथ्रोसाइट)	इनमें हीमोग्लोबिन होता है जो ऑक्सीजन और कार्बन डाईऑक्साइड का परिवहन करता है।
2) सफेद रक्त कोशिका (ल्यूकोसाइट)	ये रक्षक तथा अपमार्जक होती हैं।
3) प्लेटलेट (थ्रॉम्बोसाइट)	रक्त स्कंदन में महत्वपूर्ण योगदान होता है।

आइए अब प्लाज्मा के कार्यों के बारे में विस्तार से पढ़ें।

3.2.2 रक्त प्लाज़्मा

आकेन्द्रीकरण से रक्त दो भागों में विभाजित हो जाता है। कोशिकाओं से बना 45 प्रतिशत ठोस अंश और 55 प्रतिशत साफ पीले से रंग का तरल जिसको प्लाज़्मा कहते हैं। प्रोटीन के अलावा प्लाज़्मा में अन्य कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थ होते हैं, जैसा कि आपने तालिका 3.1 में देखा।

प्लाज़्मा प्रोटीन

प्लाज़्मा में प्रोटीन की मात्रा केवल 7 प्रतिशत ही है। ये प्लाज़्मा प्रोटीन तीन तरह के होते हैं। सीरम ऐल्बूमिन (4%), **सीरम ग्लोबुलिन** (2.7%) और **फाइब्रिनोजेन** (0.3%) सीरम ऐल्बूजन और फाईब्रोनोजन यकृत् में बनते हैं। सीरम ग्लोबुलिन शरीर के सूक्ष्मभक्षक तंत्र (microphage system) से बनते हैं और इनको वैद्युत कण संचलन द्वारा तीन भागों में अलग किया जा सकता

लिए कीटों, अधिकतर क्रस्टेशियन व मोलस्क में। जबकि ऐनेलिड, सिफेलोपोड, एकाइनोडर्म और कशेरुकी जंतुओं में बंद परिसंचरण होता है (चित्र 3.5)।

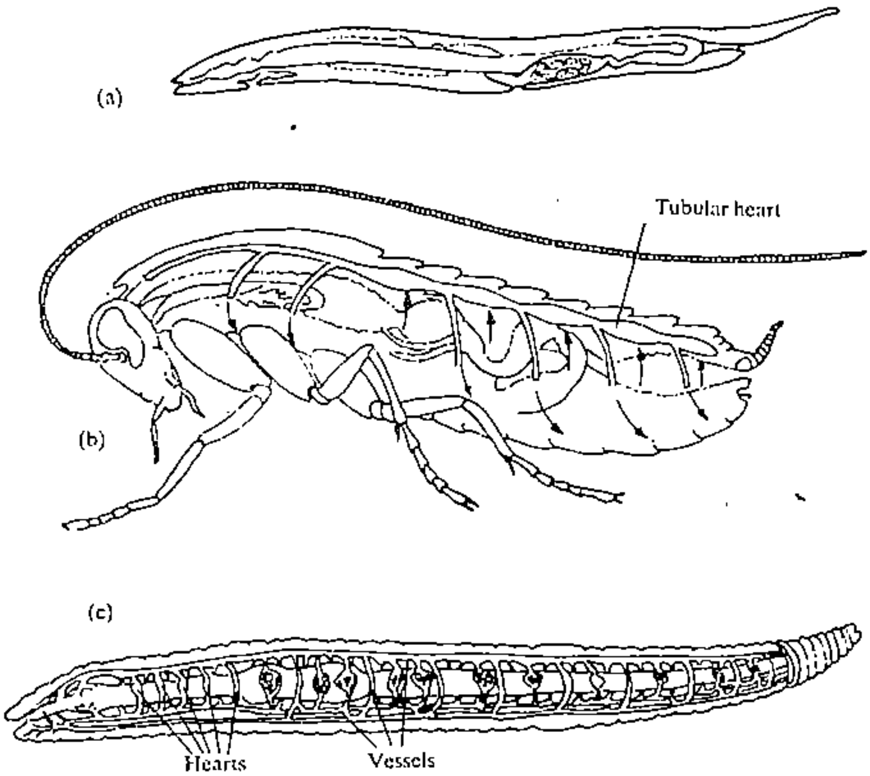

चित्र 3.5 : मुक्त परिसंचरण तंत्र में ऊतक और अंग रक्त से घिरे रहते हैं (a) सूत्रकृमि में चलने की क्रिया द्वारा शरीर की पेशियां संकुचित होती हैं जिससे रक्त परिसंचरण होता है। (b) कीट में नलिकाकार हृदय होते हैं जो लयबद्ध भरते व खाली होते हैं और जिसके ऊतकों के ऊपर रक्त बहता है। (c) ऐनेलिड में बंद परिसंचरण तंत्र। रक्त हृदय के समूह से पम्प होकर परिसंचरण वाहिका में से होता हुआ ऊतकों में प्रवाहित होता है। दूसरी वाहिकाएं रक्त को हृदय में वापस लाती हैं।

मुक्त परिसंचरण तंत्र में धमनियों और शिराओं को जोड़ने के लिए कोई छोटी वाहिका या केशिका नहीं होती है। रक्त कोटर अर्थात् साइनस (sinus) के कुछ स्थानों में सूक्ष्म साइनस जाल या केशिकाएं पायी जाती हैं। यह धमनिओं और शिराओं के बीच बंद जाल नहीं बनाती है और धमनी रुधिर साइनस से होकर शरीर के मुख्य अंगों तथा ऊतकों में प्रवाहित होता है। इन ऊतक अवकाशों से रक्त शिरा के खुले मुख द्वारा या फिर छिद्रों (ostia) से हृदय में पुनः पहुँच जाता है। मुक्त परिसंचरण तंत्र में शरीर के अंग इन रक्त से भरे अवकाशों या **हीमोसील** (haemocoel) में होते हैं।

सामान्य रूप से यह देखा गया है कि बंद परिसंचरण तंत्र में अंगों के कार्य मुक्त परिसंचरण तंत्र के मुकाबले एकदम अलग-अलग है। हृदय मुख्य पम्प होता है जो रक्त को धमनी तंत्र में पम्प करता है और धमनियों में रक्त दाव को कायम रखता है। धमनी तंत्र एक दाव आशय (pressure reservoir) की तरह होता है जो रक्त को केशिकाओं में डालता है। केशिका की झिल्ली पतली होती है और इससे रक्त और ऊतक के बीच पदार्थों का विनिमय आसानी से होता है। हर ऊतक में कई केशिकाएं होती हैं जिससे कोई भी केशिका, कोशिका से दूर नहीं होती है।

केशिकाओं से रक्त लघुशिराओं और शिराओं में प्रवाहित होकर हृदय में लौट जाता है। शिरा तंत्र में रक्त दाब कम होता है। शिराओं में शरीर का अधिकांश रक्त होता है। इसी लिये यह वृहत् आयत आशय (large volume reservoir) होता है। रक्त दान के समय रक्त इसी आशय से लिया जाता है क्योंकि रक्त की मात्रा कम होने पर भी रक्त दाव पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है।

उच्च दाबीय बंद परिसंचरण तंत्र के साथ लसीका तंत्र का विकास हुआ। इस तंत्र के द्वारा रक्त से तरल क्षति की पूर्ति होती है। लसीका तंत्र के बारे में आप भाग 3.5 में पढ़ेंगे।

परिसंचरण पटन

सभी कशेरुकियों के परिसंचरण तंत्रों में कुछ समानताएं होती हैं परन्तु जैसे-जैसे कशेरुकी जीव जल से निकल कर थल की तरफ बढ़ने लगे, परिसंचरण अधिक जटिल हो गया। चित्र 3.6 में आप मत्स्य और स्तनधारियों के परिसंचरण तंत्र की तुलना कर सकते हैं। यह कशेरुकी परिसंचरण प्रणाली के दो भिन्न रूप हैं। मुख्य अंतर हृदय की बनावट में है। मत्स्य में द्विकक्षीय हृदय और स्तनधारियों में चार कक्षीय हृदय पाया जाता है।

मछली के हृदय के दो कक्ष हैं, **अलिन्द** (atrium or auricle) और **निलय** (ventricle)। दो अन्य छोटे कक्ष भी होते हैं (चित्र में दिखाये नहीं गये हैं)। **शिरा कोटर** (sinus venosus) जो अलिन्द से पहले होता है तथा **धमनी शंकु** (conus arteriosis) जो हृदय के बाद होता है। इनमें वाल्व होते हैं जो रक्त का पीछे की तरफ का बहाव रोकते हैं। रक्त हृदय से गिल में ऑक्सीजनीकरण के लिये भेजा जाता है और पृष्ठ महाधमनी (dorsal aorta) द्वारा सारे शरीर में वितरित होता है। इस प्रकार के परिसंचरण में एक फायदा यह है कि शरीर में रक्त वितरण से पहले गिल में ऑक्सीकृत हो जाता है। परन्तु इसमें एक नुकसान यह है कि गिल की संकरी केशिकाओं में से प्रवाहित होने के बाद रक्त प्रवाह की गति कम हो जाती है और रक्त दाब भी कम ही रहता है। इस कारण कोशिकाओं में ऑक्सीजन आपूर्ति दर कम होती है और मछली की उपापचयन दर भी सीमित रहती है अर्थात् उच्च नहीं हो सकती।

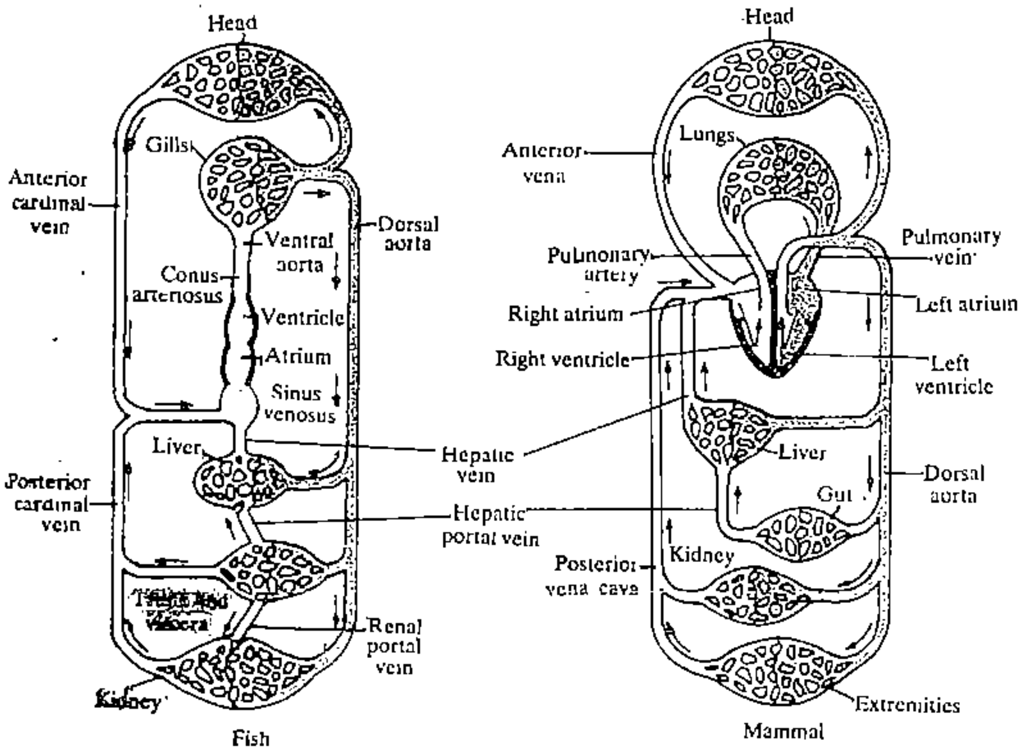

चित्र 3.6 : परिसंचरण तंत्र के प्रतिरूप। (a) मछली में, (b) स्तनधारियों में। गेहुआ रंग ऑक्सीकृत रक्त को दर्शाता है।

फेफड़ों के विकास तथा कुशल रक्त वितरण तंत्र की आवश्यकता ने पक्षियों तथा स्तनधारियों में दोहरे परिसंचरण तंत्र को जन्म दिया। इनमें एक दैहिक परिपथ (systemic circuit) है जो ऑक्सीकृत रक्त को शरीर अंगों की केशिकाओं में पम्प करता है और एक **फुप्फुसी परिपथ** (pulmonary circuit) जिसके द्वारा अनाक्सीकृत रक्त फेफड़ों में पम्प होता है। हृदय द्वारा ऑक्सीकृत और अनाक्सीकृत रक्त को अलग रखने के कारण शरीर के अंगों में पहुंचने वाले रक्त में अधिक से अधिक ऑक्सीजन होती है। यहां तक कि संपूर्ण ऑक्सीकृत रक्त सबसे पहले मस्तिष्क में भेजा जाता है क्योंकि मस्तिष्क में कार्बोहाइड्रेट या वसा जैसे ऊर्जा के स्रोतों का संचयन नहीं होता है इसलिए वहां निरंतर रक्त प्रवाह की आवश्यकता होती है। यदि ऑक्सीजन की सप्लाई कम हो तो मस्तिष्क अन्य ऊतकों की भांति अनॉक्सी उपापचय (anaerobic metabolism) पर निर्भर नहीं रह सकता है। एक तरह से पक्षियों और स्तनधारियों में दो पृथक हृदय विकसित करने के बदले दो कक्ष वाला हृदय बीच में विभाजित होकर चार कक्ष वाले हृदय में परिवर्तित हो गया।

बोध प्रश्न 2

क) सही उत्तर चुनिये। ऐसा परिसंचरण तंत्र जिसमें कम से कम एक हृदय और रक्त वाहिकाएं हों उन जंतुओं में आवश्यक है जिनमें

i) कोशिकाओं में ऑक्सीश्वसन होता है

ii) अंतराकाशी द्रव होता है

iii) बाह्यकोशिकी पाचन होता है

iv) कोशिकाओं की बहुत परतें होती हैं

ख) मुक्त परिसंचरण तंत्र में रक्त निम्न से अलग नहीं है

i) अंतराकाशी द्रव्य

ii) कोशिका द्रव्य

iii) मूत्र

iv) पाचन गुहा

ग) निम्नलिखित में रिक्त स्थानों पर सही शब्द भरिये :

.... में दैहिक पम्प .... रुधिर को .... के .... में प्रवाहित करता है और .... पम्प अनॉक्सीकृत रुधिर को फेफड़ों में प्रवाहित करता है।

3.4 स्तनधारियों का हृदय

पिछले भाग में आपने पढ़ा कि पक्षियों और स्तनधारियों में हृदय का विभाजन और दैहिक तथा फुप्फुसी परिसंचरण में विभाजन पूर्ण रूप से हो गया है। अब हम संक्षेप में स्तनधारियों के हृदय की संरचना की विवेचना करेंगे और यह देखेंगे कि किस प्रकार शरीर में ऑक्सीजन की आवश्यकता अनुसार हृदय से पम्प किये गये रक्त का आयतन समायोजित किया जाता है।

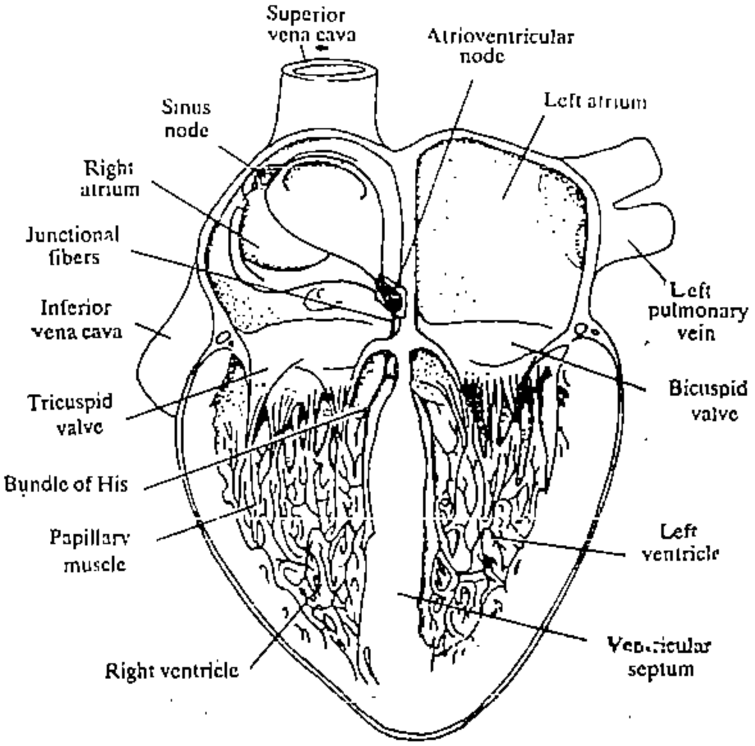

चित्र 3.7 : साइनस नोड हृदय गति चालक है। मनुष्य में विश्राम के समय यह प्रति मिनट 70 बार संकुचन को प्रेरित करता है। साइनोएट्रियल नोड से संकेत एट्रियो वेन्ट्रिकुलर नोड में पहुंचता है जो 0.1 सेकन्ड बाद इस संकेत को निलय तक पहुंचा देता है।

स्तनधारी का हृदय एक पेशीयुक्त अंग है जो एक मजबूत रेशेदार झिल्ली जिसको **पेरीकार्डियम (pericardium) कहते हैं में बंद रहता है** (चित्र 3.7)। **हृदय में चार** कक्ष होते हैं। हर आधे हिस्से में ऊपर एक पतली दीवार वाला कक्ष **अलिन्द** और नीचे मोटी दीवार वाला कक्ष **निलय** होता है। प्रत्येक अलिन्द एक **अलिन्द निलय रंध्र** अर्थात् **एट्रियोवेन्ट्रिकुलर वाल्व** द्वारा अपनी तरफ के निलय में खुलता है। यह वाल्व केवल निलय की तरफ खुलते हैं और रक्त को वापस अलिन्द में जाने से रोकते हैं। बायें निलय के उस स्थान पर जहां से महाधमनी निकलती है अर्धचंद्राकार वाल्व (semilunar valve) लगे होते हैं। इसी तरह के अर्धचंद्राकार वाल्व फुप्फुसी धमनी (pulmonary artery) में उस स्थान पर होते हैं, जहां से धमनी दाहिने निलय से निकलती है। हृदय की संकुचन सिस्टोल (systole) और शिथिलन डायस्टोल (diastole) कहलाती है (चित्र 3.8)। हृदय की एक धड़कन, संपूर्ण पेशीय अंग की लयबद्ध संकुचन तथा शिथलन से बनती है। हृदय केवल संकुचनों के बीच छोटे से अंतराल में विश्राम करता है।

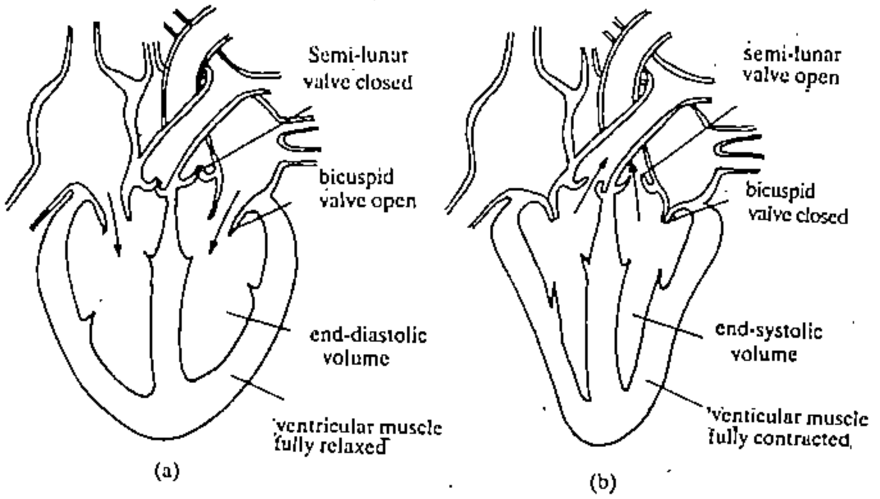

चित्र 3.8 : (a) डायस्टोल के दौरान हृदय शिथिल होता है और रक्त हृदय के अंदर खिंच कर आ जाता है। इस दौरान अर्धचन्द्राकार (semilunar) वाल्व बंद होते हैं। (b) सिस्टोल में हृदय संकुचित होता है और एट्रियोवेन्ट्रिकुलर वाल्व के कारण रक्त अलिन्द में वापस नहीं जा पाता। अर्धचन्द्राकार वाल्व खुले होने के कारण रक्त बाहर पम्प हो जाता है।

3.4.1 हृदय का उत्तेजन

हृदय में बिना किसी बाहरी उद्दीपन के स्वयं ही लयबद्ध संकुचन की क्षमता होती है। इसका प्रमाण हमें परिवर्धनशील चूज़े के भ्रूण के हृदय को देखने से मिलता है। भ्रूण में हृदय स्पंदन तंत्रिका के विकास के पहले ही शुरू हो जाता है। साथ ही देखा गया है कि संवर्धन माध्यम (culture medium) में हृदय पेशी कोशिका बिना किसी बाहरी उद्दीपन के लयबद्ध संकुचन करती है।

हृदय की वैद्युत क्रिया एक विशिष्ट क्षेत्र से शुरू होती है जिसे **गतिचाक** अथवा **पेसमेकर** (pacemaker) कहते हैं। पेसमेकर की कोशिकाएं अकशेरुकी जंतुओं में **तंत्रिकोशिका** तथा कशेरुकी और कुछ अकशेरुकी जंतुओं में **पेशीय कोशिका** होती है। यदि हृदय स्पंदन का उद्भव तंत्रिकोशिका से होता है तो पेसमेकर **तंत्रिकाजन गतिचालक** (neurogenic pacemaker) कहलाता है। यदि हृदय स्पंदन का उद्भव पेशीकोशिका में होता है तो पेसमेकर **पेशीजनक** (myogenic) कहलाता है। इसी के अनुसार हृदय भी तंत्रिकाजन या पेशीजनक कहलाते हैं।

सर्प हृदय (जो पेशोजनक है) शरीर से निकालने पर फिज़ियोलॉजिकल लवणीय जल में कम से कम 24 घंटे तक धड़कता रह सकता है।

स्तनधारियों के हृदय का संकुचन दाहिने अलिंद में महाशिरा के मुख के पास स्थित भ्रूणीय प्रकार की पेशीय कोशिकाओं में आरंभ होता है। यह **साइनोएट्रियल नोड** (sinuatrial node) अथवा **साइन अलिन्द नोड** कहलाता है (चित्र 3.7)। यहां से संकुचन दोनों अलिन्द में फैलता है और बहुत कम विलम्ब के बाद **एट्रियोवेन्ट्रिकुलर नोड** (atrioventricular node) में पहुंचता है। यहां से संकुचन के लिये उत्तेजन दोनों निलय के निचले हिस्से तक विशिष्ट पेशी तंतुओं के जाल द्वारा फैलता है और फिर निलय की दीवारों में संवहनी पेशी तंतुओं के जाल द्वारा फैल जाता है। इस तरह संकुचन निलय के निचले सिरे से शुरू होकर ऊपर की तरफ फैलता है जिससे रक्त पूरी दक्षता से निलय से पम्प हो सके और दोनों निलय एक साथ संकुचित होते हैं।

हृदयगति दो प्रकार से प्रभावित होती है। पेसमेकर क्षेत्र में तंत्रिक आवेग द्वारा और हॉर्मोनी प्रभाव द्वारा। परानुकम्पी वेगस तंत्रिका की एक शाखा एसेटिलकोलिन (acetylcholine) का मोचन करती है जिससे हृदयगति कम होती है। एक अनुकम्पी तंत्रिका से पेसमेकर पर **एपिनेफ्रिन** (epinephrine) तथा **नोरएपिनेफ्रिन** (norepinephrine) का मोचन होता है जिससे हृदयगति तेज होती है।

एपिनेफ्रिन हॉर्मोन भी है जिसका स्राव रक्त में एड्रिनल मेडुला से होता है। यह हृदयगति को तेज करती है। आप यह जानते हैं कि एपिनेफ्रिन आपत्ति अथवा आकस्मिक स्थितियों का मुकाबला करने हेतु काम आती है (fight or flight reactions)। वेगस व अनुकम्पी तंत्रिकाओं के अलावा पेसमेकर पर तापमान का भी प्रभाव पड़ता है जो ज्वर होने पर दिखाई देता है। शरीर का ताप बढ़ने पर हृदयगति तेज हो जाती है और ताप कम होने पर हृदयगति धीमी हो जाती है।

3.4.2 हृदयी निर्गम

पिछले भाग से आपको ज्ञात हुआ कि किस प्रकार हृदय रक्त को पम्प करता है। अब हम यह देखेंगे कि प्रत्येक स्पंदन के साथ कितना रक्त पम्प किया जाता है और क्या जंतुओं में ऑक्सीजन की आवश्यकता के साथ इसका कोई संबंध है।

आपने इकाई 1 में पढ़ा कि छोटे जंतुओं में ऑक्सीजन की खपत बड़े जंतुओं से ज्यादा होती है। इसलिये हृदय को ऑक्सीजन भी ज्यादा मात्रा में सप्लाई करनी पड़ती है। ये कैसे संभव होता है? क्या हृदय का आकार बड़ा होता है या हृदय से हर धड़कन के साथ ज्यादा मात्रा में रक्त पम्प किया जाता है या उसके पम्प करने की गति ज्यादा तेज होती है?

चलिये हम पहले हृदय के आकार के बारे में बात करें। यह शरीर के समानुपाती होता है और लगभग छोटे और बड़े स्तनधारी जीव में शरीर भार का 0.6 प्रतिशत होता है। हृदय के आकार से जंतु की ऑक्सीजन आवश्यकता का परावर्तन नहीं होता तथा हर धड़कन के साथ निर्गमित रक्त में विलेय ऑक्सीजन भी हृदय के आकार पर निर्भर नहीं करती। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि ऑक्सीजन की आपूर्ति पम्प करने की प्रायिकता पर निर्भर करती है। हृदय स्पंदन की प्रायिकता **स्पंद दर या पल्स रेट** (pulse rate) स्पंदन या धड़कन प्रति मिनट में अभिव्यक्त की जाती है। व्यस्क मानव की स्पंद दर 70 धड़कन प्रति मिनट होती है। व्यायाम के समय यह गति कई गुना बढ़ जाती है। इसके बारे में आप आगे इस इकाई में और पढ़ेंगे।

परन्तु हृदय स्पंदन प्रायिकता शरीर के आकार से अवश्य संबंधित है। एक सामान्य नियम है कि जितना बड़ा जन्तु होगा, उसका पल्स रेट उतना ही कम होगा। आकार के अलावा कशेरुकी जंतुओं में पल्स रेट उपापचयन की दर पर भी निर्भर करता है। उदाहरणतः कॉड मछली असमतापी है, उसका पल्स रेट केवल 30 प्रति मिनट है, जबकि समान शरीर भार के समतापी खरगोश का पल्स रेट 200 स्पंदन प्रति मिनट है।

स्तनधारियों में एक 3000 kg वजन के हाथी का पल्स रेट विश्राम करते समय 25 स्पंदन प्रति मिनट है जबकि लगभग 3 kg वजन की छोटी श्रू का पल्स रेट 600 स्पंदन प्रति मिनट से भी अधिक है।

ऊपर दी गई जानकारी से हम यह कह सकते हैं कि जिन जंतुओं की ऑक्सीजन खपत अधिक है उनको अतिरिक्त ऑक्सीजन रक्त के पंप होने की उच्च दर के कारण प्राप्त होती है। आइए अब हम प्रति हृदय स्पंदन निष्कासित रक्त आयतन की ओर ध्यान दें।

हृदय से एक समय में निष्कासित रक्त की मात्रा या आयतन को **हृदयी निर्गम** अर्थात् कार्डियक आउटपुट (cardiac output) कहते हैं। जिस हृदय में निलय पूरी तरह से विभाजित होता है वहां केवल एक तरफ के निलय से निर्गमन को हृदयी निर्गम कहते हैं। हृदयी निर्गम कई विधियों द्वारा पता लगाया जाता है। उनमें से सामान्यतः **फिक के सिद्धांत** पर आधारित विधि इस्तेमाल की जाती है। फिक (Fick) एक जर्मन शरीरक्रिया वैज्ञानिक था। उसने 1870 में ऑक्सीजन की खपत (या कार्बन डाईऑक्साइड के उत्पादन) और हृदय में प्रवेश करने वाले तथा निष्कासित रक्त के ऑक्सीजन (या कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा) को माप कर हृदयी निर्गम के परिकलन की एक सरल विधि निकाली जो निम्नलिखित है:

$$\text{हृदयी निर्गम} = \frac{\text{फेफड़ों द्वारा अवशोषित ऑक्सीजन}}{\text{धमनी-शिरा की ऑक्सीजन मात्रा में अंतर}}$$

प्रत्येक हृदय संदन से निष्कासित रक्त आयतन को **स्ट्रोक आयतन** (stroke volume) कहते हैं। हृदयी निर्गम को हृदय संदन दर से भाग देने से औसत स्ट्रोक आयतन परिकलित होता है। यदि हृदयसंदन दर और स्ट्रोक आयतन के मान ज्ञात हों तो हृदय निर्गम का परिकलन हो सकता है इसलिए हृदय गति तेज करने से, या स्ट्रोक आयतन बढ़ाने से या फिर दोनों को बढ़ाने से हृदय निर्गम अधिक हो जाता है। परन्तु स्तनधारियों में स्ट्रोक आयतन में कम ही परिवर्तन होता है इसलिए हृदयी निर्गम बढ़ाने के लिए हृदयगति को समंजित करना पड़ता है अर्थात् बढ़ाना पड़ता है। मनुष्य के विभिन्न अंगों में रक्त वितरण तालिका 3.2 में दिया गया है। आप तालिका में देख सकते हैं कि गुर्दे, यकृत्, हृदय और मस्तिष्क शरीर भार का केवल 5% होते हैं परन्तु कुल हृदयी निर्गम का आधे से भी अधिक अंश इन अंगों में प्रवाहित होता है।

हृदय संकुचन से पहले और बाद के रक्त आयतन के अंतर को भी स्ट्रोक आयतन कहते हैं। स्ट्रोक आयतन दो प्रकार से प्रभावित होता है। एक, एपिनेफ्रिन हॉर्मोन द्वारा, जिसके प्रभाव से संकुचन अधिक बल से होता है और निलयों से बलपूर्वक प्रति स्ट्रोक अधिक रक्त निकलता है। दूसरा प्रभाव संकुचन से पूर्व निलय में रक्त की मात्रा से पड़ता है।

तालिका 3.2 : 70 कि.ग्रा. पुरुष के मुख्य शरीर अंगों में रक्त प्रवाह

अंग	अंग भार (kg)	रक्त प्रवाह (litre/min.)	रक्त प्रवाह (litre/kg/min.)
गुर्दा	0.3	1.2	4.0
यकृत्	1.5	1.4	0.9
हृदय	0.3	0.25	0.8
मस्तिष्क	1.4	0.75	0.5
त्वचा	2.5	0.2	0.08
पेशी	29.0	0.9	0.03
शेष	35.0	0.9	0.03
कुल	70.0	5.6	—

यदि हृदय में वापस आने वाले शिरा रक्त की मात्रा बढ़ा दी जाए तो निलय ज्यादा रक्त से भर जाएंगे और संकुचन के पश्चात् अधिक रक्त का निर्गमन होगा। बढ़े हुए शिरा रक्त आयतन और हृदयी निर्गम के संबंध का ज्ञान सबसे पहले एक अंग्रेज शरीरक्रिया वैज्ञानिक **अरनिस्ट एम स्टारलिंग** को हुआ। इस संबंध की विवेचना हम आगे व्यायाम और रक्त प्रवाह के साथ करेंगे।

बोध प्रश्न 3

सही उत्तर पर निशान (√) लगाइये।

क) स्ट्रोक आयतन है :
   i) हृदय द्वारा पम्प किया गया रक्त आयतन
   ii) हृदय में पम्प किया गया रक्त आयतन
   iii) एक निलय से पम्प किया गया प्रति हृदय संदन रक्त आयतन
   iv) प्रति मिनट हृदय संदन का नंबर

ख) हृदयी निर्गम किस के बराबर है :
   i) स्ट्रोक आयतन का हृदय गति से गुणा
   ii) स्ट्रोक आयतन में हृदय गति से भाग
   iii) स्ट्रोक आयतन और हृदय गति का जोड़

ग) साइनोएट्रियल नोड हृदय का ……………… ……………… है। ……………… ……………… इसी पेशी के छोटे से क्षेत्र से शुरू होकर ……………………… में फैलती है जहां से यह ……………………… और ……………………… के बीच की भित्ती पर स्थित ……………… ……………… ……………… पर पहुंचती है। इस उद्दीपन का संचालन निलय के निचले ……………………… तक होता है, जहाँ से यह ……………………… की तरफ फैल

कर निलय की .... में समा जाता है। .... के सिरे से स्रावित .... हृदय गति को कम करती है जबकि एड्रीनलिन हृदय गति को बढ़ा देती है।

3.5 रक्त वाहिकाएं

रक्त वाहिकाओं की भित्ती लचीली और चिकनी पेशी युक्त होती है जिससे उनका व्यास आसानी से बदल सकता है। मुख्यतः तीन प्रकार की वाहिकाएं होती हैं — धमनियां, केशिकाएं तथा शिरायें। इनमें कुछ विशिष्ट अंतर होते हैं। शिरा के मुकाबले धमनी भित्ती मोटी होती है जिसमें मजबूत और लचीले तंतु तथा माँसपेशियों की परत होती है। जैसे-जैसे धमनियां विशाखित होती हैं वैसे ही संकरी होती जाती हैं। और उनमें अपेक्षाकृत पेशीय ऊतक लचीले ऊतक से ज्यादा होते जाते हैं। केशिका सबसे छोटे एकक हैं और उनकी भित्ती केवल एक कोशिकीय परत से बनी होती है। रक्त और ऊतक के बीच विनिमय केशिका दीवार से होती है। शिराओं में भी चिकनी पेशियां और लचीले तंतु होते हैं।

3.5.1 रक्त प्रवाह

वाहिकाओं में रक्त प्रवाह को समझने के लिये हमें पहले नलिका में तरल प्रवाह की भौतिकी तथा रक्त की कुछ विशेषताओं का बोध होना चाहिए।

एक सीधी नलिका में तरल प्रवाह निर्बाधक होता है जिससे हर कण एक सीधी पंक्ति में बहता है। इसे **स्तरीय प्रवाह** (laminar flow) कहते हैं। रक्त वाहिका में रक्त का प्रभाव भी ऐसा ही होता है।

सबसे पहले हम वाहिकाओं में रक्त प्रवाह के वेग पर विचार करेंगे। वाहिका में किसी स्थान पर वेग का संबंध हृदय से दूर या पास होने से नहीं है परन्तु उस स्थान के कुल अनुप्रस्थ परिच्छेद क्षेत्र (cross sectional area) से है। यह अनुप्रस्थ परिच्छेद क्षेत्र किसी एक शिरा या धमनी या केशिका का नहीं होता है परन्तु उस क्षेत्र की सभी धमनियों या केशिकाओं का कुल मान होता है। आपने यह ध्यान दिया होगा कि जैसे-जैसे नदी संकरी होती जाती है उसमें जल प्रवाह अधिक वेग से होता है। इसी तरह परिसंचरण में भी सबसे अधिक वेग से रक्त उसी स्थान में प्रवाहित होता है जहां पर कुल अनुप्रस्थ परिच्छेद सबसे कम हो। धमनियों का अनुप्रस्थ परिच्छेद सबसे कम है और केशिकाओं का सबसे अधिक। चित्र 3.9 इस संबंध को दर्शाता है।

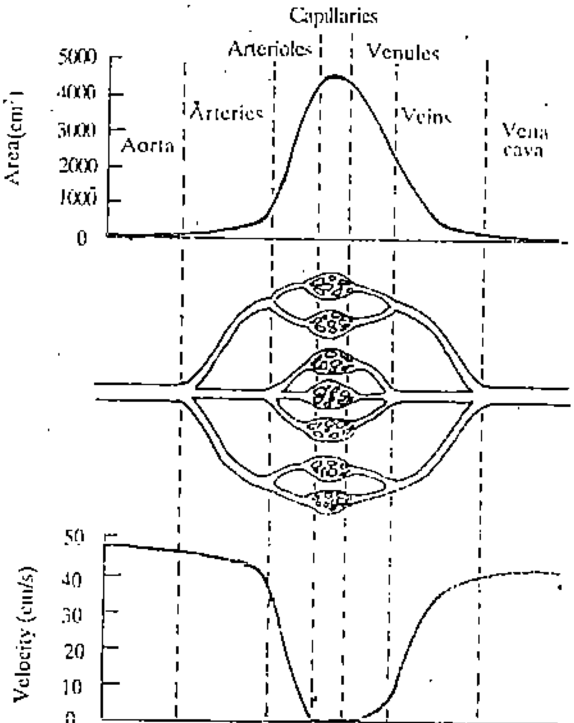

चित्र 3.9 : रक्त वेग किसी दिये गये क्षेत्र के अनुप्रस्थ परिच्छेद के व्युत्क्रमानुपाती (inversely proportional) होता है। वेग महाधमनी में सबसे अधिक और केशिकाओं में सबसे कम हो जाता है। महाशिरा में वेग पुनः तेज हो जाता है।

किसी नली के भीतर तरल प्रवाह का प्रतिरोध उसके आंतरिक घर्षण द्वारा होता है यह आंतरिक घर्षण ही उस तरल की **विस्कासिता** अर्थात् **श्यानता** है। हमें यह ज्ञात है कि पानी और चाशनी समान दर से प्रवाहित नहीं होते हैं क्योंकि पानी की विस्कासिता (viscosity) कम और चाशनी की अधिक होती है। किसी भी द्रव की विस्कासिता पानी के सापेक्ष अभिव्यक्त की जाती है। रक्त प्लाज़्मा में 7 प्रतिशत प्रोटीन होने के कारण उसकी आपेक्षिक विस्कासिता 1.8 होती है। सम्पूर्ण रक्त की विस्कासिता रक्त कोशिकाओं के कारण अधिक होती है। स्तनधारियों में 37°C पर संपूर्ण रक्त की आपेक्षिक विस्कासिता 3 और 4 के बीच होती है। लाल रक्त कोशिकाओं के कारण रक्त पानी से तीन से चार गुणा अधिक विस्कासी प्रतीत होता है।

परन्तु रक्त सदा विस्कासी तरल के समान प्रवाहित नहीं होता। उसकी आपेक्षिक विस्कासिता रक्त वाहिका के घटते त्रिज्या के अनुसार बदलती रहती है। 0.3 mm से कम व्यास की वाहिका में रक्त की आपेक्षिक विस्कासिता प्लाज़्मा के समान हो जाती है और उसका प्रवाह सुगम हो जाता है। केशिका में प्रवाह करते रक्त में रक्ताणु (लाल रक्त कोशिकाएं) बीच में एकत्रित हो जाते हैं जिसके कारण केशिका की भित्ती के करीब अपेक्षाकृत कम कोशिकाएं रहती हैं। इसलिए बीच में विस्कासिता भी अधिक हो जाती है। क्योंकि प्रवाह विस्कासिता के व्युत्क्रमानुपाती है, केशिका के बीच में प्रवाह थोड़ा धीमा और किनारों पर थोड़ा तेज हो जायेगा।

केशिकाओं के रक्त प्रवाह में एक विशेषता है, केशिका का व्यास रक्ताणु के व्यास से कम होता है और रक्ताणु अपना आकार बदल कर केशिका में प्रवाहित होते हैं। इस कारण एक भिन्न प्रकार का प्रवाह उत्पन्न हो जाता है जिसे **बोलस प्रवाह** (bolus flow) कहते हैं जिसमें केशिका के मध्य में रक्ताणुओं का प्लग (plug) सा बन जाता है और भित्ति के समीप रक्त प्रवाह तेज गति से होने लगता है और पदार्थों का विसरण आसानी से हो जाता है।

रक्त दाब

हम सब उच्च रक्त दाब से परिचित हैं। रक्त दाब का क्या तात्पर्य है? धमनियों में दाब को रक्त दाब कहते हैं। हृदय गति के चक्र में उच्चतम दाब **सिस्टोलिक दाब** कहलाता है और न्यूनतम दाब **डाइस्टोलिक दाब** कहलाता है। इन दोनों का अंतर **पल्स दाब** (pulse pressure) कहलाता है। रक्त दाब सिस्टोलिक/डाइस्टोलिक mm Hg में नापा जाता है। यह सामान्यतः 120/80 mm Hg होता है। क्योंकि रक्त का घनत्व पारे से 12.9 गुना कम है इसलिए 120 mm Hg दाब $120 \times 12.9 = 1550$ mm Hg अर्थात् 155 cm रक्त के बराबर होगा। इसका अर्थ है कि यदि रक्त वाहिका आकस्मिक फट जाये तो 155 cm ऊँचाई तक रक्त की धारा उछल जायेगी।

किलो पास्कल में परिवर्तन करने के लिए mm Hg में नापे गये रक्त दाब को .1333 kPa से गुणा कर देते हैं।

हृदय में उत्पन्न दाब रक्त प्रवाह के कारण कम हो जाता है। चित्र 3.10 मनुष्य के परिसंचरण तंत्र में रक्त दाब को दर्शाता है। जैसे-जैसे रक्त महाधमनी से वह कर महाशिरा तक पहुंचता है, रक्त दाब और

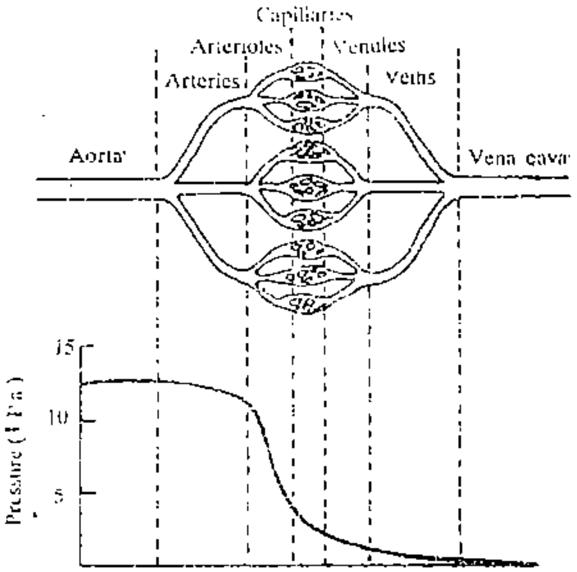

चित्र 3.10: परिसंचरण के विभिन्न क्षेत्रों में रक्त दाब परिवर्तन। लघुधमनियों में रक्त दाब सबसे अधिक गिरता है।

कम होता जाता है। लघुधमनियों में रक्त दाब सबसे कम हो जाता है। यह अपने व्यास में परिवर्तन करके शरीर के विभिन्न अंगों में रक्त प्रवाह पर नियन्त्रण रखती है।

(कृप्या पृष्ठ 119 पर दिये बॉक्स को देखिये)

3.5.2 धमनियां

धमनियां हृदय से रक्त को सारे शरीर में पहुंचाती हैं। चित्र 3.11 धमनी की संरचना को दर्शाता है। सबसे पतली धमनियों को छोड़ कर, बाकि सब धमनियों की दीवार मोटी होती है और उनमें रक्त सप्लाई करने के लिये केशिका जाल होता है जिसे **वासा वासोरम** (vasa vasoram) कहते हैं। धमनियों के चार मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं:

1) यह हृदय और केशिकाओं के बीच वाहिका है।
2) यह शरीर का दाब आशय होती है जिससे कम व्यास की धमनिकाओं में बल पूर्वक रक्त प्रवाह होता है।
3) केशिकाओं में समान रक्त प्रवाह उत्पन्न करती है।
4) अपनी अन्य शाखाओं के वरणात्मक संकुचन द्वारा विभिन्न केशिका जालों में रक्त वितरण का नियमन करती है।

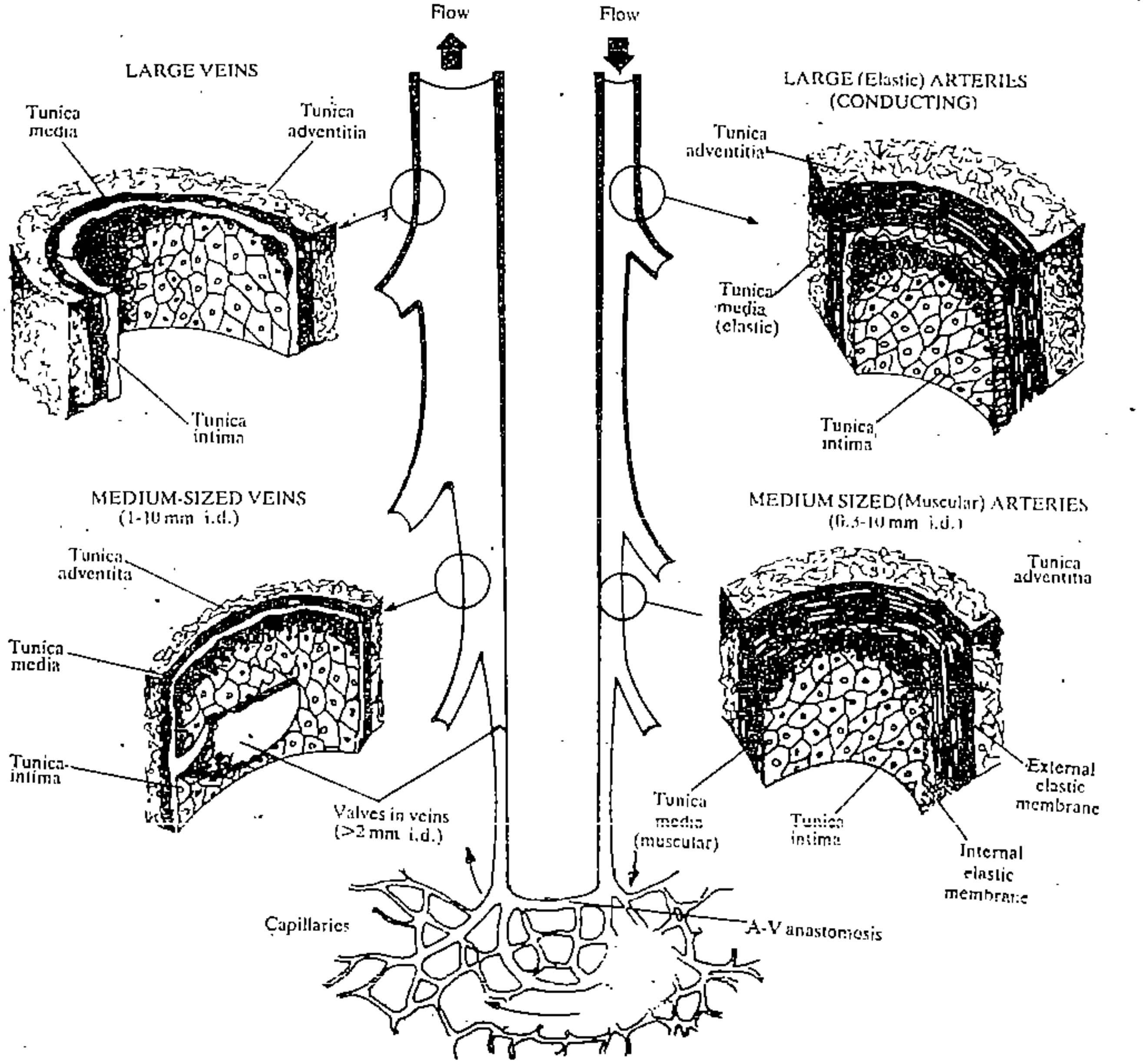

चित्र 3.11 : स्तनधारियों में परिधीय रक्त परिसंचरण की मुख्य संरचना। रक्त धमनियों से केशिकाओं में प्रवाहित होता हुआ शिराओं में जाता है (i.d. है आंतरिक व्यास)।

धमनियों के रक्त दाव पर सूक्ष्म नियंत्रण रहता है। धमनी की दीवार का स्वरूप और उसमें पंप होने वाले रक्त के आयतन पर दाब निर्भर करता है। यदि इन दोनों में कुछ भी परिवर्तन हो तो दाव भी परिवर्तित हो जाता है। सामान्यतः धमनी रक्त दाब में परिवर्तन कम ही होता है क्योंकि हृदयी निर्गम और केशिका में प्रवाह एक दूसरे के अनुरूप होता है।

धमनी दीवार का लचीलापन बदलता रहता है। हृदय के निकट धमनियां अधिक लचीली होती हैं और हृदय के संकुचन और शिथलन द्वारा रक्त दाब और प्रवाह में जो दोलन होते हैं उसका अवमंदन कर देती हैं। हृदय के शिथलन के दौरान धमनियों में रक्त दाव बनायें रखने के लिये उनका आयतन कम हो जाता है। यदि धमनियों में लचीलापन न होता तो परिधीय वाहिकाओं में भी वही दाब अस्थिरता पायी जाती जो हृदय से निर्गमित रक्त में पायी जाती है।

3.5.3 शिराएं

शिराएं केशिकाओं से रक्त हृदय तक वापस लाती हैं। यह काफी विशाल आयतन वाला निम्न दाबी तंत्र है। शिराओं का आंतरिक व्यास बड़ा होता है। स्तनधारियों में कुल रक्त आयतन का 50 प्रतिशत शिराओं में होता है परन्तु शिराओं में दाब केवल 10-5 mm Hg होता है। यदि शरीर में कोई रक्त क्षति होती है तो वह शिरा आयतन से होती है न कि धमनी रुधिर आयतन में। इस तरह से धमनी में रक्त दाव व केशिकाओं में रक्त प्रवाह बना रहता है।

यदि कोई व्यक्ति बहुत समय तक बिना हिले खड़ा रहे तो हृदय में शिरा रक्त की अपर्याप्त पुनः सप्लाई के कारण, हृदयी निर्गम धमनी रक्त दाब और मस्तिष्क में रक्त प्रवाह कम हो जाते है और वह व्यक्ति मूर्छित हो सकता है। ऐसी ही स्थिति उन रोगियो की भी होती है जो बहुत समय बाद बिस्तर से उठ कर चलने की चेष्टा करते है।

शिराओं में रक्त प्रवाह कई कारकों से प्रभावित होता है। आहार नाल पर डायाफ्राम (diaphragm) द्वारा दवाव पड़ने से तथा हाथ पैर के चलने की क्रिया से इनमें स्थित शिराओं पर दबाव पड़ता है। शिराओं में स्थित पॉकेट वाल्व (pocket valves) होते हैं जो रक्त को पीछे की तरफ बहने से रोकते हैं। इन वाल्व और शिराओ के दबने के कारणे रक्त का प्रवाह हृदय की तरफ होता है। सिर और उदर से रक्त खींचने में श्वसन क्रिया से सहायता मिलती है। शिराओं में चिकनी पेशियों द्वारा भी रक्त सप्लाई का नियमन होता है। जब कोई व्यक्ति बैठे से उठ खड़ा होता है तो उसके हृदय और मस्तिष्क की गुरुत्व के प्रति आपेक्षिक स्थिति (relative position) बदल जाती है। इससे पेट की शिराओं में उपस्थित तंत्रिकाएं उद्दीपित होती हैं और चिकनी पेशी का संकुचन होता है। और इस प्रकार अंगों में एकत्रित रक्त का पुनः वितरण होता है।

3.5.4 केशिकाएं

हमने इस इकाई में आपको बताया था कि अधिकतर शरीर ऊतकों में केशिका जाल इस प्रकार फैला रहता है कि कोई भी केशिका कोशिकाओं से अधिक से अधिक 1-2 कोशिका की दूरी पर रहती है। धमनियों की शाखाओं के अंतिम सिरे पर धमनिकाएं होती हैं जो और विशाखित होकर मेटाआर्टियोल (metarteriole) तथा केशिकाएं बनती हैं। यह केशिकाएं आपस में जुड़ कर लघुशिराएं तथा शिराएं बनाती हैं।

धमनिकाओं की चिकनी पेशियां मेटाआर्टियोल में असंतत हो जाती हैं और अंत में एक पेशीय गोलाकार पूर्वकोशिकीय अवरोधिनी (precapillary sphincter) बन जाती है जो केशिका जाल में रक्त सप्लाई को नियंत्रित करती है। इस पूर्व कोशिका अवरोधनी के कारण एक केशिका जाल में रक्त प्रवाह रोका जा सकता है जिससे वही रक्त सप्लाई दूसरे केशिका जाल में करी जा सके जहां उसकी आवश्यकता अधिक हो। जंतुओं में समस्त केशिकाओं में कुल रक्त आयतन का 14 प्रतिशत रखने की क्षमता होती है। परन्तु एक समय में केवल 30-50 प्रतिशत केशिकाएं ही खुली रहती हैं इसलिए केशिकाओं में कुल रक्त आयतन का केवल 30 से 50 प्रतिशत तक रक्त रहता है।

एक मॉसपेशी के अनुप्रस्थ परिच्छेद (cross section) में कोशिका का नम्बर गिनना आसान है क्योंकि कोशिकाएं पेशी तंतुओं के समांतर होती हैं। विश्राम के समय गिनी पिग की पेशी के 1 mm^2 अनुप्रस्थ परिच्छेद में 100 खुली हुई कोशिकाएं जिनमें रक्त प्रवाह होता है, दिखाई देती हैं। उच्चतम व्यायाम के समय अनुप्रस्थ परिच्छेद में 3000 से भी अधिक खुली हुई कोशिकाएं हो सकती है। हम पेशी और एक सामान्य पेन्सिल के व्यास की तुलना कर सकते हैं, जिसका अनुप्रस्थ परिच्छेद 3 mm^2 होता है।

केशिकाएं, अंतःस्तरीय कोशिकाओं की एक परत से बनी होती है जिस पर आधारीय झिल्ली का आवरण होता है। केशिका झिल्ली पतली और दुर्वल होती है परन्तु, आयतन कम होने के कारण रक्त दाब की प्रतिक्रिया में खिंचती नहीं है। कम अणुभार के घुलनशील पदार्थ (गैस, लवण, शर्करा, ऐमीनों अम्ल इत्यादि) और पानी का विसरण केशिका से सहज होता है। इसके अतिरिक्त केशिका भित्ती से तरल का बलपूर्वक निष्कासन होता है। 70,000 से अधिक अणुभार वाले पदार्थ (अधिकतर प्रोटीन) केशिका भित्ती को पार नहीं कर सकते। इस प्रोटीन का परासरणीय प्रभाव होता है जिसे कोलॉइडल परासरणीय दाब (colloidal osmotic pressure) कहते हैं। इस दाव के फलस्वरूप पानी

आसपास के ऊतकों से खिंच कर केशिका में पुनः आ जाता है। केशिका में एक अन्य बल के प्रभाव से द्रवस्थैतिक दाब (hydrostatic pressure) के कारण पानी अंतस्तरीय कोशिका पार करके केशिका से बाहर चला जाता है। जब केशिका में द्रवस्थैतिक दाब कोलाइडल दाब से अधिक होता है तो द्रव केशिका भित्ति से बाहर चला जाता है और जब द्रवस्थैतिक दाब कोलाइडल दाब से कम हो जाता है तब द्रव केशिका के भीतर खिंच आता है। केशिका के धमनीय सिरे में द्रवस्थैतिक दाब कोलाइडिल परासरणीय दाब से अधिक होता है इसलिए द्रव इस सिरे से फिल्टर हो जाता है और केशिका के शिरा सिरे में कोलाइडल दाब अधिक होता है इसलिए द्रव इस सिरे से केशिका में पुनः प्रवेश कर जाता है (देखिये चित्र 3.12)।

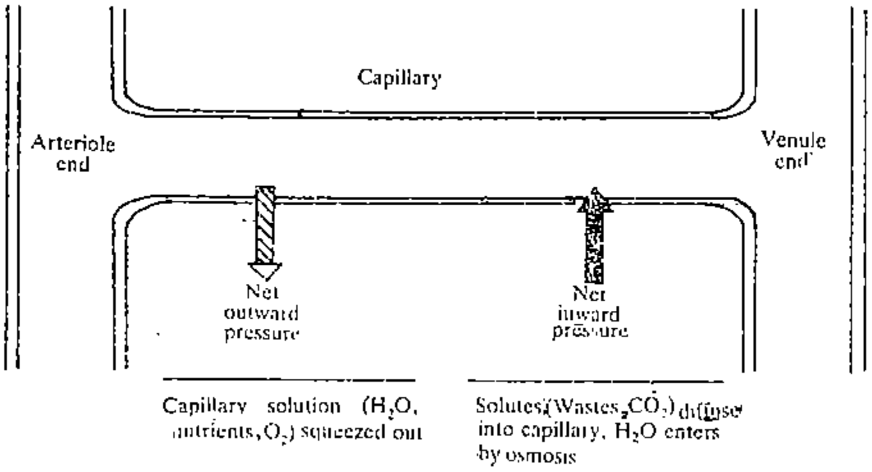

चित्र 3.12 : केशिका भित्ती से द्रव विनिमय रक्त दाब तथा परासरणीय विभव के अंतर के कारण होता है। बांयी ओर धमनिका से आपेक्षित उच्च दाब पर रक्त केशिका में प्रवेश करता है। यह दाब स्थानीय परासरणीय विभव से अधिक होता है और केशिका से द्रव्य निष्कासन होता है (धारीदार ऐरो) दाहिनी ओर केशिका से लघुशिरा में प्रवाहित रक्त का दाब अपेक्षाकृत कम होता है और यह स्थानीय परासरणीय विभव से भी कम होता है। फलस्वरूप पानी परासरण द्वारा केशिका में प्रवेश करता है (काली ऐरो)। द्रव्य विनिमय के विपरीत गैस, पोषक और अपशिष्ट विनिमय सामान्य विसरण द्वारा होता है।

निष्कासित द्रव और पुनः प्रवेश करने वाले द्रव की मात्रा में अंतर होता है। सामान्यतः निष्कासन प्रवेश से अधिक होता है और अतिरिक्त द्रव्य अंतराकाशी अवकाशों में रह जाता है। जैसा कि आपको ज्ञात है, लसीका का संयोजन इसी अंतराकाशी द्रव से होता है।

3.5.5 व्यायाम के समय रक्त प्रवाह

जब कभी हम व्यायाम करते हैं या दौड़ते हैं तो हम यह महसूस करते हैं कि हृदय गति औसतन 70 स्पंदन प्रति मिनट से बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में शरीर को ऑक्सीजन की अधिक आवश्यकता होती है और हृदय को माँसपेशियों में अतिरिक्त ऑक्सीजन पहुंचानी पड़ती है। यह अतिरिक्त ऑक्सीजन आपूर्ति दो प्रकार से हो सकती है। हृदयी निर्गम बढ़ाकर या फिर निगर्मित रक्त आयतन द्वारा अधिक ऑक्सीजन प्रदान की जाये।

हृदय से पंप करा धमनी रुधिर पूर्णतः ऑक्सीकृत होता है परन्तु शिरा रुधिर में धमनी रुधिर की ऑक्सीजन मात्रा की आधे से अधिक मात्रा फिर भी विलीन होती है। इसलिए शिरा रुधिर से यदि ऑक्सीजन अधिक मात्रा में प्राप्त की जाये तो पेशियों में सप्लाई की जा सकती है। एक दुबले पतले व्यक्ति की कुल मांसपेशियां लगभग 50 ml ऑक्सीजन प्रति मिनट इस्तेमाल करती है, जो कि करीब एक लीटर रक्त द्वारा सप्लाई होती है। धमनी रुधिर में 200 ml प्रति लीटर ऑक्सीजन और शिरा रुधिर में 150 ml प्रति लीटर ऑक्सीजन जाती है। इस तरह रक्त से केवल 25 प्रतिशत ऑक्सीजन प्राप्त होती है। कठोर व्यायाम के समय पेशियों में रक्त प्रवाह 20 लीटर प्रति मिनट हो सकता है और खिलाड़ियों में इससे भी अधिक होता है तथा रक्त से ऑक्सीजन प्राप्ति बढ़ कर 80 से 90 प्रतिशत हो जाती है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि कठोर व्यायाम के दौरान शिरा रक्त से प्रायः पूर्ण ऑक्सीजन प्राप्त हो जाती है।

हृदय निर्गम के बढ़ने से भी अतिरिक्त ऑक्सीजन प्राप्त हो सकती है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि हृदय गति या स्ट्रोक आयतन या फिर दोनों के ही बढ़ने से हृदय निर्गम ज्यादा हो जाता है। विश्राम के समय मनुष्य की हृदय गति 70 प्रति मिनट और स्ट्रोक आयतन (एक तरफ से) 70 ml होती है जिससे कुल हृदयी निर्गम 5 लीटर प्रति मिनट होता है। व्यायाम के समय यही हृदयी निर्गम पांच गुना से भी अधिक हो जाता है। यह वृद्धि हृदय गति बढ़ने से होती है जो 200 संकुचन प्रति मिनट तक हो सकती है। स्ट्रोक आयतन भी 100 ml से भी अधिक हो सकता है। एक सुप्रशिक्षित खिलाड़ी या व्यायाम करने वाले व्यक्ति की ऑक्सीजन खपत में 100 गुना तक वृद्धि हो सकती है। परन्तु यह वृद्धि रक्त से ऑक्सीजन प्राप्ति में तीन गुना अधिक वृद्धि के कारण ही संभव होती है।

बोध प्रश्न 4

क) निम्नलिखित कथनों में से चार सत्य कथन चुनिये।

i) धमनियों का व्यास शिरा व्यास से बड़ा होता है।

ii) स्तनधारियों में केशिका व्यास सामान्यतः 10 mm है।

iii) हृदय की निकटतम धमनियां अधिक लचीली होती हैं और रक्त प्रवाह में दोलन का अवमंदन करती हैं।

iv) रक्त कोशिकाओं के कारण संपूर्ण रक्त प्लाज़्मा से अधिक विस्कासी है।

v) रक्त प्रवाह का वेग, वाहिकों के कुल अनुप्रस्थ परिच्छेद क्षेत्र से संबंधित है।

vi) रक्त विस्कासिता रक्त वाहिकाओं की घटती त्रिज्या के अनुसार बदलती रहती है।

vii) एक हृदय स्पंदन के दौरान अधिकतम दाब को डाइस्टोलिक दाब कहते हैं।

ख) यदि केशिकाओं में परासरणीय दाब रक्त दाब से अधिक हो तो नेट फिल्टरन होगा या फिर नेट अवशोषण।

....

....

....

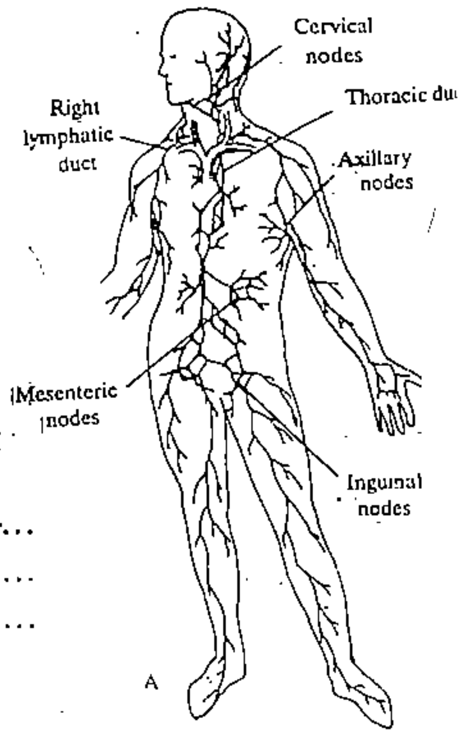

3.5.6 लसीका तंत्र

कोशिका के धमनीय सिरे से निष्कासित 99% तरल (पानी) का प्रायः लघुशिरा सिरे से पुनर्वशोषण हो जाता है। परन्तु अंतराकाशी अवकाशों में शेष 1 प्रतिशत तरल का क्या होता है? कशेरुकी जन्तुओं में एक विशिष्ट तंत्र होता है जिसे लसीका तंत्र कहते हैं (चित्र 3.13)। इन वाहिकाओं के तंत्र द्वारा ऊतकों के अंतराकाशी स्थानों से तरल निष्कासित होकर पुनः रक्त में मिल जाता है। इस प्रकार रक्त आयतन और अंतराकाशी तरल आयतन में संतुलन बना रहता है। शरीर के हर भाग में लसीका केशिकाएं होती हैं जिनका एक सिरा बंद होता है। यद्यपि लसीका केशिका भित्ती की संरचना रक्त केशिका के समान है उसकी पारगम्यता लक्षण भिन्न है। लसीका केशिका भित्ती पानी और प्रोटीन के अणु के लिये पारगम्य है। यह महत्वपूर्ण क्रियाविधि है क्योंकि कुछ प्रोटीन अणु केशिका भित्ती से निकल आते हैं और यदि रक्त और अंतराकाशी तरल में आवश्यक परासरणीय अवकल बनाये रखना है तो प्रोटीन का रक्त में पुनर्वेशन अति आवश्यक है। बड़े अणु विशेषकर आहार नाल से अवशोषित, वसा अणु और उच्च अणुभार के हॉर्मोन लसीका तंत्र द्वारा ही रक्त मे प्रवेश करते हैं (इकाई 1 में वसा अवशोषण याद कीजिये)।

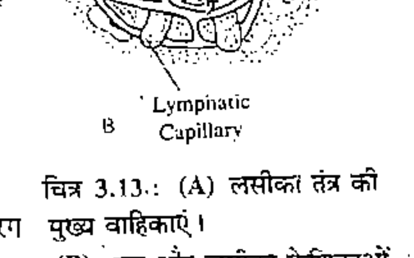

चित्र 3.13 : (A) लसीका तंत्र की मुख्य वाहिकाएं।
(B) रक्त और लसीका केशिकाओं में सम्बन्ध।

एक बार लसीका तंत्र में प्रवेश के बाद अंतराकाशी द्रव्य **लसीका** कहलाता है। यह हल्के पीले रंग का होता है। लसीका केशिकाओं और वाहिकाओं के निकटतम पेशी संकुचन और वाहिकाओं में उपस्थित वाल्व के कारण लसीका का प्रवाह होता है। वाल्व इस प्रकार लगे होते हैं कि द्रव का बहाव केवल शिराओं की तरफ रखते हैं। कुछ कशेरुकी जंतुओं (बहुत से साइक्लोस्टोम, मछलियां और उभयचर) में स्पंदमान लसीका हृदय होते हैं जिनके कारण लसीका तंत्र में प्रवाह होता है। परन्तु मनुष्य में लसीका

प्रवाह निश्चेष्ट होता है और वाहिकाओं की निकटवर्ती पेशियों के संकुचन से उत्पन्न दबाव पर निर्भर करता है। लसीका केशिकाएं आपस में जुड़ती चली जाती हैं और बड़ी-बड़ी वाहिकाएं बनती हैं। अंततः लसीका दो बड़ी लसीका वाहिकाओं — **बांयी वक्ष वाहिका** (left thoracic duct) तथा **दाहिनी लसीका वाहिका** (right lymphatic duct) द्वारा अनाक्सीकृत रुधिर में वापस छोड़ दिया जाता है। यह दोनों वाहिकाएं क्रमशः बायीं और दाहिनी महाशिराओं में खुलती हैं (चित्र 3.13)।

इसके अतिरिक्त लसीका तंत्र की शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका है। स्तनधारियों और पक्षियों में लसीका वाहिकाओं में बहुत से उत्फूलन होते हैं जिन्हें लसीका नोड (lymph node) कहते हैं। इन नोडों में भक्षिकोशिकीय श्वेत रक्त कोशिकाएं (phagocytes) होती हैं जो लसीका से जीवाणु तथा दूसरे बाह्य कणों को हटा देती है। लसीका नोड प्रतिरक्षक अनुक्रिया में सक्रिय होते हैं इसलिए संक्रमण के दौरान यह नोड प्रायः फूल जाते हैं और दुखने लगते हैं। गला खराब होने पर जो फूली हुई ग्रंथियां हम महसूस करते हैं वह वास्तव में सक्रिय लसीका नोड होते हैं।

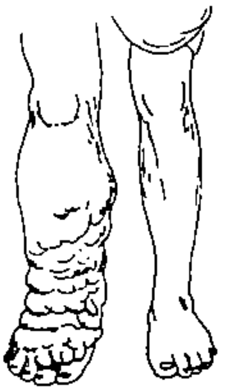
चित्र 3.14 : फूले हुए अवरोधित लसीका नोड द्वारा श्लीपद रोग।

लसीका तंत्र में कोई दोष या रुकावट आने पर शरीर का तरल संतुलन बिगड़ जाता है। शरीर के किसी भी अंग में लसीका प्रवाह के अवरोधन से उस अंग में तरल जमा होने लगता है और प्रोटीन के अपर्याप्त निष्कासन से रक्त और अंतराकाशी द्रव्य के बीच परासरणीय संतुलन बिगड़ जाता है तथा अधिक द्रव जमा हो जाता है। इससे अंग में सूजन आ जाती है जिसे शोफ (oedema) कहते हैं। इसका एक उदाहरण परपोषी सूत्रकृमि द्वारा उत्पन्न रोग में दिखाई देता है। यह रोग फाइलेरियता (filariasis) कहलाता है और भारत में *वूचेरेरिया बैन्क्रोफटाई* (*Wucheraria bancrofti*) के लार्वा द्वारा फैलता है। यह लार्वा मच्छरों के काटने से मनुष्य में पहुँचते हैं, जहाँ वह लसीका नोड में घुस कर लसीका प्रवाह तथा निकास को रोक देते हैं जिससे वह अंग फूल कर विकृत हो जाता है। अधिकतर पैर या हाथ या बाहरी जननेन्द्रिय (external genetilia) में होता है और इस विकार को शलीपद (elephantiasis) कहते हैं (चित्र 3.14)।

बोध प्रश्न 5

लसीका केशिकाएं और रक्त केशिकाओं में क्या अंतर है?

....

....

....

3.6 हीमोस्टेटिक क्रियाविधियां

आप देखते हैं कि जब हमें चोट लगती है या अंगुली कट जाती है तो रक्त बहने लगता है परन्तु कुछ ही मिनटों में रक्त बहना बंद भी हो जाता है। फटी हुई रक्त वाहिकाओं से रक्त क्षति कई विधियों द्वारा रोकी जाती है। क्षतिग्रस्त वाहिका सिकुड़ जाती है और इस तरह रक्त प्रवाह कम हो जाता है, परन्तु सबसे महत्वपूर्ण विधि है, क्षति के स्थल पर रक्त थक्कन (blood clotting) जिसमें तरल रक्त जम कर जैली जैसा बन जाता है और रक्त बहाव को रोक लेता है।

इस प्रक्रम को स्कंदन (coagulation) कहते हैं। क्योंकि स्कंदन का चिकित्सा संबंधी महत्व है इसलिये स्तनधारियों में, विशेषकर मनुष्य में इसका अच्छी तरह से अध्ययन हुआ है। आइए हम इस प्रक्रम को समझें। यदि रक्त के थक्के की रचना सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखी जाये तो हमें बहुत नाजुक और पतली तंतुकों (fibrils) का जाल दिखाई देता है जिसमें रक्ताणु और श्वेताणु और टूटी हुई पट्टिकाएं फसी रहती हैं। यह तंतुक फाइब्रिन (fibrin) के बने होते हैं जो प्लाज्मा में पाये जाने वाले प्रोटीन फाइब्रिनोजन (fibrinogen) का अविलेय जैल (gel) रूप है। यह तंतुक पट्टिकाओं के एक केन्द्र से जुड़े रहते हैं और चारों ओर फैले रहते हैं (चित्र 3.15)। थक्का बनने के थोड़ी देर बाद वह सिकुड़ जाता है और हल्के भूरे रंग का तरल छोड़ देता है। यह तरल **सीरम (serum)** कहलाता है। सीरम सदा तरल अवस्था में रहता है और इसमें स्कंदन क्षमता नहीं होती है क्योंकि इसमें फाइब्रिनोजन नहीं होती है। परन्तु यदि रक्त से अपकेन्द्रण द्वारा कोशिकाएं अलग कर ली जाये तो प्लाज्मा में रक्त के समान

स्कंदन होता है और सीरम अलग हो जाता है। यह स्कंदन सफेद होता है और इस अंतर के अलावा प्लाज़्मा स्कंदन से बना थक्का रक्त के थक्के के समान होता है। यह स्कंदन क्रिया केवल प्लाज़्मा की ही विशिष्टता है। लसीका में भी स्कंदन होता है परन्तु धीमी गति से और प्लाज़्मा या रक्त के थक्के के मुकाबले में लसीका से बना थक्का ठोस नहीं होता। आइए अब स्कंदन प्रकम को देखें।

स्कंदन प्रक्रम

रक्त के स्कंदन के लिए चार पदार्थ अनिवार्य हैं : प्रोथ्रोम्बिन (prothrombin), थ्रोम्बोप्लास्टिन (thromboplastin), कैल्सियम तथा फाइब्रिनोजन (fibrinogen)। प्रोथ्रोम्बिन से थ्रोम्बिन (thrombin) नामक ऐंज़ाइम उत्पन्न होता है। फाइब्रिनोजन, प्रोथ्रोम्बिन और कैल्सियम परिसंचरित रक्त में होते हैं। थ्रोम्बोप्लास्टिन (वसा के समान फ़ास्फ़ोरस युक्त योगिक) ऊतकों में होता है, विशेषकर फेफड़ों और मस्तिष्क में, परन्तु रक्त प्लाज़्मा में इसकी मात्रा बहुत ही कम होती है। रक्त बहने पर क्षतिग्रस्त ऊतकों और श्वेताणु से थ्रोम्बोप्लास्टिन निकलता है जो कैल्सियम आयन की उपस्थिति में प्रोथ्रॉम्बिन को सक्रिय थ्रॉम्बिन में परिवर्तित कर देता है। थ्रॉम्बिन निष्क्रिय फाइब्रिनोजन को अविलेय फाइब्रिन में बदल देता है जो सूक्ष्म धागों जैसे तंतुक का जाल बनाते हैं जिसमें विभिन्न रक्त कोशिकाएं फैल जाती हैं।

चित्र 3.15 : फाइब्रिन के जाल में फंसा मनुष्य का एक रक्ताणु।

स्कंदन प्रक्रिया के मुख्य कारक निम्नलिखित हैं :

प्रोथ्रॉम्बिन (प्लाज़्मा में निष्क्रिय) + कैल्सियम (आयनी) + थ्राम्बोप्लास्टिन = थ्रॉम्बिन (सक्रिय)

थ्रॉम्बिन + फाइब्रिनोजन (प्लाज़्मा में विलेय) = फाइब्रिन (तंतुक)

रक्त वाहिकाओं के भीतर सामान्यतः रक्त स्कंदन नहीं होता क्योंकि वहां इतनी मुक्त थ्राम्बोप्लास्टिन नहीं होती जो निष्क्रिय प्रोथ्रॉम्बिन सक्रिय थ्रॉम्बिन में बदल सके।

यह क्रमबद्ध उत्प्रेरक प्रक्रिया एक **एंज़ाइम सोपानी** (enzyme cascade) के समान होती है जिसमें एक अनुक्रिया का उत्पाद अगली अनुक्रिया को उत्प्रेरित करता है। कम से कम 13 भिन्न प्रकार के प्लाज़्मा कारक या घटक पहचाने गये हैं (तालिका 3.3 देखिये)। एक भी कारक में न्यूनता होने से स्कंदन धीरे होता है या होता ही नहीं है। इस जटिल स्कंदन प्रक्रिया का विकास क्यों हुआ? शायद इसलिए कि विभिन्न आंतरिक और बाह्य रक्तस्रावी उद्दीपनों की प्रतिक्रिया में कई प्रारंभिक स्कंदन अभिक्रियाओं की आवश्यकता हो सकती है। साथ ही में वाहिका में बिना क्षति के किसी संदिग्ध उद्दीपन द्वारा स्कंदन प्रक्रिया न हो पाये।

तालिका 3.3 : रक्त स्कंदन के कारक

कारक (अंतर्राष्ट्रीय समिति द्वारा नामित)	पर्याय
I	फाइब्रिनोजन
II	प्रोथ्रोम्बिन
III	ऊतककारक थ्रोम्बोप्लास्टिन
IV	कैल्सियम
V	अस्थाई कारक
VI	अब कारक V के समान समझा जाता है।
VII	प्रोकनवर्टिन
VIII	एन्टीहीमोफिलिक कारक
IX	क्रिसमस कारक
X	स्टुअर्ट प्रओअर कारक
XI	पूर्ववर्ति प्लाज़्मा थ्रोम्बोप्लास्टिन
XII	हेगमान कारक
XIII	फाइब्रिन स्थायीकरणीय कारक

रक्त स्कंदन का संदमन हेपैरन (heparin) द्वारा होता है। यह एक म्यूकोपालीसेकाराइड है जो स्तनधारी यकृत से उत्पन्न होती है। सभी जंतुओं में हीमोस्टेटिक (haemostatic) या रक्त में साम्यावस्था बनाये रखने वाली क्रियाविधि की आवश्यकता होती है। बंद परिसंचरण तंत्र की अपेक्षा मुक्त परिसंचरण में रक्त वाहिकाओं के संकुचन से रक्त स्राव रोकने में सहायता नहीं मिलती पर मुक्त तंत्र में रक्त दाब भी कम होता है और इसी कारण रक्तस्राव अधिक नहीं होता है।

स्कंदन प्रक्रिया अकशेरुकी जंतुओं में भी पायी जाती है परन्तु इनमें सहज रक्त कोशिकाओं का समूहन होता है। इसमें प्लाज़्मा प्रोटीन का कोई योगदान नहीं होता है। कोशिकाओं का जाल सा बन जाता है जो घाव को भरने में सहायता करता है। इस प्रक्रिया में पेशी संकुचन से भी सहायता मिलती है।

3.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा

- प्लाज़्मा, अंतराकाशी और अंतःकोशकीय द्रव से जंतु के देह तरल बनते हैं। यह सभी द्रव अधिकांश

पानी है परन्तु इनकी विलेय संरचना भिन्न है। रक्त तरल परिवहन तंत्र है जो शरीर में पोषक, अपशिष्ट पदार्थ, ऊष्मा, नियमक पदार्थ तथा ऑक्सीजन वाहक वर्णकों का वहन करता है।

- परिसंचरण तंत्र दो प्रकार के हो सकते हैं : मुक्त तथा बंद। मुक्त परिसंचरण में रक्त हृदय से पम्प होकर ऊतक अवकाशों में पहुंच जाता है और ऊतक रक्त में डूबे रहते हैं तथा रक्त दाब भी कम होता है। बंद परिसंचरण में रक्त वाहिकाओं में बंद रहता है और धमनियों से शिराओं तक केशिकाओं के माध्यम से पहुँचता है। रक्त दाब उच्च होता है और द्रव्य केशिका भित्ती से छन कर अंतराकाशी अवकाशों में जमा होता है, जहां से लसीका वाहिकाओं द्वारा फिर शिरा रुधिर में मिल जाता है।
- हृदय पेशीय पम्प है जो धमनी तंत्र में रक्त को बलपूर्वक प्रवाहित करता है। हृदय के संकुचन के लिये उत्तेजन एक पेशीय ऊतक पेसमेकर से आरंभ होता है और सारे हृदय की पेशियों में फैल जाता है। लयबद्ध संकुचन (सिस्टोल) और शिथिलन (डाइस्टेल) द्वारा हृदय स्पंदन होता है।
- स्पंद दर शरीर आकार के व्युत्क्रमानुपाती है और जिन जंतुओं की उपापचयन दर उच्च है उनकी स्पंदन दर भी तेज होती है। हृदयी निर्गम, शिरा रूधिर प्रवाह पर निर्भर करता है। स्तनधारियों में हृदयी निर्गम में परिवर्तन स्ट्रोक आयतन के बजाय स्पंद दर में परिवर्तन से संबंधित है।
- धमनी तंत्र शरीर का दाब आशय है। यह हृदय और केशिका को जोड़ने वाला वाहिका तंत्र है। रक्त दाब और रक्त प्रवाह में हृदय संकुचन के कारण होने वाले दोलन का अवमंदन लचीली धमनियों के द्वारा होता है। केशिकाओं में रक्त प्रवाह का नियंत्रण उनके धमनिका सिरे में स्थित पेशी अवरोधिनी द्वारा होता है। प्रवाह वेग धमनियों में अधिकतम और केशिकाओं में न्यूनतम है।
- शिराएं केशिकाओं से हृदय तक रक्त लाने वाली वाहिकाएं हैं और शरीर का रक्त आशय है। स्तनधारियों में 50 प्रतिशत रक्त शिराओं में होता है।
- रक्त और ऊतक में पदार्थ विनिमय केशिकाओं द्वारा होता है। केशिका में रक्त सांद्रण और अंतराकाशी द्रव के सांद्रण में परिवर्तन के कारण धमनीय सिरे से द्रव का निकास होता है और शिरा सिरे से पुनः अवशोषण होता है।
- व्यायाम के दौरान पेशियों में अतिरिक्त ऑक्सीजन सप्लाई, हृदयी निर्गम में वृद्धि के कारण होती है। साथ ही में रक्त से अधिक मात्रा में ऑक्सीजन का निष्कर्षण होती है।
- वाहिकाओं के एक तंत्र लसीका तंत्र द्वारा अंतराकाशी अवकाशो से द्रव का निष्कासन होता है। लसीका में लिम्फोसाइट तथा मोनोसाइट होते हैं जो शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र के अनिवार्य तत्व हैं। यह कोशिकाएं लसीका ग्रंथियों में भी पायी जाती हैं।
- शरीर में चोट लगने पर रक्तस्राव रोकने के लिए रक्त वाहिकाओं का संकुचन और रक्त स्कंदन जैसी हीमोस्टेटिक क्रियाएं हैं। स्कंदन एंज़ाइम सोपनी युक्त जटिल क्रिया है जिसके कारण अंत में रक्त का थक्का बनता है।

3.8 अंत में कुछ प्रश्न

1) इस इकाई में दी गई जानकारी के आधार पर अपने शब्दों में रक्त और लसीका तंत्र के कार्य का संक्षिप्त विवरण दीजिये।

....

....

....

2) बंद परिसंचरण तंत्र के क्या लाभ हैं? आपकी राय में बंद और मुक्त परिसंचरण तंत्र में कौन सा तंत्र बेहतर है?

....

....

....

3) कठिन व्यायाम से हृदय में क्या प्रतिक्रिया होती है? गहरी नींद के समय हृदय गति कम क्यों हो जाती है?

....

....

....

4) केशिका और ऊतकों के बीच द्रव का विनिमय कैसे होता है?

....

....

....

5) बंद परिसंचरण तंत्र में रक्त कुछ दाब के साथ प्रवाह करता है और यदि कोई वाहिका फटती है तो रक्तस्राव हो सकता है। ऐसी स्थिति को नियंत्रित करने के लिए इस तंत्र में क्या प्रतिक्रिया होती है?

....

....

....

3.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) रक्त में प्लाज्मा और कोशिकाएं दोनों हैं। प्लाज्मा द्रव है जिसमें कोशिका नहीं है।

ख) उनकी आयन और प्रोटीन मात्रा में अंतर होता है। बाह्यकोशिकी द्रव में Na और Cl आयन अधिक हैं और प्रोटीन प्रतिशत अंतःकोशिकी द्रव के मुकाबले कम होते हैं। कोशिका के अंदर K और Mg आयन अधिक होते हैं।

2) क) iv ख) i) ग) स्तनधारी : ऑक्सीकृत, शरीर, अंगों, फुप्फुसी

3) क) iii) ख) i) ग) गति चालक, हृदय गति, अलिंदों, अलिंद, निलय, अलिंद निलय नोड, सिरे, ऊपर, भित्ती, वेगस, एसेटिलकोलिन

4) क) iii), iv) v), vi) ख) i) अवशोषण

5) लसीका केशिकाएं एक सिरे से बंद होती हैं। उनमें रक्ताणु नहीं होते। उनकी भित्ती रक्त केशिका के मुकाबले अधिक पारगम्य होती है इसलिए बड़े अणु जैसे कि प्रोटीन और वसा उसको पार कर के अंदर चले जाते हैं। उनका व्यास रक्त केशिका से बड़ा होता है।

अंत में कुछ प्रश्न

1) भाग 3.2 और उपभाग 3.5.6 को देखिये।

2) प्रत्येक परिसंचरण तंत्र उस वातावरण के अनुकूल होता है जहां जंतु निवास करता है परन्तु बंद परिसंचरण के अपने कुछ फायदे हैं। क्योंकि रक्त बंद वाहिकाओं में प्रवाहित होता है इसलिए उसका दाव उच्च होता है। इस प्रकार रक्त ऊतकों तक तेज गति से पहुंचाया जा सकता है। बंद परिसंचरण वाले जंतुओं की उपापचयन दर भी उच्च होती है और इसलिए वह ऊर्जा संचयन भी कर सकते हैं।

3) कठोर व्यायाम के दौरान हृदयगति बढ़ जाती है, हृदयी निर्गम अधिक हो जाता है परन्तु स्ट्रोक आयतन में वृद्धि बहुत कम होती है। गहरी नींद के समय उपापचय की दर धीमी हो जाती है और इसलिए हृदयगति भी धीमी हो जाती है।

4) उपभाग 3.5.4 देखिये।

5) 1) क्षति के स्थल पर वाहिका संकुचित हो जाती है।

2) स्कंदन प्रतिक्रिया होती है जिसमें शीघ्रता से क्रमानुसार जटिल अनुक्रियाएं होती हैं और रक्त का थक्का बनता है जिससे रक्तस्राव बंद हो जाता है।

इकाई 4 उत्सर्जन

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
    उद्देश्य
4.2 नाईट्रोजन उत्सर्जन
    अमोनिया का निर्माण
    अमोनियोत्सर्जन
    यूरियोत्सर्जन
    यूरिकोत्सर्जन
    ग्वानोत्सर्जन
4.3 उत्सर्गी अंग
    प्रकार्यात्मक सिद्धांत
    संकुचनशील धानी
    कृमियों के वृक्कक
    मौलस्का के वृक्क
    क्रस्टेशियनों की हरी ग्रंथियां
    कीटों की मैलपीगी नलिकाएं
    कशेरुकी वृक्क
4.4 वृक्क-कार्य का नियमन
4.5 सारांश
4.6 अंत में कुछ प्रश्न
4.7 उत्तर

4.1 प्रस्तावना

उत्सर्जन (excretion) उस प्रक्रिया का नाम है, जिसमें उपापचयन (मेटाबोलिज़्म) से उत्पन्न होने वाले विषैले अपशिष्ट पदार्थों को शरीर से बाहर निकाल दिया जाता है। उपापचयन के अंतिम उत्पाद, प्राणी की कार्यिकी के अनुसार या तो शरीर से बाहर निकाल दिए जाते हैं या संरक्षित कर लिए जाते हैं। आप खंड 3 LSE-01: कोशिका-जैविकी में पढ़ चुके हैं कि अपचय (केटाबोलिज़्म) के अंतिम उत्पाद कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन होते हैं। कार्बन के परमाणु कार्बन डाइऑक्साइड में निकल जाते हैं तथा हाइड्रोजन परमाणु जल में, और ऑक्सीजन के परमाणु कार्बन डाइऑक्साइड एवं जल में निकल जाते हैं। नाईट्रोजन, प्रोटीन अपचय का अंतिम उत्पाद है और यह अधिक मात्रा में पाया जाता है। यह अत्यन्त विषैला होता है और या तो इसे बनते ही तुरंत बाहर निकाल दिया जाता है या अंततः बाहर निकाल देने से पहले इसे कम विषैले स्वरूप में बदल दिया जाता है। इस इकाई में आप पढ़ेंगे कि विभिन्न प्राणी किस प्रकार विषैली नाइट्रोजन को शरीर से बाहर निकाल देते हैं। साथ ही आप विभिन्न प्राणियों के उत्सर्गी अंगों की संरचना एवं उनकी कार्य-पद्धति के विषय में भी पढ़ेंगे, एवं उन क्रियाविधियों के विषय में भी पढ़ेंगे जिनसे वृक्कों अर्थात गुर्दों के कार्य का नियमन होता है। इससे अगली इकाई में आप परासरणनियमन (osmoregulation) के विषय में पढ़ेंगे जो एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा देह-तरलों का परासारी एवं आयनिक सांद्रण बना रहता है। उत्सर्जन तथा परासरणनियमन की प्रक्रिया एक ही अंग-समुच्चय द्वारा सम्पन्न होती है। इन्हीं के द्वारा होमियोस्टेसिस (समस्थिति) बनी रहती है। इसी इकाई में आगे उत्सर्गी अंगों के कार्यों के साथ उनके द्वारा परासरण नियमन भी बताया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद आप :

- उपापचयन के दौरान अमोनिया के बनने की प्रक्रिया को समझा सकेंगे।

- कोशिकाओं के लिए अमोनिया क्यों हानिकारक है, समझा सकेंगे।
- जलीय प्राणियों में अमोनिया किस प्रकार तुरंत बाहर निकाल दी जाती है, उल्लेख कर सकेंगे।
- स्थलीय प्राणियों में अमोनिया का किन-किन दिशामार्गों से निराविषीकरण (detoxification) होता है, उनका विवेचन कर सकेंगे।
- नाइट्रोजन उत्सर्जन किस प्रकार आवास से संबंधित है, इसका स्पष्टीकरण कर सकेंगे।
- वृक्कीय अंगों की संरचना-विविधता तथा उनके कार्य-सिद्धान्तों की विवेचना कर सकेंगे।
- होमियोस्टेसिस में वृक्कीय अंगों के महत्व का स्पष्टीकरण कर सकेंगे।

4.2 नाइट्रोजन उत्सर्जन

आप जानते हैं कि नाईट्रोजन, ऐमिनो अम्लों तथा प्रोटीनों का एक विशिष्ट संरचक तत्व है। प्राणियों को ऐमीनो अम्ल अपने आहार से प्राप्त होते हैं और इन्हें वे नाना प्रकार के कार्यात्मक नाइट्रोजनी यौगिकों के संश्लेषण में इस्तेमाल करते हैं जैसे-न्यूक्लिक अम्लों, एंज़ाइमी एवं गैर-एंज़ाइमी दोनों ही प्रकार के प्रोटीनों, कुछ हॉर्मोन तथा न्यूरोट्रांसमीटरों (तंत्रिकासंचारी पदार्थों) के संश्लेषण में। आहार में प्राप्त होने वाले ऐमीनो अम्लों की मात्रा प्रायः उससे अधिक होती है, जितनी कि कार्यात्मक नाइट्रोजनी यौगिकों के संश्लेषण के लिए आवश्यक है। अधिशेष ऐमीनो अम्लों का या तो ऊर्जा के विमोचन के लिए अपचयन हो जाता है या उनका उपयोग ग्लाइकोजन तथा वसा के संश्लेषण में हो जाता है। जब ऐमीनो अम्लों, प्रोटीनों अथवा न्यूक्लिक अम्लों का अपचय हो जाता है तब नाइट्रोजन युक्त उत्सर्गी अंतिम उत्पाद बनते हैं। ये पदार्थ हैं—**अमोनिया, यूरिया** तथा **यूरिक अम्ल**।

प्राणियों को प्रायः उनके मुख्य उत्सर्गी उत्पादों के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है।

1) जो प्राणी प्रोटीन उपचयन के अंतिम उत्पादों को मुख्यतः अमोनिया (NH_3) के रूप में उत्सर्जित करते हैं, उन्हें **अमोनोटेलिक** (ammonotelic) या **अमोनोत्सर्गी** कहते हैं।
2) जो प्राणी अधिकांशतः यूरिया का उत्सर्जन करते हैं उन्हें **यूरियोटेलिक** (ureotelic) या **यूरियोत्सर्गी** कहते हैं, और
3) जो मुख्यतः यूरिक अम्ल का उत्सर्जन करते हैं उन्हें **यूरिकोटेलिक** (uricotelic) या **यूरिकोत्सर्गी** कहते हैं।
4) जो ग्वानिन का उत्सर्जन करते हैं, उन्हें **ग्वानोटेलिक** (guanotelic) अर्थात **ग्वानोत्सर्गी** कहते हैं।

नाइट्रोजन का उत्सर्जन अमोनिया के रूप में होगा या यूरिया अथवा यूरिक अम्ल के रूप में, यह प्राणी के सामान्य आवास एवं जल की उपलब्धता से पूर्णतः जुड़ा हुआ है। किसी भी प्राणी में नाइट्रोजन का उत्सर्जन किसी एक ही उत्पाद तक सीमित नहीं होता। प्राणियों को अमोनोत्सर्गी, यूरियोत्सर्गी, यूरिकोत्सर्गी अथवा ग्वानोत्सर्गी की संज्ञा केवल इसलिए दी जाती है कि उससे यह संकेत मिल सके कि नाइट्रोजन का उत्सर्जन किस प्रमुख स्वरूप में होता है। उदाहरण के लिए, यूरिकोत्सर्जन का अर्थ यह नहीं है कि इसमें अमोनिया तथा यूरिया का अल्प मात्राओं में उत्सर्जन नहीं होता।

प्राणियों के किसी एक ही वर्ग के भीतर नाइट्रोजन-उत्सर्जन की विधि विभिन्न स्पीशीज़ के अलग-अलग आवासों पर निर्भर होती है। उदाहरण के लिए दक्षिण अफ्रीका का मेंढक *जीनोपस लीविस* (*Xenopus laevis*) जो वयस्क जीवन में जलीय होता है, अमोनोत्सर्गी होता है जबकि अनेक वास्तविक उभयचरी मेंढक एवं टोड (उदाहरण के लिए *ब्यूफो* स्पीशीज़) वयस्क जीवन में यूरिया का उत्सर्जन करते हैं। इसी प्रकार जलीय कीलोनयिन-प्राणी (कछुए) यूरिया तथा अमोनिया का लगभग बराबर अनुपात में उत्सर्जन करते हैं, अर्धजलीय कछुए यूरियोत्सर्गी होते हैं और मरुस्थल में रहने वाले यूरिकोत्सर्गी होते हैं।

नाइट्रोजन का उत्सर्जन प्राणी के आवास में होने वाले परिवर्तन के अनुसार भी बदल सकता है। उदाहरण के लिए, मेंढक तथा टोड के टेडपोल अमोनोत्सर्गी होते हैं जबकि उनके वयस्क में कायांतरित होने के

साथ-साथ उनके यकृत् में यूरिया-चक्र के सभी एंज़ाइमों का समावेश हो जाना भी शामिल है। अफ्रीका की फेफड़ा मछली प्रोटॉप्टेरस एथियोपिकस (*Protopterus aethiopicus*) सामान्यतः जल में रहती है और भारी मात्रा में अमोनिया का उत्सर्जन करती है। ग्रीष्मकाल में, जब तालाब सूख जाते हैं, तब यह कीचड़ के एक कोकून में ग्रीष्मनिष्क्रियता की अवस्था बिताती है और उस दौरान यह यूरियोत्सर्गी हो जाती है। वर्षा के प्रारम्भ होते ही यह अपने अपचय को पुनः अमोनोत्सर्गी बना लेती है।

अगले भाग में आप अमोनोत्सर्जन, यूरियोत्सर्जन तथा यूरिकोत्सर्जन के विषय में और अधिक विस्तार से अध्ययन करेंगे। तालिका 4.1 में विविध प्राणी-वर्गों में प्रमुख नाइट्रोजनी उत्सर्गी उत्पादों की सूची दी गयी है।

तालिका 4.1 : विविध प्राणी-वर्गों में मुख्य नाइट्रोजनी उत्सर्गी उत्पाद

प्राणी	प्रोटीन उपापचयन का मुख्य अंतिम उत्पाद	आवास
जलीय अकशेरुकी	अमोनिया	जलीय
टीलियॉस्ट मछली	अमोनिया, कुछ यूरिया	जलीय
इलास्मोब्रैंक	यूरिया	जलीय
मगरमच्छ	अमोनिया, कुछ यूरिक अम्ल	अर्धजलीय
उभयचर (लार्वा)	अमोनिया	जलीय
उभयचर (वयस्क)	यूरिया	अर्धजलीय
स्तनधारी	यूरिया	स्थलीय
कछुए	यूरिया तथा यूरिक अम्ल	स्थलीय
कीट	यूरिक अम्ल	स्थलीय
स्थलीय गैस्ट्रोपॉड	यूरिक अम्ल	स्थलीय
छिपकलियां	यूरिक अम्ल	स्थलीय
सांप	यूरिक अम्ल	स्थलीय
पक्षी	यूरिक अम्ल	स्थलीय

4.2.1 अमोनिया का निर्माण

प्राणी के शरीर में जो ऐमीनो अम्ल आहार के साथ प्रविष्ट होते हैं उनका ऑक्सीडेटिव ट्रांसडीऐमीनेशन (oxidative transdeamination) नामक प्रक्रिया द्वारा अपचय होता है। यह प्रक्रिया तीन क्रियाओं का संयोजन होती है जो इस प्रकार है—ट्रांसऐमीनेशन, डीऐमीनेशन तथा ऑक्सीडेशन अर्थात् अपचयन। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में ट्रांसऐमीनेज़ (transaminase) तथा डीहाइड्रोजिनेज़ (dehydrogenase) नामक एन्ज़ाइमों द्वारा उत्प्रेरण होता है (चित्र 4.1)।

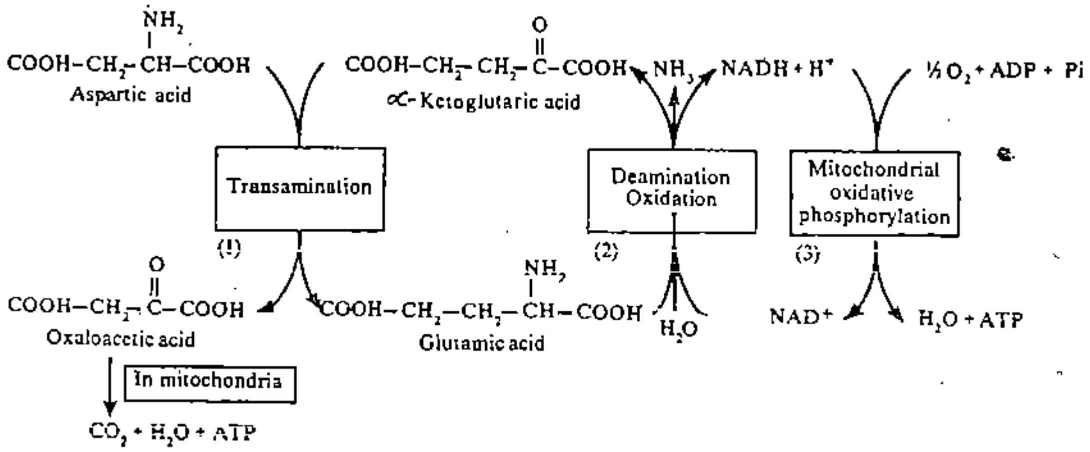

चित्र 4.1 : ऐमीनो अम्लों का ऑक्सीकरणी फॉस्फोरिलेशन।

आप चित्र 4.1 में देख सकते हैं कि :

1) ऐस्पार्टिक अम्ल नामक ऐमीनो अम्ल का ऐमीनो समूह स्थानांतरित होकर कीटोग्लूटेरिक अम्ल (ketogluteric acid) में पहुंच कर उसे ग्लूटैमिक (glutamic) अम्ल में बदल देता है (ट्रांसऐमिनेशन)। इस प्रक्रिया के दौरान ऐस्पार्टिक अम्ल का परिवर्तन होकर ऑक्सेलोऐसिटिक अम्ल (oxaloacetic acid) बन जाता है।

2) अगले चरण में ग्यूटैमिक अम्ल का ऐमीनो समूह अमोनिया के रूप में बाहर निकलता है (डीऐमिनेशन अर्थात विऐमिनीकरण) जिसमें ग्लूटैमिक अम्ल कीटोग्लूटैरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। इसके साथ ही ग्लूटैमिक अम्ल से एक जोड़ा हाइड्रोजन परमाणु भी बाहर निकल आते हैं (ऑक्सीडेशन)। अतः इस अभिक्रिया में बनने वाली अमोनिया वास्तव में ऐमीनो अम्ल (ऐस्पार्टिक अम्ल) से आती है, जिसका ट्रांसऐमिनेशन होता है।

3) ग्लूटैमिक अम्ल के ऑक्सीकरण से बनने वाले हाइड्रोजन परमाणु NAD का अपचय करके NADH बना देते हैं।

4) इस प्रकार बने NADH तथा ऑक्सेलोऐसिटिक अम्ल माइटोकॉन्ड्रिया में ऑक्सीकृत होकर CO_2 तथा H_2O बनते हैं और इस प्रक्रिया में ATP बन जाता है।

अमोनिया कोशिकाओं के लिए निम्न कारणों से विषैली होती है:

i) अमोनिया अंतःकोशिकीय pH बढ़ा देती है जिसके कारण एंज़ाइम प्रभावित होते हैं और उपापचयन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

ii) यह क्रेब चक्र (Kreb cycle) में से कीटोग्लूटैरेट तथा इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण प्रणाली में से NADH को निकाल लेती है। परिणामतः कोशिकाओं में ATP का सांद्रण घट जाता है।

iii) क्षारीय pH पर कोशिकीय झिल्लियों की स्थिरता कम हो जाती है। साथ ही अमोनियम लवणों से झिल्लियों के आर-पार होने वाला आयनों का सक्रिय परिवहन भी संदमित हो जाता है।

इसलिए अमोनिया को कोशिकाओं में विषैले स्तरों तक एकत्रित होने से रोकने के लिए इसके बनते ही इसे या तो उत्सर्जित कर दिया जाता है या कम विषैले स्वरूप में परिवर्तित कर दिया जाता है अर्थात् निराविषिकरण (detoxification) हो जाता है।

4.2.2 अमोनोत्सर्जन

उच्च जल-विलयशीलता तथा छोटे आण्विक आकार के कारण अमोनिया कोशिका-झिल्लियों में से बड़ी तेजी से विसरित होती है। अतः यह इस रूप में उसी समय तेज़ी से उत्सर्जित हो सकती है जब जल बहुतायत में उपलब्ध हो, जिससे यह एक तनु घोल के रूप में शरीर में से तेजी से निकाली जा सके। इसलिए अमोनिया के तुरंत उत्सर्जन की व्यवस्था अलवणजलीय तथा समुद्री जलीय प्राणियों, दोनों में ही पायी जाती है। इन जलीय प्राणियों में जल को लगातार पर्यावरण से शरीर के भीतर प्रवेश करना पड़ता है। अलवणजलीय तथा समुद्री अकेशेरुकियों एवं मछलियों में, उभयचर लार्वा तथा स्थायी रूप में जलीय उभयचरों में अपशिष्ट नाइट्रोजन का अधिकतर भाग अमोनिया के रूप में उत्सर्जित होता है और इसलिए ऐसे प्राणियों को अमोनोत्सर्गी (ammonotelic) अथवा अमोनियोत्सर्गी (ammoniotelic) कहते हैं। इसमें अमोनिया का विसरण त्वचा, गिल अथवा वृक्कों में से होता है।

4.2.3 यूरियोत्सर्जन

स्थलीय प्राणियों को शरीर में जल संरक्षण के कठिन कार्य से जूझना होता है क्योंकि उनके पर्यावरण में जल की उपलब्धता सीमित होती है। चूंकि ये प्राणी उत्सर्जन के लिए खुल कर जल का प्रयोग सहन नहीं कर सकते, इसलिए अमोनिया को कम विषैले उत्पाद में बदल दिया जाता है। स्तनधारियों तथा अर्धस्थलीय वयस्क उभयचरों में मुख्य नाइट्रोजनी उत्सर्गी उत्पाद यूरिया होता है, जो कम विषैला तथा आसानी से घुलने वाला होता है। इसलिए इन प्राणियों को यूरियोत्सर्गी (ureotelic) कहते हैं।

यूरिया ($H_2N. CO. NH_2$) का संश्लेषण CO_2 के अणु तथा NH_3 के दो अणुओं से होता है यह प्रक्रिया यूरियोत्सर्गी कशेरुकियों के यकृत् में ऑर्निथीन-यूरिया चक्र (ornithine urea cycle) नामक उपापचयन दिशामार्ग द्वारा समाप्त होती है। इस चक्र की खोज सन् 1932 में क्रेब तथा हेन्सलाइट (Kreb and Hensleit) नामक वैज्ञानिकों ने की थी। यह प्रक्रिया एक चक्रीय दिशामार्ग है, जिसमें पांच एंज़ाइम-उत्प्रेरित अभिक्रियाएं शामिल हैं (चित्र 4.2)।

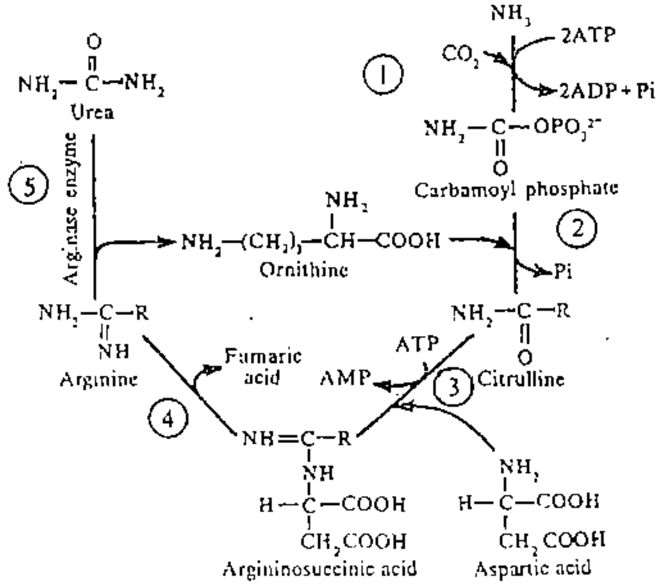

R = ornithine residule
Pi = inorganic phosphate

चित्र 4.2 : ऑर्निथीन-यूरिया चक्र तथा संबद्ध अभिक्रियाएं।

चित्र 4.2 में आप देख सकते हैं कि इस चक्र में पांच चरण आते हैं :

1) अमोनिया CO_2 तथा ATP, ये तीन पदार्थ एक एंज़ाइम **कार्बमोइलफॉस्फेट सिंथेटेज़** (carbamoyl phosphate synthetase) द्वारा **कार्बमोइलफॉस्फेट** में परिवर्तित हो जाते हैं।

2) तदुपरांत कार्बमोइलफॉस्फेट तथा ऑर्निथीन से एंज़ाइम ऑर्निथीन कार्बमोइल-ट्रांसफरेज़ (ornithine carbamoyl transferase) द्वारा सिट्रलीन (citrulline) बनता है

3) इसके बाद सिट्रलीन का उपयोग ATP तथा ऐस्पार्टिक अम्ल की उपस्थिति में एंज़ाइम **आर्जिनोसक्सिनेट सिंथेटेज़** (arginosuccinate synthetase) द्वारा अर्जिनोसक्सिनिक अम्ल के संश्लेषण में होता है।

4) उसके बाद **आर्जिनोसक्सिनेट लाइएज़** (arginosuccinate lyase) की उपस्थिति में अर्जिनोसक्सिनिक अम्ल (arginosuccinic acid) से आर्जिनीन तथा फ्यूमेरिक अम्ल बनते हैं। सिट्रलीन से आर्जिनीन बनने में, ऐस्पार्टिक अम्ल का ऐमीनो समूह इस्तेमाल होकर ऐस्पार्टिक अम्ल का कार्बन कंकाल फ्यूमेरिक अम्ल के रूप में विमोचित हो जाता है।

5) अंततः, एंज़ाइम आर्जिनेज की उपस्थिति में आर्जिनीन का यूरिया तथा ऑर्निथीन में विखंडन होकर, चक्र पूरा हो जाता है।

आपने देखा कि इस चक्र में नाइट्रोजन, एक तो अमोनिया के रूप में तथा दूसरे ऐस्पार्टिक अम्ल के ऐमीनो समूह के रूप में प्रविष्ट होती है और यूरिया के दो नाइट्रोजन परमाणुओं के रूप में बाहर निकल जाती है। यूरिया के संश्लेषण में काम आने वाली अमोनिया के दो अणुओं में से एक तो सीधे अमोनिया के ही रूप में प्रविष्ट होता है और दूसरा ऐस्पार्टिक अम्ल के ऐमीनो समूह के रूप में। यूरिया चक्र दो चीजों से जुड़ा है — एक ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र (क्रेब-चक्र) और दूसरी ग्लूटैमेट डीहाइड्रोजिनेज अभिक्रिया। यूरियोत्सर्गी प्राणियों को अमोनिया के दो अणुओं का यूरिया के रूप में निराविषिकरण करने में जो मूल्य चुकाना पड़ता है वह ATP के तीन अणुओं के रूप में होता है। अधिक विस्तृत जानकारी के लिए आप कोशिका जैविकी की इकाई 11 तथा 12 (खंड 3) देख सकते हैं।

4.2.4 यूरिकोत्सर्जन

जो प्राणी अत्यधिक शुष्क पर्यावरणों में रहते हैं उनमें अमोनिया का यूरिक अम्ल में परिवर्तन हो जाता है। यूरिक अम्ल सबसे कम विषैला होता है और यह अपेक्षाकृत अघुलनशील है तथा सरलता से अवक्षेपित (precipitated) हो जाता है। अतः यह जल की कोई खास हानि हुए बिना ही ठोस रूप में उत्सर्जित हो सकता है। पल्मोनेट घोंघे, स्थलीय कीट, स्क्वैमेट (squamate), सरीसृप (छिपकलियां तथा सांप) और पक्षी अपनी अपशिष्ट नाईट्रोजन को अर्ध ठोस अथवा ठोस यूरिक अम्ल के रूप में उत्सर्जित करते हैं और इसी लिए इन्हें यूरिकोत्सर्गी (uricotelic) प्राणी कहा जाता है। इन प्राणियों में यूरिक अम्ल का संश्लेषण आइनोसिनिक अम्ल (inosinic acid) के दिशामार्ग से होता है। इस दिशामार्ग का स्पष्टीकरण सर्वप्रथम बुखानेन (Buchanan) तथा उनके सहकर्मियों ने 1950 के दशक में कबूतर के यकृत में किया था। यूरिक अम्ल प्यूरीनों के वर्ग का एक सदस्य है। इस दिशामार्ग की विस्तृत जानकारी देना इस इकाई में संभव नहीं है, फिर भी चित्र 4.3 में विभिन्न खण्ड दर्शाए गए हैं जिनसे यूरिक अम्ल का परमाणु गठित होता है। चित्र में जो डैश-रेखाएं यूरिक अम्ल के अणु को विभाजित कर रही हैं वे उन निर्माणकारी खण्डों को दर्शाती हैं जिनसे इस अणु का जैव संश्लेषण होता है।

अनेक कीटों में एक परिघटना पायी जाती है जिसे संचयी उत्सर्जन (storage excretion) कहते हैं। यदि उत्सर्गी पदार्थ बाहर निकाल दिए जाने की बजाए शरीर में ही जमा कर लिए जाएं, तो उनके उत्सर्जन में जल की हानि नहीं होती। चूंकि यूरिक अम्ल अविषैला और अत्यन्त अघुलनशील भी होता है, इसलिए इसे बिना किसी दुष्प्रभाव के शरीर में अनिश्चित काल तक रोके रखा जा सकता है। उत्सर्जन की इस समस्या का विकल्प तिलचट्टे (cockroach) में बहुत सामान्य है। ये तिलचट्टे यूरिक अम्ल को अपने वसा पिंड तथा क्यूटिकल में एकत्रित कर लेते हैं। संचित यूरिक अम्ल शुष्क देह-भार का 10% तक हो सकता है और साथ ही नाइट्रोजन से वंचित हो जाने के दिनों में काम आ सकने के लिए यह एक नाइट्रोजन भण्डार का भी काम करता है।

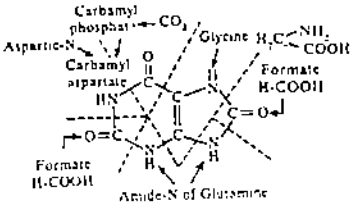

चित्र 4.3 : यूरिक अम्ल

4.2.5 ग्वानोत्सर्जन

ऐरेक्निड-प्राणियों (मकड़ियों तथा बिच्छुओं) में उत्सर्जन मुख्यतः ग्वानिन के रूप में होता है इसलिए इन्हें ग्वानोटेलिक या ग्वानोत्सर्गी कहते हैं। यूरिक अम्ल की तरह ग्वानिन भी अपेक्षाकृत अविषैला तथा अघुलनशील होता है और ठोस रूप में उत्सर्जित होता है। शुष्क आवासों के जीवन के लिए यह एक अनुकूलन है। यह एक प्यूरीन है इसकी वलय संचरना में भी वे ही परमाणु होते हैं जो यूरिक अम्ल में पाए जाते हैं। वास्तव में, ग्वानिन का निर्माण यूरिकोत्सर्गी प्राणियों के यूरिक अम्ल संश्लेषण के दौरान एक मध्यस्थ पदार्थ के रूप में होता है। मकड़ियों तथा बिच्छुओं में आइनोसिनिक (inosinicacid) अम्ल दिशामार्ग का अंत ग्वानिन निर्माण के ही रूप में होता है। ग्वानिन के चार नाइट्रोजन परमाणुओं का उद्भव यूरिक अम्ल के चार नाइट्रोजन परमाणुओं की ही तरह होता है।

बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

क) आहार के द्वारा प्राणी के शरीर में प्रविष्ट होने वाले ऐमिनो अम्लों का उपापचयन .... नामक प्रक्रिया से होता है इसमें दो एंज़ाइम ट्रांसऐमिनेज़ तथा डीहाइड्रोजिनेज़ शामिल होते हैं।

ख) अमोनिया क्रेब्स-चक्र से कीटोग्लूटरेट को तथा इलेक्ट्रान परिवहन तंत्र से NADH को निकाल लेती है। इसके परिणाम स्वरूप .... होता है।

ग) यूरियोटेलिक कशेरुकियों के यकृत् में यूरिया का संश्लेषण जिस उपापचयन दिशामार्ग से होता है उसे .... कहते हैं।

घ) यूरिकोटेलिक प्राणियों में नाइट्रोजन से यूरिक अम्ल का निर्माण जिस दिशामार्ग से होता है उसे .... कहते हैं।

ङ) मकड़ियाँ तथा बिच्छु अधिकांशतः .... का उत्सर्जन करते हैं, इसलिए इन्हें .... कहते हैं।

4.3 उत्सर्गी अंग

पिछले भाग में आपने उत्सर्गी उत्पादों तथा उनके निर्माण के विषय में पढ़ा। अब इस भाग में आप उन अंगों के विषय में पढ़ेंगे जिनके द्वारा उत्सर्गी पदार्थ बाहर को निकलते हैं।

उत्सर्गी अंग नाइट्रोजन अपशिष्ट पदार्थों को तो बाहर निकालते ही हैं, साथ ही शरीर में विद्यमान उन सभी पदार्थों की उस नियमित मात्रा को भी बाहर निकालते रहते हैं जो शरीर में सामान्य से अधिक मात्रा में पायी जाती है। इस प्रकार ये अंग प्राणी में एक स्थिर दशा बनाए रखने में अपना योगदान देते हैं जिसे होमियोस्टेसिस (homeostasis) अर्थात समस्थिति कहते हैं। ऐसी समस्थिति बनाए रखना इसलिए भी आवश्यक है जिससे पर्यावरण के उन संपूर्ण कारकों पर अधिकार किया जा सके जो अनावश्यक रूप से शरीर में परिवर्तन लाते हैं।

अनेक समुद्री प्रोटोजोओ तथा स्पंजों में कोई विशेष उत्सर्गी अंग नहीं होते। इसी प्रकार सीलेंटेरेटों में, जो कि अधिकतर समुद्री ही होते हैं, तथा एकाइनोडर्म में जो केवल समुद्र में ही पाए जाते हैं उत्सर्गी अंग नहीं होते। इन समुद्री अकशेरुकियों में अपने आवास के प्रति समपरासारी (iso-osmotic) दशा पायी जाती है, इसलिए इनमें जल एवं आयनी संतुलन के अंगों की आवश्यकता नहीं होती। इनमें नाइट्रोजन अपशिष्टों का विसर्जन तथा आयन-नियमन देह की सामान्य सतह के द्वारा ही सम्पन्न हो जाता है।

शेष सभी प्राणी-वर्गों में सुस्पष्ट अंग होते हैं जिनका कार्य परासारी नियमन, आयनी नियमन तथा नाइट्रोजन उत्सर्जन होता है। ये अंग इस प्रकार हैं: — प्रोटोज़ोआ तथा पोरिफेरनों की **संकुचनशील धानी** (contractile vacuoles), चपटे कृमियों, गोल कृमियों तथा ऐनेलिडों के वृक्कक अर्थात् **नेफ्रीडिया** (nephredia), क्रस्टेशियनों की **हरी (ग्रीन) ग्रंथियों** (green glands), ऐरेक्निडों की **कॉक्सल ग्रंथियां** (coxal glands), कीटों की **मैलपीगी नलिकाएं** (Malpighian tubules) तथा कशेरुकियों के **मेटानेफ्रिक गुर्दे** अर्थात **वृक्क**। नेफ्रिडियल नलिका अपने भीतरी सिरे पर बंद होती है अथवा **नेफ्रोस्टोम** (nephrostome) नामक एक कीपाकार संरचना द्वारा सीलोम अर्थात प्रगुहा में खुली होती है, इस पर निर्भर करते हुए नेफ्रीडिया को क्रमशः **प्रोटोनेफ्रीडिया** (protonephridia) तथा **मेटानेफ्रीडिया** (metanephridia) कहते हैं। मौलस्कों, क्रस्टेशियनों तथा ऐरेक्निडों के उत्सर्गी अंग वास्तव में रूपांतरित सीलोमोडक्ट (coelomoduct) ही होते हैं इसलिए ये यथार्थ नेफ्रीडिया नहीं होते। प्रोटोज़ोओं तथा स्पंजों की संकुचनशील धानियों को छोड़कर शेष सभी उत्सर्गी अंग या तो नलिकाएं होते हैं या बहुसंख्यक नलिकाओं के समुच्चय होते हैं।

4.3.1 प्रकार्यात्मक सिद्धांत

उत्सर्गी अंगों के विषय में अध्ययन करने से पहले परासरणता (ऑस्मोलेरिटी, osmolarity) तथा झिल्ली पारगम्यता की आधारभूत अभिधारणाओं के बारे में जान लेना जरूरी है। विलयन में घुले विलेय की मौजूदगी में परासरण दाब (osmotic pressure) का गुणधर्म आ जाता है। अन्य अनुबंधित गुणधर्मों की तरह किसी घोल का परासरण दाब अथवा उसका परासरण सांद्रण प्रति इकाई आयतन में मौजूद घुले हुए कणों की संख्या पर निर्भर करता है। घोल के रासायनिक सांद्रण को **मोलरता** (molarity अर्थात मोल/लिटर) में व्यक्त किया जाता है, लेकिन घोल के परासरण सांद्रण को **ऑस्मोलेरिटी** (osmolarity यानी ऑस्मोल/लिटर) द्वारा व्यक्त किया जाता है। आदर्श गैर-इलेक्ट्रोलाइटों (non-electrolytes) (जैसे सुक्रोज) के लिए एक मोलर घोल एक ऑस्मोल होता है। इसके विपरीत इलेक्ट्रोलाइट घोल में उसकी मोलरता से ऑस्मोलेरिटी उच्चतर होती है। उदाहरण के लिए, NaCl घोल अवस्था में Na^+ तथा Cl^- में वियोजित हो जाता है। अतः प्रत्येक NaCl अणु के लिए उसके घोल में दो आयनी कण होते हैं, एक Na^+ का और दूसरा Cl^- का। अतः NaCl का एक मोलर घोल लगभग दो ऑस्मोलर होता है। इसी प्रकार, $CaCl_2$ का एक मोलर घोल लगभग तीन ऑस्मोल होता है। परिभाषा के रूप में, एक ऑस्मोल (osmole) विलेय की वह मात्रा है, जिसका एक लीटर जल में घुलने पर उतना ही परासरण दाब होता है जितना एक आदर्श गैर-इलेक्ट्रोलाइट के एक मोल का एक लीटर जल में घुलने पर होता है। यदि दो घोलों (घोल

A तथा घोल B) का एक ही परासरण सांद्रण हो तो उन्हें एक दूसरे के प्रति **समपरासारी** (iso-osmotic) कहा जाता है। यदि घोल A में घोल B की तुलना में अधिक ऑस्मोलेरिटी हो तो उसे घोल B की तुलना में **अधिपरासारी** (hyperosmotic) या घोल B को घोल A की तुलना में **अधःपरासारी** (hypoosmotic) कहेंगे।

उत्सर्गी अंगों के द्वारा मूत्र-निर्माण की प्रक्रिया में दो क्रियाएं आती हैं :

i) जल (विलायक) तथा छोटे आकार के घुले कणों (विलेयों) का उत्सर्गी अंगों की अवकोशिका में से अंतराकाशी द्रव एवं रक्त में होने वाली गति तथा ii) मध्यवर्ती कोशिकाओं, रक्त कोशिकाओं तथा वृक्कीय अंग कोशिकाओं की प्लाज्मा झिल्ली पर से द्रव की वापसी।

प्राणी जगत में नाना प्रकार के उत्सर्गी अंग पाए जाते हैं लेकिन उनके कार्य करने का सिद्धांत मूलतः एक ही जैसा है। प्रत्येक मामले में वृक्क के कार्य का पहला चरण यह होता है कि वृक्क-अंगों की नलिकाकार अवकाशिका में **प्राथमिक मूत्र** (primary urine) नामक एक तरल पदार्थ निकलता है। यह तरल उस रक्त अथवा उस देह-तरल के साथ समपरासारी होता है जिससे यह उत्पन्न हुआ है। इस प्राथमिक मूत्र की संघटना तथा इसका आयतन बाद में दो चीजों के द्वारा परिवर्तित होता है — पहला उपयोगी पदार्थ, जैसे ग्लूकोस का रक्त में **पुनःअवशोषण** होना और दूसरा अनुपयोगी पदार्थों जैसे यूरिया का रक्त से नलिकीय तरल में **स्राव** होना। पुनःअवशोषण तथा स्राव दोनों ही में सक्रिय परिवहन होता है। प्राथमिक मूत्र में होने वाले संघटन और आयतन के इन रूपांतरणों के फलस्वरूप मूत्र बनता है, जो तरल होता है तथा जिसे अंततः शरीर बाहर निकाल देता है।

प्राथमिक मूत्र के निर्माण की क्रियाविधियां अलग-अलग प्राणियों में अलग-अलग होती हैं। अनेक उदाहरणों में यह एक भौतिक प्रक्रिया परानिस्यंदन अथवा **अल्ट्राफिलट्रेशन,** (ultrafiltration) द्वारा बनता है। इस प्रक्रिया में रक्त को जलस्थैतिक दाब (hydrostatic pressure) द्वारा बलपूर्वक एक या अधिक झिल्लियों में से गुजार कर वृक्क नलिका की अवकाशिका में पहुंचाया जाता है। परिणामी नलिकीय द्रव को **परानिस्यंद** (ultrafilterate) कहते हैं और यही प्राथमिक मूत्र होता है। यह अपनी ऑस्मोलेरिटी एवं छोटे आकार के विलेयों की संघटना में रक्त के समान होता है। लेकिन इसमें रक्त कोशिकाओं का तथा 6700 से अधिक अणुभार के प्रोटीनों का अभाव होता है सिद्धांततः यह प्रक्रिया उसी तरह की होती है जैसी कि आप रसायनशास्त्र प्रयोगशाला में किसी विलयन में से निलंबित कणों को निकाल देने के लिए निस्यंदन (फिल्ट्रेशन) करते हैं। उक्त प्रयोग करते समय आपने देखा होगा कि जो कण फिल्टर-पेपर के छिद्रों के आकार से बड़े होते हैं वे फिल्टर-पेपर के ऊपर रह जाते हैं और जो कण फिल्टर-पेपर के छिद्रों से गुजरने लायक छोटे होते हैं वे गुरुत्व बल के द्वारा नीचे फिल्ट्रेट में आ जाते हैं। इसी तरह शरीर में छाना जाने वाला घोल रक्त है, फिल्टर-पेपर मध्यवर्ती कोशिकाओं की छिद्रित झिल्लियां हैं, गुरुत्व बल रक्त का जलस्थैतिक दाब है तथा निस्यंद अल्ट्राफिल्ट्रेट है। केवल कुछ उदाहरणों (जैसे कीटों में) प्राथमिक मूत्र हीमोलिम्फ के समपरासारी होते हुए भी अपनी संघटना में हीमोलिम्फ से बहुत भिन्न होता है, यह हीमोलिम्फ से नलिकीय अवकाशिका में पदार्थों के स्राव (सक्रिय परिवहन) द्वारा बनता है। प्राथमिक मूत्र परानिस्यंदन से बनता है या स्राव से बनता हो, बाद में अणुओं के पुनःअवशेषण एवं स्राव द्वारा उसका आयतन तथा उसकी संघटना, दोनों ही बदल जाते हैं। अगले उपभाग में हम विभिन्न उत्सर्गी अंगों की संरचना तथा उनके कार्यों के विषय में अध्ययन करेंगे।

बोध प्रश्न 2

क) कॉलम अ में दिए गए प्राणियों को कॉलम ब में दिए गए उत्सर्गी अंगों से मिलाइए।

अ	ब
i) प्रोटोज़ोआ	क) वृक्क
ii) कृमि	ख) संकुचनशील धानी
iii) क्रस्टेशियन प्राणी	ग) नेफ्रिडिया
iv) कीट	घ) हरी ग्रंथियां
v) कशेरुकी प्राणी	च) मैलपीगी नलिकाएं

ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

i) नेफ्रिडियल नलिका भीतरी सिरे पर बंद है अथवा नेफ्रोस्टोम नामक एक कीपाकार संरचना द्वारा खुली है, इस आधार पर ऐसे नेफ्रीडिया को क्रमशः .... तथा .... कहते हैं।

ii) यदि दो विलयनों का परासारी सांद्रण एक ही हो तब ऐसे विलयनों को .... कहते हैं।

4.3.2 संकुचनशील धानी

संकुचनशील धानी सदैव अलवणजलीय प्रोटोजोआ तथा स्पंजों मे पायी जाती है, परन्तु, वे प्रायः इन वर्गों के समुद्री उदाहरणों में नहीं होती है। अलवणजलीय प्राणी अपने माध्यम अलवण जल के प्रति अधिपरासारी (hyperosmotic) होता है तथा इनकी सतह जल के लिए पारगम्य होती है, इन दो कारणों से ऐसा प्राणी लगातार उस जल को शरीर से बाहर को पम्प करके निकलने की कोशिश करता है जो अन्यथा परासारण द्वारा भीतर को प्रविष्ट होता रहता है। जब कभी किसी अलवणजलीय प्रोटोज़ोआ को तनु समुद्री जल में रख दिया जाता है तब उसकी धानी क्रिया कम हो जाती है। उन समुद्री स्पीशीज़ में जिनमें संकुचनशील धानी होती है, जैसे कुछ सिलिएटों में, समुद्री जल को तनु कर देने पर धानी की क्रिया बढ़ जाती है। अलवणजलीय प्रोटोज़ोआ की संकुचनशील धानी के भीतर का द्रव उसे घेरे रहने वाले साइटोप्लाज़्म से अधःपरासारी होता है, हालांकि अलवणजल के प्रति वह अब भी अधिपरासारी ही होता है। ये प्रेक्षण इस परिकल्पना के साथ सुसंगत बैठते हैं कि संकुचनशील धानियां मूलतः जल संतुलन के अंग हैं और वे अधिशेष परासारी जल को बाहर निकाल देने के लिए पम्पों जैसा कार्य करती हैं। प्रोटोज़ोआ तथा स्पंजों में नाइट्रोजनी उत्पाद मुख्यतः अमोनिया होती है और यदि संकुचनशील धानियों का उनके उत्सर्जन में कोई योगदान हो भी तो उसे केवल गौण ही मानना चाहिए।

सूक्ष्मदर्शीय प्रेषणों से पता चला है कि प्रटोजोअन की संकुचनशील धानी में एक चक्रीय कार्यप्रक्रिया पायी जाती है। यह धीरे-धीरे एक द्रव से भर जाती है इसका आयतन तब तक बढ़ता रहता है (डायस्टोल, diastole) जब तक कि वह उच्चतम सीमा का आकार प्राप्त नहीं कर लेता उसके बाद यह कोशिका की परिसीमा की ओर गति करती है तथा एकाएक अपने अंतर्द्रव को बाहर की ओर निकाल कर छोटे आकार की हो जाती है (सिस्टोल, systole)। धानी के भीतर किस प्रकार द्रव भरता है तथा धानी किस प्रकार फूट कर द्रव निकालती है, इन तथ्यों की अभी तक स्पष्ट जानकारी नहीं मिल पायी है। इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से किए गए अध्ययनों से पता चला है कि संकुचनशील धानी में उसकी अवकाशिका को घेरती हुए एक एकल झिल्ली होती है। इस झिल्ली के चारों ओर स्थित सघनतः सटे हुए सूक्ष्म आशय (vesicles) होते हैं जिनके चारों ओर माइटोकॉन्ड्रिया की एक परत होती है।

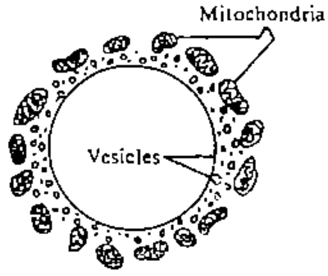

चित्र 4.4 : अमीबा की संकुचनशील धानी।

ये माइटोकॉन्ड्रिया अनुमानतः धानी द्वारा किए जाने वाले परासरण कार्य के लिए ऊर्जा प्रदान करते हैं। छोटे आशय अपने अंतःद्रवों को अपनी झिल्लियों के संलग्न द्वारा संकुचनशील धानी में छोड़कर खाली हो जाते हैं। नवीनतम मतों के अनुसार, छोटे आशयों में प्रारम्भ में एक द्रव होता है जो साइटोप्लाज़्म के समपरासारी होता है। बाद में सक्रिय परिवहन द्वारा लवणों के बाहर निकालने और विशेषकर पोटैशियम के निकाल देने से ये द्रव अधःपरासारी हो जाते हैं। अब ये अधःपरासारी आशय संकुचनशील धानी में संगलित होकर उसमें खुल जाते हैं और उससे डायस्टोल उत्पन्न करते हैं। ऐसा भी माना जाता है कि धानी की झिल्ली में पेशीतंतुक के संकुचन से ही कदाचित सिस्टोल के दौरान द्रव बाहर को निकाल दिया जाता है।

4.3.3 कृमियों के वृक्कक

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि वृक्कक (nephridia) अनेक अकशेरुकियों में पायी जानेवाली उत्सर्गी नलिकाएं होती हैं। सभी वृक्कक नेफ्रीडियोपोर (nephridiopore) नामक एक उत्सर्गी छिद्र द्वारा बाहर की ओर खुलती हैं, लेकिन कुछ में उनका भीतरी सिरा बंद होता है तथा कुछ अन्य वृक्कक **नेफ्रीडियोस्टोम** (nephridiostome) नामक एक सिलियायुक्त कीप द्वारा भीतर देह गुहा में खुलती

हैं। इनमें से पहले प्रकार के वृक्कक को **प्रोटोनेफ्रीडिया** (protonephridia) तथा दूसरे प्रकार के वृक्कक को **मेटानेफ्रीडिया** (metanephridia) कहते हैं।

प्रोटोनेफ्रीडिया अधिक आदिम होते हैं तथा मुख्य असीलोमी (acaelomate) एवं कूटसीलोम प्राणियों (pseudocoelomate) में पाए जाते हैं। किसी किसी प्राणी में दो या दो से अधिक अति विशाखित प्रोटोनेफ्रीडिया हो सकते हैं, जिनमें से प्रत्येक के भीतरी सिरे पर अनेक बल्ब जैसी फूली-सी संरचनाएं होती हैं जिन्हें **लौ-कोशिकाएं** (flame cells) अथवा **लौ-बल्ब** (flame bulbs) कहते हैं। प्रत्येक लौ-कोशिका की अवकाशिका में सिलिया अर्थात् पक्ष्माभ का एक गुच्छा होता है (चित्र 4.5)। ये लौ-कोशिकाएं चपटे कृमियों तथा नीमर्टीनों में प्रायः पायी जाती हैं। कुछ सीलोमी कृमियों में जिनमें प्रोटोनेफ्रीडिया होते हैं जैसे पौलीकीटों में लौ-बल्बों के स्थान पर **सॉलीनोसाइट** होते हैं। सॉलीनोसाइट (solenocytes) में लौ-कोशिकाओं में पाए जाने वाले सिलियरी गुच्छे के स्थान पर अवकोशिका में एक अकेला प्रक्षेपी फ्लैजेलम अर्थात् कशाभ होता है (चित्र 4.6)। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि सिलियरी गुच्छे अथवा फ्लैजेलम की ऊर्मिल लहर-जैसी गति से एक ऐसा पर्याप्त ऋणात्मक (नेगेटिव) दवाव पैदा होता है जिससे छनन होता है, और बलपूर्वक तरल नलिका में आगे को बढ़ता है। लौ-कोशिका व्यवस्था केवल बिना परिसंचरण तंत्र वाले प्राणियों में ही कार्य करती है और पदार्थों को केवल ऊतक द्रवों में से लेती है।

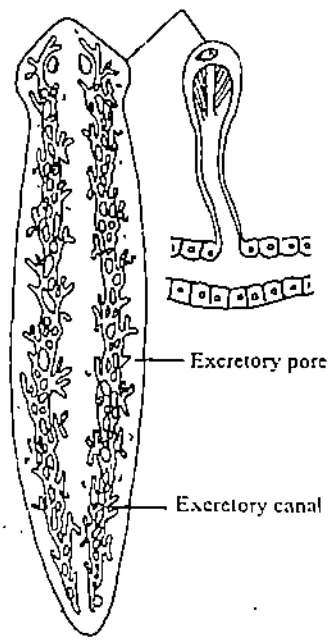

चित्र 4.5 : प्लेनेरियन में उत्सर्गी अंग।

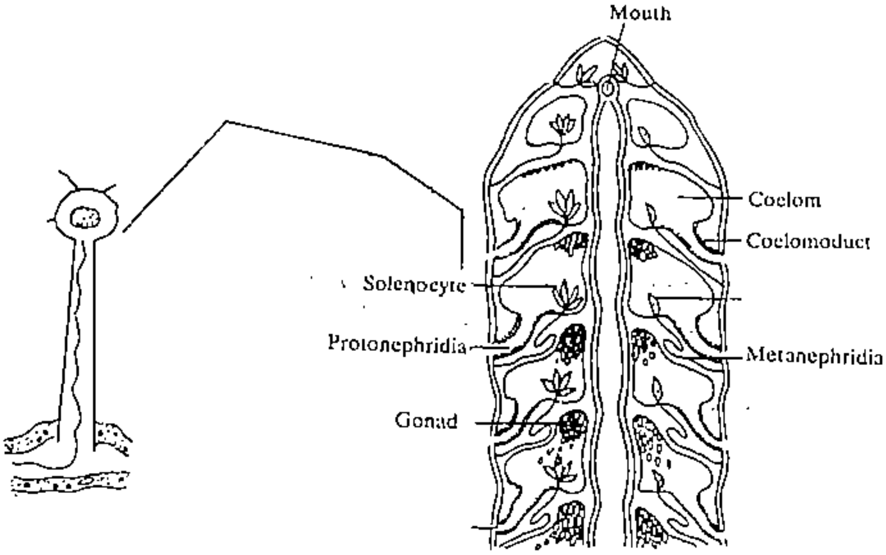

चित्र 4.6 : एनालिड में उत्सर्गी अंग।

मेटानेफ्रीडिया सीलोमेट प्राणी जैसे ऐनेलिडों में पाए जाते हैं। इन प्राणियों में एक बंद परिसंचरण तंत्र का विकास हुआ है जो उत्सर्गी अंगों के साथ निकट संबंध वनाए रखता है। इस संबंध के परिणामस्वरूप इन दो तंत्रों के बीच पदार्थों का सीधा आदान-प्रदान हो सकता है। इन कृमियों में नेफ्रोस्टोम के सिलियरी जाल में से सीलोमी द्रव के छनन के कारण आरंभ में नेफ्रीडियम में एक समपरासारी तरल प्रकट होता है। जैसे-जैसे यह द्रव विस्तृत लूप वनाती हुयी नलिका में से गुजरता है वैसे-वैसे इसमें से लवण निकाल लिया जाता है और अंत में एक तनु मूत्र का बाहर निष्कासन होता है।

4.3.4 मौलस्का के वृक्क

मौलस्कों में, सीलोम का प्रतिदर्श हृदयवरणी गुहा (pericardial cavity) तथा वृक्कों एवं गोनडों की गुहाओं के रूप में मिलता है। हृदयवरणी गुहा एक वृक्क-हृदयावरणी वाहिनी (renopericardial duct) के माध्यम से वृक्क गुहा में खुलती है (चित्र 4.7)। इस प्रकार मौलस्क वृक्क मेटानेफ्रीडियम के प्रकार का एक रूपांतरित सीलोमवाहिनी होता है जो एक सिरे पर तो हृदयवरणी गुहा में खुलता है तथा दूसरे सिरे पर प्रावार गुहा (mantle cavity) में खुलता है। मौलस्क वृक्क में प्रारम्भिक तरल हृदय की भित्ती में से रक्त के परानिस्यंदन द्वारा बनता है। ग्लूकोस जैसे मूल्यवान पदार्थों का पुनःअवशेषण तथा अवांछित यौगिकों का स्राव बाद में होता है जिससे अंतिम मूत्र बन जाता है। ऐसा प्रमाण मिला

है कि ऐबेलोन प्राणी *हेलियोटिस (Haliotis)* में ग्लूकोस का पुनःअवशेषण मुख्यतः बाएं वृक्क में होता है तथा अवांछित यौगिकों का स्राव दाहिने वृक्क में होता है। रक्त का जलस्थैतिक दबाव निस्यंदक दबाव प्रदान करता है तथा उलटा दबाव पड़ने पर मूत्र-निर्माण रुक जाता है।

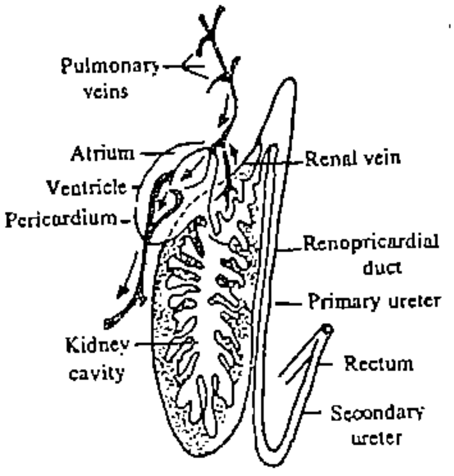

चित्र 4.7 : घोंघे में वृक्क तथा वृक्क का परिहृद के साथ संबंध।

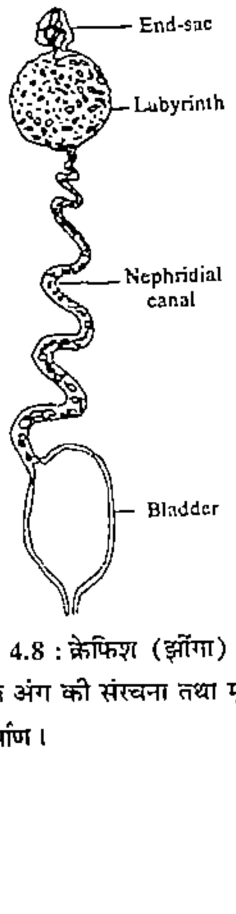

चित्र 4.8 : क्रेफिश (झींगा) में वृक्क अंग की संरचना तथा मूत्र निर्माण।

4.3.5 क्रस्टेशियनों की हरी ग्रंथियां

क्रस्टेशियनों में एक जोड़ी वृक्कीय अंग होते हैं, तथा उसमें से प्रत्येक में ये भाग पाए जाते हैं : एक भीतर से बंद अंत-थैला (end sac) जिसके साथ एक लेबिरिंथ (labyrinth) लगा होता है। एक लम्बी कुडलित नेफ्रीडियम नलिका, और एक आशय (bladder) (चित्र 4.8)। यह आशय एक उत्सर्गी छिद्र के द्वारा बाहर को खुलता है जो या तो ऐंटेनों अर्थात् शृंगियों के आधार (base) पर खुलता है जहां इसे **ऐन्टेनरी ग्रंथियां** (antennary glands) कहते हैं या मैक्सिला अर्थात् जंभिका के आधार पर खुलता है जहां इसे **मैक्सिलरी ग्रंथियां** (maxillary glands) कहते हैं। अनेक उदाहरणों से ज्ञात होता है कि अंत थैला हरे रंग का होता है और इसी कारण इसे **हरी ग्रंथि** का नाम दिया जाता है। समुद्री उदाहरणों में अलवणजलीय उदाहरणों की अपेक्षा नलिका छोटी होती है, ऐसा इसलिए होता है कि अलवणजलीय उदाहरणों में नलिका के भीतर एक अतिरिक्त लवण-पुनःअवशोषी खण्ड होता है।

क्रस्टेशियनों में मूत्र निर्माण में तीन क्रियाएं होती हैं — छनन, पुनःअवशेषण तथा स्राव। क्रेफिश की ऐंटेनरी ग्रंथि के अंत थैले में समपरासारी परानिस्यंद में से क्लोराइड का पुनः अवशेषण तब होता है जब परानिस्यंद नलिका में से प्रवाह कर रहा होता है इसके कारण उत्सर्जित अंतिम मूत्र अधःपरासारी होता है। क्रस्टेशियनों में मूत्र का सांद्रण कम या ज्यादा होता है जो इस बात पर निर्भर करता है कि ये प्राणी अलवणजलीय हैं या समुद्री। अलवणजलीय क्रस्टेशियनों में मूत्र बहुत तनु होता है लेकिन न्यूनखारी जल के क्रस्टेशियनों में मूत्र रक्त की आस्मोलेरिटी के निकट होता है। ऐसा कदाचित समुद्री उदाहरणों की नलिका में लवण-पुनः अवशेषी खण्ड के न होने के कारण होता है। रक्त का जलस्थैतिक दबाव ही छनन प्रक्रिया को बल प्रदान करता है।

4.3.6 कीटों की मैलपीगी नलिकाएं

मैलपीगी नलिकाएं (Malpighian tubules) तथा पश्च आहार नाल दोनों ही मिलकर कीटों का उत्सर्गी तंत्र बनाती हैं। ये नलिकाएं दो से लेकर कई-कई सौ की संख्या में होती हैं। प्रत्येक नलिका इस बात में प्रोटोनेफ्रीडियम के समान होती है कि कीटों में इसका एक सिरा बंद होता है तथा दूसरा सिरा अंतड़ी में मध्यांत्र तथा पश्चांत्र के बीच खुलता है। पूरी नलिका **हीमोलिम्फ** में डूबी रहती है।

मैलपीगी नलिकाओं में प्राथमिक मूत्र का बनना, स्राव के कारण होता है न कि परानिस्यंद के द्वारा। मैलपीगी नलिकाओं की कोशिकाएं हीमोलिम्फ से पोटैशियम को सक्रिय रूप में नलिका से भीतर

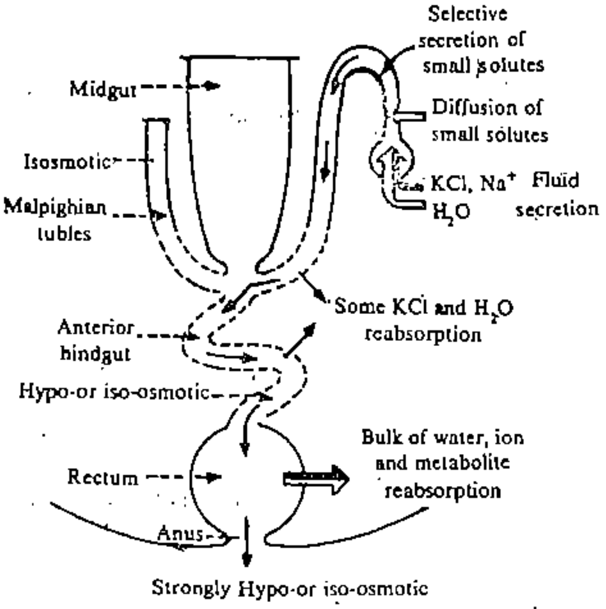

चित्र 4.9 : कीटों में मैलपीगी नलिकाओं का कार्य।

पहुंचाती हैं और उसका सांद्रण बढ़ाती हैं। इसके परिणामस्वरूप जल भी निष्क्रीय परासरण द्वारा प्रविष्ट हो जाता है और उसके बाद निम्न अणु भार वाले पदार्थ जैसे लवण, शर्करा तथा यूरिक अम्ल विसरण द्वारा भीतर पहुंच जाते हैं। इस परिघटना को आप चित्र 4.9 में समझ सकते हैं। कीटों में मूत्र-निर्माण की दर उनके हीमोलिम्फ में K^+ के सांद्रण के अनुपात में होती है। इस प्रकार कीटों के उत्सर्गी अंगों में मूत्र-प्रवाह को प्रेरित करने वाला प्रथम उत्तरदायी कारक K^+ का सक्रिय परिवहन है। जैसे-जैसे पोटैशियम-सम्पन्न समपरासारी नलिकीय तरल आहार नाल की तरफ बढ़ता है वैसे-वैसे यूरिक अम्ल जैसे अणुओं का स्राव होता है। परन्तु तरल की संघटना का मुख्य रूपांतरण पश्चांत्र के भीतर होता है, विशेषकर मलाशय के भीतर। मलाशय में जल का तथा K^+ जैसे कार्यिकीयतः महत्वपूर्ण विलेयों का विस्तृत पुनः अवशेषण होता है। यूरिक अम्ल पश्चांत्र में जल घुलनशील पोटैशियम यूरेट के रूप में प्रविष्ट होता है। वहां पर यह अवक्षेपित हो जाता है जिससे और ज्यादा जल को वापिस निकल लेने में सहायता मिलती है। जो कीट तरल पर जीवन बिताते हैं या जिनके आहार में गीला भोजन शामिल होता है वे भारी मात्राओं में अधःपरासारी तरल मूत्र का उत्सर्जन करते हैं। इसके विपरीत जो कीट सूखे आहार पर निर्वाह करते हैं वे अत्यन्त सूखी विष्टा निकालते हैं। स्थलीय कीटों में जल के पुनःअवशेषण को सुविधापूर्ण बनाने के लिए इनके पश्चांत्र में कुछ रूपांतरण होते हैं जिन्हें **मलाशय ग्रंथियां** (rectal glands) अथवा **मलाशय पैड** (rectal pads) कहते हैं।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

क) प्रोटोनेफ्रीडियम में भीतर की ओर समाप्त होती हुई अनेक बल्ब-जैसी संरचनाएं होती हैं जिन्हें .... कहते हैं।

ख) एक मौलस्क *हेलियोटिस* में ग्लूकोस का पुनःअवशेषण प्रधानतः .... में होता है, जबकि अवांछित यौगिकों का स्राव .... में होता है।

ग) समुद्री क्रस्टेशियनों की तुलना में अलवणजलीय क्रस्टेशियनों का मूत्र बहुत तनु होता है, ऐसा इसलिए होता है क्योंकि अलवणजलीय क्रस्टेशियनों में हरी ग्रंथि की नलिका में .... होता है।

घ) कीटों की मैलपीगी नलिकाएं .... के समान होती हैं क्योंकि इनमें से प्रत्येक नलिका का एक सिरा बंद होता है और दूसरा सिरा अंतड़ी में खुलता है।

4.3.7 कशेरुकी वृक्क

प्रतिरूपतः प्रत्येक कशेरुकी में एक जोड़ी गुर्दे अर्थात् वृक्क होते हैं जो "छनन-पुनःअवशेषण-स्राव" (filteration-reabsorption-secretion) के सिद्धांत पर कार्य करते हैं। केवल कुछ टीलियोस्ट मछलियों में ही गुर्दा अकोशिकागुच्छीय (aglomerular) होता है तथा वह अवशेषण-पुनःअवशेषण-स्राव (absorption-reabsorption-secretion) के सिद्धांत पर कार्य करता है जैसे कि कीटों की मैलपीगी नलिकाओं में होता है। कशेरुकी गुर्दे की कार्यात्मक इकाई **नेफ्रॉन** (nephron) अथवा **मूत्रजन नलिका** (uriniferous tubule) होती है। एक छोटी मछली के गुर्दों में कुछ ही दर्जन नेफ्रॉन हो सकते हैं जबकि एक बड़े स्तनधारी के प्रत्येक गुर्दे में कई-कई लाख नेफ्रॉन हो सकते हैं। स्तनधारियों में नेफ्रॉन के प्रारम्भ में एक वृक्क-कणिका (renal corpuscle) अथवा मैलपीगी पिंड (Malpighian body) होता है। इस कणिका के भीतर एक दोहरी दीवार वाल प्याला बोमैन-केप्सूल (Bowman's capsule) होता है तथा इसके भीतर बंद रक्त केशिकाओं की एक गांठ होती है जिसे ग्लोमेरूलस (glomerulus) कहते हैं (चित्र 4.10)।

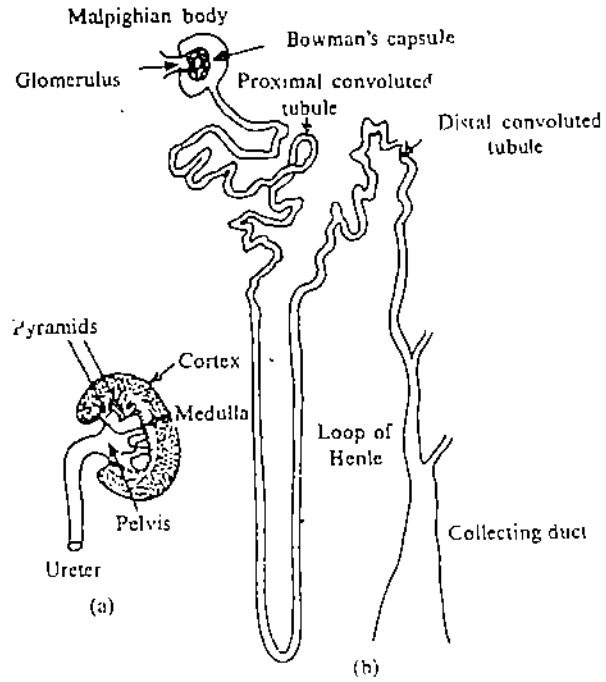

चित्र 4.10 : (a) स्तनधारी वृक्क तथा (b) नेफ्रॉन का योजना आलेख।

रक्त वृक्क में एक वृक्क धमनी (renal artery) द्वारा पहुंचता है जो विशाखित और पुनःउपविशाखित होती हुई इंटरलोब्यूलर धमनियों (interlobular arteries) में और फिर अंततः **अभिवाही धमनिकाओं** (afferent arterioles) में बंट जाती है, ये धमनिकाएं ग्लोमेरुलस का केशिका जाल बनाती हैं। केशिकाओं के संयोजन से बनने वाली **अपवाही धमनिका** (efferent arteriole) रक्त को बोमैन-केप्सूल से बाहर ले जाती है। बोमैन-केप्सूल से पीछे की ओर को एक लम्बी संवलित नलिका निकली होती है जो क्रमशः दो भागों, **समीपस्थ** (proximal) तथा **दूरस्थ** (distal) संवलित नलिकाओं में विभेदित होती है। विभिन्न नेफ्रॉनों से आने वाली दूरस्थ संवलित नलिकाएं परस्पर जुड़कर **संग्राही नलिकाएं** (collecting tubules) बनाती है जो मूत्र को वृक्क द्रोणि (renal pelvis) में ले जाती हैं जहां से मूत्रवाहिनियां (ureters) निकलती हैं। लेकिन पक्षियों तथा स्तनधारियों में एक नया U की आकृति का हेयर पिन जैसा खण्ड समीपस्थ तथा दूरस्थ नलिकाओं के बीच में बन जाता है जिसे **हेन्ले का लूप** (Henle's loop) कहते हैं। आगे के अनुच्छेदों में हम कशेरुकी वृक्क में पायी जाने वाली संरचनात्मक विभिन्नताओं के विषय में पढ़ेंगे।

कशेरुकी वृक्क की संरचनात्मक विभिन्नताएं

कशेरुकी वृक्क की संरचना सब में एक समान नहीं है। स्तनधारी वृक्क में एक बाहरी कणिकीय **कॉर्टेक्स** (cortex) होता है तथा एक भीतरी रेखित **मेड्यूला** (medulla) होता है (चित्र 4.8a)। कॉर्टेक्स का

कणिकीय स्वरूप उसमें पाए जाने वाले ग्लोमेरुलसों के कारण होता है। मेडुला का रेखित स्वरूप उसमें पायी जाने वाली समवाहिकाओं तथा नेफ्रॉनों की नलिकाओं की समांतर व्यवस्था के कारण होता है। मछलियों, उभयचरों तथा सरीसृप में वृक्क नलिकाएं छोटी तथा बिना हेन्ले लूप के होती हैं। तथा उनमें कॉर्टेक्स तथा मेडुला के क्षेत्रों का कोई स्पष्ट विभेदन नहीं होता। पक्षियों में नेफ्रॉनों की कुछ सीमा तक स्थानपरक संघटना होती है जिससे एक छोटा केंद्रीय मेडुला बाहरी कार्टेक्स से अलग दिखायी पड़ता है। हेन्ले के लूप का पाया जाना ही वह चीज है जिसके कारण पक्षी एवं स्तनधारी का वृक्क अधिपरासारी मूत्र बना सकने में समर्थ होता है। अन्य कशेरुकियों में मूत्रवाहिनीय मूत्र (ureteral urine) या तो रक्त के अधःपरासारी होता है या अधिक से अधिक उसके समपरासारी होता है। मगर स्थलीय सरीसृप तथा पक्षियों में अवस्कर (cloaca) में जल के पुनः अवशेषण के कारण एक अर्धठोस अथवा ठोस मूत्र बनता है। पक्षियों तथा स्तनधारियों में मूत्रवाहिनी का मूत्र स्वयं तो रक्त की तुलना में अधिक परासारी होता है। पक्षियों के वृक्क में प्राप्त होने वाली सर्वाधिक ऑस्मोलेरिटी प्लाज़्मा की तुलना में केवल लगभग दो गुनी होती है। स्तनधारी में वृक्क की मूत्र सांद्रणकारी क्षमता प्राणी के आवास से संबंधित है। मरुस्थलीय प्राणी बहुत सांद्रित मूत्र,बनाते हैं जबकि अलवणजलीय प्राणियों में बहुत तनु मूत्र बनता है। कुछ मरुस्थलीय स्तनधारी तो इतना गाढ़ा मूत्र तक बना सकते हैं जो प्लाज़्मा की तुलना में 25 गुना अधिक सांद्रित होता है। इसके विपरीत बीवर (beaver) नामक प्राणी जिसे अपने पर्यावरण में प्रचुर जल उपलब्ध होता है, के वृक्कों में मूत्र को सांद्रित करने की क्षमता मात्र साधारण ही होती है।

स्तनधारी वृक्कों के मूत्र को सांद्रित करने की क्षमता का हेन्ले के लूप की लम्बाई से सीधा संबंध है। उन प्रणियों में, जिनके मूत्र सबसे ज्यादा सांद्रित होते हैं, (जैसे रेत के चूहे में) ये लूप बहुत लम्बे होते हैं। इसी प्रकार जिन प्राणियों में मूत्र को सांद्रित करने की क्षमता सीमित होती है (जैसे की बीवर में) उनमें लूप छोटे होते हैं। इसके विपरीत जिन स्तनधारियों में मूत्र को सांद्रित करने की क्षमता बीच के स्तर की होती है उनमें वृक्कों में छोटे और लम्बे दोनों ही प्रकार के लूप होते हैं। चूंकि हेन्ले का लूप एक U-आकार की नलिका होती है जो मेडूला में दबी होती है, (जैसे कि मनुष्य और खरगोश में) इसलिए लम्बे लूपों के होने का अर्थ है कि मेडुला भी मोटा होगा। अतः स्तनधारियों में वृक्कीय कॉर्टेक्स तथा मेडुला की परस्पर आपेक्षित मोटाई का संबंध इन प्राणियों में होने वाले मूत्र-सांद्रण से है। उन उदाहरणों में जिनमें मूत्र सांद्रता अति निम्न होता है उनमें मेडुला बहुत पतला और छोटा होता है जबकि उन स्पीशीज़ में जिनमें मूत्र बहुत ज्यादा सांद्रित होता है मेडुला मोटा और बड़ा होता है। इसको समझने के लिए जलीय, सामान्य थलीय तथा मरुस्थलीय, तीन प्रकार के पर्यावरणों में रहने वालों कृतकों (rodents) के मेडुल की मोटाई की तुलना स्पष्ट कर देती है (चित्र 4.11 देखिये)।

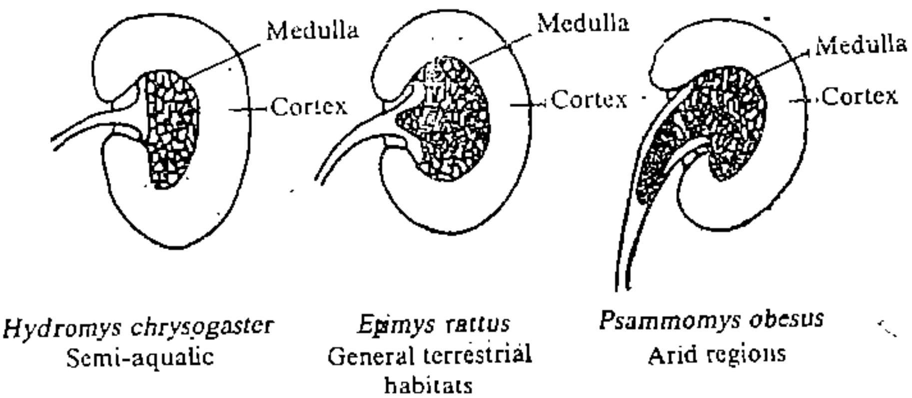

चित्र 4.11 : विभिन्न पर्यावरणों के तीन कृतकों के वृक्कों की तुलना।

यह ठीक है कि स्तनधारी वृक्क में निश्चय ही अधिपरासारी मूत्र बनाने की क्षमता होती है, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि स्तनधारी हमेशा ही अधिपरासारी मूत्र बनाता हो। स्तनधारियों में मूत्र की ऑस्मोलेरिटी एवं उसके आयतन का संबंध जल के अंतर्ग्रहण एवं बाहरी तापमान से है। यदि यह मान लिया जाए कि मनुष्य में प्लाज़्मा सांद्रण लगभग 300 मिली ऑस्मोल/लिटर है तो उसके मूत्र का परासरण सांद्रण 50 से 1400 मिली ऑस्मोल/लीटर के बीच में कहीं भी हो सकता है। अतः शरीर में जल संरक्षण

की आवश्यकता पर निर्भर करते हुए मानव वृक्क में यह क्षमता है कि वह एक अत्यन्त तनु अधःपरासारी मूत्र से लेकर अत्यधिक सांद्रित अधिपरासारी मूत्र तक का निर्माण कर सकता है। मूत्र की ऑस्मोलेरिटी में कुत्ते में 50 से 2300 मिली ऑस्मोल/लीटर तक तथा मरुस्थलीय चूहे में 50 से 5000 मिली ऑस्मोल/लीटर तक का सीमापरास पाया जाता है। मूत्र की ऑस्मोलेरिटी निम्नतर कशेरुकियों में भी घटाई-बढ़ाई जा सकती है यद्यपि ऐसा एक सीमापरास में ही हो सकता है। जैसे, जल के भीतर रहते हुए मेंढक बहुत मात्रा में अति तनु मूत्र बनाता है। लेकिन जब यह शुष्क वायु में रखा जाता है तब यह कुछ अधिक सांद्रित मूत्र कम मात्रा में निकालता है। मेंढक में ऐसा ग्लोमेरूलर निस्यंदन को कम करके तथा **ऐंटीडाइयूरेटिक हॉर्मोन** (antidiuretic hormone) के प्रभाव से नलिकीय पुनः अवशेषण को बढ़ा कर होता है, यह **हॉर्मोन हाइपाथैलेमो-हाइपोफिसियल** (hypo-thalamo-hypophyseal) **तंत्र** से स्रवित होता है। लेकिन जल तथा शुष्क वायु दोनों ही स्थितियों में मेंढक में बनने वाला मूत्र रक्त के प्रति अधःपरासारी ही होता है, केवल शरीर में जल-स्तर पर निर्भर करते हुए अधःपरासारिता की मात्रा बदलती है। अगले भाग में हम कशेरुकी वृक्क के विभिन्न भागों में मूत्र-निर्माण का अध्ययन करेंगे।

ग्लोमेरूलस

इससे पहले आप पढ़ चुके हैं कि स्तनधारी नेफ्रॉन में एक वृक्क कणिका होती है। इस वृक्क कणिका में एक बोमैन केप्सूल होता है जिसके भीतर ग्लोमेरूलस या केशिका गुच्छा होता है। ग्लोमेरूलस में अभिवाही धमनिका के द्वारा प्रविष्ट होता हुआ रक्त, बोमैन-केप्सूल की अवकाशिका में फिल्टर होता है जिससे परानिस्यंद (ultrafilterate) प्राप्त होता है। ग्लोमेरूलर निस्यंद, प्लाज़्मा के लगभग समपरासारी होता है और उसमें पाए जाने वाले आयन तथा छोटे आकार के अन्य विलेय अनिवार्यतः उसी सांद्रण पर होते हैं जैसे कि वे प्लाज़्मा में होते हैं। ग्लोमेरूलस की केशिकाओं के रक्त दाब के कारण ही निस्यंद होता है।

समीपस्थ संवलित नलिका

प्लाज़्मा के समपरासारी ग्लोमेरूलर निस्यंद समीपस्थ संवलित नलिका (proximal convoluted tubule) में प्रविष्ट होता है जहां इसका आयतन लगभग 80% तक कम हो जाता है। तरल आयतन में होने वाली यह कमी नलिकीय तरल में से NaCl, ग्लूकोस, ऐमीनो अम्लों आदि के सक्रिय पुनः अवशोषण के द्वारा हो जाती है। जैसे ही ये विलेय निकल जाते हैं वैसे ही नलिकीय तरल अधःपरासारी हो जाता है तथा नलिकीय दीवार के बाहर का अंतराली तरल अधिपरासारी हो जाता है। ऐसा होने से नलिका के भीतर से जल का बाहर की ओर को निष्क्रिय विसरण हो जाता है जिससे नलिकीय तरल तथा नलिका को घेरने वाले कॉर्टेकीय अंतराल के बीच एक समपरासारी दशा प्राप्त हो जाती है। जल का यह पुनः अवशेषण विलेय परिवहन के बाद का है और ऐसा अवश्यंभावी रूप में होता है चाहे शरीर की आवश्यकता कुछ भी क्यों न हो। अतः इसे जल का अविकल्पी (cobligatory) पुनः अवशोषण कहते हैं। इस प्रकार समीपस्थ संवलित नलिका में तरल के आयतन में, बिना ओस्मोलेरिटी में परिवर्तन हुए, भारी कमी आ जाती है।

रक्त में 100 mg प्रति 100 ml के ग्लूकोस सांद्रण पर समीपस्थ संवलित नलिका में परानिस्यंद में से ग्लूकोस पूरी तरह पुनः अवशोषित हो जाता है। यदि प्लाज़्मा ग्लूकोस का सांद्रण सामान्य स्तर से अधिक हो जाए, तब उसी के अनुसार परानिस्यद में भी इसका सांद्रण बढ़ जाता है। यदि यह स्तर पुनः अवशोषण करने की परिवहन क्रियाविधि की क्षमता से अधिक हो जाता है, तब कुछ ग्लूकोस मूत्र में प्रकट होने लगता है, और यहां मधुमेह (डायबिटीज़) के रोगियों में होता है।

हेन्लै का लूप

समीपस्थ नलिका में घटे हुए आयतन वाला यह तरल, जो कि अब भी रक्त के समपरासारी होता है, हेन्ले के लूप की **अवरोही भुजा** (descending limb) में प्रवेश करता है (चित्र 4.10)। जैसे-जैसे यह तरल अवरोही भुजा में से गुजरता है वैसे-वैसे उन क्षेत्रों में पहुंचता है जहां नलिका की दीवारें ऐसे अंतराली तरल से घिरी होती हैं जिनमें बढ़ता हुआ परासरण एवं सांद्रण पाया जाता है। अवरोही भुजा की दीवारें जल तथा लवणों के लिए पारगम्य होती हैं। परिणामतः नलिकीय तरल में से जल निकलता जाता और सोडियम प्रविष्ट होता जाता है। इस प्रकार जैसे-जैसे यह तरल हेन्ले के

लूप में नीचे की ओर आता है वैसे-वैसे तरल अधिकाधिक सांद्रित और रक्त के प्रति अधिपरासारी होता जाता है। इसके साथ ही कदाचित यूरिया-सम्पन्न अंतराली गुहा में से कुछ यूरिया का भी भीतर को विसरण होता है। इन घटनाओं के परिणामस्वरूप अवरोही भुजा में किसी भी स्तर पर नलिकीय तरल परिवेशी अंतराल के साथ समपरासारी संबंध बनाए रखता है।

हेन्ले के अवरोही लूप में से प्रवाहित नलिकीय तरल लूप के **हेयर-पिन** मोड़ पर से होकर हेन्ले-लूप की **आरोही भुजा** (ascending limb) में पहुंचता है। आरोही लूप की दीवारों में से जल तथा लवणों का विसरण नहीं हो सकता। लेकिन इन दीवारों की कोशिकाएं, विशेष रूप से आरोही भुजा के अधिक भीतरी भागों की कोशिकाएं, सक्रिय रूप में Na^+ का बाहर को परिवहन कर देती हैं। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि आरोही भुजा से परिवहन होने वाला तत्व वास्तव में Cl^- होता है और Na^+ तो केवल एक प्रति-आयन (counter-ion) के रूप में उसके साथ-साथ जाता है। इस भाग में नलिकीय तरल पदार्थों में से कुछ यूरिया भी सक्रिय परिवहन के द्वारा बाहर को चला जाता है।

नलिका में से बाहर को होने वाले इस सक्रिय परिवहन के कारण जैसे-जैसे तरल आरोही भुजा में आगे की ओर बढ़ता है वैसे-वैसे यह अधिक तनु होता जाता है। आरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होने के कारण बाहरी अंतराल में से जल का नलिकीय तरल में प्रवेश नहीं होता। विलेय के नेट निकास के कारण आरोही भुजा के भीतर के किसी भी स्तर का तरल अंतराल के, और साथ ही साथ अवरोही भुजा के तरल के सापेक्ष अधःपरासारी होता है।

दूरस्थ संवलित नलिका

आरोही भुजा में से अधःपरासारी तरल दूरस्थ संवलित नलिका में पहुंचता है। जल की डाइयूरेसिस (diuresis) दशा में अर्थात जब जल के संरक्षण की आवश्यकता नहीं होती, अधःपरासारी नलिकीय तरल अपनी ऑस्मोलेरिटी में बिना कोई परिवर्तन हुए संग्राही नलिका में पहुंचता है। जब शरीर को जल का संरक्षण करना होता है तब हाइपोथैलेमो-हाइपोफिसियल तंत्र में से ऐंटीडाइयूरेटिक हॉर्मोन (antidiuretic hormone) (ADH) निकलता है (जिसे वासोप्रेसिन (vasopressin) भी कहते हैं,) यह हॉर्मोन दूरस्थ संवलित नलिका की दीवारों को जल के लिए पारगम्य बना देता है। अतः जब रक्त में (ADH) की मात्रा बढ़ जाती है तब जल दूरस्थ नलिका में से बाहर को विसरित होता है और जब तक तरल संग्राही नलिका में पहुंचता है तब तक वह रक्त के समपरासारी हो जाता है।

उभयचरों तथा सरीसृपों में हेन्ले का लूप नहीं होता तथा उनमें समीपस्थ नलिका से चला हुआ तरल सीधे दूरस्थ नलिका में पहुंच जाता है और मूत्रवाहिनीय मूत्र का अंतिम सांद्रण या तो अधःपरासारी होता है या अधिक से अधिक समपरासारी होता है। इन प्राणियों में मूत्र का अधःपरासारी बनना लवण के पुनःअवशोषण के कारण होता है। शुष्क परिस्थितियों में इन प्राणियों में मूत्र का अधःपरासारी होना एवं आयतन में कम होना ADH के प्रभाव में दूरस्थ नलिका में जल के पुनःअवशोषण के कारण होता है। निम्नतर कशेरुकियों में ADH को वासोटोसिन (vasotocin) कहते हैं न कि वासोप्रेसिन।

संग्राही नलिका

संग्राही नलिका (collecting tubule) में जो तरल पहुंचता है वह प्राणी के जल स्तर के आधार पर अधःपरासारी हो सकता है या समपरासारी। मूत्र संघटन में अंतिम समंजन संग्राही नलिकाओं में होते हैं, इन नलिकाओं की दीवारें केवल ADH की उपस्थिति में ही पारगम्य होती हैं। ADH की अनुपस्थिति में, जैसा कि जल डाइयूरेसिस में होता है, संग्राही नलिका में प्रवेश करने वाला अधःपरासारी तरल अपरिवर्तित रूप में नलिका में से गुजरता है। ऐसी परस्थिति में तनु मूत्र की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा का उत्सर्जन होता है। जब जल संरक्षण जरूरी हो तो उस स्थिति में ADH का स्राव होता है और संग्राही नलिका की दीवारें जल के लिए पारगम्य हो जाती हैं। तब संग्राही नलिकाओं में प्रविष्ट होने वाला तरल उत्तरोत्तर आगे बढ़ता हुआ अधिक सांद्रित होता जाता है जिससे अंततः बना मूत्र अंतराली तरल के लगभग समपरासारी और रक्त की तुलना में अधिपरासारी हो जाता है।

वासा रेक्टा

हेन्ले लूप की अवरोही भुजा में से अथवा संग्राही नलिका से पुनः अवशोषित हुआ जल मेडुला में परासारी सांद्रण प्रवणता (osmotic concentration gradient) में गड़बड़ी पैदा कर सकता

है। **वासा रेक्टा** (vasa recta) के केशिकीय लूप जो कि हेन्ले लूप के समांतर चलते हैं अधिशेष जल को बाहर निकाल लेते हैं और इस प्रकार मेडुला के अंतराल (interstitium) में सांद्रण प्रवणता कायम बनी रहती है। वासा रेक्टा के लूप जल तथा विलेयों के वास्ते निर्बाध रूप में पारगम्य होते हैं। जैसे-जैसे रक्त वासा रेक्टा में नीचे को आता जाता है वैसे-वैसे जल विसरित होकर बाहर अंतराली तरल में आ जाता है और लवण भीतर को विसरित हो जाता है। अतः जैसे-जैसे रक्त वासा रेक्टा में से वृक्क पेपिला (papilla) की ओर चलता जाता है वैसे-वैसे वह अधिकाधिक सांद्रित होता जाता है। जब रक्त कॉर्टेक्स की ओर उठता है तब उसमें जल भीतर को आता है तथा लवण बाहर की ओर निकलता है। वासा रेक्टा उस थोड़े से भी अधिशेष लवण को बाहर निकाल देता है जो अन्यथा मेडुलरी अंतराल में एकत्रित हो सकता था। चित्र 4.12 नेफ्रॉन के विभिन्न भागों में मूत्र के सांद्रित होने को दर्शा रहा है।

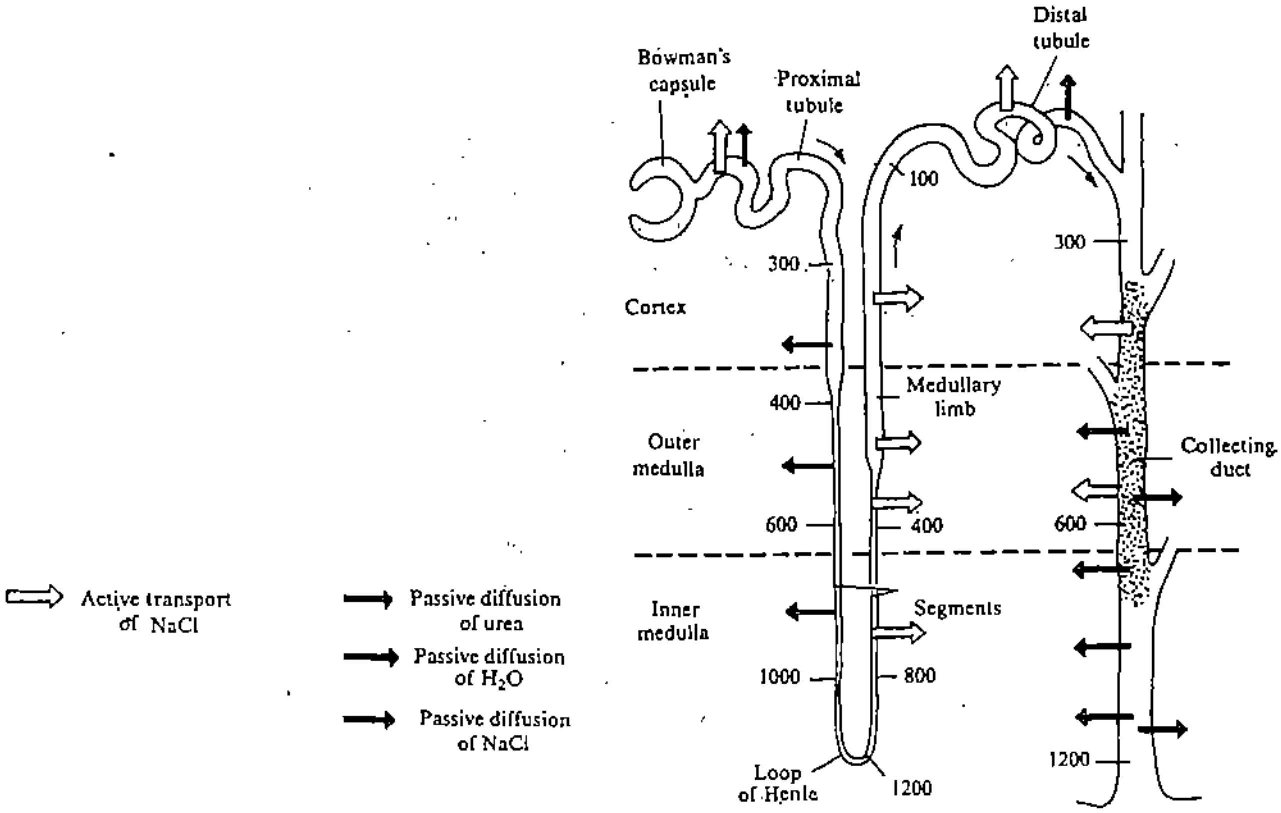

चित्र 4.12 : नेफ्रॉन में मूत्र सांद्रण। चित्र में दिये अंक मूत्र की सांद्रता मिलीऑसमेल्स में दर्शाते हैं।

4.4 वृक्क-कार्य का नियमन

वृक्क की संरचना और उसके भीतर मूत्र बनने की प्रक्रिया के विषय में अध्ययन करने के बाद आइए अब हम देखें कि वृक्क के कार्य का नियमन कैसे होता है। आपने इसी इकाई के आरंभ में यह पढ़ा था कि मूत्र का बनना फिल्ट्रेशन या निस्यंदन की क्रिया पर निर्भर करता है। रक्त आपूर्ति में कमी आ जाने पर कुल निस्यंदन दबाव कम हो जाता है जिससे मूत्र का बनना बंद हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में स्वयं वृक्क के अंदर ही कुछ घटनाक्रम प्रारम्भ होते हैं ताकि अधिदाब की स्थिति बनकर वृक्क में रक्त प्रवाह बेहतर हो जाए और मूत्र का बनना फिर से जारी हो जाए। वृक्कीय रक्त प्रवाह का **स्वनियमन** एक न्यूरोएंडोक्राइन अर्थात् तंत्रिका-अंतःस्रावी क्रियाविधि के द्वारा होता है जिसका संबंध वृक्क के **जक्स्टाग्लोमेरूलर उपकरण** (juxtaglomerular apparatus) अर्थात् ग्लोमेरूलस के सन्निकट स्थित उपकरण से है (चित्र 4.13)।

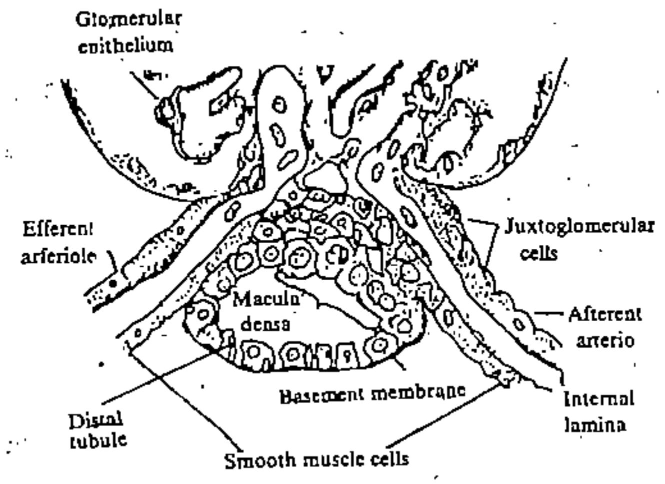

चित्र 4.13 : स्तनधारियों में जक्स्टाग्लोमेरूलर उपकरण की संरचना।

जब अभिवाही धमनी में रक्त दाब कम होता है तब धमनिकाओं के प्रसार संवेदग्राही (stretch sensitive receptors) उन तंत्रिका आवेगों का समारम्भ करते हैं जो जक्स्टाग्लोमेरूलर कोशिकाओं के द्वारा **रेनिन** (renin) नामक एक प्रोटीन अपघटक एंज़ाइम का रक्त में स्राव प्रेरित करते हैं। इस एंज़ाइम के द्वारा एक बृहत् आकार गोलिकायम (globular) प्लाज़्मा प्रोटीन **एंजियोटेंसिनोजेन** (angiotensinogen) से **एंजियोटेंसिन-I** (angiotension-I) नामक एक डेकापेप्टाइड निकालता हैं। प्लाज़्मा का एक और प्रोटीन अपघटक एंज़ाइम जिसे **परिवर्तनकारी एंज़ाइम** (converting enzymes) कह सकते हैं, एंजियोटेंसिन-I से दो ऐमीनो अम्ल निकाल कर एक आक्टापेप्टाइड एंजियोटेमिन-II (angiotension-II) बनाता है। रक्त वाहिकाओं के संकुचन की क्रिया में एंजियोटेंसिन की शक्ति नॉरपिनेफ्रीन (norepinephrine) की शक्ति की अपेक्षा 200 गुनी अधिक होती है। यह रक्त दाब को दो प्रकार से बढ़ाता है। एक तो यह धमनिकाओं की अरेखित पेशियों पर क्रिया करके उनमें तीव्र संकुचन (संकरा होना) पैदा करता है। दूसरे, यह ऐड्रीनल कॉर्टेक्स के द्वारा एल्डोस्टेरॉन के स्राव को उत्तेजित करता है और इस प्रकार प्लाज़्मा Na^+ के स्तर को ऊंचा कर देता है। इसके परिणामस्वरूप कोशिकाबाह्य तरल का आयतन बढ़ जाता है और फलतः रक्त दाब बढ़ जाता है। ऐंजियोटेंसिन-II का एक एंजाइम ऐंजियोटेंसिनेज़ (angiotensinase) द्वारा अपघटन हो जाता है, यह एंज़ाइम प्लाज़्मा में होता है। चित्र 4.14 द्वारा इस नियमन क्रियाविधि को समझने में सहायता मिलेगी।

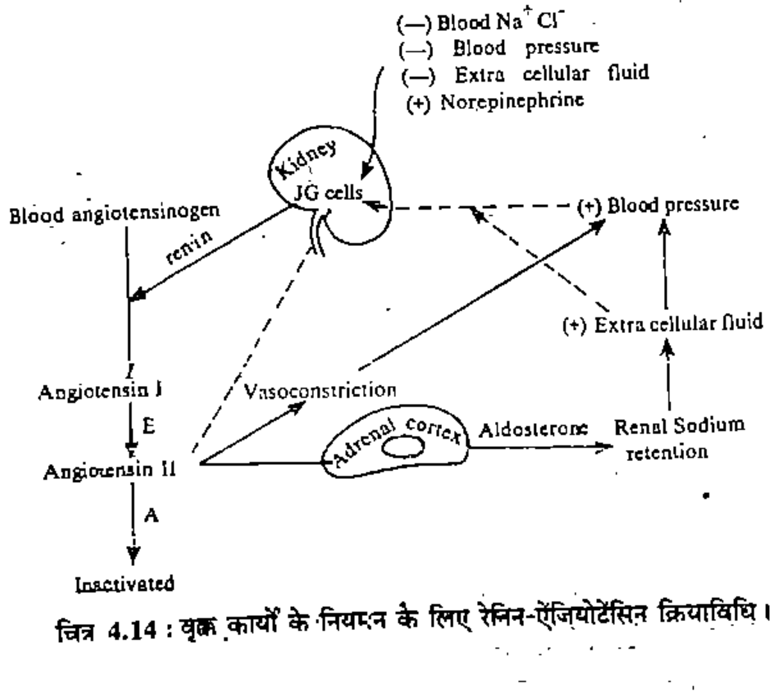

चित्र 4.14 : वृक्क कार्यों के नियमन के लिए रेनिन-ऐंजियोटेंसिन क्रियाविधि। + का चिन्ह उच्च स्तर दर्शाता है और — का चिन्ह निम्न स्तर दर्शाता है।

बोध प्रश्न 4

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए तथा अपने उत्तरों को भाग 4.7 में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

क) कशेरुकी वृक्क में संरचनात्मक विभिन्नता पायी जाती है। मछलियों, उभयचरों तथा सरीसृपों में नेफ्रॉन यों ही छितराए हुए हैं और इसलिए .... तथा .... में कोई स्पष्ट विभेद नहीं होता।

ख) स्तनधारियों में मूत्र सांद्रण की क्षमता प्राणी के आवास से संबंधित है। मरुस्थलीय प्राणी .... मूत्र बनाते हैं तथा अलवणजलीय प्राणी .... मूत्र बनाते हैं।

ग) निम्नतर प्राणियों में .... को वासोटोसिन कहते हैं।

घ) ऐंजियोटेंसिन-I का ऐंजियाटेंसिन-II में परिवर्तन .... नामक प्रोटीन अपघटक एंज़ाइम द्वारा होता है।

4.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा है कि :

- प्रोटीनों के अपचय से नाइट्रोजन बनती है जो प्राणियों के लिए बहुत विषैली होती है। अतः प्राणी इस विषैली नाइट्रोजन को या तो अमोनिया के रूप में बाहर निकाल देते हैं या बाहर को उत्सर्जित करने से पहले उसे यूरिया तथा यूरिक अम्ल जैसे कम विषैले रूपों में बदल देते हैं।
- जो प्राणी मुख्यतः अमोनिया का उत्सर्जन करते हैं उन्हें अमोनोत्सर्गी कहते हैं, जो यूरिया का उत्सर्जन करते हैं उन्हें यूरियोत्सर्गी कहते हैं, तथा यूरिक अम्ल का उत्सर्जन करने वाले प्राणियों को यूरिकोत्सर्गी कहते हैं।
- प्राणियों में नाइट्रोजन के उत्सर्जन की विधि पर्यावरण में जल की उपलब्धता से संबंधित अनुकूलनी लक्षण होता है।
- अवांछित पदार्थों को बाहर निकाल फेंकने के लिए तथा परासरणी एवं आयनी नियमन के लिए प्राणियों में विभिन्न प्रकार के नलिकाकार वृक्कीय अंग होते हैं। उनमें आकारिकीय विविधता के बावजूद उनके कार्यात्मक सिद्धांत विलक्षणतः समान होते हैं।
- रक्त के निस्यंदन द्वारा अथवा सक्रिय विलेय परिवहन द्वारा शुरू होकर और उसके बाद रक्त में से जल का निष्क्रिय विसरण होकर, नलिकीय अवकाशिका में समपरासारी प्राथमिक मूत्र बनता है। इस मूत्र के स्राव से पहले लाभकारी पदार्थ पुनः अवशोषित हो जाते हैं।
- यूरीकोत्सर्गी प्राणियों में जल के पुनःअवशोषण के द्वारा मूत्र को अर्धठोस अथवा ठोस सहिति में ले आया जाता है। यह कार्य कीटों में मलाशय के भीतर तथा पक्षियों एवं स्थलीय सरीसृप में अवस्कर के भीतर होता है। पक्षियों तथा स्तनधारियों के वृक्क में अधिपरासारी मूत्र बनाने की क्षमता हेन्ले का लूप की उपस्थिति के कारण होती है। अपेक्षाकृत कम अधिपरासारी मूत्र बनाने वाले अन्य प्राणियों की तुलना में मरुस्थलीय स्तनधारी अत्यधिक अधिपरासारी मूत्र बनाते हैं, क्योंकि उनमें हेन्ले का लूप अधिक लम्बा होता है।
- वृक्क के कार्य का हॉर्मोनों द्वारा नियमन होता है।

4.6 अंत में कुछ प्रश्न

1) नीचे दिए गए स्थान में समझाइए कि अमोनिया विषैली क्यों होती है?

....

....

....

....

2) नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में समझाइए कि कीटों में संग्रह उत्सर्जन क्या होता है?

....
....
....
....
....

3) कीटों की मैलपीगी नलिकाओं में यूरिक अम्ल के बनने की क्रिया को नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में समझाइए।

....
....
....
....
....

4) नीचे दिए गए स्थान में कशेरुकियों के नेफ्रॉन की संरचना समझाइए।

....
....
....
....
....

5) मूत्र के निर्माण में हेन्ले के लूप की भूमिका का नीचे दिए गए स्थान में संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....
....
....
....

6) रेनिन-ऐंजियोटेंसिन तंत्र द्वारा वृक्क-कार्य के नियमन का संक्षेप में स्पष्टीकरण कीजिए।

....
....
....
....
....
....

4.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) ऑक्सिडिटिव ट्रांसडीऐमीनेशन
   ख) ATP के कोशिकीय सांद्रण की समाप्ति
   ग) ऑर्निथीन चक्र
   घ) आइनोसिनिक अम्ल दिशामार्ग
   ङ) ग्वानिन, ग्वानोटेलिक

2) क) i) ख, ii) ग, iii) घ, iv) च, v) क
   ख) i) प्रोटोनेफ्रीडिया, मेटानेफ्रीडिया
      ii) समपरासारी

3) क) लौ-कोशिकाएं
   ख) बायां गुर्दा, दाहिना गुर्दा
   ग) लवण पुनः अवशोषी खण्ड
   घ) प्रोटोनेफ्रीडियम

4) क) कॉर्टेक्स, मेडुला
   ख) अधिक सांद्रित, अत्यन्त तनु
   ग) ऐंटीडाइयूरेटिक हॉर्मोन
   घ) परिवर्तनकारी एंज़ाइम

अंत में कुछ प्रश्न

1) उपभाग 4.2.1 देखिए।
2) उपभाग 4.2.4 देखिए।
3) उपभाग 4.3.5 देखिए।
4) उपभाग 4.3.6 देखिए।
5) उपभाग 4.3.6 देखिए।
6) भाग 4.4 देखिए।

इकाई 5 परासरणीय एवं आयनी नियमन

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
5.2 परासरण नियमन की समस्याएं
5.3 जलीय पर्यावरणों में परासरण नियमन
अलवंण जल के प्राणी
समुद्री प्राणी
5.4 स्थलीय पर्यावरणों में परासरण नियमन
5.5 जल और विद्युत् अपघट्यों के नियमन में हॉर्मोन
अकशेरुकी
कशेरुकी
5.6 सारांश
5.7 अंत में कुछ प्रश्न
5.8 उत्तर

5.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने सीखा कि अमोनियोत्सर्जन, यूरियोत्सर्जन और यूरिकोत्सर्जन प्राणियों में आविषालु नाइट्रोजनीय उत्सर्गों के निष्कासन के अनुकूलन हैं और समस्थापन बनाये रखते हैं। प्राणी बाह्य पर्यावरण के अनुसार अपने शरीर में जल और लवणों की सान्द्रता पर नियंत्रण रखते हैं। शरीर के द्रव्यों की परासरण सान्द्रता को बनाये रखने की क्रिया परासरण नियमन कहलाती है। परासरण नियमन और उत्सर्जन में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है क्योंकि इन क्रियाओं का अन्तिम उद्देश्य समस्थापन बनाये रखना है। ये क्रियाएं समान अंग समूहों से संचालित होती हैं। कशेरुकियों में परासरण नियमन के प्रमुख अंग वृक्क हैं। क्लोम, त्वचा, लवण ग्रंथियाँ और मलाशय ग्रंथियाँ वृक्क को इस प्रयास में सहयोग देते हैं। अकशेरुकियों के परासरण नियम अंग वृक्कक अर्थात् नेफ्रीडिया श्रृंगिका ग्रंथियां (antennal glands) और मैलपीगी नलिकाएं (Malpighian tubules) हैं। कीटों की उपत्वचा (cuticle) भी जलीय और स्थलीय दोनों ही कीटों में अति उत्तम परासरण नियमक कार्य करती है। इस इकाई में आप परासरणी पर्यावरण, प्राणी और उसके पर्यावरण में परस्पर परासरणी विनिमय, विभिन्न प्राणियों द्वारा परासरणी चारम्यों से निपटने के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली क्रियाओं को पढ़ेंगे और परासरणी तथा तथा आयनी नियमन में हॉर्मोनों की भूमिका के विषय में भी अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- परासरण नियमन का अर्थ समझ सकेंगे।
- जलीय प्राणी किस प्रकार अपनी परासरणी समस्याओं से निपटते हैं, विवेचना कर सकेंगे।
- प्रवासी मछलियाँ अपने देह तरल का स्थिर परासरणी दाब कैसे बनाये रखती हैं, समझा सकेंगे।
- उन क्रिया विधियों की जिसे स्थलीय प्राणियों ने मरुस्थल की उग्र परिस्थितियों का सामना करने के लिये विकसित की हैं, विवेचना कर सकेंगे।
- शुष्क मरुस्थल में कंगारू चूहों (kangaroo rat) की उत्तरजीविता के रहस्य को समझा सकेंगे।
- देह तरलों में जल और विद्युत् अपघट्यों के नियंत्रण की विवेचना कर सकेंगे।

5.2 परासरण नियमन की समस्याएं

आपने LSE-01 कोशिका जैविकी में यह अध्ययन किया है कि जल, कुछ अकार्बनिक लवण और कुछ पोषक अणु देह तरलों के कुछ महत्वपूर्ण घटकों में से हैं। प्राणियों के लिए इन घटकों की समुचित मात्रा बनाये रखना उत्तरजीविता के लिये नितान्त आवश्यक है।

यह सर्वमान्य है कि जीवन का उद्भव जल में हुआ और विकास के दौरान प्राणी महासागरों से ज्वारनदमुखों, नदियों और भू-भागों पर फैले। ये नये पर्यावरण सागर के पर्यावरण से परासरणी दृष्टि से भिन्न थे। चूँकि जीवन का उद्भव सागर में हुआ तथा प्राणियों के देह तरल अपने सामान्य संघटन में लगभग सागर के जल के समान हैं इसलिये सागरीय पर्यावरण में आवास करने वाले प्राणियों को परासरण की समस्या नहीं होती है, क्योंकि उनके देह तरल बाह्य पर्यावरण से समपरासारी होते हैं। किन्तु खारे जलों, अलवण जलों तथा स्थलीय पर्यावरण में वितरित प्राणियों को परासरण नियमन की समस्या होती है क्योंकि उनके देह तरल उनके बाह्य पर्यावरण से अतिपरासरी होते हैं। इसलिये इन प्राणियों में परासरण पर्यावरण की कठिनाइयों से निपटने के लिये विविध कायिक और व्यावहारिक अनुकूलनों का विकास हुआ है। इन प्राणियों के परासरण नियमन अंग इस चेष्टा में अत्यावश्यक भूमिका निभाते हैं।

कोई भी परासरण नियमित प्राणी सामान्यतः स्थाई अवस्था में रहता है यद्यपि घंटेवार और दैनिक बदलाव हो सकते हैं। आन्तरिक लवणों और जल की मात्रा अपेक्षाकृत स्थिर बनी रहती है। जल और लवणों का अन्तर्ग्रहण और बहिर्गमन समान होता है। इस प्रकार का परासरणी समस्थापन ए टी पी (ATP) से उपलब्ध उपापचयी ऊर्जा के व्यय के कारण बना रहता है (चित्र 5.1)।

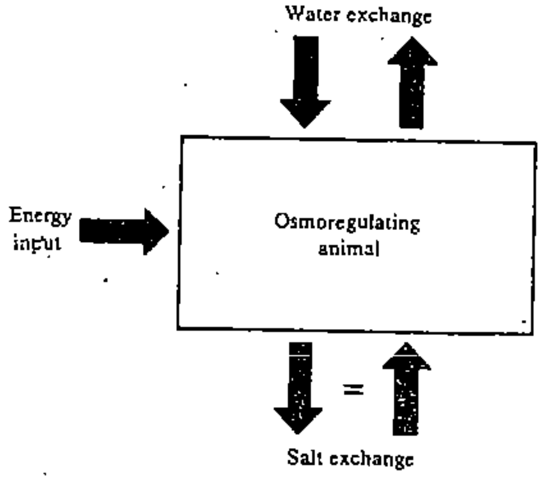

चित्र 5.1 : परासरण नियमित प्राणी में परासरणी समस्थापन।

सफल परासरण नियमनी विधियों के विकास की आवश्यकता ने प्राणी जातिउद्भव और विविधरूपण का अवसर प्रदान किया। विकासीय अनुकूलनों की सूझ-बूझ आर्थोपोडा और कशेरुकियों के अनुकूलनों को ध्यान में रखें तो समझी जा सकती है। इन्होंने यदि उपयुक्त परासरण नियमनी क्रियाविधियों का विकास न किया होता तो वे स्थलीय और जलीय दोनों ही पर्यावरणों में — उन पर्यावरणों में जो परासरण की दृष्टि से प्रतिकूल और कठिन हैं — इतने सफल कैसे हो सकते। इस प्रकार के अनुकूलनों के विषय में आप इस इकाई के आने वाले भागों में अध्ययन करेंगे।

किसी प्राणी और उसके पर्यावरण के बीच होने वाले परासरणी विनिमय दो प्रकार के होते हैं।

1) अविकल्पी विनिमय (obligatory exchanges) और

2) नियंत्रित विनिमय (regulated exchanges)

अविकल्पी विनिमयों में परासरणी विनिमय मुख्यतः भौतिक कारकों की प्रतिक्रिया में होते हैं जिन पर प्राणी का थोड़ा या कुछ भी शरीरक्रियात्मक नियंत्रण नहीं होता है। इसके विपरीत **नियंत्रित विनिमयों** में परासरणी विनिमय शरीरक्रियाओं से नियंत्रित होते हैं और ये आन्तरिक समस्थापन को बनाये रखने में सहायक होते हैं। नियंत्रित विनिमय सामान्यतः अविकल्पी विनियम की कृतिपूर्ति का कार्य करते हैं।

वे प्राणी जो अपने देह तरलों (body fluids) की समसान्द्रता को बनाये रखते हैं चाहे वे किसी माध्यम में हो **परासरण नियमक** (osmoregulators) कहलाते हैं। ये प्राणी जो परासरणी अवस्था को सक्रिय रूप से नियंत्रित नहीं करते अपितु जिस माध्यम में वे रहते हैं उसकी समसान्द्रता का अनुपूरण करते हैं **परासरण समरूपी** (osmoconformers) कहलाते हैं। इलास्मोंब्रैंकों और हैगमीनों को छोड़कर अधिकांश कशेरुक पूर्णतः परासरण नियमक हैं और अपने देह तरल का संघटन सीमित परासरण परास में बनाये रखते हैं। समुद्री अकशेरुकी समुद्र के जल से परासरण संतुलन में रहते हैं। इनके देह तरल में Na^+, K^+, Ca^{2+}, Mg^{2+}, और Cl^- की सान्द्रता समुद्री जल के समीप ही होती है जिसमें ये वास करते हैं। चित्र 5.2 में यह स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। अगले भाग में हम विभिन्न परासरण आवासों में जीवन के विषय में पढ़ेंगे।

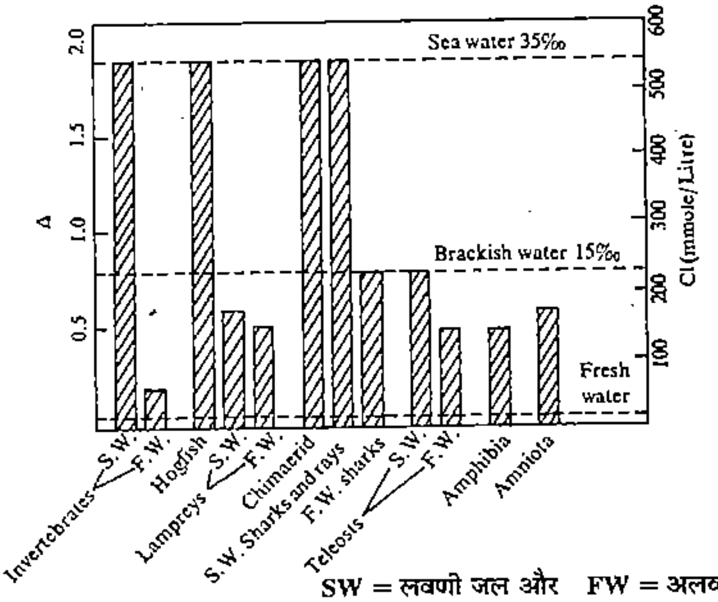

SW = लवणी जल और FW = अलवणीय जल

चित्र 5.2 : विभिन्न वर्ग के प्राणियों में अपने पर्यावरण की तुलना में कायिकी द्रव्यों की समसान्द्रता।

बोध प्रश्न 1

कॉलम 1 में दिये गये पारिभाषिक शब्दों को कॉलम 2 में दी गई उनकी परिभाषाओं से सुमेलित कीजिए और अपने उत्तरों की तुलना भाग 5.8 में दिये गये उत्तरों से कीजिये।

कॉलम 1		कॉलम 2
a) अविकल्पी विनिमय (obligatory exchanges)	[ ]	i) प्राणी जो बाह्य माध्यम से, जिसमें वे वास करते हैं, भिन्न आन्तरिक समसान्द्रता बनाये रखते हैं।
b) नियंत्रित विनिमय (regulated exchanges)	[ ]	ii) आन्तरिक समस्थापन को बनाये रखने के लिए शरीर क्रिया से नियंत्रित परासरण विनिमय।
c) परासरण नियंत्रक (osmoregulators)	[ ]	iii) वे प्राणी जो सक्रिय रूप से अपने कायिकी द्रव्यों की परासरण अवस्था नियंत्रित नहीं करते हैं अपितु जिस माध्यम में वे रहते हैं, उसकी समसान्द्रता के अनुरूप बना लेते हैं।
d) परासरण समरूप (osmoconformers)	[ ]	iv) परासरण विनिमय जो मुख्यतः भौ... की प्रतिक्रिया में होता है जिन पर प्राणी का कुछ भी शरीरक्रियात्मक नियंत्रण नहीं होता है।

5.3 जलीय पर्यावरणों में परासरण नियमन

आप जानते ही हैं कि जलीय पर्यावरण दो प्रकार के होते हैं: (i) अलवण जलीय और (ii) सागर जलीय। इन पर्यावरणों की परासरण सान्द्रता अलवण झीलों में कई मिली ऑसमोल प्रति लीटर तक होती है। स्थलरुद्ध लवणीय सागरों में यह इससे भी अधिक हो सकती है। जलीय प्राणियों का सम्पूर्ण शरीर और श्वसनीय सतह इस परासरणी दृष्टि से चरम पर्यावरण में डूबा रहता है। वे प्राणी जो लवणता के बड़े परास को सह सकते हैं, पृथुलवणी (euryhaline) और जो केवल सीमित परास को सह सकते हैं, तनुलवणी (stenohaline) कहलाते हैं। आने वाले उपभागों में आप अलवण जलीय और सागर जलीय प्राणियों में परासरण नियंत्रण के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

5.3.1 अलवण जल के प्राणी

चित्र 5.2 में आपने देखा है कि अलवण जल के प्राणियों के देह तरल अपने चारों ओर के जल से अतिपरासारी होते हैं। फलस्वरूप दो प्रकार की परासरणी समस्याएं उत्पन्न होती हैं — (i) परासारी प्रवणता के कारण जल शरीर के अन्दर प्रवेश करता है और इस कारण शरीर फूल जाता है। (ii) क्योंकि आस-पास के पर्यावरण में लवण की मात्रा निम्न होती है इसलिये शरीर से निरन्तर लवणों का क्षय होता है। अतः अलवणीय प्राणियों को निरन्तर जल का शुद्ध अर्जन और लवणों का शुद्ध क्षय रोकना पड़ता है। अलवण जलीय मछलियों में समुद्री मछलियों से कहीं अधिक प्रचुर मात्रा में मूत्र बनता है। लाभकारी लवण अधिकांशतः वृक्क नलिकाओं में पुनःशोषण द्वारा रोक लिये जाते हैं। वे लवण जो मूत्र द्वारा उत्सर्जित किये जाते हैं उनकी पूर्ति अंशतः भोजन द्वारा की जाती है। वाहक **उपकला** (transporting epithelium) द्वारा चारों ओर के अल्पपरासारी माध्यम से सक्रिय गमन द्वारा भी लवण प्राप्त किये जाते हैं। उदाहरणार्थ वाहक उपकला मछलियों के गिल और उभयचरों की त्वचा में पाई जाती है। गिल में NaCl की सान्द्रता की प्रवणता जब 100 गुना से अधिक हो जाती है तब सक्रिय गमन होता है। (चित्र 5.3 a)।

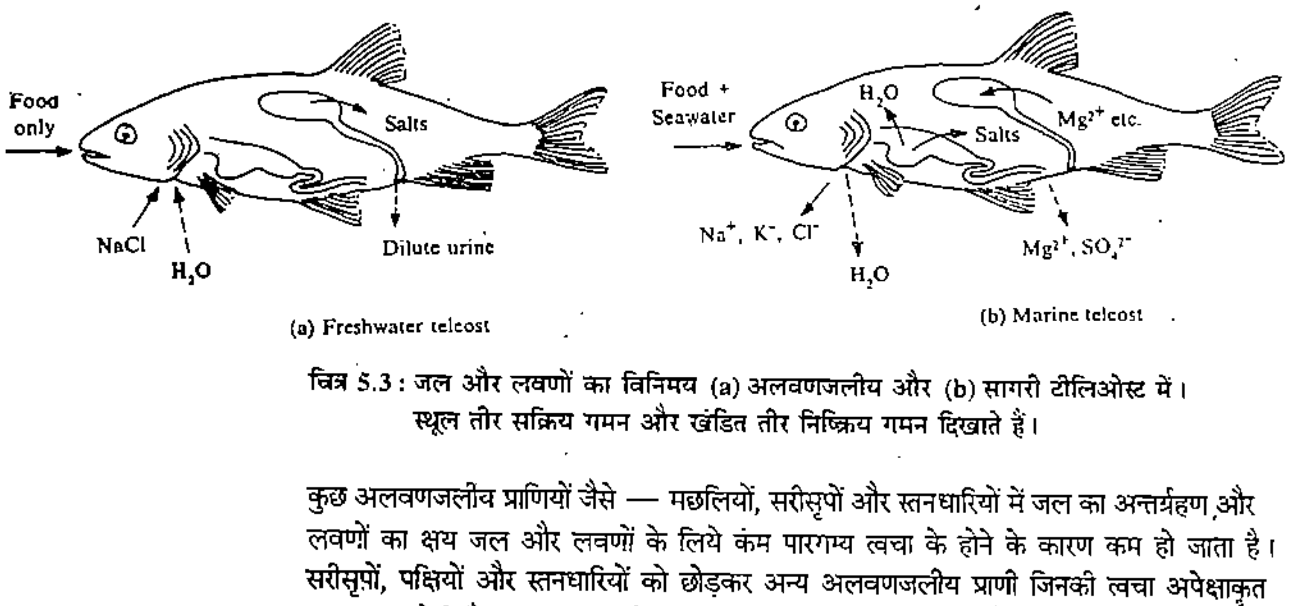

चित्र 5.3 : जल और लवणों का विनिमय (a) अलवणजलीय और (b) सागरी टीलिओस्ट में। स्थूल तीर सक्रिय गमन और खंडित तीर निष्क्रिय गमन दिखाते हैं।

कुछ अलवणजलीय प्राणियों जैसे — मछलियों, सरीसृपों और स्तनधारियों में जल का अन्तर्ग्रहण और लवणों का क्षय जल और लवणों के लिये कम पारगम्य त्वचा के होने के कारण कम हो जाता है। सरीसृपों, पक्षियों और स्तनधारियों को छोड़कर अन्य अलवणजलीय प्राणी जिनकी त्वचा अपेक्षाकृत अपारगम्य होती है, आवश्यकता से अधिक अलवण जल नहीं पीते और इस प्रकार आवश्यकता से अधिक जल के निष्कासन की जरूरत को उसी प्रकार घटा लेते हैं जैसे कि उनके सहप्रवासी करते हैं जिनकी त्वचा जल और लवणों के लिये पारगम्य होती है।

5.3.2 समुद्री प्राणी

आपने चित्र 5.2 के द्वारा यह समझ लिया है कि एसीडियन समेत अन्य समुद्री अकशेरुकियों के देह तरल का संगठन समुद्री जल के समान होता है। ऐसे प्राणियों को अपने देह तरलों की आन्तरिक ऑसमोलेरिटी के नियंत्रण में अधिक ऊर्जा नहीं व्यय करनी पड़ती। कुछ कशेरुकियों में भी प्लाज़्मा अपने पर्यावरण से समपरासारी पाया गया है। उदाहरणतः, हैगमीन, *मिक्सीन* में Ca^{2+}, Mg^{2+} और

So_4^{2-} की सान्द्रता देह तरल में सागर के जल से महत्वपूर्ण रूप से कम बनी रहती है जब कि Na^+ और Cl^- की सान्द्रता सागर के जल से अधिक बनी रहती है। हैगमीन के ही समान उपास्थियुक्त मछलियों जैसे शार्क, रे और स्केट में भी प्लाज्मा समुद्री जल से समपरासारी होता है किन्तु इन मछलियों में अकार्बनिक विद्युत अपघट्यों की सान्द्रता समुद्र के जल से बहुत कम बनी रहती है। आवश्यकता से अधिक विद्युत अपघट्य जैसे — NaCl वृक्कों द्वारा और एक विशेष उत्सर्जन अंग मलाशय ग्रंथि जो आहार नाल के अन्त में स्थित होती हैं। (rectal gland), के द्वारा भी उत्सर्जित होते हैं।

समुद्रीय टीलिओस्टों के देह तरल समुद्री जल से अल्प परासारी होते हैं इसीलिये ये मछलियाँ अपने पर्यावरण में विशेषकर अपनी क्लोम उपकला द्वारा जल का क्षय करती हैं। जल की मात्रा की पूर्ति करने के लिये यह सागर का जल पीती हैं (चित्र 5.3 b)। अन्तर्ग्रहित सागर का जल NaCl और KCl के साथ-साथ आंत्रीय उपकला (intestinal epithelium) के पार शोषित होता है। इसका 70 से 80% तक रक्त संवहन में आ जाता है। अधिकतर द्विसंयोजक आयन जैसे — Ca^{2+}, Mg^{2+} और So_4^{2-} गुदा द्वारा निष्कासित कर दिये जाते हैं। तत्पश्चात् आवश्यकता से अधिक लवण, Na^+, Cl^- और कदाचित K^+ क्लोमीय उपकला के पार सक्रिय गमन द्वारा रक्त से सागर में निष्कासित कर दिये जाते हैं। द्विसंयोजक लवणों का वृक्कों द्वारा स्रावण भी होता है। क्लोमों में एक विशेष प्रकार की स्रवणीय उपकला होती है जो क्लोराइड कोशिकायें (chloride cells) कहलाती हैं। कोशिकाएं सक्रिय रूप से कलोराइड और संभवतः सोडियम भी समुद्रीय जल में स्रावित करती हैं (चित्र 5.4)।

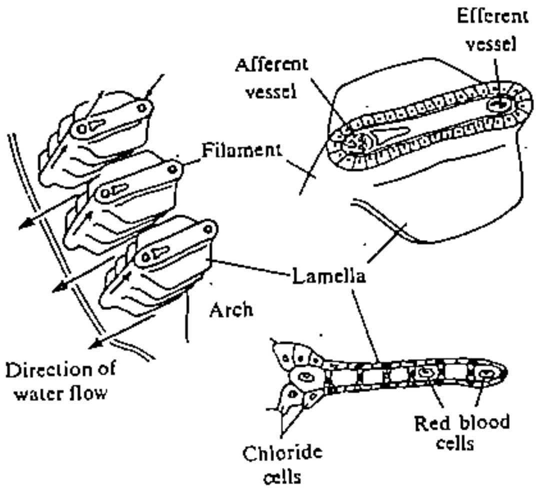

चित्र 5.4 : गिल में क्लोराइड कोशिकाएं।

समुद्री टीलिओस्टों का मूत्र रक्त से समपरासारी होता है किन्तु वे लवण (Mg^{2+}, Ca^{2+} और So_4^{2-}) इसमें प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो गिल द्वारा स्रावित नहीं होते हैं। इन मछलियों में गिल और वृक्कों की संयुक्त परासरणी क्रियाओं के परिणाम स्वरूप ऐसे जल का शुद्ध (net) धारण होता है जो कि अन्तर्ग्रहित समुद्री जल और मूत्र दोनों से ही अल्पपरासारी होता है। प्रवासी मछलियाँ उदाहरणतः उत्तर पश्चिम प्रशान्त महासागर की सामन (salmon) इस सुविधा का उपयोग लगभग स्थिर समसान्द्रता बनाये रखने में करती हैं। यद्यपि यह सागरीय और अलवण पर्यावरणों के बीच प्रवास करती रहती हैं।

समुद्री सरीसृप उदाहरणतः इग्वाना, ज्वारनदमुखी, समुद्री कछुए, मगर, समुद्री सर्प और सागरीय पक्षी, समुद्री टीलिओस्टों के समान ऐसे मूत्र का उत्पादन नहीं करते हैं जो उनके देह तरल से अतिपरासारी हैं। इनमें लवणों से स्रवण के लिये विशिष्ट अंग **लवण ग्रंथियाँ** (salt glands) होती हैं जो प्राणी के कपाल में स्थित होती हैं। पक्षियों में यह सामान्यतः चोंच पर आँख के नीचे और छिपकलियों में यह आँख या नाक के समीप होती हैं। खारे पानी के मगरों में लवण ग्रंथियां जीभ में पायी जाती हैं। यद्यपि न तो सरीसृपों के न ही पक्षियों के वृक्क अत्यधिक अतिपरासारी मूत्र उत्पादन की क्षमता रखते हैं, इनकी लवण ग्रंथियां इतना लवण स्रावित करती हैं कि वे समुद्र का जल पी सकें जब कि उनके वृक्क समुद्र के जल से सान्द्र मूत्र उत्पादन करने में असमर्थ हैं (चित्र 5.5)।

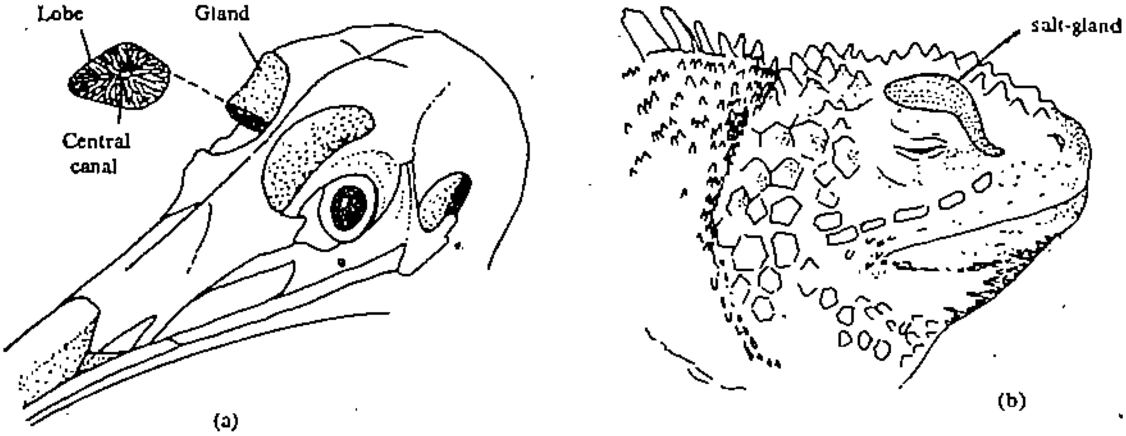

चित्र 5.5 : (a) पक्षियों और (b) सरीसृपों में लवण ग्रंथियाँ।

इन वर्गों में लवण ग्रंथियाँ और समुद्री टीलिओस्टों के गिल उनके अवस्तनीय (sub-mammalian) वृक्कों की कायिकी द्रव्यों से अत्याधिक अतिपरासारी मूत्र जनन अक्षमता की पूर्ति कर देते हैं।

समुद्री स्तनधारियों जैसे जलसिंह (sea lion), व्हेल और सील में कोई बाह्य लवण स्रावित करने वाला अंग नहीं होता है किन्तु इनके वृक्क अत्यधिक अतिपरासारी मूत्र जनन की क्षमता रखते हैं। समुद्री स्तनधारी समुद्री जल को अवशोषित नहीं करते। वे केवल उस समुद्री जल का अन्तर्ग्रण करते हैं जो कि उनके भोजन में होता है। समुद्री प्राणियों के लिये जल का एक अन्य स्रोत उपापचयी जल होता है। आपने कोशिका जैविकी LSE-01 की 11 और 12 इकाइयों में यह अध्ययन किया है कि उपापचयी जल भोजन के उपापचयन से उस समय प्राप्त होता है जब हाइड्रोजन के अणु ऑक्सीजन के अणुओं से मिल कर जल का निर्माण करते हैं।

मानव अन्य स्तनधारियों की भाँति सागर का जल पी नहीं सकते क्योंकि उनके वृक्क प्रति लीटर मूत्र उत्पादन के दौरान 6g Na^+ रक्त धारा से निकाल सकते हैं। सागर के जल में प्रति लीटर 12g Na^+ होता है। इसके कारण शरीर में लवण संचित हो जाता है और उसको शरीर से निकालने के लिये वे तुल्य मात्रा में जल नहीं पी सकते और इस प्रकार शीघ्र ही निर्जलीकरण हो जाता है।

बोध प्रश्न 2

बताइये नीचे दिये गये तथ्य सत्य हैं या असत्य :

i) वे प्राणी जो लवणता का विस्तृत प्रसार सह सकते हैं पृथुलवणी कहलाते हैं और वे जो केवल संकीर्ण परासरण प्रसार सह सकते हैं तनुलवणी कहलाते हैं।

ii) समुद्री जल की परासरण सान्द्रता लगभग 10000 लाख ऑसमोल प्रति लीटर होती है।

iii) अलवणजलीय मछलियाँ, समुद्री मछलियों से अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में मूत्र बनाती हैं।

iv) अलवणजलीय मछलियों में चारों ओर के अल्पपरासारी माध्यम से लवण क्लोमों में परिवाहक उपकला के पार सक्रिय वहन द्वारा निकाल लिये जाते हैं।

v) समुद्री अकशेरुकियों के देह तरल सागर के जल से अल्पपरासारी होते हैं।

vi) समुद्रीय मछलियों के क्लोमों में अवस्थित लवण कोशिकाएं आवश्कयता से अधिक लवण को सक्रिय वहन द्वारा बाहर निकाल देती हैं।

vii) समुद्रीय स्तनधारियों में आवश्वकता से अधिक लवण, लवण ग्रंथियों से, स्रावित किये जाते हैं।

5.4 स्थलीय पर्यावरणों में परासरण नियमन

इस इकाई के पिछले भाग में आपने जलीय पर्यावरण में परासरण नियमन के विषय में पढ़ा। इस भाग में हम यह अध्ययन करेंगे कि किस प्रकार स्थलीय प्राणी परासरण नियमन की समस्याओं से निपटते हैं।

जैसे जलीय प्राणी जलीय माध्यम में डूबे रहते हैं उसी प्रकार यह कल्पना की जा सकती है कि स्थलीय प्राणी वायु के महासागर में डूबे रहते हैं। यदि वायु में आद्रता अधिक न हो तो जल पारगम्य उपकला युक्त प्राणी में निर्जलन होगा मानों वे एक अतिपरासारी माध्यम, जैसे समुद्री जल में डूबे हुए हों। निर्जलन से छुटकारा पाने के लिये उपकला को पूर्ण रूप से जल के लिये अपारगम्य होना चाहिये। विकासीय प्रक्रियाओं को इस निर्जलीकरण की समस्या का उचित समाधान नहीं मिला क्योंकि उपकला जो जल के लिये अपारगम्य होगी, शुष्क होगी और ऐसी उपकला में श्वसनीय गैसों के प्रति सीमित पारगम्यता होगी। यह प्रक्रिया स्थलीय प्राणियों की श्वसनीय आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकेगी। पारगम्य श्वसनीय उपकला की उपस्थिति के कारण वायु श्वसनी प्राणी उसके द्वारा जल का क्षय करेंगे और परिणाम होगा निर्जलीकरण। श्वसनीय उपकला और शरीर के अन्य भागों से वायु में जलक्षय कम से कम करने के लिये विभिन्न विधियों का विकास हुआ है। आइए अब हम उनका अध्ययन करें।

i) त्वचा के आर पार जल का संचलन

अधिकतर स्थलीय प्राणियों की त्वचा जल के लिये अपेक्षाकृत अपारगम्य होती है और त्वचा के द्वारा बहुत थोड़े जल का क्षय होता है (तालिका 5.1)।

तालिका 5.1 : मरुस्थलीय परिस्थितियों में प्राणियों में वाष्पन द्वारा जल क्षय

जाति	जलक्षय (mg/cm²/h)	टिप्पणी
ऑर्थोपोडा		
इलियोडेस आर्माटा (भृंग)	0.20.	30°C; 0% आ.आ.
हेडरूरस ऐरीजोनेनसिस (बिच्छू)	0.02	30°C; 0% आ.आ.
लोकस्टा मायेटोरिया (टिड्डी)	0.70	30°C; 0% आ.आ.
उभयचर		
साइक्लोराना एल्बोगुट्टेटस (मेढ़क)	4.90	25°C; 100% आ.आ.
सरीसृप		
जीहाइड्रा वेरीगाटा (गेको)	0.22	30°C; शुष्क हवा
अल्टा स्टैन्सबरियाना (छिपकली)	0.10	30°C
पक्षी		
एम्फीस्पाइज़ा बेली (गौरैया)	1.48	30°C
फैलेनट्राइलस नट्टाली (पुअर विल)	0.86	35°C
स्तनधारी		
पीरोमिस्कस ऐरेमीकस (कैक्टस चुहिया)	0.66	30°C
ओरिक्स बाइसा (अफ्रीकी ओरिक्स)	3.24	22°C
होमो सेपिएन्स	22.32	70 किग्रा; नंग्न धूप में बैठे हुए; 35°C

आ. आ. = आपेक्षिक आद्रता

आपने ऊपर की तालिका में देखा कि कीट अपने अध्यावरण से बहुत कम जल क्षय करते हैं। यह मोमीय क्यूटिकिल (waxy cuticle) के कारण होता है जो जल के लिये अति अपारगम्य है मोम बाह्य कंकाल की सतह पर क्यूटिकिल को बेघती हुई सूक्ष्म नलिकाओं द्वारा जमा दिया जाता है चित्र (5.6)।

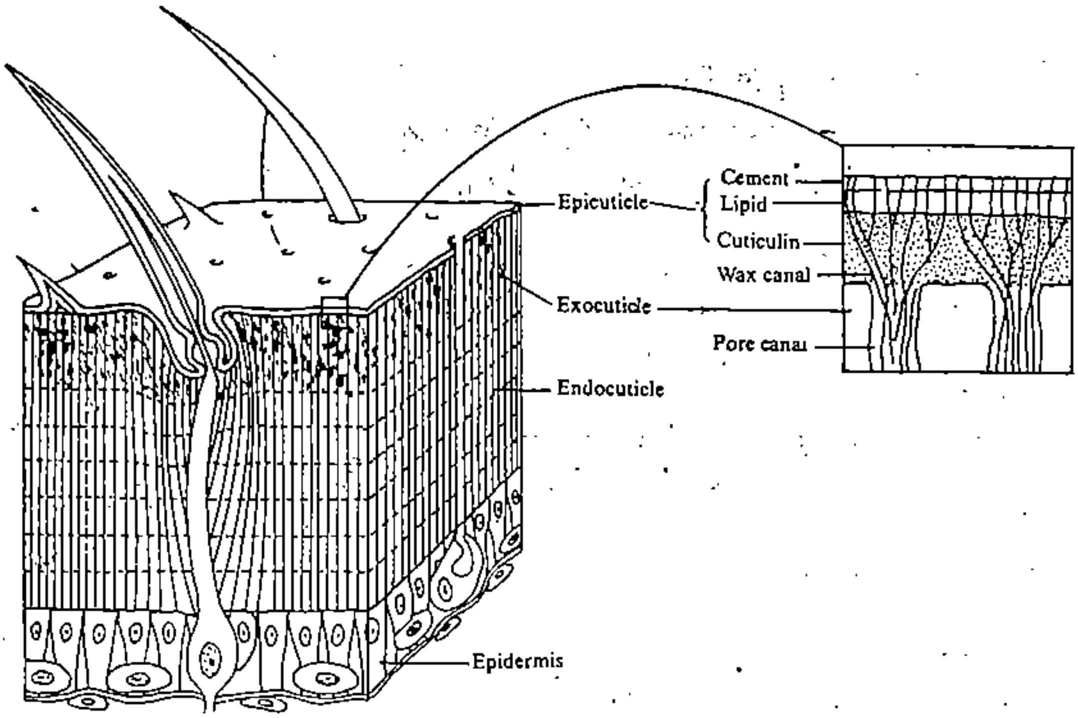

चित्र 5.6 : कीट अध्यावरण के सामान्य लक्षण

आपने तालिका 5.1 में देखा होगा कि कशेरुक अध्यावरण की जल पारगम्यता भिन्न भिन्न हो सकती है। सरीसृपों, कुछ मरुस्थलीय उभयचरों, पक्षियों और बहुत से स्तनधारियों की त्वचा अपेक्षाकृत अपारगम्य होती है। किन्तु उभयचर और ऐसे स्तनधारी जिनको पसीना आता है, निम्न नमी में अध्यावरण से जल क्षय के कारण निर्जलित हो सकते हैं। अति पारगम्य त्वचा वाले प्राणी बहुत गर्म और शुष्क पर्यावरणों को सहने में असमर्थ हैं। अधिकांश उभयचर जल के समीप ही रहते हैं और जल की आपूर्ति करते रहते हैं। ये प्राणी शुष्कन से बचने के लिये दिन के गर्म और शुष्क प्रहरों में ठंडे नम सूक्ष्म पर्यावरणों (microenvironment) में रहते हैं। टोड (toad) जो अस्थायीरूप से जल राशि से दूर भ्रमण पर निकल जाते हैं या जिन्हें वर्षा की प्रतीक्षा करनी पड़ती है उनका मूत्राशय सामान्य से बहुत अधिक बड़ा होता है और इसमें वे जल का भंडारण करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर परासरण द्वारा जल मूत्राशय की अवकाशिका (lumen) से अन्तराकाशी (interstitial) द्रव्यों और रक्त में चला जाता है। मूत्राशय की उपकला भी उभयचर की त्वचा की ही भाँति मूत्राशय की अवकाशिका से देह में Na^+ और Cl^- का सक्रिय गमन करने में सक्षम है। इस क्रिया द्वारा अति जलयोजन के समय क्षय हुए लवणों की आपूर्ति हो जाती है। बहुत से एन्यूरन उभयचरों के उदर और जंघाओं में त्वचा के विशेष क्षेत्र **सीट पैच** (seat patches) होते हैं। ये क्षेत्र जब जल में डूबे रहते हैं तब प्रतिदिन शरीर के भार का तिगुना जल अवशोषित कर सकते हैं।

ii) वायु श्वसन के दौरान जल का क्षय

आपने यह पढ़ा है कि श्वसनीय सतह से जल का क्षय होता है। स्थलीय कशेरुकी में वाष्पीकरण कम हो जाता है क्योंकि इनमें श्वसनीय सतह (फेफड़े) देह गुहा के अन्दर होती है। फेफड़ों के अन्दर भी श्वसनीय उपकला के असंतृप्त वायु द्वारा संवातन के फलस्वरूप नमी का वाष्पीकरण होता है जिससे उपकला की सतह आद्र हो जाती है। पक्षियों और स्तनधारियों में इस प्रकार वाष्पीकरण द्वारा जल की हानी शरीर के तापमान और परिवेश के तापमान में अन्तर होने के कारण बढ़ जाती है। संतृप्त गर्म हवा ठंडी हवा से अपेक्षाकृत अधिक नमी रख सकती है क्योंकि निःश्वासित (expired) वायु अंतःश्वसित (inspired) वायु की अपेक्षा गर्म होती है। निःश्वसन के समय जल का क्षय होता है।

बहुत से कशेरुकी में श्वसन द्वारा जल की हानी एक क्रियाविधि द्वारा कम से कम हो जाती है जिसे **कालगत प्रतिधारा प्रणाली** (temporal countercurrent system) कहते हैं। अंतश्वसन के समय नासिका मार्ग से प्रवेश करती ठंडी वायु नासिका मार्ग की गर्मी से गर्म हो जाती है और फेफड़ों

की श्वसनीय उपकला से नमी सोख लेती है। निःश्वसन के दौरान यही वायु अपने पूर्व अर्जित ताप का अधिकांश भाग ठंडे नासिका मार्ग को गर्म करने में खो देती है। जैसे-जैसे निःश्वसित वायु अपना कुछ ताप नासिका मार्ग के ऊतकों को देती जाती है वैसे-वैसे श्वसनीय उपकला से अर्जित अधिकतर नमी ठंडी नासिका उपकला पर संघनित होती जाती है। अगले अन्तःश्वसन के साथ यह संघनित नमी अंतश्वसनित वायु के आर्द्रीकरण में योगदान देती है। इस चक्र की पुनरावृत्ति होती रहती है (चित्र 5.7)।

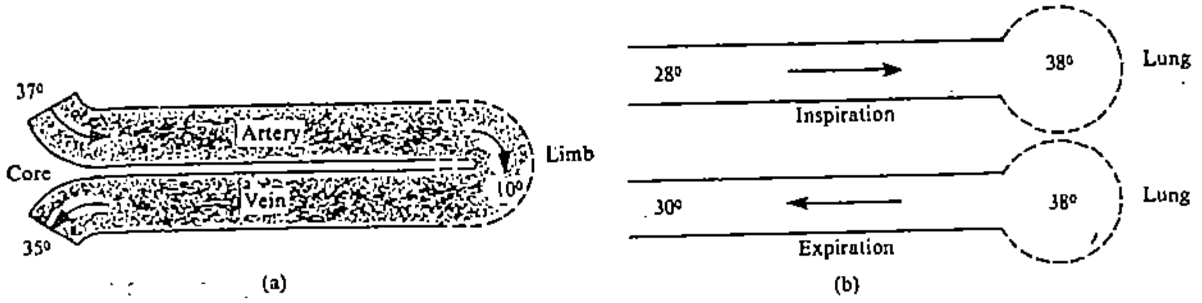

चित्र 5.7 : कालगत प्रतिधारा प्रणाली।

आप जानते हैं कि क्यूटिकिल अति अपारगम्य होती है और इसलिये कीटों में इस मार्ग से जल क्षय नहीं होता है। स्तलीय कीटों में जल क्षय मुख्यतः वातक (tracheal) तंत्र द्वारा होता है। आपने इकाई 2 में यह पढ़ा है कि वातक तंत्र वायु भरे लघुवातकों (tracheoles) से बना है जो ऊतकों को ऑक्सीजन की आपूर्ति करते हैं। लघुवातकों के प्रवेश द्वार श्वासरन्ध्र (spiracles) कहलाते हैं। श्वासरन्ध्रों में पेशियाँ होती हैं और यह लघुवातकों के वाल्वों (valves) की तरह काम करते हैं। श्वासरन्ध्र जल क्षय को रोकने के लिये बन्द रहते हैं। ये समय-समय पर श्वसन के लिये ऑक्सीजन को अन्दर आने देने के लिये बहुत थोड़े समय के लिये खुलते और बन्द होते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड का बाहर निकलना ऑक्सीजन के अन्दर आने के तुरन्त बाद नहीं होता है। कार्बन डाइऑक्साइड जमा होती जाती है और एक झटके में बाहर फेंक दी जाती है। जल का क्षय केवल इसी क्षण हो सकता है। श्वासरन्ध्रों का नियतकालिक खुलना तथा बन्द होना श्वासरन्ध्रीय पेशियों द्वारा होता है। कुछ स्थलीय आर्थोपोड वायु से सीधे जलवाष्प निकालने में सक्षम हैं।

iii) उत्सर्जन के दौरान जल क्षय

स्थलीय प्राणियों में नाइट्रोजनी उत्सर्गों के उत्सर्जन के दौरान भी शरीर से पानी का क्षय होता है। इस प्रक्रिया से सम्बद्ध जल क्षय को कम से कम करने के लिये कई शरीरक्रियात्मक अनुकूलनों का विकास हुआ है। आपने पिछली इकाई में यह पढ़ा था कि स्थलीय अकशेरुकियों में कीट जल संरक्षण में सबसे समर्थ हैं। स्थलीय कशेरुकियों में परासरण नियमन और उत्सर्जन का प्रमुख अंग वृक्क है। हेन्ले पाश (loop of Henle) वृक्काणु (nephron) का विशिष्ट भाग है जो अति परासारी मूत्र उत्पन्न करता है। उभयचर और सरीसृप जो अतिपरासारी मूत्र उत्पन्न करने में असमर्थ हैं इस अनुकूलन के फलस्वरूप परासरण प्रतिबल के समय मूत्र निर्माण पूर्णतः बन्द कर देते हैं।

कंगारू चूहा (kangaroo rat) : मरुस्थलीय जीवन के अनुकूलनों का एक क्लासिकी उदाहरण

दक्षिण पश्चिमी अमरीका का मूल निवासी कंगारू चूहा *डाइपोडोमिस मेरियामी (Dipodomys merriami)* इसका एक क्लासिकी उदाहरण है कि छोटे स्तनधारी किस प्रकार मरुस्थल में जीवित रहते हैं। इसमें मरुस्थलीय जीवन के लिये सभी परासरण नियमक अनुकूलन होते हैं। यह निम्नलिखित अनुकूलनों के कारण शुष्क परिस्थितियों में बिना मुक्त जल का अन्तर्ग्रहण किये रह सकता है;

1) यह अपनी रात्रिचर जीवनचर्या के कारण दिन की गर्मी से बच जाता है और दिन के समय बिलों में रहकर अपने को ठंडा रखता है। इससे वाष्पकृत शीतलन के कारण होने वाली जल की हानि कम हो जाती है।
2) यह सफल नासिका प्रतिधारा क्रियाविधि द्वारा श्वसन नमी का संरक्षण करता है।
3) यह अति सान्द्र मूत्र का उत्सर्जन करता है।

4) मलाशय द्वारा मल में से, जल का अवशोषण होता है जिसके कारण मल की सूखी गोलियाँ बनती हैं।

कंगारू चूहा पानी पीते नहीं देखा गया है। यह जिस सूखे बीज को खाता है केवल उसी से इसे मुक्त जल की सूक्ष्म मात्रा मिलती है। यह अपनी उत्तरजीविता के लिये मुख्यतः उपापचयी जल पर निर्भर रहता है।

चित्र 5.8 में प्राणियों के विभिन्न वर्गों में परासरण नियमक प्रक्रियाओं का सारांश दिया गया है।

	Blood concentration relative to environment	Urine concentration relative to blood
Marine elasmobranch	Isotonic	Isotonic
Marine teleost	Hypotonic	Isotonic
Freshwater teleost	Hypertonic	Strongly hypotonic
Amphibian	Hypertonic	Strongly hypotonic
Marine reptile	Hypotonic	Isotonic
Desert mammal	–	Strongly hypertonic
Marine mammal	Hypotonic	Strongly hypertonic
Marine bird	–	Weakly hypertonic
Terrestrial bird	–	Weakly hypertonic

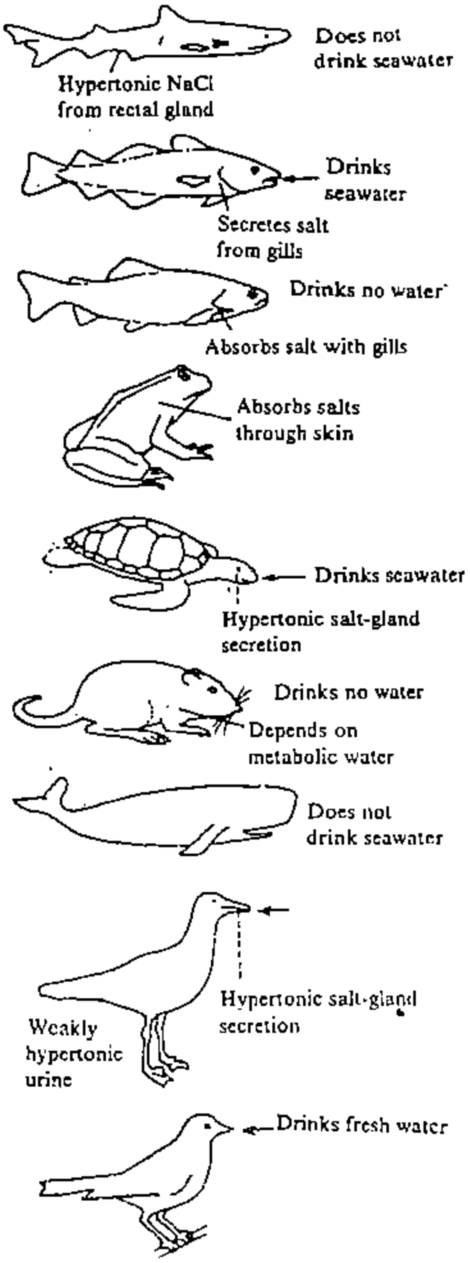

चित्र 5 ... ायों के विभिन्न समूहों में परासरण नियामक प्रक्रियाओं का सारांश।

बोध प्रश्न 3

स्थलीय पर्यावरण में परासरण नियमन में निम्न की क्या भूमिका है। केवल दो या तीन पंक्तियों में समझाइए।

i) कीटों की क्यूटिकिल ....

....

....

ii) कालगत प्रतिधारा प्रणाली ....

....

....

iii) श्वासरन्ध्रीय पेशियाँ ....

....

....

5.5 जल और विद्युत अपघट्यों के नियमन में हॉर्मोन

आपने इस इकाई के पिछले भागों में यह अध्ययन किया कि प्राणी किस प्रकार शरीर में लवणों और जल की मात्रा पर नियंत्रण रखते हैं। हॉर्मोन परासरणी और आयनी नियमन में सार्थक भूमिका निभाते हैं। इस भाग में हम अकशेरुकियों और कशेरुकियों में परासरण नियमन के हॉर्मोनी नियंत्रण की क्रियाविधि के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

5.5.1 अकशेरुकी

अकशेरुकियों में जल और आयनों का नियमन तंत्रि—अन्तःस्रावी क्रियाविधि से होता है। यह क्रियाविधि कीटों में मैलपीगी नलिकाओं और मलाशय पर कार्य करती हैं। एक तंत्रिकास्रावी पदार्थ जो डाईयूरेटिक हॉर्मोन (diuretic hormone) कहलाता है मलाशय से जल के पुनः अवशोषण का संदमन करता है और मैलपीगी नलिकाओं द्वारा जल के अन्तर्ग्रहण का उद्दीपन करता है। कुछ कीटों में एन्टीडाईयूरेटिक हॉर्मोन ए डी एच (antidiuretic hormone : ADH) नलिकाओं द्वारा जल के बहिर्गमन को कम करता है और मलाशय द्वारा जल के अवशोषण को बढ़ाता है। एक और तंत्रिकास्रावी हॉर्मोन जिसे क्लोराइड ट्रांसपोर्ट स्टिम्युलेटिंग हॉर्मोन (CTSH) कहते हैं कीटों में विद्युत अपघट्यों के संतुलन को नियंत्रित करता है। यह मलाशय ऊतकों में चक्रीय ए एम पी (cyclic AMP) के स्तर को दो से तीन गुना बढ़ा देता है जो मलाशय की कोशिकाओं के क्लोराइड पम्प को क्रियाशील करके क्लोराइड आयनों का रक्त गुहा में सक्रिय वहन करता है।

5.5.2 कशेरुकी

स्थलीय कशेरुकियों में हॉर्मोन जैसे प्रोलैक्टिन (prolactin), एन्टीडाईयूरेटिक हॉर्मोन और एड्रीनोकार्टिकल स्टीराइड (adrenocortical steriod) जल और लवणों के संतुलन का नियंत्रण करते हैं। यूरोहाइपोफाइसिस (urohypophysis) और स्टेनियस कणिकाओं (corpuscles of Stannius) के हॉर्मोन भी कुछ जलीय प्राणियों में इन कार्यों में लगे हुए हैं। पैराथाइरॉइड ग्रन्थियों और क्लोमांत्य (ultimobranchial) पिंड कैल्सियम और फ़ॉस्फ़ोरस का स्तर बनाये रखते हैं। कैटाकोलेमीन (catacholamine) और एंजिओटेन्सिन (angiotensin) भी इस नियंत्रण तंत्र में भाग लेते हैं। हॉर्मोन परस्पर मिलकर अथवा अकेले जल या आयन संतुलन से सम्बन्धित लक्ष्य अंगों (target organs) पर क्रिया करते हैं। आइए अब हम उनके बारे में अलग-अलग अध्ययन करें।

i) प्रोलैक्टिन

प्रोलैक्टिन पीयूष (pitutary) ग्रंथि द्वारा स्रावित होती है। मछलियों, कुछ उभयचरों, पक्षियों और स्तनधारियों में यह जल और विद्युत अपघट्य संतुलन से सम्बन्धित अंगों पर क्रिया करती है। प्रवासी मछलियों में प्रोलैक्टिन का स्रावण शरीरक्रियात्मक परिवर्तनों को बढ़ावा देता है। यह लवणों के क्षय का संदमन करता है और बहुत अधिक मात्रा में अल्पआयनी मूत्र के उत्पादन का उद्दीपन करता है।

ii) एन्टीडाइयूरेटिक हॉर्मोन (ADH)

यह वैसोप्रेसिन (vasopressin) भी कहलाता है। ADH जल के अवरोधन में सहायक है। इसका संश्लेषण हाइपोथैलेमस (hypothalamus) की तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं से और भंडारण न्यूरोहाइपोफाइसिस (neurohypophysis) में होता है। ADH संग्राहक वाहिनी की पारगम्यता

को, कदाचित कोशिका छिद्रों को फैलाकर, बढ़ाता है। फलतः जल का संचलन नलिकाओं के बाहर की ओर होने लगता है और चारों ओर के द्रव्यों और रक्त कशेरुकियों में लवणों की सान्द्रता बढ़ा देता है। ADH का प्रभाव वृक्क से निकलने वाले मूत्र को अपेक्षाकृत अतिपरासारी बनाता है। संग्राहक वाहिनी में आने वाला मूत्र रक्त से अतिपरासारी और उससे निकलने वाला अल्पपरासारी होता है। जल के अवरोधन की क्रिया में एड्रीनोकॉर्टिकल (adrenocortical) हॉर्मोन ADH की भूमिका में सहायता देता है। हाल ही में खोज हुई है कि वृक्क में उत्पादित हॉर्मोन का एक और समूह जिन्हें प्रोस्टाग्लैंडिन (prostaglandins) कहते हैं, ADH का विरोधी है।

iii) एड्रीनोकॉर्टिकल स्टेराइड

अधिवृक्क वल्कुट अर्थात एड्रीनल कॉर्टेक्स (adrenal cortex) दो प्रकार के स्टेराइड हॉर्मोनों **ग्लूकोकॉर्टिकाइड** (glucocorticoid) और **मिनरेलोकॉर्टिकॉइड** (mineralocorticoid) का स्रावण करता है। ग्लूकोकॉर्टिकाइड, ग्लूकोस के नियमन से संबंधित है और मिनरेलोकॉर्टिकॉइड लवण नियमन से सम्बंधित है। ग्लूकोकॉर्टिकाइड और मिनरेलोकॉर्टिकॉइड के बीच उपरोक्त विभेद स्तनधारियों में पाया जाता है किन्तु अन्य कशेरुक इस विभेद को नहीं बनाये रखते हैं। सामान्यतः कार्टिकोस्टीरॉइड की क्रिया अनुकूली है। लवण बहिर्गमन या अवरोधन पर्यावरणी माँगों के अनुसार बदलता रहता है।

स्तनधारियों में **एल्डोस्टीरॉन**, एक मिनरेलोकॉर्टिकॉइड, विद्युत अपघट्य संतुलन से सम्बन्ध रखता है। इसका उत्पादन पीयूष ग्रंथि से स्रावित **एड्रीनोकॉर्टिकोट्रॉपिक हॉर्मोन** ACTH की प्रतिक्रिया में होता है ACTH स्वयं हाइपोथेलेमस के **कार्टिकोरोपिन रिलीजिंग घटक** (corticoropin releasing factor : CRF) की प्रतिक्रिया में विमुक्त होता है। पीनियल ग्रंथि से निकला **ग्लोमेरुलोट्रोपिक हॉर्मोन** भी एल्डोस्टीरोन के स्रावण का उद्दीपन करता है। गैर स्तनधारी कशेरुकियों में एल्डोस्टीरोन के अतिरिक्त एक और मिनरेलोकॉर्टिकाइड, कॉर्टिसॉल (cortisol) NaCl के अवशोषण को बढ़ावा देता है। मिनरेलोकॉर्टिकॉइड सोडियम के नलकीय अवशोषण को बढ़ाते हैं और पोटैशियम के वृक्कीय उत्सर्जन की वृद्धि करते हैं।

iv) एंजियोटेन्सिन

ACTH और ग्लोमेरूलोट्रोपिक हॉर्मोन के द्वारा अधिवृक्क वल्कुट के उद्दीपन से एल्डोस्टीरोन के स्रावण के अतिरिक्त वृक्क स्वयं सोडियम के स्तर की निगरानी रेनिन-एंजियोटेन्सिन तंत्र (renin-angiotensin system) से करते हैं। जब सोडियम का स्तर गिर जाता है केशिका-गुच्छ (glomerulus) की गुच्छासन (juxtaglomerular) केशिकाएं रक्त में एक एंज़ाइम रेनिन का स्रावण करते हैं। रेनिन एक पूर्ववर्ती प्लाज्मा प्रोटीन एंजिओटेन्सिन को जल अपघटित करके उसको सक्रिय हॉर्मोन एंजिओटेन्सिन में परिवर्तित करती है। एंजिओटेन्सिन अधिवृक्क वल्कुट पर क्रिया करती है और एल्डोस्टीरॉन स्रावण को बढ़ावा देती है। एल्डोस्टीरॉन वृक्कीय नलिकाओं द्वारा सोडियम के अन्तर्ग्रहण को बढ़ावा देती है।

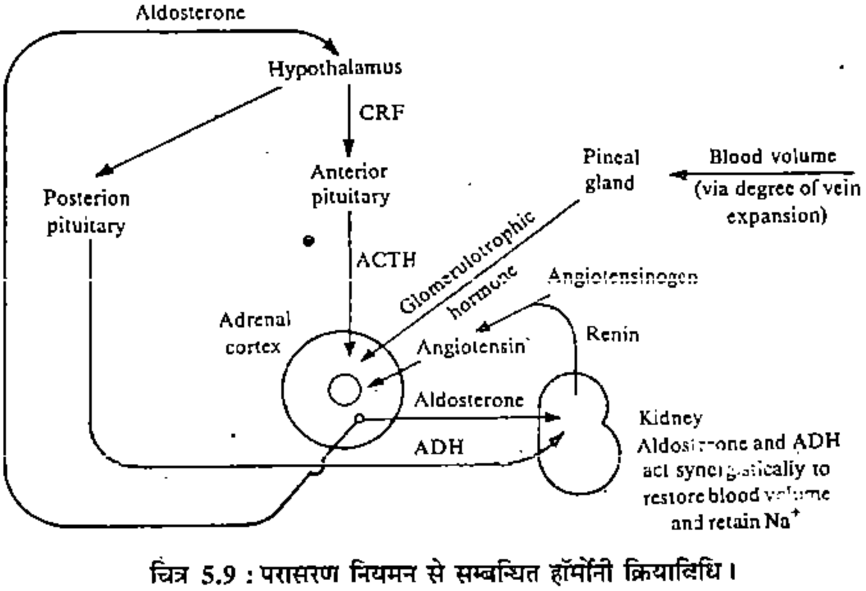

चित्र 5.9 : परासरण नियमन से सम्बन्धित हॉर्मोनी क्रियाविधि।

एल्डोस्टीरॉन वृक्क की धमनिकाओं (arterioles) पर क्रिया करके यह सुनिश्चित करती है कि वृक्क में नियमित रक्त प्रवाह होता रहे। चित्र 5.9 में आप जल और लवण के संतुलन बने रहने में सभी हॉर्मोनों की जटिल पारस्परिक क्रिया को देख सकते हैं।

बोध प्रश्न 4

परासरण आयनी नियमन में निम्न हॉर्मोनों की भूमिका संक्षिप्त में समझाइए।

i) एन्टीडाइयूरेटिक हॉर्मोन ....

....

....

ii) प्रोलैक्टिन ....

....

....

iii) एल्डोस्टीरॉन ....

....

....

5.6 सारांश

आपने इस इकाई में अध्ययन किया कि :

- परासरण नियमन एक क्रिया है जिससे देह तरल की परासरणी सान्द्रता बनी रहती है। प्राणियों ने अपने परासारी पर्यावरण की कठिनाइयों से निपटने के लिये विभिन्न शरीरक्रियात्मक और व्यवहारिकी क्रियाविधियाँ अपनाई हैं।
- चूँकि अलवणजलीय प्राणियों के देह तरल उनके चारों ओर के जलीय माध्यम से अतिपरासारी हैं अतः जल परासारी प्रवणता के कारण, उनके शरीर में प्रवेश कर जाता है और शारीरिक लवण से बाहर निकल जाते हैं। वे अधिक मात्रा में मूत्र बना कर जल के शुद्ध लाभ को रोकते हैं। खोए हुए लवण अंशतः आहार से प्रतिस्थापित हो जाते हैं, और अधिकांश अल्पपरासारी माध्यम से सक्रिय वहन द्वारा सोख लिए जाते हैं।
- कुछ समुद्री प्राणियों के देह तरल समुद्री जल से समपरासारी होतें हैं इस कारण उनको देह तरल के समसान्द्रण के नियंत्रण में अधिक ऊर्जा का व्यय नहीं करना पड़ता। समुद्री प्राणी विशेषकर टीलिओस्ट मछलियाँ जिनके देह तरल समुद्री जल से अल्पपरासारी होते हैं उनके शरीर से जल क्षय की संभावना बनी रहती है। अतः इस प्रकार क्षयित जल को पुनः शरीर में लाने के लिये वे समुद्री जल को पीते हैं। आवश्यकता से अधिक लवण जो समुद्री जल के साथ शरीर में आ जाते हैं, गुदा, वृक्कों और क्लोमों के मार्ग से सक्रिय वहन द्वारा निकाल दिये जाते हैं। समुद्री सरीसृपों और पक्षियों में जो लवण शरीर में पिये गये समुद्री जल के साथ आ जाते हैं उनका लवण ग्रंथियों द्वारा स्रावण हो जाता है।
- स्थलीय पर्यावरण में प्राणी शुष्क परिस्थितियों के कारण शरीर से जल के क्षय की समस्या का सामना करते हैं। जल के साथ लवणों का भी क्षय होता है। शुष्क पर्यावरणों में आवास करने वाले प्राणी, रात्रिचर स्वभाव अपनाकर, दिन के गर्म और शुष्क प्रहरों में ठंडे नम सूक्ष्म पर्यावरणों में रहकर जल की हानी बचाते हैं। जल की हानी से बचने के लिये उन्होंने श्वसन में कालगत प्रतिधारा प्रणाली और उत्सर्जन में अति सान्द्र मूत्र का उत्पादन जैसी शरीरक्रियात्मक क्रियाविधियाँ विकसित कीं।
- अकशेरुकियों में हॉर्मोन जैसे डाईयूरेटिक हॉर्मोन, एन्टीडाईयूरेटिक हॉर्मोन, क्लोराइड ट्रांसपोर्ट स्टिम्युलेटिंग हॉर्मोन जल और विद्युत अपघट्यों के संतुलन के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते

हैं। प्रोलैक्टिन, एंटीडाइयूरेटिक हॉर्मोन, मिनरेलोकार्टिकॉइड, एंजिओटेन्सिन और प्रोस्टाग्लैन्डिन वे हॉर्मोन हैं जो कशेरुकियों में परासरण आयनी नियमन से सम्बद्ध हैं।

5.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) संक्षेप में समझाइए कि किस प्रकार प्रवासी मछलियाँ परासरण नियमन की समस्या का सामना करती हैं।

....

....

....

....

....

2) संक्षेप में उन अनुकूलनों को समझाइए जो कंगारू चूहे में शुष्क परिस्थितियों के लिये पाये जाते हैं।

....

....

....

....

....

5.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) a) iv, b) ii, c) i, d) iii

2) i) सत्य
ii) सत्य
iii) सत्य
iv) सत्य
v) असत्य
vi) सत्य
vii) असत्य

3) i) कीटों की क्यूटिकिल जल के लिये अपारगम्य है वह हीमोलिम्फ से नमी का क्षय बचाती है और कीटों में निर्जलन रोकती है।

ii) यह एक क्रियाविधि है जिससे शुष्क मरुस्थलीय क्षेत्रों के स्तनधारी, सरीसृप और पक्षी श्वसनीय जल क्षय को कम कर लेते हैं। ठंडी हवा जो नासिका मार्ग में घुसती है नासिका मार्ग के ताप से गर्म हो जाती है और श्वसनीय उपकला से नमी सोखती है। निःश्वसन के समय वही गर्म हवा ठंडे नासिका मार्ग को गरम कर देती है और उसमें पाया जाने वाला जल नासिका उपकला पर संघनित होकर जल क्षय को रोकता है।

iii) स्थलीय कीटों में श्वासरंध्र पेशियां देह तरलों से जल क्षय को घटाने में सहायता देती हैं। स्थलीय कीटों में वातक तंत्र जल क्षय का प्रमुख मार्ग होता है इसलिये श्वासरंध्र जल क्षय को रोकने के लिये बन्द हो जाते हैं। ऑक्सीजन के अन्तर्ग्रहण के लिये वे अल्प समय के लिये समय-समय पर खुलते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड जमा होती रहती है और एक झटके में निकाल दी जाती है। श्वासरंध्र का समय-समय पर खुलना और बन्द होना श्वासरंध्र पेशियों द्वारा होता है।

4) i) भाग 5.5 देखें।
   ii) भाग 5.5 देखें।
   iii) भाग 5.5 देखें।

अन्त में कुछ प्रश्न

1) उपभाग 5.3.2 देखें।
2) भाग 5.4 देखें।

शब्दावली

अलिंद (atrium) : (लैटिन एट्रियम — प्रवेश हॉल) हृदय में शिरा रक्त प्राप्त करने वाले दो कक्षों में से कोई एक या दूसरा।

आन्त्रेतक पोषण (parenteral nutrition) : आहार नाल से पोषक न देकर अद्यःत्वचीय, अंतःपेशीय, अंतःशिरा अथवा अन्य किसी भी मार्ग द्वारा इन्जेक्शन से पोषण पहुंचाना।

एंडोसाइटोसिस (endocytosis) : कोशिकीय झिल्लियों में से पार न हो सकने वाले कणों को कोशिका द्वारा भीतर ले लेना। यह क्रिया कोशिका झिल्ली में अंतर्वलन के द्वारा होती है और झिल्ली में बंद एक आशय सतह से टूटकर कोशिकाओं के भीतर आ जाता।

ऐथीरोस्क्लेरोसिस (atherosclerosis) : मध्यम तथा बड़ी धमनियों में एक प्रकार का स्थूलन (मोटा होना) तथा कड़ा होना, जिसमें अरेखित पेशी कोशिकाओं, कोलेस्टेरॉल तथा अन्य लिपिडों से ट्यूनिका इंटिमा के भीतर उभरे हुए क्षेत्र अथवा प्लाक (plaques) बन जाते हैं। ये प्लाक धमनियों को अवरुद्ध कर देते हैं।

काइम (chyme) : आहार पर अमाशय की क्रियाओं के फलस्वरूप बनने वाला गाढ़ा पदार्थ।

कोएनोसाइट (choanocytes) : अथवा कीपकोशिकाएं: स्पजों में देहनाल का अस्तर बनाने वाली फ्लैजेला युक्त कोशिकाएं। इनके स्पंदन से स्पंज के शरीर में जल धारा बन जाती है। यह जलधारा अपने साथ कोशिकाओं के वास्ते आहार तथा ऑक्सीजन लाती है और कार्बन डाइऑक्साइड तथा अन्य अपशिष्टों को अपने साथ बाहर ले जाती है।

क्रेटिनता (cretinism) : जन्म से पहले अथवा आरम्भिक बचपन में थाइरॉइड के अपर्याप्त स्राव से पैदा होने वाली दशा। इससे बढ़ोतरी अवरुद्ध हो जाती है और मानसिक विकास पूरा नहीं होता।

ग्रीष्मनिष्क्रियता (aestivation) : "ग्रीष्म निद्रा"। खुश्क तथा गर्म ऋतुओं में कुछ प्राणियों में निष्क्रियता की अवस्था जिसमें अपनी देह के तापमान को बढ़ने से बचाने के लिए किसी ठंडे एवं छायादार स्थान में रहते हैं।

पित्त (bile) : यकृत द्वारा निर्मित एक क्षारीय तरल जो पित्ताशय में संचित होता है तथा जिसमें पित्त लवण, पित्त रंजक, कोलेस्टेरॉल तथा अन्य अणु होते हैं। पित्त का स्राव छोटी अंतड़ी में पहुंचता है तथा यह वसा के पाचन के वास्ते अनिवार्य है।

पित्त लवण (bile salt) : कोलिक अम्ल जैसा पित्त अम्ल जो ग्लाइसीन अथवा टौरीन के साथ जुड़ा होता है और अंतड़ियों में वसाओं के पायसीकरण (emulsification) एवं विलयनीकरण को बढ़ाता है।

प्रणाशी रक्ताल्पता (pernicious anaemia) : पुरानी रक्ताल्पता जिसमें लाल रक्त कोशिकाएं सामान्य से अधिक बड़ी तथा अधिक पीली होती हैं। यह अमाशय रस में एक आंतरिक कारक के अभाव से होती है जो B_{12} के अवशोषण के वास्ते आवश्यकता है।

पेलाग्रा (pellagra) : निएसिन अभाव रोग जिसमें त्वचा में घाव बन जाते हैं जो धूप पड़ने पर तीव्र हो जाते हैं तथा जठरांत्र, ग्सूकोसा, तंत्रिकीय एवं मानसिक लक्षण प्रकट होते हैं। इस रोग के साथ चार "D" का संबंध कहा जाता है — डर्मेटाइटिस (चर्मशोथ), डायरिया, डिमेंशिया (मनोभ्रंश), तथा डेथ (मृत्यु)।

महाधमनी (aorta) : हृदय से निकलने वाली सबसे मोटी व प्रमुख धमनी।

मेगैलोब्लास्टिक अरक्तता (megoloblastic anaemia) : ऐसी रक्तक्षीणता जिसमें बड़े आकार की लाल रक्त कोशिकाएं बनती हैं जो पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं ले जा पातीं। यह फोलिक अम्ल की कमी से होती है जिसके कारण हीम का दोषपूर्ण संश्लेषण होता है।

मेन्के का सिंड्रोम (Menke's syndrome) : एक विरल आनुवंशिकतः निर्धारित तांबा अवशोषण दोष। इसमें थोड़े एवं मुंगर केश तथा धमनीय एवं मस्तिष्कीय अपकर्ष पाया जाता है। इसमें अबसे पहले तक बच्चे 3 वर्ष से अधिक जीवित नहीं रहते थे। मगर अब तांबा पूर्ति करने से बचने की आशा बंध जाती है।

मिक्सेडीमा (myxedema) : अल्पथॉइरॉइडता से संबंधित एक प्रकार की देह सूजन। इसमें विशिष्टतः ऊतक तरल में म्यूकोप्रोटीनों एकत्रित हो जाते हैं।

मिसलीज़ (miscelles) : अणुओं के समुच्चयन से बने कण।

विऐमीनिकरण (deamination) : किसी एक यौगिक से NH_2 समूह का निकलना।

अतिरिक्त पठनीय सामग्री

General and Comparative Physiology, William S. Hoar (Third Edition) 1991. Prentice Hall of India Private Ltd., New Delhi.

बॉक्स 1

विलियम हार्वे और परिसंचरण अध्ययन

हृदय और रक्त संचारण पर विलियम हार्वे (William Harvey) की पुस्तक सन 1628 में लेटिन में सबसे पहले प्रकाशित हुई थी, जिसमें परिसंचरण के लगभग उन सभी प्रमुख लक्षणों का वर्णन किया गया था, जिनके बारे में आज हम जानते हैं।

हार्वे के इस महान कार्य से पहले परिसंचरण के बारे में अपेक्षाकृत बहुत कम जानकारी थी और जितनी भी जानकारी थी वो गलत थी। एक समय पर तो यह समझा गया कि रक्त शरीर में स्थिर होता है अर्थात् परिसंचरण नहीं करता। बाद में ये भी माना गया कि रक्त संचलन मंद होता है और रक्त अनियमित रूप से गति और दिशा बदलता रहता है। तब तक यह भी नहीं माना गया था कि हृदय ही रक्त संचालन के लिए उत्तरदायी है। यह समझा जाता था कि हृदय स्पंदन और धमनी स्पंदन उनमें मौजूद अदृश्य आत्मा (vital spirit) के कारण होता है। रक्त को दो प्रकार का समझा जाता था, एक जिसे हम आज फुप्फुसी परिसंचरण के रक्त के रूप में जानते हैं और दूसरा जिसे दैहिक परिसंचरण के रक्त के रूप में जानते हैं।

हार्वे ने अत्यंत सावधानी से शारीरिक प्रेक्षण और सुचारू रूप से शरीरक्रियात्मक प्रयोग किये। जब संरचनात्मक आधार भलि भांति समझ में आ गया तो उन्होंने प्रकार्य अध्ययन करना आरंभ किया। उन्होंने कशेरुकियों तथा अकशेरुकियों में हृदय एवं रक्त संचलन के तुलनात्मक प्रेक्षण मोलस्क और कीटों से लेकर मछलियों, उभयचरों, सरीसृपों और स्तनधारियों तक किये थे। निलयों की रक्त क्षमताओं और रक्त प्रवाह दरों का आकलन किया। इसके साथ साथ उन्होंने परिसंचरण पर औषधों के प्रभाव और शारीरिक मुद्राओं के कारण होने वाले परिवर्तनों का भी अध्ययन किया। हालांकि शिराओं में वाल्वों की खोज सोलहवीं शताब्दी में फेब्रिशियस (Fabricius) द्वारा की जा चुकी थी परन्तु हार्वे ही ने हृदय वाल्वों की भांति शिराओं के वाल्वों के प्रकार्य की व्याख्या की।

हार्वे ने परिसंचरण तंत्र की हमारी अधिक जानकारी के लिए आधार तैयार कर दिया था। वह केवल एक प्रमुख कार्य नहीं कर सके—वह था धमनियों और शिराओं के बीच केशिकाओं की खोज। हार्वे की मृत्यु के चार साल बाद मार्सेलो मैलपीजी (Marcello Malpighi) ने इनकी खोज की और केशिका संचरण का वर्णन किया।

प्रिय छात्र/छात्रा,

इस पाठ्यक्रम के बारे में आपकी राय जानने के लिए हमने यह प्रश्नावली तैयार की है, जो इसी खंड के लिए है। आपके उत्तर हमें पाठ्यक्रम को सुधारने में मदद करेंगे।

कृपया इसे भरकर हमें शीघ्र भेज दें।

प्रश्नावली

एल.एस.ई.-05
खंड 1

नामांकन सं.

1) इकाइयों को पढ़ने में आपको कितने घंटे लगे?

इकाई सं.	
कुल घंटे	

2) इस खंड से संबंधित कार्य को करने के लिए आपको (लगभग) कितने घंटे लगे?

	टी.एम.ए.	सी.एम.ए.
सत्रीय कार्य सं.		
कुल घंटे		

3. हमारे विचार से आपके सामने 4 प्रकार की कठिनाइयाँ आई होंगी, उन्हें निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। उपयुक्त कॉलमों में कृपया अपनी कठिनाई पर (√) का निशान लगाइए और सही पृष्ठ संख्या लिखिए।

कठिनाइयों के प्रकार				
पृष्ट सं.	प्रस्तुतीकरण स्पष्ट नहीं है	भाषा कठिन है	चित्र स्पष्ट नहीं है	शब्दावली समझाई नहीं गई है

4. हमारा विचार है कि बोध प्रश्नों और अंत में दिये गये प्रश्नों में आपको कुछ कठिनाई हुई होगी। निम्नलिखित तालिका में हमने संभावित कठिनाइयाँ दी हैं। उपयुक्त कालमों में संबंधित इकाइयाँ और प्रश्न संख्या देते हुए अपनी कठिनाइयों पर निशान लगाइए।

इकाई संख्या	बोध प्रश्न संख्या	अंत में दी गई प्रश्न संख्या	कठिनाई का प्रकार			
			प्रश्न स्पष्ट नहीं है	दी गई जानकारी के आधार पर उत्तर नहीं दिया जा सकता	इकाई के अंत में दिया गया उत्तर स्पष्ट नहीं है	दिया गया उत्तर पर्याप्त नहीं है

5. (क) क्या खंड के अंत में दी गई शब्दावली उपयोगी नहीं?
(ख) यदि नहीं, तो निम्न स्थान में कठिन शब्द लिखें।

6. अन्य सुझाव

सेवा में,

पाठ्यक्रम समन्वयिका (एल.एस.ई.-05 फिजियोलाजी
विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी
नई दिल्ली-110 068

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGZY/BY-08

फ़िज़ियोलॉजी

खंड

2

प्राणी शरीरक्रिया विज्ञान-II

इकाई 6	
संचलन	5
इकाई 7	
प्राणियों में तापमान संबंध	22
इकाई 8	
जनन	37
इकाई 9	
संचार-I	64
इकाई 10	
संचार-II	86

खंड 2 प्राणी-शरीरक्रिया विज्ञान-II

इस पाठ्यक्रम के पहले खंड में आपने पोषण, श्वसन तथा परिसंचरण के विषय में पढ़ा था जिनका आपस में निकटतम संबंध हैं। आपने यह भी जाना किस प्रकार प्राणी विभिन्न पर्यावरणों में अपने देह तरलों का संतुलन बनाए रखते हैं। आपने उससे संबंधित उत्सर्जन समस्याओं के विषय में भी पढ़ा। पहले खंड की विषयवस्तु थी प्राणी और उसके पर्यावरण का संबंध।

यही विषयवस्तु दूसरे खंड में भी इकाई 6 संचलन तथा इकाई 7 प्राणियों में तापमान-संबंध में जारी रखी गयी है। प्राणी को अपने मैथुनसाथी को ढूंढने, आहार ढूंढने और साथ ही शत्रुओं एवं चरम जलवायु परिस्थितियों से बचने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर आना-जाना होता है। आप उन तीन मूलभूत क्रियाविधियों के विषय में पढ़ेंगे जिनसे प्राणियों में गति उत्पन्न होता है—अमीबीय चलन पक्ष्माभी एवं कशाभी चलन और पेशीय गति जोकि प्राणी-जीवन का सबसे सुव्यक्त एवं प्रभावशाली प्रमाण है। इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप द्वारा किए गए अध्ययनों से और जीवरसायन तथा जैवभौतिकी से जो प्रमाण मिले हैं उनसे हमें पेशियों की संकुचनी क्रियाविधि किस प्रकार गठित होती है और उस क्रियाविधि से पेशी किस प्रकार संकुचित और छोटी होती है का ज्ञान हुआ है।

आपने कोशिका जैविकी (LSE-01) में पढ़ा था कि तापमान से उपापचय की दर में परिवर्तन हो जाता है। सक्रिय प्राणी-जीवन तापमान के एक संकीर्ण सीमाविस्तार के बीच सीमित होता है। यह तापपरास उत्तरीय ध्रुवसागरीय जल के 1°C की निम्न सीमा से लेकर गर्म सोतों के 50°C तक के ऊपरी तापमान तक फैला होता है। इकाई 7 में प्राणियों की ताप-प्रतिक्रियाओं तथा उनके प्रभावों से प्राणी किस प्रकार जूझते हैं, इन बातों पर विवेचन किया गया है।

इकाई 8 में जीवधारियों के मूलभूत कार्य यानी जनन का वर्णन किया गया है। जनन की आवश्यकता स्पीशीज़ को बनाए रखने के वास्ते है और कुछ प्राणी जैसे कि कुछ कीट और मछलियां जन्म लेते और मात्र जनन के लिए ही जीते हैं। उदाहरण के लिए, रानी मधुमक्खी या रानी दीमक आजीवन जनन ही करती रहती है और इसके अलावा कुछ नहीं करती। सामन (salmon) मछली जनन करने तक ही जीवित रहती है, और प्रजनन ऋतु के बाद शीघ्र ही मर जाती है। इस इकाई में मुख्यतः कशेरुकियों में जननांगों के कार्यात्मक शारीर (functional anatomy) को लिया गया है।

समस्त शरीरक्रियात्मक प्रक्रियाओं के नियमन एवं नियंत्रण का विवेचन इकाई 9 और 10 में (संचार-I तथा II) किया गया है। प्राणी-शरीर को बाहरी पर्यावरणीय दशा और साथ ही भीतरी दशा की भी जानकारी मिलती रहने की आवश्यकता है ताकि समस्त शरीरक्रियात्मक प्रक्रियाओं का समन्वय किया जा सके। यह कार्य मूलतः तंत्रिका-तंत्र द्वारा सम्पन्न होता है। इकाई 9 में तंत्रिका-तंत्र के कुछ आधारभूत पहलुओं से परिचित कराया गया है जैसे कि मूल इकाई तंत्रिका-कोशिका की संरचना एवं उसका कार्य। दूसरा समाकलनकारी तंत्र है अंतःस्रावी तंत्र जिसके विषय में इस खंड की अंतिम इकाई में बताया गया है।

ये दोनों संचारी तंत्र रासायनिक संदेशवाहकों का इस्तेमाल करते हैं और इन दोनों के कार्यों में एक स्पष्ट परस्परव्यापन पाया जाता है। इकाई 10 में इन्हीं समानताओं पर बल दिया गया है, और वह भी विशेषतः जैवरसायनिक स्तर पर।

अध्ययन निर्देशिका

इससे पहले कि आप इस खंड का अध्ययन करें हम फिर से इस बात पर ज़ोर देंगे कि आप कोशिका जैविकी की इकाइयों को, खासतौर से इकाई 15 को निकट रखें ताकि जब चाहें तब देख सकें।

इस खंड की इकाइयाँ 8, 9 और 10 अपेक्षाकृत लम्बी हैं। आपको इन्हें अधिक समय देना होगा।

कुछ प्रक्रियाओं के कार्य को समझाने में कुछ प्रयोगों से मदद मिली है, इन प्रयोगों को बॉक्स में दिया गया है। खंड के अंत में दी गयी शब्दावली कुछ खास-खास शब्दों का स्पष्टीकरण करती है और उसके द्वारा कुछ संकल्पनाओं को और अच्छी तरह समझ सकने में मदद मिलेगी।

उद्देश्य

इस खंड को पढ़ने के बाद आप :

- प्राणियों में संचालन की विभिन्न विधियों में निहित शरीरक्रियात्मक प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।
- प्राणियों पर तापमान के प्रभावों का वर्णन कर सकेंगे और चरम ताप की कठिनाइयों से बचने के लिए जो अनुकूलन प्राणियों में होते हैं उनका स्पष्टीकरण कर सकेंगे।
- जननांगों की संरचना; उनके कार्यों का तथा उन कारकों का भी जो जनन के नियमन में उत्तरदायी हैं, वर्णन कर सकेंगे।
- प्राणियों में तंत्रिका-तंत्र तथा अंतःस्रावी तंत्र किस प्रकार विविध शरीरक्रियात्मक कार्यों का समाकलन करते हैं, इसका वर्णन कर सकेंगे।
- समझा सकेंगे कि शरीर में कोशिकीय स्तर पर तमाम संचार रासायनिक संदेशवाहकों के माध्यम से होता है।

इकाई 6 संचलन

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
6.2 अमीबीय चलन
6.3 पक्ष्माभी तथा कशाभी चलन
6.4 पेशी और गति
कशेरुकीय कंकाल पेशियों की संरचना
पेशी संकुचन की क्रियाविधि
पेशी सकुचन का आण्विक आधार
कैल्सियम तथा नियमनकारी प्रोटीनों द्वारा संकुचन-नियंत्रण
पेशी संकुचन का समारंभ
पेशी संकुचन का ऊर्जा-विज्ञान
6.5 हृद्-पेशियाँ और अरेखित पेशियाँ
6.6 सारांश
6.7 अंत में कुछ प्रश्न
6.8 उत्तर

6.1 प्रस्तावना

पिछले खंड में आपने प्राणियों में पोषण, श्वसन, परिसंचलन, उत्सर्जन तथा परासरण नियमन की कार्यिकी के विषय में पढ़ा था। इस इकाई में आप प्राणियों में गति की कार्यिकी के विषय में पढ़ेंगे। प्रायः हम गति को संचलन (locomotion) के संदर्भ में देखते-समझते हैं, जिसका आशय जीवधारी के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने से है। यह क्षमता प्रत्येक प्रकार के जन्तु का एक विशेष एवं मूलभूत अभिलक्षण है। इसके अतिरिक्त मूंगों (corals) और स्पंजों जैसे उन प्राणियों में भी विविध प्रकार की गतियां होती हुई पायी जाती हैं जो प्रायः एक ही स्थान पर चिपके रहते हैं तथा जो कभी भी चलते फिरते नज़र नहीं आते। गति कर सकने के लिए प्राणी तीन आधारभूत क्रियाविधियाँ उपयोग में लाते हैं। गति की ये तीन आधारभूत क्रियाविधियाँ इस प्रकार हैं : (1) अमीबीय गति (amoeboid movement), (2) सिलियमी अर्थात पक्ष्माभी गति (ciliary movement) तथा (3) पेशीय गति (muscular movement)।

अमीबीय गति का नाम अमीबा के संचलन से लिया गया है। इसमें निहित बातें निम्न हैं : कोशिका-आकृति में विस्तृत परिवर्तन, साइटोप्लाज़्म (कोशिकाद्रव्य) का प्रवाह तथा पादाभीय (pseudopodial) क्रियाकलाप। पक्ष्माभी संचलन वह विशिष्ट विधि है, जिसके द्वारा *पैरामीशियम* जैसे पक्ष्माभयुक्त प्रोटोज़ोआ संचलन करते हैं। लेकिन पक्ष्माभ सभी प्राणी-फाइलमों में पाए जाते हैं और वे विभिन्न प्रकार से कार्य सम्पन्न कराते हैं। उदाहरण के लिए पक्ष्माभ उन धाराओं को उत्पन्न करता है जो इकाइनोडर्मों के जल संवहनी तंत्रों (water vascular system) को गति प्रदान करतीं हैं। वायु-श्वसनी कशेरुकियों के श्वसन पथ के अस्तरों पर पक्ष्माभ युक्त कोशिकाएँ होती हैं, जो इन पथों की सतहों पर बाहर से आकर जमने वाले कणों को धीरे-धीरे हटाती रहती हैं। शुक्राणु अपनी पूंछ की सहायता से गति करते हैं, जो सिद्धांततः एक पक्ष्माभ की ही तरह कार्य करती है। अधिसंख्य प्राणियों में पेशीय गति काम में लायी जाने वाली आधारभूत क्रियाविधि है, जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार की गतियां संपन्न होती हैं। पेशी में बल प्रयोग की क्षमता होती है जो पेशी के छोटे होने से होती है। उसके इस छोटे होने को पेशी संकुचन (muscle contraction) कहते हैं। इस बल को अनेक प्रकार के कार्यों के उपयोग में लाया जाता है। इस इकाई में आप अमीबीय गति और पक्ष्माभी गति के बारे में पढ़ेंगे, इसके साथ ही आप पेशी की संरचना तथा पेशी संकुचन की क्रियाविधि के बारे में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- अमीबीय गति तथा पक्ष्माभी और कशाभी चलन की कार्यिकी का स्पष्टीकरण कर सकेंगे,
- कशेरुकी पेशी की संरचना समझा सकेंगे तथा पेशी संकुचन के आण्विक आधार का स्पष्टीकरण कर सकेंगे,
- पेशी संकुचन का नियमन करने वाली क्रियाविधियों का वर्णन कर सकेंगे, तथा
- कंकालीय पेशियों, हृद्-पेशियों तथा अरेखित पेशियों की संरचना एवं उनके कार्यों में विभेद को स्पष्ट कर सकेंगे।

6.2 अमीबीय चलन

अमीबीय गति अथवा चलन (amoeboid movement) विशिष्टतः कुछ प्रोटोज़ोआ-प्राणियों, स्लाइम माल्डों (अवपंक फफूँदियों) तथा कशेरुकियों की श्वेत रक्त कोशिकाओं में पायी जाती है। इनमें साइटोप्लाज़्म प्रवाह, कोशिका की आकृति में परिवर्तन तथा पादाभों (pseudopodia) के प्रसार के द्वारा गति होती है। ये परिवर्तन सूक्ष्मदर्शी के नीचे आसानी से दिखाई पड़ते हैं, लेकिन गति को सक्रिय करने में निहित क्रियाविधियाँ अभी तक ठीक से ज्ञात नहीं हो सकी हैं।

जब अमीबा को चलना होता है तो वह वांछित दिशा में अपने भुजा के समान प्रवर्ध पादाभों को निकालता है और इसी के साथ-साथ अमीबा अपना कोशिका द्रव्य इस नए बने पादाभों में प्रवाहित करता है। नव-निर्मित पादाभ धीरे-धीरे विस्तरित एवं बड़े होने लगते हैं, जिसके फलस्वरूप जहाँ पहले एक छोटा-सा पादाभ बनना शुरू हुआ था वहां अब पूरी कोशिका बन जाती है। जैसे-जैसे कोशिका गति करती रहती है वैसे-वैसे गति की दिशा में नए पादाभ बनते चलते हैं तथा पश्च भाग में पुराने पादाभ सिकुड़ कर आगे को खिंच जाते हैं। यह प्रामाणिक रूप में मालूम नहीं है कि पादाभों का विस्तार एवं आकुंचन (retraction) किस प्रकार होता है। ऐसा लगता है कि कोशिका द्रव्य के कुछ क्षेत्र की तरल **सॉल** (sol) तथा अर्धठोस **जेल** (gel) अवस्थाओं में परस्पर परिवर्तन होता रहता है आगे अब हम यह अध्ययन करेंगे कि कोशिका द्रव्य के सॉल से जेल अवस्था में परिवर्तन द्वारा किस प्रकार अमीबीय गति संपन्न होती है। प्रकाश सूक्ष्मदर्शी द्वारा अमीबा के कोशिका द्रव्य में दो क्षेत्रों को पहचाना जा सकता है : (1) केन्द्रीय क्षेत्र, अंतर्द्रव्य या एंडोप्लाज़्म (endoplasm) जो तरल-सदृश सॉल होता है तथा, (2) बहिर्द्रव्य एक्टोप्लाज्म (ectoplasm) जो प्लाज्मा झिल्ली के तुरंत नीचे के कोशिका द्रव्य का क्षेत्र होता है तथा जेल-सदृश होता है।

"कला विपर्यासी" सूक्ष्मदर्शी (phase contrast microscope) द्वारा हम एंडोप्लाज्म में प्रचुर संख्या में कण एवं झिल्लीदार कोशिकांगक देख सकते हैं जिनमें सतत निरुद्देश्य गति होती रहती है तथा जिससे यह संकेत मिलता है कि कोशिका द्रव्य के सॉल क्षेत्र में इन कणों आदि को गति की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। एक्टोप्लाज़्म में **ऐक्टिन** (actin) तंतुओं का एक त्रिविमीय **क्रासबद्ध** (crosslinked) जाल ब[illegible] होता है तथा इस क्षेत्र में कोई भी कोशिकांगक नहीं होता। मूलतः यही जेल क्षेत्र यह निर्णय करता है कि पादाभ की आकृति कैसी होगी, और यही भाग तनाव को कोशिकीय संकुचनों के क्षेत्र से ले जाकर अधास्तर के साथ सम्पर्क बनाने वाले स्थानों में पहुंचाता है। ऐसा विश्वास है कि एक्टोप्लाज्म में क्रासबद्ध के बगैर ऐक्टिन सूत्र होते हैं और मायोसिन सूत्र भी होते हैं। जैसे-जैसे पादाभ लम्बा होता रहता है और सॉल जैसा एंडोप्लाज्म उसमें प्रवाहित होता रहता है, वैसे-वैसे पादाभ के अंतिम सिरे के निकट का एंडोप्लाज्म-क्षेत्र जेल-सदृश एक्टोप्लाज़्म में परिवर्तित होता रहता है (चित्र 6.1)। इसके साथ ही कोशिका में अन्य स्थानों पर एक्टोप्लाज़्म सॉल-सदृश एंडोप्लाज्म में बदलता रहता है। ऐसा संभवतः ऐक्टिन तंतुओं के क्रासबंधनों के खुल जाने के कारण होता है। ऐक्टिन सूत्रों को क्रॉसबद्ध करने और उनके सामुहिक बंडल बनाए रखने वाले कुछ प्रोटीन होते हैं जैसे एक्टिन, **फ़िम्ब्रिन** (fimbrin) तथा **फ़ॉड्रिन** (fodrin)। सॉल से जेल में परिवर्तन-प्रतिपरिवर्तन में इन्हीं प्रोटीनों की भूमिका होती है। ऐक्टिन सूत्रों के क्रॉस बंधनों से एक जाल बनता है जो व्यष्टिगत ऐक्टिन अणुओं की गति को सीमित कर देता है। ऐसा होने से अर्ध ठोस जेल अवस्था प्राप्त होती है।

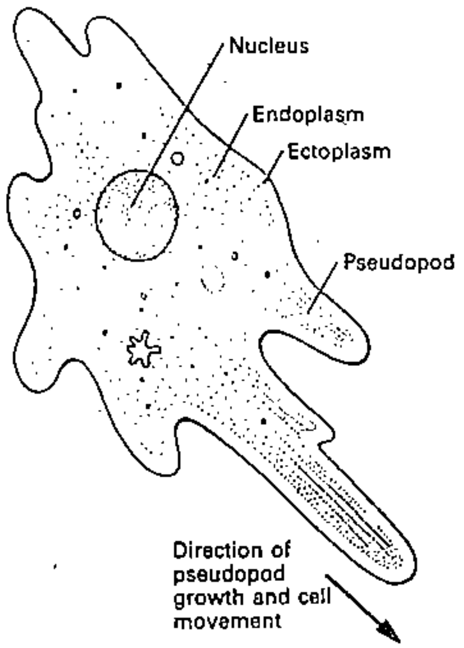

चित्र 6.1 : एक गतिशील अमीबा कोशिका का योजना आरेख, जिसमें सॉल-सदृश एंडोप्लाज़्म तथा वल्कुटी जेल-सदृश एक्टोप्लाज़्म दर्शाए गए हैं।

चूंकि ऐक्टिन तथा मायोसिन सभी यूकेरियोटिक (eukaryotic) कोशिकाओं में पाए जाते हैं, इसलिए ऐसा लगता है कि साइटोप्लाज़्मी प्रवाह तथा पादाभों का बनना दोनों ही मायोसिन तथा ऐक्टिन सूत्रों के बीच होने वाली परस्पर क्रिया पर निर्भर करते हैं। यह एक प्रकार की वैसी ही व्यवस्था है, जैसी कि पेशी संकुचन में पाई जाती है। पेशी संकुचन के बारे में आगे के भागों में जानकारी दी गयी है।

अभी तक यह मालूम नहीं हुआ है कि अमीबीय गति का नियमन अथवा नियंत्रण किस प्रकार होता है। अमीबा सभी दिशाओं में पादाभों को नहीं निकाल सकता, यदि वह ऐसा करेगा तो चिर-फट जाएगा। लेकिन यह सिद्ध हो चुका है कि अनेक ऐक्टिन बंधनी प्रोटीनों की ऐक्टिन तंतुओं को क्रासबद्ध करने की क्षमता Ca^{2+} सांद्रण तथा pH दोनों पर बहुत अधिक निर्भर होती है। अतः यह हो सकता है कि सॉल से जेल में परिवर्तन Ca^{2+} तथा H^+ द्वारा नियंत्रित होता हो। यदि Ca^{2+} के सबमाइक्रोमोलर (submicromolar) सांद्रण की उपस्थिति में pH घट कर 6.8 तक आ जाए तो अमीबा के कोशिका द्रव्य में जेलीकरण (gelation) हो जाता है। इसके विपरीत यदि pH अथवा Ca^{2+} सांद्रण को बढ़ा दिया जाए तो उससे जेल का सॉलीकरण (solation) होने लगता है। इन खोजों से ऐसा मालूम पड़ता है कि "जेल-से-सॉल" परिवर्तन में **जेलसोलिन** (gelsolin) अथवा **विलिन** (villin) नामक प्रोटीनों का कोई कार्य है, क्योंकि माइक्रोमोलर Ca^{2+} (10^{-6} मोल) की उपस्थिति में ये प्रोटीन ऐक्टिन सूत्रों को खंडित कर देते हैं। पादाभों की दिशागत वृद्धि किस तरह होती है इसके स्पष्टीकरण में कोशिकाद्रव्य के विभिन्न क्षेत्रों में Ca^{2+} तथा H^+ के सांद्रण में पाए जाने वाले अंतर सुझाए गए हैं। ऐसा वास्तव में होता है या नहीं, अभी यह निर्धारित होना शेष है। अगले भाग में आप पक्ष्माभी तथा कशाभी गतियों के विषय में पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न 1

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

क) अमीबीय गति विशिष्टतः .... तथा कशेरुकी .... में पायी जाती है।

ख) जब अमीबा को गति करनी होती है तब वह अपने भुजा-समान प्रसारों को निकालता है .... कहते हैं।

ग) .... तथा .... अमीबा के साइटोप्लाज़्म के दो क्षेत्र हैं जो प्रकाश सूक्ष्मदर्शी में दिखायी पड़ते हैं।

6.3 पक्ष्माभी तथा कशाभी चलन

पिछले भाग में आप अमीबीय चलन के विषय में अध्ययन कर चुके हैं। इस भाग में आप पक्ष्माभी अथवा सिलियमी तथा कशाभी अर्थात फ्लैजेलमी गति के विषय में पढ़ेंगे।

पक्ष्माभ तथा कशाभ या उसके विभिन्न व्युत्पाद सभी प्राणी-फ़ाइलमों में पाए जाते हैं। ये अनेक प्रोटोज़ोआ एवं अनेक मेटाज़ोआ कोशिकाओं की आधारभूत संचलनी संरचनाएं हैं उद्धारण के लिये शुक्राणुओं तथा अकशेरुकियों एवं कशेरुकियों की पक्ष्माभ एपिथीलियमों की कोशिकाएँ। पक्ष्माभ के व्युत्पाद विभिन्न प्रकार के प्रकाशग्राही (photoreceptor), यांत्रिकग्राही (mechanoreceptors) तथा रसायनग्राही (chemoreceptors) कोशिकाओं में पाए जाते हैं।

पक्ष्माभ तथा कशाभ में एक समान भीतरी संरचना पायी जाती है। इन दोनों का अंतर इनकी भिन्न विस्पंदन व्यवस्था (beating pattern) में पाया जाता है जो चित्र 6.2 में स्पष्ट दिखाया गया है। कशाभी विस्पंदन, एक सममित उर्मिलन (लहराने) की तरह होता है, जैसा कि शुक्राणु की पूंछ में होता है, इस व्यवस्था में विस्पंदन एक लहर की तरह कशाभ के आधार से शुरू होकर अंतिम सिरे तक चलाता है (चित्र 6.2 'a')। इसके विपरीत पक्ष्माभी गति असमयित होती है; इसमें वह तेज़ी से अथवा झटके के साथ एक ओर प्रहार करता है, जिसके बाद वह थोड़ी धीमी गति से मुड़ी दशा से पलट कर मूल सीधी स्थिति में आ जाता है (चित्र 6.2 'b')। कशाभी गति में जल का नोदन कशाभ के लम्बे अक्ष के समानांतर होता है, और पक्ष्माभी गति में जल का नोदन पक्ष्माभधारी सतह के समानांतर होता है।

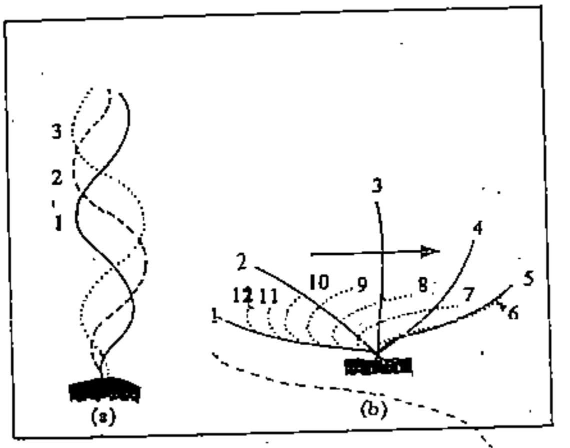

चित्र 6.2 : कशाभ के प्रतिरूपी विस्पंदन में (a) जल का नोदन कशाभ के मुख्य अक्ष के समानांतर होता है। (b) पक्ष्माभ के विस्पंदन में (दायीं ओर) जल का नोदन उस सतह के समानांतर होता है, जिस पर पक्ष्माभ जुड़ा होता है (एरो द्वारा दिखाया गया है)।

6.3.1 पक्ष्माभ तथा कशाभ की संरचना

पक्ष्माभ तथा कशाभ बाल जैसे कोशिकांगक होते हैं, इनका व्यास (0.2 μm) तथा भीतरी संरचना समान होती है, किंतु इनकी लम्बाई भिन्न होती है। पक्ष्माभ सामान्यतः 15 μm से कम लम्बी होती है जब कि कशाभ 200 μm तक लम्बे होते हैं। पक्ष्माभ तथा कशाभ की भीतरी संरचना तथा इनकी आणविक संघटना का इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी तथा जैव-रसायन तकनीकों से भली-भाँति अध्ययन किया जा चुका है। चित्र 6.3 में आप देख सकते हैं कि पक्ष्माभ तथा कशाभ की आवरक झिल्ली कोशिका की प्लाज़्मा झिल्ली में बनी हुई है। यह वास्तव में प्लाज़्मा झिल्ली का ही बहिर्वलन होती है। पक्ष्माभ जीवधारी के शरीर से एक **आधारीय पिंड** (basal body) अथवा **काइनेटोसोम** (kinetosome) द्वारा जुड़ा होता है।

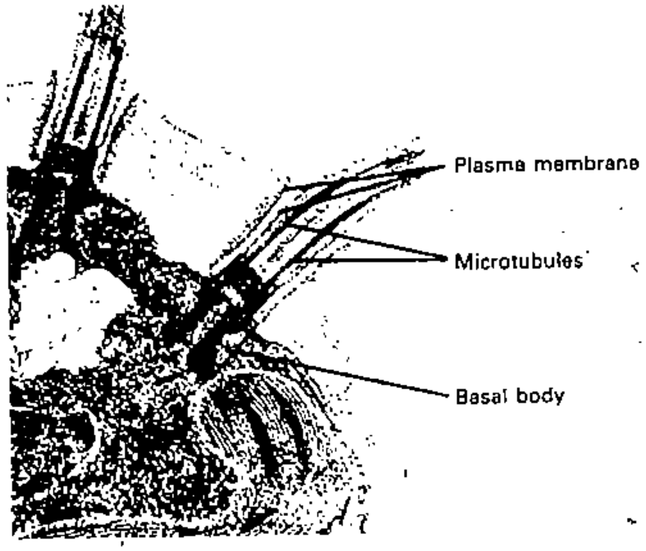

चित्र 6.3 : कशाभ का इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ़ जिसमें प्लाज़्मा झिल्ली, सूक्ष्मनलिकाएँ तथा आधारीय पिंड दिखायी पड़ रहे हैं।

नक्ष्माभ की मुख्य भीतरी संरचनाएं सूक्ष्मनलिकाएँ (microtubules) होती हैं, जो आधार से लेकर अंतिम छोर तक चलती रहती हैं। सूक्ष्म-नलिकाएँ 9+2 की समाकृति में व्यवस्थित होती हैं, इनमें नौ बाहरी दोहरी नलिकाएँ होती हैं, जो दो एकहरी केंद्रीय सूक्ष्मनलिकाओं को घेरे रहती हैं (चित्र 6.4)।

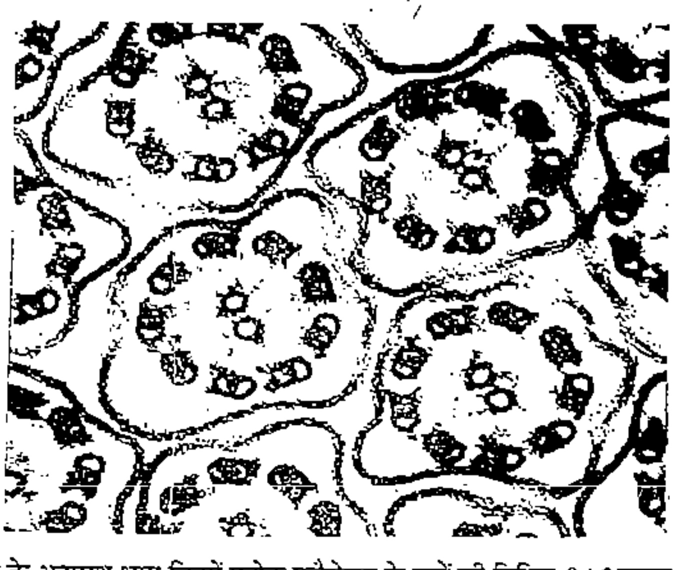

चित्र 6.4 : कशाभ के अनुप्रस्थ भाग जिनमें प्रत्येक फ्लैजेलम के सूत्रों की विशिष्ट 9+2 व्यवस्था दिखायी पड़ रही है।

प्रत्येक सूक्ष्मनलिका खोखली एवं सिलिंडराकार होती है। यह **ट्यूबिलिन** (tubulin) नामक गोलाकार प्रोटीनों के बहुलकों (पौलीमरों) की बनी होती है। बाहरी द्वयकों (doublets) में से प्रत्येक द्वयक दो प्रकार की नलिकाओं का बना होता है : एक तो सम्पूर्ण नलिका (A नलिका) जिसमें 13 उप-इकाइयाँ होती हैं और दूसरी उससे लगी हुई अपूर्ण नलिका (B नलिका) जिसमें केवल 10 या 11 उप-इकाइयाँ होती हैं (चित्र 6.5)। प्रत्येक नलिका में दो पार्श्व भुजाएँ होती हैं जो अगले द्वयक की B नलिका की ओर को निकली होती हैं। इन भुजाओं को डाइनीइन (dynein) कहते हैं। उपनलिका से निकल कर केंद्र की ओर सूक्ष्मनलिकाओं के केंद्रीय जोड़े तक जाने वाली एक अर (spoke) होती है, इन सभी अरों को मिलाकर एक पहिए जैसी व्यवस्था दिखाई पड़ती है। बाहरी द्वयक परिधीय रूप में आपस में **नेक्सिन कड़ियों** (nexin links) द्वारा जुड़े होते हैं (चित्र 6.6)। सभी सूक्ष्मनलिकाओं एवं संबंधित भुजाओं तथा कड़ियों को एक साथ मिलाकर **ऐक्सोनीम** (axoneme) कहते हैं। नौ परिधीय द्वयक आधार की ओर आपस में जुड़कर एक खोखली नली बनाते हैं, जो आधारीय पिंड (basal body) का स्वरूप ले लेती है।

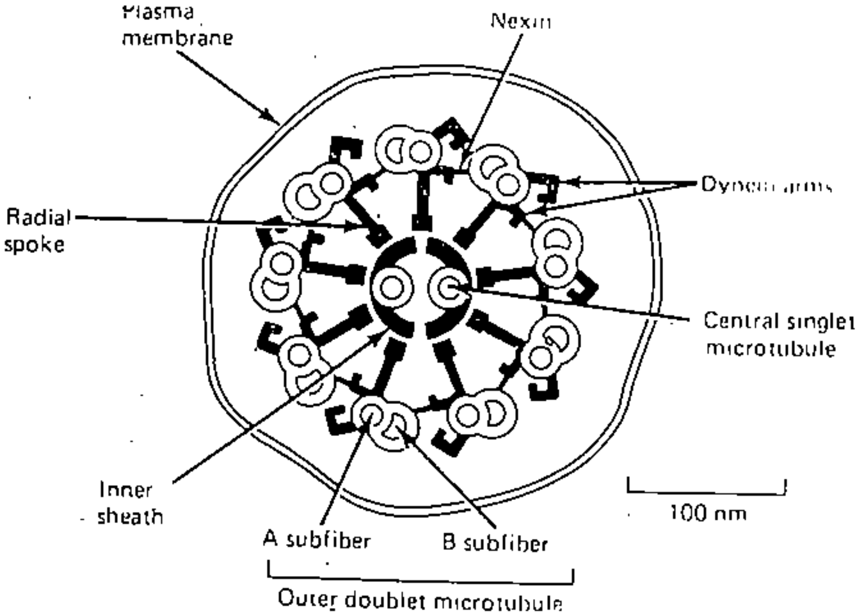

चित्र 6.5 : इस चित्र में पक्ष्माभ की भीतरी संरचना को अनुप्रस्थ भाग में दिखाया गया है।

गति की क्रियाविधि (Mechanisms of movement)

पक्ष्माभ तथा कशाभ की गति की क्रियाविधि के स्पष्टीकरण की दिशा में तीन प्रकार की क्रियाविधियों का सुझाव दिया गया है जो इस प्रकार है : (1) कशाभ निष्क्रिय रूप में बहुत कुछ एक कोड़े की तरह गति करता है, जिसमें बल आधार पर लगाया जाता है; (2) संचरित तरंग के भीतरी वक्र के तत्व विपरीत दिशाओं में एकांतर क्रम में संकुचित होते हैं, जिससे पक्ष्माभ अथवा कशाभ एक से दूसरे पार्श्व की ओर मुड़ते रहते हैं; तथा (3) पक्ष्माभ के पतले सूत्रों की आकृति नहीं बदलती बल्कि वे एक दूसरे के ऊपर आगे उसी तरह निकल जाते हैं, जिस तरह पेशी संकुचन में फिलैमेंटों (सूत्रों) का सर्पण होता है (चित्र 6.6)।

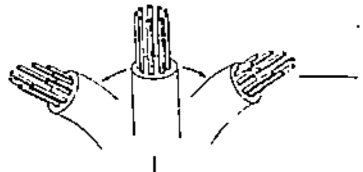

चित्र 6.6 : पक्ष्माभ के विस्पंदन के दौरान सर्पण करती हुई सूक्ष्मनलिकाओं का चित्र। पक्ष्माभ के दूरस्थ भाग की झिल्ली हटा दी गयी है, जिससे 9 बाहरी द्वयक खुल गए हैं। सीधे पक्ष्माभ में (मध्य) सभी नलिकाएँ एक ही बिंदु पर हैं। विस्पंदन के दौरान, बाहरी द्वयक सरक कर एक दूसरे से आगे निकल जाते हैं (बायाँ और दायाँ चित्र) जिसके फलस्वरूप पक्ष्माभ झुक जाता है और सूक्ष्मनलिकाओं के सिरों का विस्थापन हो जाता है।

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा किए गए अध्ययनों से यह पता चलता है कि कशाभ का मुड़ना तब होता है, जब प्रसृत डाइनीइन भुजाएँ सहवर्ती B-नलिकाओं के साथ चिपक जाती हैं, जिससे सर्पण गति (sliding movement) प्रेरित होती है। डाइनीइन भुजाएँ पक्ष्माभ में आगे-आगे को "चलती" हुई सी जान पड़ती हैं, ऐसा अनुमानतः अरीय तीलियों का केंद्रीय सूक्ष्मनलिका के साथ चिपक जाने से होता है, जिससे सर्पण में बाधा पड़ती है। सर्पण गति को पक्ष्माभ अथवा कशाभ के प्रतिरूपी मुड़ने की गति में बदलने के लिये अरीय तीलियों तथा नेक्सिन कड़ियों की आवश्यकता होती है। सर्पण गति के लिए ऊर्जा की उपलब्धता ATP के जलापघटन (hydrolysis) द्वारा होती है।

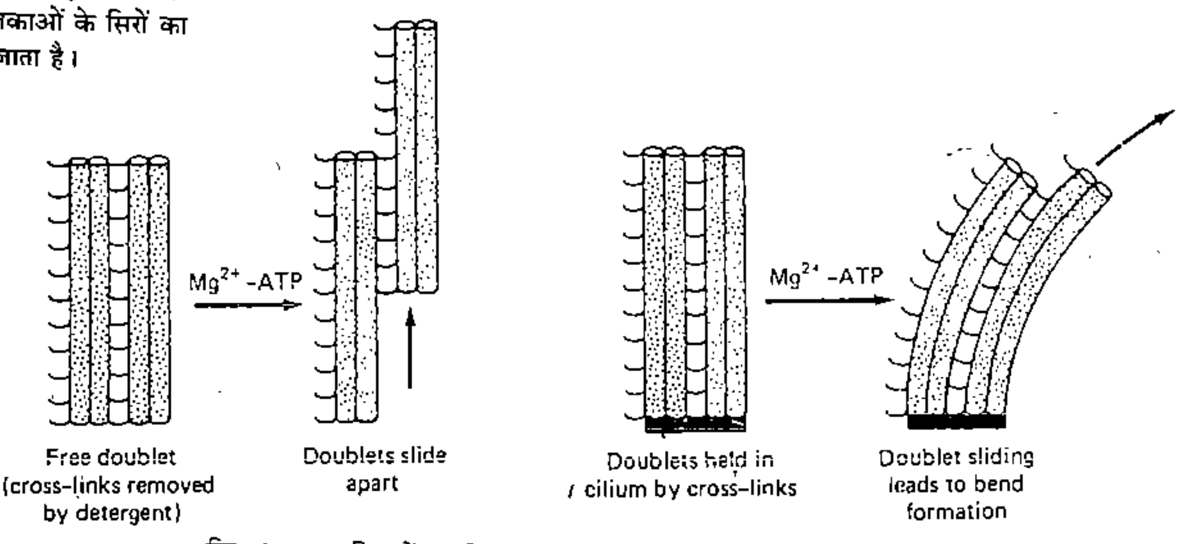

चित्र 6.7 : इस चित्र में बाहरी सूक्ष्मनलिका द्वयकों के सरकने को प्रायोगिक रूप से पात्रे (in vitro) में दर्शाया गया है, इसके साथ ही इसमें द्वयकों का उस स्थिति में भी झुकना-मुड़ना दर्शाया गया है जब वे एक सिरे पर परस्पर बंधे हुए हों। इस क्रिया में Mg^{2+} तथा ATP की आवश्यकता भी दिखायी गयी है।

ाध प्रश्न 2

क्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

:) पक्ष्माभ जीव के शरीर से .... के द्वारा जुड़े होते हैं।

:) पक्ष्माभ अथवा कशाभ में सूक्ष्मनलिकाओं की व्यवस्था .... समाकृति में पायी जाती है।

) डाइनीइन भुजाएं पक्ष्माभ अथवा कशाभ की .... नलिकाओं अथवा .... में पायी जाती हैं।

.4 पेशी और गति

छले भाग में आपने अमीबीय गति तथा पक्ष्माभी अथवा कशाभी गति के विषय में अध्ययन किया । इस भाग में आप पेशियों के विषय में पढ़ेंगे कि वे किस प्रकार गति में कार्य करती हैं। पेशी ाशिकाएँ फ़ाइलम प्रोटोज़ोआ को छोड़कर प्राणी जगत के लगभग सभी फ़ाइलमों में पायी जाती हैं। । पेशियों के संकुचन (contraction) तथा शिथिलन (relaxation) से जीवों में गति पैदा होती । कशेरुकियों में तीन प्रकार की पेशियां होती हैं—कंकालीय पेशियाँ (skeletal muscles), :य-पेशियाँ (cardiac muscles) तथा अरेखित या चिकनी पेशियाँ (smooth muscles)। कालीय पेशियाँ भुजाओं, टाँगों तथा मेरूदण्ड की हड्डियों से लगी होती हैं और इसके द्वारा चलने, र हिलाने आदि जैसी क्रियाएँ उत्पन्न होती हैं। हृदय-पेशियाँ हृदय में पायी जाती हैं। ये रक्त को प करने के लिए हृदय के अनवरत संकुचनों के लिए विशेषित हो गयी हैं। अरेखित पेशियाँ भीतरी गों की दीवारों में पायी जाती हैं जैसे बृहदांत्र तथा क्षुद्रांत्र, पित्ताशय तथा बड़ी रक्तवाहिनियों की वारों में। इन अरेखित पेशियों के संकुचन तथा शिथिलन के द्वारा रक्त वाहिनियों के व्यास का नियंत्रण ता है तथा जठरांत्र पथ (gastrointestinal tract) में आहार का आगे को चलते रहना भी भव होता है। सूक्ष्मदर्शी द्वारा कंकालीय पेशियों तथा हृदय-पेशियों में अनुप्रस्थ हल्की और गहरी ट्टियाँ (light and dark bands) दिखाई देती हैं, जो एकांतर क्रम में पायी जाती हैं। इसीलिए कालीय तथा हृदय-पेशियों को रेखित पेशियाँ (striated muscles) भी कहा जाता है। अरेखित शियों में धारियाँ नहीं होतीं। आप इन पेशियों के विषय में उपभाग 6.4.1 में पढ़ेंगे।

कालीय पेशियों को प्रायः ऐच्छिक (voluntary) पेशियाँ कहा जाता है। हाथ-पैर और कमर की शियाँ इच्छा के नियंत्रण में होती हैं। आपकी टाँग अथवा हाथ तभी गति करेंगे जब उन्हें गति कराना हेंगे। लेकिन कुछ ऐसी गतियाँ भी हैं, जो हमारे नियंत्रण में नहीं होती, परन्तु चलती रहती है जैसे—स लेना। अरेखित पेशियाँ चेतन मन के नियंत्रण में नहीं होतीं, इसीलिए उन्हें अनैच्छिक nvoluntary) कहते हैं। इनके संकुचन कंकालीय पेशियों के संकुचन से प्रायः धीमे होते हैं ये तयाँ सामान्यतः जानकारी के बिना होती रहती हैं। अगले उपभाग में हम कंकालीय पेशियों की चना के विषय में पढ़ेंगे।

.4.1 कशेरुकीय कंकाल-पेशियों की संरचना

शेरुकीय कंकाल-पेशियाँ बहुसंख्यक लम्बी सिलिंडराकार बहुकेंद्रकयुक्त कोशिकाओं की बनी होती ये कोशिकाएँ पेशी तंतु (muscle fibres) कहलाती हैं, तथा एक दूसरे के समानांतर व्यवस्थित ी हैं। इन तंतुओं में अनुदैर्ध्यतः व्यवस्थित तत्व मायोफ़िलामेंट (myofilament) होते हैं। योफ़िलामेंटों में मायोफ़ाइब्रिल (myofibrils) व्यवस्थित होते हैं। पेशी तंतु 0.1 से 0.01 mm स के होते हैं तथा इनकी लम्बाई कई सेंटीमीटर की होती है। मायोफ़ाइब्रिलों में उनके विशिष्ट क्षणिक आड़ी रेखाएँ होती हैं, जिन्हें Z-रेखा (Z-lines) कहते हैं, ये रेखाएं नियमित दूरियों पर :-बार बनी होती हैं। दो Z-रेखाओं के बीच के क्षेत्र को सार्कोमीयर (sarcomere) कहते हैं। क्षेत्र मायोफ़ाइब्रिल की कार्यात्मक इकाई होती है। इस प्रकार एक मायोफ़ाइब्रिल में अनुदैर्ध्यतः रावर्ती सार्कोमीयर होते हैं। सहवर्ती मायोफ़ाइब्रिलों की Z-रेखाएँ एक-दूसरे की सीध में होती हैं, णामस्वरूप एकांतर क्रम में A-बैंड (A-band) तथा I-बैंड (I-band) बन जाते हैं। A-बैंड

के बीच में एक हल्के रंग का क्षेत्र होता है जिसे H-ज़ोन कहते हैं। ये बैंड एक पेशी-तंतु के सभी मायोफ़ाइब्रिलों में एक-साथ चलते हुए दिखाई देते हैं। यही वह संलग्न व्यवस्था है, जिसके कारण पेशी-तंतु को रेखित स्वरूप प्रदान होता है (चित्र 6.8)।

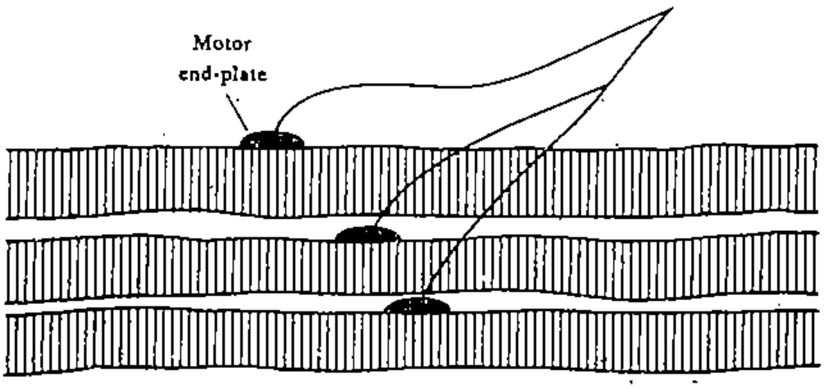

चित्र 6.8 : रेखित (कंकालीय) पेशी तथा उसके संघटकों का योजना चित्र।

मायोफ़ाइब्रिल दो प्रकार के मायोफ़िलामेंटों के बने होते हैं—मोटे फ़िलामेंट तथा पतले फ़िलामेंट। मोटे फ़िलामेंट मायोसिन और पतले फ़िलामेंट ऐक्टिन एवं नियामक प्रोटीन **ट्रोपोनिन** (troponin) तथा ट्रोपोमाइसिन (tropomysin) के बने होते हैं। मोटे फ़िलामेंट A-बैंड में सीमित होते हैं, जबकि पतले फ़िलामेंट Z-रेखाओं से निकलते हुए मोटे फ़िलामेंटों के बीच-बीच में A-बैंड में प्रवेश करते हैं। I-बैंडों में केवल पतले फ़िलामेंट होते हैं। जहाँ मोटे और पतले फ़िलामेंट एक-दूसरे के ऊपर आते हैं, उन क्षेत्रों में सहवर्ती मोटे और पतले फ़िलामेंटों में परस्पर क्रिया आड़े सेतु (cross bridges) बनाते हुए होती है। आड़े सेतु मायोसिन अणुओं के प्रक्षेपण होते हैं, और जब ये अणु ऐक्टिन अणुओं के साथ परस्पर क्रिया करते हैं तब वह बल पैदा होता है, जिससे पेशी में संकुचन होता है।

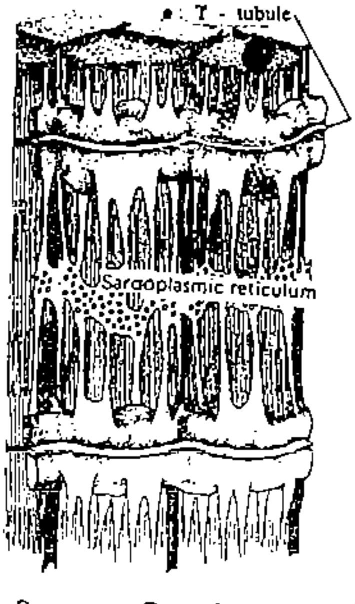

चित्र 6.9 : नलिका तंत्र तथा सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम जो रेखित पेशियों को घेरे रहता है।

पेशी तंतु के चारों ओर सार्कोलेमा (sarcolemma) नामक कोशिका झिल्ली का आवरण होता है। सार्कोलेमा अनुप्रस्थ नलिकाओं के एक सम्मिश्र तंत्र जिसे T-नलिका कहते हैं, से जुड़ी होती है। यह नलिका तंत्र पेशी कोशिकाओं में Z- रेखाओं के पास से आर-पार गुज़रती है। T-नलिकाएँ तंतु के भीतर की ओर सार्कोलेमा से निकले हुए अंतर्वलनों के रूप में प्रकट होती हैं। पेशी तंतु को घेरती हुई आस्तीन जैसी एक और संरचना होती है, जिसे सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम (sarcoplasmic reticulum) कहते हैं। यह संरचना पेशी संकुचन को आरंभ करने में सहायता करती है (चित्र 6.9)।

6.4.2 पेशी संकुचन की क्रियाविधि

संकुचन करना ही पेशी का कार्य है। यह एक भौतिक क्रिया है जिसमें बल उत्पन्न होता है। इससे पेशी छोटी होती है। I-बैंडों तथा H क्षेत्रों दोनों की चौड़ाई कम हो जाती है, लेकिन A-बैंड की चौड़ाई स्थिर बनी रहती है। प्रत्यक्ष रूप से मायोसिन तथा ऐक्टिन फ़िलामेंटों की लम्बाई भी नहीं बदलती। इसका अर्थ यह हुआ कि संकुचन के समय पेशी के छोटा होने में दोनों में से किसी भी प्रकार के फ़िलामेंटों की लम्बाई में अंतर नहीं आता। बल्कि होता यह है कि जहाँ पर फ़िलामेंट एक-दूसरे के ऊपर अतिव्यापी होते हैं, उस क्षेत्र में ये फ़िलामेंट सर्पण करते हैं अर्थात् एक दूसरे के पास से सरकते हैं, जिसके फलस्वरूप पेशी तंतु का संकुचन सम्पन्न होता है। ये प्रेक्षण सर्वप्रथम 1984 में दो कार्य दलों द्वारा स्वतंत्र रूप से किए गए। जिसमें एक एच.ई. हक्सले (H.E. Huxley) एवं हेन्सन (Hanson) द्वारा तथा दूसरे ऐ.एफ़. हक्सले (A.F. Huxley) एवं नीडरगरके (Niedergerke) द्वारा। इन शोध-कर्ताओं ने स्लाइडिंग फ़िलामेंट मॉडल (sliding filament) का प्रस्ताव रखा, जिसकी पुष्टि प्रायोगिक रूप में हो चुकी है। चित्र 6.10 में आप दो सार्कोमियर के छोटे होने की क्रिया के दौरान संबंध देख सकते हैं। मोटे और पतले फ़िलामेंटों के एक दूसरे के ऊपर सरकने की क्रिया में उन आड़े सेतुओं की भूमिका होती है जो मोटे फ़िलामेंटों से प्रसृत होकर पतले फ़िलामेंटों से सम्पर्क कर लेते हैं। यह समझने के लिए कि आड़े सेतुओं से संकुचन बल किस प्रकार पैदा होता है, ऐक्टिन और मायोसिन फ़िलामेंटों की आणविक संरचना का अध्ययन करना आवश्यक है। अगले उपभाग में हम पेशी संकुचन में निहित आणविक क्रियाविधि का अध्ययन करेंगे।

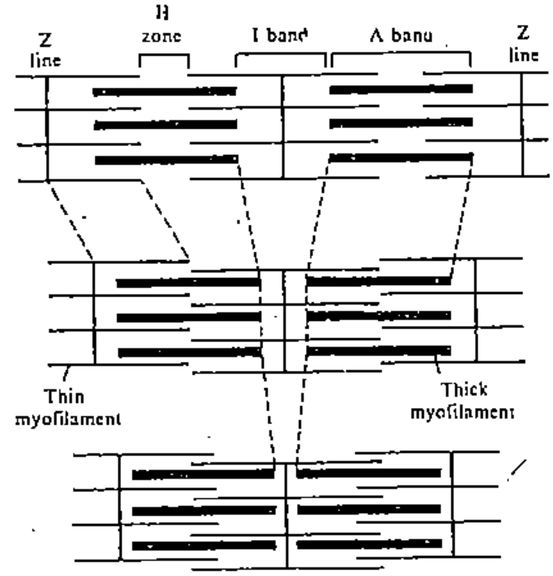

चित्र 6.10 : स्लाइडिङ्ग फ़िलामेंट परिकल्पना।

6.4.3 पेसी सकुंचन का आण्विक आधार

आपने उपभाग 6.4.1 में यह अध्ययन किया है कि मोटे फ़िलामेंट मायोसिन प्रोटीन के बने होते हैं और पतले फ़िलामेंटों में मुख्यतः ऐक्टिन प्रोटीन होता है। मायोसिन अणु बहुत बड़े प्रोटीन होते हैं। इनके प्रत्येक अणु में एक दोहरे शीर्षवाला गोल क्षेत्र होता है जो एक लम्बी छड़ अथवा पूँछ से जुड़ा होता है (चित्र 6.11)।

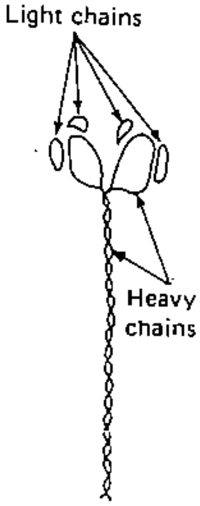

चित्र 6.11 : मायोसिन अणु में दो भारी शृंखलाएँ तथा चार हल्की शृंखलाएँ होती हैं।

जैसा कि आप चित्र 6.11 में देख रहे हैं मायोसिन के एक अणु में दो भारी शृंखलाएं होती हैं। इनमें से एक भारी शृंखला का एक भाग शीर्ष बनाता है और दूसरा भाग पूँछ की लम्बाई में फैला होता है। मायोसिन शीर्षों में 4 लघुतर हल्की शृंखलाएं भी होती हैं। इस प्रकार प्रत्येक मायोसिन अणु में 6 पॉलीपेप्टाइड शृंखलाएं होती हैं। कई मायोसित अणुओं की पूंछें आपस में मिलकर मोटा फ़िलामेंट बनाती हैं, जबकि गोलाकार शीर्ष पार्श्व में से निकलते हुए आड़े सेतु बनाते हैं। मोटे फ़िलामेंट के मायोसिन अणुओं के शीर्ष सिरे, फ़िलामेंट के सिरे की ओर तथा उनकी पूँछें मध्य की ओर निकली हुई रहती हैं। फलतः मोटे फ़िलामेंटों के मध्य में एक छोटा रिक्त क्षेत्र होता है जिसमें आड़े सेतु नहीं होते (चित्र 6.12)।

चित्र 6.12 : मोटे फ़िलामेंट में मायोसिन अणुओं की पोलारिता है।

ऐक्टिन अणुओं से युक्त पतले फ़िलामेंटों की व्यवस्था अलग होती है। पतले फ़िलामेंटों में ऐक्टिन अणुओं की दो शृंखलाएँ होती हैं जो एक दूसरे के ऊपर एक कुंडली (हेलिक्स) के रूप में लिपटी होती हैं (चित्र 6.13)।

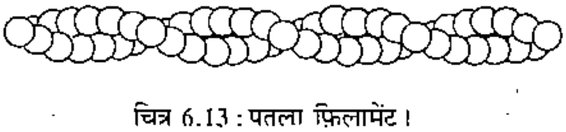

चित्र 6.13 : पतला फ़िलामेंट।

पतले फ़िलामेंटों के ऐक्टिन अणु भी एक विशिष्ट ढंग से व्यवस्थित होते हैं, Z-रेखा के एक पार्श्व के सभी अणुओं का एक दिशा विन्यास होता है तथा Z-रेखा के दूसरी ओर के सभी अणुओं की विपरीत ध्रुवता होती है। इस प्रकार एक सार्कोमियर के मध्य की विपरीत दिशाओं में ऐक्टिन तथा मायोसिन

दोनों अणुओं की ध्रुवता उल्टी हो जाती है। चित्र 6.14 पेशी तन्तु में मोटे तथा पतले फ़िलामेंट की व्यवस्था को दर्शाती हैं।

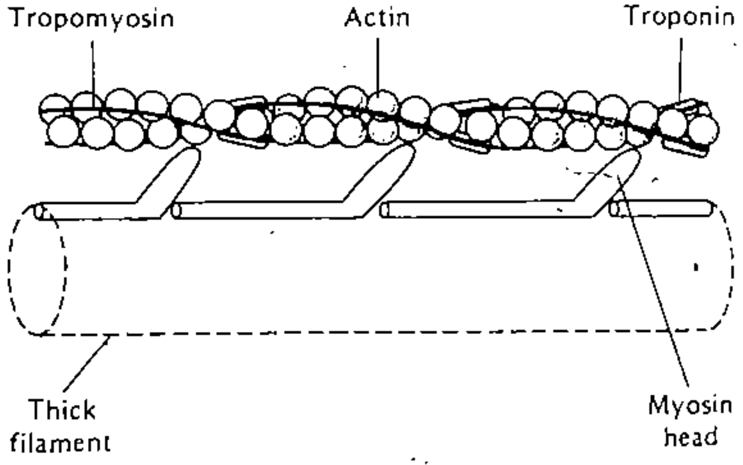

चित्र 6.14 : मोटे फ़िलामेंट मायोसिन प्रोटीन से बने होते हैं जिनके शीर्ष ऐक्टिन सूत्रों की ओर को निकले होते हैं।

मायोसिन व ऐक्टिन की आण्विक संरचना जानने के बाद आइये अब पेशी संकुचन की क्रियाविधि के बारे में पढ़ें।

पेशी संकुचन के लिए ऊर्जा का तात्कालिक स्रोत ऐडीनोसीन ट्राइफ़ॉस्फेट (ATP) होता है। मायोसित तथा ऐक्टिन फ़िलामेंटों को एक दूसरे के ऊपर से चलाने के लिए आवश्यक ऊर्जा ATP के योजन तथा वियोजन से प्राप्त होती है। यह योजन एवं वियोजन मायोसिन अणुओं के शीर्षों द्वारा होता है। ये शीर्ष, जो आड़े सेतु बनाते हैं, ऐक्टिन अणुओं पर चक्रीय रूप में चिपक जाते हैं और फिर सिकुड़ते हैं जिससे वे पतवारों की तरह काम करते हुए ऐक्टिन तथा मायोसिन अणुओं को एक दूसरे के ऊपर खींचते हैं, इससे सर्पण गति में सहायता मिलती है। मायोसिन की गोलीय उप-इकाई में दो सक्रिय स्थल होते हैं, एक ऐक्टिन के लिए और दूसरा ATP के लिए। आड़े सेतु बनने के चक्र में, गोलीय शीर्ष Mg^{2+} की उपस्थिति में ATP के साथ बँधकर उसे ADP + Pi में तोड़ देता है लेकिन ADP तथा Pi को वहाँ से बाहर नहीं जाने देता । निर्मोचित ऊर्जा मायोसिन ADP सम्मिश्र में भंडारित रहती है।

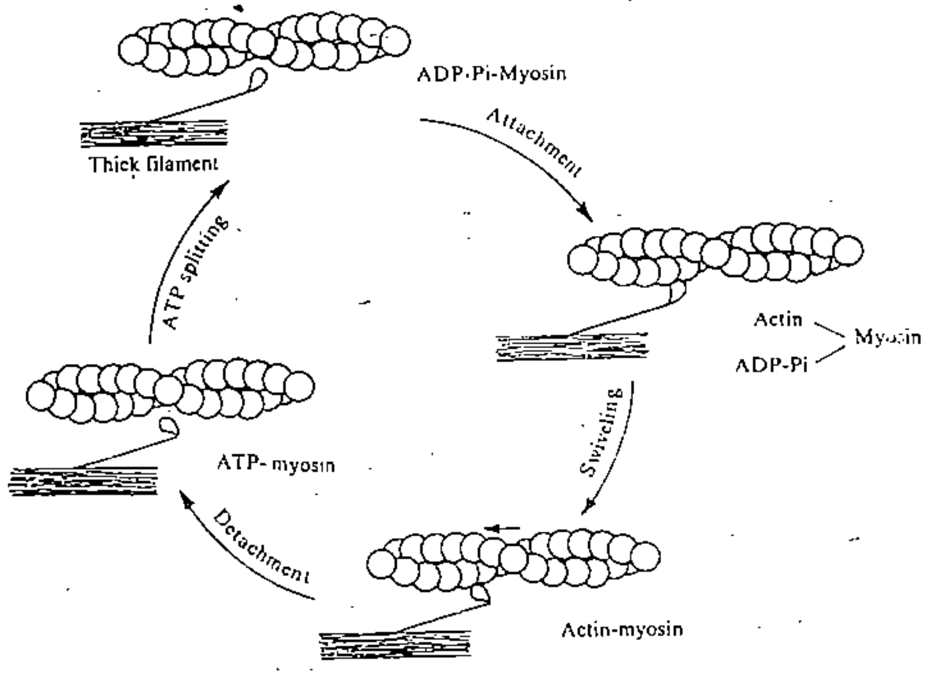

चित्र 6.15 : एक अकेले आड़े सेतु चक्र की प्रतिपादित आणविक घटनाएँ। मायोसिन शीर्ष की घूर्णन क्रिया (swivelling action) द्वारा मोटे और पतले फ़िलामेंट एक-दूसरे के सापेक्ष गति करते हैं। विश्रांत पेशी तंतु की आरम्भिक अवस्था चित्र में सबसे ऊपर दिखायी गयी है।

उसके बाद यह सम्मिश्र ऐक्टिन को बाँध लेता है। इस प्रकार ऐक्टिन-मायोसिन ADP–Pi सम्मिश्र बन जाता है। अगले चरण में ADP तथा Pi को मायोसिन मुक्त कर देता है और मायोसिन शीर्ष अपनी इस रचना को बदल देता है और वह जुड़े हुए ऐक्टिन को मायोसिन फ़िलामेंट के मध्य की ओर खींचता है। उसके बाद मायोसिन शीर्ष एक नए ATP के साथ जुड़ता है और वह ऐक्टिन से मुक्त हो जाता है। तदनंतर नया ATP जलअपघटित हो जाता है और मायोसिन शीर्ष को एक अन्य ऐक्टिन अणु के साथ बाँधने के लिए वहीं रोक लेता है (चित्र 6.15)।

6.4.4 कैल्सियम तथा नियमनकारी प्रोटीनों द्वारा संकुचन-नियंत्रण

पिछले भागों में आप पढ़ चुके हैं कि मायोफ़ाइब्रिलों के पतले फ़िलामेंटों में ऐक्टिन और दो नियमनकारी प्रोटी ट्रोपोनिन एवं ट्रोपोमायोसिन होते हैं। ट्रोपोमायोसिन एक लम्बा प्रोटीन होता है, जो ऐक्टिन फ़िलामेंट की दो शृंखलाओं के बीच की खांच में कुंडलित होता है। ट्रोपोनिन भी ऐक्टिन फ़िलामेंटों पर पाया जाता है। यह फ़िलामेंटों पर नियमित दूरियों पर स्थित होता है।

पेशी की विश्रामी अवस्था पर ट्रोपोमायोसिन द्वारा मायोसिन शीर्ष की ऐक्टिन फ़िलामेंट के साथ परस्पर क्रिया रुकी रहती है, इसे रोक रखना ऐक्टिन अणुओं के आड़े सेतु बंधन स्थलों को अवरूद्ध करके होता है (चित्र 6.16 a)। ट्रोपोनिन एक नियंत्रणकारी प्रोटीन है और इसमें कैल्सियम आयन के लिए एक उच्च बंधुता पायी जाती है। इसमें Ca^{2+} के लिए एक बंधन स्थल होता है। जब कोई पेशी उत्तेजित की जाती है तब उसके भीतर का कैल्सियम-आयन-सांद्रण अचानक बढ़ जाता है। कैल्सियम आयन ट्रोपोनिन से जुड़ जाते हैं और ट्रोपोनिन तथा ट्रोपोमायोसिन दोनों के अणुओं में अनुरूप-परिवर्तन पैदा कर देते हैं। इस प्रभाव से ट्रोपोमायोसिन में गति होती है जिससे ढके बंधन स्थल खुल जाते हैं और मायोसिन के आड़े सेतु ऐक्टिन फ़िलामेंट के साथ जुड़ जाते हैं। इस प्रकार कैल्सियम आयन पेशी संकुचन के शरीरक्रियात्मक नियंत्रक के रूप में कार्य करता है (चित्र 6.16 b)।

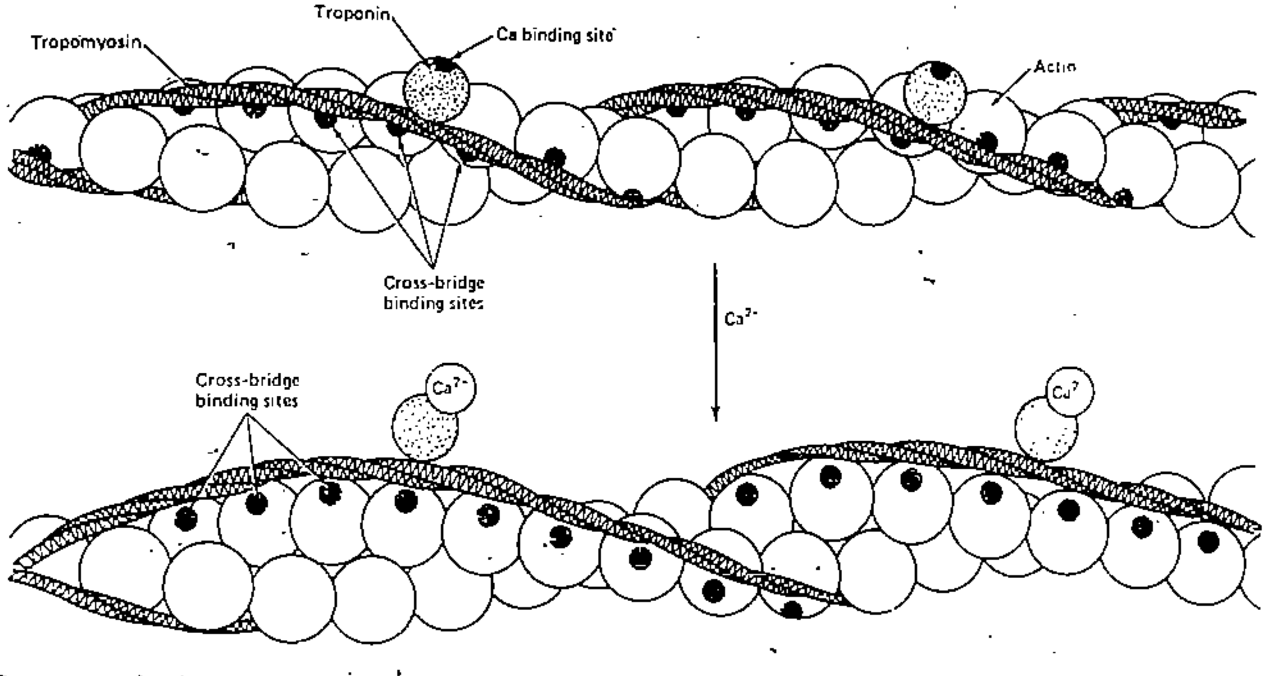

चित्र 6.16 : कशेरुकीय कंकालीय पेशी के संकुचन का ऐक्टिन संबंधित नियमन। (a) कैल्सियम आयनों की अनुपस्थिति में ट्रोपोमायोसिन ऐक्टिन अणुओं के आड़े सेतु बनाने वाले स्थलों को अवरूद्ध कर देता है। (b) कैल्सियम आयन ट्रोपोनिन से जुड़कर ट्रोपोमायोसिन की गति प्रेरित करते हैं, जिससे बंधन स्थल खुल जाते हैं और आड़े सेतु पतले फ़िलामेंटों से जुड़ जाते हैं।

6.4.5 पेशी संकुचन का समारंभ

पेशी संकुचन की क्रियाविधि का अध्ययन करने के बाद आप यह जानना चाहेंगे कि पेशी संकुचन का प्रारम्भ किस प्रकार होता है। पेशी संकुचन की उत्तेजना तंत्रिका आवेग द्वारा होती है। पेशियों के साथ तंत्रिकाओं के अंतिम सिरे संबंधित होते हैं। तंत्रिका के सिरे तथा पेशी की संधि को तंत्रिकापेशीय संधि (neuromuscular junction) अथवा मोटर अंत्य प्लेट (motor end plate) कहते हैं।

आप पिछले भाग में यह पढ़ चुके हैं कि पेशी संकुचन Ca^{2+} की उपस्थिति से शुरू होता है, जो ट्रोपोनिन से जुड़ जाते हैं। Ca^{2+} सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम में भंडारित रहते हैं।

तंत्रिका आवेग से सार्कोलेमा का विध्रुवीकरण हो जाता है, जो तेजी से तंतु की संपूर्ण सतह पर फैल जाता है और साथ ही नलिकाकार झिल्लियों से होता हुआ तंतु के भीतर फैल जाता है। इस विध्रुवीकरण को तंतु का उत्तेजन (excitation of fibre) कहते हैं। विश्रामशील पेशी में Ca^{2+} अधिकांशतः सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम के पार्श्व कोशों में सीमित रहता है। नलिकाओं के विध्रुवीकरण से Ca^{2+} सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम से मुक्त हो जाता है। Ca^{2+} तीव्रता से सहवर्ती मायोफ़िलामेंट में विसरित हो जाता है तथा ट्रोपोनिन से जुड़ जाता है। Ca^{2+} के ट्रोपोनिन से जुड़ने से ट्रोपोनिन तथा ट्रोपोमायोसिन दोनों अणुओं की रचना बदल जाती है, इससे ऐक्टिन फ़िलामेंट के मायोसिन बंधन स्थल खुल जाते हैं। मायोसिन अणुओं के गोलीय शीर्ष ऐक्टिन स्थलों से जुड़ कर आड़े सेतु बना लेते हैं। ये आड़े सेतु मोटे और पतले फिलामेंटों को एक दूसरे के सापेक्ष सरकाते हैं जिसके फलस्वरूप तंतु का संकुचन होता है। पेशी तंतु का शिथिलन Ca^{2+} का पुनः सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम में पहुँच जाने से सम्पन्न होता है। यह क्रिया एक ATP आधारित Ca^{2+} पंप के द्वारा संपन्न होती है। Ca^{2+} के सांद्रण में कमी होने से Ca^{2+} का ट्रोपोनिन से वियोजन हो जाता है और ट्रोपोमायोसिन संकुचन का संदमन करता है (चित्र 6.17)।

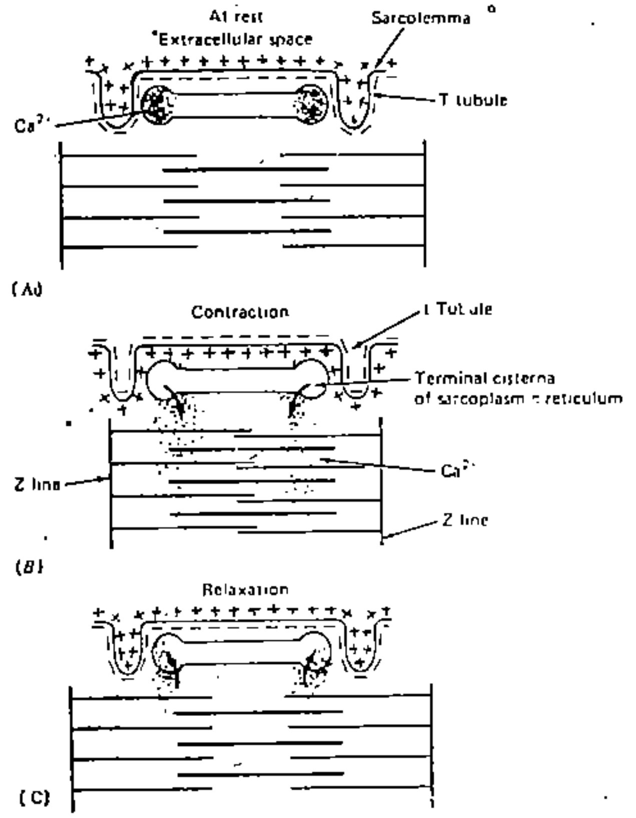

चित्र 6.17 : इस चित्र में यह दर्शाया गया है कि कैल्सियम का निर्मोचन और उसको पुनः प्राप्त करने की क्रिया किस प्रकार ऐक्टिन तथा मायोसिन फ़िलामेंटों के सर्पण का नियंत्रण करते हैं। (A) सार्कोलेमा (प्लाज़्मा झिल्ली) के साथ जारी नलिकाएँ पेशी तंतु के भीतर वेधती हैं। (B) जब क्रिया विभव (action potential) T नलिकाओं से जाती है तब सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम के अंत्य सिस्टर्नों से कैल्सियम आयन निकल आते हैं। कैल्सियम आड़े सेतु बनने की क्रिया होने देते हैं और ऐक्टिन तथा मायोसिन फ़िलामेंटों का सर्पण संभव हो पाता है। (C) सक्रिय परिवहन द्वारा कैल्सियम आयनों के वापिस अंत्य सिस्टर्नों में चले जाने से शिथिलन सम्पन्न होता है।

6.4.6 पेशी संकुचन का ऊर्जा-विज्ञान

आपने ऊपर के उपभागों में यह पढ़ा है कि पेशी संकुचन के लिए तात्कालिक स्रोत ATP है। यह शिथिलन की प्रक्रिया के लिए भी आवश्यक होता है। पेशी में केवल इतना ATP होता है कि वह

उसके संकुचन को कुछ ही सेकंडों तक बनाए रख सकता है। आप कोशिका जैविकी की इकाई 10 और 11 में पढ़ चुके हैं कि ग्लाइकोलिसिस तथा ऑक्सिडेटिव फ़ॉस्फ़ोरिलेशन से ATP प्राप्त होता है, परंतु इन बहुचरणी दिशामार्गों की दर तुरंत उतनी तेजी से नहीं बढ़ पाती जितनी तेजी से पेशी संकुचन के लिए ATP के आपूर्ति की आवश्यकता होती है। ATP तत्काल दो ऊर्जा-सम्पन्न यौगिक कशेरुकियों में क्रिएटिनीन फ़ॉस्फ़ेट तथा अकशेरुकियों में आर्जिनीन फ़ॉस्फ़ेट में से उत्पन्न होता है। इन ऊर्जा-सम्पन्न यौगिकों को फ़ॉस्फ़ोजेन (phosphogens) कहते हैं। कशेरुकी पेशी में क्रिएटिनीन फ़ॉस्फ़ेट ADP को एक उत्क्रमणीय अभिक्रिया में पुनः फ़ॉस्फ़ोरिलेट कर देता है।

क्रिएटिनीन फ़ॉस्फ़ेट + ADP $\rightleftharpoons$ क्रिएटिनिन + ATP

यदि ATP समाप्त हो जाता है तो पेशी में संकुचन नहीं हो पाता और इस प्रक्रिया को **पेशी श्रांति** (muscle fatigue) कहते हैं। चित्र 6.18 में उन जैव रसायन दिशामार्गों को दर्शाया गया है जो कशेरुकी पेशी संकुचन के समय ATP बनाते हैं।

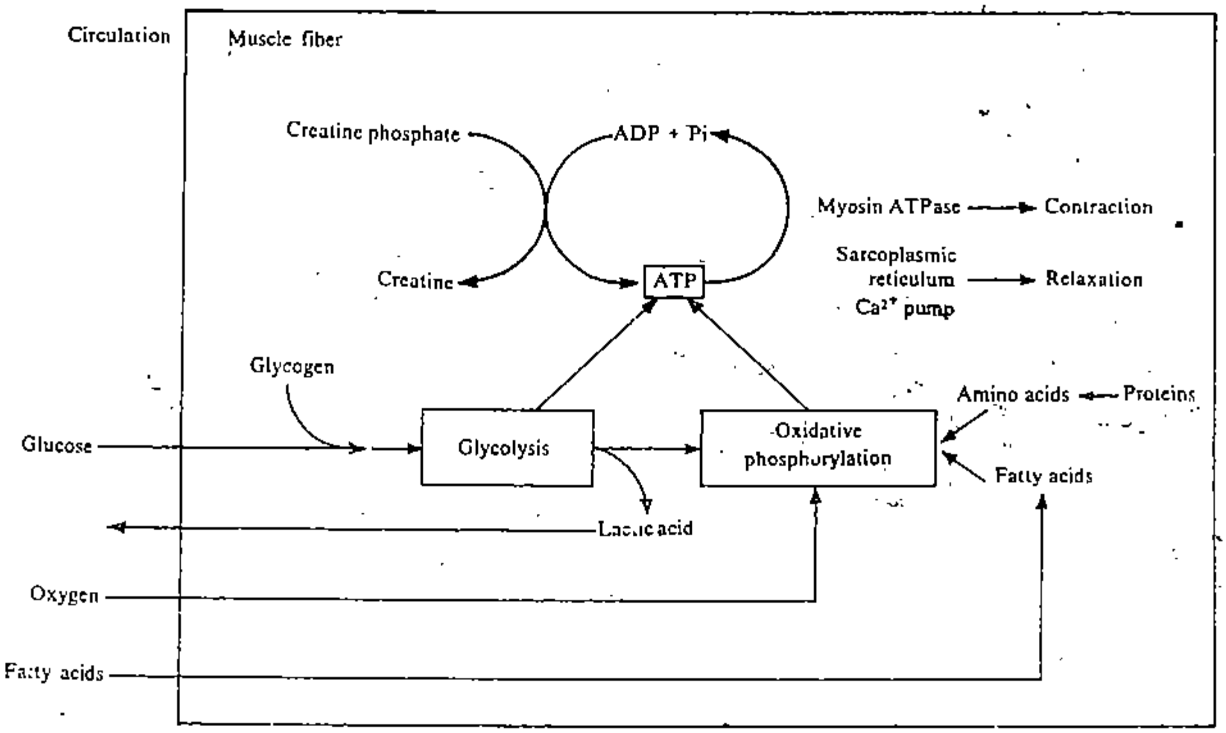

चित्र 6.18 : कशेरुकी पेशी संकुचन के समय ATP बनने के जैव रसायन दिशामार्ग।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरिए :

क) .... तथा .... को रेखित पेशी कहा जाता है, क्योंकि माइक्रोस्कोप द्वारा देखने से उनमें हल्के और गहरे रंग की अनुप्रस्थ पट्टियाँ (बैंड) एक दूसरे के एकांतर क्रम में पायी जाती हैं।

ख) .... पेशियाँ इच्छा के नियंत्रण में होती हैं, इसलिए इन्हें प्रायः .... कहते हैं। .... चेतन मन के अधीन नहीं होती इसलिए इन्हें .... कहते हैं।

ग) एच.ई. हक्सले तथा हेन्सन और ऐ.एफ. हक्सले तथा नीडरगरके ने 1954 में अलग-अलग .... मॉडल प्रस्तुत किए जिससे पेशी संकुचन की क्रियाविधि का स्पष्टीकरण किया गया था।

घ) तंत्रिका तथा पेशी के जंक्शन को .... अथवा .... कहते हैं।

ङ) पेशी संकुचन के समय ATP जिन ऊर्जा सम्पन्न यौगिकों से तत्काल बनता है उन्हें .... कहते हैं।

6.5 हृद्-पेशियाँ और अरेखित पेशियाँ

पिछले भागों में आप कंकालीय पेशियों की संरचना और उनके कार्य के विषय में पढ़ चुके हैं इस भाग में आप हृद्-पेशियों के विषय में पढ़ेंगे।

हृद्-पेशियां

हृद्-पेशियों को सूक्ष्मदर्शी से देखने पर उसी प्रकार के अनुप्रस्थ बैंड दिखाई पड़ते हैं, जिस प्रकार कंकालीय पेशियों में होते हैं। इसलिए इन्हें भी रेखित पेशियाँ कहते हैं, परंतु इनमें रेखाएँ उस प्रकार से पंक्तिबद्ध नहीं होतीं जिस प्रकार से कंकालीय पेशियों में पायी जाती हैं, इसलिए इनमें रेखित स्वरूप कम स्पष्ट होता है। इनमें भी ऐक्टिन तथा मायोसिन फ़िलामेंट पाए जाते हैं। हृद्-पेशियों के तंतु कंकालीय पेशियों के तंतुओं से छोटे होते हैं। ये एककेंद्रकयुक्त होते हैं। लेकिन इनमें माइटोकॉण्ड्रिया बहुत अधिक संख्या में पाए जाते हैं। सार्कोप्लाज़्मी रेटिकुलम तथा T-नलिकाएँ सुविकसित हो सकती हैं अथवा यह भी हो सकता है कि वे हों ही नहीं। हृद्-पेशियों के कार्यात्मक गुणधर्म कंकालीय पेशियों के कार्य से दो मुख्य बातों में भिन्न होते हैं। पहली यह कि जब कभी हृद्-पेशी-संहति के किसी एक क्षेत्र में संकुचन प्रारम्भ होता है, तब वह तीव्रता से समस्त पेशी-संहतियों में फैल जाता है। संकुचन के समय हृद्-पेशी तंतुओं की कोशिका-झिल्लियों में विद्युतीय परिवर्तन होते हैं, जिन्हें क्रिया-विभव (action potential) कहते हैं। हृद्-पेशियों की दूसरी विचित्रता यह है कि यह एक क्रिया विभव पूरा होने के बाद एक निश्चित काल के लिए अनुत्तेजनी अवस्था (refractory period) में बनी रहती है। यह काल प्रत्येक क्रिया-विभव के बाद पेशी के विश्रांत के लिए पर्याप्त लम्बा होता है। इस अनुत्तेजनी काल के कारण हृद्-पेशी एक लगातार संकुचन अवस्था में नहीं रह सकती। इस प्रकार संकुचन तथा शिथिलन में एकांतर क्रम होने के लिए अर्थात् हृदय के सामान्य तालबद्ध संकुचन के समानुकूल अनुत्तेजनी काल का होना अनिवार्य है।

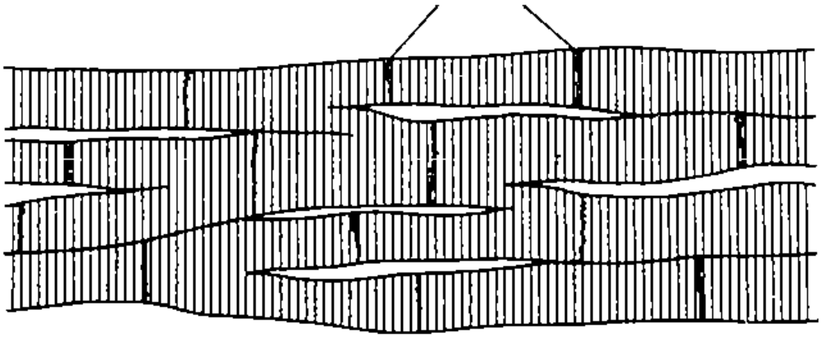

चित्र 6.19 : हृद् पेशियां।

अरेखित पेशियाँ

अरेखित पेशियों में इस प्रकार की अनुप्रस्थ धारियाँ नहीं होतीं, जैसा कि कंकालीय तथा हृद-पेशियों में होती हैं। आप पहले ही भाग 6.4 में पढ़ चुके हैं कि अरेखित पेशियाँ रक्त वाहिकाओं, पाचन नलियों, मूत्राशय, गर्भाशय आदि में पायी जाती हैं। ये आँख के आइरिस तथा त्वचा में भी पायी जाती हैं।

अरेखित पेशियाँ छोटी और स्पिंडल (spindle) की आकृति की होती हैं (चित्र 6.20)। प्रत्येक पेशी में एक अकेला केंद्रक होता है। अरेखित पेशी कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य में ऐक्टिन और मायोसिन फ़िलामेंट होते हैं। इन फ़िलामेंटों में किसी भीतरी सुव्यवस्था के न होने के बावजूद भी ऐक्टिन तथा मायोसिन फ़िलामेंटों के बीच में आड़े सेतुओं की रचना होती है। अरेखित पेशियों की संकुचन क्रियाविधि कंकालीय पेशियों में पायी जाने वाली फ़िलामेंट सर्पण द्वारा संकुचन जैसी होती है।

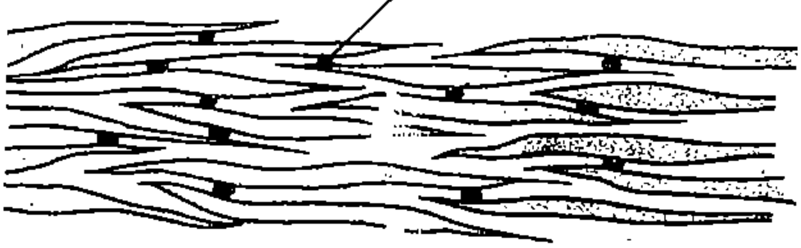

चित्र 6.20 : अ ाशियाँ।

अरेखित पेशियों में संकुचन होने के लिए इनमें तंत्रिका द्वारा उत्तेजन होने की आवश्यकता नहीं होती। इनमें स्वतः जनित तालबद्ध संकुचन होते हैं, जिनमें बारंबारता तथा तीव्रता, दोनों में उतार-चढ़ाव हो सकता है। अरेखित पेशियों की इस स्वतः जनित क्रिया में न केवल तंत्रिकाओं द्वारा वरन् हॉर्मोनों द्वारा भी रूपांतरण हो सकता है जैसे कि **एपिनेफ्रीन** (epinephrine) तथा **नॉरएपिनेफ्रीन** (norepinephrine) द्वारा। कशेरुकियों की अरेखित पेशियों का एक पृथक लक्षण यह भी है कि इनमें अनुक्रिया धीमी होती है। इनका एक और मुख्य गुणधर्म यह है कि ये बहुत कम ऊर्जा खर्च करके लम्बी अवधि तक संकुचन बनाए रख सकती है।

6.6 सारांश

इस इकाई में आपने प्राणियों में गति या संचलन संबंधी शरीरक्रिया के विषय में पढ़ा है। आपने यह अध्ययन किया है कि :

- अमीबा में गति का होना कोशिका द्रव्यी प्रवाह, कोशिका-आकृति में परिवर्तन तथा पादपों के प्रसार से होता है।
- पक्ष्माभ या कशाभ में एक समान भीतरी संरचना पायी जाती है, जिसमें 9+2 की समाकृति में सूक्ष्म नलिकाएँ होती हैं। पक्ष्माभ के फ़िलामेंट एक दूसरे के ऊपर से चलते हुए इस प्रकार की गति पैदा करते हैं जैसा कि पेशी संकुचन के सर्पणशील फ़िलामेंटों में होता है।
- कशेरुकियों में तीन प्रकार की पेशियाँ होती हैं : कंकालीय पेशी, हृद-पेशी तथा अरेखित पेशी। कंकालीय पेशी तथा हृद-पेशी में एक दूसरे से एकांतर क्रम बनाते हुए हल्के तथा गहरे बैंड (पट्टियाँ) होते हैं। इसीलिए इन्हें रेखित पेशियाँ कहते हैं। अरेखित पेशियों में ये रेखाएँ नहीं होतीं।
- पेशी तंतु का संकुचन ऐक्टिन तथा मायोसिन फ़िलामेंटों के एक दूसरे के पास से सर्पण अर्थात् सरकने द्वारा होता है। यह क्रिया आड़े सेतु बनने से होती है, जो ऐक्टिन फ़िलामेंटों के साथ मायोसिन फ़िलामेंट के गोलीय शीर्ष के द्वारा बनते हैं और फिर घूर्णन करते हैं।
- पेशी संकुचन के लिए तात्कालिक ऊर्जा स्रोत ATP होता है।
- पेशी संकुचन का नियमन कैल्सियम, ट्रोपोनिन तथा ट्रोपोमायोसिन द्वारा होता है।

6.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) पक्ष्माभ की गति को नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में समझाइए।

....

....

....

....

....

2) पेशी संकुचन में मायोसिन की भूमिका को नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में लिखिए।

....
....
....
....
....

3) पेशी संकुचन के नियमन में कैल्सियम की भूमिका को नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में समझाइए।

....
....
....
....
....

4) कशेरुकी पेशी संकुचन के दौरान ATP उत्पन्न करने वाले जैव-रसायन दिशामार्गों का चित्रांकन कीजिए।

....
....
....
....
....

6.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) प्रोटोज़ोआ प्राणी, स्लाइम मोल्ड, श्वेत रक्त कोशिकाओं
   ख) पादाभ
   ग) एक्टोप्लाज़्म, एंडोप्लाज़्म

2) क) काइनेटोसोम
   ख) 9 + 2
   ग) A, बाहरी द्वयक

3) क) कंकालीय पेशियाँ, हृद्-पेशियाँ
   ख) कंकालीय पेशियाँ, ऐच्छिक, आरेखित पेशियाँ, अनैच्छिक
   ग) स्लाइड्इन्ग फ़िलामेंट मॉडल
   घ) तंत्रिकापेशी जंकशन अथवा प्रेरक अंत्य प्लेट
   ङ) फ़ास्फ़ॉजेन

अंत में कुछ प्रश्न

1) इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि गति करने के लिए पक्ष्माभ के फ़िलामेंटों की आकृतियाँ नहीं बदलतीं, बल्कि वे एक दूसरे के ऊपर से खिसकते हुए एक वक्रता पैदा करती हैं। यह गति पेशी संकुचन के सर्पणशील फ़िलामेंटों के समान होती है। यह गति डाइनीइन भुजाओं को सहवर्ती नलिका से लगा कर होती है, जो उसके सहारे चलती रहती है, और इस प्रकार सर्पण गति पैदा होती है।

2) मायोसिन अणु में दो भारी शृंखला होती हैं। प्रत्येक भारी शृंखला का एक भाग शीर्ष बनाता है और दूसरा भाग पूँछ बनाता है। मायोसिन अणुओं के शीर्ष ऐक्टिन अणुओं के साथ आड़े सेतु

बनाते हैं। ये आड़े सेतु ऐक्टिन अणुओं से चक्रीय रूप में जुड़ते और घूर्णन करते हैं, और तब ये चप्पुओं की तरह काम करते हुए ऐक्टिन और मायोसिन फ़िलामेंटों को एक दूसरे के ऊपर खींचते हुए सर्पण गति पैदा करते हैं।

3) मायोफ़ाइब्रिल के पतले फ़िलामेंट ऐक्टिन तथा दो नियमनकारी प्रोटीनों ट्रोपोनिन और ट्रोपोमायोसिन के बने होते हैं। पेशी की विश्राम अवस्था में ट्रोपोमायोसिन उन आड़े सेतु बंधन स्थलों को अवरुद्ध कर देते हैं, जो ऐक्टिन अणुओं में पाए जाते हैं। पेशी को उत्तेजित किए जाने पर पेशी तंतु का कैल्सियम-आयन-सांद्रण बढ़ जाता है। कैल्सियम आयन ट्रोपोनिन अणुओं के साथ जुड़ जाते हैं। ट्रोपोनिन के साथ कैल्सियम आयनों के बंधन बनने से ट्रोपोनिन तथा ट्रोपोमायोसिन दोनों की रचना में परिवर्तन होता है, ऐसा होने से ऐक्टिन अणुओं के आड़े सेतु बंधन स्थल खुल जाते हैं, जिसके फलस्वरूप पेशी संकुचन होता है।

4) कृपया चित्र 6.16 देखिए।

इकाई 7 प्राणियों में तापमान संबंध

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
7.2 तापीय संबंध
7.3 तापमान के प्रभाव
उच्च ताप के प्रति सहनशीलता
शीत तथा हिमकारी ताप के प्रति सहनशीलता
पर्यानुकूलन तथा जलवायु अनुकूलन
7.4 असमतापियों में ताप नियमन
शीतनिष्क्रियता तथा ग्रीष्मनिष्क्रियता
व्यवहारात्मक समायोजन
कार्यिकीय समायोजन
7.5 समतापियों में ताप नियमन
ऊष्मा उत्पत्ति
ऊष्मा क्षय
फर तथा परों द्वारा ऊष्मारोधन
ऊष्मा के विनिमायक
नियमनकारी क्रियाविधियां
7.6 सारांश
7.7 अंत में कुछ प्रश्न
7.8 उत्तर

7.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आप प्राणियों में गति की कार्यिकी के विषय में पढ़ चुके हैं। इस इकाई में आप यह अध्ययन करेंगे कि प्राणियों का जीवन पर्यावरण के ताप से किस प्रकार संबंधित है। मूलतः प्राणी दो प्रकार के होते हैं: (1) वे प्राणी जिनके शरीर का तापमान पर्यावरण के तापमान के साथ बदलता रहता है तथा (2) वे प्राणी जो अपने शरीर के तापमान को पर्यावरण के तापमान के निरपेक्ष बनाए रखते हैं। इस इकाई में आप पढ़ेंगे कि प्राणियों पर तापमान का क्या प्रभाव पड़ता है। गर्मी तथा सर्दी के प्रति उनमें कैसी सहनशीलता है, चरम तापमान से उत्पन्न कठिनाइयों से बचने के लिए उनमें व्यवहार तथा कार्यिकी संबंधी अनुकूल क्या होते हैं। इसके साथ ही आप यह भी अध्ययन करेंगे कि शरीर के तापमान को बनाए रखने में उनके शरीर में कौन सी क्रियाविधि कार्य करती है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- असमतापता (poikilothermy) तथा समतापता (homeothermy) में विभेद कर सकेंगे,
- प्राणियों पर तापमान के प्रभावों का स्पष्टीकरण कर सकेंगे तथा साथ ही यह सभी समझा सकेंगे कि प्राणी चरम तापमान को किस प्रकार सहन करते हैं,
- चरम तापमान से उत्पन्न कठिनाइयों से बचने के लिए प्राणियों में क्या क्या व्यवहार परक अनुकूलन होते हैं, उनका स्पष्टीकरण कर सकेंगे, तथा
- प्राणियों के व्यवहार तथा उनकी कार्यिकी को प्रभावित करने वाली तापनियमनकारी क्रियाविधियों को समझा सकेंगे।

7.2 तापीय संबंध

आप जानते हैं कि लगभग सभी शरीरक्रिया संबंधी प्रक्रियाओं का विशिष्ट एंजाइमों की क्रिया द्वारा नियमन होता है। आप यह भी जानते हैं कि एंज़ाइम-माध्यमित अभिक्रिया की दर तापमान से संबंधित

है। अतः प्राणी के शरीर के तापमान का शारीरिक कार्य पर विभिन्न प्रकार से प्रभाव पड़ता है। सभी प्राणियों की कोशिकाएं, उनके ऊतक तथा उनके अंग तापमान के एक छोटे सीमित परास में कार्य करते हैं। लेकिन अनुकूल ताप परास के बाहर भी अनेक प्राणी निष्क्रिय अथवा **प्रसुप्त** (torpid) अवस्था में जीवित रह सकते हैं। वास्तव में कुछ तो अत्यधिक निम्न तापमान पर भी ठंड से जम नहीं जाते तथा जीवित बचे रहते हैं। उदाहरण के लिये, ध्रुव प्रदेशों में बहुत सी मछलियां तथा अकशेरुकी प्राणी −1.8°C के ताप पर जल में रहते हैं। इसके विपरीत गरम स्रोतों में कुछ प्राणी 70°C पर जीवित रह सकते हैं और कुछ तापरागी (thermophilic) बैक्टीरिया जल के खौलने के बिंदु (क्वथनांक) या उससे भी ऊपर के तापमान पर जीवनयापन करते हैं। अधिसंख्य प्राणियों के शरीर का तापमान लगभग उतना ही बना रहता है जितना कि उनके परिवेश में होता है। यह प्रायः सभी जलीय अकशेरुकियों में विशेष रूप से होता ही है। अतः प्राणियों के शरीर का तापमान परिवेश के तापमान में होने वाले परिवर्तन के अनुसार बदलता है। इसके विपरीत पक्षियों तथा स्तनधारियों के शरीर का तापमान प्रायः स्थिर बना रहता है तथा पर्यावरण पर निर्भर नहीं होता। उन सभी प्राणियों को जिनके शरीर का तापमान पर्यावरण के तापमान के साथ-साथ घटता बढ़ता रहता है, उन्हें **असमतापी** अथवा **पोइकिलोथर्मिक** (poikilo = परिवर्तनशील) कहते हैं। इस श्रेणी में वे सभी प्राणी आते हैं, जिन्हें सामान्यतः **शीतरक्तीय** (cold blooded) प्राणी कहा जाता रहा है। पक्षी और स्तनधारी, जो लगभग समान देह-ताप बनाए रखते हैं, **समतापी** अर्थात **होमियोथर्मिक** (homeothermic) अथवा **उष्णरक्तीय** (warm blooded) प्राणियों की श्रेणी में रखे जाते हैं। फिर भी, ध्यान देने की बात यह है कि तापीय पर्यावरण के प्रति विभिन्न अनुक्रियाओं को संतोषजनक रूप से वर्गीकृत करना आसान नहीं है और ऊपर दी गई शब्दावली बहुत सही नहीं है। उदाहरण के लिए शीतरक्तीय प्राणी का रक्त सदैव ठंडा नहीं होता, या किसी एक उष्णकटिबंधीय मछली अथवा धूप में बैठी किसी मरुस्थलीय छिपकली का या धूप में बैठे किसी कीट की देह का तापमान हो सकता है कि किसी स्तनधारी के तापमान से भी ज्यादा हो जाए। इसके अतिरिक्त कुछ पक्षियों तथा स्तनधारियों में **निष्क्रियता** (torpor) अथवा **शीत निष्क्रियता** (hibernation) पायी जाती है, तथा इस अवस्था के दौरान उनका देह ताप गिरकर लगभग जल के जमाव बिंदु पर पहुंच जाता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि ये शब्द कितने अशुद्ध हैं। फिर भी तथाकथित असमतापी तथा समतापी प्राणियों के बीच पाया जाने वाला मूल अंतर यह है कि समतापी प्राणी उपापचयन द्वारा ऊष्मा पैदा करके अपने शरीर का तापमान बनाए रख सकते हैं, जबकि असमतापी प्राणी ऐसा नहीं कर सकते। फलतः हाल के वर्षों में दो अन्य शब्द **बाह्यतापी** (ectothermic) तथा **अंतःतापी** (endothermic) प्रयोग किए जाते हैं। पहले शब्द बाह्यतापी का अर्थ है वे प्राणी जो गर्मी के बाहरी स्रोतों पर (मुख्यतः सौर विकिरण पर) निर्भर होते हैं तथा दूसरे शब्द अंतःतापी का अर्थ है वे प्राणी जो अपने देह का तापमान भीतर पैदा होने वाली ऊष्मा द्वारा बनाए रखते हैं। इन परिभाषाओं की भी कुछ अपनी सीमाएं हैं, क्योंकि कभी कभी अनेक अकशेरुकी तथा कशेरुकी प्राणी अपने भीतर के तापमान तथा परिवेश के तापमान के बीच एक विशेष अंतर बनाए रख सकते हैं। अगले भाग में आप इस प्रकार के विविध संबंधों एवं उनके कार्यिकीय एवं पारिस्थितिकीपरक निहितार्थों के विषय में अध्ययन करेंगे।

बोध प्रश्न 1

कॉलम अ में दिए गए तकनीकी शब्दों को कॉलम ब में दी गयी उनकी परिभाषाओं से मिलाइए:

अ			ब
1) असमतापी	( )	क)	बाहरी ऊष्मा स्रोतों पर निर्भर रहने वाले प्राणी।
2) समतापी	( )	ख)	वे प्राणी जो भीतर से ऊष्मा का उत्पादन करके उच्च देह तापमान बनाए रख सकते हैं।
3) बाह्यतापी	( )	ग)	वे प्राणी जो अपने शरीर के तापमान को पर्यावरण के निरपेक्ष लगभग समान बनाए रखते हैं।
4) अंतःतापी	( )	घ)	वे प्राणी जिनके शरीर का तापमान पर्यावरण के तापमान में उतार चढ़ाव के साथ-साथ कम ज्यादा होता रहता है।

7.3 तापमान के प्रभाव

व्यष्टिगत जीवधारियों पर तापमान से पड़ने वाले प्रभावों का बहुत अधिक कार्यिकीय तथा पारिस्थितिकी महत्व है। समतापी तथा असमतापी दोनों ही प्रकार के प्राणियों की उपापचयपन दर प्रायः ही **परिवेशी** ताप (ambient) द्वारा प्रभावित होती है। सीमाओं के भीतर तापमान में हुई वृद्धि अधिकांश प्रक्रियाओं को तीव्र कर देती है। सामान्य रूप से तापमान में 10°C की वृद्धि से किसी भी अभिक्रिया में दो से तीन गुना अधिक वृद्धि होती पायी जाती है। तापमान में 10°C की वृद्धि से अभिक्रिया दर में हुई वृद्धि को Q_{10} कहते हैं। यदि दर दुगुनी हो गयी है तो Q_{10} 2 के बराबर हो जाता है और यदि दर तिगुनी हो गयी तो Q_{10} 3 के बराबर हो जाता है। इस प्रकार पर्यावरण से जीव द्वारा ऊर्जा मांग ताप संबंधी परिस्थितियों के अनुसार बढ़ती या घटती है। तापमान का महत्व इसलिए भी है कि जीव को वर्ष में होने वाले ताप परिवर्तनों से भी बचना होता है। इस प्रकार स्पीशीज़ का वितरण एवं आवास भी तापमान द्वारा प्रभावित होते हैं। जब कभी किसी काल अथवा स्थान में तापमान जीवनक्षम सीमाओं से अधिक हो जाता है तब उससे एक कार्यिकीय तथा पारिस्थितिपरक दबाव की दशा पैदा हो जाती है। उदाहरण के लिए, स्तनधारियों तथा पक्षियों को रेगिस्थान की गर्मी में रखा जाए, तो उनके सामने निर्जलीकरण (dehydration) की गंभीर समस्या आ सकती है। ऐसा तब होता है जब उन्हें सहनशीलता से परे तापमान को न बढ़ने देने के लिए **वाष्पन द्वारा ठंडक** (evaporative cooling) पैदा करने में बहुत सा जल खर्च करना पड़ता है। गर्मियों में मछलियों की उपापचयन दर अधिक होती है क्योंकि गर्म जल में ठंडे जल की अपेक्षा घुली ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है। इन कारकों की परस्पर क्रिया से जीवों के लिए जीवन मरण की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

प्राणियों में तापमान के परास को सहन करने की शक्ति अलग अलग होती है। कुछ में यह ताप परास सहनशीलता बहुत ही संकीर्ण सीमाओं के भीतर होती है, जबकि अन्य प्राणी काफी अधिक ताप परास सहन कर सकते हैं। साथ ही तापसहनशीलता समय के साथ भी बदल सकती है। इसके लिए उनमें कुछ अंश तक अनुकूलन भी संभव है, जिसमें अगर प्राणी को लगातार सहनसीमा के निकट के ताप पर रखा जाए, तो प्रायः यह सीमा बढ़ जाती है। कुछ जीवधारी अपने जीवन के कुछ विशेष कालों और विशेषतः परिवर्धन की आरंभिक अवस्थाओं के दौरान चरम तापों के लिए अधिक संवेदनशील होते हैं।

7.3.1 उच्च ताप के प्रति सहनशीलता

ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो 50°C पर जीवित रह सकता हो और अपना पूरा जीवन चक्र चला सकता हो। लेकिन विश्राम की अवस्था में प्राणी उच्च ताप के लिए बहुत सहनशील हो सकता है। उदाहरण के लिए अफ्रीका में नाइजीरिया तथा यूगांडा की एक मक्खी *(Polypedilum)* का लार्वा निर्जलीकरण सहन कर सकता है, तथा निर्जलीकरण की अवस्था में यह 102°C पर एक मिनट तक जीवित रह सकता है और तदुपरांत वृद्धि करता हुआ सफलतापूर्वक कायांतरण कर सकता है। इसी प्रकार एक अवलवणजलीय क्रस्टेशियन सूडान के ट्राइऑप्स *(Triops)* के अंडे सूखी मिट्टी में जाड़ों और आरंभिक ग्रीष्म में भी जीवित बने रहते हैं जबकि उन पर 80°C तक का ताप पड़ सकता है। प्रयोगशाला में तो वे और भी ऊंचा ताप सह लेते हैं, जो जल के क्वथनांक (boiling point) के लगभग होता है। अतः जीवन के लिए ऊपरी ताप सीमा को भी सही ढंग से परिभाषित नहीं किया जा सकता।

जब किसी एक स्पीशीज़ के प्राणियों के समूह को उनकी सहन सीमा के निकट के ताप पर रखा जाता है, तो उनमें से कुछ मर जाते हैं और कुछ जीवित बने रहते हैं। परिभाषा के रूप में **घातक ताप** (lethal temperature) उस ताप को कहा जाता है, जिस पर 50% प्राणी मर जाते हैं तथा 50% प्राणी जीवित बचे रहते हैं। इसे T_{50} के रूप में लिखा जाता है। स्पष्ट है कि घातक ताप कई बातों के अनुसार भिन्न हो जाता है—अलग अलग स्पीशीज़ के अनुसार जीवन चक्र की अवस्था, किसी निर्दिष्ट पर्यावरण के प्रति प्राणी में हुआ पूर्व अनुकूलन, इत्यादि। गर्मी के कारण हुई मृत्यु के लिए निम्न कारक उत्तरदायी माने जाते हैं:

i) प्रोटीनों का अपह्रासन जो 45°C से 50°C पर हो जाता है और जिसे **ताप स्कंदन** (thermal coagulation) कहते हैं।

ii) एंज़ाइमों के तापीय निष्क्रियकरण की दर उनके बनने की दर से अधिक हो जाती है
iii) ऑक्सीजन की अपर्याप्त आपूर्ति
iv) परस्पर निर्भर उपापचयन अभिक्रियाओं पर भिन्न ताप प्रभाव (Q_{10})
v) झिल्ली संरचना पर ताप का प्रभाव।

आइए अब इन्हीं कारकों के विषय में कुछ विस्तार से समझें।

45-50°C से ऊपर के तापमान पर प्रोटीनों का विकृतीकरण होना एक सामान्य बात है। लेकिन कुछ प्राणी जैसे—दक्षिण ध्रुवीय *ट्रीमेटोमस (Trematomous)* जीनस की मछलियां गर्मी के प्रति बहुत ही संवेदनशील होती हैं, उनमें 6°C पर ही प्रोटीनों का (एंज़ाइम सहित) विकृतीकरण हो जाता है। इन मछलियों में इतने कम ताप पर (+ 6°C पर) प्रोटीनों का विकृतीकरण तथा एंज़ाइमों का निष्क्रियकरण कैसे हो जाता है, इसको स्पष्ट करना कठिन है। ऊपर बताई गयी तीसरी संभावना जिसमें कि तापीय मृत्यु पर्याप्त ऑक्सीजन न मिलने के कारण होती है, इसे भी कुछ स्थितियों में स्पष्ट करना कठिन है क्योंकि, कीटों को वायु के बदले शुद्ध ऑक्सीजन आपूर्ति कराने से उनमें उच्च ताप पर जीवित बने रहने की क्षमता नहीं आ जाती। इसी प्रकार ठंडे जल में रहने वाली मछली (ट्राउट) भी ऐसे गर्म जल में मर जाती है, जिसमें शुद्ध ऑक्सीजन की मात्रा कई गुना बढ़ा दी गयी है। ऊपर दी गयी चौथी संभावना में यह कहा गया है कि मध्यवर्ती उपापचयन में भाग लेने वाले सैकड़ों उपापचयी एंज़ाइमों की ताप संवेदनशीलता अलग अलग होती है जिसके कारण जीवधारी का सामान्य जैव रसायन संतुलन बिगड़ जाता है और अंततः मृत्यु हो जाती है। फिर भी, अधिकांश मामलों में तापीय मृत्यु एंज़ाइमों के निष्क्रियकरण के ही कारण हो ऐसा ज़रूरी नहीं है। वास्तव में हो सकता है कि जो अन्य संभावनाएं दी गयी हैं, उनका भी इसमें योगदान हो। अंतिम संभावना में झिल्ली संरचना एवं झिल्ली कार्य (तरलता एवं पारगम्यता) में होने वाले परिवर्तन आते हैं, यह संभावना बहुत महत्वपूर्ण है तथा इसमें बहुत से विषय आते हैं। तापमान का प्रभाव उच्चतर स्तर की प्रोटीन संरचना, प्रोटीन लिपिड परस्पर क्रिया, लिपिड-लिपिड परस्पर क्रिया, इत्यादि पर कई प्रकार से पड़ता है। झिल्ली के कार्य की संपूर्णता में इस प्रकार के विक्षोभ ही जीवधारियों में ताप द्वारा क्षति पहुंचाने के मुख्य कारक हैं।

7.3.2 शीत तथा हिमकारी ताप के प्रति सहनशीलता

पिछले उपभाग में आपने उच्च तापमान के प्रति प्राणियों में सहनशीलता के विषय में पढ़ा। अब आप इस भाग में शीत तथा हिमकारी ताप (freezing temperature) के विषय में अध्ययन करेंगे।

निम्न तापमान के प्रभाव भी उतने ही जटिल होते हैं, जितने कि उच्च तापमान के। वास्तव में कुछ प्राणी जमाव अर्थात् हिमकारी ताप को काफी सहन कर सकते हैं लेकिन अधिकतर प्राणी ऐसा नहीं कर सकते। जो प्राणी शीतोष्ण तथा ठंडे क्षेत्रों में रहते हैं, वे प्रायः शीत ऋतु के ऐसे तापमानों को लंबे समय तक सहते हैं, जो जल के हिमांक (freezing point) के भी काफी नीचे होते हैं। इस प्रकार शून्य से नीचे के तापमान पर बाह्यतापी प्राणियों का जीवित बना रहना, कार्यिकीय तथा जैव रासायनिक विशिष्टताओं पर निर्भर होता है। इस प्रकार की उत्तरजीविता को **शीत सहनशीलता** (cold hardiness) कहते हैं। इस शीत सहनशीलता को प्राणी दो प्रकार से प्राप्त कर सकता है। एक **हिम (जमना) सहनशीलता** (freeze tolerance) की क्षमता विकसित करके; दूसरे, यदि −40°C से −50°C के निम्न तापमान पर प्रभावन हो भी जाए तो शरीर में बर्फ न जमने देकर। इन दूसरे प्रकार के प्राणियों को **हिम-असहनशील** प्राणी (freeze intolerant) कहा जाता है। ठंडे प्रदेशों के अन्तराज्वरीय क्षेत्रों में पाए जाने वाले समुद्री अकशेरुकी प्राणी इस दृष्टि से हिमसहनशील होते हैं क्योंकि उनके शरीर के भीतर विस्तृत रूप से बर्फ जम जाने पर भी वे जीवित बने रहते हैं। और भी अनेक प्राणी विस्तृत हिम निर्माण के बाद भी जीवित बने रहते हैं। उदाहरण के लिए अलास्का की मिज़ मक्खी *काइरोनोमस (Chironomous)* के लार्वा को बिना क्षति के बार-बार हिमीभूत (जमाना) और हिमद्रवित (thaw) करा जा सकता है। कीटों के अनेक स्पीशीज़ के शरीर के तरलों में **ग्लीसरॉल** (glycerol) की भारी मात्रा पायी जाती है। आप यह भली भाँति जानते हैं कि ग्लीसरॉल के द्वारा लाल रक्त कोशिकाएं तथा स्तनधारी शुक्राणु हिमकरण से होने वाली क्षति से बच जाते हैं। अतः ग्लीसरॉल को इस काम के लिए व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। ग्लीसरॉल का प्रयोग

करके मानव तथा साँड के शुक्राणुओं को कई साल तक जमा कर जीवित रखा जा सकता है। इस प्रकार के उपचार के अभाव में हिमीकरण शुक्राणुओं के लिए घातक होता है। कुछ ही कशेरुकी ऐसे हैं जो विस्तृत हिम निर्माण को सह पाते हैं। लेकिन पक्षियों तथा स्तनधारियों में हिमकरण की सहनशीलता नहीं पायी गयी है।

अतिशीतलन (super cooling) वह परिघटना है, जिसमें देह का जल 0°C से भी काफी नीचे के ताप पर बिना बर्फ जमे रह सकता है। हिमांक को नीचा करने तथा साथ ही अतिशितलन बिंदु को भी नीचे लाने में जो यौगिक विशेष रूप से उपयोगी है, वह ग्लीसरॉल है। इसके अतिरिक्त जिन प्राणियों में बर्फ जमने के प्रति सहनशीलता है उनमें ग्लीसरॉल से हिमीकरण की सहनशीलता और भी अच्छी हो जाती है। कुछ प्राणियों में **प्रतिहिम यौगिक** (antifreeze compounds) पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए दक्षिण ध्रुव प्रदेश की मछली *ट्रेमाटोमस बोर्शग्रेविंकी (Trematomous borchgrevinki)* के रक्त में एक ग्लाइको प्रोटीन पाया जाता है जो प्रतिहिम पदार्थ का कार्य करता है।

7.3.3 पर्यानुकूलन (acclimation) तथा जलवायु अनुकूलन (acclimatisation)

किसी भी विशिष्ट स्पीशीज़ की सहन सीमा स्थिर नहीं होती। घातक ताप के आस-पास रहने पर प्रायः कुछ सीमा तक अनुकूलन हो जाता है, जिससे अब तक का पिछला घातक तापमान सह लिया जाता है। कभी-कभी एक ही स्पीशीज़ की तापसहनशीलता गर्मियों और सर्दियों में अलग अलग होती है। शीतकाल के प्राणी में निम्न ताप के लिए सहनशीलता पायी जाती है, जो अन्यथा ग्रीष्मकालीन प्राणी के लिए घातक होती है। इसके विपरीत शीतकाल के प्राणी में ग्रीष्म काल के प्राणी की अपेक्षा उच्च ताप के लिए कम सहनशीलता होती है। ताप सहनशीलता में जलवायु संबंधी परिवर्तनों के साथ जो इस प्रकार के परिवर्तन आते हैं, उन्हें **जलवायु अनुकूलन** (acclimatisation) कहते हैं। प्रयोगशाला में प्राणियों को कुछ समय तक विशिष्ट तापमान पर रखकर इसी प्रकार के प्रभावों को अनुरूपित किया जा सकता है। इन प्रयोगों में होने वाले अनुकूलन अथवा समंजन को प्राकृतिक जलवायु अनुकूलन से भिन्न व्यक्त करने के लिए प्रायोगिक परिस्थितियों में होने वाली अनुक्रिया को प्रायः **पर्यानुकूलन** (acclimation) कहा जाता है। वास्तव में प्राणियों में ताप के अतिरिक्त और भी कोई विविध पर्यावरण संबंधी कारकों के प्रति अनुक्रिया होती है। जैसे आर्द्रता, लवणता, ऑक्सीजन आपूर्ति, प्रकाशकाल और आहार आपूर्ति आदि। इसके साथ ही पर्यानुकूलन अथवा जलवायु अनुकूलन लगभग किसी भी कार्यिकीय गुणधर्म में होता देखा जा सकता है। इसे कभी कभी व्यवहारपरक तथा अकारकीय गुणधर्मों में भी देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए तथा अपने उत्तरों को भाग 7.8 में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

क) तापमान में 10°C की वृद्धि से अभिक्रिया की दर लगभग दो से तीन गुणा अधिक हो जाती है। तापमान में 10°C की वृद्धि से अभिक्रिया दर में होने वाली वृद्धि को .... कहते हैं।

ख) कुछ प्राणी उच्च तापमान पर विशेषतः .... के समय अधिक संवेदनशील होते हैं।

ग) .... से ऊपर के तापमान पर कोई भी प्राणी न तो जीवित रह सकता है, और न ही अपना जीवन चक्र चला सकता है।

घ) कीटों की हिमसहनशीलता स्पीशीज़ के देह तरलों में .... ऊतकों के हिमकरणों से हो सकने वाली क्षति से बचता है।

ङ) जलवायु परक परिवर्तनों के साथ ताप सहनशीलता में होने वाले परिवर्तनों को .... कहते हैं।

7.4 असमतापियों में तापमान नियमन

प्राणियों पर तापमान के प्रभावों का अध्ययन करने के बाद अब आप इस भाग में असमतापियों के तापमान नियमन के विषय में पढ़ेंगे।

असमतापी शब्द देह तापमान को नियमन द्वारा स्थिर बनाए रखने के अभाव को व्यक्त करता है। यह इन जीवधारियों के वास्तविक कार्यिकीय स्तर को दर्शाता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि हाल के वर्षों में ऐसे प्राणियों को अधिकाधिक रूप में बाह्यतापी कहा जाता है। यह नाम इस तथ्य के संदर्भ में है कि इनका देह ताप मूलतः बाहरी ताप परिस्थितियों द्वारा निर्धारित होता है। बाह्यतापी शब्द उस क्रियाविधि पर बल देता है जिसके द्वारा देह तापमान निर्धारित होता है, जब कि असमतापी शब्द देह तापमान की उस विभिन्नता पर बल देता है जो पर्यावरण की दशाओं के साथ होती है।

असमतापियों में देह तापमान की नियंत्रणकारी कार्यिकीय क्रियाविधि का अभाव होता है, फिर भी वे अनिवार्यतः नियंत्रण साधनों से वंचित नहीं हैं। वे प्रायः अपने व्यवहार द्वारा सूक्ष्म नियंत्रण दर्शाते हैं, जिसमें वे अपना ताप पर्यावरण स्वयं ढूंढते हैं। प्रजाति इतिहास के सभी स्तरों के प्राणियों में ऐसी क्रियाविधियां विकसित हो चुकी हैं, जिनके द्वारा वे अपने परिवेश में होने वाले समान्य ताप परिवर्तनों से निर्वाह कर सकते हैं, और विभिन्न कालावधियों के लिए चरम सीमाओं को सहन कर सकते हैं।

मूलतः तीन प्रकार की क्षतिपूरक क्रियाविधियां देखी जाती हैं:

i) पर्यानुकूलन तथा जलवायु अनुकूलन
ii) देह ताप समंजन अथवा नियमन
iii) आनुवंशिक अथवा क्रम विकासीय अनुकूलन।

पर्यानुकूलन तथा जलवायु अनुकूलन के समय होने वाली मूलभूत जैव रासायनिक एवं कोशिकीय घटनाएं एक समान जान पड़ती हैं। इन प्रक्रियाओं में कई चीजें शामिल हैं, उपापचयन में निहित विभिन्न एंज़ाइमों की सक्रियता में होने वाले उपयुक्त परिवर्तन, झिल्लियों की लिपिड संघटना में होने वाले परिवर्तन, हिमीकरण विरोधी पदार्थों का बनना, अतिशीतलन तथा हिम सहनशीलता। आगे के उपभाग में हम यह अध्ययन करेंगे कि असमतापी प्राणी किस प्रकार अपने देह तापमान का नियमन करते हैं।

7.4.1 शीतनिष्क्रियता तथा ग्रीष्मनिष्क्रियता

असमतापी प्राणी शीतकाल को जिस सुप्तावस्था में बिताते हैं, उसे **शीतनिष्क्रियता** (hibernation) कहते हैं। जब वे गर्मी अथवा सूखे के प्रति अनुक्रिया के रूप में सुप्तावस्था में जाते हैं, तब उस स्थिति को **ग्रीष्मनिष्क्रियता** (aestivation) कहते हैं। पर्यावरण संबंधी तनाव के समय सुप्तावस्था में पहुंचकर असमतापी प्राणी दो प्रकार के लाभ प्राप्त करते हैं। पहला यह कि अपनी एक विशेष शरीर क्रिया अवस्था के फलस्वरूप ये प्राणी उच्च सीमाओं से निपटने के लिए एक अवाधित कार्यिकीय क्षमता से युक्त हो सकते हैं (उदाहरण के लिए बढ़ा हुआ हिमकरण प्रतिरोध इत्यादि) दूसरा यह है कि वे प्रायः अपने अनुकूल सूक्ष्मआवासों में लगातार रह सकते हैं। उनका उपापचयन इस सीमा तक घट सकता है कि उनके पोषकों का भण्डार (जैसे देह-वसा) बढ़ सकता है। उच्च तापमान की कुछ कठिनाइयों से बचने के लिए असमतापियों ने जिन विविध क्रियाविधियों का सदुपयोग किया है, उन्हें दो प्रकार के अनुकूलनों में विभाजित किया जा सकता है। पहला व्यवहार संबंधी अनुकूलन तथा दूसरा कार्यिकीय अनुकूलन।

7.4.2 व्यवहारात्मक समायोजन

तापमान में अचानक परिवर्तन आ जाने पर अधिकांश प्राणी इस प्रकार की व्यवहारात्मक अनुक्रियाएं करते हैं जिससे वे चरम अथवा घातक स्थितियों से बच जाते हैं। अकशेरुकियों तथा जलीय कशेरुकियों में ताप समंजन का यही एक मात्र तरीका है। स्थलीय पर्यावरण में जलीय पर्यावरण की अपेक्षा अधिक तीव्र ताप परिवर्तन हुआ करता है। कीट तथा सरीसृप स्थलीय असमतापियों में सबसे सफल प्राणी हैं, जिनमें अनेक सम्मिश्र ताप अनुक्रियाएं होती पायी जाती हैं। ताप परिवर्तनों के प्रति तीव्र तथा उचित अनुक्रियाओं की समता सुविकसित संवेदन प्रणालियों पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए, रेटल सर्प

(rattle snake) में पाए जाने वाले आनन गर्त (facial pit) में स्थित अवरक्त संवेदी अंग (infrared sense organs) ताप में अत्यंत सूक्ष्म अंतरों (0.001 से 0.005°C) तक को पहचान लेते हैं। इस समता से यह सर्प एक तो उष्णरक्तीय या ठंडे (नम) शिकार को ढूंढ सकता है और दूसरे यह उष्ण एवं ठंडे पर्यावरण की दिशा पहचान भी कर सकता है। अनेक कीट तथा सरीसृप अपने शरीर को गर्म करने के लिए धूप सेंकते हैं तथा अत्यधिक गर्मी से बचने के लिए बिलों की छाया में चले जाते हैं (चित्र 7.1)।

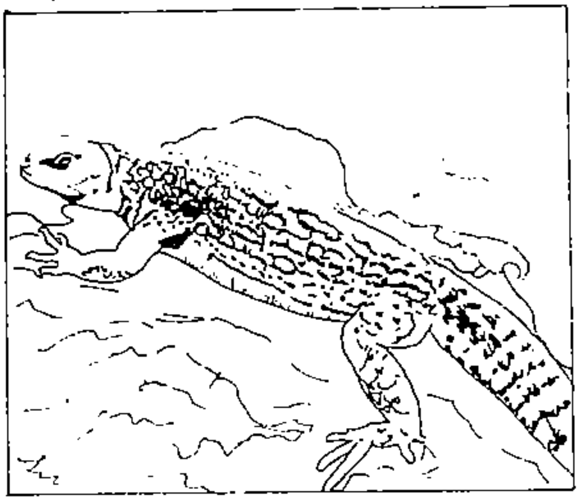

चित्र 7.1 : चट्टान पर धूप सेंकती हुई छिपकली।

7.4.3 कार्यिकीय समायोजन

असमतापी प्राणियों में कार्यिकीय ताप नियम के तीन उदाहरण देखे जा सकते हैं। जो निम्नलिखित हैं:

i) पर्यावरण के तापमान में तीव्र परिवर्तन के प्रति तात्कालिक हृद् संवहनी (cardiovascular) अनुक्रिया।

ii) गर्मी में त्वचीय वाहिका विस्फारण (vasodilation)।

iii) ठंड में वहिका संकीर्णन (vasoconstriction) जो छिपकलियों तथा मगरमच्छों में प्रायः देखा जाता है।

ताप नियंत्रण का एक उपाय ठंड के दौरान सतह पर रक्त के प्रवाह को कम करके तथा गर्मी में रक्त के प्रवाह को बढ़ा कर प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार सरीसृपों की चर्मसंवहनी अनुक्रियाएं (dermovascular responses) नामक स्थिति, उभयचरों की संवहनी श्वसनी त्वचा तथा स्तनधारियों की खुश्क लेकिन आद्रता पारगम्य एवं पसीना निकालने वाली त्वचा के बीच का एक क्रमविकासीय चरण है। अनेक प्राणी अपने शरीर को नमी के वाष्पन द्वारा ठंडा करते हैं।

शीतोष्ण क्षेत्रों में रहने वाले असमतापी प्राणी ताप में तीव्र ऋतुपरक परिवर्तनों का अनुभव करते हैं। इन प्राणियों में अनुकूलन धीरे-धीरे होते हैं और वे इन प्राणियों को शीत काल की ठंड तथा ग्रीष्मकाल की गर्मी के लिए तैयार करते हैं। इस प्रकार की तैयारियों में (उदाहरण, प्रतिहिम यौगिक का बनना, आदि) **तंत्रिका अंतःस्रावी तंत्र** (neuroendocrine system) तथा **प्रकाश संवेदन ग्राहियों** (photoreceptors) का हाथ होता है। वास्तव में प्रकाश संवेदन ग्राही ही ऋतुपरक परिवर्तन के पूर्वाभास द्वारा कार्यिकी समायोजन के प्रति एक विश्वसनीय संकेत का काम करते हैं। कुछ मछलियां तथा कीट एक अपेक्षाकृत स्थिर देह ताप बनाए रखकर ताप की चरम सीमा से बचे रहते हैं। अंतःतापता की यह क्षमता क्षतिपूर्ति के तीसरे स्तर का प्रतिदर्श है, जिसमें आकारिकीय तथा कार्यकीय दोनों ही प्रकार के अनुकूलन शामिल हैं। संक्षेप में यह व्यवस्था कार्यकीय तापनियमन की आनुवंशिक तथा जाति इतिहास का स्तर दर्शाती है। अनेक मछलियों तथा शार्कों में विशेषकर उनकी भारी धड़-पेशियों में **ताप विनिमयक** (heat exchangers) बने होते हैं। इन संरचनाओं में रक्त वाहिकाओं का विस्तृत जाल होता है। इस प्रकार के ऊष्मा विनिमयक मस्तिष्क, रेटिना तथा आंतरांग के साथ भी बने हुए पाए जाते हैं।

ऊष्मा विनिमयक संरचना में भिन्न होते हैं, फिर भी उनमें सिद्धांतः एक समान कार्यिकीय व्यवस्था पायी जाती है। वास्तव में ये विस्तृत **रैटिया मिरेबिलिया** (retia mirabilia) होते हैं, जो बहुसंख्यक अपेक्षाकृत लंबी धमनिकाओं तथा लघुशिराओं के बने होते हैं। ये छोटी छोटी वाहिकाएं आपस में मिली जुली होती हैं और एक दूसरे के समानांतर निकट संपर्क बनाती हैं, जिनमें धमनीय रक्त और शिरीय रक्त विपरीत दिशाओं में बहता है (प्रति धारा, counter current)। गिलों से आने वाला ठंडा धमनीय रक्त रेटी में से होकर बहता है जहां यह तीव्र उपापचयन करने वाली पेशियों अथवा आंतरांगों में गर्म हुए शिरा रक्त द्वारा गर्म हो जाता है। रेटियल वाहिकाओं की भारी संख्या एवं उनकी व्यवस्था के द्वारा और इन वाहिकाओं में से रक्त के धीमे प्रवाह के द्वारा ऊष्मा विनिमय सरलता से होता है (चित्र 7.2)।

कुछ कीट ठंडे पर्यावरण में आहार खोजते समय अपने देह को गर्म बनाए रखते हैं। गुंज मक्षिका (bumble bee) 5°C तक के तापमान पर मकरंद ढूंढती और इकट्ठा करती है। उस समय उसका वक्ष ताप लगभग 30°C होता है, जो उड्डयन पेशियों की क्रिया के लिए अनिवार्य है। गुंज मक्षिकाएं उड़ान भरने से पहले कंपकंपी द्वारा अपने शरीर को गर्म कर लेती हैं। रानी मधुमक्खी छत्ते के भीतर ही गर्मी पैदा करके ताप बढ़ाती है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण कीटों में पाए जाते हैं।

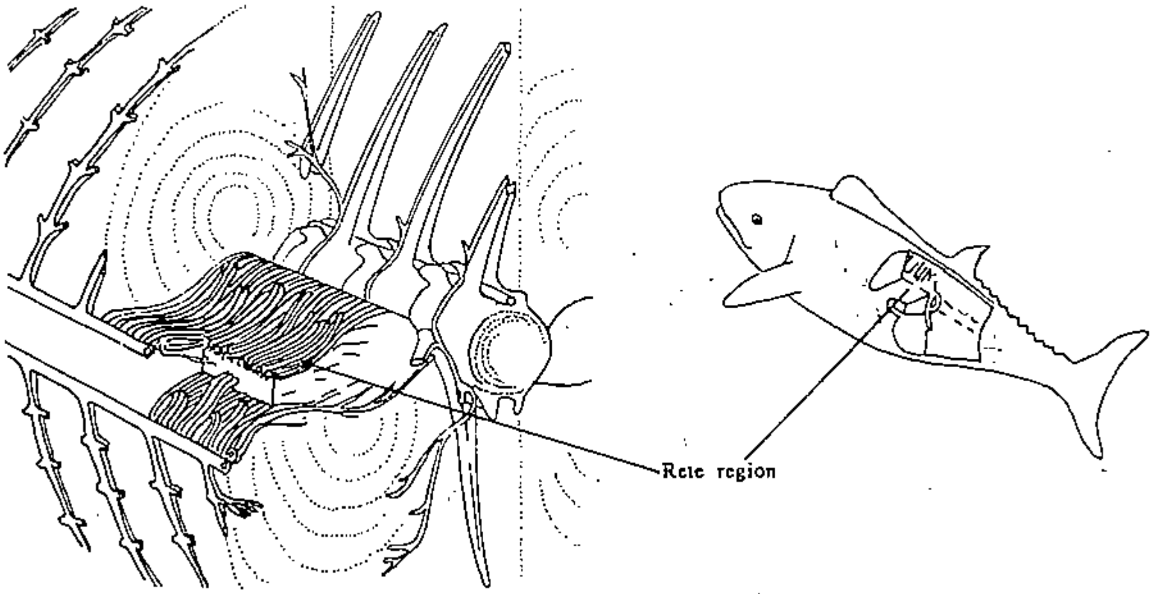

चित्र 7.2 : ब्लू फिन टूना मछली में रेटे मिराबिला।

बोध प्रश्न 3

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए तथा अपने उत्तरों को भाग 7.8 में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

क) रेटल सर्प के आनन गर्त में स्थित अवरक्त संवेदी अंग .... से .... °C तक के ताप के अंतरों को पहचान सकते है।

ख) सरीसृपों की .... अनुक्रिया उभयचरों की संवहनी श्वसनी त्वचा तथा स्तनधारियों की शुष्क लेकिन आर्द्र पारगम्य एवं पसीना निकालने वाली त्वचा के बीच का क्रमविकासीय चरण है।

7.5 समतापियों में ताप नियमन

समतापता का अर्थ कार्यिकीय साधनों द्वारा देह के तापमान का नियमन करना है। देह तापमान के स्थिर हो जाने से उच्च स्तर की सक्रियता स्थिर रूप से संभव होती है जिसमें उपापचयी एवं संचलनी

दोनों प्रकार की सक्रियाएं शामिल हैं। इससे मिलने वाले लाभ व्यवहारात्मक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास में स्पष्ट हैं, क्योंकि ऐसे विकास के लिए व्यष्टियों का सतत साहचर्य आवश्यक है। स्थिर देह ताप बनाए रखने में ऊष्मा उत्पत्ति तथा ऊष्मा हानि में एक संपूर्ण संतुलन बना रहता है। इसके लिए मस्तिष्क में एक संवेदनशील थर्मोस्टेट की आवश्यकता है, अर्थात एक ऐसी क्षमता की आवश्यकता जो न केवल उपापचय के एक उपजात के रूप में बनी गर्मी का उपयोग कर सके, बल्कि जो आवश्यकताओं के अनुरूप उपापचय ऊर्जा के उत्पादन को भी बढ़ा सके। इसके अतिरिक्त इस व्यवस्था में कई शारीरिक रूपांतरणों की भी आवश्यकता होती है। जैसे समुचित ऊष्मावरोध (insulation) और विशिष्ट ऊष्मा विनिमयक। चरम परिस्थितियों में नियमन किए गए देह ताप का उपापचयी व्यय इतना ज्यादा हो सकता है, कि कुछ स्पीशीज़ अस्थायी रूप से अपने ताप नियंत्रण को स्थगित कर देते हैं (निष्क्रियता तथा शीतनिष्क्रिता) या फिर वे अधिक उपयुक्त जलवायु में प्रवास करते हैं। मानव में व्यवहारात्मक विधि से ताप की चरम सीमाओं से छुटकारा मिलता है, जिसमें वह वस्त्र व्यवस्था, वातानुकूलन तथा अन्य तकनीकी युक्तियों का सहारा लेता है।

7.5.1 ऊष्मा उत्पत्ति

समतापियों में यदि बाह्य तापमान क्रांतिक तापमान के नीचे गिर जाता है, तो ऊष्मा-उत्पत्ति (heat production) को बढ़ाना जरूरी होता है। वैसे तो सभी उपापचय प्रक्रियाओं में परोक्ष रूप से ऊष्मा की उत्पत्ति होती है लेकिन पक्षियों तथा स्तनधारियों में ऐसी प्रक्रियाएं विकसित हुई हैं जो विशेष रूप से तापनियमन के लिए ऊष्मा उत्पादन करती हैं। इन तापजनक प्रक्रियाओं का कार्य मूलतः रासायनिक ऊर्जा को गर्मी में बदलना है। इनमें ये प्रक्रियाएं आती हैं:

i) **कँपकँपी** (shivering) : ऊष्माजनन की वह प्रक्रिया है जिससे हम अधिक परिचित हैं। सभी वयस्क पक्षी तथा स्तनधारी इन क्रियाविधियों का इसतेमाल करते जान पड़ते हैं। कँपकँपी में कंकालीय पेशियों का उच्च बारंबारता के साथ अपेक्षाकृत बिना समन्वय के संकुचन होता रहता है। सभी पेशीय संकुचनों में गर्मी निकलती है तथा प्रकटतः संकुचन का पहला कार्य रासायनिक ऊर्जा को ताप ऊर्जा में बदल देना है।

ii) **गैर कँपकँपी ऊष्माउत्पादन** (non-shivering thermogenesis) : गैर कँपकँपी ऊष्माउत्पादन स्तनधारियों में व्यापक रूप से पाया जाता है। इसमें उन सभी प्रक्रियाओं का संकेत है, जो कँपकँपी के अलावा किसी भी अन्य विधि से गर्मी पैदा करते हैं। यह निश्चित जानकारी नहीं है कि पक्षियों में गैर कँपकँपी के द्वारा गर्मी पैदा होती है या नहीं। स्तनधारियों में गैर कँपकँपी ऊष्माउत्पादन का सुविदित स्थान **भूरी वसा ऊतक** (brown adipose tissue) है, जिसे भूरी चर्बी कहते हैं। भूरी वसा ऊतक में माइटोकॉण्ड्रिया बहुत बड़ी संख्या में होते हैं तथा इसमें भरपूर रक्त वाहिकाएं होती हैं। अनुकंपी तंत्रिका तंत्र से निकलने वाली नरऐपिनेफ्रीन इस ऊतक में पहुंचकर लिपिडों के ऑक्सीकरण में बहुत अधिक वृद्धि कर देती हैं और बहुत गर्मी पैदा होती है। गैर कँपकँपी ऊष्माउत्पादन की तरह भूरी चर्बी भी नवजात शिशु, शीतनिष्क्रिय प्राणियों तथा शीत पर्यानुकूलित स्तनधारियों में विशेषतः सुव्यक्त होती है। भूरी वसा पृथक-पृथक संहितयों में पायी जाती है, जो गर्दन, अंतरस्कैपुला क्षेत्र, बगलों तथा उदर में स्थित होती है। शीतनिष्क्रियता-प्राणियों में ऐसा माना जाता है कि जब प्राणी शीतनिष्क्रियता से निकलता है तब भूरी वसा उसके शरीर को पुनः गर्म करने में सहायक होती है। नवजात स्तनधारी भूरी वसा को अपने सामान्य ऊष्माउत्पादन में इस्तेमाल करते हैं (चित्र 7.3)। भूरी वसा द्वारा गर्मी पैदा करने की मुख्य क्रियावधि में माइटोकॉण्ड्रिया में होने वाले ऑक्सीडेटिव फास्फोरिलेशन का वियोजन होता है। इस प्रकार आहार पदार्थों के ऑक्सीकरण से गर्मी पैदा होती है।

iii) **शारीरिक श्रम** (exercise) : शारीरिक क्रिया के दौरान श्रम द्वारा गर्मी का बनना कुछ सीमा तक कँपकँपी के द्वारा गर्मी पैदा होने का विकल्प है। लेकिन शारीरिक श्रम से देह-ऊष्मारोध के विघटन से ऊष्मा हानि हो जाती है। अतः पक्षियों तथा स्तनधारियों में ताप नियमन में शारीरिक श्रम का आपेक्षिक महत्व बहुत स्पष्ट नहीं है। समतापियों में गर्मी प्राप्त करने की विधियों के विषय में अध्ययन करने के बाद अब आप यह जानेंगे कि वह अधिशेष गर्मी को किस प्रकार बाहर निकालते हैं।

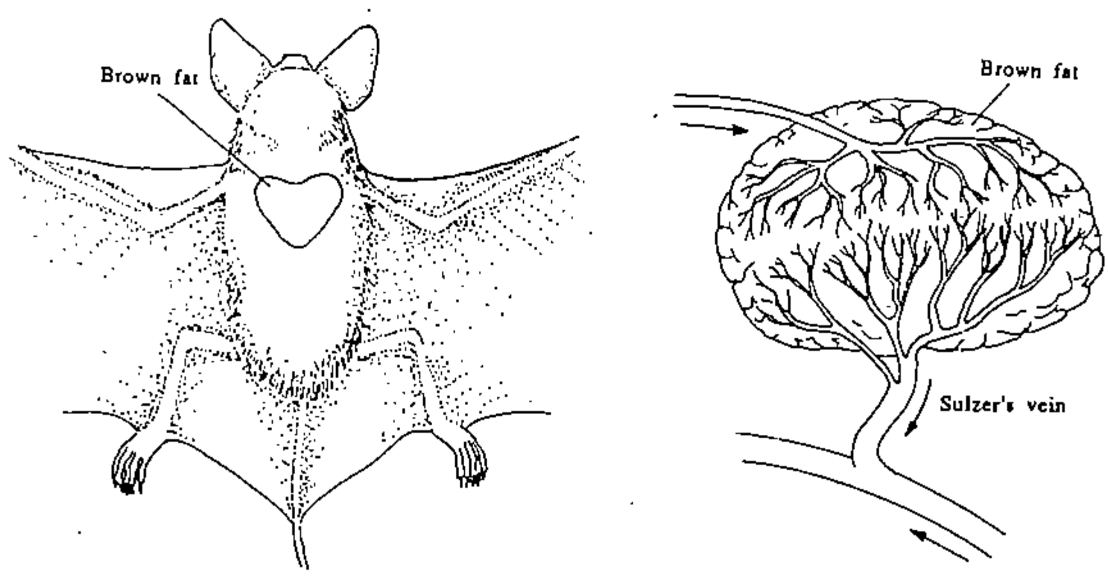

चित्र 7.3 : चमगादड़ में भूरी वसा के निक्षेपण।

7.5.2 ऊष्मा क्षय

ताप नियमन यदि मात्र उपापचयन पर ही निर्भर हो तो यह बहुत ही महंगा पड़ता है। अतः पक्षियों तथा स्तनधारियों दोनों ही में अधिशेष गर्मी को बाहर निकाल देने की क्रियाविधि विकसित हुई है। जलीय पर्यावरण में प्राणी तथा माध्यम के बीच संपूर्ण ऊष्मा अन्तरण चालन (conduction) द्वारा संपन्न होता है। लेकिन स्थलीय आवास में इस विधि से केवल थोड़ी ही मात्रा में ऊष्मा का आदान प्रदान होता है। अधिकांश समतापी स्थलीय होते हैं। मानव में विकिरण द्वारा ऊष्मा क्षय (heat loss) लगभग 55% तथा वाष्पन द्वारा लगभग 40% होती है। ऊष्मा क्षय कितनी होगी, यह परिवेशी तापमान तथा आर्द्रता पर निर्भर होता है। विकिरण तथा चालन द्वारा ऊष्मा क्षय प्रायः ठंडे पर्यावरण में ही उपयोगी होती है। इसके विपरीत उच्च तापमान पर इन मार्गों द्वारा प्राणी गर्मी प्राप्त करेगा। लेकिन वाष्पन सदैव ही एक नकारात्मक कारक होता है, और इसमें काफी ऊर्जा खर्च करनी पड़ती है। उदाहरण के लिए त्वचा अथवा श्वसनीय एपिथीलियमों की गीली सतहों से एक ग्राम जल के वाष्पन के लिए 0.6 kcal की आवश्यकता होती है। शीतलन की इस तकनीक को पक्षियों तथा स्तनधारियों ने बिल्कुल भिन्न तरीकों से अपनाया है।

पक्षियों की त्वचा सूखी होती है और तापरोधी भी। उसमें वाष्पन द्वारा शीतलन को बढ़ाने वाले किसी प्रकार के त्वचीय अंग नहीं होते। परंतु पक्षियों में वाष्पीय शीतलन मुख गुहा तथा श्वसन सतहों के द्वारा होता है। पक्षियों तथा स्तनधारियों में अपनाई जाने वाली चार क्रियाविधियां हैं जिनके द्वारा सक्रिय रूप से वाष्पीय शीतलन बढ़ाया जाता है। ये क्रियाविधियां निम्न हैं:

i) स्वेदन (पसीना आना) (sweating)
ii) हाँफना (panting)
iii) मुखतल फड़फड़ाना (gular fluttering)
iv) लार-लेपन (saliva spreading)

पसीना आने में तरल स्वेद ग्रंथि वाहिकाओं द्वारा एपिडर्मिस में से होता हुआ त्वचा की सतह पर आ जाता है। गर्म पर्यावरण में मानव सहित अनेक स्तनधारियों में अत्यधिक पसीना निकलता है लेकिन पक्षियों में पसीना नहीं निकलता। **हाँफना** (जल्दी जल्दी साँस लेना) ऊष्मा प्रतिबल (heat stress) के फलस्वरूप साँस तीव्रता से आने को कहते हैं। यह पक्षियों एवं स्तनधारियों में व्यापक रूप से पाया जाता है। हाँफने में पेशीय प्रयास कम होता है, इसलिए यह गर्मी को बाहर निकालने में लाभदायक है। पसीना आने की तुलना में हाँफने में कम से कम दो लाभ हैं। पहला, लवणों की हानि नहीं होती। दूसरा, साँस चलने की क्रिया में हाँफने से यह सुनिश्चित हो जाता है कि [illegible] से संतृप्त वायु वाष्पन सतह से बलपूर्वक दूर हटा दी जाती है। पसीना आने में जल से भरी वायु का दूर हटाना कई अन्य बातों पर भी निर्भर करता है, जैसे बाहर की चलने वाली हवाएं। लेकिन हाँफने में पसीना आने की अपेक्षा अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अनेक पक्षी वाष्पीय शीतलन को

बढ़ाने के लिए अपना मुंह खोलकर **मुखतल** (gular) क्षेत्र अर्थात मुख गुहा के फर्श को तीव्रता से कम्पित करते हैं। यह **मुखतल फड़फड़ाना** (gular fluttering) पक्षी के मुख के भीतर की नम तथा अत्यधिक रक्तवाहिनीयुक्त झिल्लियों के ऊपर से वायु के प्रवाह को बढ़ा देता है, जिससे वाष्पन अधिक होता है। चौथी तकनीक **लार लेपन** (saliva spreading) की है, जिसे अनेक कृतक तथा मार्सुपियल काम में लाते हैं। ऊष्मा प्रतिबल पड़ने पर ये प्राणी अपने लार को हाथ पैर, दुम, सीना अथवा अन्य देह भागों पर फैला देते हैं, जिससे वाष्पीय शीतलन में और अधिक बढ़ोतरी हो जाती है। इस प्रकार इस भाग में हमने उन विधियों का अध्ययन किया है जिनके द्वारा समतापी प्राणी गर्मी प्राप्त करते अथवा गर्मी निकालते हैं, जिससे उनका देह ताप स्थिर बना रहे। अब हम उन शरीर रचना संबंधी लक्षणों का अध्ययन करेंगे, जो देह ताप को स्थिर बनाए रखने में समतापी प्राणियों की मदद करते हैं।

7.5.3 फर तथा परों द्वारा ऊष्मारोधन

त्वचीय ऊष्मारोधन तथा प्राकृतिक पर्यावरण की जटिलताओं के बीच एक गहरा परस्पर संबंध है। सामान्य रूप से उत्तर ध्रुवीय अथवा दक्षिण ध्रुवीय स्पीशीज़ में उष्णकटिबंधीय स्पीशीज़ की अपेक्षा बेहतर ऊष्मारोधन पाया जाता है। इनमें समूर अर्थात फर (fur) की मोटाई में (जैसे ध्रुवीय भालू में) अथवा पिच्छों अथवा परों में (जैसे पेंग्विन में) स्पष्ट ऋतुपरक अंतर पाए जाते हैं। इसी प्रकार इन क्षेत्रों में रहने वाले जलीय स्तनधारियों जैसे सील तथा ह्वेल में त्वचा के नीचे चर्बी की मोटी मोटी परतें होती हैं जिसे तिमिवसा (blubber) कहते हैं। इनसे ऊष्मा-रोधन होता है। लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि चर्बी का जमाव शरीर के हर भाग में एक जैसा नहीं होता।

7.5.4 ऊष्मा के विनिमायक

सीलों तथा ह्वेलों में फ्लिपर तथा फ्लूक (हाथ पैरों के स्थान पर बनी चप्पू जैसी रचनाएं) होती हैं, जिनमें तिमिवसा नहीं होती तथा ऊष्मारोधन की कमी होती है। परन्तु इन उपांगों में अधिसंख्य रक्त वाहिनियां होती हैं, जिनमें रक्त आपूर्ति अधिक होती है। अतः बृहद् सतही क्षेत्रफल वाली इन पतली संरचनाओं के द्वारा काफी अधिक गर्मी बाहर निकाली जा सकती है, लेकिन आवश्यकता से अधिक गर्मी बाहर न निकल जाए, इसके लिए इनमें प्रतिधारा (counter current) ऊष्मा विनिमायक (heat exchangers) होते हैं। ह्वेल के फ्लिपर (अगले हाथ के तुल्य) में प्रत्येक धमनी को शिराएं पूरी तरह घेरे रहती हैं और जब गर्म धमनी रक्त फ्लिपर में बहता है, तब हर तरफ से घेरे हुए ठंडा शिरा रक्त उसे ठंडा कर देता है। इस प्रकार सतह पर पहुंचने वाला धमनी रक्त पूर्वशीतलित हो जाता है, इसीलिए जल में ऊष्मा का क्षय कम होता है। इस तरह ऊष्मा शिरा रक्त में पहुंच जाती है और यह शिरा रक्त शरीर में प्रवेश करने से पहले ही गर्म हो गया होता है (चित्र 7.4)। इस प्रकार के ऊष्मा विनिमायक को प्रतिधारा ऊष्मा विनिमायक कहते हैं, क्योंकि इसमें रक्त दो धाराओं में विपरीत दिशाओं में बहता है।

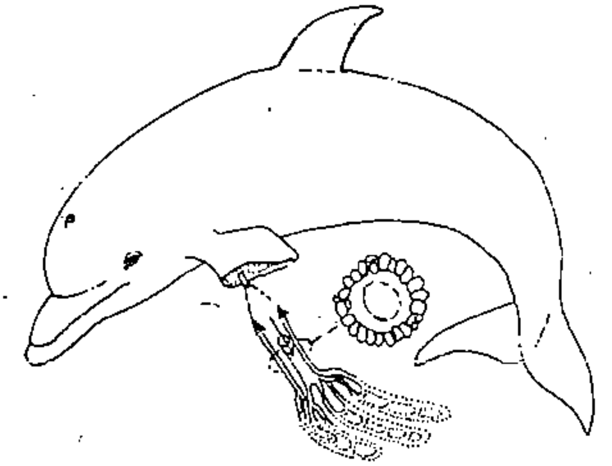

चित्र 7.4 : ऊष्मा बचाने के लिये फ्लिपर में प्रतिधारा तंत्र।

यह ध्यान देने योग्य एक रोचक बात है कि प्रतिधारा ऊष्मा विनिमायक अन्य बहुत-से प्राणियों में पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय जलों में रहने वाली समुद्री गायों (sea cows) में ऊष्मा विनिमायक उनके उपांगों में होते हैं। मनुष्य के उपांगों में भी कुछ ऊष्मा विनिमायक गहरे ऊतकों में मुख्य धमनियों तथा उनकी सहवर्ती बड़ी शिराओं के बीच होता है। पक्षियों में विशेषकर उन पक्षियों में जो ठंडे जल में खड़े अथवा तैरते रहते हैं, टाँगों में ऊष्मा विनिमय बहुत महत्वपूर्ण है। देह तापमान को बनाए रखने में सहायक शरीररचना संबंधी लक्षणों का अध्ययन करने के बाद अब हम उन नियमनकारी क्रियाविधियों का अध्ययन करेंगे, जो शरीर का तापमान बनाए रखने में कार्य करती हैं।

7.5.5 नियमनकारी क्रियाविधियां

तीव्र तापमान परिवर्तन के प्रति तात्कालिक अनुक्रिया केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के माध्यम से होती है। कार्यिकीय थर्मोस्टेट स्तनधारियों के हाइपोथैलेमस तथा पक्षियों के मेरूरज्जु में स्थित होता है। ये स्थान प्रतिवर्त क्रिया (reflex action) के केंद्र होते हैं, तथा इनका सक्रियकरण या तो त्वचा अथवा श्लेष्म झिल्लियों में स्थित ताप संवेदन ग्राहियों द्वारा होता है अथवा सीधे हाइपोथैलेमस के (या उसमें से प्रवाहित रक्त के) तापमान में होने वाले परिवर्तन से। यह कार्यिकीय थर्मोस्टेट उपवाही तंत्रिका तंतुओं के माध्यम से हाँफने अथवा कँपकँपाने के लिए पेशियों को उत्तेजित करता है। यह स्वायत्त तंत्र के माध्यम से त्वचीय रक्त वाहिकाओं, संवेदन ग्रंथियों आदि का नियमन करता है। कुछ ऐम्नियोट (amniotes) में पिनियल (pineal) तथा पैरापिनियल (parapineal) अंग तापनियमनकारी व्यवहार एवं कार्यिकी को प्रभावित करते हैं। हृद्वाहिकीय एवं त्वचीय अनुक्रियाएं ताप परिवर्तन के प्रति होने वाली तीव्र अभिक्रियाएँ हैं। यदि ज्यादा देर तीव्र ताप परिवर्तन का सामना करना पड़ता है, तो अंतःस्रावी तंत्र भी क्रिया में शामिल हो जाता है और विशेषकर थाइरॉड या ऐड्रीनल ग्रंथियों के माध्यम से उपापचयन में परिवर्तन लाया जाता है।

शीतनिष्क्रियता, ग्रीष्मनिष्क्रियता तथा दैनिक निष्क्रियता

पक्षी तथा स्तनधारी प्रायः समतापीय स्थिति में कार्य करते हैं। वे अपेक्षाकृत उच्चतर स्थित तापमान बनाए रखते हैं, लेकिन बहुत से स्तनधारी तथा कुछ पक्षी ऐसे हैं, जिसमें अपनी समतापीय अनुक्रियाओं में ढील दे सकने की क्षमता होती है। ये अपने देह तापमान को निम्न परिवेशी तापमानों के निकट तक गिरा सकते हैं। इस परिघटना को **नियंत्रित अधितापता** या **हाइपोथर्मिया** (controlled hypothermia) कहते हैं।

शीतनिष्क्रियता, ग्रीष्मनिष्क्रियता तथा दैनिक निष्क्रियता (daily torpor) ऐसी अवस्थाएं हैं, जिनमें प्राणी अपनी समतापीय प्रक्रियाओं को परिवेशी तापमानों के एक विशिष्ट परास में शिथिल कर देता है; तथा असमतापियों की तरह अपने शरीर के तापमान को परिवेशीय तापमान के बराबर ले आता है। जब शीत ऋतु में कुछ दिनों के लिए अथवा उससे अधिक अवधि के लिए देह का तापमान लगभग परिवेशी तापमान के बराबर ले आया जाता है, तब इस परिघटना को **शीतनिष्क्रियता** (hibernation) कहते हैं। जब यही क्रिया ग्रीष्म काल में होती है, तब इसे **ग्रीष्मनिष्क्रियता** (aestivation) कहते हैं। जब ऋतु के निरपेक्ष शरीर का तापमान प्रायः लगातार कई दिनों तक दिन के केवल एक भाग के लिए परिवेशी तापमान के निकट आ जाता है, तब इस परिघटना को **दैनिक निष्क्रियता** (daily torpor) कहते हैं। इस प्रकार नियंत्रित अधितापता के ये तीनों स्वरूप एक ही मूलभूत कार्यिकीय प्रक्रिया की अलग अलग अभिव्यक्तियां हैं। अधितापता की दशाओं में हृदय दर तथा श्वसन दर उपापयचन के साथ साथ गिर जाती है। प्राणी में देह ताप सामान्य से काफ़ी नीचे रहते भी गति कर सकने तथा पर्यावरण के प्रति व्यवहारात्मक अनुक्रिया कर सकने की कुछ क्षमता बनी रह सकती है। निम्न तापों पर निष्क्रियता चरम सीमा पर पहुंच जाती है। इन अधितापीय अवस्थाओं का एक मुख्य लाभ यह है कि इनके द्वारा प्राणियों की ऊर्जा मांग घट जाती है। इसका स्पष्टतः कारण यह है कि प्राणी अपने को गर्म रखने के लिए उपापचय दर को उच्च नहीं करता, दूसरे स्वयं परिणामी देह ताप भी उपापचय दर को नीचा कर देता है। (Q_{10} प्रभाव जिसके विषय में आप भाग 7.3 में पढ़ चुके हैं) अधितापीय अवस्था में पहुंचने पर प्राणी का जल व्यय भी घट जाता है। वास्तव में

जलाभाव से पीड़ित व्यष्टियों के लिए उर्जा बचाने से अधिक जल बचाने का महत्व है। अधितापीयता के दौरान श्वसनीय जल क्षय दो कारणों से कम हो जाता है।

i) ऑक्सीजन की आवश्यकता और साथ ही फेफड़ों में वायु गमन की दर दोनों ही घट जाती हैं, तथा

ii) देह तापमान नीचे आ जाता है और साँस द्वारा छोड़ी जाने वाली हवा समतापी अवस्था के दौरान की अपेक्षा ज्यादा ठंडी हो जाती है। इस प्रकार उसके साथ बाहर निकलने वाला वाष्प कम होता है।

त्वचा के द्वारा भी जल क्षय कम होता है, क्योंकि देह तापमान के गिरने से देह तरलों का वाष्प दाब भी कम हो जाता है। पक्षियों और स्तनधारियों में शीतनिष्क्रियता, ग्रीष्मनिष्क्रियता तथा दैनिक निष्क्रियता पाए जाने के कारण उन्हें यदाकदा **विषमतापी** (heterotherms) भी कहते हैं। विषमतापी वह प्राणी होता है, जो कभी अपने शरीर को शरीर क्रियाओं के द्वारा नियमित करता है और कभी कभी ऐसा नहीं भी करता है। एक अर्थ में विषमतापी प्राणी समतापी तथा असमतापी दोनों प्रकार की दशाओं में निर्वाह पूर्ण रूप से कर सकता है। उच्च देह तापमान पर ताप नियमन करते समय प्राणी बाहरी ताप परिस्थितियों से स्वतंत्रतापूर्वक घूम फिर सकता है तथा समतापता का प्राथमिक लाभ प्राप्त कर सकता है। इसके विपरीत जब वह अधितापीय अवस्था में होता है, तब असमतापियों की अपेक्षा कम ऊर्जा एवं जल आवश्यकता की विशिष्टता का निर्वाह करता है। उड्डयन के दौरान कार्यिकीय रूप में तापनियमन करने वाले कीट भी विषमतापी होते हैं तथा इसी प्रकार के लाभ प्राप्त करते हैं।

शीतनिष्क्रियता, ग्रीष्मनिष्क्रियता तथा दैनिक निष्क्रियता के दौरान प्राणी के शरीर के तापमान में होने वाले अंतर तापनियमनकारी नियंत्रण केंद्रों की क्रिया में आने वाले अंतर के कारण होता है। इन प्राणियों में सबसे आश्चर्यजनक बात इनका अधितापीय दशाओं में से निकल आने या जागने की क्षमता है। अधितापीय प्राणी अपनी ही उपापचयी ऊष्मा निर्माण का इस्तेमाल करके गर्म होते हुए पुनः अपने उच्च देह तापमान पर आ जाते हैं। यह जागृति तीव्र कँपकँपी तथा स्तनधारियों के मामले में गैर कँपकँपी ऊष्माउत्पादन की विधि से आती है।

शीतनिष्क्रियता अनेक स्तनधारियों में पायी जाती है, जैसे-हैम्स्टरों, कई प्रकार की धरा गिलहरियों, डोरमाइस, वुडचकों, कुछ चमगादड़ों, कुछ मोनोट्रीमों तथा कुछ मार्सुपियलों में। स्तनधारी शीतनिष्क्रियता में आने से पहले के महीनों में बहुत अधिक मात्रा में देह वसा संचित कर लेते हैं, जिसे वे अपनी शीतनिद्रा के दौरान इस्तेमाल करते हैं। शीतनिष्क्रियक प्राणी बीच बीच में और ऐसे समय पर जागते हैं, जब उन्हें मूत्र करना तथा विष्ठा निकालना होता है। इसके साथ ही उन्हें अपने बिल या गुफा में संचित किए गए आहार को भी खाना होता है। ग्रीष्मनिष्क्रियता की ओर शीतनिष्क्रियता की अपेक्षा कम ध्यान दिया जाता है। इसका कुछ कारण तो यह है कि इस अवस्था को पहचानना परखना आसान नहीं है क्योंकि यह अधिकतर मरूस्थलीय धरा गिलहरियों में पायी गयी है।

दैनिक निष्क्रियता अनेक स्तनधारियों तथा पक्षियों में गर्म तथा ठंडी दोनों परिस्थितियों में पायी जाती है। यह चमगादड़ों तथा कृतकों की अनेक स्पीशीज़ एवं विशेषतः मर्मर पक्षियों (humming birds), अबाबीलों (swallows) तथा बतीसा (swifts) पक्षियों आदि में होती है। दैनिक निष्क्रियता की एक विशेषता यह भी है कि इसमें प्राणी प्रतिदिन दिन के कुछ भाग में अधितापी हो जाता है, लेकिन दिन के शेष में वह उच्च देह तापमान बनाए रखता है। खाना पीना तथा अन्य गतिविधियां इसी दूसरे उच्च देह तापमान के काल के दौरान होती हैं। जब चमगादड़ों में दैनिक निष्क्रियता होती है, तो वे दिन के प्रकाश के समय में अधितापी हो जाते हैं और रात के समय भोजन की खोज के लिए निकल पड़ते हैं। शीतनिष्क्रियता अथवा दैनिक निष्क्रियता का नियमन करने वाली क्रियाविधियां जटिल होती हैं, क्योंकि वे अलग अलग स्पीशीज़ में भिन्न होती हैं। ऐसा माना जाता है कि कुछ प्राणियों में शीतनिष्क्रियता **जैविक घड़ी** (biological clock) के नियंत्रण के अधीन होती है। दैनिक निष्क्रियता को आहार संचय जैसी तात्कालिक कठिनाई का सामना करने के लिए अनुक्रिया के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। शीतनिष्क्रियता अथवा दैनिक निष्क्रियता पर दिन की लंबाई का प्रभाव कुछ स्पीशीज़ में कदाचित पिनियल ग्रंथि तथा उससे स्रावित हॉर्मोन मेलेटोनिन के माध्यम से होता है।

इस इकाई का समापन करते समय शायद यह जरूरी है कि लोगों में जो मान्यता है कि समतापता असमतापता से श्रेष्ठतर है, के विपक्ष में कुछ तर्क प्रस्तुत किया जाए। जैसा भी हो, कुल मिलाकर प्रकृति में भेद भाव नहीं है। सफलता की जो एक मात्र कसौटी है वह यह है कि स्पीशीज़ का पीढ़ी

दर पीढ़ी जनन द्वारा बढ़ते पनपते जाना, जिसमें व्यष्टिगत स्तर पर उत्तरजीविता एवं जनन की कई पूरक विधियां हैं। इस आधार को लेते हुए असमतापता भी जीवन की उतनी ही सफल विधि है, जितनी कि समतापता। वास्तव में अनेक असमतापी जीव वर्ग लाखों करोड़ों वर्ष से चले आ रहे हैं। अतः असमतापता एवं समतापता दोनों को उन तापीय संबंधों की दो उच्च विधि माना जा सकता है जिनका प्राणियों के विभिन्न आवासों में विकास के बाद सदुपयोग किया जा सकता है। परिणामतः ताप संबंधों के वे तथाकथित लाभ एवं हानि जो हमें दिखाई देते हैं, वास्तव में वे केवल अत्यधिक आपेक्षिक निर्णय ही कहे जा सकते हैं।

7.6 सारांश

आपने इस इकाई में अध्ययन किया:

- प्राणी के शरीर के तापमान का प्राणी के कार्य पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।
- असमतापी वे प्राणी होते हैं, जिनकी देह का तापमान परिवर्तनशील परिवेशी तापमान के साथ साथ बदलता रहता है तथा समतापी प्राणी वे होते हैं जो प्रायः अपनी देह का तापमान पर्यावरण से स्वतंत्र स्थिर बनाए रखते हैं।
- विभिन्न प्राणी अलग-अलग ताप परास को सह सकते हैं। कुछ की ताप सहन परास बहुत कम होती है और कुछ की काफी ज्यादा।
- गर्मी के कारण हुई मृत्यु के लिए कई कारक उत्तरदायी होते हैं: प्रोटीनों का ह्रास, एंज़ाइमों का तापीय निष्क्रियकरण, अपर्याप्त ऑक्सीजन आपूर्ति, परस्पर निर्भर उपापचयी अभिक्रियाओं में तापमान के भिन्न प्रभाव, और झिल्ली संरचना पर ताप के प्रभाव।
- जिन असमतापियों में देह ताप के नियंत्रण की कार्यिकीय क्रियाविधियां नहीं होती, वे प्रायः शीतनिष्क्रियता तथा ग्रीष्मनिष्क्रियता द्वारा व्यवहारात्मक नियंत्रण करते हैं। उनमें से कुछ में कार्यिकीय तापनियमन भी पाया जाता है।
- समतापी प्राणी अपनी देह के तापमान का कार्यिकीय नियमन करते हैं। वे तीन विधियों से गर्मी पैदा करते हैं—काँपने से, भूरी वसा में ऑक्सीडेटिव फ़ॉस्फ़ोरिलेशन से तथा शारीरिक श्रम से। वे ऊष्मा को बाहर निकालने के लिये ये विधियां अपनाते हैं: विकिरण, वाष्पन, चालन, पसीने द्वारा, हाँफना, मुखनल फड़फड़ाना, तथा लार-लेपन।
- समतापियों में फर, पिच्छ (पर), फ्लिपर, फ्लूक होते हैं जो देह तापमान बनाए रखने में सहायक होते हैं। उनमें शीतनिष्क्रियता, ग्रीष्मनिष्क्रियता तथा दैनिक निष्क्रियता भी पायी जाती है।
- हाइपोथैलेमस में स्थित कार्यिकीय थर्मोस्टेट पिनियल, पैरापिनियल अंग, थाइरॉइड तथा ऐड्रीनल ग्रंथियां समतापियों के तापनियमनकारी व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

7.7 अंत में कुछ प्रश्न

1) ऐसे प्राणियों के दो उदाहरण बताइए, जो अनुकूल ताप परास के बाहर भी जीवित बने रहते हैं।

....

....

....

....

2) गर्मी के कारण होने वाली मृत्यु के क्या-क्या कारक हैं?

....

....

....

....

3) ऐसी कम से कम दो विधियां समझाइए, जिनके द्वारा समतापी प्राणी अपनी देह के तापमान का नियमन करने के लिए ऊष्मा पैदा करते तथा ऊष्मा बाहर निकालते हैं।

....

....

....

....

4) सक्रिय रूप से वाष्पीय शीतलन को बढ़ाने के लिए पक्षियों तथा स्तनधारियों द्वारा अपनायी जाने वाली मुख्य क्रियाविधियों का नीचे दिए गए स्थान में संक्षेप में स्पष्टीकरण कीजिए।

....

....

....

....

5) नियंत्रित अधितापता की परिघटना का क्या अर्थ है?

....

....

....

....

7.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1) 1) घ, 2) ग, 3) क, 4) ख

2) क) 10 ख) परिवर्धन की आरंभिक अवस्थाएं, ग) 50°C
घ) ग्लीसरॉल ङ) जलवायु-अनुकूलन

3) क) 0.001 से 0.005°C ख) चर्म वाहिकीय

अंत में कुछ प्रश्न

1) कृपया उपभाग 7.3.1 में देखिए।
2) कृपया उपभाग 7.3.1 में देखिए।
3) कृपया भाग 7.5 में देखिए।
4) कृपया उपभाग 7.5.5 में देखिए।
5) कृपया उपभाग 7.5.5 में देखिए।

इकाई 8 जनन

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
8.2 जनन क्रियाविधियां
अलैंगिक जनन
लैंगिक जनन
8.3 जननांगों की कार्यात्मक आकारिकी
अण्डाशय
वृषण
सहायक जननांग
8.4 जनन चक्र
8.5 सारांश
8.6 अंत में कुछ प्रश्न
8.7 उत्तर

8.1 प्रस्तावना

इस पाठ्यक्रम की पिछली इकाइयों में आपने जिन विविध कार्यिकीय प्रक्रियाओं के विषय में पढ़ा है वे सव प्राणियों के जीवित वने रहने से संबंधित थीं। इस इकाई में आप प्राणियों में जनन की कार्यिकी के विषय में पढ़ेंगे जिसका संबंध स्वयं प्राणी की उत्तरजीविता से न होकर प्रजाति (स्पीशीज़) की उत्तरजीविता से है।

प्राणियों में ऐसा संभव है कि वे सामान्य रूप में परिवर्धित होकर वृद्धि करते हुए एक सामान्य आयु काल तक जीवन निर्वाह कर चुके हों और उन्होंने अपने जीवन में जनन न किया हो। मगर यदि जनन न होता तो स्पीशीज़ का जारी रहना तथा सभी क्रमविकासीय परिवर्तनों का होना समाप्त हो जाता। जनन ही वह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीवधारी अपने पुराने सदस्यों के स्थान पर नयी परन्तु कुछ-कुछ भिन्न संतानें छोड़ जाते हैं। देखा जाए तो वास्तव में तमाम जीवन प्रक्रियाओं का एक ही अंतिम उद्देश्य है—वह है सफलतापूर्वक जनन कर सकना। इस इकाई में आप विविध जनन क्रियाविधियों के विषय में पढ़ेंगे तथा जननांगों की कार्यात्मक आकारिकी, युग्मकजनन, जनन के हॉर्मोनों, प्रजनन चक्रों और साथ ही साथ जनन के नियमन के विषय में भी पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- जनन की आवश्यकता समझा सकेंगे,
- प्राणियों में जनन क्रियाविधियों की रूपरेखा बता सकेंगे,
- जननांगों की कार्यिकीय आकारिकी का स्पष्टीकरण कर सकेंगे,
- प्राणियों में प्रजनन चक्रों की रूपरेखा दे सकेंगे, तथा
- जनन का नियमन करने वाली क्रियाविधियों का स्पष्टीकरण कर सकेंगे।

8.2 जनन क्रियाविधियां

जीवधारियों में दो प्रकार से जनन होता है, (i) अलैंगिक तथा (ii) लैंगिक। अलैंगिक जनन में केवल एक ही जनक होता है और उसमें कोई विशेष जननांग नहीं होते और न हीं कोई विशेष जनन कोशिकाएं होती हैं। प्रत्येक जीवधारी व्यस्क बनते ही अपने ही जैसी आनुवंशिक रूप में सर्वसमान प्रतिकृतियां

बनाने में सक्षम होता है। लैंगिक जनन में दो जनक शामिल होते हैं, और प्रत्येक जनक विशिष्ट लैंगिक कोशिकाओं का योगदान करता है जिन्हें **युग्मक** अथवा **गैमीट** (gamete) कहते हैं। ये गैमीट समेकित होकर एक युग्मनज अर्थात् **जाइगोट** बनाते हैं। जाइगोट में आनुवंशिक पदार्थ आता है इसलिए संतानों में स्पीशीज़ की विशिष्टताएं तो आती ही हैं साथ ही उनमें वे लक्षण भी आ जाते हैं जो उन्हें अपने माता पिता से भिन्न बनाते हैं। आने वाले भागों में आप इन्हीं जनन क्रियाविधियों के विषय में पढ़ेंगे।

8.2.1 अलैंगिक जनन

अलैंगिक जनन को **अयुग्मकी** (agamic) जनन भी कहते हैं क्योंकि इसमें युग्मकों का समावेश नहीं होता। जनन की अलैंगिक विधियां इस प्रकार हैं—(i) विभाजन (fission), (ii) मुकुलन (budding), (iii) विखंडन (fragmentation) तथा (iv) अनिषेकजनन (parthenogenesis)। इस भाग में हम इन विधियों का संक्षेप में अध्ययन करेंगे। पाठ्यक्रम LSE-09 "प्राणी विविधता I" में आप जनन की इन विधियों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

i) **विभाजन** (fission): इस प्रक्रिया में जीवधारी सूत्री विभाजन विधि से दो या दो से अधिक समान आकार के भागों में विभाजित हो जाता है। जीवधारियों के दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाने को **द्विविभाजन** (binary fission) कहते हैं जो प्रोटोजोअनों की विशिष्टता है। इस विधि से बनने वाले संतति जीवधारी उन सभी साइटोप्लाज़मी अंगकों को धारण किए होते हैं जो जनक व्यष्टि में पाए जाते हैं। इनमें आनुवंशिक पदार्थ भी वही होता है जो जनक जीवधारियों में होता है। कुछ कोशिकांगक जैसे कि माइटोकॉन्ड्रिया विभाजन के समय में ही विभाजित हो जाते हैं जब कि कुछ अन्य अंगक जैसे कि पक्ष्माभ तथा संकुचनशील धानियां, संतति जीवधारियों में नए सिरे से बनते हैं। प्रोटोज़ोअनों में किसी किसी खास समय पर लैंगिक जनन भी होता है। उनमें अर्धसूत्री विभाजन विधि से युग्मक बनते हैं और मैथुन होता है। उपभाग 8.2.2 में आप प्रोटोजोअनों में लैंगिक जनन के विषय में पढ़ेंगे।

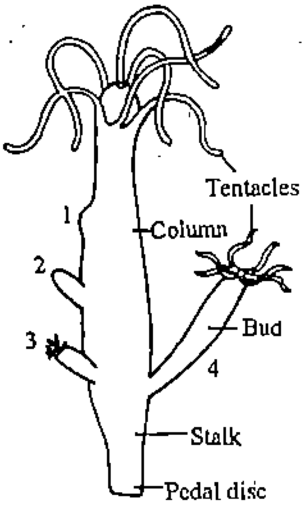

चित्र 8.1 : हाइड्रा में मुकुलन।

ii) **मुकुलन** (Budding): जनन की इस विधि में जीवधारी के शरीर से एक बहिर्वृद्धि निकलती है जो जनक प्राणी से पृथक होकर एक स्वनिर्भर प्राणी बन जाती है। मुकुलन का होना प्रोटोजोआ, सीलेन्टेरेटा, प्लैटीहैल्मिथ तथा ऐनेलिड के कई वर्गों में पाया जाता है (चित्र 8.1)।

iii) **विखंडन** (Fragmentation): इस जनन विधि में जीवधारी दो या दो से अधिक टुकड़ों में टूट जाता है तथा इनमें से प्रत्येक टुकड़ा वृद्धि करता हुआ एक पूर्ण प्राणी बन जाता है। जनन की यह विधि ऐसे जीवों में पायी जाती है जिनमें पुनरूद्भवन (regeneration) की अच्छी क्षमता होती है। स्पंजों तथा हाइड्रॉइड सीलेन्टेरेटों में इस प्रकार का जनन होता हुआ देखा जाता है। यदि किसी स्पंज को एक बारीक जाली में से भींचकर मसल कर छाना जाए तो उससे प्राप्त अलग अलग हुई कोशिकाएं एक साथ आकर समूह बना लेती हैं तथा नए स्पंजों का निर्माण करती हैं। स्वतंत्रजीवी चपटे कृमियों के बहुत छोटे छोटे खण्डों से नए प्राणी बन जाते हैं, यदि उन्हें सही परिस्थितियां प्रदान की जाएं। *लाइनियस (Lineus)* नामक एक नेमर्टीन कृमि में संकुचन छल्ले बन जाते हैं जो इसके शरीर को छोटे छोटे खण्डों में काट देते हैं। इन प्राणियों में अविभेदित कोशिकाएं बहुत बड़ी संख्या में होती हैं जिनमें आवश्यकता पड़ने पर प्रचुरोद्भवन होकर किसी भी प्रकार का ऊतक बन सकता है।

iv) **अनिषेकजनन** (parthenogenesis) : इस प्रकार के जनन में विपरीत लिंग की जनन कोशिका के भाग लिए बिना एक अण्डे अथवा एक शुक्राणु से नयी व्यष्टि बन जाती है। प्राणियों में केवल मातृक कोशिका से ही अनिषेकजननी प्राणी बनता है। मगर कुछ शैवालों में पैतृक जनन कोशिका से नयी व्यष्टि बनती है, इसलिए अनिषेकजनन को एक अलैंगिक जनन क्रियाविधि माना जाता है।

प्राकृतिक अनिषेकजनन रोटीफेरों में तथा नेमाटोडा, क्रस्टेशियन, कीटों तथा मछलियों की अनेक स्पीशीज़ में, उभयचरों में तथा मरुस्थलीय छिपकलियों में होता पाया जाता है।

अनेक अनिषेकजननी अकशेरुकियों में अलैंगिक जनन का द्विलैंगिक जनन के साथ चक्रीय एकान्तरण होता है। अनिषेकजनन या तो ऋतुपरक एवं तापमान या आहार सप्लाई से संबंधित हो सकता है, या यह अनियमित अंतरालों पर होता है। मधुमक्खियों तथा कुछ ततैयों में अनिषेचित अण्डों से अगुणित (हैप्लाइड) नर बनते हैं तथा निषेचित अण्डों से द्विगणित (डिप्लाइड) मादाएं बनती हैं।

8.2.2 लैंगिक जनन

इस भाग के आरंभ में ही हमने पढ़ा था कि लैंगिक जनन में दो जनक शामिल होते हैं जो आनुवंशिक दृष्टि से भिन्न होते हैं। ये अपने आनुवंशिक पदार्थों को जोड़ कर एक नए आनुवंशिक रूप (जीनोटाइप) की कोशिका बनाते हैं। इसके विपरीत अलैंगिक जनन में आनुवंशिक पदार्थ का मिश्रण नहीं होता। बहरहाल, ऐसा सोचने की गलती नहीं करनी चाहिए कि अलैंगिक जनन एक "दोषपूर्ण" जनन व्यवस्था है जो केवल आदिम प्रकार के जीवों में ही पायी जाती है। यदि हम ऐसे आदिम जीवों की प्रचुरता की ओर एक नजर डालें जो कि 35 लाख वर्षों से पृथ्वी पर बने चले आ रहे हैं और जो आहार शृंखला जैसी कुछ महत्वपूर्ण परिघटनाओं में निहित चले आ रहे हैं तो हमें इन जीवों की सफलता एवं इनका अत्यंत महत्वपूर्ण होना स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है। इन जीवों ने अपने को अलैंगिक जनन तक ही इसलिए सीमित रखा होगा क्योंकि यह जनन विधि सरल है तथा इसमें अपने मैथुन साथी को ढूंढने में न तो समय ही लगता है और न ही ऊर्जा का व्यय होता है।

युग्मकों के समेकन को **सिनगैमी** (syngamy) अथवा **युग्मक संलयन** कहते हैं। सामान्यतः युग्मक एक दूसरे से संरचना, आकार तथा व्यवहार में भिन्न होते हैं और इसी आधार पर उन्हें **विषमयुग्मक** अर्थात **हैटेरोगैमीट** (heterogamete) कहते हैं। **अण्डाणु** (अंडा) मादा द्वारा बनता है तथा **शुक्राणु** नर द्वारा बनता है। अण्डाणु बड़े, अगतिशील तथा संख्या में अपेक्षाकृत कम होते हैं। शुक्राणु छोटे, गतिशील और बहुत बड़ी संख्या में बनते हैं। सिनगैमी की सम्पन्नता **निषेचन** (fertilisation) की प्रक्रिया द्वारा होती है जिसमें एक शुक्राणु अण्डे के भीतर प्रवेश करके अपना केंद्रक अण्डे के केन्द्रक को दे देता है।

लैंगिक जनन सभी बहुकोशिकीय जीवों में पाया जाता है। प्रोटोजोअनों में भी उनके किसी खास जीवन काल में लैंगिक जनन होता है। इनमें होने वाले लैंगिक जनन में नर और मादा युग्मकों का हाथ हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता। कभी कभी दो परिपक्व जनक एक दूसरे के साथ जुड़कर मात्र अपने केंद्रकीय पदार्थ का परस्पर विनिमय कर लेते हैं या वे अपना-अपना कोशिकाद्रव्य एक दूसरे के साथ एकीकृत कर लेते हैं। इन प्राणियों के लिंग में विभेद कर सकना संभव नहीं है (प्रोटोजोअनों में लैंगिक जनन का विस्तृत अध्ययन आप पाठ्यक्रम LSE-09 प्राणी विविधता-I में करेंगे)। नर मादा का विभेद मेटाज़ोआ में अधिक स्पष्ट होता है। जनन कोशिकाओं का उत्पादन करने वाले अंगों को हम **जनद** अथवा **गोनड** (gonads) कहते हैं। शुक्राणु पैदा करने वाले गोनड को **वृषण** (testes) तथा अण्डा पैदा करने वाले गोनड को **अण्डाशय** (ovary) कहते हैं।

लैंगिक विधि से जनन करने वाले मेटाज़ोअनों में नर तथा मादा प्राणी स्पष्ट और पृथक पृथक होते हैं। प्रत्येक का अपना अपना जनन तंत्र होता है तथा एक ही प्रकार की कोशिकाएं बनाता है या तो शुक्राणु या अण्डा। लगभग सभी कशेरुकियों में तथा अनेक अकशेरुकियों में लिंग पृथक होती है तथा ऐसी दशा को **एकलिंगाश्रयी** (dioecious) कहते हैं और इस प्रकार से होने वाले जनन को **द्विजनकी** (biparental) जनन कहते हैं। मगर कुछ ऐसे प्राणी भी हैं जैसे कि अधिसंख्य चपटे कृमि, कुछ हाइड्रॉइड, ऐनेलिड, क्रस्टेशियन तथा कुछ मछलियां जिनमें नर एवं मादा अंग दोनों एक ही प्राणी में पाए जाते हैं। ऐसी दशा को **उभयलिंगता** (hermaphroditism) कहते हैं। पृथक लिंग वाली एकलिंगाश्रयी दशा के विपरीत उभयलिंगी प्राणी **उभयलिंगाश्रयी** (monoecious) होते हैं उनमें नर मादा दोनों प्रकार के अंग एक ही जीवधारी में होते हैं। अधिकतर उभयलिंगी प्राणी अपनी ही जनन कोशिकाओं का विनिमय करके स्वनिषेचन नहीं होने देते। उदाहरण के लिए, केंचुओं में नर मादा दोनों प्रकार के अंग होते हैं मगर इसके अंडों का निषेचन दूसरे केंचुए के नर तत्वों से होता है और दूसरे केंचुए के अंडों का निषेचन पहले केंचुए के नर तत्वों से होता है। उभयलिंगियों में स्वनिषेचन को न होने देने की एक विधि यह भी है कि उनमें अण्डों तथा शुक्राणुओं का परिपक्वन अलग अलग समय पर होता है।

यदि हम स्वीकार करते हैं कि सभी जीवित वस्तुएं नाशवान हैं यानि यह कहना कि वह प्रत्येक जीवधारी जिसमें एक जीवनावधि का गुण है, अंततः मृत्यु को प्राप्त होता ही है, तो स्पीशीज़ के बने रहने के लिए जनन की प्रक्रिया होना अवश्यमभावी है। क्रमविकास के दौरान जनन की कारगरता वहां-वहां बढ़ गयी है जहां-जहां जनक अपने बच्चों को, उनके जन्म से पूर्व अथवा जन्म के बाद, सुरक्षा एवं पोषण प्रदान करते हैं। इस दिशा में कशेरुकियों में पाए जाने वाले अनुकूलन इस प्रकार हैं: **भीतरी निषेचन** (internal fertilisation), **कवचयुक्त** (cleidoic) **अण्डा** तथा **भ्रूण झिल्लियां** (foetal membranes)। निम्नतर प्राणियों में भी कुछ ऐसे ही समानांतर अनुकूलन पाए जाते हैं।

निषेचन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सके इसके लिए प्राणियों में भीतरी निषेचन का अनुकूलन हुआ है जिसका संबंध मैथुन से है। परिवर्धनशील भ्रूणों की सुरक्षा के लिए अनुकूलन के रूप में सरीसृपों तथा पक्षियों ने अपने निषेचित अण्डे के चारों ओर एक केल्सियमयुक्त कवच का स्राव करना शुरू कर दिया। वे जीवधारी जो अपने अण्डों को निषेचन के बाद शीघ्र ही बाहर निकाल देते हैं उन्हें **अण्डप्रजक** (oviparous) प्राणी कहते हैं। कुछ ऐसे भी प्राणी हैं जो अण्डे को देर तक भीतर ही रोके रखते हैं और इस दौरान यह अण्डा मादा जीवधारी के भीतर ही परिवर्धित होता है तथा इस कवचयुक्त अण्डे में से बच्चा लगभग उसी समय पर निकलता है जिस पर यदि वह शरीर से बाहर दिये जाने पर कवच फोड़कर निकलता, ऐसे प्राणियों को **अण्डशिशुप्रज** (ovoviviparous) कहते हैं। स्तनधारियों में भ्रूणों के आंतरिक परिवर्धन के लिए अनुकूलन हो गया है। इनमें अण्डे मादा प्राणी के भीतर परिवर्धित होते हैं और बच्चों का जन्म होता है। इस प्रकार के प्राणियों को **शिशुप्रज** (viviparous) अथवा **जरायुज** भी कहते हैं।

आपको ज्ञात हो चुका है कि लैंगिक जनन का एक लाभ है आनुवंशिक मिश्रण। लैंगिक जनन में माता पिता के लक्षणों के संयोजन से विभिन्नताओं में वृद्धि होती है तथा इसके द्वारा एक सम्पन्न एवं अति विविध क्रमविकास की संभावना बनती है। इससे पहले आप पढ़ चुके हैं कि प्राणियों के बीच जीनों का विनिमय केवल अलैंगिक विधि से जनन करने वाले प्राणियों में अधिक सीमित होता है। लैंगिक विधि से जनन करने वाले जीवों में आनुवंशिक मिश्रण की प्रक्रिया अर्धसूत्रण के द्वारा सम्पन्न होती है। आप पाठ्यक्रम LSE-01, कोशिका जैविकी की इकाई 17 में पढ़ चुके हैं कि अर्धसूत्रण की प्रक्रिया युग्मकजनन अथवा **गैमीटोजेनेसिस** (gametogenesis) का एक ऐसा विशिष्ट प्रकार है जिसमें केंद्रक विभाजन के दौरान क्रोमोसोम एक बार विभाजित होते हैं तथा कोशिका दो बार विभाजित होती है जिसके स्वरूप चार संतति कोशिकाएं बनती हैं जिनमें से प्रत्येक में गुणसूत्रों अथवा क्रोमोसोमों की संख्या अगुणित (haploid) होती है। निषेचन के समय दो अगुणित युग्मक संयोजित हो जाते हैं जिससे उस स्पीशीज़ की सामान्य द्विगुणित क्रोमोसोम संख्या फिर से स्थापित हो जाती है। युग्मनज (zygote) में प्रत्येक जनक से बराबर संख्या में क्रोमोसोम आते हैं फिर भी आनुवंशिक दृष्टि से वह पुनर्संयोजन (recombination) के कारण प्रत्येक जनक से भिन्न होता है। इसके बावजूद इस युग्मनज से बनने वाले प्राणी में जनकीय लक्षणों का एक यादृच्छिक या अनियमित अपव्यूहन (random assortment) तो होता ही है। यही विधि है जिसके द्वारा लैंगिक जनन से जीवों की समष्टि में नई विभिन्नताएं उत्पन्न होती हैं।

लैंगिक जनन के इन अनिवार्य लक्षणों का अध्ययन करने के बाद अब हम लिंग निर्धारण की क्रियाविधि के विषय में अध्ययन करेंगे।

लिंग निर्धारण

लिंग यानि की प्राणी नर होगा या मादा, यह निषेचन के समय निर्धारित हो जाता है और यही चीज आगे चलकर जनन तंत्र में नर मादा विभेदन में होने वाली सभी प्रक्रियाओं का दिशा निर्देशन एवं उनका नियमन करती है। परन्तु लिंग निर्धारण (sex determination) अपरिवर्तनीय नहीं होता है। ऐसे अनेक आंतरिक एवं ब्राह्य पर्यावरणी कारक होते हैं जो परिवर्धन प्रक्रिया प्राणी की लैंगिक संरचना को रूपांतरित कर सकते है अथवा उसे पूरी तरह उलट देते हैं।

लिंग जो कि निषेचन के समय स्थापित होती है उन "लिंग" क्रोमोसोमों पर निर्भर होती है जो जनकों से प्राप्त होते हैं। आप जानते हैं कि बहुकोशिकीय जीवधारियों की कोशिकाओं में दो प्रकार के क्रोमोसोम होते हैं — **ऑटोसोम** (autosome) तथा **लिंग क्रोमोसोम** (sex chromosome)। उदाहरण

के लिए, मानव में बाईस जोड़े ऑटोसोमों के तथा एक जोड़ा लिंग क्रोमोसोम का होता है। स्तनधारियों, अधिसंख्य मेंढकों, कुछ मछलियों, तथा डिप्टेरस कीटों में दो प्रकार के लिंग क्रोमोसोम हैं, X तथा Y। इन दोनों में से Y क्रोमोसोम अधिक प्रबल "नर निर्धारक" है। XY क्रोमोसोमों से युक्त युग्मनज से नर बनता है और इसलिए ऐसे युग्मनज को **विषमयुग्मनज** अथवा **हैटेरोज़ाइगोट** (heterozygote) कहते हैं जबकि XX क्रोमोसोमों से युक्त युग्मनज़ मादा बनता है और उसे **समयुग्मनज** अथवा **होमोज़ाइगोट** (homozygote) कहते हैं। चूंकि स्तनीय नर एक विषमयुग्मनज होता है जिसमें XY क्रोमोसोम होते हैं इसलिए उसके शुक्राणुओं से आधे शुक्राणुओं में X क्रोमोसोम होता है तथा शेष शुक्राणुओं में Y क्रोमोसोम होता है। स्तनीय मादा समयुग्मनज होती है जिसमें XX क्रोमोसोम होते हैं इसलिए उसके अण्डों में केवल X क्रोमोसोम ही होता है। X क्रोमोसोमधारक शुक्राणु के अण्डे से जुड़ने पर मादा बनती है तथा Y क्रोमोसोम धारक शुक्राणु के अंडे से जुड़ने पर आनुवंशिक नर बनता है।

पक्षियों में विषमयुग्मकी लिंग मादा होती है। इनमें पाया जाने वाला छोटा क्रोमोसोम जो कि स्तनधारियों के Y क्रोमोसोम के तुल्य है अक्षर W से दर्शाया जाता है और इस मामले में X क्रोमोसोम को Z द्वारा दर्शाया जाता है। अतः पक्षियों में जो अण्डे बनते हैं उनमें से आधे अण्डों में W क्रोमोसोम होता है तथा शेष आधे अण्डों में Z क्रोमोसोम होता है। उधर नर के सभी शुक्राणुओं में Z क्रोमोसोम होता है। यहां समयुग्मजी (ZZ) दशा से नर बनता है तथा विषमयुग्मजजी (ZW) दशा से मादा बनती है। यह विधि पक्षियों, अधिसंख्य सरीसृपों, सालामैण्डरों, कुछ मछलियों तथा कुछ कीटों में पायी जाती है। XX-XY प्रकार के लिंग निर्धारण को स्तनीय प्रकार का लिंग निर्धारण तथा ZZ-ZW प्रकार को पक्षी का लिंग निर्धारण कहते हैं।

बोध प्रश्न 1

कॉलम अ में दिए गए शब्दों को कॉलम ब में दी गई परिभाषाओं से मिलाइए तथा अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

	अ		ब
i)	अयुग्मकी जनन	क)	जनन का एक प्रकार जिसमें विपरीत लिंग की जनन कोशिका के भाग लिए बिना अण्डे से अथवा केवल शुक्राणु से व्यष्टिगत जीव का परिवर्धन होता है।
ii)	अनिषेकजनन	ख)	जनन का वह प्रकार जिसमें युग्मकों का समेकन नहीं होता।
iii)	द्विविभाजन	ग)	वह परिघटना जिसमें अण्डे मादा जीवधारी के भीतर परिवर्धित होते हैं तथा शिशुओं का जन्म होता है।
iv)	सिनगैमी	घ)	वह परिघटना जिसमें अण्डोत्सर्ग के तुरंत बाद मादा द्वारा अण्डे दे दिए जाते हैं।
v)	एकलिंगाश्रयी	च)	ऐसी दशा जिसमें नर और मादा दोनों प्रकार के गोनड एक ही व्यष्टि में पाए जाते हैं।
vi)	विषमयुग्मक	छ)	ऐसे युग्मक जो संरचना, साइज तथा व्यवहार में एक दूसरे से भिन्न होते हैं।
vii)	उभयलिंगता	ज)	ऐसी दशा जिसमें प्राणी अलग अलग लिंग के होते हैं।
viii)	अण्डप्रजता	झ)	युग्मकों का संयोजन
ix)	शिशुप्रजता	त)	जीवधारी का दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाना।

8.3 जननांगों की कार्यात्मक आकारिकी

पिछले भाग में आपने लैंगिक जनन के अनिवार्य लक्षणों के विषय में पढ़ा। इस भाग में हम जननांगों के विषय में पढ़ेंगे। आपको यह तो ज्ञात है कि जनन कोशिकाओं को बनाने वाले अंगों को **गोनड**

कहते हैं। शुक्राणु बनाने वाले गोनडों को वृषण कहते हैं तथा अण्डे बनाने वालों को **अण्डाशय** कहते हैं। सभी प्राणियों में गोनड ही प्राथमिक लिंग अंग होते हैं। कुछ आदिम प्राणियों में गैमीट बनाने वाले ऊतक विसरित प्रकार के होते हैं जिनमें लिंग कोशिकाओं के प्रचुरोद्भावन के लिए बहुसंख्यक छितराए हुए केन्द्र होते हैं। सभी अधिक उन्नत प्राणियों में गोनड स्थानिक होते हैं और द्विपार्श्वतः सममित (bilaterally symmetrical) प्राणियों में ये युग्मित संरचनाओं के रूप में बनते हैं। कभी कभी इनमें से एक गोनड परिवर्ती रूप में अपघटित हो जाता है। पक्षी इस दशा का एक परिचित उदाहरण हैं जिनमें नर में तो युग्मित वृषण होते हैं मगर अधिकांश मादाओं में केवल एक ही (बांया) अण्डाशय होता है।

गोनडों के अतिरिक्त अधिकतर मेटाज़ोआ में विविध **सहायक जननांग** (accessory reproductive organs) भी होते हैं जिनका योगदान लिंग कोशिकाओं के स्थानांतरण एवं उनके प्राप्त करने में होता है, जैसे कि शिश्न योनिमार्ग, अंडवाहिनियां, गर्भाशय तथा शुक्रवाहिकाएं। पाठ्यक्रम LSE-09 प्राणी विविधता I तथा LSE-10 प्राणी विविधता II में आप प्राणियों के विभिन्न वर्गों में इन अंगों के शारीर (anatomy) का अध्ययन करेंगे। विभिन्न प्राणी-वर्गों के जननांगों के क्रियात्मक आकारिकी (functional morphology) का विस्तृत अध्ययन इस इकाई की परिसीमा से बाहर है, अतः हम केवल कशेरुकियों के ही अध्ययन तक सीमित रहेंगे।

कशेरुकियों के गोनड को दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता है —i) स्तनी प्रकार तथा ii) गैर-स्तनी प्रकार। शारीरतः वे एक दूसरे से भिन्न होते हैं मगर वे एक ही कार्य करते हैं। आगे के उपभाग में हम स्तनीय तथा गैर-स्तनीय दोनों प्रकार के गोनडों के विषय में पढ़ेंगे।

8.3.1 अण्डाशय

स्तनीय अण्डाशय चपटी संरचनाएं होती हैं जो श्रोणि गुहा (pelvic cavity) के किनारों पर स्थित होते हैं। ये परिटोनियम के साथ मीज़ोवेरियमों (mesovaria) तथा अण्डाशयी स्नायु के द्वारा जुड़े होते हैं। इस अंग की मुक्त सतह पर **जनन एपिथिलियम** की इकहरी परत होती है। परिपक्व अण्डाशय के **कॉर्टेक्स** में **फॉलिकल** (follicles) अर्थात् पुटक एवम् **कार्पोरा लुटिया** (corpora lutea) होते हैं जो अपने विभेदन एवं विघटन की विभिन्न अवस्थाओं में पाए जाते हैं। इसके विपरीत अण्डाशय के मेडुला (मध्य) में बड़ी बड़ी रक्त वाहिकाएं होती हैं। इन रचनाओं के अतिरिक्त अण्डाशय के भीतर **अंतराली** (interstitial) कोशिकाएं होती हैं जो उस सारे स्थान को भरे रहती हैं जहां फॉलिकल, कॉर्पोरा लुटिया तथा रक्त वाहिकाएं नहीं होतीं (चित्र 8.2)।

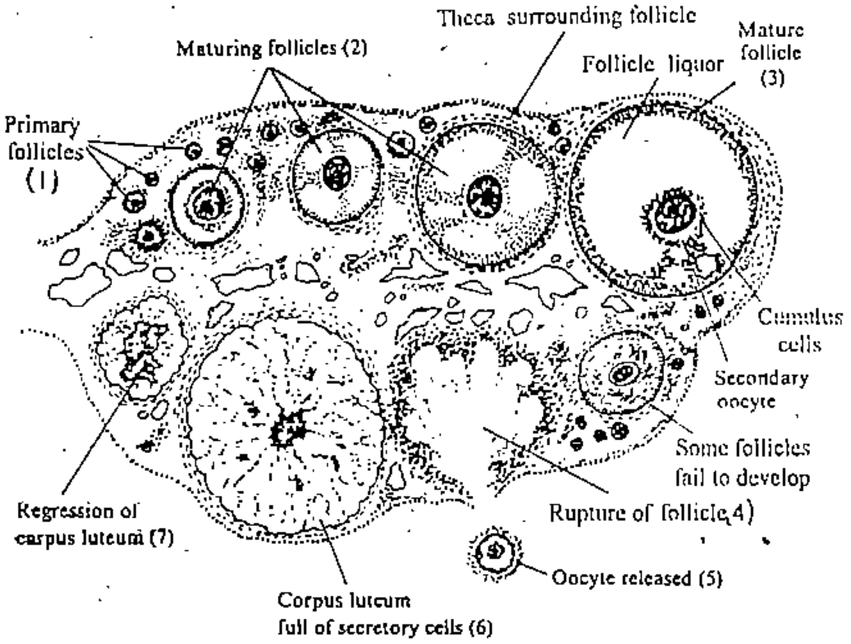

चित्र 8.2 : स्तनीय अण्डाशय का आरेख

अण्डाशय के फॉलिकल ही वे वास्तविक संरचनाएं हैं जिनमे युग्मक होते हैं। ये युग्मक जनन ऐपिथीलियम से उत्पन्न होते हैं और बाद में फॉलिकल कोशिकाओं से घिर जाते हैं। फॉलिकल कोशिकाओं की परतों से घिरी एक जनन कोशिका वाली पूर्ण संरचना को फॉलिकल कहते हैं। फॉलिकल, विभेदन की कई अवस्थाओं से गुजरता हुआ एक परिपक्व फॉलिकल, बन जाता है जिसे ऐंट्रल फॉलिकल (antral follicle) अथवा **ग्राफियन फ्रॉलिकल** (Graafian follicle) कहते हैं (देखिए चित्र 8.2)। अण्डोत्सर्ग होने पर अण्डे के निकल जाने के बाद फॉलिकल कॉर्पस लुटियम बन जाता है। अण्डाशय में कुछ ऐसे फॉलिकल भी होते हैं जो हॉर्मोनों की उपलब्धता न होने के कारण ग्राफियन फॉलिकलों के रूप में विकसित नहीं हो पाते और विघटित हो जाते हैं। विघटनशील फॉलिकलों को **एट्रेटिक फॉलिकल** (atretic follicle) कहते हैं। अण्डाशय के भीतर एट्रेटिक फॉलिकलों तथा कॉर्पोरा लुटिया को अपह्रास की विभिन्न अवस्थाओं में देखा जा सकता है।

आपने चित्र 8.2 में देखा होगा कि स्तनीय अण्डाशय में फॉलिकल परिवर्धन की विभिन्न अवस्थाओं में पाए जाते हैं अर्थात् प्राथमिक फॉलिकल, वृद्धिरत फॉलिकल, प्रीएंट्रल फॉलिकल और ग्राफियन फॉलिकल हो सकते हैं। इसके विपरीत गैरस्तनीय अण्डाशय में फॉलिकल अधिकांशतः एक ही विभेदन अवस्था में पाए जाते हैं जो कि एक झिल्ली द्वारा समूहों में घिरे होते हैं। फॉलिकलों के इस प्रकार के समूह को **सिस्ट** (cyst) कहते हैं। गैरस्तनीय कशेरुकियों के अण्डाशय में फॉलिकलों का परिवर्धन समकालिक होता है इसलिए फॉलिकल एक ही परिवर्धन अवस्था में दिखाई पड़ते हैं। स्तनीय तथा गैरस्तनीय अण्डाशय में एक और अंतर, पीतक का पाया जाना है। स्तनीय फॉलिकलों में पीतक की मात्रा न के बराबर होती है जबकि गैरस्तनीय कशेरुकियों के फॉलिकल पीतक से भरे होते हैं (चित्र 8.3)।

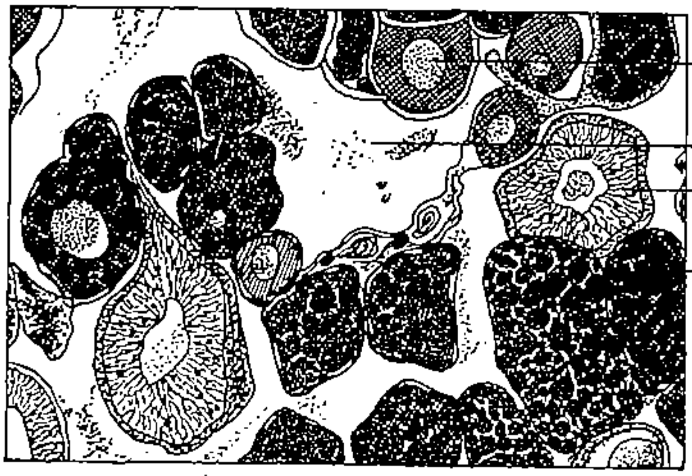

चित्र 8.3 : गैरस्तनीय अण्डाशय का आरेख।

कशेरुकियों का अण्डाशय निम्नलिखित कार्य करता है:

i) अण्डों का उत्पादन

ii) जनन के रासायनिक समन्वय के लिए आवश्यक हॉर्मोनों का संश्लेषण

iii) भ्रूण परिवर्धन की आरंभिक अवस्थाओं के लिए पोषण पदार्थ (पीतक) का बनना, और

iv) शिशुप्रज प्राणियों में गर्भ को कायम बनाए रखना, यानि बच्चों का आश्रय स्थान, उसका पोषण एवं उसका परिवर्धन आदि बनाए रखना।

अण्डों का उत्पादन

मादा युग्मक का उद्भव भ्रूण अण्डाशय के **गोनोसाइटों** (gonocytes) से होता है, इन गोनोसाइटों में तीव्र प्रगुणन होता है और फिर वे सफलतापूर्वक **अंडजननी** अर्थात् **ऊआगोनिया** (oogonia) तथा **अंडक** अर्थात् **ऊओसाइटों** (oocytes) में विभेदित हो जाते हैं। अंडकों में अर्धसूत्री विभाजन होकर एक अगुणित अण्डा बन जाता है। अंडकों का पहला अर्धसूत्री विभाजन, या तो जन्म के ठीक

पहले शुरू हो जाता है या जन्म के तुरंत बाद जो कि अलग-अलग स्पीशीज़ पर निर्भर होता है और यहीं बाद की प्रोफेज अवस्था पर रुक जाता है। मनुष्य के अण्डाशय में अंडक जन्म के समय से लेकर यौवनारम्भ के बाद अण्डोत्सर्ग होने तक उत्तर प्रोफेज अवस्था में ही रुके रहते हैं। अगुणित द्वितीयक अंडकों में दूसरा अर्धसूत्री विभाजन शुरू हो जाता है लेकिन वह मेटाफेज़ में ही बना रहता है और इनमें से दूसरा ध्रुवीय पिंड तब तक बाहर नहीं निकलता जब तक कि अंडक में शुक्राणु का प्रवेश नहीं हो जाता है। जनन कोशिका दूसरे ध्रुवी पिंड के बाहर निकल जाने के बाद ही परिपक्व अण्डाणु बनती है (चित्र 8.4)।

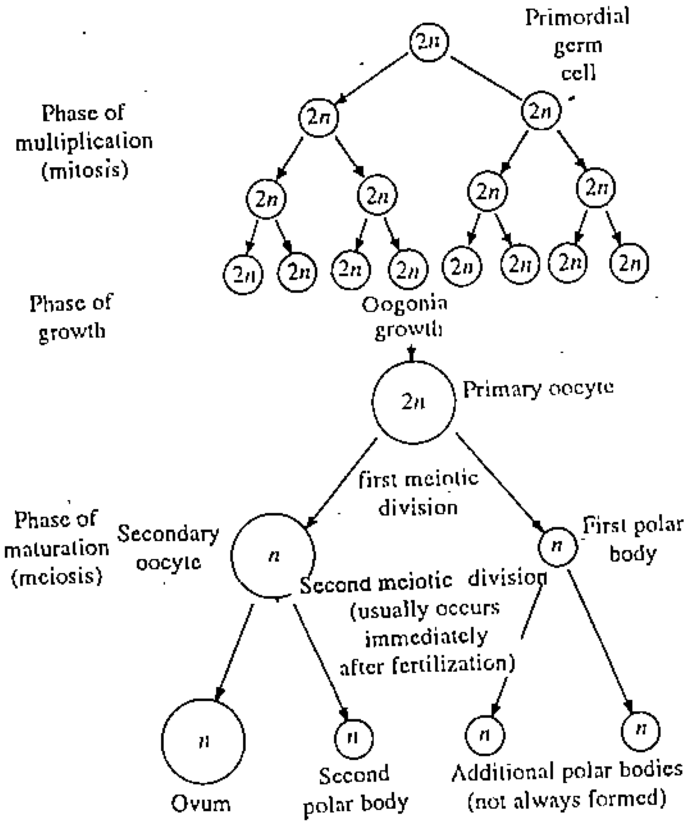

चित्र 8.4 : ऊजेनेसिस (अण्डाणुजनन) के विभिन्न चरण।

गर्भ (foetus) जीवन के उत्तरकाल में और साथ ही साथ जन्मोत्तर मादा में अण्डाशय के एपिथीलियम से कोशिकाओं के गुच्छे निकलते हैं। इनमें से प्रत्येक गुच्छे की एक कोशिका अन्य कोशिकाओं की अपेक्षा तेजी से बढ़ती जाती है, इसे अंडजननी अथवा ऊगोनियम (oogonium) कहते हैं। जबकि शेष कोशिकाएं आरंभिक फॉलिकल होती हैं। जब ऊगोनियम बढ़ जाता है और अपनी सहवर्ती कोशिकाओं से पृथक स्पष्ट हो जाता है तब उसे प्राथमिक अंडक (primary oocyte) कहते हैं। उस अवस्था में यह फॉलिकल कोशिकाओं से घिरा होता है। प्राथमिक अंडक तथा फॉलिकल कोशिकाओं के बीच एक संभाग झिल्ली बन जाती है जिसे ज़ोनापलुसिडा (zonapellucida) कहते हैं। प्राथमिक अंडक को अब **प्राथमिक फॉलिकल** कहते हैं। फॉलिकल कोशिकाओं में तेजी से वृद्धि होकर उनकी परतें बन जाती हैं जिनका **थीका** (theca) एवं **ग्रैनुलोसा** (granulosa) में विभेदन हो जाता है। पिट्यूटरी गोनेडोट्रोपिनों के प्रभाव से ग्रैनुलोसा में तरल से भरी गुहाएं बन जाती हैं, तथा फॉलिक अब ग्राफियन फॉलिकल बन जाता है, यानि एक ऐसा फॉलिकल जिसमें परिपक्व अण्डाणु होता है (देखिए चित्र 8.3)।

गोनेडोट्रोपिन वे हॉर्मोन होते हैं जो गोनडों को लिंग हॉर्मोनों के संश्लेषण एवं विमोचन के लिए उत्तेजित करते हैं। आप हॉर्मोनों की क्रिया के विषय में और अधिक अध्ययन इकाई 10 में करेंगे।

हॉर्मोनों का संश्लेषण

परिपक्व अण्डे बनाने के अतिरिक्त अण्डाशय का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य कुछ हॉर्मोनों को बनाना है—ऐसे हॉर्मोन जो जनन मार्ग तथा द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का नियमन करते हैं, जो मैथुन प्रतिक्रियाओं का दशानुकूलन करते एवं अन्य उपापचयी प्रक्रियाओं को प्रभावित करते हैं।

अण्डाशय से एस्ट्रोजन (estrogen), प्रोजेस्टोजेन (progestogen), ऐंड्रोजन (androgen) जैसे स्टेरॉइड हॉर्मोनों और रिलेक्सिन (relaxin) नामक एक गैर-स्टेरॉइड हॉर्मोन का स्रावण होता है। अधिसंख्य खोजकर्ता इस बात से सहमत हैं कि परिपक्व फॉलिकल एस्ट्रोजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। अधिकतर प्रमाणों से संकेत मिलता है कि एस्ट्रोजन का संश्लेषण या तो मेम्ब्रेना ग्रेनुलोसा में होता है या थीका इंटरना में। कॉर्पस लुटियम से एस्ट्रोजनी तथा प्रोजेस्टेशनल दोनों ही प्रकार के स्टेरॉइडों का स्रावण होता है। रिलेक्सिन तथा अण्डाशयी ऐंड्रोजनों के कोशिकीय स्रोत की जानकारी अभी तक नहीं है।

आइए अब हम इन हॉर्मोनों की संरचना एवं उनके कार्यों का अध्ययन करें।

एस्ट्रोजन वर्ग

मानव के प्रधान प्राकृतिक एस्ट्रोजन तीन हैं: एस्ट्रेडियोल-17β (estradiol-17β), एस्ट्रोन तथा एस्ट्रियोल (estriol)। एस्ट्रोजनों में 18 कार्बन परमाणु होते हैं (C-18)। स्टेरॉइड हॉर्मोन कोलेस्टेरॉल से बनते हैं। सभी सटेरॉइड-हॉर्मोनों की मूलभूत संरचना उनका स्टेरॉइड वलय साइक्लोपेंटानोपरहाइड्रोफीनेंथेरीन (cyclopentanoperhydrophenantherene) होता है जिसमें कार्बन के 17 परमाणु होते हैं (चित्र 8.5)।

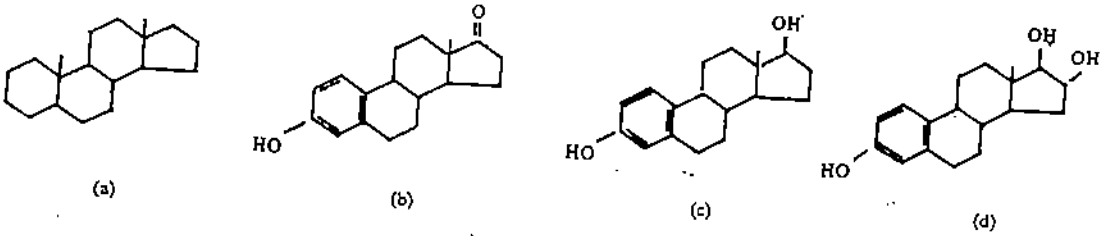

चित्र 8.5 : a) साइक्लोपेंटानोपरहाइड्रोफीनेंथेरीन, b) एस्ट्रोन, c) एस्ट्रेडायोल-17β, d) एस्ट्रियोल।

एस्ट्रोजन वर्ग के हॉर्मोन या तो सीधे ही या अन्य हॉर्मोनों के साथ मिलकर विशिष्ट लक्ष्य अंगों पर एवं कुल मिलाकर पूरे शरीर की रासायनिकी पर अत्यंत विविध प्रभाव पैदा करते हैं। आइए अब हम एस्ट्रोजनों की कुछ क्रियाओं का विवेचन करें।

i) एस्ट्रोजनों का सर्वाधिक सामान्य प्रभाव ऊतक वृद्धि को बढ़ाना है। यह प्रभाव सहायक लिंग ऊतकों पर अधिक होता है। एस्ट्रोजन त्वचा के अधिक गहरे भागों में कोशिका विभाजन को उत्तेजित करते हैं और उनके द्वारा त्वचा की बाहरी शृंगीय परतों का अधिक तीव्रता से प्रतिस्थापन कराते हैं। ऐसा प्रमाण मिला है कि एस्ट्रोजनों के उच्च स्तर का होना रोग दशाओं में एक संभावित खतरा है क्योंकि कुछ लोगों में ये कैंसर के बनने को बढ़ावा देते हैं।

ii) एस्ट्रोजन योनिमार्ग के अस्तर को बनाए रखने तथा गर्भाशय की वृद्धि के लिए आवश्यक है। देखा गया है कि जिन प्रायोगिक प्राणियों को एस्ट्रोजन रहित कर दिया जाता है उनमें योनिमार्ग का अस्तर तथा गर्भाशय की दिवार पतले हो जाते हैं और इन ऊतकों में सूत्री-विभाजन कदाचित ही हो पाता है। इन एस्ट्रोजन रहित प्राणियों में एस्ट्रोजनों के दे देने से योनि तथा गर्भाशय ऊतक में तीव्रता से वृद्धि होने लग जाती है। इन ऊतकों में उपापचयी क्रिया भी बढ़ जाती है जिसका प्रमाण दो बातों से मिलता है, एक तो इन ऊतकों द्वारा जल तथा इलेक्ट्रोलाइटों का अधिक ग्रहण किया जाना और दूसरे इन ऊतकों में RNA की मात्रा का बढ़ जाना।

iii) एस्ट्रोजनों की आवश्यकता स्तनग्रंथियों की शारीरिय तैयारी के लिए भी होती है ताकि उनसे दूध का स्राव हो सके। कुछ स्पीशीज़ में ये प्रोजेस्टेरॉन के साथ मिलकर स्तन विकास को प्रभावित

करते हैं। किंतु कुछ स्पीशीज़ में या तो अकेले एस्ट्रोजन ही या अकेला प्रोजेस्टेरॉन ही यह प्रभाव पैदा करता है। सामान्य नियम यह है कि स्तनग्रंथियों का एस्ट्रोजनों द्वारा पूर्वोपचार होना जरूरी होता है और उसके बाद ही प्रोजेस्टोजेन प्रभावकारी हो सकते हैं।

iv) स्तनधारियों में लैंगिक ग्राहिता अथवा कामोत्तेजन काल उस समय के साथ साथ ही आता है जिसके दौरान अण्डाशयों से भारी मात्राओं में एस्ट्रोजनों का स्राव होता है। पूर्ण मैथुन व्यवहार सामान्यतः एस्ट्रोजनों एवं प्रोजेस्टेरॉन दोनों पर निर्भर होता है। ये अण्डाशय-हॉर्मोन कदाचित केंद्रीय तंत्रिकातंत्र (हाइपोथैलेमस) के माध्यम से कार्य करते हुए प्राणी की मानसिक अभिव्यक्तियों को प्रभावित करते हैं जैसे कि तात्कालिक क्रिया बढ़ाना, कमर में वक्रता लाना (लार्डोसिस), लैंगिक ग्राहिता आदि को बढ़ाना।

जैवरासायनिक अध्ययनों से पता चलता है कि एस्ट्रोजनों से mRNA प्रोटीनों तथा DNA के संश्लेषण में उत्तेजना आ जाती है। ये हॉर्मोन कोशिका के भीतर प्रवेश करके एक कोशिकाद्रव्यी ग्राही प्रोटीन के साथ जुड़ जाता है। यह हॉर्मोन-ग्राही सम्मिश्र केंद्रक में प्रवेश करके अनुलेखन (transcription) एवं RNA संश्लेषण का समारंभ करता है। "LSE-01, कोशिका जैविकी" के खंड 2 में आप पहले ही स्टेरॉइड हॉर्मोनों के कार्य करने की विधि का सविस्तार अध्ययन कर चुके हैं।

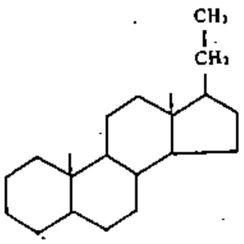

Pregnane

चित्र 8.6 : प्रेग्नेन ढांचा

प्रोजेस्टोजन वर्ग (Progestogens)

प्रोजेस्टोजन C-21 स्टेरॉइड होते हैं जिनकी मूल संरचना प्रेग्नेन (pregnane) केंद्रक की होती है (चित्र 8.6)। प्रोजेस्टेरॉन 20 α-hydroxypregn-4-en-3-one तथा 20 β-hydroxypregn-4-en-3-one स्तनियों में पाए जाने वाले दो प्राकृतिक प्रोजेस्टोजन होते हैं (चित्र 8.7)।

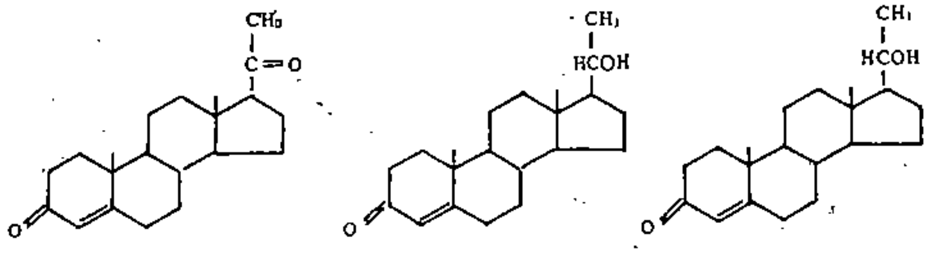

Progesterone — 20β-Hydroxypregn-4-en-3-one — 20α-Hydroxypregn-4-en-3-one

चित्र 8.7 : प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाले प्रोजेस्टोजन

ये हॉर्मोन अण्डाशय फॉलिकलों, कॉर्पोरा लुटिया, अपरा अर्थात प्लैसेंटा (placenta) तथा रक्त में पाए जाते हैं। इनके संश्लेषण के कोशिकीय स्थान हैं कॉर्पस लुटियम की ग्रेनुलोसा लुटिइन कोशिकाएं। अपरा से प्रोजेस्टेरॉन भी निकलता है। सामान्य कार्यिकीय दशाओं में प्रोजेस्टोजन प्रायः एस्ट्रोजनों के साथ सिनर्जिड (योगवाही) रूप में कार्य करते हैं। मगर साथ ही ये हॉर्मोन एक दूसरे की क्रिया का संदमन भी कर सकते हैं। इन परिस्थितियों में इन्हें परस्परविरोधी रूप में भी कार्य करने वाला माना जाता है।

गर्भाशय को ब्लास्टोसिस्ट (blastocyst) के रोपण (implantation) के लिए तैयार करने, गर्भ को बनाए रखने, और जनन चक्र में सहायक जननांगों का नियमन करने में प्रोजेस्टोजनों का विशेष महत्व है।

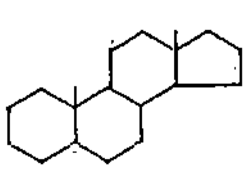

Androstane

चित्र 8.8 : ऐंड्रोस्टेन

अण्डाशयी ऐंड्रोजन (Ovarian androgens)

ऐंड्रोजन ऐसे नरलक्षणकारी यौगिक होते हैं जो सामान्य स्थितियों में मुख्यतः वृषण में ही बनते हैं। ये ऐंड्रीनल कॉर्टेक्स, अण्डाशयों तथा अपरा में से भी बनते हैं। ये ऐंड्रोस्टेन (androstane) से व्युत्पन्न C-19 यौगिक होते हैं (चित्र 8.8)। ऐंड्रोस्टेरॉन (androsterone) तथा टेस्टोस्टेरॉन (testosterone) वे दो मुख्य ऐंड्रोजन हैं जिनके विषय में आप उपभाग 8.3.2 में पढ़ेंगे। एस्ट्रोजनों के जैव संश्लेषण में टेस्टोस्टेरॉन एक मध्यवर्ती पदार्थ होता है इसलिए वह हॉर्मोन अण्डाशयों में मौजूद हो सकता है अथवा उनसे स्रावित हो सकता है। अण्डाशय ऐंड्रोजन द्वारा भी वही जैविक क्रिया होती देखी जाती है जो वृषणी ऐंड्रोजनों की होती है। रोगात्मक अण्डाशयों में से भारी मात्रा में ऐंड्रोजनों का

निकलना हो सकता है, मगर सामान्यतः अण्डाशयों से निकलने वाले ऐंड्रोजनों की मात्रा कोई खास नहीं होती।

रिलेक्सिन

यह एक जल घुलनशील हॉर्मोन है जो विभिन्न स्तनधारियों की स्पीशीज़ में गर्भावस्था के दौरान अण्डाशयों, अपराओं तथा गर्भाशयों में पाया जाता है। मानव शरीरक्रिया में इसकी भूमिका स्पष्ट नहीं है। प्रकटतः यह गर्भावस्था का एक हॉर्मोन है जो न तो पुरूषों के रक्त में पाया गया है और न ही अगर्भिणी महिलाओं में। रक्त में रिलेक्सिन का स्तर गर्भावस्था के अंतिम चरणों में उच्चतम शिखर पर पहुंच जाता है तथा प्रसव के बाद एक ही दिन के भीतर गायब हो जाता है। ऐसा विचार किया जाता है कि रिलेक्सिन द्वारा गर्भाशय-ग्रीवा (uterine cervix) तथा श्रोणि स्नायुओं (pelvic ligaments) का शिथिलन होकर प्रसव नली फैल जाती है।

पीतक का बनना

विटेलिन (vitellin) अथवा **पीतक** नामक पोषण पदार्थ का बनना गैरस्तनीय अण्डाशय का एक महत्वपूर्ण कार्य है, ताकि यह पदार्थ भ्रूण परिवर्धन की आरंभिक अवस्थाओं के लिए काम आ सकें। आप जानते हैं कि मॉनोट्रीमों (monotremes) मार्सुपियलों (marsupials) को छोड़कर शेष सभी स्तनी शिशुप्रज होते हैं। शिशुप्रज प्राणियों में भ्रूणों का परिवर्धन माता के शरीर के भीतर होता है। पोषण तथा अन्य आवश्यक पदार्थ भ्रूण को माता के रक्त परिसंचरण द्वारा उपलब्ध होते हैं। अधिसंख्य गैर-स्तनी कशेरुकी अंडप्रज प्राणी होते हैं जिनमें भ्रूण का परिवर्धन माता के शरीर के बाहर होता है। अतः उन्हें परिवर्धन के लिए तब तक पर्याप्त पोषण पदार्थ प्रदान करना होता है जब तक कि वे स्वयं आहार प्राप्त कर सकने की अवस्था तक नहीं आ जाते।

अण्डप्रज प्राणियों में पोषण पदार्थ पीतक के रूप में अण्डे के कोशिकाद्रव्य में संचित हो जाता है। विभिन्न प्रोटीन, लिपिड, ग्लाइकोजन, न्यूक्लिइक अम्ल तथा कुछ खनिज जैसे कि फ़ॉसफ़ोरस पीतक के रचक पदार्थ हैं। पीतक संश्लेषण की प्रक्रिया को **विटेलोजेनेसिस** (vitellogenesis) कहते हैं। विटेलोजेनेसिस की प्रक्रिया गोनेडोट्रॉपिनों के नियंत्रण में होती है। गोनेडोट्रॉपिन अण्डाशय में एस्ट्रोजनों के संश्लेषण तथा स्राव को प्रेरित करते हैं, और फिर ये एस्ट्रोजन आगे यकृत के भीतर एक पीतक प्रोटीन **विटेलोजेनिन** (vitellogenin) के संश्लेषण को उत्तेजित करते हैं जो रक्त धारा में स्रावित हो जाता है। विटेलोजेनिन रक्त के माध्यम से अण्डाशय में पहुंचकर अण्ड कोशिका में प्रविष्ट होता है। कोशिकाद्रव्य के भीतर यह पीतक संश्लेषण में काम आता है।

अण्डों को बनाने तथा हॉर्मोनों एवं पीतक का संश्लेषण करने के अतिरिक्त अण्डाशय की एक अतिमहत्वपूर्ण भूमिका गर्भावस्था कायम रखने में होती है।

अण्डाशय की क्रिया का नियमन

अण्डाशय एक स्वायत्त अंग नहीं है। इसकी कार्यक्षमता उन अनेक विविध बाह्य उद्दीपनों द्वारा प्रभावित होती है जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में पहुँच कर रासायनिक संदेशवाहकों के रूप में बदल जाते हैं और फिर यही संदेशवाहक सीधे अण्डाशय पर क्रिया करते हैं। गोनडों द्वारा युग्मकों तथा हॉर्मोनों के निर्माण पर कदाचित सभी अंतःस्रावी ग्रंथियों का कुछ न कुछ सामंजस्यकारी प्रभाव तो होता ही है।

अण्डाशय पर सर्वाधिक नियमनकारी क्रिया पिट्यूटरी गोनेडोट्रोपिनों की होती है, अर्थात् **फॉलिकल स्टिमुलेटिंग हॉर्मोन** (FSH) तथा **ल्यूटिनाइज़िंग हॉर्मोन** (LH) की। स्तनधारियों के अण्डाशयी फॉलिकलों की वृद्धि और उनका परिवर्धन FSH पर निर्भर होता है मगर उनके अंतिम परिपक्वन के लिये LH की आवश्यकता होती है। LH उन फॉलिकलों पर क्रिया करता है जो इससे पूर्व FSH द्वारा प्रभावित हो चुके हों और उनमें से एस्ट्रोजन के स्राव को उत्तेजित करता है। कॉर्पोरा लुटिया से प्रोजेस्टेरॉन का स्राव होता है। कॉर्पोरा लुटिया का कायम बने रहना और उनसे हॉर्मोन का निकलते रहना पिट्यूटरी के एक अन्य हॉर्मोन **प्रोलेक्टिन** (prolactin) के प्रभाव द्वारा होता है जिसे **ल्यूटियोट्रॉपिक हॉर्मोन** (luteotropic hormone) भी कहते हैं। अधिसंख्य स्तनधारियों में प्रोलेक्टिन एक ल्यूटियोट्रॉपिक हॉर्मोन नहीं होता। स्तनधारियों की कुछ स्पीशीज़ में यह वृषणों तथा अण्डाशयों का ह्रास करता है।

यदि सुसम्पूर्ण प्राणियों में एस्ट्रोजनों की भारी मात्राएं प्रविष्ट करायी जाएं तो उससे पिट्यूटरी गोनेडोट्रॉपिनों के स्राव में परिवर्तन होकर गोनडों का संदमन होता है। उस दिशा में अण्डाशयी क्रिया के नियमन में एक उलटी यानि **नेगेटिव फीडबैक क्रियाविधि** काम करती है। गोनेडोट्रॉपिनों के बढ़े हुए स्तर से अण्डाशय द्वारा एस्ट्रोजनों का संश्लेषण उत्तेजित होता है, रक्त में एस्ट्रोजनों के बढ़े हुए स्तर से गोनेडोट्रॉपिन का स्राव कम होता है और गोनेडोट्रॉपिन सांद्रता कम होने से एस्ट्रोजन संश्लेषण का तथा उससे संबंधित क्रियाकलापों का संदमन होता है (चित्र 8.9)।

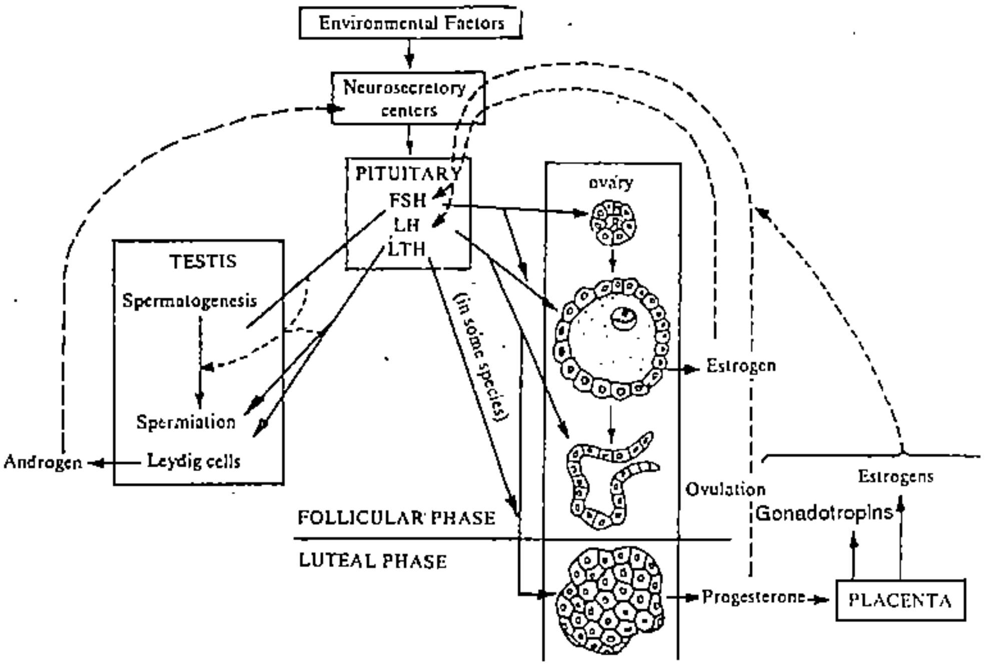

चित्र 8.9 : अण्डाशयी तथा वृषण क्रिया का नियमन।

बोध प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए और अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

क) शुक्राणु बनाने वाले गोनडों को .... तथा अण्डे बनाने वाले गोनडों को .... कहते हैं।

ख) .... सममित प्राणियों में गोनड जोड़ों में होते हैं। मादा .... में दो में से एक अण्डाशय परवर्ती रूप में अपघटित हो गया होता है।

ग) स्तनधारियों में परिपक्व अण्डाशय फॉलिकल को .... कहते हैं।

घ) अण्डोत्सर्ग के समय अण्डे के बाहर निकल जाने के बाद फॉलिकल विघटित होकर .... बन जाता है।

ङ) अपघटित होते हुए अण्डाशय फॉलिकलों को .... कहते हैं।

च) अण्डाशय के सबसे प्रारंभिक कोशिका को .... कहते हैं।

छ) मानव के प्रमुख प्राकृतिक एस्ट्रोजन (i) .... (ii) .... तथा (iii) .... होते हैं।

ज) स्तनधारियों में प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाले प्रोजेस्टोजन (i) ....

(ii) .... तथा (iii) ....

होते हैं।

झ) पीतक संश्लेषण की प्रक्रिया को .... कहते हैं।

8.3.2 वृषण

आप जानते ही हैं कि नर के गोनड को **वृषण** कहते हैं। मानव तथा अन्य स्तनधारियों में वृषण एक त्वचीय कोष्ठ में स्थित होते हैं जिसे वृषण कोश (scrotum) कहते हैं। यह व्यवस्था एक ऐसा अनुकूलन है जिसके द्वारा वृषणों का भीतरी तापमान नियंत्रित बना रहता है। इसके विपरीत गैर-स्तनी कशेरुकियों में वृषण देह गुहा यानि पेरिटोनियम के भीतर होते हैं।

स्तनधारियी वृषण क्रमवत लम्बे फॉलिकलों का बना होता है। इन फॉलिकलों को **शुक्रधर नलिकाएं** (seminiferous tubules) कहते हैं। इन नलिकाओं का अस्तर एक एपिथीलियम का बना होता है जिससे शुक्राणु बनकर निकलते रहते हैं। शुक्रधर नलिकाओं के बीच का स्थान रक्त वाहिकाओं, संयोजी ऊतक तथा **लीडिंग की अंतराली कोशिकाओं** (interstitial cells of Leydig) से भरा रहता है। शुक्रधर नलिका में एक सीमाकारी पतली आधारीय झिल्ली होती है। वयस्क वृषण में नलिका के किसी भी स्तर पर लिए गए एक अनुप्रस्थ काट में प्रायः शुक्राणुजनन की लगभग सभी अवस्थाएं पायी जाती हैं (चित्र 8.10)।

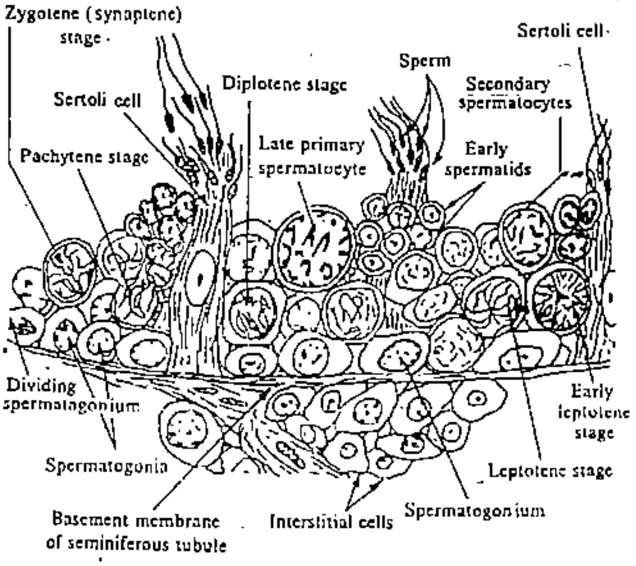

चित्र 8.10 : स्तनीय वृषण का आरेख।

स्पर्मेटोगोनिया (spermatogonia) सबसे अधिक अल्पायु (नई नई बनी) जनन कोशिकाएं होती हैं जिनमें से शुक्राणुओं का प्रचुरोद्भवन होता रहता है। ये आधारीय झिल्ली के तुरंत भीतर की ओर स्थित होती हैं और उनमें क्रमिक सूत्री विभाजन होकर प्राथमिक **स्पर्मेटोसाइट** (primary spermatocytes) बन जाते हैं। प्राथमिक स्पर्मेटोसाइट में प्रथम अर्धसूत्री विभाजन होकर अगुणित कोशिकाएं बनती हैं जिन्हें **द्वितीयक स्पर्मेटोसाइट** (secondary spermatocytes) कहते हैं। द्वितीयक स्पर्मेटोसाइटों में दूसरा अर्धसूत्री विभाजन शुरू होता है और अधिक छोटी कोशिकाएं बन जाती हैं जिन्हें **स्पर्मेटिड** (spermatid) कहते हैं। ये स्पर्मेटिड आगे चल कर **शुक्रजनन अर्थात् स्पर्माटोजेनेसिस** (spermatogenesis) नामक प्रक्रिया के द्वारा शुक्राणुओं में रूपांतरित हो जाते हैं। स्पर्मेटिडों से शुक्राणुओं में रूपांतरण होने में दो बातें आती हैं—एक तो मुख्यतः कोशिकाद्रव्य की हानि हो जाना और दूसरे एक पूंछ का विभेदित हो जाना (चित्र 8.11)।

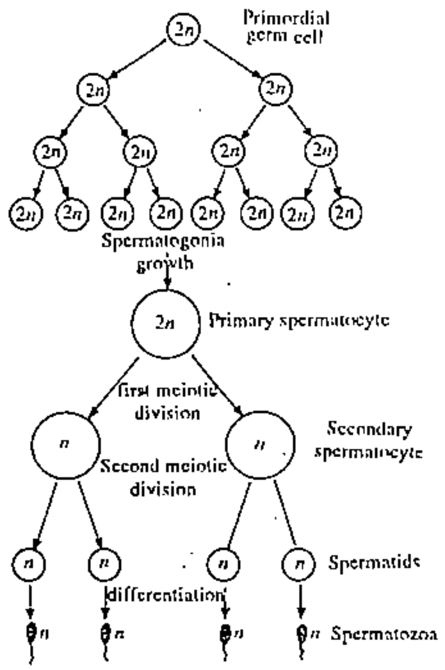

चित्र 8.11 : स्पर्मेटोजेनेसिस के विभिन्न चरण।

शुक्रधर नलिका के अनुप्रस्थ काट में आप देखेंगे कि स्पर्मेटोगोनिया नलिकाओं की आधारीय झिल्ली के तुरंत भीतर स्थित होते हैं तथा क्रमिक परिपक्वनशील अवस्थाएं, अर्थात स्पर्मेटोगोनिया से लेकर शुक्राणुओं स्पर्मेटाजोआ तक, नलिका की अवकाशिका की ओर स्थित होते हैं जहां पर परिपक्व शुक्राणु छूटते या निकलते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि मानव में एक स्पर्मेटोगोनियम से कार्यात्मक शुक्राणुओं के बनने में 74 दिन का समय लगता है। स्तनधारियों की विशिष्ट स्पीशीज़ एवं नस्लों में जनन कोशिका के बनने की दर स्थिर होती है और यह दर हॉर्मोनों द्वारा तीव्र नहीं की जा सकती। कोशिकाविज्ञानीय प्रेक्षणों से संकेत मिलता है कि जनन कोशिकाओं को अपने विभेदन के दौरान आगे आगे बढ़ते जाना चाहिए, और यदि प्रतिकूल पर्यावरण के कारण उनमें सामान्य दर पर विभेदन होते रहना असंभव हो जाता है तब वे अपघटित होकर इस तंत्र से समाप्त हो जाती हैं। यह ठीक है कि जनन कोशिकाओं के विभेदन को हॉर्मोन तीव्र नहीं करते, मगर उनमें रूपांतरण होकर शुक्राणु बनने के लिये अनुकूल पर्यावरण के बनाने में वे अवश्य ही योगदान देते हैं।

शुक्रधर नलिकाओं में एक और प्रकार की कोशिकाएं पायी जाती हैं जिन्हें **सर्टोली कोशिकाएं** (sertoli cells) कहते हैं। ये अपेक्षाकृत दीर्घ कोशिकाएं होती हैं। आधारीय झिल्ली से लेकर अवकाशिका की ओर तक फैली होती हैं। इन्हें आलम्ब्री कोशिकाएं माना जाता है जो कदाचित स्पर्मेटिडो को पोषण प्रदान करती है। कुछ स्पीशीज़ में शुक्राणुओं के शीर्ष अपेक्षाकृत लम्बे समय तक सर्टोली कोशिकाओं में गड़े रहते हैं। सर्टोली कोशिकाओं में से शुक्राणुओं के मुक्त हो जाने को **स्पर्मिएशन** (spermiation) अथवा **शुक्रोत्सर्ग** कहते हैं जो मादा प्राणी में **अण्डोत्सर्ग** अथवा **ओव्यूलेशन** (ovulation) के समानरूप है (चित्र 8.12)।

गैर स्तनीय कशेरुकियों के वृषण में भी नलिकाएं बनी होती हैं। इन नलिकाओं के भीतर कोशिकाओं की कोटरिकाएं पाई जाती हैं जिनमें शुक्राणुजनन असमकालिक होता है। कोशिकाओं की प्रत्येक कोटरिका को **सिस्ट** (cyst) अथवा पुटी कहते हैं जिसके भीतर विभेदन की एक ही अवस्था की कोशिकाएं पायी जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक ही नलिका में स्पर्मेटोगोनिया की, प्राथमिक स्पर्मेटोसाइटों की, द्वितीयक स्पर्मेसोइटों की, स्पर्मेटिडों की तथा शुक्राणुओं की सिस्टें हो सकती हैं। प्रजनन ऋतु में वृषण के लोब्यूलों (lobules) अर्थात पालियों में शुक्राणुओं की सिस्टें सर्वाधिक संख्या में होती हैं और साथ ही शुक्राणु नलिका की अवकाशिका में मुक्त स्पर्मेटोजोआ भी। गैर-प्रजनन ऋतु में स्पर्मेटोगोनिया तथा स्पर्मेसाइटों की सिस्टों की संख्या ज्यादा होती है। आप इसी भाग में पहले पढ़ चुके हैं कि स्तनधारी

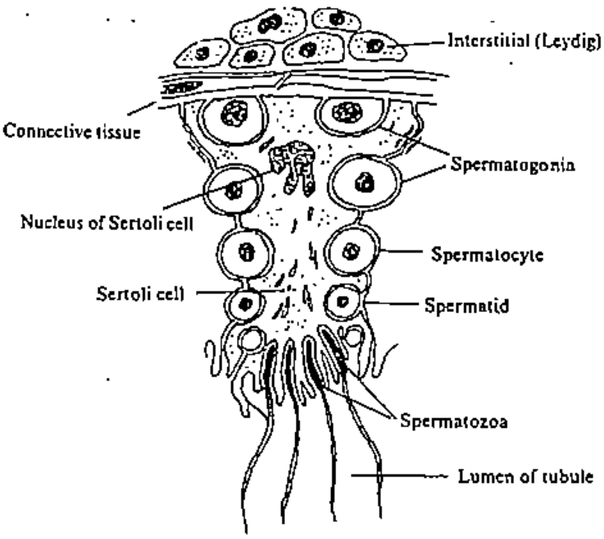

चित्र 8.12 : एक स्तनीय शुक्रधर नलिका का आरेखीय सेक्शन जिसमें सर्टोली कोशिका तथा विभेदनशील जनन-कोशिकाओं की गतिशील समष्टि दिखायी गयी है।

के वृषण में शुक्रधर नलिकाओं के बीच-बीच की जगह में लीडिंग कोशिकाएं भरी रहती हैं। गैर-स्तनीय कशेरुकियों के वृषण में नलिकाओं के बीच-बीच की जगहों में लोब्यूल सीमा कोशिकाएं (lobule boundary cells) भरी होती हैं। ये कोशिकाएं लीडिंग कोशिकाओं के समजात होती हैं और प्रकटतः इनका भी वही अंतःस्रावी कार्य है। इस कार्य का उल्लेख इसी भाग में आगे चलकर किया जाएगा (चित्र 8.13)।

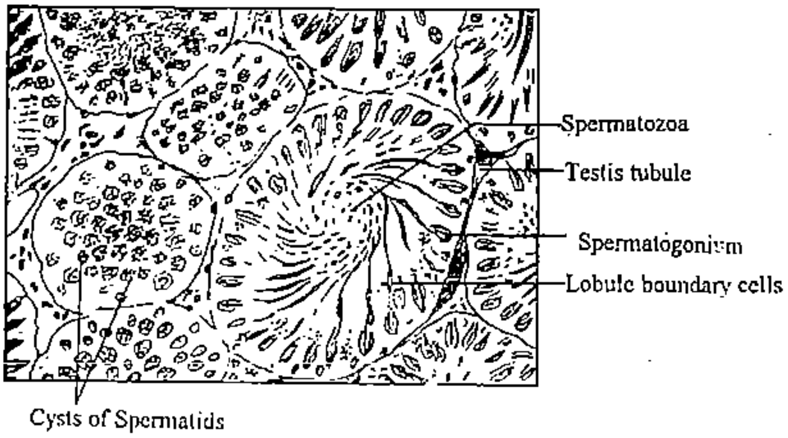

चित्र 8.13 : गैर-स्तनीय वृषण का आरेखीय सेक्शन।

वृषण निम्न दो कार्य करता है:

i) शुक्राणुओं का प्रचुरोद्भवन

ii) स्टेरॉइड हॉर्मोनों को स्रावित करना।

वृषण द्वारा शुक्राणु उत्पाद के विषय में आप पहले ही पढ़ चुके हैं। अब हम उन हॉर्मोनों के बारे में सीखेंगे जिनका संश्लेषण वृषण के द्वारा होता है।

हॉर्मोनों का संश्लेषण

वृषण में स्टेरॉइड हॉर्मोनों के संश्लेषण होने के कोशिकीय स्थल लीडिंग कोशिकाएं तथा सर्टोली कोशिकाएं होती हैं। लीडिंग कोशिकाएं इन हॉर्मोनों की प्रमुख स्रोत हैं। **टेस्टोस्टेरॉन** तथा **एंड्रोस्टेनेडियोन** (androstenedione) वृषण से निकलने वाले मुख्य परिसंचरणी एंड्रोजन हैं (चित्र 8.14)।

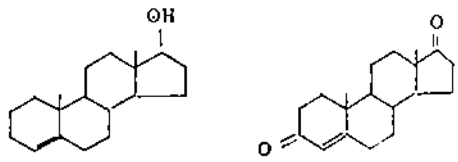

चित्र 8.14 : क) टैस्टोस्टेरॉन ख) एंड्रोस्टेनेडियोन

टेस्टोस्टेरोन के सामान्य उपापचयी पदार्थ (मेटाबोलाइट) हैं — **एपिटेस्टोस्टेरोन** (epitestosterone), एंड्रोस्टेनेडियोन, इटियोकोलेनोलोन (etiocholanolone) तथा ऐंड्रोस्टेरोन। ऐंड्रोजनों के कार्य की क्रियाविधि वैसी ही है जैसी कि अन्य स्टेरॉइड-हॉर्मोनों की।

ऐंड्रोजन दो बातों के लिए अनिवार्य हैं — एक तो नर के **द्वितीयक लैंगिक लक्षणों** (secondary sex characters) के नियंत्रण के लिये और दूसरे सहायक जनन ग्रंथियों एवं वाहिनियों की कार्यात्मक क्षमता के लिये। इन स्टेरॉइडों की अधिक सुव्यक्त उपापचयी क्रिया प्रोटीन का उपचय (anabolism) है। ऐंड्रोजन रक्त की गैर प्रोटीन नाइट्रोजन को बढ़ाये बिना मूत्र द्वारा नाइट्रोजन की हानि को कम कर देता है, और देह के वजन में कम से कम अस्थाई वृद्धि तो कर ही देते हैं। ऐंड्रोजन हड्डी के प्रोटीन मेट्रिक्स को बढ़ा देते हैं, इसलिए इन्हें कुछ खास कंकालीय दोषों के चिकित्सा उपचार में इस्तेमाल किया गया है। ये पेशी वृद्धि में भी सहायक हैं।

मानव में ऐंड्रोजन कई कार्यों में योगदान देते हैं—शरीर के बालों की व्यवस्था का नियंत्रण, स्वर में बदलाव, कंकालीय आकृति तथा सिबेशस अर्थात वसा ग्रंथियों की क्रिया का नियमन। ऐंड्रोजन वृषण-नलिकाओं के जनन-एपिथीलियम को भी प्रभावित करते हैं और इस प्रकार शुक्राणुओं का निर्माण भी प्रभावित होता है। लीडिग कोशिकाओं में बनने वाला टेस्टोस्टेरॉन नलिकाओं में विसरित होकर जनन कोशिका विभेदन के लिये एक प्रमुख उद्दीपन प्रदान करता है।

नर वाहिकाओं तथा ग्रंथियों का सहायक तंत्र, जिसके विषय में आप उपभाग 8.3.3 में पढ़ेंगे, आकारिकीय तथा शरीरक्रियात्मक दृष्टि से ऐंड्रोजनों के बनने पर निर्भर होता है। प्रयोगों में ऐंड्रोजनों से वंचित वयस्क प्राणियों में ये अंग अंतर्वलित (involuted) हो जाते हैं और वे लगभग अल्पवयस्क (बालावस्था) जैसी संरचना में फिर से लौट जाते हैं। ऐंड्रोजनों के प्रदान कराने पर इन प्राणियों में फिर से सामान्य व्यवस्था प्राप्त हो जाती है।

वृषण क्रिया का नियमन

शुक्राणुओं का बनना एक तो पिट्यूटरी हॉर्मोनों के प्रभाव में होता है और दूसरे वृषण से ही व्युत्पन्न एंड्रोजनों के प्रभाव में। पिट्यूटरी हॉर्मोनों से वंचित प्रायोगिक-प्राणियों में वृषण ऊतक अंतर्वलित हो जाता है। स्पर्मेटोगोनियम से शुक्राणुओं की दिशा में होने वाले विभेदन के लिये FSH की आवश्यकता होती है और ऐंड्रोजनों के उत्पादन के लिये लीडिंग कोशिकाओं को उत्तेजित करने के लिए LH की आवश्यकता होती है (नरों में LH को interstitial cells stimulating hormone अथवा संक्षेप में ICSH भी कहते हैं)। रक्त में एंड्रोजनों के बढ़ते हुए स्तरों से पिट्यूटरी में गोनेडोट्रोपिनों के संश्लेषण तथा उनके स्राव का दमन होता है (चित्र 8.9 देखिये)।

आप पहले पढ़ चुके हैं कि स्पर्मेटोगोनिया से शुक्राणुओं तक के विभेदन होने में जो समय चाहिए वह एक जैविकीय स्थिरांक है, यह समय अलग अलग स्पीशीज़ तथा प्रभेद (strain) के लिए अलग अलग होता है और यह न तो हॉर्मोनों से बदला जा सकता है और न ही अन्य कारकों से। इसके विपरीत, शुक्राणुओं की जो संख्या बनती है वह पिट्यूटरी गोनैडोट्रोपिनों, ऐंड्रोजनों, पोषण संबंधी कारकों, तापमान, प्रकाश आदि पर निर्भर होती है।

बोध प्रश्न 3

निम्न कार्यों को दो वाक्यों में समझाइए

क) वृषण कोश ....

....

....

ख) लीडिग की अंतराली कोशिकाएं ....

....

....

ग) सर्टोली कोशिकाएं ....

....

....

घ) ऐंड्रोजेन वर्ग ....

....

....

8.3.3 सहायक जननांग

सहायक जननांगों के अंतर्गत वे सभी वाहिनियां तथा ग्रंथियां आती हैं जो युग्मकों के संचय एवं उनके स्थानांतरण के लिए विशेषित हो गयी हैं। इन अंगों का कार्यात्मक स्तर कब कैसा होगा, इसका नियंत्रण संबिद्ध गोनड-हॉर्मोनों द्वारा होता है। पाठ्यक्रम 'LSE-10, प्राणी विविधता II' में आप इन अंगों की संरचना का तुलनात्मक विवरण पढ़ेंगे। इस भाग में हम नर-मादा दोनों में अलग अलग अंगों की कार्यात्मक संरचना का अध्ययन करेंगे।

मादा सहायक लैंगिक अंग

मादा सहायक लैंगिक अंग (female accessory sex-organs) हैं—अण्डवाहिनियां अथवा फेलोपियन नलिकाएं (fallopian tubules) जैसी कि वे मानवों में प्रायः कही जाती हैं, गर्भाशय, योनि (vagina) तथा बाह्य जननेंद्रियां (external genitalia)।

स्तनधारियों में अण्डवाहिनियों का कार्य अण्डाशय तथा गर्भाशय के बीच एक गमन मार्ग का प्रदान करना है। इस नली का अण्डाशय की ओर का सिरा फैलकर एक कीप बन जाता है जिसका गोल किनारा झालरदार होता है। इस नलिका का अस्तर बनाने वाली कोशिकाओं में कशाभ बने होते हैं जो भीतर की ओर को विस्पंदन करते हैं। कशाभ का विस्पंदन तथा अण्डोत्सर्ग के समय फ्रिम्ब्रिया (झालर) की बढ़ी क्रियाशीलता, ये दोनों बातें अण्डाणु को गर्भाशय की ओर चलाने में सहायता करती हैं। निषेचन प्रतिरूपतः अण्डवाहिनियों में संपन्न होता है। मनुष्य में निषेचन की क्रिया प्रायः अण्डाशय से अण्डे के निकलने के 24 घंटों के भीतर हो जाती है।

प्राइमेट प्राणियों का गर्भाशय एक नाशपाती नूमा पेशीय अंग होता है। गर्भाशय की दीवार दो स्तरों की बनी होती है, एक अरेखित पेशी कोशिकाओं की मोटी संहति जिसे **मायोमेट्रियम** (myometrium) कहते हैं और दूसरा ग्रंथीय अस्तर जिसे **एंडोमेट्रियम** (endometrium) कहते हैं। गर्भाशय के पिछले संकीर्ण सिरे को ग्रीवा अथवा सर्विक्स (cervix) कहते हैं। गर्भावस्था के दौरान गर्भाशय की दीवार बहुत रूपांतरित हो जाती है ताकि ब्लास्टोसिस्ट का रोपण एवं उसका आगे का परिवर्धन सुगमता से हो सके।

मानव योनि एक अयुग्मित और गर्भाशय के पश्चीय सिरे से लेकर वेस्टिब्यूटल तक फैली लगभग 4 इंच लम्बी एक विस्तारित नली होती है। योनि का अस्तर स्तरित शल्कीय (squamous) ऐपिथीलियम का बना होता है जिसमें ग्रंथियां नहीं होतीं। इसमें पेशियों की एक बहुत ही पतली परत होती है। शुक्राणुओं के जीवित बने रहने के लिए योनि के भीतर उपयुक्त पर्यावरण नहीं होता। मनुष्यों में ये

शुक्राणु योनि में कुछ ही घंटों में मर जाते हैं, लेकिन गर्भाशय तथा फ़ैलोपियन नलिकाओं में ये दो या तीन दिन तक जीवनक्षम बने रहते हैं।

मादा की बाह्य जननेंद्रिय में निम्न रचनाएं आती हैं। भगशेफ (clitoris), बृहद्भगोष्ठ (labia majora), तथा लघुभगोष्ठ (labia minora) (चित्र 8.15)। भगशेफ एक उच्छ्रायी (erectile) अंग है जो शिश्न का समजात है।

सरीसृपों तथा पक्षियों में अण्डे अण्डवाहिनी में से गुज़रते समय अण्डवाहिनी से जल, ऐल्बुमिनी आवरण (अण्डे की सफेदी) [illegible] झिल्लियां तथा कवच प्राप्त करते हैं। पक्षियों में केवल बायीं अण्डवाहिनी ही कार्य[illegible] वृद्धि कर पाती है, दाहिनी अण्डवाहिनी या तो पूरी तरह लुप्त हो गयी होती है या एक अल्पवर्धित भाग की तरह बनी रहती है (चित्र 8.15)।

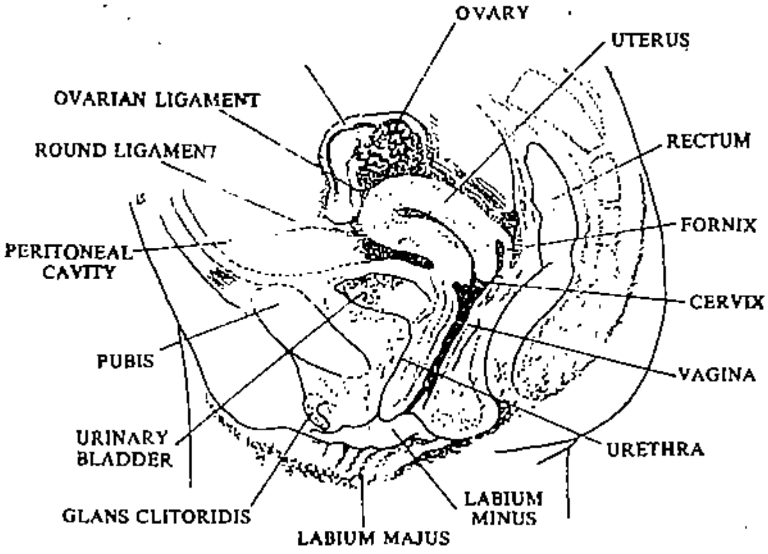

चित्र 8.15 : मादा श्रोणी का आरेखीय भाग जिसमें जननांग दिखाए गए हैं।

नर सहायक लैंगिक अंग

नर की सहायक वाहिनियां तथा ग्रंथियां इस प्रकार विशेषीकृत हो गयी हैं कि इनके द्वारा एक तो शुक्राणुओं का संचय हो सके तथा दूसरे सही समय पर शुक्राणुओं को एक उचित प्रवाह माध्यम में शरीर के बाहर को निकाला जा सके। पुरूषों में बहुसंख्यक **अपवाही वाहिनिकाएं अथवा डक्टुलाइ एफेरेंटीज़** (ductuli efferentes), युग्मित **ऐपिडीडाइमस** (epididymis), **शुक्रवाहक** (vasa deferentia), **शुक्राशय** (seminal vesicles), **स्खलनीय वाहिनियां** (ejaculatory ducts), **काउपर ग्रंथियां** (Cowper's glands) होते हैं तथा एक प्रोस्टेट ग्रंथि (prostate glands), एक **मूत्रमार्ग** (urethra) तथा एक मैथुनी अंग शिश्न (penis) होता है।

ऐपिडीडाइमस एक अत्यधिक संवलित नलिका होती है। इसे यदि सीधा कर लिया जाए तो यह लगभग 20 फुट लम्बी होती है। वृषण अवकाशिका से आए शुक्राणु इसी भाग में भंडारित रहते हैं। इस अंग में कुछ काल तक रहने पर शुक्राणुओं की गतिशीलता की तथा निषेचन की क्षमताएं बढ़ जाती हैं। शुक्रवाहक एपिडिडिमिस के अंतिम सिरे से प्रारंभ होता है। इसमें शुक्राशयों से आने वाली एक वाहिनी मिल जाती है और तब यह स्खलनीय वाहिनी कहलाते हैं। यह प्रोस्टेट ग्रंथि में से भी होकर गुजरती है और फिर मूत्रमार्ग में प्रविष्ट हो जाती है। शुक्रवाहक में सुविकसित पेशी परतें होती हैं और मुख्यतः इन्हीं के द्वारा शुक्राणु इस मार्ग में से आगे को चलते जाते हैं। शुक्राणुओं का संग्रह शुक्रवाहक के समीपस्थ सिरे पर भी होता है।

जब तक शुक्राणु एपिडिडिमिस में तथा शुक्रवाहक के समीपस्थ भाग जैसी संचयी संरचनाओं में होते हैं तब तक वे अगतिशील बने रहते हैं मगर जैसे ही उनमें सहायक ग्रंथियों के स्राव आकर मिलते हैं वैसे ही वे गतिशील हो जाते हैं। सहायक ग्रंथियों से निकलने वाला वीर्य-तरल (seminal fluid) एक तो शुक्राणुओं के वहन के लिये एक माध्यम प्रदान करता है और दूसरे कदाचित एक ऐसा पर्यावरण

भी उपलब्ध कराता है जिसमें वे अपनी अधिकतम निषेचन क्षमता प्राप्त कर सकते हैं। जिन सहायक लैंगिक अंगों का ऊपर उल्लेख किया गया है उन सबका पूर्ण कार्यात्मक विकास एंड्रोजनों पर निर्भर होता है और जब तक यौवनारम्भ शुरू नहीं होने लगता तब तक वे पूर्ण निष्क्रिय बने रहते हैं (चित्र 8.16)।

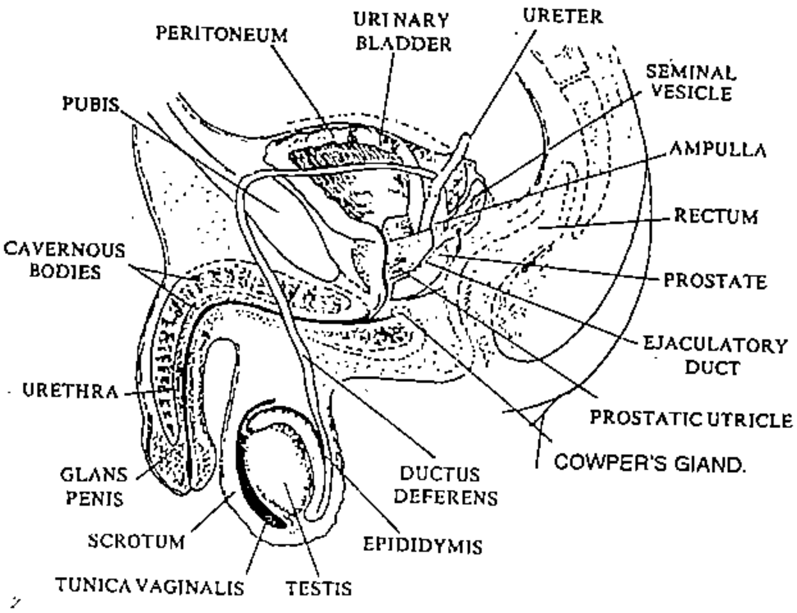

चित्र 8.16 : नर श्रोणी का आरेखीय भाग जिसमें जननांग दिखाए गए हैं।

बोध प्रश्न 4

नीचे सूची में दिए गए अंगों को अलग अलग बताइए कि वे नर जनन तंत्र में आते हैं अथवा मादा जनन तंत्र में। नर के लिए M लिखिए तथा मादा के लिए F

i) फैलोपियन नलिका	( )	ii) एंडोमेट्रियम	( )
iii) सर्विक्स (ग्रीवा)	( )	iv) बृहद्भगोष्ठ	( )
v) एपिडिडिमिस	( )	vi) शुक्राशय	( )
vii) काऊपर ग्रंथि	( )	viii) प्रोस्टेट ग्रंथि	( )
ix) शुक्रवाहक	( )		

8.4 जनन चक्र

इससे पहले के भाग में आपने जननांगों की संरचना तथा उनके कार्यों के विषय में पढ़ा। अब इस भाग में हम जनन क्रियाओं के विषय में पढ़ेंगे।

युग्मकों का बनना एक सतत जारी रहने वाली परिघटना नहीं है। यह बार बार होने वाली एक चक्रीय परिघटना है। अधिकांश प्राणियों में युग्मकों का परिपक्वन उन ऋतुओं के दौरान होता है जो उनके शिशुओं के परिवर्धन एवं वृद्धि के लिए सर्वाधिक अनुकूल होते हैं।

युग्मक परिपक्वन की बारंबारता और उसके बाद होने वाली प्रजनन क्रिया के आधार पर प्राणियों को वार्षिक प्रजनक, द्विवार्षिक प्रजनक, आदि कहा जाता है। अधिकांश गैर-स्तनीय कशेरुकियों में वार्षिक जनन चक्र होता है। ऐसे प्राणियों के गोनड वर्ष में एक बार परिपक्व होते हैं और इसीलिए उनमें वर्ष में एक बार जनन होता है। अध्ययनों से पता चला है कि केवल अण्डाशय में ही युग्मकों का विभेदन एक के बाद एक प्रावस्थाओं में होता है, जबकि वृषणों में शुक्राणुजनन की क्रिया सतत होती रहती है।

गैर-स्तनीय कशेरुकियों में अण्डाशय चक्र (ovarian cycle) में तीन प्रावस्थाएं आती है: (i) **प्रजननपूर्व प्रावस्था** (prebreeding phase) (ii) **प्रजनन प्रावस्था** (breeding phase) तथा (iii) **प्रजननपश्चीय प्रावस्था** (postbreeding phase)।

प्रजननपूर्व प्रावस्था में अण्डाशयी फॉलिकलों में वृद्धि एवं विभेदन होता है। फॉलिकलों में पीतक एकत्रित होती है तथा इस प्रावस्था के अंत में फॉलिकल अण्डोत्सर्ग तथा निषेचन के लिये तैयार हो जाते हैं।

प्रजनन प्रावस्था वह है जिसमें अण्डोत्सर्ग, मैथुन तथा निषेचन होता है। इस प्रावस्था के बाद प्रजननपश्चीय प्रावस्था आती है जिसमें अण्डाशय के भीतर तीन प्रकार के फॉलिकल होते हैं— (i) काम आ चुके फॉलिकल अर्थात् **अण्डोत्सर्गपश्चीय फॉलिकल** (postovulatory follicles) यानि वे फॉलिकल जिनमें से अण्डोत्सर्ग के दौरान अण्डा बाहर को निकल गया होता है, (ii) कुछ ऐसे फॉलिकल जिनमें से अण्डोत्सर्ग नहीं हो पाया तथा (iii) ऐट्रेटिक अर्थात् जीर्ण फॉलिकल। अण्डोत्सर्गपश्चीय एवं एट्रेटिक फॉलिकलों का अपह्रासन तथा विघटन भी प्रजननपश्चीय प्रावस्था में ही होता है। कुछ प्राणियों में एक **विश्रामी प्रावस्था** (resting phase) होती है जिसके दौरान युग्मकजनन की क्रिया होती है। वे सभी जनन कोशिकाएं कुछ समय तक शांत रहती हैं और उसके बाद ही वे फॉलिकुलर अथवा प्रजननपूर्व प्रावस्था में प्रविष्ट होती हैं। नर प्राणियों में वृषण क्रिया एक सतत प्रक्रिया है। शुक्राणुजनन वर्षपर्यन्त चलता रहता है किंतु **स्पर्मिएशन** (शुक्राणुओं का विमुक्त होना) मादाओं की अण्डोत्सर्ग प्रावस्था के समान हैं।

जनन चक्रों का नियमन पिट्यूटरी तथा गोनडों से निकलने वाले हॉर्मोनों द्वारा होता है। गोनडों की क्रिया पर अंतःजनित क्रियाविधियों के प्रभाव के साथ साथ बाह्य उद्दीपनों का भी प्रभाव पड़ता है।

इस भाग के पहले अनुच्छेद में आप गैर-स्तनीय कशेरुकियों के जनन चक्रों के विषय में पढ़ चुके हैं। आइए, अब हम स्तनधारियों के विषय में अध्ययन करें।

स्तनधारियों में दो प्रकार के अण्डाशयी चक्र होते हैं:

i) ईस्ट्रस चक्र (estrous cycle) : अर्थात् **मद** चक्र जो कि गैर प्राइमेटों में पाया जाता है जैसे कि चूहों, बिल्लियों, कुत्तों, सुअरों में और

ii) मेन्स्ट्रुअल चक्र (menstrual cycle) : अर्थात् **रजोचक्र** जो प्राइमेटों में होता है जैसे कि बंदरों, चिम्पैन्ज़ियों एवं मानव में।

तो आइए ईस्ट्रस (मद) चक्र का चूहे में और रजोचक्र का मानव में अध्ययन करें।

मद चक्र

चूहे में मद चक्र चार से पांच दिन में पूरा हो जाता है, हालांकि यह चक्र कुछ बाह्य कारकों द्वारा प्रभावित भी हो सकता है जैसे कि प्रकाश, तापमान, पोषण स्थिति, और सामाजिक या सामूहिक संबंधों द्वारा। ऐसे छोटे चक्रों वाली स्पीशीज़ में अण्डाशयों में फॉलिकल अपनी विविध निर्माण अवस्थाओं में पाए जाते हैं और साथ ही उनमें विगत मद चक्रों के कॉर्पोरा लुटिया भी होते हैं। इस चक्र को मोटे तौर पर चार चरणों में विभाजित किया जा सकता है।

i) **मद:** यह कामोत्तेजन का समय होता है, और मैथुन इसी काल में होने दिया जाता है। यह दशा 9 से 10 घंटे तक चलती है और इस दौरान प्राणी अधिक तीव्रता से दौड़ता-भागता है। FSH के प्रभाव से एक दर्जन या उससे भी ज्यादा फॉलिकल तेजी से वृद्धि करते हैं, इस प्रकार मद अधिक एस्ट्रोजन स्राव का काल होता है। व्यवहारिक परिवर्तनों में दो बातें खास हैं, एक तो कानों का कम्पित होना और दूसरे लारडोसिस (lardosis) का होना (जिसमें हाथ से छूने, अथवा नर के संपर्क में आने पर कमर में वक्रता आ जाती है)। गर्भाशयों में उत्तरोत्तर प्रसार होता जाता है तथा भीतर एक अवकाशिकीय तरल के भर जाने से वे फूल जाते हैं। योनि के एपिथीलियम में अनेक सूत्री विभाजन होते हैं और जैसे जैसे नयी कोशिकाएं इकट्ठी होती जाती हैं वैसे वैसे सतही परतें शल्कीय एवं शृंगीय होती जाती हैं। ये शल्कीय कोशिकाएं झड़ कर योनि अवकाशिका में आ जाती हैं तथा योनि आलेप (vaginal smear) में इनकी उपस्थिति से मद का संकेत मिल जाता है (चित्र 8.17)। मद की उत्तर अवस्था में योनि अवकाशिका में विघटित केंद्रकों से युक्त शृंगीय कोशिकाओं की सफेद सी संहतियां पड़ी होती हैं लेकिन मद के दौरान इन संहतियों में शायद ही कोई श्वेत रक्त कोशिकाएं मौजूद हों। अण्डोत्सर्ग मद के ही दौरान होता

है, और ऐसा होना आरंभिक ल्यूटिनाइजेशन का संकेत होता है। अण्डोत्सर्ग के पहले गर्भाशयों का अवकाशिका तरल समाप्त हो जाता है।

ii) **मदह्रास** (metestrus) : यह अण्डोत्सर्ग के बाद में शीघ्र ही होता है तथा यह दशा मद एवं मदशांति (diestrus) के बीच की दशा है। यह काल 10 से 14 घंटे चलता है और इसके दौरान प्रायः मैथुन नहीं होने दिया जाता । अण्डाशयों में कॉर्पोरा लुटिया तथा छोटे फॉलिकल होते हैं और गर्भाशयों में रक्तवाहकता एवं संकुचनशीलता घट गयी होती है। योनि अवकाशिकाओं में अनेक श्वेत रक्त कोशिकाएं और उनके साथ साथ कुछ शृंगीय कोशिकाएं प्रकट हो जाती हैं (चित्र 8.17)।

iii) **मदशांति** (diestrus) : यह 60 से 70 घंटे तक चलता है जिसके दौरान कॉर्पोरा लुटिया का कार्यात्मक ह्रास हो जाता है। गर्भाशय छोटे, अल्परक्तता से युक्त, तथा केवल मामूली से संकुचनशील होते हैं। योनि म्यूकोसा पतला होता है और श्वेत रक्त कोशिकाएं इसमें से होकर गुजरती हैं जिससे योनि आलेप लगभग पूर्णतः इन्हीं कोशिकाओं का बना होता है (चित्र 8.17)।

iv) **मदपूर्व** (proestrus): यह दशा अगले कामोत्तेजन से पूर्व आती है, और इसकी विशेषता है कॉर्पोरा लुटिया का कार्यात्मक अंतर्वलन हो जाना तथा फॉलिकलों में अण्डोत्सर्गपूर्वी उत्फूलन होना। गर्भाशयों में तरल इकट्ठा हो जाता है और वे अत्यधिक संकुचनशील हो जाते हैं। योनि आलेप में अवकेंद्रकयुक्त एपिथीलियम कोशिकाओं का बाहुल्य हो जाता है जो या तो पृथक रहती है या चादरों के रूप में होती है।

गर्भ ठहर जाने की स्थिति में, ये चक्र गर्भावधि के दौरान रुक जाते हैं, चूहों में गर्भावधि 20 से 22 दिन तक चलती है। गर्भावस्था के समाप्त हो जाने के बाद प्राणी मदचक्र में आते हैं, मगर पुनः ये चक्र दुग्ध स्रवण (lactation) के समाप्त होने तक नहीं होते (चित्र 8.17)।

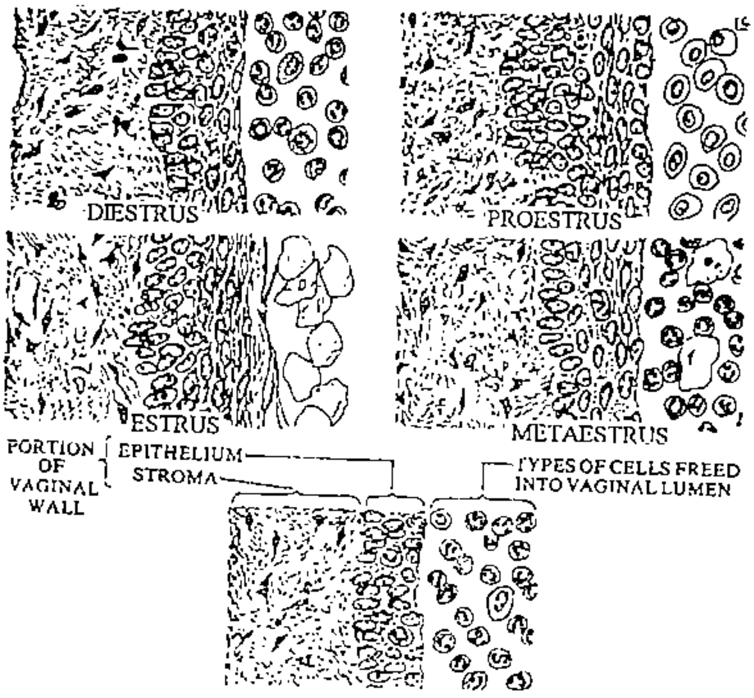

चित्र 8.17 : मदचक्र की विभिन्न अवस्थाओं के दौरान चूहे की योनि भित्ति का भाग।

मदचक्र का अंतःस्रावी नियमन

आप पढ़ चुके हैं कि जनन चक्रों पर पिट्यूटरी तथा गोनडी हॉर्मोनों के ऊपर प्रभावों का नियंत्रण होता है। आज की प्रचलित संकल्पनाओं के अनुसार एक पुनर्भरण क्रियाविधि (feedback mechanism) काम करती है जिसके द्वारा पिट्यूटरी से FSH तथा LH का निकलना रक्त परिसंचरण में एस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टेरान के स्तरों द्वारा नियंत्रित होता है। पिट्यूटरी-अण्डाशयी अक्ष के संक्रियकरण के लिए मूलतः कौन से कारक उत्तरदायी हैं इसका पता नहीं है लेकिन अनुमान लगाया गया है कि अपरिपक्व फॉलिकलों या फिर गोनडों को छोड़कर अन्य स्रोतों से आने वाले एस्ट्रोजनों के

का मुख्य स्रोत अण्डाशय न होकर अपरा (प्लैसेंटा) होता है। मध्य गर्भावस्था के बाद अण्डाशयों को निकाल देने से न तो गर्भ ही समाप्त हो जाता है और न ही परिसंचरण में दो प्रकार के स्टेरॉइड हॉर्मोनों के स्तर में ह्रास होता है (चित्र 8.18)।

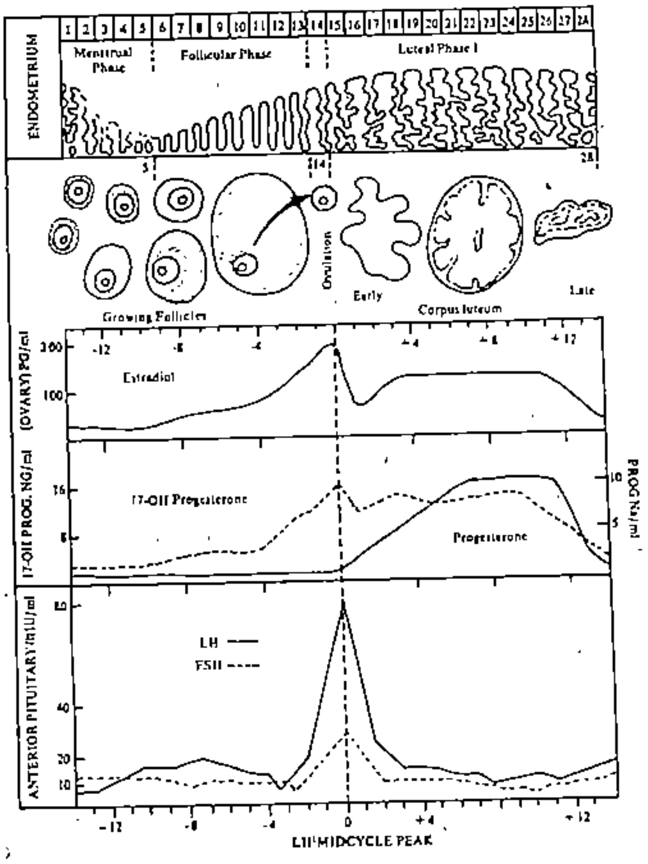

चित्र 8.18 : रज चक्र के दौरान एंडोमेट्रियम में, अण्डाशयों में तथा परिसंचरणशील अण्डाशयी हॉर्मोनों में होने वाले परिवर्तनों को इस आरेख में दर्शाया गया है।

गर्भनिरोधक गोली

आज संसार की लगभग 6 करोड़ महिलाएं खाने वाले स्टीरॉइड गर्भनिरोधकों का इस्तेमाल करती हैं। इन गर्भनिरोधकों में प्रायः एक संश्लिष्ट एस्ट्रोजन और उसके साथ मिलकर एक संश्लिष्ट प्रोजेस्टेरॉन होता है जिनकी खाने की गोलियां बना दी जाती हैं। रज स्राव काल के आखरी दिन के बाद से तीन सप्ताह तक हर रोज एक एक गोली खायी जाती है। इस विधि से अण्डाशयी स्टेरॉइडों (गोली से प्राप्त) का रक्त में पाया जाने वाला स्तर तुरंत ऊंचा हो जाता है और यह स्तर मासिक चक्र की सामान्य अवधि के दौरान बना रहता है। इससे एक नेगेटिव पुनर्भरण पैदा होता है जो गोनेडोट्रोपिन स्राव का संदमन करता है जिसके फलस्वरूप अण्डोत्सर्ग होता ही नहीं। संपूर्ण चक्र एक मिथ्या लुटियल प्रावस्था जैसा होता है जिसमें प्रोजेस्टेरॉन एस्ट्रोजन का स्तर अधिक तथा गोनडोट्रोपिनों का स्तर कम बने रहते हैं।

चूंकि गर्भनिरोधक गोलियों में अण्डाशयी स्टीरॉइड हॉर्मोन होते हैं इसलिए एंडोमेट्रियम में प्रचुरोद्भवन होकर वह उसी प्रकार का स्रावी बना रहता है जैसा कि एक सामान्य चक्र के दौरान होता है। एंडोमेट्रियम में अपसामान्य वृद्धि न होने देने के लिए स्त्रियां तीन सप्ताह के बाद गोलियां लेना बंद कर देती हैं। इससे एस्ट्रोजन तथा प्रोजेस्टेरॉन के स्तर गिर जाते हैं और रज स्राव होने दिया जाता है। गर्भनिरोधक गोली संततिनिरोध का एक अत्यंत कारगर उपाय है किंतु इससे निश्चय ही गंभीर खतरे भी हैं जैसे कि रक्त का थ्राम्बोसिस, हृद् वाहिकीय दोष, एंडोमेट्रियम एवं स्तन का कैंसर आदि हो जाना। मगर बताया गया है कि गर्भनिरोधक गोलियों से होने वाला मृत्यु खतरा उस खतरे से अब भी बहुत कम है जो गर्भावस्था की जटिलताओं से अथवा मोटरकार आदि से होने वाली दुर्घटनाओं के रूप में होता है।

बोध प्रश्न 5

मद चक्र तथा रजो चक्र में दो मुख्य अंतर क्या क्या हैं? नीचे दिए गए स्थान में समझाइए:

....

....

....

....

....

8.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि:

- जीवधारी अलैंगिक तथा लैंगिक विधियों से जनन करते हैं। विभाजन, मुकुलन, विखंडन तथा अनिषेकजनन, जनन की अलैंगिक विधियां हैं। लैंगिक जनन में अलग अलग भाग वाले दो नर-मादा जनकों का योगदान होता है।
- नर के गोनड (वृषण) से नर युग्मक यानि शुक्राणु बनते हैं और मादा गोनड (अण्डाशय) से अण्डा बनता है।
- अधिकांश प्राणी एकलिंगाश्रयी होते हैं अर्थात् उनमे लिंग पृथक् होती है लेकिन कुछ प्राणियों में दोनों लिंग एक ही प्राणी में होते हैं तथा इस दिशा को उभयलिंगता कहते हैं।
- क्रमविकास के दौरान प्राणियों ने अपनी जनन कारगरता बढ़ा ली है ताकि वे अपने बच्चों को जन्म से पूर्व अथवा जन्म के बाद पोषण एवं सुरक्षा प्रदान कर सकें। इस दिशा में कशेरुकियों में होने वाले ये अनुकूलन हैं—आंतरिक निषेचन, कवचयुक्त अंडे तथा भ्रूण झिल्लियां (शिशुप्रजता)।
- व्यष्टिगत प्राणी की लिंग का निर्धारण निषेचन के समय होता है जो आनुवंशिक संरचना पर निर्भर है। XX क्रोमोसोमों से युक्त युग्मनज (जाइगोट) आनुवंशिक मादा का रूप लेता है तथा XY वाला आनुवंशिक नर का रूप होता है। यह आनुवंशिक निर्धारण भी कुछ भीतरी तथा बाहरी पर्यावरण कारकों से रूपांतरित हो सकता है अथवा उलट भी सकता है।
- अण्डाशय से अण्डे बनते हैं तथा उनमें हॉर्मोनों तथा पीतक का निर्माण होता है।
- अण्डाशयी क्रिया का एक तो पिट्यूटरी गोनेडोट्रोपिनों द्वारा और दूसरे नेगेटिव पुनर्भरण की क्रियाविधि से इसके अपने ही हॉर्मोनों द्वारा नियमन होता है।
- वृषण में शुक्राणु बनते हैं और स्टेरॉइड हॉर्मोनों का संश्लेषण एवं स्रवण होता है। इसकी क्रिया भी पिट्यूटरी पुनर्भरण क्रियाविधि द्वारा तथा इसके अपने ही हॉर्मोनों (एंड्रोजनों) द्वारा नियमित होता है।
- सहायक जननांगों के अंतर्गत वाहिनियां तथा ग्रंथियां आती हैं जो युग्मकों के संचय एवं उनके वहन के लिये विशेषित होती हैं। मादा सहायक जननांग हैं—अण्डवाहिनियां, गर्भाशय, योनि तथा बाह्य जनेंद्रिय। नर सहायक जननांग हैं—बहुसंख्यक अपवाहिका नलिकाएं, युग्मित एपिडिडिमिस, शुक्राशय, शुक्रवाहक, स्थलनी वाहिनियां, काउपर ग्रंथियां, प्रोस्टेट ग्रंथि, मूत्रमार्ग तथ शिश्न।
- युग्मक निर्माण एक सतत परिघटना नहीं है। यह चक्रीय होती है तथा उन ऋतुओं में सम्पन्न होती है जो संतानों के परिवर्धन एवं वृद्धि के लिए सर्वाधिक अनुकूल होती हैं।
- अधिकांश ग़ैरस्तनी कशेरुकियों में वार्षिक जनन चक्र पाया जाता है जिसमें युग्मकों का परिपक्वन एवं प्रजनन प्रक्रिया वर्ष में केवल एक बार होती है। युग्मकजनन की क्रिया नर में प्रायः संतत होती रहती है। स्तनधारी मादाओं में दो प्रकार के अण्डाशयी चक्र पाए जाते हैं:—(i) मद चक्र जो गैर प्राइमेट स्तनधारियों में पाया जाता है। (ii) रजोचक्र, जो प्राइमेटों में पाया जाता है। इन दो चक्रों में ये दो मुख्य अंतर—(i) प्राइमेटों में एक रज (रक्तस्राव) प्रावस्था का पाया जाना तथा (ii) लैंगिक ग्राहिता मद चक्र की तरह एक निश्चित काल में सीमित होने के बजाए रजोचक्र के संपूर्ण चक्र में फैली होना।

8.6 अंत में कुछ प्रश्न

1) अलैंगिक जनन के विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिए, तथा नीचे दिए गए स्थान में उनमें से प्रत्येक का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

....
....
....
....
....

2) स्तनीय अण्डाशय के भाग का आरेख बनाइए तथा उसमें पाए जाने वाली संरचनाओं के नाम लिखिए।

3) FSH LH एस्ट्रोजनों तथा प्रोजेस्टेरॉन के विषय में संक्षेप में लिखिए। जनन चक्र को बनाए रखने में इन हॉर्मोनों की परस्पर क्रिया किस प्रकार होती है?

....
....
....
....
....

4) मद चक्र का संक्षेप में विवेचन कीजिए।

....
....
....
....
....

8.7 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) ख; ii) क; iii) त; iv) झ; v) ज;
vi) छ; vii) च; viii) घ; ix) ग।

2) क) वृषण अण्डाशय
ख) द्विपार्श्वत, पक्षी
ग) ग्राफियन फॉलिकल
घ) कॉर्पस लुटियम
ङ) एट्रेटिक फॉलिकल
च) ऊगोनियम

छ) एस्ट्रोन, एस्ट्रेडियोल, एस्ट्रियोल

ज) प्रोजेस्टेरॉन, 20 α-hydroxypregn-4-en-3-one;

झ) विटेलोजेनेसिस 20 β-hydroxypregn-4-en-3-one.

3) क) यह वृषण के भीतरी तापमान का नियमन करता है। गर्म दिनों में वृषणकोश वृषणों को देह से दूर हटाए रखकर उन्हें ठंडा बनाए रखता है और ठंडे दिनों में वृषणकोश ऊपर को उठकर शरीर के निकट आ जाता है ताकि वृषण गर्म बने रहे।

ख) ये स्टेरॉइड हॉर्मोन का संश्लेषण करने वाली कोशिकाएं होती हैं।

ग) ये शुक्राणुजनन के लिये आलम्बी कोशिकाएं होती हैं। इन कोशिकाओं से ऐंड्रोजनों का संश्लेषण होता पाया गया है एवं ये जनन कोशिकाओं को पोषण भी प्रदान करती हैं।

घ) ये नरलक्षणकारी हॉर्मोन हैं, ये शुक्राणुजनन क्रिया तथा सहायक जननांगों को बनाए रखते हैं।

4) i) F, ii) F, iii) F, iv) F, v) M,
vi) M, vii) M, viii) M, ix) M.

5) रजोचक्र में रज (रक्तस्राव) प्रावस्था का पाया जाना, जो मद चक्र में नहीं पाया जाता है। समस्त रजोचक्र के दौरान प्राणी लैंगिक क्रिया के लिए ग्राही होते हैं, जबकि जिन प्राणियों में मद चक्र होता है वे चक्र के एक बहुत ही थोड़े काल में लैंगिक क्रिया के लिये ग्राही होते हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1) कृपया उपभाग 8.2.1 देखिए
2) कृपया चित्र 8.2 देखिए
3) कृपया भाग 8.4 देखिए
4) कृपया भाग 8.4 देखिए

इकाई 9 संचार-I

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
9.2 तंत्रिका तंत्र और तंत्रिका कोशिकाएँ
9.3 तंत्रिका आवेग
झिल्ली विभव
क्रिया विभव
पूर्ण या शून्य अनुक्रिया
चालन
9.4 अन्तर्ग्रथनी संचरण
रासायनिक अन्तर्ग्रथनी संचरण
पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव
विद्युतीय अन्तर्ग्रथनी प्रेषण
अन्तर्ग्रथनों के गुण और कार्य
9.5 तंत्रिसंचारी
9.6 तंत्रिक परिपथ
9.7 सारांश
9.8 अन्त में कुछ प्रश्न
9.9 उत्तर

9.1 प्रस्तावना

इस पाठ्यक्रम की पिछली इकाइयों में आपने पढ़ा कि समस्त बहुकोशकीय प्राणियों में जीवन के लिये आवश्यक शरीर क्रियाविधियों के संचालन हेतु विविध स्तरों की जटिलता से युक्त अंग तंत्र पाये जाते हैं। इस जटिलता के कारण एक आन्तरिक संचार तंत्र की आवश्यकता होती है जो प्रत्येक तंत्र की क्रियाओं को अन्य तंत्रों की क्रियाओं से और पर्यावरणीय परिस्थितियों से समन्वित करता है। जीव की उचित शरीर क्रियाविधि के लिये पर्यावरण और आन्तरिक सूचना दोनों का ही बोध आवश्यक है।

प्रकृति में तंत्रिका तंत्र (nervous system) इस प्रकार की एक शरीरतः अभिमुख संचार प्रणाली है। आप इसकी तुलना एक टेलीफोन केन्द्र से कर सकते हैं। जब आप नम्बर डायल करते हैं आपका संदेश सांकेतिक भाषा में एक विद्युत धारा के रूप में विशिष्ट स्थान या लक्ष्य पर जाता है जहाँ रिसीवर उठाने वाले व्यक्ति द्वारा अर्थ निर्णय लिया जाता है। इसी प्रकार तंत्रिका तंत्र में सन्देश केबिल अर्थात तंत्रिका कोशिकाओं (nerve cells) और तंत्रिका (nerve) द्वारा एक विशिष्ट स्थान पर तात्क्षणिक प्रतिक्रिया के लिये भेज दिये जाते हैं।

इस इकाई में आप तंत्रिका कोशिकाएँ, जो सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र बनाती है, की संरचना और क्रियाविधि का अध्ययन करेंगे। आप सीखेंगे कि उद्दीपन (stimulus) की अनुक्रिया (response) में सन्देश किस प्रकार उत्पन्न होता है और तंत्रिका कोशिकाओं द्वारा विशिष्ट अंगों अथवा कोशिकाओं तक उनका संचार कैसे होता है। उद्दीपन कैसा भी हो संदेश की भाषा एक ही होती है और संदेश का अर्थनिर्णय मस्तिष्क में होता है जो उचित अनुक्रिया का निर्देशन देता है।

FST-1 खण्ड-6 में आपका परिचय मस्तिष्क की संरचना, केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (central nervous system) और परिधीय तंत्रिका तंत्र (peripheral nervous system) के संगठन से कराया गया है। इस इकाई को पढ़ने से पूर्व FST-1 की इकाइयाँ 23-24 को पुनः पढ़ लेना सहायक होगा।

संचार की क्रियाविधि में हम लोगों ने जानबूझ कर मस्तिष्क के तथाकथित उच्च कार्यों जैसे चेतन, निद्रा और स्मृति को सम्मिलित नहीं किया है। यह विषय स्वयम् अपने में एक पूरा पाठ्यक्रम बना सकते हैं। किन्तु आप तंत्रिका समाकलन (nervous integration) में तंत्रिक परिपथों की भूमिका का, कुछ अनैच्छिक क्रियाओं जैसे सरल प्रतिवर्त चाप (reflex arc) और संवेदी निस्यन्दन तंत्र (sensory filtering system) की सहायता से संक्षिप्त में अध्ययन करेंगे।

इस खंड की अन्तिम इकाई में हम अन्तःस्रावी ग्रंथियों से स्रावित रासायनिक वाहकों के समिश्र, जिन्हें हॉर्मोन (hormone) कहते हैं, की चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

- तंत्रिकाणु (neuron) के भागों का, उनके क्रियात्मक महत्व सहित विवरण दे सकेंगे,
- क्रिया विभव (action potential) के उत्पादन के दौरान होने वाली घटनाओं का विवरण दे सकेंगे और पूर्ण या शून्य नियम (all or none law) को समझा सकेंगे,
- माइलिनआवृत (myelinated) और अमाइलिनआवृत (non-myelinated) अक्षतंतुओं (axons) में क्रिया विभव के चालन का विवरण दे सकेंगे और समझा सकेंगे कि वल्गी चालन (saltatory conduction) क्यों चालन की गति में सुधार लाता है,
- कुछ तंत्रिसंचारियों (neurotransmitters) की परिगणना कर सकेंगे और अन्तर्ग्रथनी सन्धि (synaptic junction) पर होने वाली क्रिया का विवरण दे सकेंगे,
- प्ररूपी प्रतिवर्त चाप का विवरण दे सकेंगे, तथा
- जालिका तंत्र (reticular system) का महत्त्व समझा सकेंगे।

9.2 तंत्रिका तंत्र और तंत्रिका कोशिकाएँ

सजीव पदार्थों में पर्यावरणी घटकों (भौतिक, रासायनिक और जैविक) में परिवर्तनों के प्रति अनुक्रिया करने की आन्तरिक क्षमता होती है। एक कोशिकीय जीव जैसे *अमीबा, पैरामीशियम* भी पर्यावरण के प्रति अनुक्रिया करते हैं, उससे पारस्परिक क्रिया करते हैं और उचित अनुक्रियाएँ उत्पन्न करते हैं। बहुकोशकीयता के विकास और प्राणियों के आकार में वृद्धि के साथ-साथ जीव में समन्वयन और सूचना के तीव्र चालन की आवश्यकता हुई। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिये बहुकोशकीय जीवों में कुछ कोशिकाएँ उत्तरोत्तर विशिष्ट होती गईं। उन्होंने पर्यावरणीय सूचनाओं को ग्रहण करने की, जीव के अन्दर उसके चालन और अन्ततः उचित अनुक्रिया को उत्पन्न करने की विशेष क्षमता अर्जित की। और इस भाँति एक प्रकार की कोशिका, **तंत्रिका कोशिका** (nerve cell) या **तंत्रिकाणु** (neuron), का जन्म हुआ। तंत्रिकाणु में स्वयम् आकारिकी और कार्यिकी विशिष्टीकरण हुए जिसके फलस्वरूप अपने विशिष्ट कार्यों के अनुसार परिमाण और आकारिकी में परस्पर भिन्न, विभिन्न भाँति के तंत्रिकाणुओं (तंत्रिका कोशिकाओं) का विकास हुआ। यह कोशिकाएँ तंत्रिका तन्त्र (nervous system) में संगठित हुईं। तंत्रिका ऊतक (nervous tissue) में तंत्रिका कोशिकाओं के अतिरिक्त एक और कोशिका प्ररूप-**तंत्रिकाबन्ध** (neuroglia) होता है वे बहुत अधिक संख्या में होते हैं और तंत्रिका कोशिकाओं के बीच के लगभग सभी रिक्त स्थान को भरते हैं। अकशेरुकी की तुलना में कशेरुकी तंत्रिका ऊतकों में तंत्रिकाबन्ध कोशिकाओं के कई प्ररूप पहचाने गये हैं। बन्ध कोशिकाओं (glia cells) की कुछ श्रेणियाँ तालिका 9.1 में सारिणीबद्ध की गई हैं।

तंत्रिकाबन्ध कोशिकाएँ संख्या में तंत्रिकाणु से लगभग पाँच गुना अधिक होती हैं। व्यस्कों में होने वाले मस्तिष्क अर्बुद (tumors) प्रायः तंत्रिकाबन्ध कोशिकाओं से ही बने होते हैं तंत्रिकाणुओं से नहीं।

तालिका 9.1 : बन्ध कोशिकाओं के कुछ प्ररूप और उनके कार्य

तंत्रिकाबन्ध	कार्य
श्वान कोशिकाएँ (Schwann cells)	सभी परिधीय तंत्रितन्तुओं के अक्षतन्तुओं को आवृत करके माइलिन आच्छाद बनाती है।
अल्पदन्द्रोन कोशिकाएँ (Oligodendrocytes)	केन्द्रीय अक्षतंतु के चारों ओर माइलिन आच्छाद बनाकर केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के श्वेत द्रव्य का निर्माण करती हैं।
ताराकोशिकाएँ (Astrocytes)	मस्तिष्क की कोशिकाओं को आवृत कर रक्त मस्तिष्क रोध (blood brain barrier) बनाती हैं और रक्त से मस्तिष्क में अणुओं के गमन के नियमन में सहायता देती हैं।
तंत्रिकाछद (Ependyma)	मस्तिष्क निलयों (ventricles) और मेरूरज्जु की केन्द्रीय नाल का अस्तर बनाती है।
सूक्ष्मतंत्रिकाबन्ध (Microglia)	केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र में भक्षक अमीबी कोशिकाएँ जो बाह्य और अपह्रासी पदार्थों को मस्तिष्क से निकालती हैं।

तंत्रिकाणु

यद्यपि तंत्रिकाणु बहुत प्रकार के परिमाण और आकारिकी रूपों के होते हैं किन्तु उनकी संरचना का एक आधारभूत विन्यास होता है जो कुछ सामान्य लक्षण दिखाता है। आपने इस आधारभूत संरचना का FST-I इकाई 23 में अध्ययन किया है। सामान्यतः तंत्रिकाणुओं में निम्नलिखित कोशिकीय लक्षण होते हैं (चित्र 9.1)। तंत्रिकाणु का कोशिका काय (cell body) **परिकेंद्रक द्रव्य** (perikaryon) कहलाता है। अनेक प्रवर्ध जिन्हें **पार्श्वतंतु** या **द्रुमिका** (dendrites) कहते हैं परिकेन्द्रक द्रव्य से निकलते हैं। यह अपेक्षाकृत छोटे, बहुधा शाखित, व्यास में अनियमित और शुंडाकार होते हैं।

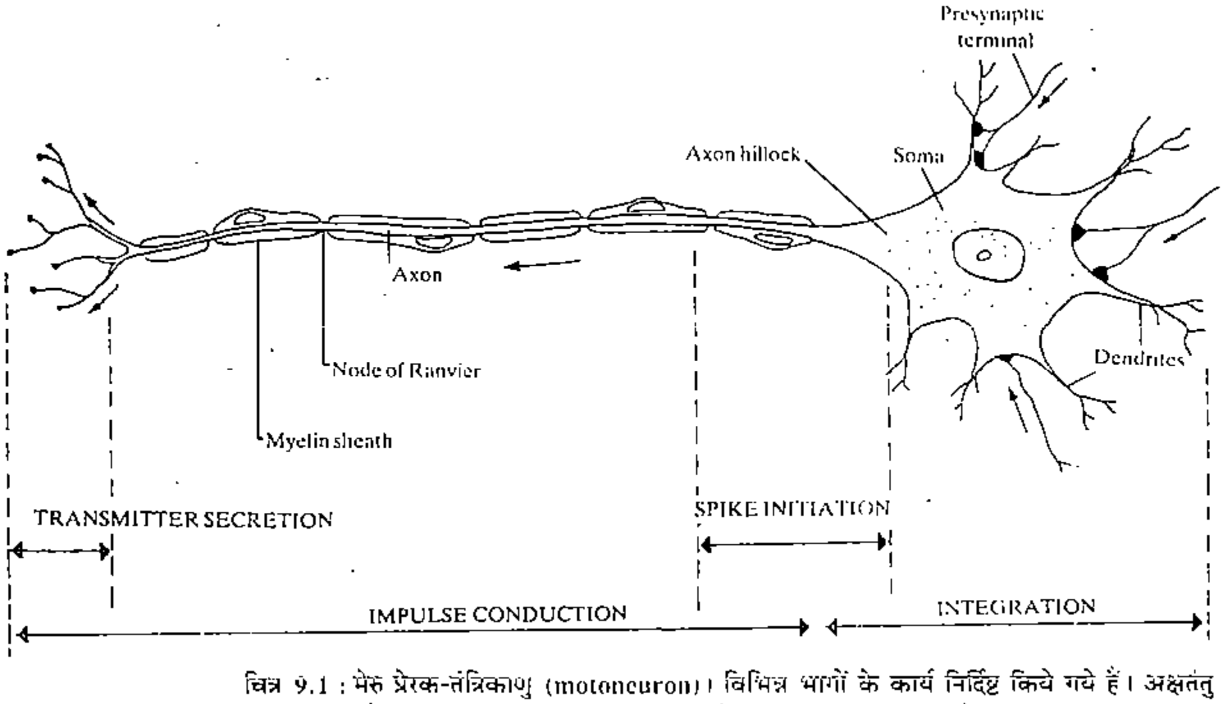

चित्र 9.1 : मेरु प्रेरक-तंत्रिकाणु (motoneuron)। विभिन्न भागों के कार्य निर्दिष्ट किये गये हैं। अक्षतंतु और उनके चारों ओर का आवरण अनुदैर्ध्य काट में दिखाये गये हैं।

इन प्रवर्धों के अतिरिक्त एक और संरचना —**अक्षतंतु** अर्थात ऐक्सॉन (axon)—परिकेन्द्रक द्रव्य से निकलती है। यह अपेक्षाकृत लम्बा और सिरे पर अंत्य प्रवर्धों में शाखित होता है। तंत्रिकाणु सब ओर से कोशिका कला—**तंत्रिकाच्छद** (neurilemma)—से आच्छादित होता है।

अक्षतंतु दो प्रकार के होते हैं; (i) माइलिनआवृत और (ii) अमाइलिनआवृत। **माइलिनआवृत अक्षतंतुओं** में तंत्रिकाच्छद एक और आवरण—**माइलिन आच्छद** (myelin sheath)—जो कि

जटिल लाइपोप्रोटीनों से बना होता है, में लिपटा रहता है। अन्य शाखाएं, पार्श्वतंतु, कोशिका काय (परिकेन्द्रक द्रव्य) और अक्षतंतु का प्रारम्भिक भाग (अक्षतंतु गिरिका या axon hillock) पर माइलिन आच्छद नहीं होता है। यद्यपि पार्श्वतंतु अपेक्षाकृत छोटे, अनाच्छादित, शुंडाकार, व्यास में अनियमित, और विभिन्न आकृतियों में शाखित होते हैं फिर भी कोशिका काय द्रव्य उन तक पहुँचता है। पार्श्व तंतु अपनी बहुत सी सतह पर **अन्तर्ग्रथनी अंत्यों** (synaptic endings) को ग्रहण करते हैं और इस प्रकार तंत्रिकाणु की ग्राही सतह बनाते हैं। यह एक ग्राही एन्टीना के समान हैं क्योंकि तंत्रिका कोशिका पार्श्वतन्तु के द्वारा सन्देश ग्रहण करती है लेकिन अक्षतंतु द्वारा संदेश प्रेषित करती है।

अक्षतंतु का लम्बा होना तंत्रिकाणु का एक अनुकूली लाभ है। जिराफ़ के मस्तिष्क से पैर की उँगलियों तक संदेश ले जाने वाले तंत्रिकाणु 3 मीटर से अधिक लम्बे होते हैं। प्राणी जगत की सबसे लम्बी कोशिका!

तंत्रिका ऊतक का एक और अनन्य महत्वपूर्ण संरचनात्मक लक्षण **अन्तर्ग्रथन** (synapse) है। अन्तर्ग्रथन वह शारीरीय स्थल है जहाँ एक तंत्रिका कोशिका के अक्षतंतु अन्य प्रवर्ध दूसरी तंत्रिका कोशिका से क्रियात्मक सम्पर्क बनाते हैं। इस सम्पर्क स्थल पर दो परस्पर सम्पर्की कोशिकाओं की झिल्लियाँ भौतिक अन्तराल द्वारा अलग-अलग रहती हैं। एक कोशिका अर्थात् पूर्वअन्तर्ग्रथनी (presynaptic) से दूसरी कोशिका अर्थात् पश्चअन्तर्ग्रथनी (postsynaptic) तक संकेत प्रेक्षण के लिये विशेष क्रियाविधि सम्पन्न होती है। अधिक विवरण अन्तर्ग्रथनी प्रेक्षण (synaptic transmission) की चर्चा के समय दिया जाएगा।

कोशिका काय जिसमें कि अधिकांश जैव संश्लेषण क्रियाएं होती हैं जिनसे कोशिका के अन्य भागों जैसे अक्षतंतु के लिए आवश्यक रसायन उत्पादित होते हैं तंत्रिकाणु का पोषक उपकरण (trophic apparatus) बनाता है। दानेदार अन्तर्द्रव्यीय जालिका (rough endoplasmic reticulum) कोशिका काय और पार्श्वतंतु में पाई जाती है किन्तु अक्षतंतु में नहीं होती है। क्योंकि दानेदार अन्तर्द्रव्यीय जालिका कोशिका का प्रमुख प्रोटीन उत्पादक उपकरण है इसलिए तंतु प्रोटीन कोशिका काय से आती है। परिकेन्द्रक द्रव्य से अक्षतन्तु को और उसके भीतर विविध भाँति की वस्तुओं का गमन **अक्षतंत्रीय परिवहन** (axonal transport) कहलाता है। पार्श्वतंतु से अक्षतंतु तक सम्पूर्ण कोशिका द्रव्य में फैली हुई महीन तंतु-समान संरचनाओं को **तंत्रिका तंतु** (neurofilament) और **सूक्ष्मनलिकाएं** (microtubules) कहा जाता है।

अक्षतंतु अपेक्षाकृत लम्बा प्रवर्ध होता है (जिसे प्रायः तंत्रि तंतु या nerve fibre भी कहा जाता है) और उसे उत्तेजना (excitation) के काफी दूर तक चालन के लिये कार्यरूप से विशिष्ट माना जा सकता है।

कशेरुकियों में उच्च वेग तंत्रिकाणुओं (high velocity neurons) के अक्षतंतु रोधी लिपिड आवरण से आच्छादित होते हैं जिसमें माइलिन होती है। यह माइलिन विशेष प्रकार की तंत्रिकाबंध कोशिकाओं—श्वान कोशिकाओं, से बनी होती है (चित्र 9.2)। माइलिन आच्छद सतत नहीं होता है इसमें निकटवर्ती श्वान कोशिकाओं के बीच में आरोधी रिक्तियाँ होती हैं जो **रेनवियें पर्व** (nodes of Ranvier) कहलाते हैं। माइलिन आच्छद और रेनवियें पर्व आवेगों के चालन की गति को एक अभिक्रिया द्वारा बढ़ाते हैं जिसकी कि हम आगे विवेचना करेंगे।

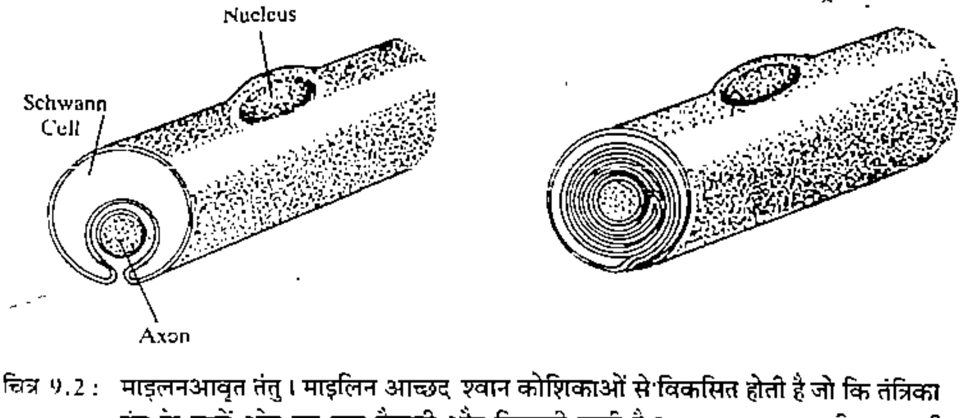

चित्र 9.2 : माइलनआवृत तंतु। माइलिन आच्छद श्वान कोशिकाओं से विकसित होती है जो कि तंत्रिका तंतु के चारों ओर तब तक फैलती और लिपटती जाती है जब तक वह बहुस्तरी अनुलम्बी कोशिका कला (multilayered supporting cell membrane) से ढक नहीं जाता।

अक्षतंतु का अन्तिम भाग छोटी-छोटी शाखाओं में विभाजित होता है। इन छोटी शाखाओं के सिरे पर स्थित **अन्त्य घुंडियाँ** (end knobs) दूसरी तंत्रिका कोशिका से अन्तर्ग्रथनी सम्पर्क बनाती हैं। अन्त्य घुंडी में विशिष्ट संरचनाएं—**अन्तर्ग्रथनी पुटिकाएं** (synaptic vesicles) होती हैं जिसमें **तंत्रिसंचारी** (neurotransmitter) रसायन का भंडारण होता है।

तंत्रिकाणु के आकार में इतनी विविधता होती है कि ऊपर दिए गये सामान्य विवरण से वे बहुत भिन्न हो सकते हैं। उदाहरणार्थ रेटिना में पाई जाने वाली एमाक्राइन कोशिकाओं (amacrine cells) में बिना किसी प्रदर्शनीय अक्षतंतु के प्रवर्ध होते हैं।

बोध प्रश्न 1

क) कशेरुकी में माइलिन आच्छद ढकता है:
   i) तंत्रि कोशिका काय
   ii) पार्श्वतंतु
   iii) अक्षतन्तु
   iv) उपरोक्त सभी।

ख) निम्नलिखित में से कौन सा कथन अन्तर्ग्रथन का सबसे अच्छा विवरण है
   i) अन्तर्ग्रथन तंत्रिका कोशिकाओं के बीच का वह क्रियात्मक सम्पर्क बिन्दु है जहाँ से तंत्रिका आवेग प्रेषित होते हैं।
   ii) अन्तर्ग्रथन संकेत के प्रेषण के लिये तंत्रिकाणु और किसी अन्य कोशिका के बीच का क्रियात्मक संयोजन है।
   iii) अन्तर्ग्रथन तंत्रिका कोशिका और किसी अन्य कोशिका के बीच का क्रियात्मक सम्पर्क है जिसके पार तंत्रिकासंचारी द्वारा तंत्रिका आवेग प्रेषित होते हैं।

9.3 तंत्रिका आवेग

तंत्रिका आवेग संवेदी बोध (sensory perception) से लेकर कार्यिकी अनुभवों (physiological experiences), जैसे सभी तंत्रिकीय कार्यों के लिये आधारभूत हैं। इनका उद्गम और चालन तंत्रिकाणु से होता है। इसलिए इसके पूर्व कि हम यह अध्ययन करें कि तंत्रिका तंत्र समग्ररूप से किस प्रकार संगठित है और कार्य संचालन करता है यह समझना आवश्यक है कि तंत्रिका कोशिकाओं में आवेगों की उत्पत्ति और चालन किस प्रकार होता है।

उँगली में सूई चुभाने पर किस प्रकार ऐसे विद्युतीय परिवर्तन आरम्भ होते हैं जो आपके मस्तिष्क को निर्देश देते हैं कि दर्द का अनुभव हो? विद्युत का स्रोत सूई में कदापि नहीं है। वह तंत्रिका कोशिका में ही है। विद्युत धारा की उत्पत्ति के लिये उत्तरदायी गुण मुख्यतः तंत्रिकाणु की प्लाज्मा झिल्ली (plasma membrane) में हैं जिसमें क्रियात्मक विशेषताएं होती हैं।

9.3.1 झिल्ली विभव

अपनी विरामावस्था में भी, जब कि वे किसी आवेग का चालन नहीं कर रही होतीं, तंत्रिका कोशिकाएं, विद्युत आवेश उत्पन्न करती रहती हैं। सुप्त तंत्रिका कोशिकाएं वास्तव में विरामावस्था में नहीं होती किन्तु अपनी उत्तेजता (excitability) अर्थात् उद्दीपन की अनुक्रिया में आवेग के चालन की क्षमता को बनाये रखती हैं।

सूचना को ग्रहण करने और उसका प्रसारण करने की तंत्रिकीय क्षमता विरामावस्था में कोशिका के अन्दर और बाहर आयनों के वितरण के अन्तर और प्लाज्मा झिल्ली को जब उद्दीपन दिया जाता है तब उसकी परिवर्तित पारगम्यता के फलस्वरूप होती है। आपने LSE-01 इकाइयाँ 6-7 में सीखा कि कोशिकाओं के चारों ओर अन्तराकाशी द्रव्य (interstitial fluid) में सोडियम (Na^+) और क्लोराइड (Cl^-) आयनों की सान्द्रता अपेक्षाकृत अधिक किन्तु पोटेशियम (K^+) आयनों की सान्द्रता

कम होती है। कोशिका के भीतर K^+ की सान्द्रता Na^+ और Cl^- की सान्द्रता से अधिक होती है (चित्र 9.3)। यह अन्तर बहुत अधिक होते हैं। कोशिका के अन्दर की अपेक्षा कोशिका के बाहर Na^+ लगभग 10 गुना और कोशिका के अन्दर कोशिका के बाहर की अपेक्षा K^+ 25-30 गुना होता है।

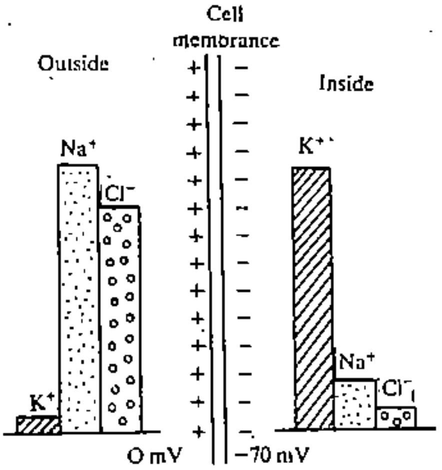

चित्र 9.3 : तंत्रिकाणु के अन्दर और बाहर आयनों का वितरण। सक्रिय सोडियम पम्प Na^+ को बाहर निकाल कर उसकी सान्द्रता को कोशिका के अन्दर कम बनाये रखता है यद्यपि K^+ बाहर रिसता है फिर भी उसकी सान्द्रता अन्दर अधिक होती है।

विरामावस्था में तंत्रिका कोशिका K^+ के लिये चयनात्मक रूप से पारगम्य होती है। यह आयन विशिष्ट मार्गों द्वारा निष्क्रिय रूप से झिल्ली के पार चले जाते हैं इस समय Na^+ और Cl^- की पारगम्यता लगभग शून्य होती है क्योंकि यह मार्ग बन्द होते हैं और K^+ का अपनी सान्द्रण प्रवणता की ओर विसार होता है क्योंकि कोशिका के बाहर K^+ कम होते हैं। कोशिका के बाहर जाने वाला प्रत्येक K^+ जिसके साथ Cl^- नहीं जाता झिल्ली के बाहर की ओर धन आवेश दे देता है। यह धन आवेश शीघ्र ही एक ऐसे स्तर पर पहुँच जाता है जो K^+ के और अधिक बहिर्वाह को रोकता है। विराम झिल्ली संतुलन की अवस्था में आ जाती है और बाहर के धन आवेश पूर्णरूप से उस सान्द्रण प्रवणता को संतुलित करते हैं जिसके कारण K^+ बाहर निकलते हैं। यह **विराम झिल्ली विभव** (resting membrane potential) देता है जिसका नर्स्ट समीकरण (Nerst's equation) द्वारा परिकलन किया जा सकता है (देखिये इकाइयाँ 6-7 LSE-02)।

विराम विभव के उत्पादन में तंत्रिका झिल्ली न कि अक्षतंतु द्रव्य सबसे अनिवार्य तत्व है सिद्ध करने के लिये कई प्रयोग किये गये। इनमें सबसे प्रभावशाली प्रयोग में अक्षतंतु के सम्पूर्ण द्रव्यों को कृत्रिम नमक के घोल से बदल दिया गया। आशा के विपरीत इस प्रकार का अक्षतंतु सामान्य अक्षतंतु की भाँति कार्य करता है। वह कई घंटों तक उत्तजेनीय रह सकता है।

$$E = \frac{RT}{F} \quad \log e \frac{[K]o}{[K]i}$$

स्किविड के विशाल (giant) अक्षतंतु में इसका परिकलन -75 mV किया गया है।

स्किविड और बहुत से अन्य सक्रिय अकशेरुकियों के तंत्रिकाणुओं में इतने अधिक व्यास के विशाल अक्षतंतु होते हैं कि उनका अध्ययन करना कशेरुकियों के तंत्रिकाणुओं से सरल होता है। सब तंत्रिका कोशिकाओं की आधाभूत क्रियाविधि एक ही होती है। ए.एल. हौजकिन और ए.एफ. हक्सले ने स्किविडों के विशाल अक्षतंतुओं का अध्ययन किया और यह विभवान्तर किस प्रकार तंत्रिका कोशिका की क्रिया विधि में सहायक होते हैं यह दर्शाने के लिये उनको नोबेल पुरस्कार मिला।

अक्षतंतु में एक सूक्ष्म इलेक्ट्रोड डालकर, बाहर की तुलना में अन्दर के विभव को पढ़कर झिल्ली विभव नापा जा सकता है। स्किविड के विशाल अक्षतंतु में रिकार्ड किया गया विराम विभव परिकलित विभव के समीप ही किन्तु उससे कई मिली वोल्ट कम लगभग -60 से -70 mV होता है। मान के पहले ऋणात्मक चिन्ह यह दिखलाता है कि कोशिका का भीतरी भाग उसके बाहर की तुलना में ऋणात्मक है।

आइये देखें कि तंत्रिका कोशिका के भीतर और बाहर सान्द्रता का अन्तर किस कारण होता है। इसके कारण हैं:

i) कोशिका के भीतर स्थित ऋणावेशी प्रोटीन और कार्बनिक फॉस्फेट जो कोशिका के बाहर नहीं जाते, का परस्पर विद्युतीय आकर्षण।

ii) कोशिका झिल्ली की K^+ के लिये Na^+ से अपेक्षाकृत अधिक पारगम्यता।

iii). Na^+/K^+ पम्पों द्वारा सक्रिय गमन।

LSE-01 इकाई 6-7 में आपने पढ़ा कि झिल्ली के लिपिड द्विस्तर में धारिता (capacitance) का गुण होता है और यह भी कि झिल्लियों में स्थित प्रोटीनों में विद्युत चालकत्व (conductance) का गुण होता है क्योंकि वे झिल्ली के आरपार आयनों का गमन होने देती है। उत्तेजनशील झिल्ली में आयन चालकत्व के मार्ग (channels) या द्वार (gates) होते हैं। यह पॉलीपेप्टाइड श्रृंखलाओं से निर्मित होते हैं जो कि झिल्ली मार्ग को विशिष्ट परिस्थितियों के अनुसार खोल या बन्द कर सकते हैं। जब किसी आयन के लिये द्वार खुले होते हैं उस समय झिल्ली उस विशिष्ट आयन के लिये अत्यधिक पारगम्य हो जाती है और जब द्वार बन्द होते हैं तो उसी आयन के लिये पारगम्यता कम हो जाती है। K^+ के लिये दो प्रकार के मार्ग होते हैं। एक, जिसमें द्वार नहीं होते और मार्ग सदा खुला रहता है और दूसरे, जिनमें द्वार होते हैं जो विरामावस्था कोशिका में बन्द रहते हैं। इसलिये विरामावस्था कोशिका K^+ के लिये Na^+ से अपेक्षाकृत अधिक पारगम्य होती है। Na^+ के मार्गों पर सदा द्वार होते हैं और यह विरामावस्था कोशिका में बन्द रहते हैं।

यदि उद्दीपक इलेक्ट्रोडों का एक जोड़ा झिल्ली के क्षेत्र में डाला जाए (एक इलेक्ट्रोड अक्षतंतु के भीतर और दूसरा बाहर) तो झिल्ली विभव में आकस्मिक और बहुत तेजी से परिवर्तन नोट किया जा सकता है। झिल्ली का **विध्रुवण** (depolarisation) होता है अर्थात् Na^+ द्वार खुल जाते हैं और Na^+ उच्च सांद्रण प्रवणता से निम्न की ओर अन्दर प्रवाहित होता है (चित्र 9.4)। इस समय K^+ द्वार बन्द होते हैं। दोनों अभिलेखन इलेक्ट्रोडों (recording electrodes) के बीच विभव अन्तर घट जाता है। एक क्षण बाद Na^+ द्वार बन्द हो जाते हैं और K^+ द्वार खुल जाते हैं। यह झिल्ली को K^+ के लिये विरामावस्था से अधिक पारगम्य बनाता है और K^+ कोशिका के बाहर अपनी सान्द्रण प्रवणता के साथ-साथ विसरित हो जाते हैं। इसके पश्चात् ये K^+ द्वार बन्द हो जाते हैं और झिल्ली विभव पुनः उस स्थिति में आ जाता है जैसा वह विरामावस्था के समय था या झिल्ली **पुनःध्रुवित** (repolarized) हो जाती है। उद्दीपन के फलस्वरूप यदि झिल्ली भीतर की ओर अपेक्षाकृत अधिक ऋणात्मक हो जाती है तो **अतिध्रुवण** (hyperpolarization) होता है और दोलनदर्शी (oscilloscope) की सुई नीचे की ओर झुकती है।

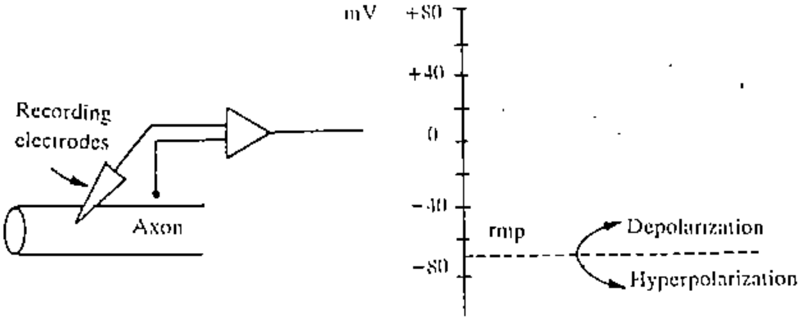

चित्र 9.4 : अंत: कोशिकीय और कोशिकाबाह्य अभिलेखन इलेक्ट्रोड में विभव अन्त दोलनदर्शी के परदे पर दिखाया गया है। विराम झिल्ली विभव, R M P (resting membrane potential) बढ़ सकता (अतिध्रुवण) या घट सकता है (विध्रुवण)।

आप नोट करेंगे कि Na^+ और K^+ द्वारों का खुलना या बन्द होना झिल्ली विभव पर निर्भर है। द्वार-युक्त मार्ग विरामविभव के समय बन्द रहते हैं और जब झिल्ली किसी **प्रभावसीमा स्तर** (threshold level) तक विध्रुवित होती है तब द्वार खुल जाते हैं। इस कारण इन द्वारों को **विभव नियंत्रित** (voltage regulated) कहा जाता है।

9.3.2 क्रिया विभव

तंत्रि आवेग के जनन में जो घटनाएं अन्तर्हित हैं अब उनकी रूपरेखा दी जा सकती है। जब उपयुक्त उद्दीपन तंत्रिकाच्छाद से पारस्परिक क्रिया करता है तब विराम झिल्ली विभव अस्तव्यस्त हो जाता है। जब Na^+ द्वार Na^+ को अन्दर लाने के लिये खुलते हैं तब अक्षतंतु की झिल्ली और भी विध्रुवित हो जाती है (अन्दर अधिक धनात्मक हो जाता है)। यह विध्रुवीकरण और भी सोडियम आयनों को कोशिका के अन्दर आने देता है और एक धनात्मक पुनःनिवेश लूप (feed-back loop) बन जाता है (चित्र 9.5) जिससे Na^+ के अन्दर आने की दर और विध्रुवीकरण बढ़ जाते हैं। K^+ का कोशिका के बाहर विसरण कोशिका के अन्दर को और ऋणात्मक बनाता है और प्रारम्भिक विराम विभव पुनः स्थापित हो जाता है। यह पुनःध्रुवीकरण (repolarization) ऋणात्मक पुनःनिवेश लूप के अंतर्गत होता है (चित्र 9.5)।

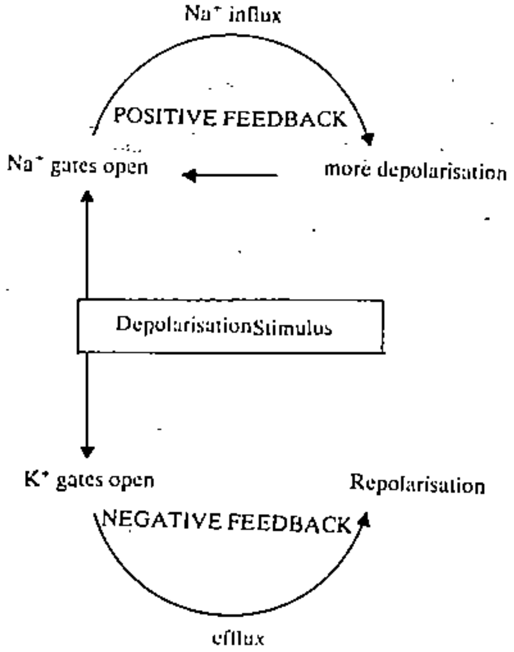

चित्र 9.5 : सोडियम और पोटैशियम चालकत्व के बदलाव। सोडियम चालकत्व की वृद्धि धनात्मक पुनः निवेश और पोटैशियम चालकत्व की ऋणात्मक पुनःनिवेश द्वारा होती है।

चित्र 9.6 उद्दीपन की अनुक्रिया में सोडियम और पोटैशियम आयन के गमन को दर्शाता है। Na^+ गमन की अतितीव्र गति के कारण तेजी से शून्य मिली वोल्ट (mV) तक विध्रुवीकरण होता है और फिर तेजी से बढ़ता है। इस प्रकार झिल्ली की ध्रुवता उलट जाती है अर्थात् वह लगभग +40 mV तक धनावेशित हो जाती है। सोडियम का चालकत्व अचानक रुक जाता है और पोटैशियम का चालकत्व प्रारम्भ हो जाता है परिणामस्वरूप विध्रुवीकरण होता है। Na^+ और K^+ के चालकत्व के यह परिवर्तन एक घटना को जन्म देते हैं जिसे **क्रिया विभव** या **तंत्रि आवेग** (action potential or nerve impluse) कहते हैं और यह सारा क्रम सेकेन्ड के हाजारवें भाग में हो जाता है। एक बार जब यह क्रिया विभव पूरा हो जाता है तब Na^+/K^+ पम्प कार्य आरम्भ कर देता है और अधिसंख्य Na^+ बाहर और K^+ कोशिका के अन्दर पम्प कर दिये जाते हैं। Na^+/K^+ पम्प जब दो K^+ कोशिका को अन्दर लाता है तब तीन Na^+ कोशिका के बाहर निकालता है। इस प्रकार यह वास्तव में विभवान्तरों को बनाये रखने में सहायक हैं। किन्तु वास्तव में अल्पमात्रा में Na^+ और K^+ कोशिका के बाहर विसरित होते हैं और इसलिये अपेक्षाकृत Na^+ और K^+ की स्थिर अन्तराकोशिकीय सांद्रता और −65 mV से −85 mV का स्थिर झिल्ली विभव उद्दीपन के अभाव में बना रहता है। इस विवरण को पढ़कर आप नोट करेंगे कि सक्रिय वहन क्रियाएं क्रिया विभव के जनन में प्रत्यक्षरूप से सम्मिलित नहीं हैं। विशाल अक्षतंतु जिनको कि सोडियम पम्प को भंग करने के लिये सायनाइड विष दे दिया गया था कई घंटों तक सामान्य उत्तेजना और क्रियाविभव दिखलाते रहे किन्तु अन्त में यह प्रणाली समाप्त हो जाती है क्योंकि Na^+ कोशिका में जमा होता जाता है। इसलिये क्रिया विभव के समय Na^+/K^+ पम्प Na^+ और K^+ के विसरण की सान्द्रण प्रवणता बनाये रखने के लिये आवश्यक है।

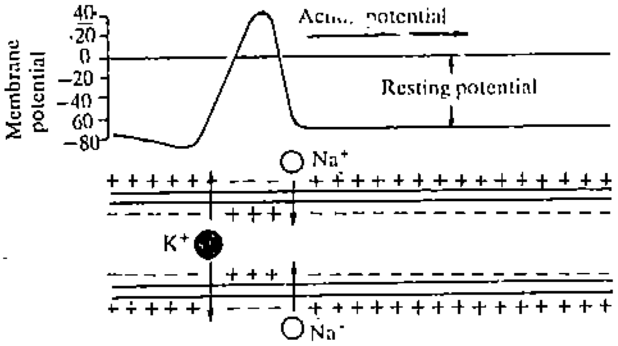

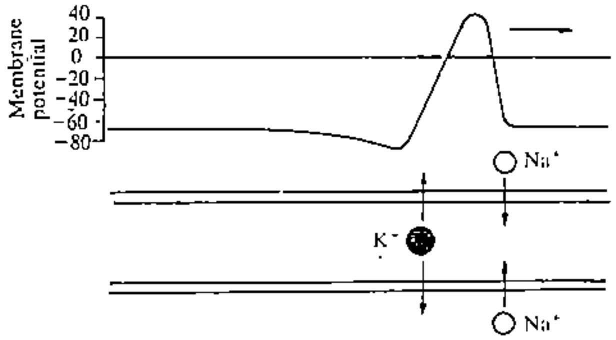

चित्र 9.6 : अक्षतंतु में क्रिया विभव का अभिलेखन
a) विद्युतीय परिघटनाएँ और उससे सम्बद्ध आयन पारगम्यता के परिवर्तन दर्शाता है।
b) में क्रिया विभव की स्थिति (a) के लगभग 4 मिली सेकेण्ड बाद है।

9.3.3 पूर्ण या शून्य अनुक्रिया

बहुत क्षीण उद्दीपन के फलस्वरूप क्रिया विभव नहीं होता है। उत्तेज्यता के जनन के लिये उद्दीपन की एक विशेष प्रबलता होनी चाहिए। यह प्रभावसीमा मान है जिसके नीचे क्रिया विभव नहीं होता है। यदि एक बार जनन हो जाय तो क्रिया विभव का माप उद्दीपन के परिमाण या आयाम (magnitude or amplitude) से प्रभावित नहीं होता है। यदि हम उद्दीपन को दुगुना या तिगुना भी कर दें क्रिया विभव वह ही बना रहता है। उद्दीपन या तो पूर्ण अनुक्रिया करता है या शून्य। शरीर विज्ञान में इस प्रकार की अनुक्रिया **पूर्ण या शून्य अनुक्रिया** (all or none) कहलाती है। जब तंत्रिकाणु को प्रभावसीमा मान से अधिक प्रबलता का उद्दीपन लगाया जाता है तब भी समान क्रिया विभव उत्पन्न होते हैं किन्तु उनकी आवृत्ति बढ़ जाती है।

जब अक्षतंतुओं का पूरा समूह, जैसे कि तंत्रिका में, उद्दीपित किया जाएगा विभिन्न अक्षतंतु भिन्न-भिन्न आवृत्तियों से उद्दीपित होंगे। क्षीण तीव्रता वाला उद्दीपन निम्न प्रभावसीमा मान वाले तंतुओं को सक्रिय करेगा और जैसे-जैसे उद्दीपन की तीव्रता बढ़ाई जाएगी और अधिक तंतु सक्रिय होते जायेंगे। यह क्रिया **रिक्रूटमेन्ट** (recruitment) कहलाती है।

तंत्रिका आवेग का एक और महत्वपूर्ण गुण जिसे नोट किया जाना चाहिए यह है कि जिस समय अक्षतंतु झिल्ली का एक टुकड़ा क्रिया विभव उत्पन्न कर रहा होता है वह दूसरे उद्दीपन से अनुक्रिया करने में अक्षम होता है अर्थात् वह दूसरे उद्दीपन से प्रतिरक्षित रहता है। यदि दूसरा उद्दीपन उस समय दिया जाए जब Na^+ द्वार खुले होते हैं तब झिल्ली **निरपेक्ष प्रतिरक्षित अवधि** (absolute refractory period) में रहती है किन्तु यदि उद्दीपन उस समय दिया जाए जब K^+ द्वार खुले होते हैं झिल्ली **सापेक्ष प्रतिरक्षित अवधि** (relative refractory period) में रहती है और उसका विध्रुवण तभी हो सकता है जब कि उद्दीपन अति प्रबल हो।

9.3.4 चालन

क्रिया विभव अक्षतंतु के एक विन्दु पर होता है। पर हम यह जानते हैं कि तंत्रिकीय आवेग (neurological impulse) स्थिर नहीं होते हैं वे तंत्रिकाणु में चलते हैं। एक विन्दु पर क्रिया विभव तंत्रिकाणु को दूसरे विन्दु पर कैसे उत्तेजित कर सकता है? क्रिया विभव स्वयम् में भी एक उद्दीपन है। Na^+ जोकि विध्रुवण के पश्चात अक्षतंतु में तेजी से घुसते हैं **केबिल गुणों** (cable properties) द्वारा आसपास के क्षेत्र जिसमें झिल्ली विभव अभी भी -70 mV है में चालित होते हैं। कोशिका द्रव्य में विद्युतीय आवेशों के संचरण की सीमा एक से दो मिली मीटर है। ज़ब आसपास के क्षेत्र में उद्दीपन प्रभाव सीमा मान का हो तो वह भी क्रिया विभव उत्पन्न करता है। इसलिए क्रिया विभव **स्वप्रेक्षित** (self propogating) घटना है।

अमाइलिन युक्त अक्षतंतु में चालन

झिल्ली के उस क्षेत्र जहाँ क्रिया विभव स्पाइक (action potential spike) उत्पन्न हो गई होती है ध्रुवण उलट जाता है अर्थात् उसकी धनावेशित अन्दर की सतह की तुलना में बाहरी सतह ऋणावेशित हो जाती है। इस विध्रुवित क्षेत्र के आसपास बाहरी धनावेशित सामान्य ध्रुवित क्षेत्र होता है। झिल्ली के विध्रुवण के समय जो Na^+ कोशिका के अन्दर आते हैं अक्षतंतु के नव उत्तेजित क्षेत्र में क्षण मात्र के लिये एक प्रबल धारा लाते हैं। परिपथ को पूरा करने के लिये इस धारा को झिल्ली के अनुत्तेजित क्षेत्र के पार, सोडियम अन्तर्वाह क्षेत्र के आगे तक बहना चाहिए जहाँ कि वह पुनः एक और क्रिया विभव को उद्दीपित कर सके और सक्रिय क्षेत्र में पुनः वापिस वह जाय (देखिये चित्र 9.7)।

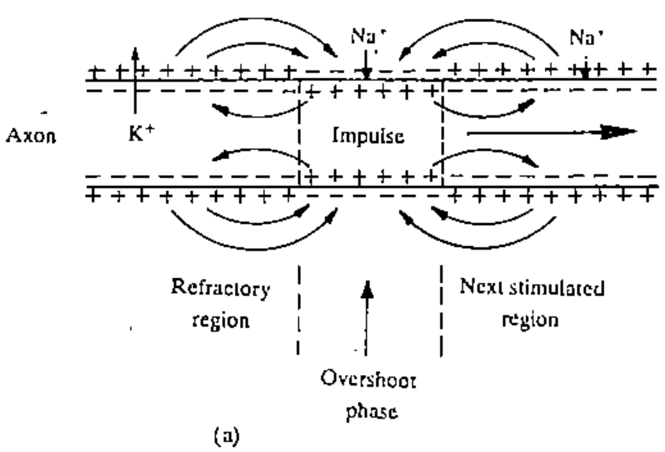

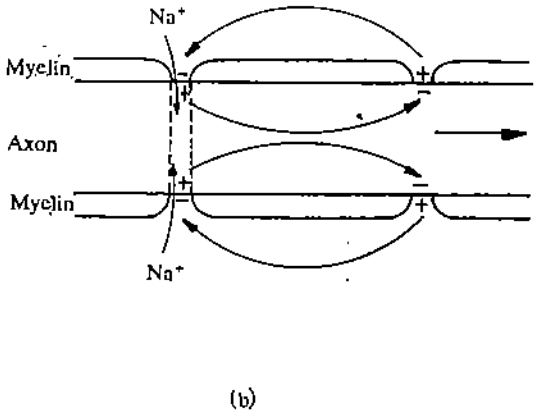

चित्र 9.7 : क्रिया विभव का चालन (a) अमाइलिन आवृत तंत्रिका तंतु मे, (b) माइलिनआवृत तंत्रिका तंतु में।

अक्षतंतु के अन्दर उद्दीपित क्षेत्र में प्रवेश करने वाली कुछ धारा अक्षतंतु के पीछे की ओर फैलती है अर्थात् उस दिशा में जहाँ से आवेग उत्पन्न हुआ था किन्तु झिल्ली उत्तेजित नहीं होती है क्योंकि वह प्रतिरक्षित अवस्था में होती है। उस क्षेत्र में पोटैशियम मार्ग अभी भी खुले रहते हैं और इस धारा को कोशिका के बाहर K^+ के वहिर्वाह के रूप में ले जाते हैं। इसलिये अक्षतंतु की लम्बाई में क्रिया विभवों का वास्तव में चालन नहीं होता किन्तु पुनर्जनन होता है। इसलिये कहा जाता है कि वे **ह्रास के बिना चालित होते हैं।**

अति तीव्र चालन की जैविक भूमिका स्वयम् विदित है। यह सदैव चलन में परभक्षियों से बचन के लिये त्वरित अनुक्रिया से सम्बन्धित होता है। उदाहरण के लिए, 25 मीटर तक के दायरे में तिलचट्टे के उदर के सिरे पर हवा फूँकी जाने तब भी वह प्रतिक्रिया करता है। यह अति तीव्र अनुक्रियाओं में से एक है।

यदि अक्षतंतु अपेक्षाकृत स्थूल हो तो अमाइलिन आवृत तंतुओं में चालन का प्रसार अपेक्षाकृत द्रुत होता है क्योंकि तंतुओं की केविल गुणों द्वारा चालन करने की क्षमता बढ़ते हुए व्यास के साथ सुधरती है जैसा कि स्क्विड के विशाल अक्षतंतुओं में उसी प्राणी के सामान्य अक्षतंतुओं की तुलना में देखा जा सकता है।

माइलिन आवृत अक्षतंतुओं में चालन

भाग 9.2 में हमने आपको बताया कि माइलिन आच्छाद अक्षतंतु के लिये एक रोधक बनाता है। जिससे झिल्ली के आरपार Na^+ और K^+ का गमन रुकता है। इसलिये यदि यह माइलिन आच्छाद सतत होता तो किसी भी क्रिया विभव का जनन नहीं होता। माइलिन में रिक्तियाँ या रेनविये के पर्व होते हैं।

क्योंकि अक्षतंतुओं के केवल गुण विध्रुवीकरण को बहुत कम दूरियों (1-2 mm) तक चालित कर सकते हैं इसलिये रेनवियें के पर्व पास-पास होने चाहिए (यथार्थ में वे 1 mm) की दूरी पर होते हैं)।

अध्ययनों से पता चला है कि Na^+ मार्ग पर्वों पर धनीभूत होते हैं और दो पर्वों के बीच के क्षेत्र में नहीं पाये जाते हैं इसलिये क्रिया विभव केवल रेनवियें के पर्वों पर होता है और पर्व से पर्व पर उछलता रहता है (चित्र 9.8)। इसको **वल्गी चालन** (saltatory conduction) कहते हैं। पर्वों के बीच विध्रुवीकरण का प्रसार बहुत तीव्र गति से होता है और कम क्रिया विभव की आवश्यकता होती है। इसलिये चालन की दर अमाइलिन आवृत तंतुओं की अपेक्षा तीव्र होती है।

माइलिनीकरण के बिना यदि इतने उच्च चालन वेग को बनाए रखना हो तो मानव में दृष्टि तंत्रिका की मोटाई की कल्पना कीजिये। दृष्टि तंत्रिका का व्यास 3 μm होता है यदि उसमें माइलिनीकरण के बिना उतनी ही संख्या में तन्तु रखने हों और उसी गति से चालन करना हो जैसा सामान्यतः होता है तब इसका व्यास 300 mm होना चाहिये।

माइलिन आवृत तंतुओं की इस विशेष संरचना और चालन की विधि के कारण कशेरुकियों की प्रेरक तंत्रिकाओं में आवेगों का तीव्र चालन होता है यद्यपि यह तंत्रिकाएं पतली होती हैं। माइलिन आवृत तंतुओं का सबसे बड़ा लाभ उनका पतला होना है और इसीलिये उनसे रचित उच्च चालन गतियों वाला अति जटिल तंत्रिका तंत्र भी बहुत स्थान नहीं घेरता।

बोध प्रश्न 2

क) अक्षतंतु का विध्रुवीकरण उत्पन्न होता है:
   i) Na^+ के भीतर की ओर विसरण के कारण
   ii) K^+ के भीतर की ओर विसरण के कारण
   iii) K^+ के भीतर की ओर सक्रिय गमन के कारण
   iv) K^+ के सक्रिय उत्सारण के कारण

ख) क्रिया विभव के समय अक्षतंतु का पुनः ध्रुवण उत्पन्न होता है:
   i) N^+ के भीतर की ओर विसरण के कारण
   ii) कोशिका के बाहर Na^+ के सक्रिय गमन के कारण
   iii) कोशिका के बाहर K^+ के सक्रिय गमन के कारण
   iv) K^+ के बाहर की ओर विसरण के कारण

ग) यदि हम अक्षतंतु को दिये गये उद्दीपन की प्रबलता को बढ़ा दें तो क्या होगा?

घ) रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये:
   i) रेनवियें के पर्वों के बीच क्रिया विभव का उछलना .... कहलाता है।
   ii) क्रिया विभवों का चालन .... के बिना होता है।
   iii) .... के समय Na^+ अन्तर्वाह द्वारा प्रेरित विध्रुवीकरण का .... प्रसार आसपास के क्षेत्रों का .... करने में सहायक होता है।

9.4 अन्तर्ग्रथनी संचरण

अब जब आप जान गये हैं कि अक्षतंतु में तंत्रि आवेग का जनन और चालन किस प्रकार होता है हम तंत्रिकातंत्र की कार्य प्रणाली के सबसे महत्वपूर्ण पक्ष पर आते हैं। अक्षतंतु के सिरे तक पहुँचने के पश्चात् सूचना का एक तंत्रिकाणु से दूसरे तंत्रिकाणु या दूसरी कोशिका तक स्थानान्तरण।

इस इकाई के आरम्भ में हमने उल्लेख किया था कि अक्षतंतुओं के सिरे सूक्ष्म प्रवर्धों में विभाजित रहते हैं जो कि दूसरी कोशिकाओं से अन्तर्ग्रथन बनाते हैं। आप यह भी जानते हैं कि अन्तर्ग्रथन वे क्षेत्र हैं जहाँ अक्षतंतु अंत्य की झिल्ली दूसरे तंत्रिकाणु, पेशी या ग्रंथि के बहुत ही पास होती है। पेशी कोशिका के समीप अन्तर्ग्रथन तंत्रिका पेशी सन्धि (neuromuscular junction) कहलाता है।

अन्तर्ग्रथन के पार सूचना दो प्रकार से स्थानांतरित होती है या तो रसायनों द्वारा या विद्युत द्वारा। परन्तु सामान्यतः प्रेषण रासायनिक होता है और यह **तंत्रिसंचारी** (neurotransmitter) कहे जाने वाले रसायनों द्वारा होता है। अक्षतंतुओं के सिरे **अन्तर्ग्रथनी घुंडी** (synaptic knob) या बटन (boutons = buttons) कहलाते हैं (चित्र 9.8)। अन्तर्ग्रथनी घुंडियों की झिल्लियाँ दूसरी

कोशिका की झिल्ली को स्पर्श नहीं करती किन्तु एक दसूरे से 20 नैनोमीटर (nm) की दूरी पर होती हैं। यह स्थान **अन्तर्ग्रथनी विदर** (synaptic cleft) कहा जाता है। अक्षतंतु घुंडी को **पूर्व अन्तर्ग्रथनी** (presynaptic) और पार्श्वतंतु या दूसरी कोशिका को जिससे वह संचार करती है **पश्चअन्तर्ग्रथनी** (postsynaptic) कहा जाता है।

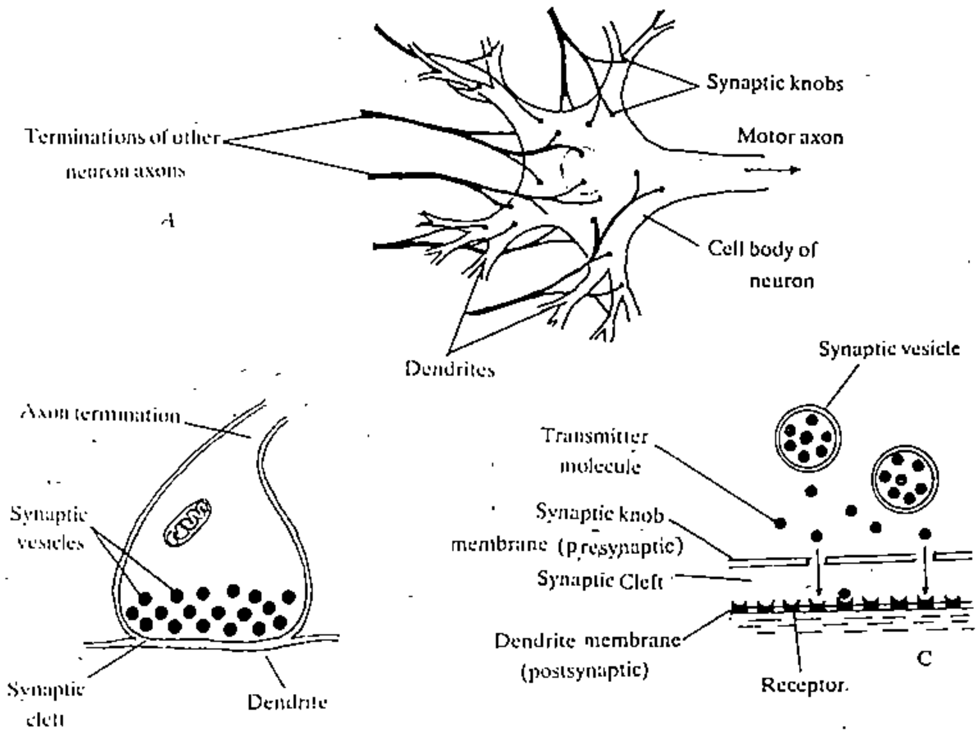

चित्र 9.8 : तंत्रिका अंतों के पार प्रेषण।

a) बहुत से अंत्य अन्तर्ग्रथनी घुंडियों से युक्त तंत्रिकाणु की कोशिका काय;
b) विवर्धित अन्तर्ग्रथनी घुंडी;
c) अन्तर्ग्रथनी विदर जैसा वह उच्च विभेदन एलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी में दिखलाई पड़ेगा। तंत्रिसंचारी विदर के पार गमन करके पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका झिल्ली में स्थित ग्राहियों से बन्धित होते हैं।

अन्तर्ग्रथनी विदर का रूप और चौड़ाई सम्पूर्ण प्राणी जगत में विलक्षणरूप से एक समान होते हैं किन्तु प्रत्येक विदर में विमुक्त सारे रसायन अभी नहीं जाने जा सके हैं। अन्तर्ग्रथनी घुंडी में बड़ी संख्या में 20-100 नैनोमीटर (नैनोमीटर (nm) = 10^{-9} मीटर) व्यास की छोटी पुटिकाएं पाई जाती हैं। इन पुटिकाओं में तंत्रिसंचारी भरे होते हैं।

तंत्रिसंचारी अणुओं का संश्लेषण पूर्व अन्तर्ग्रथनी अंत्यों में उनके पूर्वगामी अणुओं से होता है। उदाहरणार्थ **ऐसीटिलकोलिन** का संश्लेषण कोलिन और **ऐसीटिल कोएंज़ाइम ए** से होता है। यह प्रतिक्रिया **कोलिन एसीटिल-ट्रांसफरेस** एंज़ाइम से उत्प्रेरित होती है। नव संश्लेषित एसीटिलकोलीन का भंडारण अन्तर्ग्रथनी पुटिकाओं के अन्दर होता है। प्रत्येक पुटिका में तंत्रिसंचारी के 100,000 से 50,000 अणु हो सकते हैं। एक पुटिका में तंत्रिसंचारी की सम्पूर्ण मात्रा तंत्रिसंचारी का एक क्वांटम (quantum) बनाता है।

पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली में आणविक ग्राही होते हैं जो कि विशेषरूप से विमुक्त तंत्रिसंचारी अणुओं से पारस्परिक क्रिया करते हैं। तंत्रिसंचारी अणुओं का ग्राहियों से बन्धन आयन मार्गों को सक्रिय कर देता है जिससे झिल्ली पारगम्यता में परिवर्तन आ जाते हैं। पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका में उत्तेजक और निरोधक दोनों प्रकार के ग्राही हो सकते हैं। उत्तेजक ग्राहियों का सक्रियण झिल्ली का विध्रुवीकरण कर उत्तेजक अनुक्रिया का जनन करता है जब कि निरोधक ग्राहियों का उत्तेजन झिल्ली का अतिध्रुवण कर संकेतों की उत्पत्ति का निरोध करता है।

9.4.1 रासायनिक अन्तर्ग्रथनी संचरण

पूर्वअन्तर्ग्रथनी अन्त्य पर किसी आवेग के आगमन से झिल्ली का विध्रुवीकरण हो जाता है। विध्रुवीकरण के फलस्वरूप कैल्सियम मार्ग खुलकर कैल्सियम आयनों को इन मार्गों से चलकर अक्षतंतु अन्त्यों तक पहुँचने देते हैं। Ca^{2+} की बढ़ी हुई सान्द्रता के कारण अन्तर्ग्रथनी पुटिका का स्थानान्तरण (प्रणोदन) पूर्वअन्तर्ग्रथनी झिल्ली की ओर होता है। अन्तर्ग्रथनी प्लाज्मा झिल्ली से अन्तर्ग्रथनी पुटिकाएं अभिविन्यस्थ और संरेखित हो जाती हैं। अन्त में कई पुटिकाएं एक दूसरे से संलयित होती हैं जिसके फलस्वरूप उनके तंत्रिसंचारी एक्सोसाइटोसिस (exocytosis) द्वारा अंन्तर्ग्रथनी विदर में विमुक्त हो जाते हैं। अपने तंत्रिसंचारी को मुक्त करने के पश्चात्, अन्तर्ग्रथनी पुटिकाएं झिल्ली में विलीन हो जाती हैं नई पुटिकाएं अन्तर्ग्रथनी झिल्ली के अन्तर्वलन से बनती हैं और तंत्रिसंचारी से भरी होती हैं तथा पुनः उपयोग में आ सकती हैं। चित्र 9.9 में यह क्रिया संक्षेप में दिखलाई गई है।

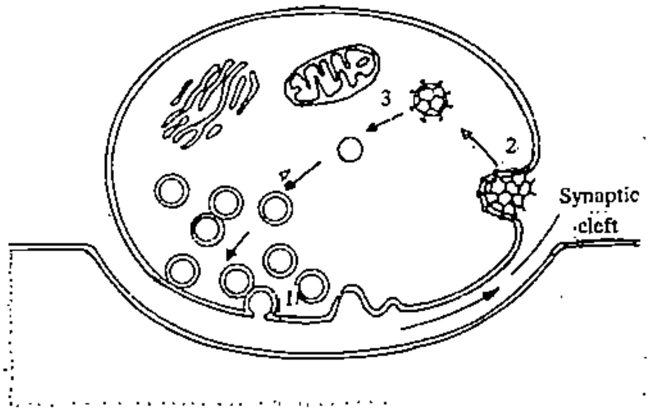

चित्र 9.9 : संचारी विमोचन की पुटिका अवधारणा

1) पुटिका का अन्तर्ग्रथनी झिल्ली से संगलित होकर संचारी पदार्थ का विमोचन करना।

2) झिल्ली से एनडोसाइटोसिस (endocytosis) द्वारा पुटिका का अलग होना।

3 व 4) नई पुटिका का संचारी पदार्थ से भरा जाना।

विमुक्त तंत्रिसंचारी का विदर के पार विसरण होता है और विशेष ग्राही अणुओं से बन्धन होता है। यह क्रिया मिली सेकेन्ड के अंशमात्र में होती है। तंत्रिसंचारी के पश्चअन्तर्ग्रथनी ग्राही से बन्धन के कारण आयन मार्ग खुल जाते हैं। इसलिये इन मार्गों के द्वार **रासायनिक** होते हैं न कि विभव पर निर्भर। पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली के आरपार आयनों के प्रवाह के कारण पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली के विभव में परिवर्तन आ जाता है इस प्रकार पश्चअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणु में एक नये संकेत (signal)—PSP पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव (postsynaptic potential)—का जन्म होता है। केवल एक अन्तर्ग्रथन से सूचना के स्थानान्तरण का हमारा विवरण सरल लगता है और तंत्रिका तंत्र के कार्यों की जटिलता को नहीं दर्शाता है। आपको स्मरण रखना चाहिए कि अधिकतर अक्षतंतु अपने सिरों पर बहुशाखित होते हैं और वे बड़ी संख्या में दूसरे तंत्रिकाणुओं से जुड़ सकते हैं। इसी प्रकार एक तंत्रिकाणु बहुत से अक्षतंतुओं की शाखाओं को ग्रहण करेगा जोकि उसके कोशिका काय या पश्चतंतु पर समाप्त होती है (चित्र 9.8 पुनः देखिये)।

कुछ विशिष्ट तंत्रिकाणु अन्तर्ग्रथनी घुंडियों से इतने अधिक संघनित रूप से ढके रहते हैं कि तंत्रिकाणु में 10,000 अन्तर्ग्रथनी सम्बन्धन हो सकते हैं। आप केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की जटिलता का मूल्यांकन तभी कर सकेंगे जब आप पूर्व वर्णित तथ्य के साथ यह भी ध्यान में रक्खें कि तंत्रिकाणु कितनी बड़ी संख्या में होते हैं—यह 10^{11} से अधिक होते हैं। यह सम्बन्धन बेतरतीब नहीं होते किन्तु अति विशिष्ट होते हैं और इनका अध्ययन तंत्रिका शरीर वैज्ञानिकों और तंत्रिका क्रियाविधि वैज्ञानिकों ने साविस्तार किया है।

9.4.2 पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव

आइये अब हम पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव की विस्तार से व्याख्या करें। यह देखा गया है कि कुछ अक्षतंतु निरोधक आवेगों को और कुछ उत्तेजक आवेगों को तंत्रिकाणु तक ले जाते हैं। पर आपको यह अवश्य याद रखना चाहिए कि उत्तेजक और निरोधक आवेगों में आवेगों के वहन में कोई अन्तर नहीं होता, क्रिया विभव एक समान होता है किन्तु पूर्वअन्तर्ग्रथनी अंत्यों पर भिन्न-भिन्न रासायनिक तंत्रिसंचारियों के विमोचन के कारण विपरीत प्रभाव होते हैं। पूर्वअन्तर्ग्रथनी झिल्ली पर कौन से आयन द्वार खुलेंगे यह तंत्रिकासंचारी के प्रकार पर निर्भर है।

आइये तंत्रिकासंचारी ऐसीटिलकोलिन जिसका तंत्रिपेशी अन्तर्ग्रथनों पर अध्ययन हुआ है के उदाहरण से देखें कि पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव किस प्रकार कार्य करता है। ऐसीटिलकोलिन से पारस्परिक क्रिया के कारण Na^+ और K^+ दोनों द्वार खुल जाते हैं और दोनों आयनों की धारा का एक ही समय पर प्रवाह होने लगता है। विध्रुवीकरण पर प्रभाव का आधिक्य होता है और झिल्ली विभव -25 मिलीवोल्ट के मान पर आ जाता है जो कि 0 के अपेक्षाकृत पास है और क्रिया विभव का लाक्षणिक अतिलंघन नहीं होता है। इसके कारण तंत्रिसंचारी क्रिया विभव नहीं उत्पन्न कर सकता केवल विध्रुवीकरण करता है जो कि अन्तर्ग्रथन के स्थल से थोड़ी दूरी पर क्रिया विभव उत्पन्न करता है। अन्तर्ग्रथन पर PSP का परिमाण विमुक्त तंत्रिसंचारी की मात्रा पर निर्भर है (देखिये बॉक्स 9.1)। ऐसीटिलकोलिन को शीघ्र ही हट जाना चाहिये नहीं तो सतत PSP होता रहेगा। अन्तर्ग्रथन पर पाया जाने वाला एंज़ाइम ऐसीटिलकोलिन एस्टेरेज (acetylcholine esterase) तंत्रिसंचारी को हटा देता है।

यदि पहले आवेग के समाप्त होने के पूर्व दूसरा आवेग पहुँच जाए तो वह पहले आवेग से जुड़कर अक्षतंतु गिरिका पर अपेक्षाकृत प्रबल क्रिया विभव उत्पन्न करता है (चित्र 9.1 को पुनः देखिये)। इसको **कालगत संकलन** (temporal summation) कहते हैं।

PSP अक्षतंतु में आवेग आवृति की अभिव्यक्ति है। PSP **स्थानगत संकलन** (spatial summation) भी दिखाता है क्योंकि विभव झिल्ली के आसपास के क्षेत्रों में फैलकर झिल्ली विभव में बदलाव ला सकता है और यदि एक नया PSP निकटवर्ती अन्तर्ग्रथन पर आ जाए तो वह विद्यमान PSP से जुड़ जाएगा। यह दो प्रकार के संकलन कालगत और स्थानगत प्रत्येक तंत्रिकाणु और इसलिए सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र में आकलन का आधार बनाते हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है सामान्यतः तंत्रिकाणु में उत्तेजक और निरोधक दोनों ही अन्तर्ग्रथन होते हैं। **उत्तेजक पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव** या **एक्साइटेटरी पोस्टसिनैप्टिक पोटेन्शिलय** (EPSP) सामान्यतः विध्रुवीकरण का रूप है जोकि तंत्रिसंचारी और ग्राही की पारस्परिक क्रिया जिसमें Na^+ और K^+ दोनों के ही मार्ग खुल जाते हैं (जैसा ऐसीटिलकोलिन के उदाहरण में होता है) के कारण होता है किन्तु यदि तंत्रिसंचारी-ग्राही पारस्परिक क्रिया केवल K^+ मार्गों को ही खोलेंगी तो कुछ K^+ कोशिका के बाहर निकलेंगे और झिल्ली विभव बढ़ेगा (अतिध्रुवीकरण)। विभव में यह बढ़ोत्तरी **निरोधक पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव** या **इनहिबिटरी पोस्टसिनैप्टिक पोटेन्शियल** (IPSP) है। यदि तंत्रिसंचारी द्वारा खोला गया मार्ग Cl^- के लिये हो तब भी IPSP व्यक्त होगा।

इस प्रकार उत्तेजक (EPSP) और निरोधक (IPSP) पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका की सतह पर बहुत से बिन्दुओं पर सदा बनते रहते हैं। इन दो प्रकार के पश्चअन्तर्ग्रथनी विभवों का शुद्ध झिल्ली विभव पर विरोधी प्रभाव होगा। यदि अक्षतंतु गिरिका पर पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव इतनी मात्रा में है कि प्रभाव सीमा मान तक पहुँच जाता है तो क्रिया विभव आरम्भ होकर ग्राही तंत्रिकाणु के अक्षतंतु में चालन करता है। यदि निरोधक निवेश अधिक होते हैं तो क्रिया विभव की उत्पत्ति नहीं होती है। इस प्रकार अन्तर्ग्रथन तंत्रिका तंत्र की संचारण कड़ी में प्रसारण स्टेशन की भाँति कार्य करते हैं।

बॉक्स 9.1

अन्तर्ग्रथनी प्रेषण की क्रिया तब स्पष्ट हुई जब एकल तंत्रिकाणु से विद्युतीय आवेगों को रिकॉर्ड करने की विधियाँ निकाल ली गईं। बहुत पतले काँच के पिपेट, जिनके सिरे का व्यास एक माइक्रोमीटर से कम होता है, बनाये जाते हैं। इनको सूक्ष्म एलेक्ट्रोड बनाने के लिये नमक के घोल (सान्द्र पोटैशियम क्लोराइड) से भरा जाता है। इस सूक्ष्म एलेक्ट्रोड सिरे और एक सामान्य सतह के बीच विभव परिवर्तनों को रिकॉर्ड किया जा सकता है। जब सिरा तंत्रिकाणु की ओर चलाया जाता है तब पहले तो यह वही विभव दिखलाता है जो कि सामान्य सतह का होता है किन्तु जैसे ही यह तंत्रिकाणु झिल्ली का वेधन करता है यह सतह से अपेक्षाकृत ऋणात्मक विभव दिखलाता है। तात्पर्य यह है कि झिल्ली की बाहरी सतह उसकी भीतरी सतह की तुलना में धनावेशित है। ऐसा आभास होता है कि झिल्ली पिपेट के चारों ओर सील हो जाती है और तंत्रिकाणु कई घंटों तक सामान्य रिकॉर्डिंग देता रहता है। दो या तीन मार्गों से पिपटों का प्रयोग करके जिस स्थल पर रिकॉर्ड किया जा रहा हो वहाँ सूक्ष्म मात्रा में विविध रसायन लगाना संभव है।

इस तकनीक द्वारा अन्तर्ग्रथन की परिघटनाओं का अध्ययन किया जा सकता है। आवेग के आने पर इससे पूर्व कि पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली के विभव में परिवर्तन आए मिली सेकेन्ड के अंशमात्र का विलम्ब होता है। यह पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव पहले बहुत तेजी से बढ़ता है और अपेक्षाकृत धीरे-धीरे घटता है।

9.4.3 विद्युतीय अन्तर्ग्रथनी प्रेषण

जैसा कि ऊपर विवरण में दिया गया है रासायनिक अन्तर्ग्रथनी प्रेषण में पूर्वअन्तर्ग्रथनी अंत्यों से रासायनिक तंत्रिसंचारी का स्रावण अन्तर्निहित है जिससे कि पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली की पारगम्यता प्रभावित होती है और फलस्वरूप पश्चअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणु में क्रिया विभव उत्पन्न होता है। विद्युतीय प्रेषण की क्रियाविधि में पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका को उस प्रभावसीमा जिससे क्रिया विभव का जन्म होता है तक विध्रुवीकरण करने के लिए पूर्वअन्तर्ग्रथनी अंत्यों से पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली तक आयनी धारा (ionic current) का परोक्ष विस्तार होता है।

विद्युतीय अन्तर्ग्रथन की सूक्ष्म संरचना तंत्रिसंचारी अन्तर्ग्रथनों से भिन्न होती है। विद्युत अन्तर्ग्रथन में पूर्वअन्तर्ग्रथनी और पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली के मध्य कोशिकाबाह्य रिक्तियाँ बहुत छोटी होती हैं (लगभग 2 नैनोमीटर)। इस प्रकार कोशिका झिल्लियाँ बहुत पास-पास होती हैं और दो अन्त्य झिल्लियों का परस्पर प्रतिरोध भी घटा रहता है। इसके अतिरिक्त विदर की 2-3 नैनोमीटर चौड़ाई बड़े नालाकार प्रोटीन अणु, जो कि पूर्वअन्तर्ग्रथनी और पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्लियों में धंसे रहते हैं, से सेतु बन्धित रहती है इस प्रकार मार्ग बनते हैं जिनके द्वारा अकार्बनिक आयन आ जा सकते हैं। यह इस प्रकार से कोशकीय अविच्छिन्नता का संकेत है। इन आकारिकी लक्षणों के कारण विद्युत धारा का पूर्वअन्तर्ग्रथनी से पश्चअन्तर्ग्रथनी स्थलों की ओर सरलता से बहाव सम्भव हो जाता है और पूर्वअन्तर्ग्रथनी से पश्चअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणु तक विभव के परिवर्तनों में कोई विलम्ब नहीं होता। इस प्रकार दो तंत्रिकाणु विद्युतीय दृष्टि से सतत् हो जाते हैं। विद्युतीय अन्तर्ग्रथन दोनों दिशाओं में उतनी ही सुचारूता से प्रेषण कर सकता है। किन्तु कुछ विद्युत अन्तर्ग्रथनों में यह पाया गया है कि धारा एक दिशा में दूसरी दिशा से अपेक्षाकृत अधिक सरलता से प्रवाहित होती है। इसके विपरीत रासायनिक अन्तर्ग्रथन में अन्तर्ग्रथनी विदर की दूरी पूर्वअन्तर्ग्रथनी धारा को पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली को पार करने देने के लिये बहुत अधिक (20nm) होती है।

9.4.4 अन्तर्ग्रथनों के गुण और कार्य

पूर्वअन्तर्ग्रथनी अंत्यों के विध्रुवीकरण और पश्चअन्तर्ग्रथनी अनुक्रिया के सबसे पहले प्रगट होने में अन्तराल होता है। इस अन्तराल को **अन्तर्ग्रथनी विलम्ब** (synaptic delay) कहते हैं।

अन्तर्ग्रथन तंत्रिकोशिकीय संकेतों के समाकलन का मूल स्थल है। अन्तर्ग्रथन वह स्थल भी है जहाँ पूर्व क्रियाओं के फलस्वरूप कार्य सम्बन्धी गुणों में परिवर्तन आ जाते हैं। उदाहरणार्थ अन्तर्ग्रथन संधि के पार यदि लम्बी अवधि तक प्रेषण होता रहे तो अभिवाही निवेशों से तंत्रिकाणु की उत्तेजित होने की

प्रभाव सीमा घट सकती है। वह इंगित करता है कि यह अन्तर्ग्रथन सूचनाओं (अधिगम और स्मृति) के संग्रहण के परिवर्तन का स्थल है। इस प्रकार अन्तर्ग्रथन परिवर्त्य है, अर्थात् यह **सुघट्यता** (plasticity) दिखाते हैं।

विविध प्रकार के रसायन (औषधियाँ आदि) अन्तर्ग्रथन पर कार्य करके तंत्रिका तंत्र के व्यवहार को बदलते हैं। पश्चअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणु पूर्वअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणु से ग्रहण की गई सूचना के समाकलक हैं। विद्युत अन्तर्ग्रथन को छोड़कर अन्तर्ग्रथनी प्रेषण एक तरफी क्रिया है। अन्तर्ग्रथन कई रोगात्मक विकारों के स्थल हैं जैसे पार्किन्सनता (Parkinsonism), गंभीर पेशी दुर्वलता (myasthenia gravis) और मानसिक विकार जैसे विखंडित मनस्कता (schizophrenia)।

अभी तक हमने क्रिया विभव और अन्तर्ग्रथन पर उसके प्रभावों अर्थात् तंत्रिकासंचारी की विमुक्ति की चर्चा की। ऐसीटिलकोलिन तंत्रिसंचारी का केवल एक उदाहरण है। वहुत से अन्य शरीर क्रियात्मक सक्रिय रसायन तंत्रिका कोशिकाओं से उत्पन्न होते हैं। इनके हॉर्मोनों के रूप में गम्भीर प्रभाव होते हैं जिनका अध्ययन हम इकाई 10 में करेंगे। अगले भाग में हम तंत्रिकासंचारी के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

बोध प्रश्न 3

क) रासायनिक अन्तर्ग्रथन आवेगों का केवल एक दिशा में क्यों सम्प्रेषण करते हैं?

ख) नीचे दिये कथनों के आगे सत्य या मिथ्या लिखिए:

i) एक तंत्रिकाणु का अक्षतंतु दूसरी कोशिका से एक सन्धि, जिसे अन्तर्ग्रथन कहते हैं, द्वारा संचारण करता है।

ii) तंत्रिसंचारी पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका के क्रिया विभव द्वारा सक्रियण के फलस्वरूप विमुक्त होते हैं।

iii) तंत्रिसंचारी जव अनुक्रिया उत्पन्न कर चुकते हैं तव या तो पुनः अवशोषित हो जाते हैं या एंज़ाइमों द्वारा तोड़े जाते हैं।

iv) उत्तेजक तंत्रिसंचारी Na^+ द्वारों को खोलते हैं और निरोधक संचारी K^+ और Cl^- के द्वार खोलते हैं।

9.5 तंत्रिसंचारी

हम जानते हैं कि तंत्रिकाओं से पेशियों तक संकेतों का प्रेषण संचारी पदार्थ ऐसीटिलकोलिन द्वारा होता है। इसी प्रकार तंत्रिकाणु-तंत्रिकाणु प्रेषण भी ऐसीटिलकोलिन द्वारा होता है। किन्तु ऐसे बहुत से अन्य रसायन हैं जो तंत्रिसंचारी की भाँति कार्य करते हैं। इन में कुछ पहचान लिये गये हैं और नये बड़ी तेजी से पहचाने जा रहे हैं । इनमें से कुछ तालिका 9.2 में दिये गये है।

कोई रसायन किसी ऊतक में तंत्रिसंचारी केवल तभी कहा जा सकता है जबकि वह कुछ शर्तें पूरी करे जैसे:

- जब पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली पर लगाया जाये तो वह वही प्रभाव पैदा कर सके जो कि पूर्व अन्तर्ग्रथनी उद्दीपन करता है।
- वह पूर्वअन्तर्ग्रथनी झिल्ली से भी विमुक्त होता हो।
- उसकी क्रिया उन्हीं कारकों से वाधित हो जो प्राकृतिक प्रेषण को वाधित करते हैं।

तंत्रिसंचारी या तो ऐमीनो अम्ल टायरोसिन से (जैसे डोपामीन, नारएपीनेफ्रीन, एपीनेफ्रीन और सेरोटोनिन) या तंत्रिकीय पेप्टाइडों से व्युत्पन्न होते हैं। पेप्टाइड तंत्रिसंचारियों में एन्डॉर्फिन और एनकेफेलिन जो पीड़ा के वोध को घटाते हैं सम्मिलित हैं। इसलिये इनको प्राकृतिक उपशमक या ओपिएट (मॉर्फीन-समान पदार्थ) कहा जाता है। जो तंत्रिकाणु पीड़ा अभिग्रहण से संवद्ध हैं उनमें ग्राही अणु होते हैं जिनसे आन्तरिक उपशामक आकर जुड़ जाते हैं जिससे कि पीड़ा ग्राही पीड़ा वोध केन्द्र के तंत्रिकाणु पर अपने संचारी पदार्थ (पदार्थ P) की विमुक्ति करने में निरोधित होते हैं। इस प्रकार सूचना का मस्तिष्क को प्रसारण वाधित हो जाता है। एंडॉर्फिनों की पीड़ा नाशक प्रभाविता मॉर्फीन के समान है।

औषधियों जैसे कि मॉर्फीन, हेरोइन, मेस्कालीन आदि के विभ्रम प्रभाव उनके प्राकृतिक ओपियेटों के ग्राही स्थलों से प्रतियोगिता के कारण होते हैं। चीन में प्रचलित सूचीवेध (acupuncture) की प्राचीन विधि एन्डार्फिनों की सामान्य क्रिया से सम्बन्धित हो सकती है।

तालिका 9.2 : कुछ तंत्रिसंचारी और उनके प्रभाव (+ उत्तेजक और − निरोधक प्रभावों इंगित करता है) ।

तंत्रिसंचारी	क्रिया + या −	लक्ष्य कोशिकाएं	प्रभाव
ऐसीटिलकोलिन	+	ऐच्छिक पेशी, तंत्रि-पेशी संधि	पेशी संकुचन का उद्दीपन
	−	स्वसंचालित तंत्रिका तंत्र, कशेरुकी केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, हृदय पेशी	संकुचन की प्रभाव सीमा बढ़ा देता है।
नारएपीनेफ्रीन	+	केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के तंत्रिकाणु, जो उद्बोधन, ध्यान, मनोदशा, के लिये उत्तरदायी हैं अनैच्छिक पेशियां, ग्रंथियां	सतर्कता और ध्यान को बढ़ाता है, पेशी क्रिया के लिये तैयार करता है
डोपामीन	−	ऐसीटिलकोलिन को उत्पन्न करने वाले तंत्रिकाणु	पेशियों को सक्रिय करने वाले तंत्रिकाणु की अतिसक्रियता का रोध करता है. हीनता के कारण पार्किन्सनता में अनियंत्रित पेशी संकुचन
ग्लाइसीन	−	प्रेरक तंत्रिकाणु से ऐच्छिक पेशियों तक	अनियंत्रित पेशी संकुचन का रोध करता है।
सिरोटोनिन	−	मस्तिष्क के वह तंत्रिकाणु जो जागृत अवस्था को बनाये रखते हैं।	निद्रा को प्रेरित करता है, मनोदशा का नियमन करता है।
GABA	−	प्रेरक तंत्रिकाणु से ऐच्छिक पेशियों तक	अनियंत्रित पेशी संकुचन का रोध करता है।

तंत्रिकाणु सदैव सामान्य उस भाँति कार्य नहीं करते जैसा उन्हें करना चाहिये। यदि अन्तर्ग्रथनी विदर में ऐसे रसायन भर जाए जो सामान्य तंत्रिसंचार में बाधा डालते हैं तो घातक परिणाम हो सकते हैं (बाक्स 9.2 देखिए)।

बॉक्स 9.2

तंत्रिका विष (nerve poisons)
सामान्यतः तंत्रिका विष सर्वाधिक आविषालु (toxic) पदार्थ है। वे अति अल्प मात्रा में ऐसीटिलकोलिन की क्रिया से हस्तक्षेप कर सकते हैं और अन्तर्ग्रथन की सामान्य क्रिया विधि को ध्वस्त कर सकते हैं।

कुरारे (curare)
कुरारे दक्षिण अमेरीका के उष्ण कटिबन्धीय पौधों का प्राणघातक सारसत है। दक्षिणी अमेरिका के आदिवासी शिकारी अपने बरछों को इस तंत्रिकाविष (neurotoxin) में डुबो कर अपनी फुंकनी बंदूकों से उड़ाते हैं। कुरारे तंत्रिसंचारी स्थलों की पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्लियों पर बाधित्र करता है जिससे अन्तर्ग्रथनी विदरों पर पर्याप्त ऐसीटिलकोलिन होने के बावजूद भी पेशियाँ संकुचित होना बन्द कर देती हैं। जब श्वसन से सम्बन्धित पेशियाँ काम करना बन्द कर देती हैं तब श्वासावरोधन के कारण तुरन्त मृत्यु हो जाती है।

ऑरगेनोफॉस्फेट और तंत्रि गैस (organophosphates and nerve gas)
ऑरगेनोफॉस्फेट और तंत्रि गैस ऐसीटिलकोलिन के एंज़ाइमी निष्कासन का निरोध करते हैं जिससे कि तंत्रिसंचारी विदर में ही रह जाता है और पीड़ित व्यक्ति संस्तम्भी पक्षाघात (spastic paralysis) से कष्ट पाता है।

टिटनेस (tetanus)
टिटनेस के कारण भी संस्तम्भी पक्षाघात होता है और यह घावों में जीवाणु संक्रमण द्वारा होता है। जीवाणु से विमुक्त आविष पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली के ग्लाइसिन स्थलों को बाधित करके निरोधक अन्तर्ग्रथनों को प्रभावित करता है। पेशियाँ स्थायी संकुचन में जकड़ जाती हैं। धीरे-धीरे सारी ऐच्छिक पेशियाँ प्रभावित हो जाती हैं और पीड़ित व्यक्ति साँस लेने की क्षमता भी खो बैठता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है।

9.6 तंत्रिक परिपथ

एक जीव को अपने आन्तरिक और बाह्य पर्यावरण में सदा परिवर्तनों के कारण जितनी अनुकूलनशीलता की आवश्यकता होती है वह उसे एक तंत्रिकाणु की सरल पूर्ण या शून्य क्रियाओं से नहीं मिल सकती। पर्यावरण के विषय में सूचना जीव के भीतर उत्पन्न संकेतों के साथ समाकलित हो जाती है और प्रेरक को समन्वित अनुक्रिया जागृत करने के लिये प्रेषित की जाती है। इस प्रकार प्रत्येक तंत्रिकाणु संचार परिपथ में एक इकाई बनाता है।

जाति वंश वृक्ष (phylogenetic) के विभिन्न शाखाओं पर प्राणी समुदायों के तंत्रिका के लक्षणों का सर्वेक्षण स्पष्ट करता है कि एक लम्बी विकासीय प्रक्रिया ने मानव मस्तिष्क की जटिल संरचना बनाई है। प्रोटोज़ोअन एककोशिकीय जीव हैं और स्पष्ट है कि उनमें तंत्रिका तंत्र नहीं हो सकता है। प्रोटोज़ोअन कोशिका झिल्ली के विद्युतीय गुणों का अध्ययन करने से उनमें तंत्रिका कोशिकाओं से कई समानताएँ, जैसे क्रिया से सम्बद्ध विद्युतीय विभव परिवर्तन और धाराएँ दिखाई पड़ती हैं। तंत्रिकीय रूप से सीलेन्ट्रेट बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे प्रथम प्राणी हैं जिनमें वास्तविक तंत्रिका तंत्र पाया जाता है। सीलेन्ट्रेट का तंत्रिका तंत्र सारी शरीर भित्ति पर वितरित तंत्रिकाणुओं के विसृत जाल का बना होता है। इस प्रकार का सरलतम आदि तंत्रिका तंत्र **तंत्रिका जाल** (nerve net) कहलाता है जिसमें कि तंत्रिकाणु अधिकतर यादृच्छिक रूप से फैले रहते हैं (चित्र 9.10)। आदि होते हुए भी यह विन्यास अरीय सममित (radially symmetrical) प्राणी, जिसका भोजन और शत्रु सब दिशाओं से आ सकते हैं, की आवश्यकताओं को पूरा करता है। प्राणी की प्रतिक्रिया उद्दीपन की प्रबलता पर निर्भर है हल्के उद्दीपन पर शरीर का थोड़ा भाग प्रतिक्रिया करता है और तीव्र उद्दीपन पर सम्पूर्ण प्राणी अनुक्रिया करता है। तंत्रिकाणुओं के इस प्रकार के विसृत आद्यसंगठित तंत्र से विकास द्वारा जटिल संगठित तंत्रिका तंत्र जैसे मानव का तंत्रिका तंत्र बने। किन्तु स्थानीय तंत्रिका जालों का तंत्र अब भी निम्न अकशेरुकियों में पाया जाता है और यहाँ तक की कई अतिविकसित अकशेरुकी वर्गों और कशेरुकियों की आँतों में भी पाया जाता है। उच्च जीवों के विकास के साथ-साथ तंत्रिका जाल विन्यास क्रमशः सघन केन्द्रस्थित तंत्रिका तंत्र से प्रतिस्थापित होता गया। यह तंत्रिका तंत्र संवेदी अंगों आदि से सम्बन्धित तंत्रिकाओं की विस्तृत प्रणाली और एक मस्तिष्क तथा मेरूरज्जु से निर्मित था।

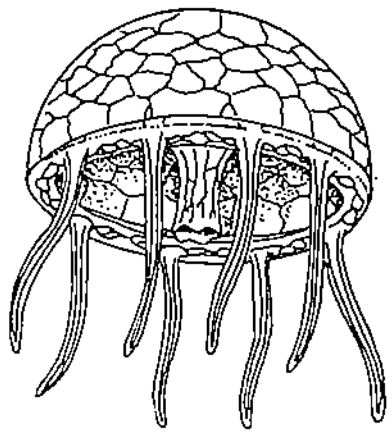
Jellyfish

चित्र 9.10 : जैली फिश में तंत्रिका जाल।

कशेरुकी तंत्रिका तंत्र दो भागों केन्द्रीय और परिधीय तंत्रिका तंत्र में विभाजित किया जा सकता है। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र मस्तिष्क और मेरुरज्जु से बना होता है। लगभग सब ही तंत्रिकाणुओं की पूरी कोशिका काय और अधिकतर तंत्रिकाणुओं के पार्श्वतंतु और अक्षतंतु केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में पड़े होते हैं। उद्दीपन से उचित अनुक्रिया हो रही है यह आश्वस्त होने के लिए संवेदी सूचना का समाकलन, तुलना, परिवर्तन, उनका बढ़ाना या घटाना किया जाता है। आपने FST-I इकाई-23 में सीखा कि मानव तंत्रिका तंत्र में कुछ क्रियाएँ हमारे उनके प्रति सचेत हुए बगैर स्वचालित रूप से होती हैं। अन्य क्रियाएँ चेतना के स्तर पर तंत्रिका तंत्र के उच्च केन्द्रों द्वारा संचालित होती हैं। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के संवेदी निवेशों और प्रेरक अनुक्रियाओं के बीच अति जटिल तंत्रिका जाल होते हैं। यह तंत्रिका तंत्र के सारे प्रतिवर्ती और उच्च कार्यों के लिये उत्तरदायी है। तंत्रिका जालों के सबंधन परिवर्ध के समय बनते हैं और प्राणी के जीवन काल में प्रयोग से रूपान्तरित हो सकते हैं किन्तु अप्रयोग के कारण कार्य का अत्यधिक क्षय हो सकता है। ऐसा लगता है कि वह आनुवांशिक रूप से पूर्वप्रोग्रामित होते हैं।

आइये अब हम कशेरुकियों के सरलतम तंत्रिका जाल—प्रतिवर्त चाप—के बारे में अध्ययन करें। आदि तंत्रिका चाप अवश्य ही ग्राही कोशिका और प्रेरक कोशिका के सीधे सम्बन्ध से बना रहा होगा (चित्र 9.11 (a))।

जैसे-जैसे तंत्रिका परिपथ जटिल होते गये अन्तरातंत्रिकाणु (interneuron) की सघनता और जटिलता के विकास के लिए केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र बना। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की परिधि पर ग्राहियां और प्रेरकों को जोड़ने के लिये लम्बे संवेदी और मोटे अक्षतंतु बहुत उपयोगी सिद्ध हुए। इस प्रकार **एकल अन्तर्ग्रथनी प्रतिवर्त चाप** (monosynaptic reflex arc) बने (चित्र 9.11 b))।

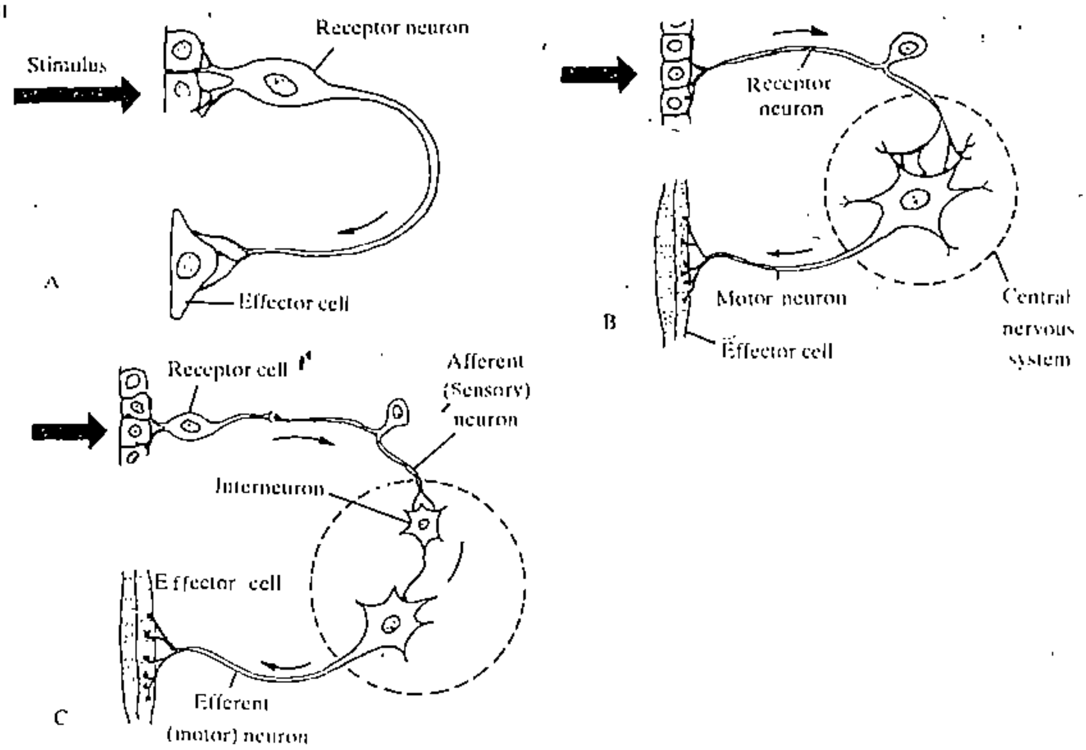

चित्र 9.11 : सरल प्रतिवर्त चापों के उदाहरण।
a) परिकल्पित आदि तंत्रिका चाप
b) एकल अन्तर्ग्रथनी प्रतिवर्त चाप
c) वहुत से प्रसारण अन्तर्ग्रथनों से युक्त प्रतिवर्त

कशेरुकियों का तनाव प्रतिवर्त (stretch reflex) इसका सवसे सुविदित उदाहरण है। पेशी का लम्बाई में वढ़ना उसके तनाव ग्राहियों, जिनमें अभिवाही अक्षतंतुओं के संवेदी अंत्य भी सम्मिलित हैं, को उद्दीपित करता है। यह तंतु मेरूरज्जु में घुसकर मोटर तंत्रिकाणु से प्रत्यक्ष अन्तर्ग्रथनी सन्धि करते हैं जिससे पेशी का संकुचन सक्रिय हो जाता है। यह प्रतिवर्त संकुचन उस वल का जिसने पेशी का प्रारम्भिक दीर्घीकरण उत्पन्न किया था प्रतिरोध करता है जिससे पेशी लम्बाई में छोटी होकर अपनी साधारण लम्बाई पर आ जाती है। यह क्रियाविधि विना किसी चेतना नियंत्रण के होती है और भंगिमा को वनाये रखने में महत्वपूर्ण है। वहुत से अन्तर्ग्रथनों, जिनमें संवेदी और मोटर तंत्रिकाणु को जोड़ने वाले **अन्तरातंत्रिकाणु** (interneurons) भी सम्मिलित हैं, से निर्मित मार्ग अधिक सामान्य है (चित्र 9.11c)। आपको सुविदित जानु प्रतिक्षेप (knee jerk) जिसका विवरण हम FST-1 इकाई 23 में दे चुके हैं याद होगा।

तंत्रिका तंत्र की जटिलता और उसके विविध कार्य तंत्रिकीय परिपथों की जटिलता और विविधता की अभिव्यक्तियाँ हैं न कि इसके कि संकेत जटिल हैं या भिन्न। हमने पहले वताया है कि सभी तंत्रिका आवेगों की मूल प्रकृति समान है। उदाहरणस्वरूप दृष्टि तंत्रिका (optic nerve) अपने साथ वैसे ही तंत्रिका आवेग ले जाती है जैसे श्रवण तंत्रिका (auditory nerve) और केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र यह पहचानता है कि मूल उद्दीपन क्या था। यदि श्रवण तंत्रिका कृत्रिम रूप से उद्दीपित की जाए तो आवेग का अर्थ निर्णय ध्वनि होगा और यदि दृष्टि तंत्रिका उद्दीपित की जाए तो आवेग का अर्थ निर्णय प्रकाश लिया जाएगा। इस प्रकार के भाषा निर्णय हम में से अधिकतर लोग कर चुके हैं। यदि हम अपने नेत्र गोलक पर ज़ोर से दवाव डालें तो उसका अर्थ निर्णय प्रकाश होगा। ऑख पर कोई भी तेज वार हो तो सितारे से दिखने लगते हैं जव कि वहाँ प्रकाश से कोई भी सम्वन्ध नहीं है।

तंत्रिकीय जालों को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है:

1) संवेदी निस्पंदन जाल (sensory filter networks) जो कि इस प्रकार संगठित हैं कि वे जटिल संवेदी निवेशों के केवल कुछ ही लक्षणों को अपने द्वारा प्रेषित होने देते हैं और अन्य लक्षणों की उपेक्षा कर देते हैं। आपने इस इकाई का अध्ययन करते समय ध्यान केन्द्रित किया

होगा जबकि चारों ओर शोर भी हो रहा हो। एक बार जब आपका ध्यान लग जाता है तब आप ध्वनि का शोर के रूप में बोध नहीं करते और शान्ति से पढ़ सकते हैं।

2) प्रतिरूप उत्पन्न करने वाले जाल (pattern generated networks), प्रेरक बहिर्वेश (motor output) जो कि रूढ़ गतियों का नियमन करते हैं, के उत्पादन के उत्तरदायी हैं। इनके उदाहरण श्वसन और चालन पर नियन्त्रण करने वाले जाल हैं।

तंत्रिकाणुओं के विभिन्न संयोजनों से कितने तंत्रिक परिपथ बन सकते हैं आश्चर्यजनक है। आप जानते हैं कि केवल एक तंत्रिकाणु अन्य तंत्रिकाणुओं से हजारों पूर्वअन्तर्ग्रथनी अंत्यों को ग्रहण कर सकते हैं जिनमें से कुछ उत्तेजक और कुछ निरोधक होते हैं। तंत्रिकाणु स्वयम् बहुत बार शाखित होता है और बहुत से अन्य तंत्रिकाणुओं को तंत्रिकाप्रेरित करता है। इस प्रकार अपसरण के कारण वह बहुत से अन्य पश्चअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणुओं पर व्यापक प्रभाव डाल सकता है और निवेशों का अभिसरण उस एक तंत्रिकाणु को बहुत अधिक संख्या में पूर्वअन्तर्ग्रथनी तंत्रिकाणुओं से मिले संकेतों को समाकलित करने में समर्थ करता है।

तंत्रिका तंत्र में तंत्रिका कोशिकाओं की कुल संख्या विशिष्ट कार्यात्मक और आकारिकी संरचनाओं, में समाहित हो गई है। जिसके कारण मनोवैज्ञानिक अनुभवों का जनन हो सकता है। यह समझ लेना आवश्यक है कि तंत्रिका तंत्र ही हमारे व्यक्तित्व का स्थल है।

बोध प्रश्न 4

मान लीजिये कि किसी प्राणी की दृष्टि तंत्रिका काट कर उसको श्रवण तंत्रिका से जोड़ दिया जाये तो क्या वह संकेतों को प्रकाश के रूप में अनुभव करता रहेगा?

....

....

9.7 सारांश

इस इकाई में आपने अध्ययन किया है कि

- समस्त तंत्रिका तंत्रों की कार्यवाहक इकाई तंत्रिकाणु है जो कि मुख्यतः कोशिका काय, जिसमें केन्द्रक, विभिन्न संख्याओं में पार्श्वतंतु जोकि निवेशों का ग्रहण करते हैं और एक अक्षतंतु जो सूचना को विद्युतीय आवेगों के रूप में वहन करता है, का बना होता है। यह आवेग अक्षतंतु अन्त्यों या अन्तर्ग्रथनी अन्त्यों से विमुक्त तंत्रिसंचारी द्वारा अन्य तंत्रिकाणुओं या कोशिकाओं को प्रेषित किये जाते हैं।
- तंत्रिका तंत्र विरामावस्था और उद्दीपन के पश्चात तंत्रिका झिल्ली के आर-पार आयन वितरण के अन्तर के फलस्वरूप कार्य करता है। जब झिल्ली उद्दीपन की अनुक्रिया में प्रभावसीमा तक पहुँचने के लिए विध्रुवित होती है तब क्रिया विभव (एक्शन पोटेन्शियल, AP) उत्पन्न होते हैं। यह पूर्ण या शून्य परिघटना है। अमाइलिनआवृत तन्तुओं में AP का चालन तंत्रिकाणु के केबिल गुणों के कारण और माइलिनआवृत्त तन्तुओं में वल्गी चालन द्वारा होता है।
- सूचना का अन्तर्ग्रथनी प्रेषण अधिकतर रासायनिक अन्तर्ग्रथनों द्वारा और कुछ उदाहरणों में विद्युतीय अन्तर्ग्रथनों द्वारा होता है। रासायनिक अन्तर्ग्रथन में तंत्रिसंचारी पदार्थ पाए जाते हैं जो पूर्वअन्तर्ग्रथनी अन्त्यों से उत्पादित होते हैं और पूर्वअन्तर्ग्रथनी कोशिका को पश्चअन्तर्ग्रथनी कोशिका से विलग करने वाले संकरे विदर में विमुक्त होते हैं। पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली में स्थित ग्राही इन संचारी अणुओं को पकड़ लेते हैं। यह ग्राही रासायनिक द्वार से युक्त आयन मार्गों से जुड़े होते हैं और झिल्ली पारगम्यता के परिवर्तन पश्चअन्तर्ग्रथनी विभव का जनन करते हैं जो कि निरोधक (IPSP) या उत्तेजक (EPSP) हो सकते हैं। EPSP मे संचारी अणु का कार्य झिल्ली विभव को AP की प्रभाव सीमा से स्थानान्तरित करना है जिससे अक्षतंतु गिरिका में AP का जनन हो सके।

IPSP आयन संचालन को इस प्रकार बदलता है कि वह झिल्ली के विध्रुवीकरण का प्रतिरोध कर सके।

- विदर में तंत्रिसंचारी या तो नष्ट हो जाता है या चारों ओर की तंत्रिकाबंध कोशिकाओं द्वारा ले लिया जाता है अथवा पूर्वअन्तर्ग्रथनी कोशिका द्वारा पुनः प्रयोग में लाया जाता है। AP मूलतः विभव नियन्त्रित आयन मार्गों के कारण होते हैं। बहुत से रसायन तंत्रिसंचारी क्रियाविधि दिखाते हैं और उनका प्रभाव उत्तेजक या निरोधक है यह किस प्रकार के अन्तर्ग्रथन का अध्ययन हो रहा है उस पर निर्भर करता है।
- संवेदी ग्राही पर्यावरणीय उद्दीपनों को झिल्ली के विध्रुवीकरण द्वारा क्रिया विभवों में बदल देते हैं। फलस्वरूप, उत्पन्न आवेग अपनी आवृत्ति के अनुसार कोड होते हैं। आवेगों का समाकलन पश्चअन्तर्ग्रथनी झिल्ली में होता है जो कि निवेशों के विश्लेषक के रूप में कार्य करती हैं।
- निम्न प्राणियों में सरल तंत्रिकीय जाल होते हैं जबकि उच्च प्राणियों में इससे अधिक संगठित तंत्रिका तंत्र पाए जाते हैं जिनमें केन्द्रीय तन्त्रिका तंत्र के संवेदी निवेशों और प्रेरक बहिर्वेशों के बीच जटिल तंत्रिकीय जाल होता है जो कि सारी प्रतिवर्त क्रियाओं और तंत्रिका तंत्र के उच्च कार्यों के लिये उत्तरदायी हैं। सबसे सरल तंत्रिका जाल एकल अन्तर्ग्रथनी प्रतिवर्त चाप है। तंत्रिकाजाल संवेदी निवेशों के निस्पंदकों का कार्य करते हैं जो कि कुछ निवेशी उद्दीपनों को बढ़ा देते हैं और कुछ को घटा देते हैं।

9.8 अन्त में कुछ प्रश्न

1) नीचे दिये गये चित्र का नामांकन कीजिए और आवेगों के प्रवाह की दिशा दिखलाइये।

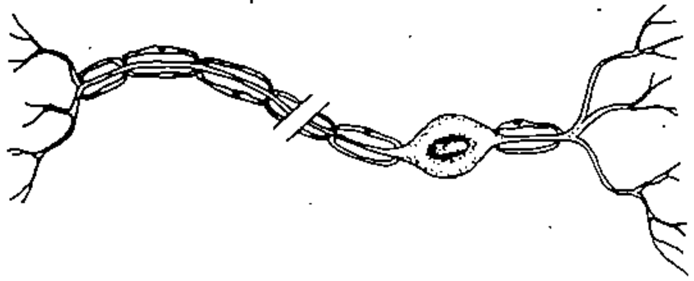

2) अक्षतंतु का-झिल्ली विभव सामान्यतः −75 mV होता है। नीचे दी गई स्थितियों के तुरन्त बाद झिल्ली में क्या होगा:

   क) Na^+ पारगम्यता में अचानक वृद्धि
   ख) Cl^- पारगम्यता में अचानक वृद्धि
   ग) झिल्ली के बाहर K^+ का जमा होना
   घ) झिल्ली के अन्दर की ओर Na^+ का जमा होना

3) दो जातियों A तथा B में चालन के वेग और तंत्रितंतु के व्यास सम्बन्धी आँकड़े दिये गये हैं। इनमें से कौन अकेशरुक है? जाति B में चालन का वेग जाति A से अधिक क्यों है।

	व्यास μm	चालन का वेग ms^{-1}
जाति A	500	33
जाति B	15	90

4) एक चित्र बनाइये जिसमें अक्षतंतु अन्त्यों पर क्रिया विभव के आगमन से लेकर ग्राही तंत्रिकाणु की अक्षतन्तु गिरिक में एक और क्रिया विभव के जनन के बीच हुई प्रमुख घटनाओं को संक्षेप में दर्शाइये।

9.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) iii); ख) iii);

2) क) i); ख) iv);

ग) यदि प्रभाव सीमा स्तर पहुँच चुका हो और क्रिया विभव का जनन हो चुका हो तब उद्दीपन की प्रवलता में वृद्धि करने से फिर भी वही क्रिया विभव उत्पन्न होगा केवल क्रिया विभव की आवृत्ति बढ़ सकती है।

घ) i) वल्गी चालन
ii) अपक्षय
iii) क्रिया विभव, केबिल समान, विध्रुवित

3) क) क्योंकि प्रेषक संचारी पदार्थ जो केवल पूर्ण अन्तर्ग्रथनी घुंडी में पाया जाता है की विमुक्ति पर निर्भर है इसलिये आवेगों को विपरीत दिशा में स्थानान्तरित करने का कोई साधन नहीं है।

ख) i) सत्य ii) मिथ्या iii) सत्य iv) सत्य

4) नहीं

अन्त में कुछ प्रश्न

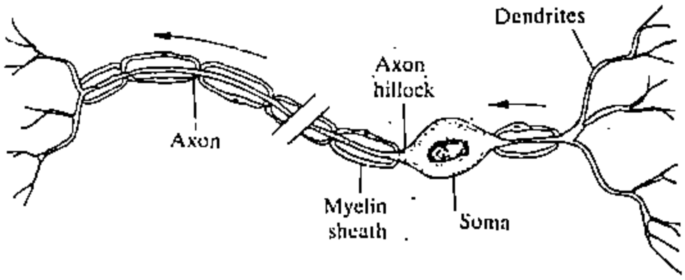

1) ऐरो आवेग की दिशा दिखाती है।

2) क) पारगम्यता की वृद्धि के कारण झिल्ली का विध्रुवीकरण होगा।
ख) Cl^- के प्रति पारगम्यता की वृद्धि झिल्ली को अतिध्रुवित करेगी।
ग) झिल्ली के वाहर K^+ की सान्द्रता में वृद्धि झिल्ली को विध्रुवित करेगी।
घ) कोशिकाओं के भीतर Na^+ का जमा होना झिल्ली विभव को शून्य तक ले आयेगा।

3) जाति A अकेशरुक है क्योंकि केवल अकशेरुकियों में विशाल तन्तु (500 μm) होते हैं। जाति B में तन्तु का व्यास छोटा है पर फिर भी चालन का वेग उच्च है। यह इंगित करता है कि तंतु माइलिन आवृत्त है अर्थात् रोधित है।

4) अपना उत्तर चित्र 9.8 पर आधारित कीजिये।

इकाई 10 संचार-II

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
10.2 हॉर्मोन नियंत्रण तंत्र
रासायनिक प्रकृति
उत्पत्ति एवं संग्रह
हॉर्मोन का स्रवण
10.3 हॉर्मोन की क्रियाविधि
स्टेरॉइड तथा थाइरॉइड हॉर्मोन
पेप्टाइड हॉर्मोन
10.4 तंत्रिका-अंतःस्रावी संबंध
हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी
हॉर्मोन स्रवण का नियमन
10.5 कीट हॉर्मोन
10.6 फेरोमोन
लैंगिक फेरोमोन की अनुक्रिया का तंत्रिका आधार
प्रजनन के अतिरिक्त फेरोमोन के कार्य
10.7 निष्कर्ष
10.8 सारांश
10.9 अंत में कुछ प्रश्न
10.10 उत्तर

10.1 प्रस्तावना

अब तक आप इस तथ्य से परिचित हो गये होंगे कि किसी भी बहुकोषीय प्राणी में शरीर के कार्य विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं के बीच बटे हुए हैं। किसी प्राणी को जीवित रखने के लिए इन कोशिकाओं को आपसी सामन्जस्य बनाये रखने के लिए विभिन्न सूचनाओं का आदान प्रदान करते रहना अति आवश्यक है।

पिछली इकाई में हमने शरीर की दो महत्वपूर्ण संचार व्यवस्थाओं में से एक, तंत्रिका तंत्र के बारे में अध्ययन किया, जो विद्युतीय संदेशों को शरीर के विभिन्न हिस्सों तक तंत्रिका कोशिका तथा तंत्रिकाओं के माध्यम से प्रेषित करता है। ये संदेश रासायनिक पदार्थों के माध्यम से अंतर्ग्रथन से होकर चलते हैं। इस इकाई में हम दूसरी रासायनिक संदेश वाहकों से संबंधित संचार व्यवस्था का अध्ययन करेंगे। इन रासायनिक संदेश वाहकों को हॉर्मोन कहते हैं। तंत्रिका तंत्र तथा शरीर के रासायनिक संदेश वाहक एक दूसरे से तालमेल बनाकर शरीर की विभिन्न कोशिकाओं के कार्यों के बीच सामन्जस्य बनाये रखते हैं।

हॉर्मोन वो रासायनिक पदार्थ हैं जो अंतःस्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रवित होकर रक्त प्रवाह द्वारा अपने स्रोत से थोड़ी दूरी पर प्रभावी होते हैं। अब हमें यह भी विदित हो गया है कि प्राणियों में अंतःस्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रावित हॉर्मोन के अतिरिक्त दूसरे भी रासायनिक संदेश वाहक हैं। इनमें प्रमुख हैं तंत्रिसंचारी जिनके बारे में हमने इकाई 9 में पढ़ा; स्थानीय रासायनिक संदेश वाहक जैसे हिस्टामीन (histamine) जो शरीर की शोथज तथा प्रतिरक्षित क्रियाओं में अपना योगदान देते हैं (LSE-01 इकाई 15): वृद्धिकारक (growth factors) जो किसी विशेष ऊतक की वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं, प्रोस्टाग्लैन्डिन जो अनेक प्रभावों वाले लिपिड हैं तथा फेरोमोन जो शरीर से निकल कर वातावरण में फैलकर, अपने ही प्रजाति में दूसरे सदस्यों के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। यह इकाई अंतःस्रावी ग्रंथियों तथा तंत्रिका ऊतक द्वारा स्रावित हॉर्मोनों की रासायनिकी तथा कार्यिकी से संबंधित है। आपको विभिन्न हॉर्मोनों की रासायनिक संरचना याद रखने की आवश्यकता नहीं है। इस आलेख में इन रासायनिक संरचनाओं का विवरण देने का उद्देश्य विभिन्न हॉर्मोनों में बीच की समानताओं या संबंधों

को प्रदर्शित करना है। हम यह देखेंगे कि ये हॉर्मोन किस प्रकार शरीर के समस्थापन को प्रभावित करते हैं तथा बाह्य उद्दीपन के प्रति संवेदनशील हैं। इसके अतिरिक्त हम यह भी जानेंगे कि एक ही प्रजाति के सदस्यों के व्यवहार को प्रभावित करने में फेरोमोन की क्या भूमिका है।

हमारा सुझाव है कि इस इकाई का अध्ययन करने से पहले आप कोशिका जैविकी (LSE-01) की इकाई 15 एक बार पुनः पढ़ लें क्योंकि इस इकाई में हम ये मानकर चल रहे हैं कि आपको कोशिका स्तर पर विभिन्न हॉर्मोन की क्रियाविधि का ज्ञान है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- हॉर्मोन तथा अंतःस्रावी ग्रंथियों की परिभाषा दे सकेंगे तथा अंतःस्रावी ग्रंथियों में अतिरिक्त हॉर्मोन के स्रोतों के बारे में बता सकेंगे,
- हॉर्मोनों का रासायनिक वर्गीकरण तथा प्रोटीन और स्टिरॉयड हॉर्मोनों की कार्यिकी की तुलना कर सकेंगे,
- तंत्रिका अंतःस्रावी संबंधों का विवरण दे सकेंगे तथा यह बता सकेंगे कि किस प्रकार हाइपोथैलेमस पिट्यूटरी के स्रवण को संपादित करता है,
- ऋणात्मक पुनर्भरण (negative feedback) कार्यिकी के द्वारा हॉर्मोनों के सांद्रण तथा कार्यिकी के नियमन को समझा सकेंगे,
- कीट हॉर्मोनों द्वारा कायान्तरण पर नियंत्रण करने की विधि का विवरण कर सकेंगे, तथा
- सूचनाओं के आदान प्रदान में फेरोमोन की भूमिका का विवरण दे सकेंगे तथा इनकी तुलना हॉर्मोन की कार्यिकी से कर सकेंगे।

10.2 हॉर्मोन नियंत्रण तंत्र

हम सभी प्राणियों में ऐसा पाते हैं कि एक कोशिका से निकलकर दूसरी कोशिका को प्रभावित करने वाले रासायनिक संकेत शरीर की कार्यकी का सामन्जस्य बनाये रखते हैं। रासायनिक संकेतन के तीन मूलभूत ढंग चित्र 10.1 में दर्शाये गये हैं। हर एक में कोशिकाओं की सतह पर एक विशेष ग्राही प्रोटीन है जो विभिन्न संकेतों को ग्रहण करता है। अधिकांश कोशिकाओं द्वारा स्थानीय रासायनिक मध्यस्तों का स्रवण होता है जो अपनी संरचना तथा कार्यकी में एक दूसरे से भिन्न है। ये अपनी

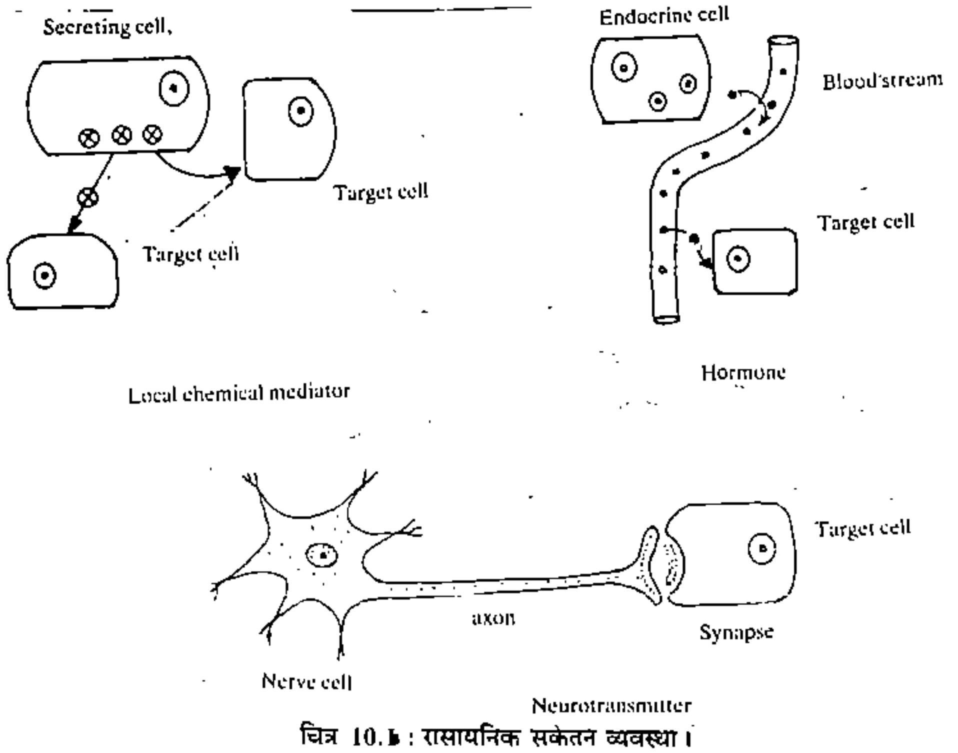

चित्र 10.1 : रासायनिक सकेतन व्यवस्था।

अतिनिकट की ही कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं। इनकी तुलना में हॉर्मोन ऐसे रासायनिक पदार्थ हैं जो विशिष्ट कोशिकाओं द्वारा स्रावित होकर रक्तधारा में प्रवाहित किये जाते हैं इनका प्रभाव शरीर में दूर के स्थानों पर पड़ता है। रक्तधारा में प्रवाहित हॉर्मोन यद्यपि शरीर के सभी अंगों के संपर्क में आते हैं परन्तु इनका प्रभाव विशेष लक्ष्य अंगों तथा ऊतकों पर ही होता है। इन लक्ष्य अंगों में ऐसी संवेदी कोशिकायें भी पाई जाती हैं जो एक अथवा कुछ हॉर्मोनों में समूह से संवेदनशीलता दर्शाती हैं।

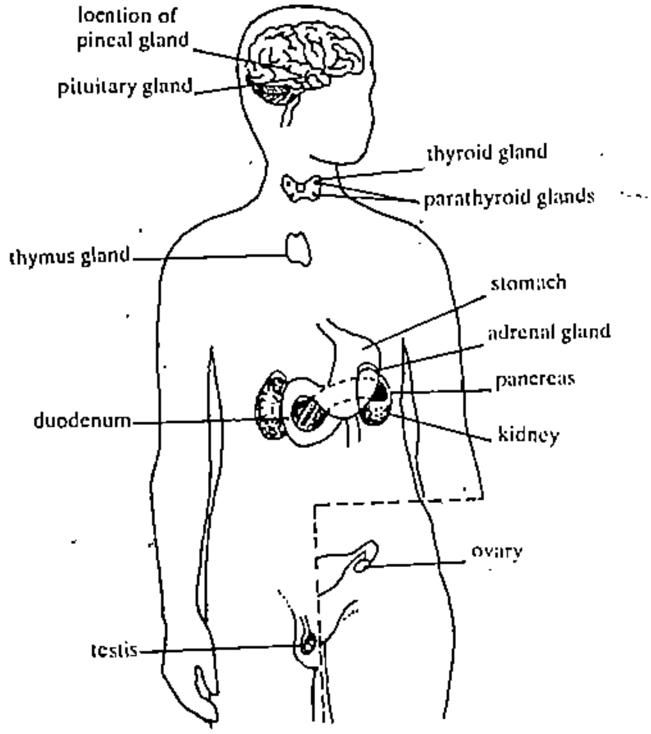

चित्र 10.2 : मानव में अंतःस्रावी ग्रन्थियां।

स्तनधारियों (मानव) की प्रमुख अंतःस्रावी ग्रंथियां चित्र 10.2 में दर्शायी गई हैं। महत्वपूर्ण कशेरुकी हॉर्मोन तथा इनके प्रमुख कार्य तालिका 10.1 में सूचिबद्ध हैं। इनमें से अधिकांश हॉर्मोन विभिन्न कशेरुकी वर्गों में एक जैसे हैं। परन्तु कुछ हॉर्मोन ऐसे भी हैं जो विभिन्न वर्गों में भिन्न हैं तथा इनके कार्य अत्यंत विशिष्ट हैं उदाहरणार्थ प्रोलैक्टिन में 365 प्रभाव विदित हैं। स्तनधारियों में यह जहां दूध का स्रवण प्रेरित करता है, वहीं कबूतर में यह क्राप-दूध बनाता है तथा मछलियों में गुर्दों की कार्यकी तथा गिल की पारसरणी पारगम्यता को प्रभावित करता है।

मछलियों में अत्यधिक हॉर्मोन पाये जाते हैं। जैसे जैसे हम विकास वंश वृक्ष में ऊपर की ओर बढ़ते जाते हैं तो हॉर्मोन की संख्या कम होती जाती है पर इनकी पारंगता बढ़ती जाती है।

तालिका 10.1 : स्रोत तथा कार्य के आधार पर कशेरुकी के कुछ हॉर्मोनों की समीक्षा (हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी के हॉर्मोनों की समीक्षा तालिका 10.2 तथा 10.3 में दर्शाई गई है)।

हॉर्मोन तथा स्रोत	रासायनिक प्रकृति	कार्य
1) **थाइरॉइड ग्रंथि**		
कैल्सिटोनिन	पॉलीपेप्टाइड	रक्त में कैल्सियम स्तर को घटाना तथा हड्डियों में जमाव बढ़ाना
थायरॉक्सिन (T_4) ट्राइआयोडोथाइरोनिन (T_3)	आयोडीन युक्त टाइरोसीन T व्युत्पत्तिक	1. वृद्धि तथा उपापचय 2. उभयचर में कायांतरण
2) **पैराथाइरॉइड ग्रंथि**		
पैराथॉर्मोन (PTH)	पॉलीपेप्टाइड	हड्डियों में संचित कैल्सियम तथा फॉस्फोरस को मुक्त करके रक्त में कैल्सियम तथा फॉस्फोरस स्तर को बढ़ाना। वृक्क से कैल्सियम का उत्सर्जन घटाना।
3) **अग्न्याशय**		
इन्सुलिन (B-कोशिकाओं द्वारा)	पॉलीपेप्टाइड	रक्त में शर्करा स्तर घटना, प्रोटीन तथा वसा उपापचय में परिवर्तन करना।

हॉर्मोन तथा स्रोत	रासायनिक प्रकृति	कार्य
ग्लूकैगॉन (A-कोशिकाओं द्वारा)	पॉलीपेप्टाइड	ग्लाइकोजेनोलिसिस को प्रोत्साहित कर रक्त में शर्करा स्तर बढ़ाना।
गैस्ट्रिन (D-कोशिकाओं द्वारा स्रवित जो अमाशय में भी पाई जाती है)	पॉलीपेप्टाइड	अमाशय द्वारा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का स्रवण
4) रक्त		
एरिथ्रोपाईटिन	पॉलीपेप्टाइड	हड्डी की मज्जा में रुधिर कोशिकाओं का अधिक बनना
ऐन्जियोटेन्सिन I ऐन्जियोटेन्सिन II	लघुपेप्टाइड	एड्रिनल ग्रंथि के कॉर्टेक्स में एल्डोस्टिरॉन बनने का उत्प्रेरक
5) क्षुद्रांत		
एन्टरोगेस्ट्रोन		अमाशय में अम्ल के स्रवण पर अंकुश लगाना
कॉलिसिस्टोकाइनिन	पॉलीपेप्टाइड	पित्ताशय में संकुचन पैदा कर के पित्त को निकालना, अग्न्याशय से पाचक द्रव्य का स्रवण
सेक्रेटिन	पॉलीपेप्टाइड	अग्न्याशय से जल तथा अकार्बनिक लवणों का स्रवण
6) एड्रिनल मेडुला		
ऐपीनेफ्रीन अथवा एड्रीनलीन	ऐमीन	तंत्रिसंचारी; अनैच्छिक पेशियों का संकुचन तथा शिथलन
नॉरएपीनेफ्रीन अथवा नॉरएड्री नलीन	ऐमीन	रक्त वाहिकाओं का विस्फारण, रक्त शर्करा तथा रक्त दाब की वृद्धि, हृदय गति तथा हृदय द्वारा निकाले गए रक्त की मात्रा में वृद्धि
7) एड्रीनल कॉर्टेक्स		
ग्लूकोकार्टिकाइड (कार्टिकोस्टेरॉन, कार्टिसोल इत्यादि)	स्टेरॉयड	कार्बोहाइड्रेट प्रोटीन तथा वसा उपापचय, भूखे रहने वाले तथा शीत-निष्क्रियता वाले प्राणियों में महत्वपूर्ण प्रतिशोथजक्रिया तथा गर्भ समापन में सक्रिय
मिनरलोकार्टिकॉर्टिकाइड (एल्डोस्टेरॉन)	स्टेरॉयड	वृक्क स्वेद ग्रंथि, लारग्रंथि पाचन नाल, उभयचर त्वचा, मूत्र थैली तथा मछली के गिल में K^+ तथा Na^+ का पुनर्शोषण
कम मात्रा में लैंगिक हॉर्मोन (एन्ड्रोजन तथा प्रोजेस्टेरॉन)	स्टेरॉइड	द्वितीयक लैंगिक गुणों को विकसित करना है
8) वृषण		
एन्ड्रोजेन (टेस्टॉस्टेरॉन, 5-α-डाई-हाइड्रोक्सी टेस्टास्टेरॉन)	स्टेरॉइड	नर गुणों के विकास तथा व्यवहार को विकसित करना तथा बनाये रखना
9) अंडाशय		
एस्ट्रोजन	स्टेरॉइड	मादा गुणों तथा व्यवहार को विकसित करना तथा बनाये रखना
10) कॉर्पस ल्यूटियम		
प्रोजेस्टेरॉन	स्टेरॉइड	गर्भाशय अंतःस्तर का रख स्तनग्रंथि की नलिकाओं का बनना, एस्ट्रोजन के सहयोग से मदचक्र तथा मासिक चक्र बनाये रखना

10.2.1 रासायनिक प्रकृति

सभी हॉर्मोन ऐसे रासायनिक यौगिक हैं जिन्हें निम्न प्रकार से समूहित किया गया है:

1) वो जिनकी उत्पत्ति वसा अम्ल के पूर्वगामी से हुई है।

2) वो जिनकी उत्पत्ति ऐमीनो अम्ल तथा इनसे संबंधित यौगिकों से हुई है।

वसा अम्ल पर आधारित हॉर्मोन अपने आकार में सूक्ष्म होते हैं तथा इनकी मूल संरचना एक जैसी होती है। सभी स्टेरॉइड हॉर्मोन कोलेस्टेरॉल से बनी चार चक्रीय संरचना पर आधारित है (चित्र 10.3)।

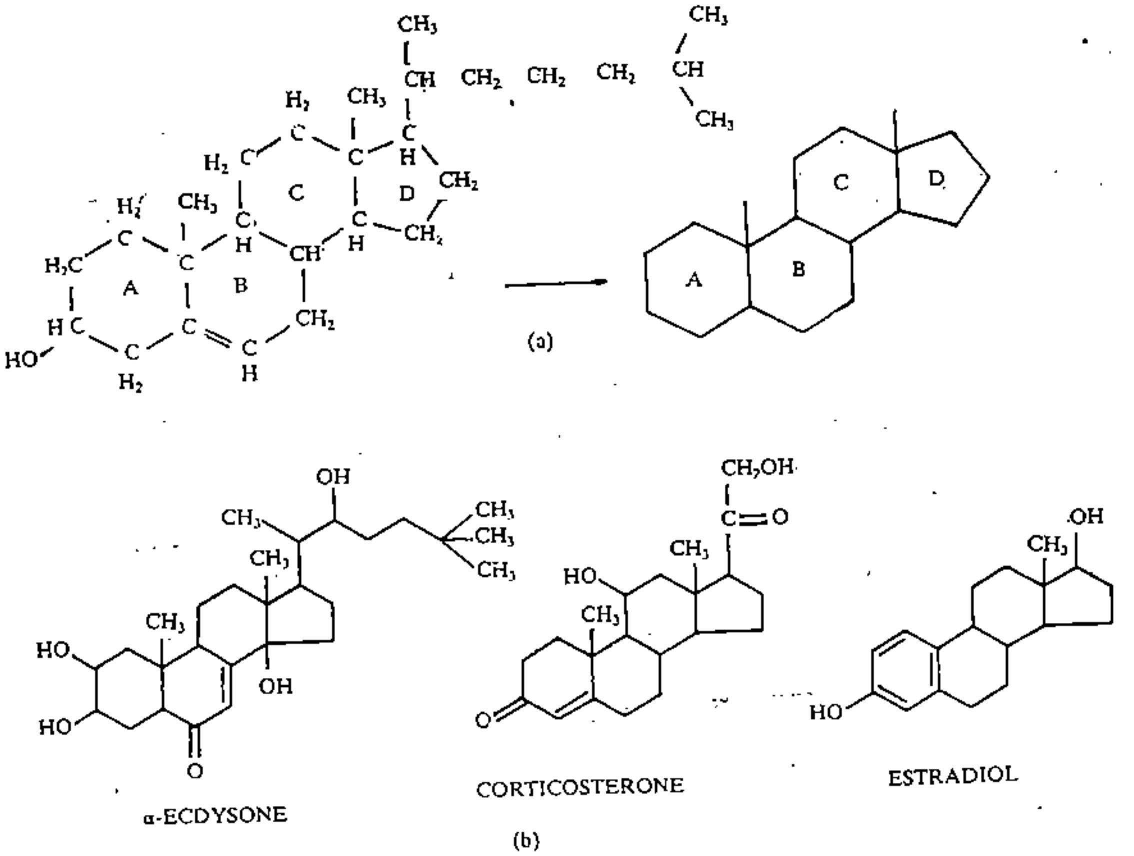

चित्र 10.3 : **a) कोलेस्ट्रॉल तथा मूलस्टेरॉइड नाभिक का संबंध b) प्रकृति में पाये जाने वाले सभी स्टेरॉइड 16 कार्बन परमाणु की चक्रीय संरचना प्रदर्शित करते हैं। इनमें नाभिक से जुड़े कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन परमाणुओं की संख्या भिन्न है।**

अकशेरुकी प्राणियों में विशेषकर कीटों में पाया जाने वाला एक्डाइसोन (ecdysone) स्टेरॉइड समूह में रखा गया है। कशेरुकी प्राणियों के महत्वपूर्ण हॉर्मोन हैं एस्ट्रोजन, एन्ड्रोजन तथा कार्टिकोस्टेरॉइड। इन सभी समूहों में विभिन्न हॉर्मोन ऑक्सीजन तथा/या हाइड्रोजन के जुड़ने तथा पृथक्क होने से बनते हैं (चित्र 10.3 b)। पेप्टाइड हॉर्मोन अथवा वे जो ऐमीनो अम्ल पर आधारित हैं अपने आकार तथा संरचना में एक दूसरे से भिन्न होते हैं, उदाहरणार्थ ऑक्सीटोसिन (oxytocin) तथा एन्टीडाइयूरेटिक हार्मोन (ADH) दोनों ही लघुपेप्टाइड हॉर्मोन हैं जो केवल दो ऐमीनो अम्ल (चित्र 10.4 a)) में भिन्न हैं परन्तु इनकी क्रियाएँ एक दूसरे से एकदम पृथक्क हैं।

ऑक्सीटोसिन सभी कशेरुकी प्राणियों में पाया जाता है परन्तु विभिन्न वर्गों में थोड़ा भिन्न होता है। जहां थायरॉक्सिन (thyroxine T-4) जो कि ऊतक उपापचय के नियंत्रण से जुड़ा है दो टाइरोसीन अवशेषों से बनता है, वहीं वृद्धि हॉर्मोन (growth hormone) में 190 ऐमीनो अम्ल होते हैं। अधिकांश तंत्रिसंचारी वास्तविक रूप में ऐमीनो अम्ल के परिवर्तित रूप ही हैं (चित्र 10.4 b)।

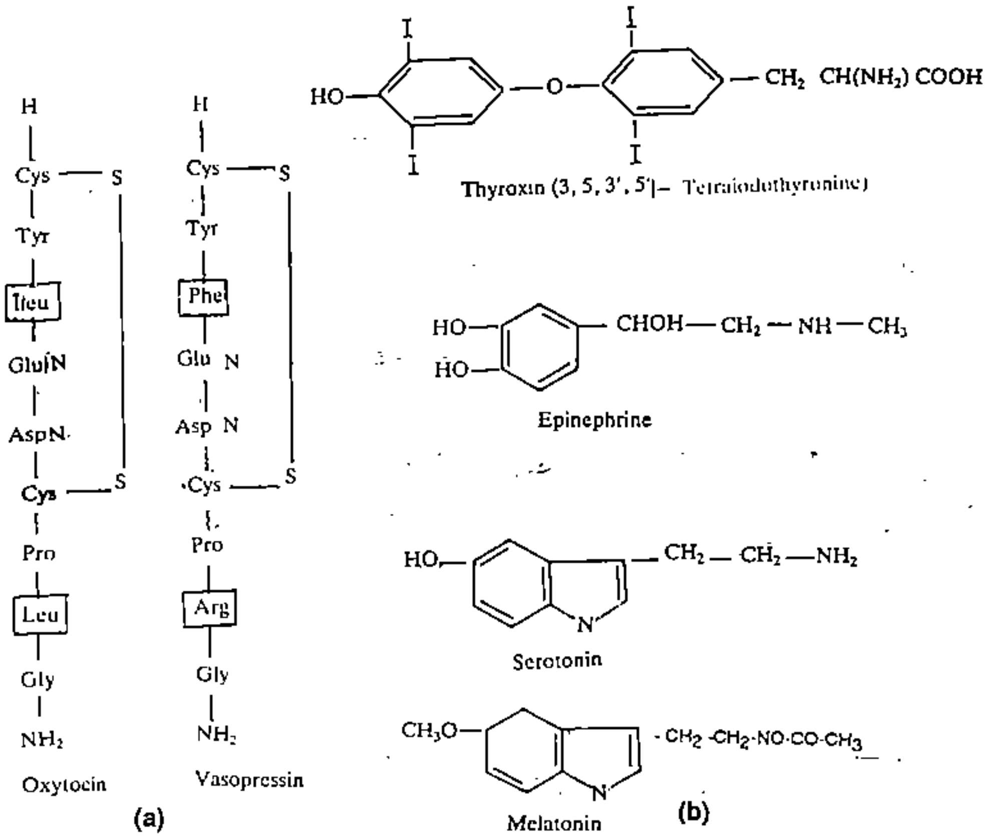

चित्र 10.4 : a) ऑक्सीटोसिन तथा वैसोप्रेसिन के ऐमीनो अम्ल क्रम
b) ऐमीनो अम्ल पर आधारित हॉर्मोन।

10.2.2 उत्पत्ति एवं संग्रह

किसी हॉर्मोन की उत्पत्ति तथा संग्रह उसकी प्रकृत्ति पर आधारित है। स्टेरॉइड हॉर्मोन का स्रवण विसरित आणविक रूप में होता है तथा इनका संग्रह कोशिका में वसा की पारदर्शी बूंदों के रूप में होता है अथवा ये कोशिका झिल्ली से वसा प्रोटीन पुंज के रूप में जुड़े होते हैं। ऐमीनो अम्ल पर आधारित हॉर्मोन झिल्लीदार थैली में संचित रहते हैं जो बाद में कोशिका के बाहर के स्थानों में निकलते रहते हैं।

एक स्रावक ऊतक में किसी हॉर्मोन के संचय की अवधि भी भिन्न भिन्न होती है। वसा में घुलनशील होने के कारण स्टेरॉइड हॉर्मोन, अपनी उत्पत्ति के कुछेक पलों के बाद ही झिल्ली से बाहर विसरित हो जाते हैं। अंतःस्रावी ग्रंथियों की कोशिकाओं के स्रावक अवशेष बाहर निकलने का संकेत प्राप्त होने तक कोशिका में ही रुके होते हैं। थाइरॉइड हॉर्मोन का स्रवण पुटक (follicle) कहलाने वाली कोशिकाओं से कोशिका बाह्य स्थान में होता है, और यहां यह कई महीनों तक संचित रहता है।

10.2.3 हॉर्मोन का स्रवण

स्टेरॉइड हॉर्मोन के अतिरिक्त अधिकांश हॉर्मोनों का स्रवण एक्सोसाइटोसिस (exocytosis) विधि द्वारा होता है। चित्र 10.5 में स्रावक थैली का बनना, परिवहन, मुक्त होना तथा पुनः बनना दर्शाया गया है।

अंतःस्रावी ग्रंथियों से हॉर्मोन का स्रवण तंत्रिकीय, हॉर्मोनी, तथा उपापचयी उद्दीपकों द्वारा नियंत्रित होता है। यही तथ्य हॉर्मोन के रक्त परिवहन में पहुंचने की गति को भी नियंत्रित करते हैं। हॉर्मोन के स्रवण में तंत्रिसंचारी की ही भांति Ca^{2+} भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। स्रवण नियंत्रित न होकर एक निश्चित स्वरूप का होता है। यह या तो 24 घंटों का चक्र, ऋतु आधारित चक्र या आवर्ती चक्र (उदाहरणार्थ मानव का मासिक चक्र) हो सकता है। कुछ हॉर्मोन जैसे कि थाइरॉइड से निकलने वाला थाईरॉक्सिन (thyroxine) अथवा ट्राइआयोडोथायरोनिन (triiodothyronine) लगातार स्रवित होते रहते हैं। रक्त प्रवाह में किसी हॉर्मोन का जीवनकाल उसकी अर्ध आयु (half life) से इंगित

है जो कुछ सेकन्ड से लेकर लगभग एक सप्ताह तक का होता है। हॉर्मोन यकृत में पहुंच कर निष्क्रिय हो जाता है या यह लक्ष्य ऊतक में नष्ट हो जाता है। वृक्क की मूत्रजन नलिकाओं में 10,000 आणविक भार तक के हॉर्मोनों का वर्णात्मक फिल्टरन होने के साथ साथ मूत्र के साथ इनका उत्सर्जन भी हो जाता है।

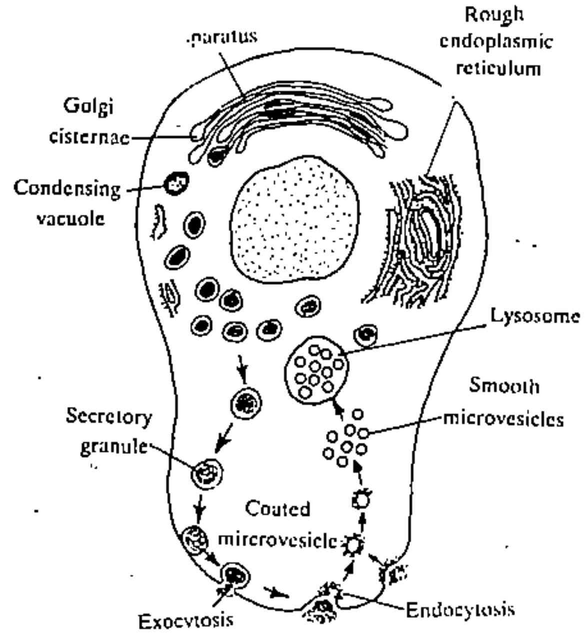

चित्र 10.5 : हॉर्मोनों का बनना तथा स्रवण। गॉल्जीकाय में बनने के बाद स्रावक थैलियां अपने मुक्ति स्थल पर पहुंच जाती हैं। एक्सोसाइटोसिस विधि द्वारा हॉर्मोन के स्रवण के बाद एन्डोसाइटोसिस (endocytosis) विधि से नई थैलियां बनती रहती हैं।

रक्त के प्लाज्मा में अनेकों हॉर्मोन प्रोटीन अणुओं से मिलकर पुंज बनाते हैं, इससे (क) वृक्क से होकर हॉर्मोनों का उत्सर्जन नहीं होने पाता तथा (ख) एन्ज़ाइम के माध्यम से हॉर्मोन नष्ट भी नहीं होने पाता। हॉर्मोन तथा प्रोटीन पुंज से हॉर्मोन का स्रवण लगातार धीरे धीरे होता रहता है।

प्लाज्मा प्रोटीन के साथ जुड़ा हॉर्मोन हमेशा थोड़े से स्वतंत्र हॉर्मोनों के साथ संतुलन बनाये रखता है इस कारण से हॉर्मोन का स्रवण धीरे धीरे ही होता रहता है। प्लाज़्मा में उपस्थित प्रोटीन अणुओं की तुलना में ग्राही अणु हॉर्मोनों के प्रति अधिक लगाव रखते हैं, अंतःस्वतंत्र हॉर्मोन ग्राही अणुओं से जुड़ता चला जाता है। इस प्रकार संतुलन में परिवर्तन आने के कारण प्लाज़्मा प्रोटीन से अधिकाधिक हॉर्मोन लगातार एंज़ाइम की प्रक्रिया से टूटता भी रहता है अतः हार्मोन की स्थाई टपक बनी रहती है। रक्त में हॉर्मोन का सांद्रण, रक्त के आयतन, कार्यकीय अवस्था, उपापचय दर तथा प्लाज़्मा प्रोटीन की हॉर्मोन बंधक क्षमता पर निर्भर होता है। रक्त में हॉर्मोन का स्तर-दूसरे पदार्थों की तुलना में बहुत कम होता है। उदाहरण के लिये एन्टीडाइयूरेटिक हॉर्मोन (ADH) लें। चूहे के रक्त में ADH का स्तर लगभग 10^{-11} मोल प्रति लीटर होता है, परन्तु यदि चूहा पानी की कमी की स्थिति से गुजरता है तो यह स्तर बढ़कर 2.5×10^{-10} मोल प्रति लीटर हो जाता है। इन्सुलिन (insulin) तथा ग्लूकागॉन (glucagon) जैसे हॉर्मोन जो रक्त में उचित शर्करा स्तर बनाये रखते हैं लगभग 10^{-9} मोल प्रति लीटर पाये जाते हैं। लैंगिक हॉर्मोन का स्तर 10^{-7} मोल प्रति लीटर से लेकर 10^{-10} मोल प्रति लीटर तक होता है। रक्त में इतने हॉर्मोन की तुलना तैरने के तालाब में घुली हुई एक चम्मच चीनी से की जा सकती है। यह उदाहरण क्या बताता है? यह प्रदर्शित करता है कि ग्राही अणु अत्यधिक संवेदनशील होते हैं तथा हॉर्मोन के अणुओं से इनकी बंधुता भी अत्यधिक होती है अतः हम यह कह सकते हैं कि हॉर्मोन तो केवल रासायनिक पदार्थ हैं, इन्हें हॉर्मोन की संज्ञा तो सवेदांगों या ग्राही अंगों से मिलती है।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित में से कौन सा कथन सत्य है और कौन सा असत्य। कारण दीजिये।

i) स्टेरॉइड हॉर्मोन की तुलना में पेप्टाइड हॉर्मोन तंत्रिसंचारी से अधिक निकट का संबंध दर्शाते हैं।

ii) सभी हॉर्मोनों का प्रभाव विभिन्न प्राणियों में एक जैसा होता है।

iii) सभी स्टेरॉइड हॉर्मोनों की चार चक्रीय संरचना होती है।

iv) रक्त में प्रोटीन से जुड़े हॉर्मोन शीघ्रता से प्रवाहित होते हैं तथा वृक्क द्वारा अधिक शीघ्रता से उत्सर्जित होते हैं।

बोध प्रश्न 2

निम्न परिभाषा को पूरा करने हेतु रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

एक हॉर्मोन किसी एक .... के रूप में परिभाषित किया जाता है जो एक प्रकार की कोशिकाओं द्वारा स्रवित हो कर दूसरे प्रकार की कोशिकाओं पर एक .... तथा .... प्रभाव डालता है।

10.3 हॉर्मोन की क्रियाविधि

हम पहले ही बताते आये हैं कि हॉर्मोन रक्त धारा या कोशिकाबाह्य तरल में प्रवाहित होते रहते हैं अतः ये शरीर की अधिकांश कोशिकाओं तक स्वतः पहुंच जाते हैं। ये अत्यधिक विशिष्ट होते हैं तथा निर्धारित लक्ष्य कोशिकाओं को ही प्रभावित करते हैं। दूसरी कोशिकाओं पर इनका प्रभाव नहीं पड़ता उदाहरण के लिये इन्सुलिन पूरे शरीर से होकर गुजरती है परन्तु केवल यकृत तथा मांसपेशी कोशिकायें ही इसके प्रभाव से ग्लूकोस लेती हैं। इसी प्रकार विभिन्न लक्ष्य कोशिकाएं विभिन्न अवसरों पर हॉर्मोनों द्वारा भिन्न भिन्न प्रकार से प्रभावित होती हैं। किसी नवजात टैडपोल में थाइरॉक्सीन का इंजेक्शन लगाने पर भी कायांतरण नहीं होता क्योंकि इसकी कोशिकाएं हॉर्मोन से प्रभावित नहीं होती, जबकि एक प्रौढ़ टैडपोल की कोशिकाएं इस हॉर्मोन से आसानी से प्रभावित हो जाती हैं। इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि ग्राही अणु एक विशेष हॉर्मोन की पहचान करते हैं तथा उससे जुड़ जाते हैं। दूसरी कोशिकाओं पर ये ग्राही अणु नहीं पाए जाते।

एक लक्ष्य-कोशिका पर जब एक हॉर्मोन पहुंचता है तो कोशिका में अनेकों प्रकार के परिवर्तन होते हैं:

- विभिन्न एंज़ाइमों की क्रिया या तो बढ़ जाती है अथवा घट जाती है अर्थात् निष्क्रिय एंज़ाइम सक्रिय हो उठते हैं।
- प्लाज़्मा झिल्ली की पारगम्यता में परिवर्तन आता है।
- कुछ जीन अधिक सक्रिय होकर mRNA में परिवर्तन करते हैं तथा लक्ष्य-कोशिकाओं द्वारा भिन्न प्रकार के प्रोटीन बनते हैं।

अपनी लक्ष्य-कोशिकाओं पर किसी हॉर्मोन की कार्यविधि तंत्रिसंचारी की कार्यविधि जैसी ही है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि दोनों ही संचार व्यवस्थाओं में रासायनिक भाषा का प्रयोग किया जाता है। इसमें तीन प्रमुख चरण हैं जिन्हें चित्र 10.6 में दर्शाया गया है।

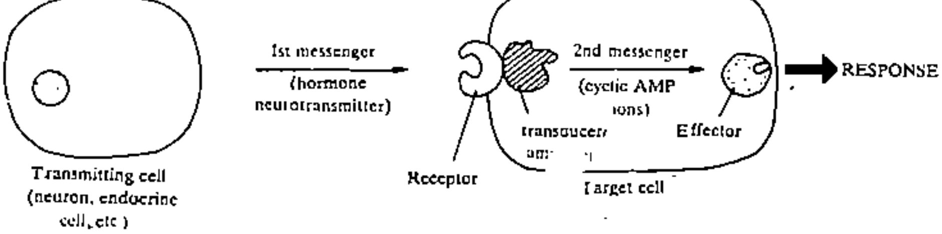

चित्र 10.6 : रासायनिक संदेश वाहकों की अंतःकोशिकीय संचार व्यवस्था।

किसी हॉर्मोन के कार्य की गति इसकी कार्य प्रणाली पर आधारित होती है उदाहरणार्थ इन्सुलिन रक्त प्रवाह में आने के कुछेक मिनटों में ही अपने लक्ष्य ऊतक को प्रभावित करता है क्योंकि प्लाज़्मा झिल्ली को पार करके यह कोशिका के उपापचयन पर सीधा प्रभाव डालता है। दूसरे हॉर्मोन कोशिका के अंदर प्रवेश नहीं करते, परन्तु प्लाज़्मा झिल्ली पर मौजूद संवेदांगों से जुड़ जाते हैं तथा उपापचय अनुलेखन को प्रभावित करते हैं। ऐसे हॉर्मोन जो आनुवांशिकी क्रिया तथा प्रोटीन के बनने को प्रभावित करते हैं, अत्यधिक मंद गति से कार्यरत होते हैं।

विभिन्न हॉर्मोन दो समूहों में विभाजित किये गये हैं:

1. स्टेरॉइड तथा वसा में घुलनशील हॉर्मोन जो लक्ष्य-कोशिकाओं की कोशिका भित्ती को भेदने में सक्षम हैं।
2. प्रोटीन हॉर्मोन तथा कैटीकोलामीन (catecholamine) जो लक्ष्य-कोशिकाओं की कोशिका भित्ती को भेदने में अक्षम है अथवा कम सक्षम है।

अब हम स्टेरॉइड तथा थाइरॉइड हॉर्मोनों के कार्य का वर्णन करेंगे। सामान्यतः स्टेरॉइड हॉर्मोन लक्ष्य-कोशिकाओं में अनुलेखन (transcription) प्रेरित करते हैं और प्रोटीन हॉर्मोन झिल्ली पारगम्यता को प्रभावित करते हैं। ये एंज़ाइम की क्रिया पर भी अपना प्रभाव दर्शाते हैं।

10.3.1 स्टेरॉइड तथा थाइरॉइड हॉर्मोन

स्टेरॉइड के लिए कोशिकाद्रवीय ग्राही (cytoplasmic receptor) ऐसे प्रोटीन के रूप में होते हैं जिनमें दो उपइकाइयां होती हैं जो स्टेरॉइड अणुओं को अपने से जोड़ती हैं। ग्राही के दोनों स्थानों पर स्टेरॉइड अणुओं के लग जाने से **ग्राही स्टेरॉइड संकर** (receptor-steroid complex) बनता है। इस संकर में से एक उपइकाई केंद्रीय क्रोमैटिन के एक विशिष्ट स्थान पर आ लगती है। अब ग्राही उपइकाइयां प्रथक्क हो जाती हैं। दूसरी उपइकाई निकट के DNA खंड से जुड़ कर, DNA के उक्त खंड का अनुलेखन करते हुए mRNA बनाती है (बाक्स 10.1 देखें)। थाइरॉइड ग्रन्थि के हॉर्मोन भी इसी प्रकार से काम करते हैं पर इनके ग्राही केन्द्रक में स्थित होते हैं। थाइरॉइड द्वारा स्रावित प्रमुख हॉर्मोन थायरॉक्सिन (T-4) है। यह रक्त के वाहक प्रोटीन से जुड़ कर चलता है। थाइरॉइड ग्रन्थि थोड़ी मात्रा में ट्राइआयोडोथाइरोनीन (T-3) का भी स्रवण करती है। वाहक प्रोटीन T-4 के प्रति अधिक बंधुता रखते हैं अतः प्लाज्मा में ये स्वतन्त्र अवस्था में बहुत कम मिलता है। स्वतंत्र T-4 तथा T-3 ही कोशिका में प्रवेश करते हैं। बाकि संयुक्त T-4 आशय की भूमिका निभाते हैं जिससे T-4 धीमी गति से प्रवाहित होता रहे। कोशिका के अंदर प्रवेश करने पर स्वतंत्र T-4 एंज़ाइम क्रिया द्वारा T-3 में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार थाइरॉइड हॉर्मोन का अधिक शक्तिशाली तथा सक्रिय रूप T-3 है। चित्र 10.7 स्टेरॉइड हॉर्मोनों की कार्यकी समीक्षित करता है।

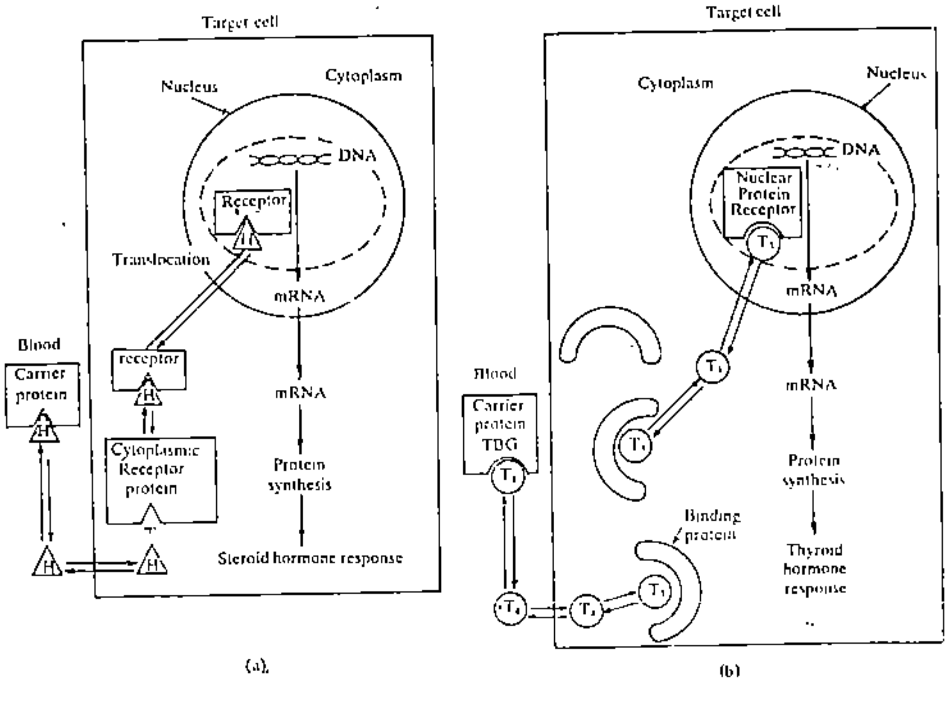

चित्र 10.7 : a) स्टेरॉइड हॉर्मोन, b) थाइरॉइड हॉर्मोन की आणविक क्रिया।

बॉक्स 10.1

ऑटोरेडियोग्राफी (autoradiography) तकनीक द्वारा यह प्रदर्शित किया जा सकता है कि स्टेरॉइड हॉर्मोन केवल लक्ष्य-कोशिकाओं के केन्द्रक में इकट्ठा रहते हैं, दूसरी कोशिकाओं के केन्द्रकों में नहीं। इनका संचय अत्यधिक तीव्रता से होता है तथा रक्त परिवहन से चिन्हित हॉर्मोन के हटने के थोड़े समय बाद भी बना रहता है। इन तथ्यों से यह विदित होता है कि स्टेरॉइड बंधक ग्राही लक्ष्य-कोशिकाओं के जीवद्रव्य में मौजूद थे। चूहे के गर्भाशय के लक्ष्य ऊतक को प्रभाजन के बाद चिन्हित हॉर्मोन, एस्ट्राडिऑल (estradiol) के साथ ऊष्मायनित करने पर रोज़र गोर्सके (Roger Gorske) तथा सहयोगियों ने (1979) प्रोटीन के रूप में ऐसे ग्राही पाये जिनका आणुविक भार 200,000 था। यह प्रोटीन, जो गर्भाशय के ही ऊतक में पाया जाता है, एस्ट्राडियॉल से अत्यंत मजबूती से जुड़ता है। एक महत्वपूर्ण खोज यह भी रही कि ऐसे पदार्थ जो एस्ट्राडिऑल जैसी ही क्रिया करते हैं, इस प्रोटीन से जुड़ने की क्षमता रखते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि ग्राही स्टेरॉइड संकर हॉर्मोन की प्रक्रिया का एक मध्य चरण है। ऐसे ही ग्राही प्रोटीन दूसरे स्टेरॉइड हॉर्मोनों के लक्ष्य-ऊतकों में भी पाये जाते हैं।

10.3.2 पेप्टाइड हॉर्मोन

स्टेरॉइड हॉर्मोन की तुलना में प्रोटीन हॉर्मोन की क्रिया दूसरी प्रकार से होती है यह हॉर्मोन कोशिका के अंदर नहीं जाता परंतु लक्ष्य-कोशिका की सतह पर ही विशेष प्रोटीन ग्राहियों से जुड़कर निम्न क्रियाएँ करता है।

1) यह कोशिका भित्ती में जुड़े एंज़ाइम को कार्यशील करता है अथवा

2) कोशिका भित्ति में आयन वाहिका या द्वार (ion channels) खोल देता है।

पहली व्यवस्था का क्रियाशील एंज़ाइम है ऐडेनिलेट साइक्लेज़ (adenylate cyclase) जो ATP से cAMP (चक्रीय ए.एम.पी.) बनने की क्रिया को उत्प्रेरित करता है। एक उत्प्रेरित ऐडनिलेट साइक्लेज़ प्रतिमिनट लगभग 1000 cAMP अणु बनाता है। इस प्रकार यह एंज़ाइम प्रथम संदेशवाहक तथा ग्राही की प्रतिक्रिया को बढ़ाता है (चित्र 10.8)। cAMP द्वितीय संदेशवाहक की भूमिका निभाता है। यह कोशिका के अंदर क्रियाशील होकर एक विशेष प्रकार के एंज़ाइम को उत्प्रेरित करता है जिसे **प्रोटिन काइनेज** (protein kinase) कहा जाता है। प्रोटीन काइनेज प्रोटीन का फ़ास्फ़ेटीकरण करते हैं। ये प्रोटीन दूसरे एंज़ाइमों के रूप में अथवा संरचनात्मक प्रोटीन के रूप में या केन्द्रकीय प्रोटीन के रूप में पाए जाते हैं तथा इनका विन्यास बदलता रहता है। इस प्रकार विभिन्न एंज़ाइम अधिक क्रियाशील हो जाते हैं तथा कोशिका की झिल्ली की पारगम्यता में परिवर्तन हो जाता है। यह परिवर्तन कोशिका के प्रकार पर निर्भर करता है।

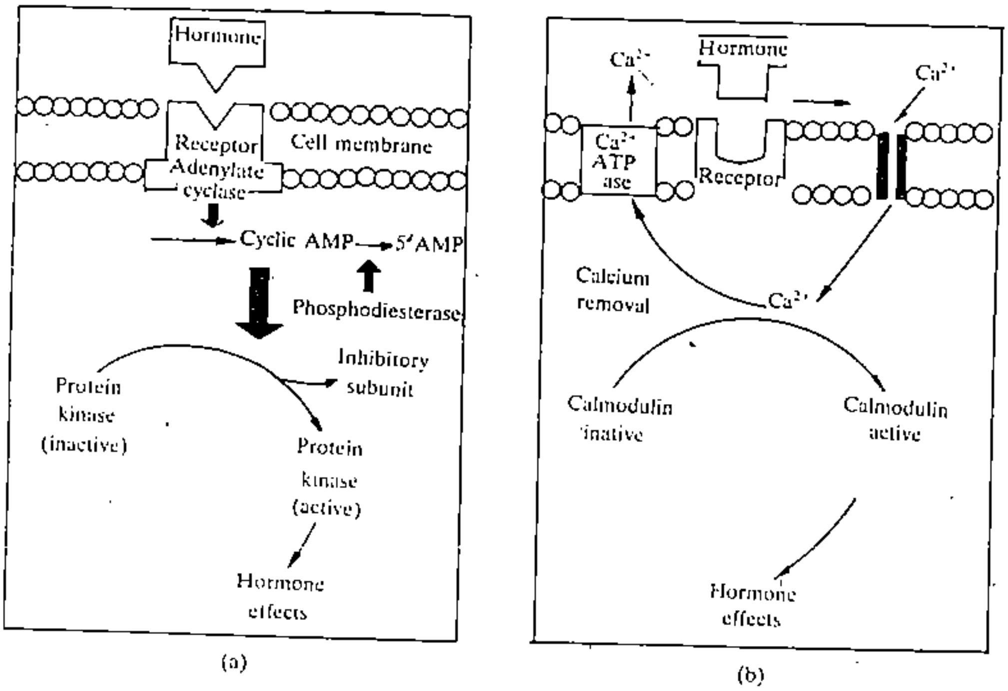

(a) (b)

चित्र 10.8 : हॉर्मोन की द्वितीय संदेशवाहक धारणा a) cAMP के बनने से b) कैल्सियम कैलमॉड्युलिन व्यवस्था द्वारा।

दूसरी व्यवस्था में (चित्र 10.8 b) ग्राही तथा हॉर्मोन की प्रतिक्रिया से सरल आयन वाहिकायें खुल जाती हैं, जिससे झिल्ली पर कैल्सियम आयन (Ca^{2+}) आ जाते हैं। इस प्रकार कैल्सियम कोशिका के अंदर प्रवेश कर जाता है। इससे प्रथम संदेशवाहक तथा ग्राही की प्रतिक्रिया अधिक तीव्र हो जाती है। Ca^{2+} द्वितीय संदेशवाहक की भूमिका निभाता है। अनेकों कोशिकाएँ कैलमाड्युलिन (calmodulin) बनाती है, जो कैल्सियम पर आधारित एक नियमक प्रोटीन है। ये प्रोटीन विभिन्न प्रकार की लक्ष्य-कोशिकाओं पर भिन्न भिन्न प्रकार के प्रभाव पैदा करते हैं। इन दोनों द्वितीय संदेशवाहक व्यवस्थाओं में एक समरूपता है। इनकी लक्ष्य-कोशिकायें एक दूसरे से द्वितीय संदेशवाहक के रूप में भिन्न न होकर द्वितीय संदेशवाहक को प्रेरित करने वाले ग्राहियों के रूप में भिन्न होती है। इस प्रकार cAMP तथा केल्सियम आयन के स्तर को विभिन्न औषधियों द्वारा उच्च कर के अनेकों हॉर्मोन जैसी क्रिया पैदा की जा सकती है।

विभिन्न हॉर्मोनों के प्रभाव से कुछ लक्ष्य-कोशिकाओं में Ca^{2+} तथा cAMP एक दूसरे के विपरीत क्रिया करते हैं, उदाहरणार्थ जहां Ca^{2+} अनैच्छिक पेशियों को संकुचित करता है वहीं cAMP उनका शिथिलन करता है। दूसरी व्यवस्थाओं में दोनों ही द्वितीय संदेशवाहक एक दूसरे से उचित तालमेल बनाते हुए संकर्मी विधि से कार्य करते हैं, उदाहरणार्थ ऐसीटिलकोलिन एड्रीनल मेडुला में कैल्सियम आयन के पट खोलकर एड्रिनलीन स्रवित करता है। मेडुला की कोशिकाओं में एड्रीनाइलेट साइक्लेज से संबंधित ग्राही होता है। cAMP की अधिकता से कोशिका के कैल्सियम संग्रह द्वारा अधिक कैल्सियम आयन निकलते रहते हैं। इस प्रकार cAMP कैल्सियम के तालमेल से अपना कार्य संपन्न करते हैं। cAMP का स्तर बढ़ने से एड्रिनलीन की उत्पत्ति भी बढ़ जाती है। चित्र 10.9 इस योगवाही क्रिया की समीक्षा करता है।

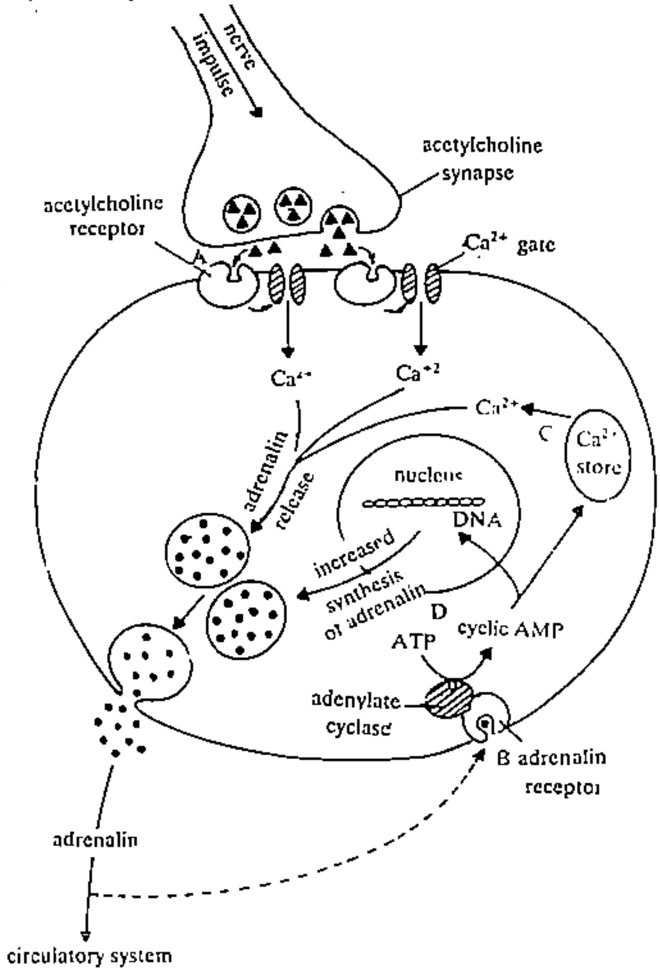

चित्र 10.9 : एड्रिनल मेडुला से एड्रिनलीन की उत्पत्ति को प्रभावित करने वाले कारक।

बोध प्रश्न 3

लक्ष्य-कोशिका में विभिन्न हॉर्मोन एक को छोड़कर निम्न परिवर्तन करते हैं :

i) झिल्ली की पारगम्यता में परिवर्तन

ii) उपापचय की दर में परिवर्तन

iii) कोशिका के अंदर cAMP की सांद्रता में वृद्धि

iv) कोशिकाओं की आनुवंशिक संरचना में परिवर्तन

v) भिन्न mRNA तथा प्रोटीन की उत्पत्ति

10.4 तंत्रिका-अंतःस्रावी संबंध

कुछ अंतःस्रावी ग्रंथियां केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र का ही एक हिस्सा बनाती हैं। तंत्रिका तंत्र तथा अंतःस्रावी ग्रंथि की कार्यकी के बीच अत्यंत घनिष्ट संबंध है जिसकी विवेचना हम इस अध्याय के अंत में करेंगे।

10.4.1 हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी

हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी ग्रंथि (पीयूष ग्रंथि) के बीच एक महत्वपूर्ण तंत्रिका अंतःस्रावी संबंध है (बॉक्स 10.2)। हाइपोथैलेमस मस्तिष्क का एक ऐसा हिस्सा है जो पिट्यूटरी ग्रंथि से जुड़ा है। पिट्यूटरी ग्रंथि मुख गुहा के ऊपरी सतह पर कपाल के अधस्तल पर स्थित एक छोटा सा अंग है (चित्र 10.10 a)।

वैसलियस ने 16वीं शताब्दी में पिट्यूटरी ग्रंथि की खोज की थी उसकी अवधारणा के अनुसार यह ग्रंथि नासिका रंध्र से निकलने वाले तरल पदार्थ को स्रवित करती है।

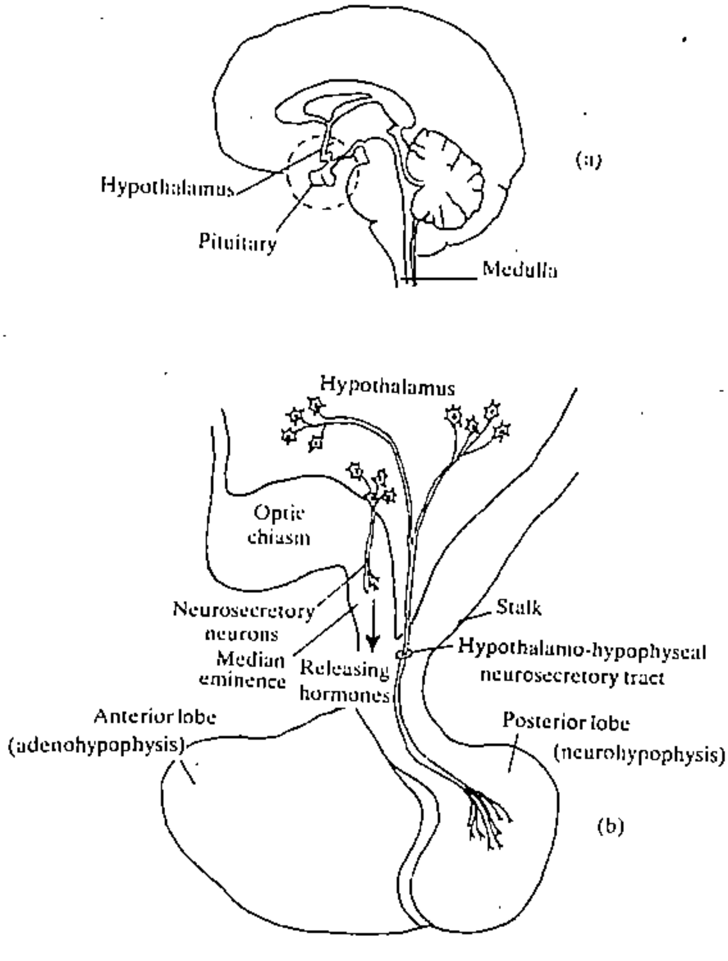

चित्र 10.10 : a) पिट्यूटरी ग्रंथि तथा हाइपोथैलेमस की स्थिति।
b) पिट्यूटरी ग्रंथि के प्रमुख हिस्से—अग्रपालि, पश्चपाली तथा वृंत। तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं की ओर ध्यान दें।

बॉक्स 10.2

1920 में जर्मनी के वैज्ञानिक अर्नस्ट शारर (Ernst Scharrer) ने मिनो पक्षी *फोक्सिनस फोक्सिनस* (*Phoxinus phoxinus*) के मस्तिष्क के हाइपोथैलेमस के हिस्से में मौजूद तंत्रकाणु को अंतःस्रावी ग्रंथि कोशिका जैसा ही पाया। इन तंत्रकाणुओं के अक्षतंतु हाइपोथैलेमस से निकलकर पिट्यूटरी ग्रंथि में जा रहे थे। इन अक्षतंतुओं के स्वतंत्र सिरो पर फूल कर गुब्बारेनुमा संरचनायें बनी थी जो पिट्यूटरी ग्रथि से संबंधित कुछेक रक्त कोशिकाओं से लगी हुयी थी। इस प्रकार शारर ने निष्कर्ष निकाला कि पिट्यूटरी ग्रंथि द्वारा स्रावित कुछेक हॉर्मोन वास्तविक रूप में हाइपोथैलेमस में बनते हैं तथा पिट्यूटरी ग्रंथि इनका संचय करती है। उस समय इस अवधारणा को पूरी तरह से अवमानित कर दिया गया। परन्तु शारर तथा उसकी पत्नी बर्टा (Berta) लगातार दूसरे प्राणियों में इस प्रकार के अन्वेषण करते रहे। 1950 के दशक के प्रारंभ में शारर की इस अवधारणा को प्रमाणित करने के लिए अनेकों तथ्य इकट्ठा किए गए। इस क्रिया को **तंत्रिकास्रवण** (neuroseretion) कहा गया। इसके द्वारा स्रवित पदार्थ को **न्यूरो**... की संज्ञा देकर यह प्रमाणित किया गया कि इसकी उत्पत्ति तंत्रिका ऊतक से ही होती है। इसके संचयी अंगों को **तंत्रिकारक्तीय अंग** (neurohaemal organs) कहा गया क्योंकि इन अंगों में कोशिकाओं तथा तंत्रिका प्रवर्धों के बीच निकट संबंध हैं।

पिट्यूटरी ग्रंथि को ही हाइपोफिसिस (hypophysis) भी कहा जाता है। इसमें पाये जाने वाले दो प्रकार के ऊतक एक दूसरे से भ्रोणिकी (embryology) में भिन्न हैं। इसका **अग्रभाग** या **ऐडिनोहाइपोफाइसिस** (adenohypophysis) मुखगुहा के ऊपरी सतह से बना है तथा **पश्यभाग** या **न्यूरोहाइपोफाइसिस** (neurohypophysis) हाइपोथैलेमस से बना है। पिट्यूटरी ग्रंथि हाइपोथैलेमस से एक वृंत (stalk) द्वारा जुड़ी है।

न्यूरोहाइपोफाइसिस की संरचना में अधिकतर **तंत्रिकास्रावी प्रवर्ध** (neurosecretory endings) पाये जाते हैं। इन प्रवर्धों की तंत्रिका कोशिकाओं की उत्पत्ति हाइपोथैलेमस में होती है (इन्हीं तंत्रिका कोशिकाओं की खोज शारर और उसके साथियों ने की थी) तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं दूसरी तंत्रिका कोशिकाओं से प्रवर्धों की स्थिति तथा संरचना में भिन्न हैं। इनमें प्रवर्धों की संख्या अधिक होने के कारण उद्दीपन द्वारा अधिक मांत्रा में न्यूरोहॉर्मोन स्रवित होता है जहां दूसरे तंत्रिका अंतर्गथन में स्रवित कणों का आकार 40-100 nm है वहीं इन तंत्रिका प्रवर्धों में इनका आकार अधिक बड़ा (200-500 nm) है। हाइपोथैलेमस की ये तंत्रिका कोशिकायें दो प्रकार के हॉर्मोन स्रवित करती हैं। ये हैं वैसोप्रेसिन (vasopresin) या एन्टीडाइयूरेटिक हॉर्मोन (ADH) और ऑक्सीटोसिन (oxytosin) इनका परिवहन अक्षतंतु से होता है। इनका संचय तंत्रिका प्रवर्धों में होता है जहां से ये पिट्यूटरी के पश्यपालि में स्रवित होते हैं।

पिट्यूटरी के अग्रपालि से कम से कम 7 पेप्टाइड हॉर्मोन निकलते हैं। तालिका 10.2 इनकी संरचना तथा लक्ष्य ऊतक में इनकी कार्यकी दर्शाती है।

तालिका 10.2 : पिट्यूटरी ग्रंथि के अग्रपालि के हॉर्मोन

हॉर्मोन	संरचना	लक्ष्य ऊतक	क्रिया
ऐडिनोकार्टिकोट्रॉपिन (ACTH)	पेप्टाइड	एड्रिनल कॉर्टेक्स	कार्टिकोस्टेरॉइड के बनने तथा स्रवण को प्रेरित करता है।
थाइरॉइड स्टिम्यूलेटिंग हॉर्मोन (TSH)	ग्लाइकोप्रोटीन	थाइरॉइड ग्रंथि	थायरॉक्सिन तथा ट्राइआयोडोथाइरॉक्सिन के बनने तथा स्रवण को प्रेरित करता है।
ग्रोथ हॉर्मोन (GH)	पेप्टाइड	यकृत	यकृत द्वारा सोमैटोमेडिन के स्रवण को प्रेरित करता है। ये यकृत, पेशी, वसा ऊतक इत्यादि के उपापचय को प्रभावित करता है।
फॉलिकिल स्टिम्यूलेटिंग हॉर्मोन (FSH)	ग्लायकोप्रोटीन	वृषण तथा अंडाशय	जनन कोशिकाओं का बनना तथा इनकी परिपक्वता नियंत्रित करता है।
ल्यूटिनाइजिंग हॉर्मोन (LH)	ग्लायकोप्रोटीन	वृषण तथा अंडाशय	स्टेरॉइड हॉर्मोन का स्रवण नियंत्रित करता है। नर तथा मादा लैंगिक गुणों के लिए जिम्मेदार है। अण्डोत्सर्ग प्रेरित करता है।
प्रोलैक्टिन (LH)	पेप्टाइड	स्तनग्रंथियां	दुग्ध का बनना प्रेरित करता है
		कॉर्पस ल्यूटियम	एस्ट्रोजेन तथा प्रोजेस्ट्रॉन का स्रवण बनाये रखता है।
		यकृत	उन फेरोमोनों का बनना प्रेरित करता है जो स्तनधारियों में मातृत्व नियंत्रित करते है।
		मछली के गिल	लवण संतुलन तथा जल नियंत्रण बनाये रखता है।
मेलैनोसाइट स्टिम्यूलेटिंग हॉर्मोन (MSH)	पेप्टाइड	रंगकोशिकाए	मेलैनिन के बनने को प्रोत्साहित करता है। निम्न कोटि के कशेरुकी प्राणियों में त्वचा के रंग को कालापन देता है। किन्हीं स्तनधारियों में बालों के रंग को नियंत्रित करता है और कुछेक तंत्रिका कोशिकाओं की क्रिया को प्रभावित करता है।

GH तथा MSH के अतिरिक्त अग्रपालि के सभी हॉर्मोन **अनुवर्तनीय** अर्थात् **ट्रोपिक हॉर्मोन** हैं (ग्रीक भाषा में भावार्थ बदलना या परिवर्तन है) । ये शरीर के विभिन्न भागों में पाई जाने वाली अंतःस्रावी ग्रंथियों के स्रवण को प्रोत्साहित करते हैं। GH तथा MSH सीधी प्रक्रिया करने वाले हॉर्मोन हैं। पिट्यूटरी के अग्रपालि की स्रवण क्रिया, हाइपोथैलेमस द्वारा स्रवित विभिन्न हॉर्मोन या कारकों द्वारा नियमित होती है। इनमें से कुछेक तो **मोचन कारक** (releasing factors) हैं और कुछेक **मोचन संदमन कारक** (release inhibiting factors) की भूमिका निभाते हैं। ये सभी हॉर्मोन लघुपेप्टाइड हॉर्मोन हैं तथा इनका नामकरण अग्रपिट्यूटरी पर इनकी क्रिया के आधार पर किया गया है (बॉक्स 10.3) । तालिका 10.3 में इस प्रकार के विभिन्न कारक तथा अग्रपिट्यूटरी पर इनकी क्रिया दर्शाई गई है।

तालिका 10.3 : अग्रपिट्यूटरी के हॉर्मोनों का मोचन तथा संदमन करने वाले हाइपोथैलेमस के हॉर्मोन

हॉर्मोन	संरचना	कार्यकी
कॉर्टिकोट्रॉपिन रिलीज़िंग हॉर्मोन (CRH)	पेप्टाइड	ACTH मोचन को प्रेरित करता है।
TSH रिलीज़िंग हॉर्मोन	पेप्टाइड	TSH तथा प्रोलैक्टिन के मोचन को प्रेरित करता है।
GH रिलीज़िंग हॉर्मोन	पेप्टाइड	GH के मोचन को प्रेरित करता है।
FSH तथा LH रिलीज़िंग हॉर्मोन अथवा गोनैडोट्रापिन रिलिज़िंग हॉर्मोन (GrRH)	पेप्टाइड	FSH तथा LH के मोचन को प्रेरित करता है।
GH इन्हीबिटिंग हॉर्मोन (GIH) (सो[illegible]टिन)	पेप्टाइड	GH के मोचन का संदमन करता है तथा TSH के मोचन में रुकावट करता है।
प्रोर [illegible] लीज़-इन्हीबिटिंग हॉर्मोन (PIH)	डोपामीन	प्रोलैक्टिन के मोचन का संदमन करता है।
नयह रिलाज़-इन्हीबिटिंग हॉर्मोन (MIH)	पेप्टाइड	MSH के मोचन का संदमन करता है।

ये सभी मोचन कारक हाइपोथैलेमस से पिट्यूटरी के अग्रपालि तक **निवाहिका शिराओं** (portal veins) से होकर पहुंचते हैं (चित्र 10.11)।

एक निवाहिका तंत्र अनेकों रक्त वाहिकाओं की एक श्रेणीबद्ध व्यवस्था है, जो कोशिकाओं के दो समुच्चयों के बीच रक्त का संचार, हृदय में वापस आने से पहले ही, करती है।

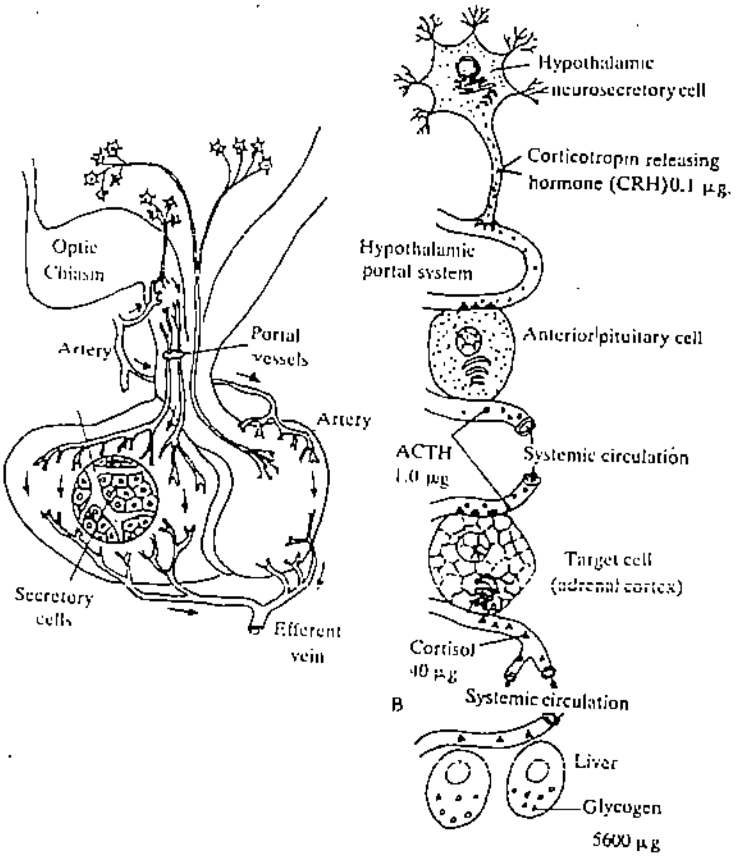

चित्र 10.11 : (A) हाइपोथैलेमो-हाइपोफीसियल निवाहिका तंत्र (B) ACTH-अंतःस्रावी तंत्र में प्रवर्धन।

अब तक आपने यह जान लिया कि पिट्यूटरी तथा हाइपोथैलेमस जैविकी नियंत्रण के केन्द्र बिंदु हैं। मस्तिष्क की तरह हाइपोथैलेमस **रक्त मस्तिष्क रोधिका** (blood brain barrier) द्वारा सुरक्षित नहीं है, अतः रक्त प्रवाह में होने वाला कोई भी परिवर्तन इसके द्वारा पहचान लिया जाता है। किसी भी परिवर्तन का पता हाइपोथैलेमस में मौजूद विभिन्न संवेदी व्यवस्थाओं द्वारा लगाया जाता है। मस्तिष्क की किसी भी प्रकार की संवेदी सूचना हाइपोथैलेमस से होकर चलती है। इस प्रकार यह तंत्रिका संबंधी तथा रक्त संबंधी सूचनाओं को जोड़कर दोनों प्रकार के निवेशों में तालमेल बनाते हुए एक उचित अनुक्रिया करता है।

बॉक्स 10.3

ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के जियोफ्री हैरिस (Geoffrey Harris) ने 1940 के दशक में यह परिकल्पना प्रस्तुत करी कि विद्युतीय उद्दीपन द्वारा हाइपोथैलेमस की तंत्रिकास्रावी तंत्रिकाओं द्वारा कुछेक न्यूरोहॉर्मोन स्रवित होते हैं। ये अग्रपिट्यूटरी के हॉर्मोन का संदमन अथवा उद्दीपन करते हैं। चूंकि ऐसे न्यूरोहॉर्मोन अथवा मोचन कारक और मोचन संदमन कारकों को विलग करना अत्यंत जटिल कार्य है अतः यह विचार आसानी से माना नहीं गया।

1969 में वैज्ञानिकों के दो समूहों ने एक मोचन कारक को विलग करके इसकी रासायनिक पहचान की। यह था थाइरॉइड स्टिम्यूलेटिंग हॉर्मोन रिलीजिंग फेक्टर (TRF) जो अग्रपिट्यूटरी में संवंधित कोशिकाओं को TSH स्रवित करने के लिए प्रेरित करता है। इन दोनों समूहों के प्रमुख अनुसंधान कर्ताओं, रोजर गिलेमिन (Roger Guillemin) तथा एन्ड्रू शैली (Andrew Schally) को 1977 में कार्यकी तथा औषधिविज्ञान के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। गिलेमिन के अनुसार TRF के प्रथम मिलीग्राम को पाने की कीमत बहुत अधिक थी। अकेले उनका समूह भेड़ के 500 टन मस्तिष्क से चार वर्षों में हाइपोथैलेमस के 50 लाख टुकड़े पा सका। इसकी कीमत लगभग 1 ग्राम चांद की चट्टान को धरती पर लाने की कीमत के बराबर ही थी।

10.4.2 हॉर्मोन स्रवण का नियमन

शरीर में विभिन्न तरलपदार्थों की संरचना अथवा उपापचय की दर को या दूसरी शारीरिक क्रियाओं को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न हॉर्मोनों का स्रवण एक मूल स्तर पर होता रहता है। अंतःस्रावी ग्रंथियों पर विभिन्न संकेतों द्वारा यह मूल स्तर घटता बढ़ता रहता है। ये संकेत अंतःस्रावी ऊतक पर तंत्रिसंचारी के रूप में मिलते हैं या ये दूसरे अंतःस्रावी ऊतकों द्वारा स्रवित हॉर्मोन भी हो सकते हैं।

अंतःस्रावी ऊतक आंतरिक तथा बाह्य उद्दीपकों की प्रेरणा से हॉर्मोन का स्रवण करते हैं या ये **पुनर्निवेश चक्र** (feedback circuit) का एक हिस्सा बन जाते हैं। पुनर्निवेश चक्र के अर्थ से आप भली भांति परिचित हैं (FST-1)। इस प्रकार हॉर्मोन का स्रवण अपने एक या अनेक नतीजों से प्रभावित होता है। अंतःस्रावी ऊतक द्वारा स्रवण अधिकांशतया **ऋणात्मक पुनर्निवेश नियंत्रण** (negative feedback control) से होता है अर्थात् किसी हॉर्मोन की अपनी सांद्रता या लक्ष्य ऊतक की उक्त हॉर्मोन के प्रति अनुक्रिया हॉर्मोन के स्रवण पर निरोधी प्रभाव बनाये रखती है। इस प्रकार का ऋणात्मक पुनर्निवेश लघुपाशीय अथवा दीर्घपाशीय होता है। इस प्रक्रिया को समझाने हेतु आइए हम कुछ उदाहरण लें। रक्त में कैल्सियम का स्तर घट जाने पर पैराथायरॉइड ग्रंथि द्वारा पैराथॉर्मोन स्रवित होता है। पैराथॉर्मोन हड्डियों से कैल्सियम को जहां निकालने का काम करता है वहीं वृक्क द्वारा कैल्सियम का उत्सर्जन घटाता है तथा आंतों में इसका अवशोषण बढ़ाता है। इन सभी क्रियाओं से रक्त में कैल्सियम की सांद्रता बढ़ जाती है और इसका स्तर कुछेक घण्टों में सामान्य हो जाता है। अब रक्त में कैल्सियम का बढ़ना पैराथॉर्मोन के स्रवण पर निरोधी प्रभाव दर्शाता है (चित्र 10.12)। यह लघुपाशीय ऋणात्मक पुनर्निवेश व्यवस्था का एक उदाहरण था। पाश्वपिट्यूटरी में भी हॉर्मोन स्रवण से संबंधित इसी प्रकार की साधारण पुनर्निवेश नियंत्रण व्यवस्थायें मिलती हैं।

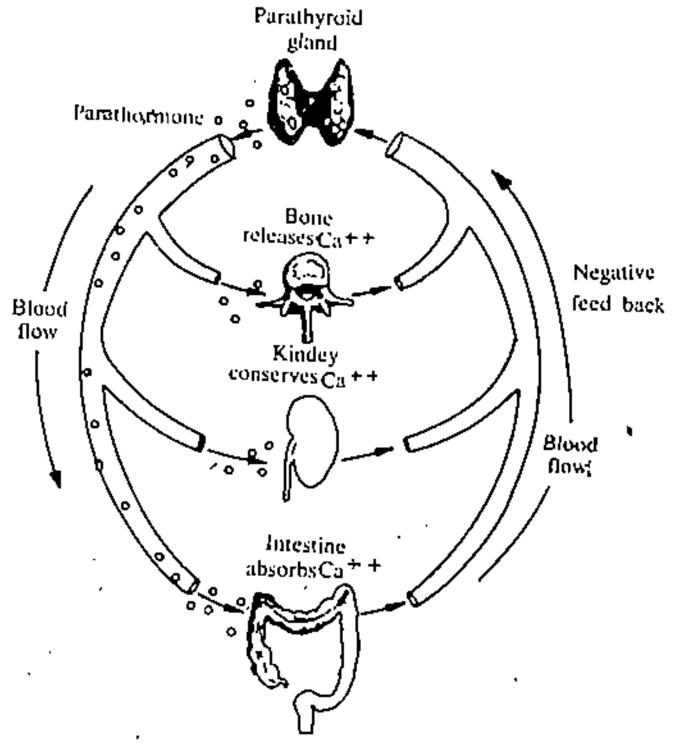

चित्र 10.12 : पैराथाइरॉइड स्रवण का पुनर्निवेश नियंत्रण।

कभी कभी दो स्थानों पर संदमन दिखता है जिसमें लघु तथा दीर्घपाशीय चक्र बनते हैं। अग्रपिट्यूटरी से हॉर्मोन का स्रवण एक अधिक जटिल ऋणात्मक पुनर्निवेश पाश (चित्र 10.13) का उदाहरण है।

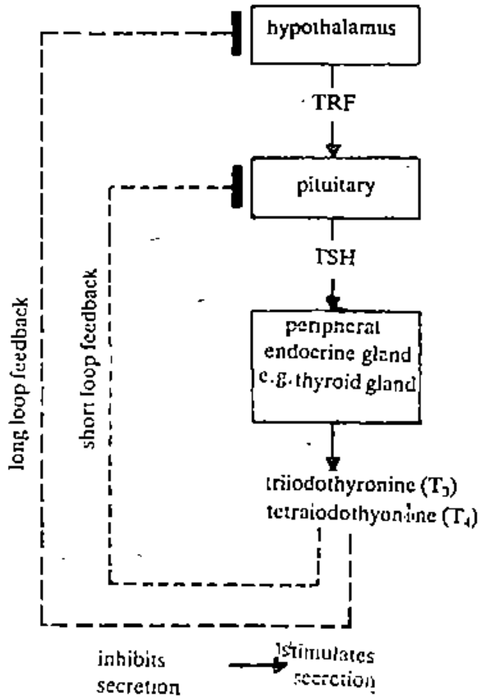

चित्र 10.13 : अनुवर्तनीय हॉर्मोनों का एक उदाहरण, थाइरॉइड हॉर्मोन का पुनर्निवेश नियंत्रण।

रक्त में थाइरॉक्सिन का उच्च स्तर थाइरॉइड स्टिम्युलेटिंग हॉर्मोन TSH के स्रवण का संदमन करता है। यह संदमन अग्रपिट्यूटरी तथा हाइपोथैलेमस दोनों में ही क्रियान्वित होता है। इस प्रकार के ऋणात्मक पुनर्निवेश के अतिरिक्त नियंत्रण की एक ऐसी भी प्रक्रिया है जो स्वयं में भोज्य है। इसमें हॉर्मोन के स्रवण से ही अधिक हॉर्मोन स्रवित होने लगता है। इसे **धनात्मक पुनर्निवेश** (positive feedback) कहते हैं। यह प्रक्रिया कुछेक कशेरुकी प्राणियों के प्रजनन चक्र में दिखती है जिसमें शीघ्र ही एक तीव्र अनुक्रिया के जनन की आवश्यकता होती है।

अब तक हमने अंतःस्रावी क्रियाओं में होने वाले सामान्य नियमों का अध्ययन किया। एक अवधारणा को दर्शाने वाले अधिकांश उदाहरण कशेरुकी से, विशेषकर स्तनधारी प्राणियों से लिये गये हैं। अगले भाग में हम अकशेरुकी हॉर्मोन तंत्र का अध्ययन कुछेक कीट हॉर्मोन का उदाहरण लेते हुए करेंगे।

बोध प्रश्न 4

क) नीचे कुछ कथन दिए गए हैं जो पूण रूप से असत्य नहीं हैं। इन्हें परिशुद्ध करने के लिए कुछ परिवर्तन आवश्यक है।
   i) पिट्यूटरी के अग्रपालि से स्रवित होने वाले हॉर्मोन मस्तिष्क द्वारा स्रवित मोचन कारक से नियंत्रित होते हैं।
   ii) अग्रपिट्यूटरी की कोशिकाए हाइपोथैलेमेस से तंत्रिका-कोशिकाओं द्वारा जुड़ी रहती हैं।
   iii) थाइरैक्सिन का स्रवण पिट्यूटरी द्वारा नियंत्रित होता है।

ख) रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।
   हॉर्मोन का स्रवण एक .... नियंत्रण प्रणाली द्वारा नियमित किया जाता है।
   वह नियंत्रण प्रणाली जो हॉर्मोन के स्रवण को प्रारंभिक स्रवण स्तर की अनुक्रिया में प्रोत्साहित करती है, ... कहलाती है।

10.5 कीट हॉर्मोन

पिछले पचास वर्षों में शरीरक्रिया विज्ञानियों ने अनेकों अकशेरुकी प्राणियों में भी अंतःस्रावी तंत्र देखे जो कशेरुकी प्राणियों के अंतःस्रावी तंत्र जैसे ही जटिल हैं। इन दोनों प्राणी समूहों के हॉर्मोनों में कुछेक समरुपतायें दिखाई देती हैं। अकशेरुकी प्राणियों में हॉर्मोनों के प्रमुख स्रोत तंत्रिकास्रावी कोशिकायें हैं। इनके द्वारा स्रवित हॉर्मोन सीधे परिवहन तंत्र में ही पहुंचते हैं। अकशेरुकी हॉर्मोनों का अध्ययन विशेषकर कीट समुदाय में किया गया है, अतः हम इस आलेख को कीटों द्वारा स्रवित हॉर्मोन तक ही सीमित रखेंगे।

संरचना में कठोर होने के कारण कीट वर्ग के प्राणी बॉक्स 10.4 में दिये गये प्रयोगों के लिए अत्यधिक उपयुक्त हैं। बहुधा ऐसा देखा गया है कि कीटों में वृद्धि तथा निर्मोचन (moulting) अनेकों महत्वपूर्ण हॉर्मोनों पर निर्भर है (जैसा तालिका 10.4 में दर्शाया गया है)।

तालिका 10.4 : कीटों में परिवर्धन संबंधी हॉर्मोन

हॉर्मोन	उत्पत्ति का ऊत्तक	संरचना	लक्ष्य ऊत्तक	प्राथमिक क्रिया
प्रोथोरैसिकोट्रापिन (PTTH) (मस्तिष्क हॉर्मोन)	मस्तिष्क में पाई जाने वाली तंत्रिका-स्रावी कोशिकाएं	पेप्टाइड	प्रोथोरैसिक ग्रंथि	एक्डिसोन के स्रवण को प्रेरित करना
एक्डिसोन (निर्मोचन हॉर्मोन)	प्रोथोरैसिक ग्रंथि, अंडाशय के पुटक	स्टेरॉइड	अधिचर्म, वसा पिडक, पूर्णक बिंब (imaginal disc)	RNA, प्रोटीन, माइट्रोकॉन्ड्रिया, एंडोप्लास्मिक रेटीकूलम के संश्लेषण को बढ़ाता है। नई क्यूटिकल के स्रवण का उद्दीपन करता है।
जुवेनाइल हॉर्मोन (JH)	कॉर्पस ऐलेटम	टर्पीन व्युत्पन्न	अधिचर्म, अण्डाशय के पुटक, सहायक लैंगिक ग्रंथियां तथा वसा पिडक	लार्वा की विभिन्न संरचनाओं का निर्माण करता है। कायांतरण पर अंकुश लगाता है। वयस्क में पीतक प्रोटीन उत्पत्ति को प्रेरित करता है। अंडाशय के पुटक तथा सहायक लैंगिक ग्रंथियों को उत्तेजित करता है।
बर्सीकान (Bursicon)	केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं	पेप्टाइड	अधिचर्म	क्यूटिकल के वृद्धि को प्रोत्साहित करता है। नवनिर्मोचित वयस्क में क्यूटिकल में कत्थई रंग देता है।
डायापॉज़ हॉर्मोन (रेशम के कीट *बाम्बैक्स* में)	अधोग्रासिका गुच्छिका की तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं	पेप्टाइड	अंडाशय, अंडा	अंडों में उपरति प्रेरित (diapause) प्रेरित करता है।
एक्लोज़न हॉर्मोन (Eclosion)	मस्तिष्क की तंत्रिका-स्रावी कोशिकाएं	पेप्टाइड	तंत्रिका तंत्र	प्यूपावरण से व्यस्क के जन्म को प्रेरित करता है।

बॉक्स 10.4

> 1917 तथा 1922 में एस. कोपेक (S. Kopec) ने सर्वप्रथम उन प्रयोगों को किया जो कीट की वृद्धि में अंतःस्रावी स्रवण की भूमिका पर प्रकाश डालते थे। कोपेक ने एक मॉथ के अंतिम इस्टार लार्वा को विभिन्न समयों में लाइगेट किया अर्थात् बांध दिया। उसने यह पता लगाया कि एक क्रांतिक समय से पहले बाँधने पर कीट आगे के हिस्से में वयस्क बन गया पर पिछले हिस्से में लार्वा ही बना रहा। तंत्रिका रज्जु को काटने पर तो कोई विशेष प्रभाव नहीं दिखा पर मस्तिष्क निकाल दिये जाने पर लार्वा वयस्क में परिवर्तित नहीं हो सका। मस्तिष्क को पुनः लगा देने पर प्यूपीकरण संभावित हो गया। अतः यह विदित हुआ कि मस्तिष्क की तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं प्रोथोरैसिक ग्रंथि को एक हॉर्मोन स्रवित करने के लिए प्रेरित करती है जो निर्मोचन करता है। इस पदार्थ को प्रोथोरैसिकोट्रापिक हॉर्मोन (PTTH) कहा जाता है।

एक्डीसोन की स्टेरॉइड संरचना जानने हेतु लगभग एक टन रेशम के कीड़ों के प्यूपों की आवश्यकता पड़ती है।

चित्र 10.14 कीट अंतःस्रावी तंत्र की निर्मोचन तथा विकास में भूमिका की समीक्षा करता है।

1) मस्तिष्क की तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं PTTH उत्पन्न करती हैं। यह पदार्थ उनके अंतिम अक्षतंतुओं में संचित रहता है, जो कॉर्पस कार्डिएकम में समाप्त होते हैं। यह हॉर्मोन रक्त में स्रवित होता रहता है।
2) रक्त में मौजूद PTTH प्रोथोरैसिक ग्रंथि को अल्फा एक्डीसोन (α-ecdysone) उत्पन्न करने के लिए प्रेरित करता है (चित्र 10.14 a)। अल्फा एक्डीसोन स्टेरॉइड है और कॉलेस्ट्रॉल से मिलता जुलता है। यह निर्मोचन प्रेरित करने वाला हॉर्मोन है। अल्फा एक्डीसोन को अब एक फेरोमोन की मान्यता दी गई हैं जो अनेकों लक्ष्य ऊतकों में अपने सक्रिय रूप बीटा एक्डीसोन (β-ecdysone) में परिवर्तित हो जाता है।

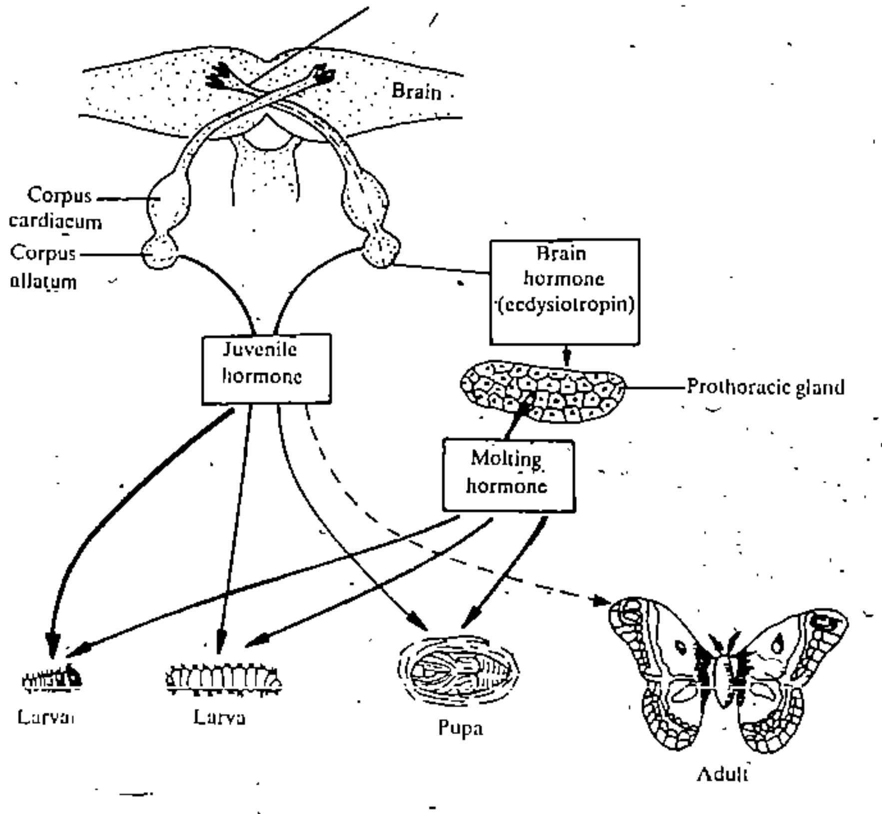

चित्र 10.14 : निर्मोचन और परिवर्धन में कीट हॉर्मोन की भूमिका।

3) कॉर्पोरा ऐलेटम में अतंत्रिका अंतःस्रवण ऊतक पाया जाता है जो जुवेनाइल अर्थात बाल हॉर्मोन (juvenile hormone) अर्थात JH स्रवित करता है (चित्र 10.15 b)। यह लार्वा के विकास को पूरा होने तक, उसमें बाल लक्षणों को बनाये रखने में सहायक होता है।

परिसंचारी JH स्तर, प्रारंभिक लार्वा की स्थिति में, अत्यधिक होता है परन्तु वयस्क के कायान्तरण तक धीरे-धीरे घटते रहने के साथ साथ परिसंचरण से पूर्ण रूपेण समाप्त हो जाता है। एक बार पुनः इसकी सांद्रता वयस्क के प्रजनन काल के नर प्राणियों में अधिक हो जाती है। किन्हीं कीट प्रजातियों के नर में JH सहायक जननांगों को विकसित करने के साथ साथ मादा में पीतक उत्पत्ति को प्रेरणा देता है तथा अंडों को परिपक्व करता है।

दो अतिरिक्त हॉर्मोन एक्लोसिआन (eclosion) तथा बर्सीकान (bursicon) निर्मोचन की अंतिम अवस्था को नियंत्रित करते हैं अथवा क्यूटिकल के अलग होने को कार्यान्वित करते हैं।

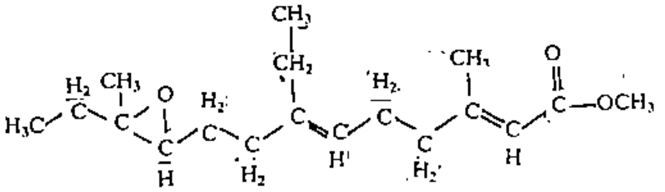

चित्र 10.15 : मॉथ *हायलोफोरा सिक्रोपिया (Hylophora cecropia)* से निकाला गया जुवेनाइल हॉर्मोन।

किसी कीट का सामान्य विकास हर अवस्था में JH की सांद्रता के सही समायोजन पर निर्भर करता है। ऐसे संश्लेषित यौगिक जिनमें जुवेनाइल हॉर्मोन जैसी क्रिया दिखती है भविष्य के महत्वपूर्ण कीटनाशी प्रमाणित होंगे। ये यौगिक अत्यंत सूक्ष्म मात्रा में कार्यशील होते हैं और उचित समय पर प्रयोग में लाये जाने पर ये वयस्क का बनना तथा इसका प्रजनन भी रोक सकते हैं। DDT की तुलना में JH जैसे यौगिव अधिक हानि न करने वाले कीटनाशी प्रमाणित हो सकते हैं। कीटों में इनका प्रतिरोध शायद ही हो पाये।

बोध प्रश्न 5

डिसडरकस सिन्गूलेटस (Dysdercus cingulatus)—यह रेड काटन बग भी कहलाता है। रूई के पौधों पर पाया जाने वाला यह एक हानिकारक कीट है। इस हानिकारक कीट के नियंत्रण में JH जैसे यौगिकों की क्या भूमिका हो सकती है।

....

....

....

....

....

10.6 फेरोमोन

फेरोमोन शब्द ग्रीक शब्द "फेरीन" से बना है जिसका अर्थ है एक उत्तेजनशील हॉर्मोन का स्थानांतरण करना।

इस इकाई में प्रारंभ में हमने हिस्टामीन, प्रोस्टाग्लेन्डिन (prostaglandin) तथा वृद्धि कारक जैसे स्थानीय मध्यस्थ रसायनों का वर्णन किया था। LSE-01 की इकाई 15 में आपने इनकी कार्यकी के बारे में पढ़ा है। आपने यह भी अध्ययन किया है कि शरीर के संचार तंत्र में तंत्रिसंचारी तथा हॉर्मोन, दोनों ही रासायनिक संदेशवाहक हैं। ये रसायन शरीर के अंदर ही संदेशों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाते हैं। कुछेक रसायन शरीर से बाहर निकल कर अपनी ही प्रजाति के दूसरे सदस्यों के लिए संदेश वाहक का कार्य करते हैं। इन्हें **फेरोमोन** (pheromone) कहा जाता है।

अतः एक फेरोमोन वह रासायनिक पदार्थ है जो किसी प्राणी के शरीर से बाहर निकल कर उसी प्रजाति के दूसरे सदस्यों के व्यवहार तथा विकास को प्रभावित करता है। अनेक कीट प्रजातियों में मादा के शरीर से ऐसे फेरोमोन स्रवित होते रहते हैं जो लैंगिक आकर्षक की भूमिका निभाते हैं तथा नर को मादा तक आकर प्रजनन संपादित करने की प्रेरणा देते हैं। मधुमक्खियों के उपनिवेश में रानी मक्खी

एक रसायन स्रवित करती है जिसे ''रानी मक्खी पदार्थ'' (queen bee substance) कहा जाता है। यह पदार्थ दूसरी रानी मक्खियों के विकास पर अंकुश लगाये रखता है। अनेकों प्रजाति के प्राणियों में जैसे प्रोटोज़ोआ, मछली, मेंढक, स्तनधारी तथा कीटों में सूचनाओं के आदान प्रदान के लिए फेरोमोन का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रजातियों में फेरोमोन का प्रयोग और भी कार्यों के संपादन हेतु किया जाता है जैसे प्रजनन संगी को सम्मोहित करना, दूसरों को आवश्यकतानुसार दूर रखना तथा उपयुक्त भोजन तथा विश्राम स्थल का रास्ता दिखाना।

विशेषतया स्तनधारियों में फेरोमोन का प्रयोग मूत्र या मल द्वारा अथवा विशेष महक ग्रंथियों द्वारा पथ तथा क्षेत्रों को चिन्हित करने के लिए किया जाता है। जब एक कुत्ता किसी पेड़ के तने पर मूत्र त्याग करता है तो वह इस प्रकार दूसरे कुत्तों को यह सूचना देता है कि उक्त पेड़ उसके क्षेत्र का एक हिस्सा है। जंगल में रहते हुए शेर तथा चीते भी इसी प्रक्रिया को अपनाते हैं। अनेकों प्रजातियों में फेरोमोन प्रजनन परिपक्वता को अधिक गतिशील बनाते हैं तथा एक लिंग के प्राणियों को यह जानने का अवसर प्रदान करते हैं कि विपरीत लिंग के प्राणियों में कौन कौन प्रजनन करने की उचित अवस्था में हैं।

निम्न उदाहरण फेरोमोन की क्रिया का एक अच्छा प्रदर्शन करता है। जिप्सी मॉथ *लाइमैन्ट्रिया डिस्पार* (*Lymantria dispar*) की मादा गाइप्लूर (gyplure) नामक रासायनिक पदार्थ को हवा में छोड़ती रहती है। यह पदार्थ नर मॉथों को सैकड़ों मीटर की दूरी से आकर्षित करता है। नर मॉथ हवा में मौजूद फेरोमोन को अपने एंटिना में मौजूद ग्राहियों की मदद से पहचान लेता है। आपको यह भी ज्ञात होना चाहिए कि मादा द्वारा स्रवित फेरोमोन में प्रजाति विशिष्ट अनुपात में अणु पाये जाते हैं। यह विशिष्टता अत्यंत विलक्षण है, क्योंकि एक प्रजाति विशेष के नर अपने प्रजाति के फेरोमोन को दूसरी प्रजाति के फेरोमोन से ऐसी अवस्था में भी पहचानने की क्षमता रखते हैं जब विभिन्न प्रजातियां एक ही समय में संकेतन कर रही होती हैं। ये फेरोमोन नर के लिए गंध उद्दीपक की भूमिका निभाते हैं। इस गंध में समजातिक मादा की उपस्थिति का संदेशा छिपा रहता है। एक बार जब नर मादा के निकट पहुंचता है तो दोनों पुनः आपस में, फेरोमोन द्वारा, संदेशों का आदान प्रदान करते हैं और इस प्रकार इनमें संभोग संभावित हो पाता है। इस प्रकार निकट के लैंगिक व्यवहार में भी फेरोमोनों का योगदान दिखता है। कुछ दूसरी कीट प्रजातियों में भी नर द्वारा लैंगिक फेरोमोन स्रवित होते हैं जो मादा को आकर्षित करते हैं तथा इनमें प्रजनन व्यवहार को सुगमता देते हैं।

अनेकों नर प्राणी मादा के निकट जाने पर जटिल प्रेम प्रसंग प्रदर्शित करते हैं उदाहरणार्थ एक मादा के लैंगिक फेरोमोन को सूंघने पर नर रीसस (rhesus) बंदर काफी समय तक मादा को रिझाते रहते हैं। इसी प्रकार मादा के निकट आने पर नर मछली भी जटिल प्रेम प्रसंग प्रदर्शित करता है। ऐसा मादा मछली द्वारा स्रवित फेरोमोन के कारण ही संभावित होता है। उदाहरणार्थ मादा के फेरोमोन से प्रभावित होकर *बैथीगोबियास सोपोरेटर* (*Bathygobius soporator*) मछली का नर अपने डैनों को तीव्र गति से चलाता हुआ उसके इर्द गिर्द मंडराता है तथा अपने शरीर के रंग को बदलता हुआ प्रेम प्रासंगिक व्यवहार दर्शाता है।

ऐसे फेरोमोन, जिनका प्रयोग क्षेत्र विशेष को चिन्हित करने में या प्रजनन संगी को रिझाने में होता है, ग्राहक प्राणी के तंत्रिका तंत्र कार्यकी तथा व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

10.6.1 लैंगिक फेरोमोन की अनुक्रिया का तांत्रिकी आधार

कीटों में विभिन्न फेरोमोनों का पता लगाने तथा इनके बीच का अंतर जानने हेतु विशिष्ट तंत्रिकीय संरचनायें जहां नर के शृंगिक पाली (antennal lobe) के तंत्रिका पुंजक (neuropile) में उपस्थित रहती है वहीं मादा के शृंगिक पालि में वे संरचनायें अनुपस्थित हैं। फेरोमोन के अणु तथा शृंगिका के घ्राण ग्राहियों (olfactory receptors) की प्रतिक्रिया से विद्युतीयकार्यकी संकेत बनते हैं। ये संकेत घ्राण तंत्रिका (olfactory nerve) से होते हुए मस्तिष्क के एक विशेष हिस्से में आते हैं जिसमें ऐसी विशिष्ट तंत्रिका परिपार्थकी है जो फेरोमोन के जटिल संकेतों का विकोडन (decode) करती है। इसके पश्चात मस्तिष्क फेरोमोन की सूचनाओं को दिशात्मक परिवहन तथा अभिविन्यासी अनुक्रिया में परिवर्तित करता है। अनेकों ऐसे भी फेरोमोन हैं जो अत्यंत धीमी गति से कार्य करते हैं पर इनका प्रभाव दीर्घकालिक होता है उदाहरणार्थ यदि एक नवगर्भित मादा चूहे को किसी अनजाने नर चूहे के साथ पिंजड़े में बंद कर दिया जाये तो नर चूहे की गंद से मादा का गर्भपात हो जाता है। इस कार्य

के लिए जिम्मेदार फेरोमोन नर चूहे के मूत्र से निकलते हैं। इसका बोध मादा चूहे के घ्राण ग्राहियों द्वारा किया जाता है। यह फेरोमोन मादा के हाइपोथैलेमस में कुछ ऐसी क्रियायें करता है जिससे पिट्यूटरी को कुछेक ऐसे हॉर्मोन स्रवित करने का निर्देश मिलता है जो अण्डाशय के स्टेरॉइड हॉर्मोन के स्रवण को घटाते हैं जिससे गर्भाशय को ऐसे हॉर्मोन प्रचुर मात्रा में नहीं मिलते जो गर्भ को बनाये रखे, अतः गर्भपात हो जाता है।

10.6.2 प्रजनन के अतिरिक्त फेरोमोन के कार्य

ऊपर दी गयी लैंगिक अनुक्रियाओं के अतिरिक्त दूसरे अनेक व्यवहारों में भी फेरोमोन मध्यस्तता करते हैं। दीमकों तथा मधुमक्खियों में **चेतावनी फेरोमोन** (alarm pheromone) पाये जाते हैं। दीमकों में कुछ सिपाही दीमक ऐसे "चेतावनी फेरोमोन" स्रवित करते हैं जो दूसरे सिपाही दीमकों को घुसपैठियों पर हमला करने के लिए प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार कुछेक कीट अपने उपनिवेश के प्रवासन के समय सामाजिक तालमेल बनाये रखने के लिए **दिशानिर्देशीय फेरोमोन** (trail pheromones) स्रवित करते हैं। इनके कारण सभी कीट लगभग एक ही रास्ते से आते जाते रहते हैं जो इस अदृश्य रसायन की मौजूदगी से बन जाता है। इस प्रकार के रास्ते भूमि तथा वायुमंडल में संभावित होते हैं। चीटियों तथा दीमकों में ऐसे "दिशानिर्देशीय फेरोमोनों" का प्रयोग मजदूर कीटों के भोजन के स्रोत का रास्ता बताने में किया जाता है। नर तथा मादा कीटों के शरीर से निकलने वाले **समूह फेरोमोन** (aggregate pheromone) इन्हें एक स्थान पर इकट्ठा होने के लिए प्रेरित करते हैं। फेरोमोन द्वारा प्रेरित एक स्थान पर इकट्ठा होने से प्रजाति विशेष को भोजन प्राप्ति में शत्रुओं से रक्षा तथा प्रजनन में सहायता मिलती है। प्रवासी टिड्डियों (*Locusta migratoria migratorioides*) के मल विसर्जन के साथ एक प्रकार का फेरोमोन निकलता है जिसे 2-मेथाक्सी-5-एथिलाफेनॉल (2-methoxy-5-ethylaphenol) कहते हैं। यह फेरोमोन नवजात टिड्डियों अर्थात् हॉपर (hoppers) को एक स्थान पर एकत्रित होने के लिए प्रेरित करता है, साथ ही यह फेरोमोन नवजात हॉपर को वयस्क प्रवासी कीटों में परिवर्तित करने के लिए उचित शारीरिक तथा कार्यकीय परिवर्तनों को भी संभावित करता है। इसी प्रकार तिलचट्टे में भी शरीर के विभिन्न सतहों से तथा मल द्वारा निकला फेरोमोन इन्हें एक स्थान पर एकत्र होने की प्रेरणा देता है। प्रोटोज़ोआ जिसे *डिक्टियोस्टेलियम डिस्क्वायडियम* (*Dictostelium discoideum*) कहा जाता है, (इसे कोशिकीय अवपंक फफूंदी भी कहते हैं) एक प्रकार का फेरोमोन स्रवित करता है जो cAMP है। यह फेरोमोन भी इस अमीबा को एक स्थान पर इकट्ठा होने की प्रेरणा देता है।

10.7 निष्कर्ष

इकाई 9 तथा 10 का अध्ययन करने के पश्चात आपको उन मौलिक सिद्धांतों का पता चल गया होगा जो शरीर में कार्यकीय संचार व्यवस्था बनाये रखते हैं। किसी प्राणी के शरीर के अंदर या बाहर के उद्दीपन द्वारा रासायनिक संदेशवाहक स्रवित होते हैं जो विशिष्ट लक्ष्य अंगों को सूचनायें भेजते हैं।

इन इकाइयों में हमने हॉर्मोन तथा तंत्रिकाओं के कार्यों में विभिन्न रसायनों का प्रयोग संदेशवाहकों के रूप में तो जाना ही साथ में यह भी बताया गया कि किस प्रकार संदेशवाहकों तथा ग्राही अंगों के बीच प्रतिक्रिया होती है। इनकी दो महत्वपूर्ण विविधतायें जानना भी आवश्यक है। इनमें एक है कार्य की गति तथा दूसरा लक्ष्य का आकार। जब कभी भी तीव्र अनुक्रिया की आवश्यकता होती है तो तंत्रिका तंत्र कार्यशील हो जाता है। तंत्रिकीय चेतनायें 100 मीटर प्रति सेकेन्ड की गति से चलती हे तथा इनके संचरण में कुछ मिली सेकेन्ड से अधिक की देरी नहीं होती। हॉर्मोन के योगदान से होने वाली क्रिया में रक्त परिवहन के साथ हॉर्मोन का लक्ष्य अंग तक पहुंचना अनिवार्य है। इस कार्य में कम से कम कुछ सेकेन्ड का समय लगता है। हॉर्मोन धीमी प्रक्रियाओं का ही नियंत्रण करते हैं जैसे आमाशय रस का स्रवण, जनन ग्रंथ का विकास तथा शरीर की वृद्धि। दूसरी महत्वपूर्ण असमानता के अनुसार हॉर्मोन की क्रिया विसरित रहती है जैसे यकृत पर हॉर्मोन की क्रिया से सभी कोशिकाएं शर्करा प्रवाह करने लगती हैं, जबकि तंत्रिका क्रिया दूसरों को प्रभावित किए बिना ही किसी मांसपेशी के केवल एक रेशे का उद्दीपन कर सकती है। परन्तु तंत्रिका तथा हॉर्मोन नियंत्रण विधियों में कोई विशेष भिन्नता

नहीं दिखती। तंत्रिका तंत्र जहां एक ओर अंतःस्रावी ग्रंथियों को नियंत्रित करता है वहीं यह हॉर्मोन के बनने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दोनों ही व्यवस्थायें एक दूसरे की पूरक होती हुई शरीर के जटिल कार्यों का नियंत्रण करती हैं।

10.8 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ाः

- विभिन्न हॉर्मोन दो प्रकार के होते हैं (क) स्टेरॉइड हॉर्मोन जो कोलेस्ट्रॉल संरचना पर आधारित हैं तथा (ख) पॉलीपेप्टाइड हॉर्मोन जो ऐमीनो अम्ल पर आधारित हैं। किसी पॉलीपेप्टाइड हॉर्मोन की ऐमीनो अम्ल व्यवस्था विभिन्न प्रजातियों में पृथक-पृथक होती है।

- स्टेरॉइड हॉर्मोनों के अतिरिक्त सभी हॉर्मोन एक्सोसाइटोसिस विधि द्वारा स्रावित होते हैं। स्टेरॉइड किसी भी झिल्ली से विसरित हो सकते हैं। हॉर्मोन की क्रिया का अंतराल यकृत में इसके टूटने की गति पर तथा शरीर द्वारा इसके उत्सर्जन गति पर निर्भर होता है। हॉर्मोन ग्राही कोशिकाओं के अत्यंत संवेदनशील तथा विशिष्ट होने के कारण, शरीर में किसी भी हॉर्मोन की अत्यंत कम मात्रा में ही आवश्यकता पड़ती है।

- स्टेरॉइड हॉर्मोनों के अतिरिक्त सभी हॉर्मोन एक्सोसाइटोसिस विधि द्वारा स्रावित होते हैं। स्टेरॉइड कार्यों को संपादित करते हैं। पेप्टाइड हॉर्मोन के ग्राही प्लाज़्मा झिल्ली से संबद्ध होते हैं, इससे द्वितीयक दूत अणु बनते हैं, जो कोशिका के कार्यकरों जैसे एंज़ाइम, झिल्ली तथा माइक्रोफिलामेंट को प्रभावित करते हैं। लगभग सभी अनुक्रियाएं किसी विशेष कार्य पर ही आधारित होती हैं।

- विशेषज्ञ तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं न्यूरोहॉर्मोन का स्रवण रक्त प्रवाह में करती हैं जिससे होकर ये हॉर्मोनों लक्ष्य कोशिकाओं तक पहुंचते हैं। तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं के द्वारा ही तंत्रिका तंत्र अंतःस्रावी तंत्र की क्रियाओं का सामन्जस्य बनाये रखता है।

- हाइपोथैलेमस तथा पिट्यूटरी ग्रंथि कार्यकीय नियमन के प्रमुख केन्द्र हैं। पिट्यूटरी ग्रंथि दो भागों में बंटी है। अग्रपालि मुख्यता अनुवर्तनीय हॉर्मोनों का स्रवण करता है। ये हॉर्मोन दूसरे अंतःस्रावी कोशिकाओं द्वारा स्रवित हॉर्मोन को नियंत्रित करते हैं। अग्रपिट्यूटरी के हॉर्मोन हाइपोथैलेमस की तंत्रिकास्रावी कोशिकाओं द्वारा स्रवित मोचन कारकों तथा मोचन संदमन कारकों द्वारा नियंत्रित होते हैं। हाइपोथैलेमस द्वारा स्रवित हॉर्मोनों के प्रवाहन स्थान की भूमिका पिट्यूटरी के पश्यपालि द्वारा निभाई जाती है।

- कशेरुकी प्राणियों में तंत्रिका स्रवित पदार्थ → अंतःस्रावी कोशिका → पिट्यूटरी ग्रंथि → दूसरी अंतःस्रावी कोशिकाओं का प्रबंध मौलिक संकेतों को तीव्र करता है। यह अनेकों पुनर्निवेशी पाश भी बनाता है जो पूरी व्यवस्था को नियंत्रित करते हैं।

- अकशेरुकी प्राणियों में भी अंतःस्रावी तंत्र पाया जाता है। इनमें तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं हॉर्मोनों के मुख्य स्रोत हैं। कीटों में जुवेनाइल हॉर्मोन तथा ऐक्डीसोन ऐसे दो हॉर्मोन हैं जो निर्मोचन तथा परिवर्धन को नियंत्रित करते हैं।

- फेरोमोन वो रासायनिक पदार्थ है, जो बाह्यवातावरण द्वारा सूचनाओं को प्रजाति विशेष के दूसरे सदस्यों तक पहुंचा कर उनके व्यवहार तथा परिवर्धन को प्रभावित करते हैं। फेरोमोन घ्राण संवेदकों द्वारा अपने संदेश एक विशिष्ट तंत्रिका प्रणाली को भेजते हैं जहां इनका विक्रोडन होता है।

- प्राणियों में हॉर्मोन तथा तंत्रिका तंत्र द्वारा संचलित संचार व्यवस्था में ऐसे रासायनिक संकेतों का प्रयोग होता है जो विशिष्ट लक्ष्य अंगों से प्रतिक्रिया करते हैं। इनमें दो प्रमुख असमानतायें हैं। जहां तंत्रिका संकेत तीव्र गति से कार्य करते हैं तथा किसी एक कोशिका तक को भी प्रभावित करते हैं वहीं हॉर्मोन की प्रक्रिया धीमी गति से विसरित होती है।

10.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) वे कौन से कारक हैं जो निर्धारित करते हैं कि
   क) कौन सा लक्ष्य ऊत्तक एक विशेष हॉर्मोन से अनुक्रिया करता है।
   ख) अनुक्रिया की अवधि क्या है?

   ....
   ....
   ....

2) निम्न संदर्भ में स्टेरॉइड तथा प्रोटीन हॉर्मोनों की तुलना करो
   क) संरचना
   ख) ग्राही
   ग) क्रियाविधि

   ....
   ....
   ....
   ....

3) निम्नलिखित अंतःस्रावी ग्रंथियों से स्रवित हॉर्मोनों के नाम दो तथा संक्षेप में इनकी क्रियाविधि का वर्णण करो।
   क) पिट्यूटरी ग्रंथि का पश्चपालि
   ख) पिट्यूटरी ग्रंथि का अग्रपालि
   ग) एड्रीनल मेडुला
   घ) एड्रीनल कॉर्टेक्स
   ङ) अग्न्याशय की बीटा कोशिकाएं

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

4) अंतःस्रावी क्रिया को हाइपोथैलेमस किस प्रकार नियमित करता है?

   ....
   ....
   ....

5) कीटों में परिवर्धन को हॉर्मोन विधि द्वारा नियंत्रित करने की प्रवाह तालिका बनाओ?

   ....
   ....
   ....

6) प्राणियों की रासायनिक संकेतन व्यवस्था में फेरोमोन की भी अपनी भूमिका है। ये हॉर्मोन से किस प्रकार भिन्न हैं।

   ....
   ....
   ....

10.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) सत्य। तंत्रिका संचारी तथा पेप्टाइड हॉर्मोन दोनों ही ऐमीनो अम्ल से बने हैं।

ii) असत्य। विभिन्न प्राणी समूहों में पाये जाने वाले हॉर्मोन अपनी संरचना में थोड़ा थोड़ा भिन्न होने के कारण प्राणियों में भिन्न भिन्न प्रभाव दर्शाते हैं।

iii) सत्य। इनकी उत्पत्ति कॉलेस्ट्राल अणुओं से होती है।

iv) असत्य। प्रोटीन तथा हॉर्मोन के पुंज इन्हें वृक्क द्वारा उत्सर्जित नहीं होने देते। इन स्रोतों से हॉर्मोन धीमी गति से स्रवित होता रहता है।

2) रासायनिक संदेशवाहक, विशिष्ट नियंत्रक

3) iv)

4) क) i) पूरे मस्तिष्क से न हो कर केवल हाइपोथैलेमस के एक विशिष्ट स्थान द्वारा मोचन कारकों तथा मोचन संदमन कारकों का स्रवण होता है।

ii) तंत्रिका कोशिका से सीधा न होकर निवाहिका शिरा द्वारा होता है जिसमें तंत्रिका हॉर्मोनों का स्रवण होता है जो अग्रपिट्यूटरी को प्रभावित करता है।

iii) पुनर्निवेश पाश में हाइपोथैलेमस का भी योगदान होता है।

ख) ऋणात्मक पुनर्निवेश : घनात्मक पुनर्निवेश

5) चूंकि जुवेनाइल हॉर्मोन कायान्तरण पर अंकुश लगाता है, अतः कोई भी यौगिक जो इस जैसी क्रिया करता है, लार्वा के कायांतरण को नहीं होने देगा। अतः लार्वा, लार्वा ही बने रहते हैं और वयस्क में कायान्तरित नहीं होते। अतः उनमें प्रजनन नहीं हो पाता और उनकी संख्या में वृद्धि नहीं होती।

अंत में कुछ प्रश्न

1) क) लक्ष्य कोशिकाओं में उचित संवेदांग अणुओं की उपस्थिति।

ख) हॉर्मोन के स्रवण की दर यकृत में हॉर्मोन के टूटने की दर तथा मूत्र में इसके उत्सर्जन की दर अनुक्रिया का समय निर्धारित करते हैं।

2) अनुभाग 10.3 देखें।

3) तालिका 10.1 तथा 10.2 देखें।

4) संकेत—पिट्यूटरी ग्रंथि की कार्यकी के संपादन द्वारा जो दूसरी अंतःस्रावी ग्रंथियों का उद्दीपन कर इनमें हॉर्मोन स्रवण प्रेरित करता है। विस्तृत विवरण के लिए अनुभाग 10.4 देखें।

5) क) मस्तिष्क में तंत्रिका स्रावी कोशिकाएं
↓ PTTH
कार्पोरा कार्डियकम
↓ PTTH
प्रोथोरेसिक ग्रंथि
↓ एक्डीसोन
निर्मोचन

ख) कार्पोरा एलेटम में अंतःस्रावी ऊतक
JH ↓
बाल लक्षणों का बने रहना।

6) हॉर्मोन रासायनिक संदेश है जो सूचनाओं को शरीर के अंदर ले जाते हैं जबकि फेरोमोन ऐसे रसायन हैं जो सीधे हवा में या शरीर से बाहर किसी तरल पदार्थ के रूप में छोड़े जाते हैं। ये प्रजाति विशेष के दूसरे सदस्यों को प्रभावित करते हैं। फेरोमोन का प्रभाव घ्राण संवेदकों पर पड़ता है। यहां से यह सूचना सीधे मस्तिष्क तक जाती है जो उचित अनुक्रिया करता है।

शब्दावली

आंतरांग (visceral organs) : उदर गुहा में पड़े अंग

एस्ट्रोजन (estrogens) : मादा सेक्स हॉर्मोनों का एक वर्ग जिनसे मद चक्र तथा मादा द्वितीयक लक्षण पैदा होते हैं।

ऐंड्रोजन (androgens) : वे स्टेरॉइड जिनमें अठारह कार्बन होते हैं और जो नर लक्षणकारी प्रभाव वाले होते हैं।

ऐड्रीनल कॉर्टेक्स (adrenal cortex) : ऐड्रीनल ग्रंथि का बाहरी भाग जो भ्रूण मीज़ोडर्म से व्युत्पन्न हुआ होता है। इससे स्टेरॉइड हॉर्मोनों का स्रवण होता है।

ऐड्रीनल मेडुला (adrenal medulla) : एड्रीनल ग्रंथि का भीतरी भाग जो गैंग्लियॉनपश्चीय अनुकम्पी तंत्रिकाणु से व्युत्पन्न होता है। इससे कैटेकोलामीन हॉर्मोनों का स्रवण होता है।

ऐनेम्नियोट (anamniotes) : वे कशेरुकी श्रेणी जिनमें भ्रूण झिल्लियां तथा भ्रूण को घेर रखने वाला तरल नहीं होता। इनमें ऐगनैथा, मछलियां तथा उभयचर आते हैं।

ऐमेक्राइन कोशिकाएं (amacrine cells) : रेटिना की भीतरी जालकीय परत में पायी जाने वाली अक्षतंतु रहित तंत्रिका कोशिकाएं।

ऐम्नियोट (amniotes) : कोई सरीसृप पक्षी अथवा स्तनधारी। वे कशेरुकी जिनके भ्रूण तरल से भरी भीतरी भ्रूण झिल्लियों से घिरे रहते हैं।

कॉर्पोरा ऐलेटा (corpora allata) : कीटों की गैरतंत्रिकीय ग्रंथि जो कॉर्पस कार्डियका के पृष्ठ एवं पश्च पर युग्मित अंगों अथवा कोशिका समूहों के रूप में पाए जाते हैं। इनसे जुवेनाइल अर्थात अल्पवयस्क हॉर्मोन निकलते हैं।

कॉर्पोरा कार्डियाका (corpora cardiaca) : कीटों के मुख्य तंत्रिका-रक्तीय अंग। मस्तिष्क के पीछे युग्मित संरचनाएं। इनसे मस्तिष्क हॉर्मोन निकलते हैं।

क्रिया विभव (action potential) : (तंत्रिका आवेग, स्पाइक) : किसी तंत्रिका कोशिका अथवा पेशी तंतु में होने वाली सम्पूर्ण अथवा न्यून विद्युत घटना, जिसमें झिल्ली की ध्रुवता जल्दी-जल्दी और पुनः स्थापित होती जाती है।

कैटेकोलैमीन (catecholamines) : ऐपिनेफ्रीन, नोरएपिनेफ्रीन, L-डोपा तथा संबंधित अणुओं वाला ऐसा अणु समूह जिनके प्रभाव वैसे ही होते हैं जैसे अनुकम्पी तंत्रिका के सक्रियकरण से उत्पन्न होते हैं।

GABA : **"गामा ऐमिनोब्यूटिरिक एसिड"**, यह केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में संदमनकारी तंत्रिसंचारक के रूप में कार्य करता माना जाता है।

जेल अवस्था (gel state) : कोशिकाद्रव्य की दृढ़ उच्च श्यानता वाली अवस्था।

दशानुकूलन (acclimatisation) : किसी पर्यावरण दशा के लिए जैसे कि उच्च अथवा निम्न तापमान का दीर्घकालीन उद्भासन होने पर एक से अधिक स्थायी परिवर्तनों का आ जाना।

दिवापरक लयताल (circadian rhythms) : ऐसे शरीर क्रियात्मक परिवर्तन जो लगभग 24 घंटे की अवधि पर बार बार होते हैं, और जो दिन रात के चक्रों जैसे बाह्य पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों के समसामयिक होते हैं।

द्वितीयक लैंगिक लक्षण (secondary sexual characters) : गोनड, वाहिनियों तथा सहायक ग्रंथियों को छोड़कर वे लक्षण जो प्राणियों की विपरीत लिंगों के बीच विभेद दर्शाते हैं।

पर्यानुकूलन (acclimation) : किसी पर्यावरण दशा के लिए जैसे कि उच्च अथवा निम्न-तापमान का दीर्घकालीन उद्भासन होने के कारण शरीर के किसी एक विशिष्ट कार्य में स्थायी परिवर्तन होना।

परिवेशी तापमान (ambient temperature) : बाहरी घेरे रहने वाला अथवा उस समय पाया जाने वाला तापमान।

प्रसव नली (birth canal) : प्रसव में सुविधा प्रदान करने के लिए रिलेक्सिन की क्रिया के फलस्वरूप सर्विक्स, (गर्भाशयग्रीवा) के फैल जाने से बनी नली।

ब्लास्टोसिस्ट (blastocyst) : विदलन के फलस्वरूप स्तनीय परिवर्धन में बनाने वाली अवस्था। यह एक खोखला पतली दीवार वाला गोला होता है जिसके भीतर एक पार्श्व में कोशिकाओं की एक घुंडी सी बनी होती है जो आगे चलकर वास्तविक भ्रूण बनती है।

मद चक्र (estrous cycle) : स्तनीय स्पीशीज़ में अण्डाशयों तथा मादा जनन पथ की संरचना एवं उनके कार्यों में होने वाला आवर्ती परिवर्तन

योनि आलेप (vaginal smear) : योनि की दीवार से ली गयी खुरचनें, यह दीवार चक्रीय परिवर्तन होते रहने वाले स्तरित अग्रंथीय एपिथीलियम की बनी होती है।

यौवनारम्भ (puberty) : व्यष्टिगत जीवन काल में वह समय जब द्वितीयक लैंगिक विशिष्टताएं एवं जनन क्षमता विकसित हो जाती है।

रक्त मस्तिष्क अवरोध (blood brain barrier) : वह संरचना और कोशिकाएं जो प्लाज़्मा में पाए जाने वाले विशिष्ट अणुओं को चयनात्मक रूप में केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में प्रविष्ट होने से रोकती है।

रोगविज्ञानीय दशाएं (pathological condition) : रोगग्रस्त दशाएं

रोपण (implantation) : स्तनीय भ्रूण का गर्भाशय के अस्तर से जुड़ जाना ताकि आगे चलकर अपरा बन सके।

लॉर्डोसिस (lordosis) : छूने पर अथवा नर चूहों के समीप आ जाने पर मादा चूहों की पीठ पर खम (घुमाव) बन जाना।

लुटिनाइज़ेशन (lutinisation) : कॉर्पस लुटियम का बनना तथा उससे स्रवण होना।

वाष्पन शीतलन (evaporative cooling) : देह पर लार को लेप कर देह को ठंडा करना, यह लार वाष्पित होकर देह तापमान को घटाती है।

सॉल दशा (sol state) : कोशिका द्रव्य की निम्न श्यानता दशा।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

General and Comparative Physiology, William S. Hoar (Third edition) 1991. Prentice Hall of India Private Ltd., New Delhi.

प्रिय छात्र/छात्रा,

इस पाठ्यक्रम के बारे में आपकी राय जानने के लिए हमने यह प्रश्नावली तैयार की है, जो इसी खण्ड के लिए है। आप के उत्तर हमें पाठ्यक्रम सुधारने में मदद करेंगे। अतः आपसे अनुरोध है कि आप शीघ्र ही हमें यह प्रश्नावली भर कर भेजें।

एल.एस.ई.-05
खण्ड 2

प्रश्नावली

नामांकन सं. | | | | | | | | | |

1. इकाइयों को पढ़ने में आपको कितने घंटे लगे?

इकाई सं०	6	7	8	9	10
कुल घंटे					

2. इस खंड से संबंधित कार्य को करने के लिए आपको (लगभग) कितने घंटे लगे?

सत्रीय कार्य सं०		
कुल घंटे		

3. हमारे विचार से आपके सामने 4 प्रकार की कठिनाइयां आई होंगी, उन्हें निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। उपयुक्त कॉलमों में कृपया अपनी कठिनाई पर (√) का निशान लगाइए और सही पृष्ठ संख्या लिखिए।

पृष्ठ सं. तथा लाईन स.	कठिनाइयों के प्रकार			
	प्रस्तुतीकरण स्पष्ट नहीं है	भाषा कठिन है	चित्र स्पष्ट नहीं है	शब्दावली समझाई नहीं गई है

4. हमारा विचार है कि बोध प्रश्नों और अंत में दिये गये प्रश्नों में आपको कुछ कठिनाई हुई होगी। निम्नलिखित तालिका में हमने संभावित कठिनाइयाँ दी है। उपयुक्त कॉलमों में संबंधित इकाइयाँ और प्रश्न संख्या देते हुए अपनी कठिनाइयों पर सही (√) निशान लगाइए।

इकाई संख्या	बोध प्रश्न संख्या	अंत में दी गई प्रश्न संख्या	कठिनाई का प्रकार			
			प्रश्न स्पष्ट नहीं है	दी गई जानकारी के आधार पर उत्तर नहीं दिया जा सकता	इकाई के अंत में दिया गया उत्तर स्पष्ट नहीं है	दिया गया उत्तर पर्याप्त नहीं है।

5. क्या सभी कठिन पारिभाषिक शब्दों को शब्दावली में दिया गया है? यदि नहीं तो कृपया नीचे दी गई जगह में उन शब्दों को लिखिये?

सेवा में,

पाठ्यक्रम संयोजक (एल.एस.ई.-05, फिज़ियोलॉजी, खंड 1 व 2)
विज्ञान विद्यापीठ
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-110068

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGZY/BY-08
फ़िजियोलॉजी

खंड
3
पादप कार्यकी—I

इकाई 11
पादप-जल संबंध 5

इकाई 12
खनिज पोषण 35

इकाई 13
प्रकाश संश्लेषण 67

इकाई 14
पोषवाह में परिवहन 121

खंड 3 पादप कार्यकी—I

पिछले दो खंडों में आपने जन्तु कार्यकी के बारे में पढ़ा था, इस खंड तथा अगले खंड में हम आपको पादप कार्यकी के बारे में बताएंगे। अपने विकास के लाखों वर्षों के दौरान पादप और जन्तुओं ने अलग-अलग जीवन यापन के तरीके विकसित किए हैं। जीवन के इन दो रूपों में अनेकों अंतर होने अनिवार्य हैं। विशेषकर उनकी फ्रिजियोलॉजी में। पानी का अवशोषण और परिवहन, मिट्टी से खनिज आयनों का उद्ग्रहण, प्रकाश संश्लेषण और नाइट्रोजन यौगिकीकरण, जीव जगत में पौधों की ही अनोखी विशेषताएं हैं।

इस खंड में पादपों, विशेषकर उच्च कोटि के पादपों की पोषण संबंधी विस्तृत जानकारी दी गई है। पादपों को अपने जीवन और वृद्धि के लिए बहुत अधिक मात्रा में पानी की जरूरत होती है। खनिज पोषकों और कार्बन डाइऑक्साइड जैसे सरल रसायनों से पौधे अपने लिए भोजन और अन्य आवश्यक पदार्थों का संश्लेषण करते हैं। जड़ें पानी और खनिज तत्वों का अवशोषण करती हैं और पत्तियां वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड लेती हैं। इकाई 11 में हम पानी के अवशोषण और वाष्पोत्सर्जन द्वारा पानी की हानि की चर्चा करेंगे। साथ ही पेड़ों में अपार ऊंचाईयों तक पानी के पहुंचने की क्रियाविधि व परिवहन को भी समझाएंगे। पानी के साथ ही खनिज तत्वों का परिवहन होता है। मगर जड़ों में खनिजों का उद्ग्रहण परिवहन की एक विशेष क्रियाविधि द्वारा होता है। इकाई 12 में हम खनिज पोषण से संबंधित जानकारी विस्तार से देंगे।

प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया सिर्फ पादप जगत् में ही पाई जाती है। इकाई 13 में हम बताएंगे कि हमें प्रयोगों द्वारा इस महत्वपूर्ण प्रक्रम का किस प्रकार सविस्तार ज्ञान प्राप्त हुआ। प्रकाश संश्लेषण द्वारा पत्तियों में बनने वाले भोजन को एक बड़ी ही कारगर प्रणाली के जरिए पौधे के प्रत्येक भाग तक पहुंचाया जाता है। यह आप इस खंड की आखिरी इकाई में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस खंड का अध्ययन कर लेने के बाद आप :

- जल अवशोषण, जल हानि और परिवहन के संदर्भ में पादप-जल संबंधों को समझा सकेंगे,
- पौधों के लिए अनिवार्य पोषक तत्वों की भूमिका और उनके उद्ग्रहण की क्रियाविधि बता सकेंगे,
- प्रकाश संश्लेषण और प्रकाश-श्वसन में होने वाली अभिक्रियाओं के बारे में बता सकेंगे,
- फसलों की प्रकाश संश्लेषण क्षमता को बढ़ाने में जैव-प्रौद्योगिकी की भूमिका पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- पोषवाह के द्वारा भोजन के परिवहन के लिए प्रतिपादित विभिन्न सिद्धांतों की चर्चा कर सकेंगे। सकेंगे।

खंड के अध्ययन के लिए निर्देश

इस खंड को समझने के लिए कोशिका विज्ञान (एल एस ई 01) पाठ्यक्रम की जानकारी आवश्यक है। इसलिए इकाइयों में जगह-जगह हमने उन भागों की ओर ध्यान दिलाया है, जिन्हें आप शायद दोहराना चाहेंगे। कुछ आरेखों के नीचे विशेषकर इकाई 13 में प्रकाश संश्लेषण पर शोध कार्य के लिए किए गए प्रयोगों की विस्तृत जानकारी भी दी गई है इसलिए उनके शीर्षक बड़े हैं। मूल पाठ में उन्हें नहीं समझाया गया है। इसलिए आप पाठ के साथ-साथ आरेखों पर पूरा ध्यान दें व उन्हें अच्छी तरह से समझने की कोशिश करें।

आभार :
डॉ. वी.वी. राघवन, इं.गां.रा.मु.वि. को कुछ इकाइयों को पढ़ने के लिए डॉ. अनिल ग्रोवर को इकाई 11 के लिए।

इकाई 11 पादप-जल संबंध

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
11.2 पादप-जल
11.3 रसारोहण का प्रारंभिक इतिहास
11.4 जल परिवहन का मार्ग
11.5 कुछ मूलभूत भौतिक संकल्पनाएं
11.6 जल की गति में प्रतिरोध और जल का अभिवाह
11.7 जल विभव की प्रवणताएं
11.8 जल अवशोषण
11.9 जल हानि
रंध्र
रंध्र-छिद्रों के खुलने की क्रियाविधि
11.10 रंध्र-द्वारक को नियंत्रित करने वाले कारक
11.11 सारांश
11.12 अंत में कुछ प्रश्न
11.13 उत्तर

11.1 प्रस्तावना

कभी ऐसा सोचा गया था कि मनुष्य चन्द्रमा और दूसरे ग्रहों पर उपनिवेश बनाने में समर्थ हो सकेगा। लेकिन हुआ यह कि चन्द्रमा पर आदमी के कदम पड़ने से पहले ही उसकी आशाएं भंग हो गईं। कारण यह था कि न तो वहाँ के वातावरण में गैसें थीं जो कि पृथ्वी पर हमें जीवित रखती हैं और न ही पानी था जो जीवन के लिए अपरिहार्य है। जीवन का उद्भव महासागर के पानी में हुआ था और पृथ्वी पर जीवन को बरकरार रखने के लिए पानी अब भी एक प्रमुख अणु है।

पानी और पौधे के बीच घनिष्ट संबंध इस बात से स्पष्ट है कि जिन क्षेत्रों में पानी बहुतायत में है वहाँ हरियाली छाई रहती है और जिन क्षेत्रों में पानी की नितांत कमी है वह बंजर रेगिस्तान पड़े हुए हैं। प्रकाश, तापमान, जल और मृदा जैसे पर्यावरणीय कारकों में जल ही है जो लगभग सभी पर्यावरणों में पौधे की वृद्धि को सीमित करता है।

पौधा बहुत अधिक मात्रा में जल अवशोषित (absorb) करता है और यह मात्रा उतने ही भार वाले प्राणी जितना पानी पीते हैं उससे कहीं ज्यादा है। इसका कारण यह है कि वाष्पोत्सर्जन (transpiration) की क्रिया द्वारा पौधों से बहुत अधिक मात्रा में पानी निकल जाता है। इसलिए पादप कार्यकी विज्ञानियों (plant physiologists) के सामने यह एक चुनौती है कि वह ऐसे उपाय खोजे जिससे पानी की हानि कम की जा सके और पौधे में पानी को काम में लाने की दक्षता बढ़ाई जा सके।

बड़े-बड़े पेड़ों में यह क्षमता होती है कि वे पानी को अत्याधिक ऊंचाईयों तक पहुंचा सकते हैं। यहाँ तक कि कैलिफोर्निया में उगने वाले सबसे लम्बे वृक्ष *सिकोइआ सेम्पर्विरेन्स* (*Sequoia sempervirens* — 113.1 मीटर लम्बा और अभी भी बढ़ रहा है) को भी अपनी सबसे ऊँची चोटी की पत्तियों तक पानी को पहुंचाने में किसी तरह की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता। वैज्ञानिकों के लिए यह रहस्यमय है। उन्होंने यह पता लगाने की कोशिश की है कि पानी को इतनी ऊंचाईयों तक ले जाने वाला कौन सा बल है?

पौधों और पानी के संबंध के बारे में हमारे सामने निम्नलिखित प्रश्न हैं:

i) वह कौन-सा बल है जो पौधों में पानी के बहाव और उसकी दिशा को संचालित करता है?
ii) कौन-से बल वृक्षों में पानी को बड़ी ऊंचाइयों तक ले जाते है? iii) रंध्रीय द्वारक (stomatal

aperture) के खुलने और बंद करने को नियंत्रित करने वाले कारक कौन-से हैं? और (iv) पौधे इतने सारे पानी का वाष्पन क्यों करते हैं जो कि स्पष्टतः ही अपव्यय होता है? इस इकाई में हम इन प्रश्नों के उत्तर खोजने की कोशिश करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- संवहनी पादपों (vascular plants) पर जल की गति (movement) से सम्बन्धित किए गए प्रारंभिक प्रयोगों का वर्णन कर सकेंगे,
- पौधों में जल-गति के संसंजन-तनाव सिद्धांत (cohesion-tension theory) की व्याख्या कर सकेंगे,
- मिट्टी से जड़ में जल की अरीय (radial) गति और दारु (xylem) से पत्तियों तक की लम्बी दूरी के परिवहन को आरेखित कर सकेंगे और उसकी व्याख्या कर सकेंगे,
- जल-विभव (water potential) को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे और मृदा-पादप-वायुमंडल तंत्र में जल के परिवहन में इन कारकों का महत्व समझ सकेंगे,
- जल विभव में अंतर ($\Delta\psi_w$), जल की गति की दिशा को किस प्रकार प्रभावित करता है इसकी व्याख्या कर सकेंगे,
- गणितीय अभिव्यक्ति काम में लाते हुए ψ_π, ψ_p और $\Delta\psi_w$, जल अभिवाह और प्रतिरोध परिकलित (calculate) कर सकेंगे,
- पौधों में जल प्रवाह को अवरुद्ध करने वाले अनेक प्रतिरोधों की चर्चा कर सकेंगे और पौधों के लिए उनके महत्व की व्याख्या कर सकेंगे,
- जल अवशोषण और जल हानि को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकेंगे,
- रंध्र की संरचना और गुणों को उनके प्रकार्य (function) से जोड़ सकेंगे,
- स्फीति (turgor) में परिवर्तन से रंध्र किस प्रकार खुलते और बंद होते हैं, इसकी व्याख्या कर सकेंगे,
- द्वार-कोशिका (guard cell) में आपेक्षिक स्फीति को बदल देने वाले कारणों की व्याख्या कर सकेंगे, और
- रंध्र-द्वारक की गति नियंत्रित करने वाले कारकों की सूची बना सकेंगे।

11.2 पादप-जल

पौधों में पानी की भूमिका

आप जानते हैं कि पानी पादप कोशिकाओं का प्रमुख घटक (constituent) है। यह नीचे दिए गए प्रमुख प्रकार्य करता है:

i) **विलायक के रूप में जल**

पानी बहुत अच्छा विलायक (solvent) है। यह विद्युत अपघट्यों (electrolytes) और ग्लुकोस तथा ऐमीनों अम्ल जैसे छोटे अणुओं को आसानी से घोल देता है। आप जानते हैं कि जीवन का उद्भव महासागरों के जलीय माध्यम में हुई रासायनिक अभिक्रियाओं (chemical reaction) के फलस्वरूप हुआ और हम आज यह जानते हैं कि कोशिका में सभी अभिक्रियाएं जलीय माध्यम में होती हैं।

ii) **रासायनिक अभिकारक के रूप में जल**

पानी अनेकों जैव रासायनिक (biochemical) अभिक्रियाओं में भाग लेता है। यह प्रकाश संश्लेषण (photosynthesis) में शामिल है जो कि जीवन का सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रम (process) है। जल के प्रकाश रासायनिक विपाटन (photochemical splitting of water) से ऑक्सीजन उत्पन्न होती है और हाइड्रोजन अणु CO_2 को दान कर दिए जाते हैं

ताकि ग्लुकोस बन सके। अवकर्षण (degradation) के दौरान, कार्बोहाइड्रेट, वसाएं और प्रोटीनें जल द्वारा जल अपघटित (hydrolyse) होते हैं। इस अध्ययन के दौरान, आपका वास्ता अनेक दूसरी जैवरासायनिक अभिक्रियाओं से पड़ेगा जिन में भी पानी का हाथ है।

iii) **पानी कोशिकाओं को स्फीति देता है**

पौधे अपनी आकृति स्फीति के कारण बरकरार रखते हैं। स्फीति कोशिकाओं में जल के द्रवस्थैतिक दाब (hydrostatic pressure) से पैदा होता है। अगर पानी बाहर चला जाता है तो कोशिकाएं ढीली (चित्र 11.1) हो जाती हैं। कोशिकाओं के विवर्धन (enlargement) के लिए भी द्रवस्थैतिक दाब आवश्यक है। इसके फलस्वरूप वृद्धि होती है।

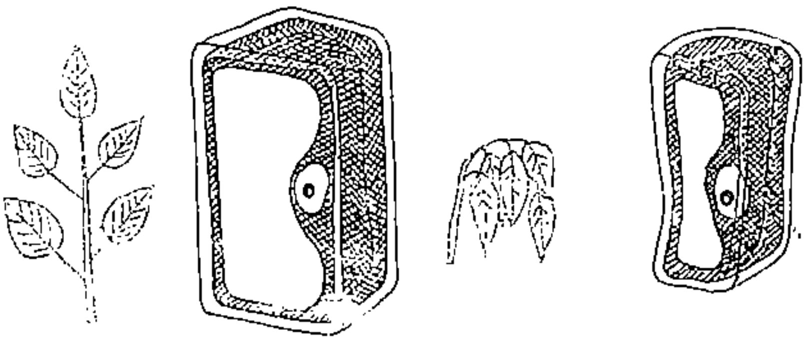

चित्र 11.1 : एक प्रसामान्य (normal) a) और मुरझाए b) पौधे की कोशिकाएं। पूरी तरह से स्फीत (turgid) पौधे में प्रत्येक कोशिका की केन्द्रीय रसधानी (vacuole) पानी से भरी होती है और जीवद्रव्य (protoplasm) कोशिका भित्ति (cell wall) की तरफ धकेल दिया जाता है जो इसे मजबूती से ताने रखता है। मुरझाए पौधे में रसधानी के सिकुड़ जाने के बाद कोशिका भित्ति आंशिक रूप से अपस्फीत (deflate) हो सकती है।

पौधों में कितना पानी होता है?

पौधों में पानी की मात्रा उनकी संरचना पर निर्भर करती है। यह मात्रा संरचना के अनुसार भिन्न-भिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न हो सकती है। जलीय पादपों में उनके भार का 97-98% पानी होता है। उदाहरण है — *क्लैमिडोमोनास, स्पाइरोगाइरा,* कारा, लाल शैवाल (algae) और अन्य। *आजोला, आईकोर्निया* और दूसरे अलवण जल (fresh water) पौधों के बारे में भी यह सच है। लेकिन स्थलीय पौधों में भले ही वे गेहूँ, चावल, मक्का जैसी फसलें हों अथवा शीशम, आम, नीम और दूसरे वृक्ष हों, पौधों के विभिन्न भागों में पानी की मात्रा बदलती रहती है। तरुण (young) जड़ों में यह 95% तक हो सकती है और वृक्ष स्तंभ (trunk) की लकड़ी में 30-40% तक ही हो सकती है। तरुण पत्तियों में प्रायः 85-90% पानी होता है जबकि परिपक्व पत्तियों में 60-80% तक होता है। इसका यह अर्थ हुआ कि पानी की मात्रा पौधे की वृद्धि के दौरान और किसी अंग की वृद्धि जैसे कि पत्ती और बीज के दौरान भी बदलती है।

जल अंश का प्रकार्यों से संबंध

अगर स्फीत दिखने वाले किसी जलीय पादप को पानी से हटा दिया जाए और खुले में छोड़ दिया जाए तो यह जल्दी मुरझा जाता है। हालांकि पत्ती का जल अंश मुश्किल से 3 से 5 प्रतिशत तक ही बदलता है लेकिन पौधा क्रियाहीन दिखाई देने लगता है। गेहूँ की तरुण पत्तियों के लिए भी यह सच है जिनमें 90-95% पानी होता है। अगर जल अंश में 3-4 प्रतिशत कमी आ जाए तो पत्तियाँ मुरझा जाती हैं। पुरानी पत्ती में केवल 80-85% पानी होता है लेकिन वह पूरी तरह स्फीत होती है। इस प्रकार पत्तियों की गतिविधि को आंकने के लिए जल अंश या जल की मात्रा को आधार नहीं बनाया जा सकता। इसलिए पादप जल स्थिति के लिए एक अभिव्यक्ति अवश्य होनी चाहिए जो प्रकार्य से जोड़ी जा सके। हम इसके बारे में बाद में किसी अन्य भाग में चर्चा करेंगे।

11.3 रसारोहण का प्रारंभिक इतिहास

यह एक जाना-माना तथ्य है कि पानी ढलान की ओर बहता है। लेकिन मिट्टी से पौधे पानी को जड़ों द्वारा ऊपर की ओर उठाकर उसे पेड़ों की बड़ी-बड़ी ऊंचाइयों तक पहुंचा सकते हैं। पहले के पादप कार्यकी विज्ञानियों के लिए यह एक रहस्य था। उन्होंने उस बल को जानने का प्रयास किया जो पानी को ऊपर की ओर प्रेरित करता है। उन्होंने दो संभावनाओं पर विचार किया : i) पानी उस प्रेरक-बल (driving force) से ऊपर की ओर धकेला जाता है जो शायद पौधे के तल (जड़ों) पर बनता है अथवा ii) पौधे के शीर्ष (पत्ती) पर उत्पन्न बल से पानी ऊपर की ओर खींचा जाता है।

पानी में बहुत ज्यादा तनन सामर्थ्य (tensile strength) है।

वाष्पन की ऊष्मा और पृष्ठ तनाव (surface tension) से सैद्धांतिक परिकलन (theoretical calculations) दर्शाते हैं कि जल की तनन सामर्थ्य हजारों एटमौस्फियर (atmosphere) हैं। लेकिन प्रयोगात्मक मान कुछ कम है — 25 से 300 एटमौस्फियर तक। एक निदर्शी प्रयोग में ब्रिटेन के अन्वेषक (investigator) एच.एम. बजेट (H.M. Budgett) ने दो पालिश की हुई स्टील की प्लेटों के बीच पानी की एक परत (thin film) रखकर, दबाया। दोनों प्लेटों को खींचकर अलग करने में 60 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर तक तनाव आवश्यक था।

स्रोत : Sci. Amer. Vol. 208, No. 3, p. 1367

400 साल पहले भी इस बात का पता लग गया था कि पोषवाह (phloem) की अपेक्षा दारु संनाल (xylem conduits) पौधों में जल-स्थानांतरित (translocate) करते हैं। इटली के कार्यकी विज्ञानी मार्सेलो मैल्पीघी (Marcello Malpighi) जिन्होंने 1679 में यह प्रदर्शित किया कि अगर तने से पोषवाह का एक छल्ला निकाल दिया जाए तो पानी के रास्ते पर कोई असर नहीं पड़ता। एडवर्ड स्ट्रासबर्गर (Edward Strasburger) ने 1883 में एक बांज़ (Oak) वृक्ष को आरी से काट कर एक भरी बाल्टी में रख दिया जिसमें पिक्रिक अम्ल (picric acid) या $CuSO_4$ डाला गया था। उसने दिखाया कि पानी मृत दारु कोशिकाओं से जाता है। हालांकि रसायन से छाल और दूसरी जीवित कोशिकाएं मर गईं लेकिन जल की गति बेरोक-टोक जारी रही। रंगीन या रेडियाएक्टिव पानी काम में लाकर भी प्रयोग किए गए हैं। इनके उपयोग द्वारा भी पानी को मूल तंत्र में जाते और दारु से ऊपर की ओर जाते हुए देखा गया है। अब हम जानते हैं कि दारु वाहिकाओं से एक जटिल नलकर्म नेटवर्क (plumbing network) बनता है जिसकी सप्लाई लाइनें पौधे के सभी भागों में फैली हुई हैं।

पानी की ऊपर की ओर की गति के लिए कौन-से बल उत्तरदायी हैं, यह खोजने के लिए शुरू-शुरू में वायुमंडलीय दाब, केशिका क्रिया (capillary action) और मूलदाब (root pressure) जैसे बलों पर विचार किया गया (चित्र 11.2 a b और c)। लेकिन इन बलों में से एक भी तो ऐसा न

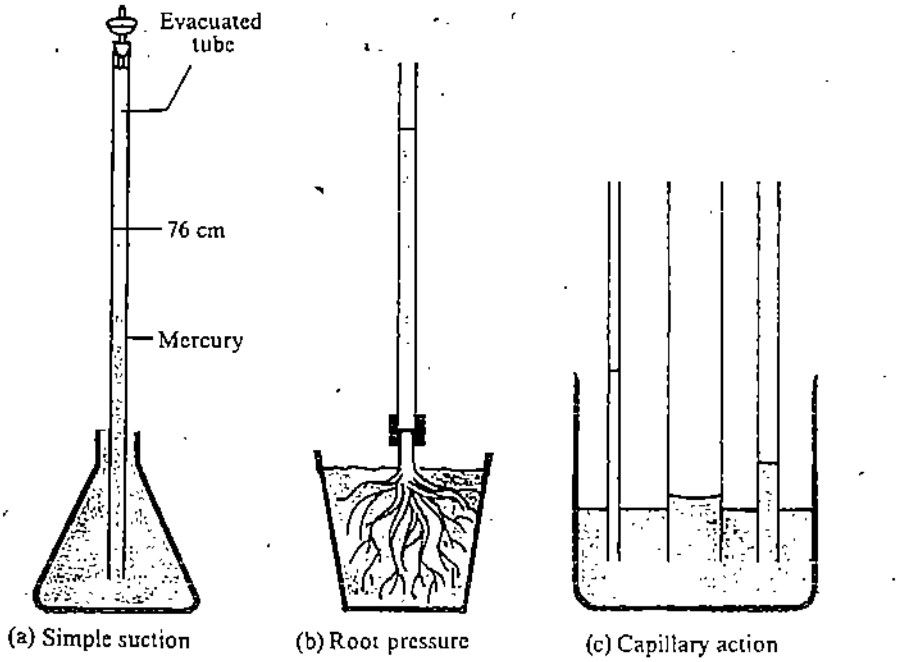

चित्र 11.2 : संवहनी पादपों में जल की गति के प्रयोग a) सरल चूषण (suction) – वायुमंडलीय दाब द्वारा एक निर्वातित (evacuated) नलिका में पारा 76 से.मी. चढ़ जाता है। b) मूल दाब — गमले के पौधे के कटे हुए तने पर शीशे की नली फिट कर दी जाती है। मूल दाब पानी को कटे हुए तने से रिसकर नलिका में चढ़ने को विवश करता है। जल स्तंभ (water column) 14 मी. या उससे भी अधिक ऊंचाई तक उठ सकता है। c) केशिका क्रिया (capillary action) — पानी केशिका नलिका में पानी के उच्च पृष्ठ तनाव (surface tension) के कारण चढ़ता है। पृष्ठ तनाव जितना ज्यादा होगा केशिका में पानी की चढ़ान भी उतनी ज्यादा होगी।

नेकला जो 100 से.मी. से अधिक ऊंचाई तक पानी की गति को स्पष्ट कर सके। जोसेफ़ बोह्म (Josef Böhm, 1883) आयरलैन्ड के एक वनस्पतिविज्ञानी थे जिन्होंने एक सरल प्रयोग से यह प्रदर्शित किया कि अगर एक छिद्र वाले (porous) बर्तन जैसे संवृत्त तंत्र (closed system) को चित्र 11.3 में दिखाए गए सेट-अप से जोड़कर उससे पानी का वाष्पन किया जाए तो पारे को 100 से.मी. की ऊंचाई से अधिक उठाया जा सकता है। निर्वात (vacuum) से पारा 76 से.मी. की ऊंचाई तक ही खींचा जा सकता है। 100 से. मी. की ऊचाई इससे काफी ज्यादा है। आयरलैण्ड के वनस्पतिविज्ञानी एच.एच. डिक्सन (H.H. Dixon) और उसके सहयोगी जे.जॉली (J. Joly) ने छिद्र वाले बर्तन की जगह एक वाष्पोत्सर्जी चीड़ (pine) की पत्ती काम में लाकर उसी प्रयोग को दोहराया और छिद्र वाले बर्तन जैसा परिणाम हासिल किया। चित्र 11.4 में दिखाया गया एक ऐसा ही प्रयोग पौधों में जल के उठान को स्पष्ट करता है। तब डिक्सन और जॉली ने 1895 में रसारोहण (ascent of sap) के अब सुप्रसिद्ध संसंजन सिद्धांत (cohension theory) का प्रस्ताव रखा।

बिंदु स्राव (Guttation) : कुछ विशेष पर्यावरणीय परिस्थितियों में मूल दाब के कारण पानी विशेष जल-छिद्रों से पत्तियों के किनारे पर या उनकी नोक पर आ जाता है। यह बिंदु-स्राव कहलाता है।

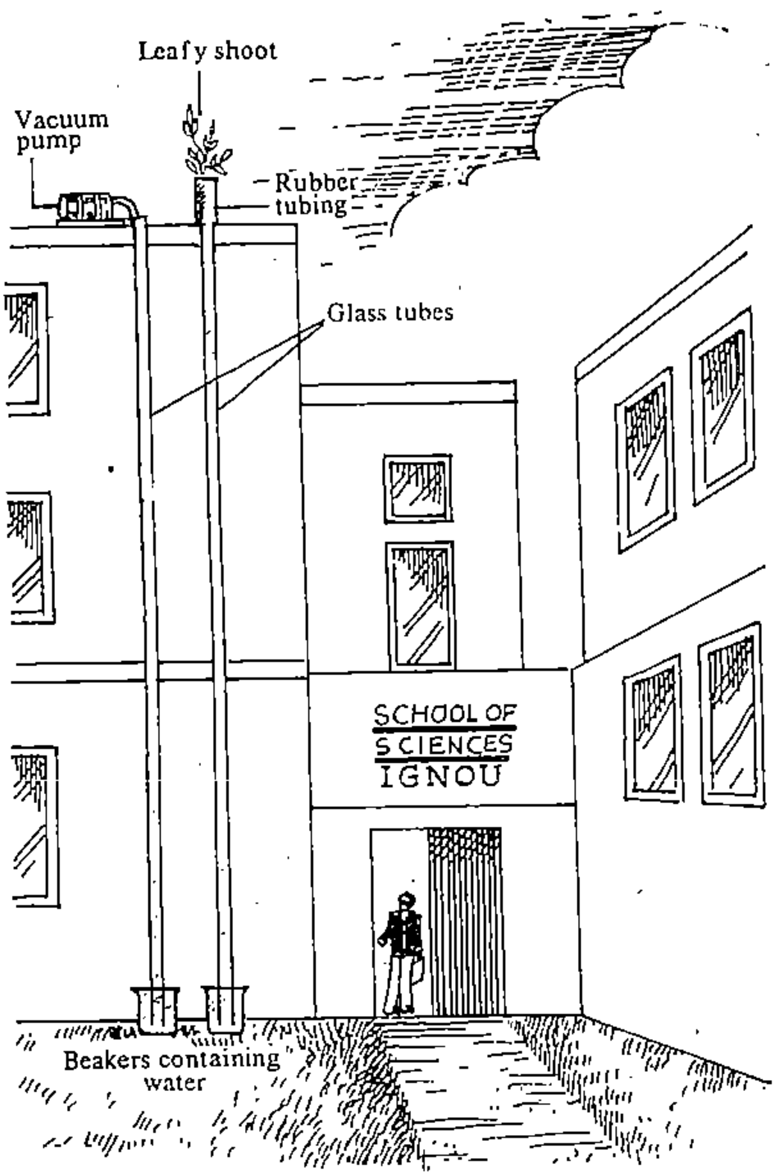

चित्र 11.4 : पौधे में जल गति के संसंजन-तनाव सिद्धांत को दर्शाने के लिए प्रयोग। पानी में डूबी हुई दो लम्बी पतली नलिकाएं नीचे से इमारत की ऊंचाई तक बढ़ायी जाती है। एक निर्वात पम्प पानी को इतनी ऊंचाई तक चूसने में असफल रहता है जबकि एक छोटा-सा पत्तियों वाला प्ररोह ऐसा करने में सफल रहता है। पत्ती वाले प्ररोह को शीशे की पतली नलिका से जोड़ने के लिए रबड़ नलिका का एक छोटा-सा टुकड़ा काम में लाया जाता है। नलिका की लम्बाई 14 मी. और व्यास 0.5 मि.मी जिसे रंजक (dye) वाले पानी से भरे बीकर में डुबाया जाता है। पूरे के पूरे तंत्र को पूरी लम्बाई तक जल पूरित वायु-सह (air proof) तंत्र बना दिया जाता है।

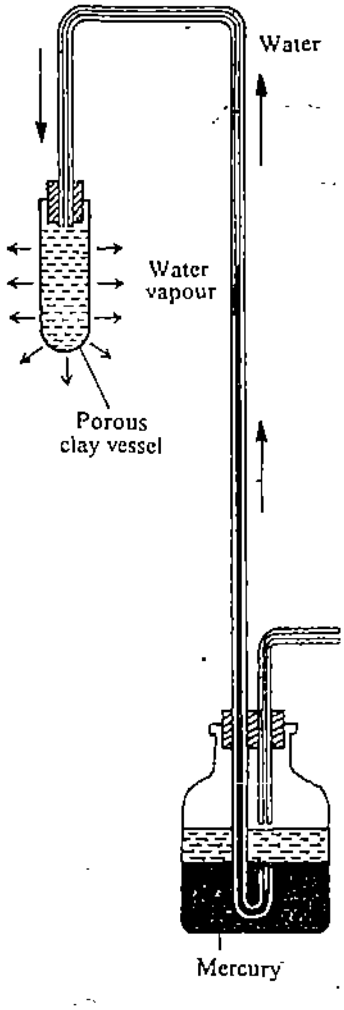

चित्र 11.3 : एक भौतिक मॉडल द्वारा पौधे के तने में ऊपर की ओर पानी की गति के नियम का प्रदर्शन। छिद्र युक्त बर्तन से पानी का वाष्पन सरल चूषण की अपेक्षा अधिक अभिकर्षण बल (pulling force) डालता है। वाष्पन पारे को अपने पीछे-पीछे 100 से.मी. से भी अधिक ऊंचाई तक अभिकर्षित कर सकता है यानि खींच सकता है।

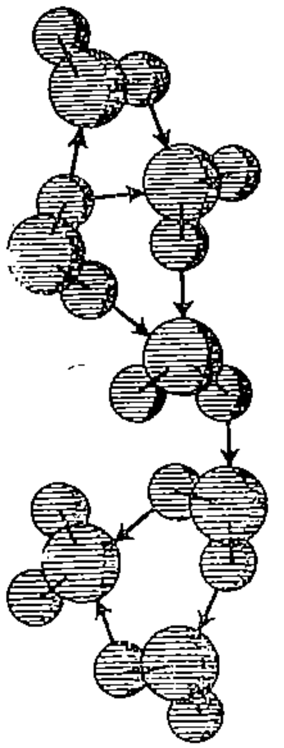

चित्र 11.5 : हाइड्रोजन आवंधों के कारण जल अणुओं की संसंजनता (cohesiveness) का आरेखीय निरूपण। एक जल अणु के ऑक्सीजन परमाणु पर आंशिक ऋण आवेश negative charge) और संलग्न (adjacent) जल अणु के बीच जो स्थिरवैद्युत आकर्षण (electrostatic attraction) है उसी के कारण जल-अणु एक दूसरे से चिपटे रहते हैं।

आप जानते हैं कि पौधे वाष्पोत्सर्जन के प्रक्रम द्वारा रंध्रीय द्वारों से जल निकाल देते हैं। डिक्सन के सिद्धांत के अनुसार पानी वाष्पोत्सर्जन अभिकर्षण के कारण लगातार ऊपर की ओर खींचा जाता है। वाष्पन के कारण जैसे-जैसे जल अणु वाष्पोत्सर्जन स्थलों, रंध्र को आस्तरित (lining) करने वाली पत्तियों की मध्यम पर्ण कोशिकाएं (mesophyll cells) को छोड़ते हैं। उनकी जगह भरने के लिए दूसरे जल अणु खींच लिए जाते हैं। इसके फलस्वरूप एक अधोमुखी (downword) ऋणात्मक द्रवस्थैतिक दाब उत्पन्न होता है। यह दाब पत्तियों से दारु वाहिकाओं और आखिर में जड़ों तक पहुंच जाता है। दूसरे शब्दों में दारु संनालों के भीतर जल तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है। जल अणु दारु में तनाव के कारण एक दूसरे से टूटकर अलग नहीं होते बल्कि वे अपने संसंजन गुण के कारण लगातार स्तंभ (column) के रूप में यात्रा करते हैं। संसंजन एक परिघटना (phenomenon) है जिससे जल अणु हाइड्रोजन आबंध (bond) द्वारा एक-दूसरे से मजबूती से चिपके रहते हैं (चित्र 11.5) और एक दूसरे से अलग खींचे जाने का प्रतिरोध करते हैं। अगर पानी वास्तव में एक ऊर्ध्वमुखी अभिकर्ष (upward pull) द्वारा गतिमान है तो भूस्तर से ऊपर एक शाखा को काट इसकी सांतत्यक (continuum) तोड़ दिये जाने पर यह आशा की जाएगी कि दारु में पानी पीछे हट जाएगा। दारु में पानी की स्थिति एक खिंचे हुए रबड़ बैंड के सदृश है। मान लीजिए हम खिंचे रबड़ को किसी जगह पर काट दें तो जिस बिन्दु पर यह काटा गया है, वहां से यह दोनों दिशाओं में पीछे हट जाएगा। दारु वाहिकाओं में भी ऐसी वापसी होती है और पानी कटे हुए बिन्दुओं से दूर अभिकर्षित हो जाता है। दारु में जल स्तंभ के अभिकर्षण बल या तनाव को शोलैन्डर दाब बंब (Scholander pressure bomb, चित्र 11.6) द्वारा मापा जा सकता है। ऐसा दाब लगाकर दारु रस को वापस प्रारंभिक स्थल तक लाया जा सकता है।

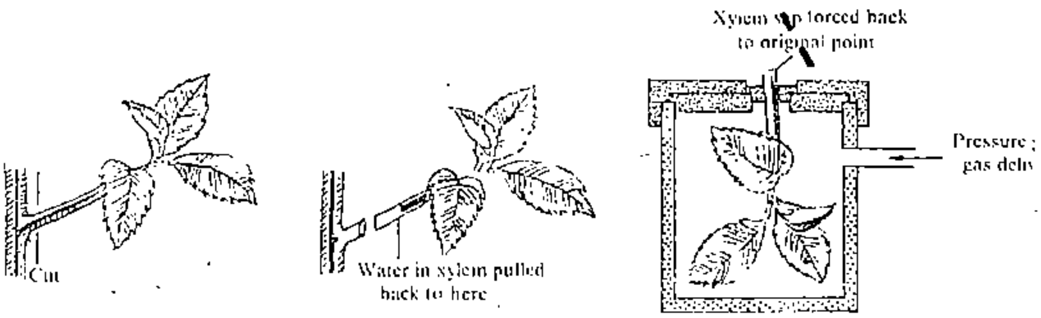

चित्र 11.6 : दारु रस में तनाव का प्रदर्शन। जब एक टहनी काटी जाती है तो दारु में तनाव रस को कटे हुए स्थल से दूर खींचता है। सेलैन्डर दाब बंब (Scholander pressure bomb) में लगाये गये दाब से रस वापस कटी हुई जगंह आ जाता है।

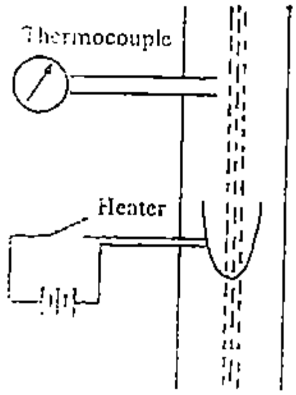

चित्र 11.7 : दारु रस के वेग का मापन। स्तंभ में एक स्थान पर छोटा सा तापन अवयव दारु तक घुसेड़ा जा सकता है। कुछ समयान्तराल के बाद रस की ऊर्ध्व गति ताप वैद्युप युग्म (thermocuple) द्वारा मालूम की जा सकती है।

यहाँ यह बताना महत्वपूर्ण है कि दारु की मृत कोशिकाएं लिग्निन से पपड़ीदार बने सेलुलोस तंतुकों (fibrils) द्वारा बहुत ज्यादा मजबूत बना दी जाती है। भित्तियों की इस प्रकार सामर्थ्यशाली बनने की तुलना प्रबलित (reinforced) कंक्रीट से की जा सकती है और इस प्रकार यह कोशिकाएं इतनी मजबूत होती हैं कि अगर उनमें से पानी खींचा जाए तो उनका निपात (collapse) नहीं होता।

दिन के भिन्न-भिन्न समय पर जल की गति के बारे में किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि रसारोहण के लिए "मोटर" पेड़ की पत्तियों में स्थित होती है। काष्ठ में इस प्रवाह का वेग (velocity) भी दारु रस में एक तापन अवयव (heating element) घुसेड़ कर मापा जा सकता है। इस तरह समय के कुछ अंतराल के बाद ऊष्मित (heated) दारु रस द्वारा तय की गई दूरी को तापवैद्युत युग्म (thermocouple) से मापा गया। 75-150 से.मी./घंटे तक के वेग रिकार्ड किए गए हैं (चित्र 11.7)।

हालांकि जल का संसंजन सिद्धांत एक सदी पूर्व रखा गया था लेकिन यह आज भी खरा उतरता है। लेकिन यह मृत दारु ऊतकों में से जल के लम्बी दूरी के परिवहन की ही व्याख्या करता है। अनेक प्रश्नों के उत्तर अभी भी बाकी हैं जैसे कि कौन-से कारक हैं जो मृदा से जल अवशोषण को प्रभावित करते हैं, पानी एक कोशिका से दूसरी कोशिका में और दारु के अलावा दूसरे ऊतकों में कैसे जाता है? और कौन-से प्रेरक बल हैं जो जल गति की दिशा निश्चित करते हैं।

आगामी भागों में हम आपको जल विभव (water potential) संकल्पना (concept) समझाएंगे। यह संकल्पना हमें न केवल जल स्थिति (water status) के बारे में बल्कि पौधे में जल की गति की दिशा और दर के बारे में भी बता सकती है।

11.4 जल परिवहन का मार्ग

पौधे मिट्टी से जड़ों द्वारा पानी अवशोषित करते हैं। यह अवशोषण मुख्य रूप से परिपक्वन (maturation) के क्षेत्र में मूल-रोम जोन (root hair zone) में होता है (चित्र 11.8)। जल की अरीय गति (radial movement) चित्र 11.9a में दिखाई गई है। अपनी यात्रा के अधिकांश पड़ावों पर जल अणुओं के लिए दो विकल्प हैं कि चाहें तो कोशिका जीवद्रव्यक (protoplasm)

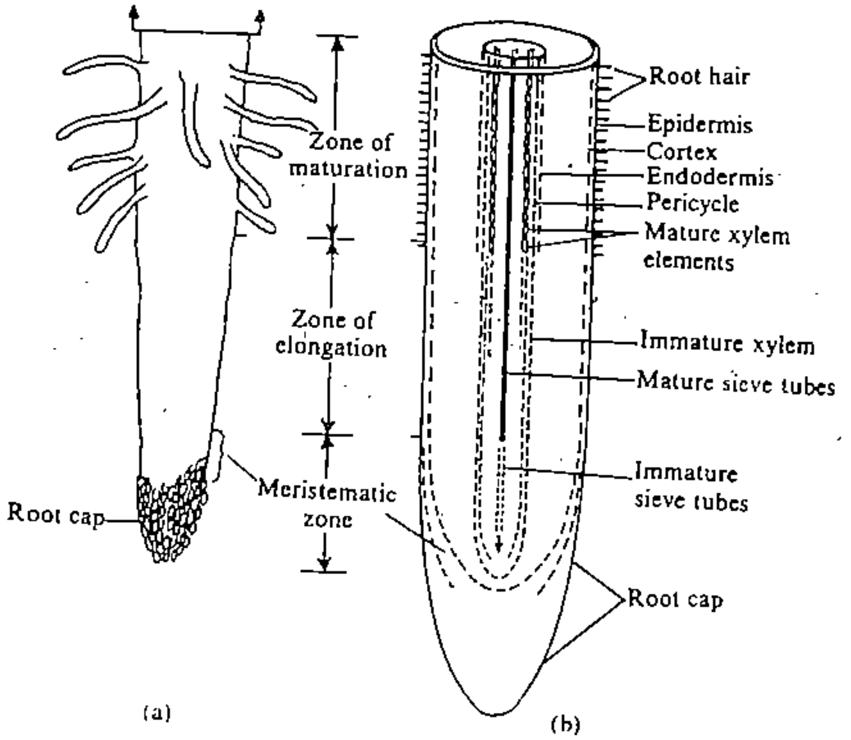

चित्र 11.8 : मूलाग्र की सामान्य आकारिकी a) जिसमें मूल रोम (root hair) सहित मूल गोप (root cap) मेरिस्टमी जोन (meristematic zone), विवर्धन जोन (zone of elongation) और परिपक्वन जोन (zone of maturation) दिखाया गया है। b) दारु और पोषवाह समेत विभिन्न ऊतकों की स्थिति।

ा चाहें तो कोशिका भित्तियों (cell walls) से होकर जा सकते हैं। पानी के अणु कोशिका प्लैज़्मा झिल्ली को पार करते हुए जड़ों की बाह्यत्वचा (epidermis) कोशिकाओं में घुस सकते है और ब वल्कुट (cortical) कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य से चलते हुए, अंतस्त्वचा (endodermis), रिंभ (pericycle) और अंततः दारु वाहिकाओं (xylem vessels) और/या वाहिनिकाओं tracheids) में पहुंचते है। एक कोशिका से दूसरी कोशिका में जल की गति सम्भवतया लैज़्मोडेस्मेटा (plasmodesmata) के रास्ते होती है। प्लैज़्मोडेस्मेटा कोशिकाओं के बीच जीवद्रव्यी ल हैं। परिवहन का यह रास्ता संसुघटित यानि **सिम्प्लास्टिक पथ (symplastic route)** (चित्र 0.9 b) कहलाता है। कोशिकाएं के बरारता अंतराकोशिकीय संबंधन (intercellular :onnections) द्वारा जुड़ीं होने के फलस्वरूप पौधे का सारा जीवित भाग एक अविच्छिन्न एकल स्तित्व (continuous single entity) बन जाता है जिसे संद्रव्य **(symplasm)** कहते हैं।

ल परिवहन के लिए दूसरा रास्ता कोशिका भित्तियों, अंतराकोशिकीय अवकाशों (spaces) और रु की अजीवित कोशिकाओं से होकर है। यह एपोप्लास्टिक पथ (apoplastic route) कहलाता

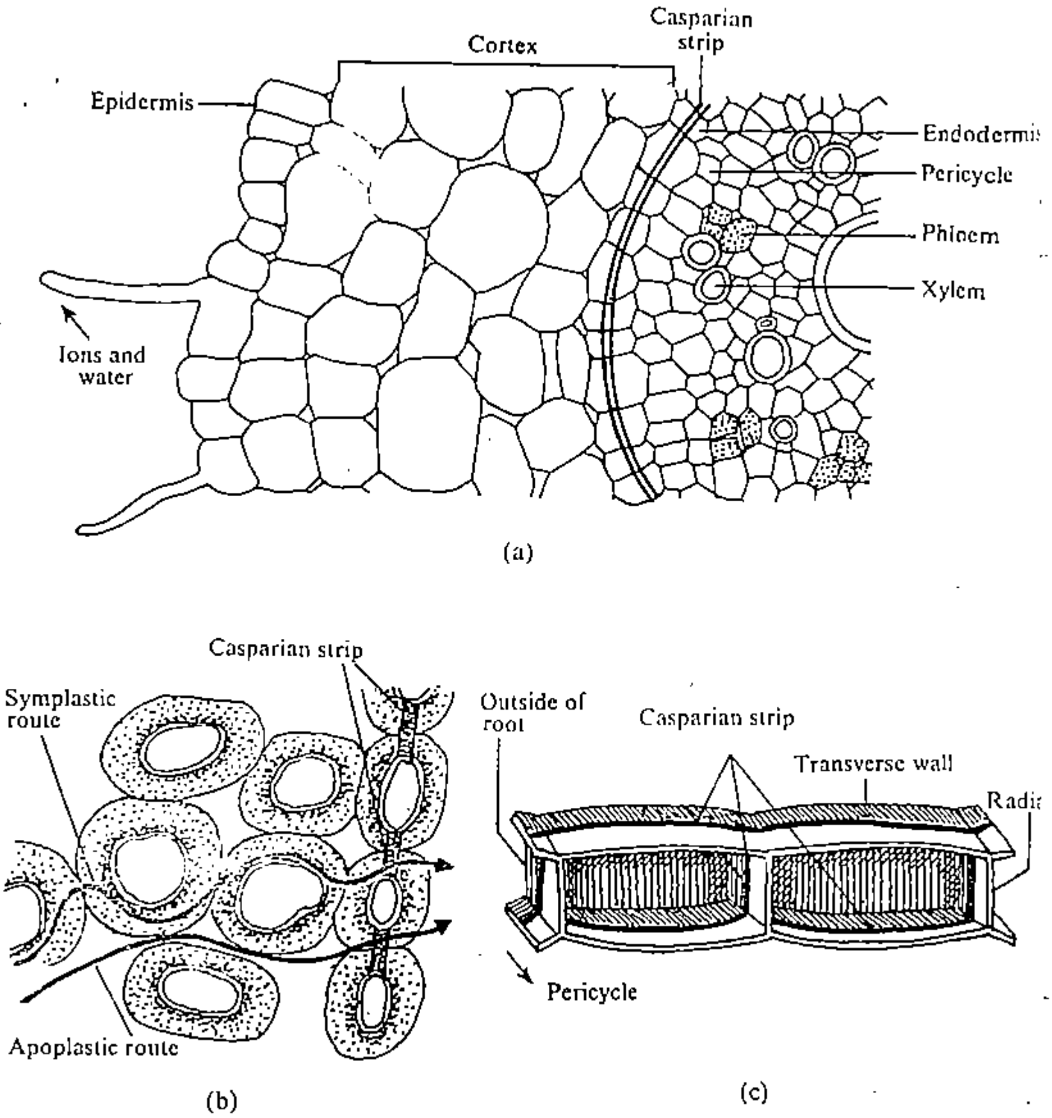

चित्र 11.9 : a) जड़ से दारु को जल की अरीय गति दिखाते हुए जड़ की एक अनुप्रस्थ काट (transverse section) b) संद्रव्यी (symplastic) और ऐपोद्रव्यी (apoplastic) मार्ग। c) कैस्पेरी पट्टी।

है और पौधे का अजीवित भाग **एपोप्लैज़्म (apoplasm)** कहलाता है। कोशिकाभित्ति जलरागी (hydrophilic) पदार्थों से बनती है जैसे कि सेलुलोस, हेमीसेलुलोस, पेक्टिन, लिग्निन और जलरागी प्रोटीनें तथा कार्बोहाइड्रेट्स, गोंद और श्लेषमक (gums and mucilages) के बहुलक (polymer)। इन पदार्थों के अणु काफी पानी रख लेते (retain) हैं और जब पानी की प्रचुर सप्लाई होती है तब बिना किसी प्रतिरोध (resistance) के इस पानी को आसानी से पारगमन (permeate) करने देते हैं। जब पानी बाह्यत्वचा और वल्कुट की कोशिका भित्तियों से होकर जाता है तब अच्छी तरह से निचित (packed) अंतस्त्वचीय कोशिकाओं पर यह गति सीमित हो जाती है। इसका कारण यह है कि इन कोशिकाओं की स्पर्शीय भित्तियाँ (tangential walls) तो नहीं लेकिन अरीय और अनुप्रस्थ (radial and transverse) कोशिका भित्तियों में सुबेरिन का अस्तर होता है। सुबेरिन एक जल विरोधी (hydrophobic) पदार्थ है जो पट्टी के रूप में होता है। ये पट्टी कैस्पेरी पट्टी (casparian strip) कहलाती है (चित्र 11.9 c)।

रासायनिक तौर पर सुबेरिन यौगिक उपत्वचा (cuticle) की क्यूटिन और लिग्निन जैसा है जो पानी के लिए अपारगम्य है यानि इसमें से पानी पार नहीं जा सकता। इसलिए अंतस्त्वचीय कोशिकाओं में घुसने के लिए पानी को प्लैज्मा झिल्लियों को पार करना जरूरी होता है इस प्रकार यह संसुघटित मार्ग से मिल जाता है। कुछ पानी अंतस्त्वचा से पहले भी किसी भी स्थान पर कोशिकाओं के अंदर घुस सकता है और सुसंघटित पथ से मिल सकता है। एक बार जब पानी दारु संनाल में पहुंच जाता है तो यह

अपने आप जड़ की दारु, प्ररोह, से होकर ऊपर की ओर जाता है और अंत में पर्णवृंत (petiole) से पर्णशिरा (leaf vein) की वाहिनिकाओं और पर्णमध्य कोशिकाओं में चला जाता है (चित्र 11.10)। अधिकांश पानी रंध्रीय गुहिका (stomatal cavity) को आस्तरित करने वाली पर्णमध्य कोशिकाओं से वाष्प बनकर उड़ जाता है और रंध्र छिद्र से वायु में विसरित (diffuse) हो जाता है।

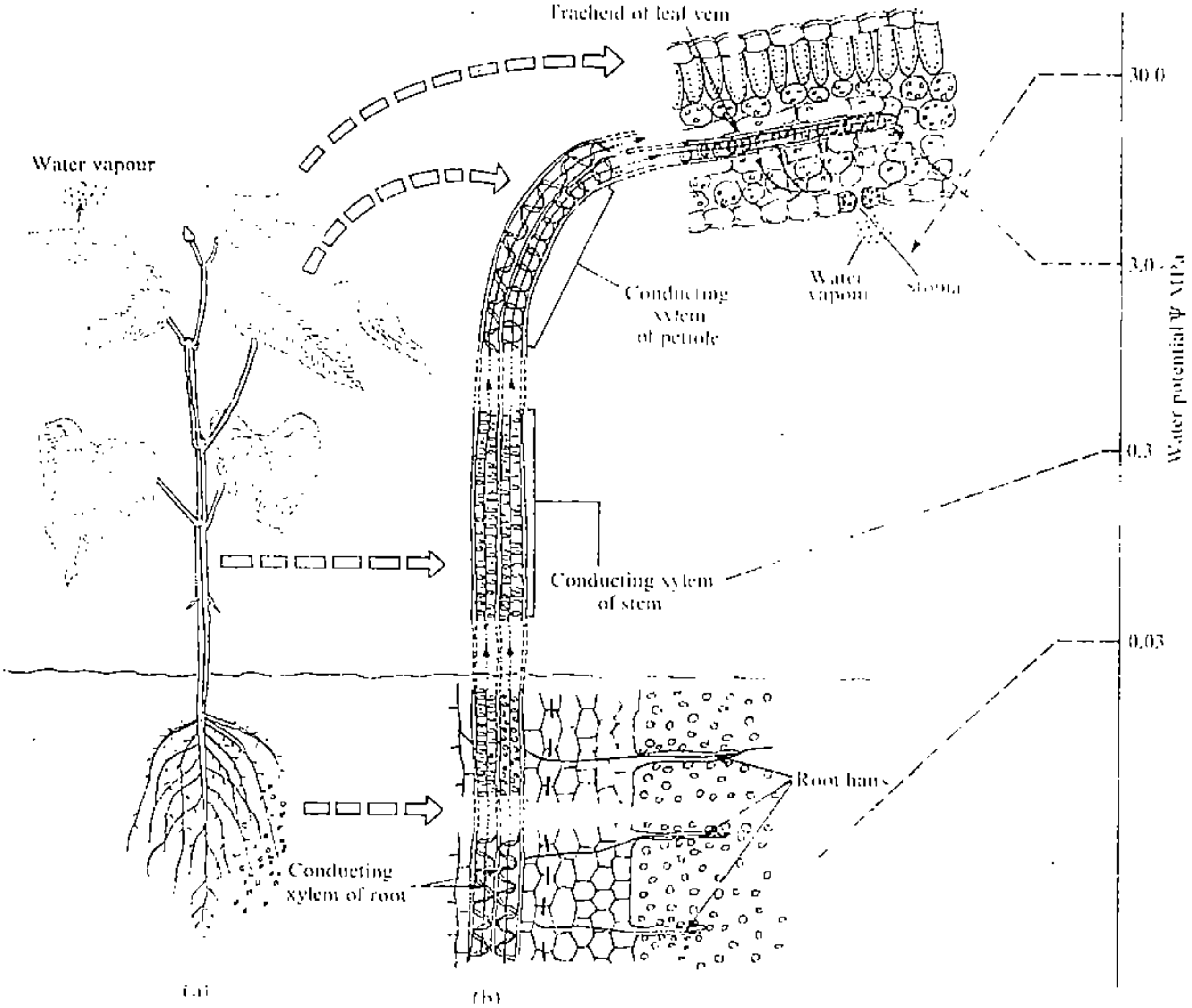

चित्र 11.10 : पौधे में जल गति का पथ: a) सम्पूर्ण पौधा। b) दारु से गति। पैमाना पौधे में विभिन्न स्थलों पर जल-विभव दर्शाता है।

बोध प्रश्न 1

क) नीचे दिए गए कथनों में से कौन-से सही और कौन से गलत हैं? कथनों के आगे दिए गए कोष्ठकों में सही के लिए 'स' और गलत के लिए 'ग' लिखें।

i) एक पौधे (बिना जड़ वाले) को अगर पहले लगभग एक घंटे के लिए पिक्रिक अम्ल के विलयन में रखा जाए तो वह रंजक (dye) विलयन स्थानांतरित नहीं करेगा। ☐

ii) अगर तेजी से वाष्पोत्सर्जन कर रहे पौधे को जमीन के एकदम ऊपर से काट दिया जाए तो पानी दारु वाहिकाओं से बाहर रिसने लगेगा। ☐

iii) किसी पौधे की सारी पत्तियाँ हटा देने से शायद तने में ऊपर की ओर पानी का बहाव घट जाएगा। ☐

iv) वृक्ष स्तंभ की दारु में अगर साबुन के घोल का इंजेक्शन दें तो पानी चोटी तक पहुंचने से रुक सकता है। ☐

संकेतः साबुन का घोल पानी के पृष्ठ तनाव (surface tension) को कम कर देता है।

11.5 कुछ मूलभूत भौतिक संकल्पनाएं

इस भाग का प्रमुख उद्देश्य पानी के रासायनिक विभव (chemical potential) या जल विभव (water potential) की संकल्पना की व्याख्या करना और पादप कोशिका तथा इसके सन्निकट पर्यावरण में इसके मान (value) को बदलने वाले विभिन्न कारकों के प्रभाव की व्याख्या करना है। पानी का बहाव मृदा-पादप-वायुमंडलीय तंत्र में जल विभव की प्रवणता (gradient) पर निर्भर है। इस भाग को समझने के लिए कुछ मूलभूत भौतिक संकल्पनाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। ये संकल्पनाएं हैं: विसरण (diffusion), परासरण (osmosis), अंतःशोषण (imbibition) और रासायनिक विभव। इस भाग को पढ़ने से पूर्व आप कोशिका जैविकी पाठ्यक्रम की इकाई 7 के 7.३ उपभाग को अवश्य दोहराएं।

विसरण

विसरण एक स्वतः प्रक्रम (spontaneous process) है जिसके कारण किसी पदार्थ की नेट गति उच्चतर सांद्रण क्षेत्र (region of higher concentration) से निम्नतर (lower) सांद्रण क्षेत्र की ओर होती है। इसे उच्च मुक्त ऊर्जा के क्षेत्र से निम्न मुक्त ऊर्जा के क्षेत्र की ओर अणुओं की नेट गति के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है।

पौधों में विसरण का नियम महत्वपूर्ण है क्योंकि अनेकों परिवहन प्रक्रम आंशिक रूप से विसरण पर निर्भर हैं। ये प्रक्रम हैं: पानी और खनिजों का उद्ग्रहण (uptake), पर्णकोशिकाओं द्वारा CO_2 का अंतर्ग्रहण (intake) और O_2 की निर्मुक्ति (release) तथा वाष्पोत्सर्जन के कारण जल की हानि।

परासरण

विसरण का एक विशेष मामला परासरण है। यहाँ, जल (या विलायक) की गति उच्चतर सांद्रण के क्षेत्र से निम्नतर सांद्रण के क्षेत्र की ओर तब होती है जब दोनों क्षेत्र एक अर्ध-पारगम्य (semi-permeable) झिल्ली से पृथक हों।

परासरणी दाब

वाष्प दाब : जहां द्रव अपने आपसे साम्यावस्था में हो, उस पर वाष्प द्वारा डाला गया दाब, वाष्प दाब कहलाता है।

यह वह दाब है जो जल या शुद्ध विलायक के प्रवाह को विलयन की ओर जाने से (परासरण) रोकने के लिए आवश्यक है जब दोनों एक अर्ध-पारगम्य झिल्ली से अलग किए गए हो।

परासरणी दाब निम्नलिखित समीकरण से व्यक्त किया जाता है :

$$\pi = CRT \qquad (11.1)$$

π = परासरणी दाब (bars)

C = mol/l में विलयन का सांद्रण

R = गैस नियतांक litre bar $mol^{-1}K^{-1}$। इसका मान 0.08 litre bar $mol^{-1}K^{-1}$ है।

T = केल्विन में परम ताप (Absolute temperature)

इस प्रकार एक मोलर विलयन (अर्थात् एक mole $litre^{-1}$) का परासरणी दाब

$$\pi = \frac{1\ mol}{litre} \times \frac{0.08\ litre\ bar}{mol\ k} \times 273\ K$$

$$= 21.84\ bars \qquad (T = 273\ K)$$

अंतःशोषण (Imbibition)

यह लगभग सूखी सतह जैसे कि बीज और लकड़ी पर जल अवशोषण का प्रक्रम है। इस प्रक्रम के दौरान उष्मा की पर्याप्त मात्रा मुक्त होती है।

प्रवणता (Gradient)

यह सांद्रणों या दाब या किसी दूसरे प्राचल (parameter) के बीच अंतर है जो दो विशिष्ट स्थलों के बीच ऊर्जा का सूचक है। प्रवाह की दिशा हमेशा ही उच्चतर ऊर्जा से निम्नतर ऊर्जा की ओर होती है।

रासायनिक विभव

किसी तंत्र में पदार्थ का रासायनिक विभव उसकी मुक्त ऊर्जा यानि प्राप्यतम ऊर्जा (free energy) का माप है अर्थात् वह ऊर्जा जो कार्य करने के लिए उपलब्ध है। यहाँ तंत्र का अर्थ ऊष्मागतिक संकल्पना (thermodynamic concept) से है जिसके अंतर्गत व्यष्टियों (individual) या पिंडों (bodies) की बजाय तंत्रों (systems) का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार जब हम किसी पात्र में विलयन के गुणों का अध्ययन करते हैं तो हम एक तंत्र का अध्ययन कर रहे होते हैं जिसके अंतर्गत प्रत्येक व्यष्टिक घटक (component) आंतरिक रूप से परस्पर क्रिया करता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए हमारे पास किसी तंत्र में शुद्ध जल है भले ही यह बीकर में हो या मिट्टी में। इसमें पानी के सभी अणु कार्य कर सकते हैं, उनकी मुक्त ऊर्जा अधिकतम होती है। जब शर्करा की थोड़ी-सी मात्रा पानी में डाल दी जाती है तो पानी के कुछ अणु शर्करा के प्रत्येक अणु से सम्बद्ध हो जाते हैं तथा पानी की मुक्त ऊर्जा घट जाती है इसलिए शुद्ध जल की मुक्त ऊर्जा हमेशा अधिकतम होती है। किसी भी विलेय के मिलाए जाने से पानी की मुक्त ऊर्जा या रासायनिक विभव कम हो जाता है।

विलयन में पानी का रासायनिक विभव उसके वाष्प दाब से होता है और नीचे हुए दिए गए समीकरण द्वारा व्यक्त किया जाता है

$$\mu_w - \mu_{w^\circ} = RT \ln \frac{e}{e^\circ}$$

$$\Delta\mu = RT \ln \frac{e}{e^\circ} \quad \ldots (11.2)$$

μ_w = पानी का रासायनिक विभव जिसकी बात की जा रही है (joules $mole^{-1}$).

μ_{w° = जल का रासायनिक विभव STP पर

$\Delta\mu$ = मुक्त ऊर्जा में परिवर्तन

R = गैस नियतांक

T = तापमान

e = पानी का वाष्प दाब (जिसकी बात की जा रही है)

e° = शुद्ध जल का वाष्प दाब

ध्यान दें कि

आपेक्षिक आर्द्रता $= \frac{e}{e^\circ} \times 100$

(Relative humidity)

पानी का रासायनिक विभव जीरो लिया जाता है। अगर e वाष्प दाब (पानी का, जिसकी बात की जा रही है) भी शुद्ध जल है तब $\ln \frac{e}{e^\circ}$ शून्य (जीरो) और $\Delta\mu$ भी शून्य होगा। अगर e शुद्ध जल की e° से कम है तब $\ln \frac{e}{e^\circ}$ ऋण संख्या (negative number) होगी, इसलिए $\Delta\mu$ शून्य से कम होगा-यानि एक ऋण संख्या।

जल विभव

यह किसी तंत्र में किसी भी स्थान पर पानी के रासायनिक विभव और STP पर शुद्ध जल के विभव के बीच में अंतर है। परिपाटी के अनुसार जल के रासायनिक विभव को जल विभव कहा जाता है और ψ_w (ψ — का उच्चारण psi (साइ) है) द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है।

ψ_w दाब यूनिट में व्यक्त किया जाता है। यह प्रति यूनिट आयतन जल की मुक्त ऊर्जा (joules cm^{-3}) है।

$$\psi_w = \frac{\Delta\mu}{\bar{V}}$$

$\bar{V}$ आंशिक ग्राम आणव यानि मोलल (molal) आयतन

अगर किसी स्रोत (source — पानी सप्लाई करने वाले क्षेत्र) का जल विभव सिंक (sink—पानी पाने वाले क्षेत्र) के जल विभव से उच्चतर है तब पानी का स्रोत से सिंक को स्वतः स्थानांतरण होता है। (ψ_w स्रोत > ψ_w सिंक)

विलय का आंशिक ग्राम आणव आयतन-विलय के आयतन में होने वाला परिवर्तन है जब उसमें किसी पदार्थ का एक ग्राम-अणु (मोल) डाला जाता है।

शुद्ध जल के जल विभव को शून्य मानने की परिपाटी है। इसलिए सभी जल विभव आमतौर पर ऋण होंगे। इस प्रकार निम्नतर विभव का अर्थ अधिक ऋण मान और उच्चतर विभव का अर्थ कम ऋण मान होगा।

पौधों में जल विभव विलेय (solute), द्रवस्थैतिक दाब (hydrostatic pressure) और मैट्रिक बलों (matric forces) से प्रभावित होता है। किसी कोशिका के भीतर या बाहर पानी की गति बताने के लिए हमें ऊपर बताए गए तीन कारकों के प्रभाव पर अवश्य विचार करना चाहिए। ये नीचे बताए गए हैं।

जल विभव दाब यूनिटों में व्यक्त किया जाता है। जल की प्रति यूनिट आयतन ऊर्जा जूल प्रति सेमी^{3} में व्यक्त की जाती है। यह डाइन प्रति सेमी^{2} के तुल्य है। 10^6 डाइन = 1 बार। दाब के लिए वर्तमान समय में काम में लाई जाने वाली यूनिट पास्कल (Pa) है। यह एक वर्ग मीटर पर एक समान रूप से पड़ने वाले एक न्यूटन के बराबर दाब है।

1 bar = 10^5 Pa
10^3 Pa = 1 kPa (1 किलो पास्कल)
10^3 KPa = 1 MPa (मेगा पास्कल)

विलेयों का प्रभाव

आइए हम दो वेश्मों (chambers) A और B में शुद्ध जल लेते हैं। दोनों वेश्म एक अर्ध-पारगम्य झिल्ली से पृथक किए गए हैं (चित्र 11.11 a) दोनों वेश्मों का जल विभव शून्य है। वेश्म A में विलेय डालने से (चित्र 11.11 b) पानी की मुक्त ऊर्जा कम हो जाएगी और जल विभव शून्य से नीचे आ जाएगा। फलस्वरूप पानी वेश्म B से A में आएगा (चित्र 11.11 C)। घुले हुए विलेयों का जल विभव (ψ_w) पर पड़ने वाला प्रभाव परासरण-विभव (osmotic potential-ψ_p) कहलाता है। अगर हमें विलयन का परासरणी दाब मालूम है तो परासरण-विभव को संख्यातः आंकलित (numerically calculated) किया जा सकता है। दोनों इस प्रकार संबंधित हैं —

$$\pi = -\pi \qquad \text{... (11.3)}$$

उदाहरण के लिए अगर किसी विलयन का π 5 bar है तो ψ_π, -5 bar होगा।

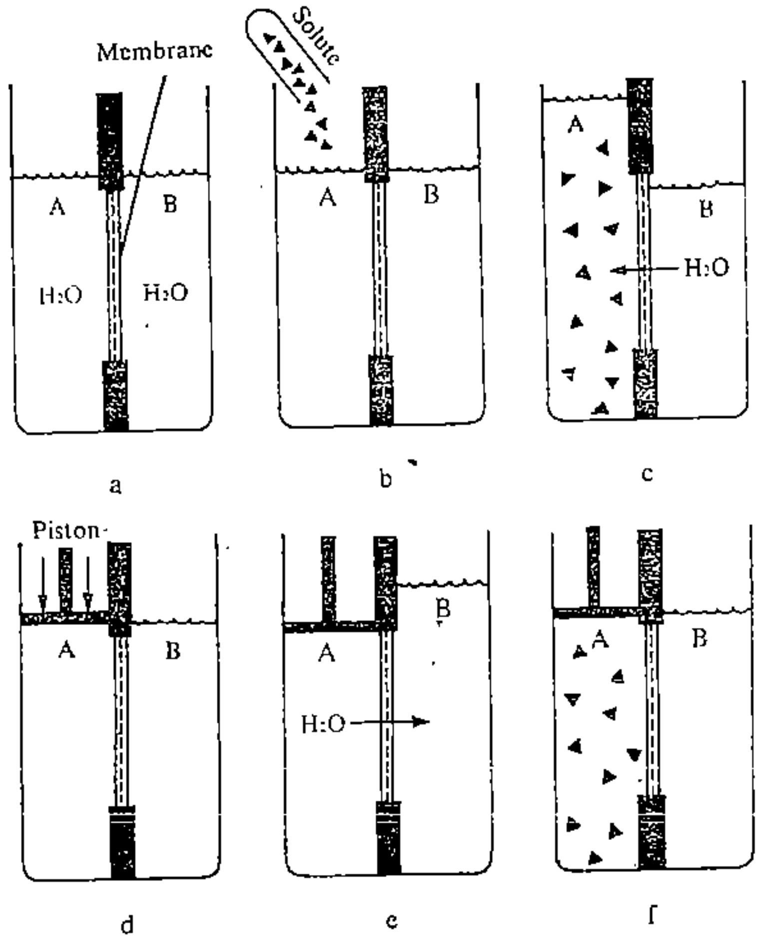

चित्र 11.11 : जल विभव पर पड़ने वाले विलेय और दाब के प्रभाव को दिखाने वाला प्रयोग। विवरण के लिए मूल पाठ देखिए।

दाब का प्रभाव

आइए अब हम जल विभव पर दाब का प्रभाव देखें। जैसा कि चित्र 11.11 d में दिखाया गया है जब पिस्टन द्वारा दाब डाला जाता है तो जल का प्रवाह अर्ध-पारगम्य झिल्ली के द्वारा वेश्म A से वेश्म B की ओर होने लगता है (चित्र 11.11 e)। इसका अर्थ यह हुआ कि दाब जल की मुक्त ऊर्जा बढ़ाता है और इस प्रकार शुद्ध जल के विभव को शून्य से ऊपर कर देता है। जल विभव पर दाब का प्रभाव दाब विभव कहलाता है और ψ_p के रूप में दर्शाया जाता है। B में जल का स्तर A के जल विभव में वृद्धि के कारण उठ जाता है।

अब अगर विलेय वाले वेश्म पर दाब लगाया जाए तो क्या होगा? ψ_w विलेय और दाब दोनों से प्रभावित होगा। विलेय से जल विभव निम्न हो जाएगा और दाब जल विभव को बढ़ाएगा। इसलिए पानी का प्रवाह B से A की तरफ घटेगा। एक साम्यावस्था स्थिति (equilibrium condition) आ जाएगी जब ψ_p, ψ_π के बराबर होगा, लेकिन परिमाण (magnitude) में विपरीत होगा और दो वेश्मों में जल का नेट प्रवाह नहीं होगा (चित्र 11.11 e) इसे निम्नलिखित समीकरण द्वारा निरूपित किया जा सकता है :

$$\psi_{W(A)} = (\psi_\pi + \psi_p)_A \qquad (11.4)$$

यदि हम मान लेते हैं कि अगर ψ_p, ψ_π के बराबर और विपरीत है तो

$$\psi_{W_A} = (\psi_{\pi A} + \psi_{pA}) = 0$$

मैट्रिक दाब का प्रभाव

लकड़ी, बीजों और कोशिकीय घटकों जैसे ठोसों की आर्द्र हो सकने वाली सतह पर जल अवशोषित हो सकता है। ठोस-द्रव के बीच में अंतरापृष्ठ पर एक बल कार्य करता है जो मैट्रिक चूषण (matric suction) या मैट्रिक दाब कहलाता है। अवशोषण प्रक्रम के साथ उष्मा की हानि (heat loss) होती है और इसका फल होता है जल की मुक्त ऊर्जा में कमी। दूसरे शब्दों में, जल विभव पर मैट्रिक बलों का प्रभाव मैट्रिक विभव (ψ_m) कहलाता है। इसका मान ऋण होता है। जिस मिट्टी में पानी बहुतायत में दिया जाता है उसमें ψ_m अधिक महत्वपूर्ण नहीं होता लेकिन जब मिट्टी सूखने के करीब हो तो ψ_m मृदा का जल विभव निर्धारित करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ψ_w निम्नलिखित प्रमुख घटक बलों का बना है:

$$\psi_w = \psi_\pi + \psi_p + \psi_m + \psi \ldots\ldots \qquad \ldots (11.5)$$

$\psi \ldots\ldots$ = कोई भी दूसरा बल जो ψ_w को प्रभावित करे।

11.6 जल की गति में प्रतिरोध और जल का अभिवाह

हम पहले बता चुके हैं कि अगर स्रोत से सिंक (ψ स्रोत > ψ सिंक) की तरफ जल विभव कम होता है तब पानी का स्वतः प्रवाह होगा। लेकिन हम इस स्थानांतरण की दर अर्थात् अभिवाह (flux) को नहीं जानते है (उपभाग 7.2, LSE - 01, याद कीजिए)। विसरण की दर dc/dt अभिवाह है। जल प्रवाह का अभिवाह J_w से दर्शाया जाता है। यह यूनिट पृष्ठ क्षेत्रफल प्रति यूनिट समय में, जल प्रवाह का आयतन है। पौधों में पानी कोशिका दर कोशिका से और कोशिकाभित्ति से होकर भी बहता है।

जब पानी कोशिका से कोशिका में होकर जाता है तब यह प्रवाह झिल्ली की जल पारगम्यता (permeability) का प्रकार्य (function) है। यहाँ पर जल का अभिवाह निम्नलिखित समीकरण से दिया जाता है :

$$J_w = L_p \Delta \psi_w \qquad (11.6)$$

L_p = सीमाकारी झिल्लियों का पारगम्यता गुणांक

$\Delta\psi_w$ = दो बिन्दुओं (स्थलों) पर जल विभव में अंतर समीकरण (11.4) से हमें पता चलता है कि

$$\psi_w = (\psi_\pi + \psi_p)$$

$$\Delta\psi_w = (\Delta\psi_\pi + \Delta\psi_p)$$

ऊपर के समीकरण में $\Delta\psi_w$ के मान को प्रतिस्थापित करते हुए

$$J_w = L_p(\Delta\psi_\pi + \Delta\psi_p)$$

इस प्रकार कोशिका से कोशिका और ऊतकों में जल के प्रवाह की भीतरी और बाहरी दर ऊपर की अभिव्यक्ति से परिकलित की जा सकती है।

आइए, अब हम पौधे में अंतराकोशिकीय अवकाशों (एपोप्लाज़्म) से होकर जल के प्रवाह पर विचार करें जहाँ सीमाकारी झिल्लियाँ नहीं होतीं। अभिवाह की अभिव्यक्ति तब इस प्रकार दी जाती है :

$$J_w = H_c\,\Delta\psi_w$$

H_c = चलजलीय चालकत्व (hydraulic conductance)

चूंकि $H_c = \frac{1}{R}$ $\qquad$ R = जल के प्रवाह के प्रति चलजलीय प्रतिरोध

इसलिए $J_w = \frac{\Delta\psi_w}{R}$

जल अभिवाह $\Delta\psi_w$ के अनुक्रमानुपाती (directly proportional) और चलजलीय प्रतिरोध (R) के व्युत्क्रमानुपाती (inversely proportional) है। दूसरे शब्दों में, $\Delta\psi_w$ जितना उच्च होगा अभिवाह अधिक होगा लेकिन उच्च R अभिवाह को कम करेगा। पौधों में जल का अभिवाह उस पथ से होकर जाएगा जहाँ उसे सबसे कम प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। कोशिका से कोशिका और कोशिका भित्तियों वाले दो मार्गों में से कोशिका भित्तियों की अपेक्षा कोशिका की झिल्लियाँ अधिक प्रतिरोध करती हैं जिसका कारण इनकी निम्न पारगम्यता है। इसलिए पानी कोशिका भित्तियों से होकर अपेक्षाकृत आसानी से बह सकता है। परंतु जब पानी कोशिका से कोशिका को बरास्ता प्लैज्मोडेस्मेटा चलता है तो इसे प्लैज़्माझिल्ली के प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ता। कोशिका झिल्लियाँ दारू संनालों को अवरुद्ध नहीं करतीं इसलिए उनमें सबसे कम प्रतिरोध होता है और जल-प्रवाह की दर बहुत ऊंची होती है। दारू, कोशिका भित्ति और कोशिका झिल्लियों में R का अनुपात 0.3 : 1 : 50 के क्रम से है। यह इस बात को स्पष्ट करता है कि पादपों में लम्बी दूरी के परिवहन के लिए दारू का रास्ता क्यों अपनाया जाता है, जैसा कि प्रयोग करके देखा गया है। दारू में प्रतिरोध दारू अवयवों (xylem element) के व्यास के अनुसार व्युत्क्रमतः बदलता है। मृदा में झिल्लियां न होने के कारण दाब विभव महत्वहीन है और परासरणी विभव शून्य है (क्योंकि विलेय और जल साथ-साथ चलते हैं)। इसलिए मृदा में प्रेरक बल $\Delta\psi_w$ मैट्रिक दाब से निर्धारित होता है।

द्रवस्थैतिक दाब : वायुमंडलीय दाब से ऊपर या नीचे द्रव द्वारा या द्रव पर डाला गया दाब द्रवस्थैतिक दाब (hydrostatic pressure) कहलाता है।

$$\Delta\psi_w\,(\text{मृदा}) = -\Delta\psi_{m\,(\text{मृदा})}$$

भिन्न-भिन्न मृदाओं में चलजलीय प्रतिरोध (hydraulic resistance) बदलता रहता है। स्थूल मृदा कणों (coarse soil particle) के बीच बड़े अवकाश होते हैं इनकी अपेक्षा महीन (fine) कणों के बीच छोटे अवकाश होते हैं। सूक्ष्म कण अधिक प्रतिरोध करते हैं। जब मिट्टी का ψ_w गिर जाता है तो R बढ़ जाता है और तब पौधा कम पानी ग्रहण कर पाता है।

कोशिका भित्तियों में भी प्रेरक बल $\Delta\psi_m$ द्वारा निर्धारित होता है। उन पत्तियों की कोशिकाओं में जिनमें पानी तेजी से उड़ रहा हो, मैट्रिक बल महत्वपूर्ण हो जाता है और फलस्वरूप पत्ती का ψ_w घट जाता है। इसलिए पानी अधिक गीली कोशिकाओं से उनकी तरफ चलता है। इस प्रकार एक सतत प्रवणता पैदा हो जाती है जो कोशिका भित्तियों के साथ-साथ पूण पौधे में कार्य करती है। इतना जरूर है कि यह उन स्थलों पर टूट जाएगी जहाँ कोशिका भित्तियाँ जलविरोधी (hydrophobic) पदार्थों से संसेचित (impregnated) हो जैसे कि कैस्पेरी पट्टी।

बोध प्रश्न 2

क) तीन कारक बताइए जो पौधे में ψ_w का मान निर्धारित करते हैं।

ख) जिस प्याले में नमक का घोल है उसका जल विभव ($\psi_{w(c)}$) निम्नलिखित होगा :

$\psi_{w(c)} > \psi_w$
$\psi_{w(c)} < \psi_w$
$\psi_{w(c)} = \psi_w$

ग) अगर किसी द्रव्यकुंचित (plasmolysed) कोशिका का परासरण दाब 7.9 है तो इसका जल विभव क्या होगा?

घ) नीचे दिए गए कथनों में रिक्त स्थानों में उचित शब्द भरिए :

i) ψ_w किसी कोशिका की पूर्ण स्फीति पर .... होगा।

ii) जब किसी तंत्र का ψ_p, और ψ_π के बराबर और .... होगा तब जल गति का नेट प्रवाह रुक जाएगा।

iii) अधिक मैट्रिक चूषण किसी तंत्र में जल विभव को .... कर देगा।

11.7 जल विभव की प्रवणताएं

पौधे द्वारा जल के अवशोषण में एक व्यष्टि कोशिका, कोशिकाओं के समूह और अंततः सम्पूर्ण पौधे के जल संबंध शामिल हैं। इसलिए हम संगठन के विभिन्न स्तरों पर जल संबंधों के बारे में विचार करेंगे। पौधों में लम्बी दूरी तक पानी के परिवहन के बारे में हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं।

एक एकल कोशिका में जल की गति

वियुक्त (isolated) कोशिकाएं, एकल कोशिकी जीव (single celled organisms) और मूल रोम अपने चारों ओर घिरे माध्यम से सीधे ही पानी अवशोषित करते हैं। आइए, हम एक आदर्श मृदूतकीय (parenchymatous) कोशिका पर विचार करें। रसधानी एक कोशिका का 90% भाग घेरे रहती है और उसमें कोशिका रस (cell cap) नमक और दूसरे छोटे अणुओं का तनु विलयन होता है। परासरण-विभव के कारण कोशिका रस का जल विभव शुद्ध जल की अपेक्षा निम्न होता है। जब ऐसी कोशिका को शुद्ध जल में रखा जाता है तो जल विभव में अंतर के कारण एक प्रवणता बन जाती है। इसके फलस्वरूप कोशिका के भीतर जल की गति होने लगती है (चित्र 11.12) इस प्रकार रसधानी के रस का सांद्रण भी जल्दी ही कम हो जाता है जो रस के परासरणी विभव को कम कर देता है। इस प्रकार, शुद्ध जल और कोशिका रस के विभव के बीच अंतर घट जाता है। हम इस संबंध को निम्नलिखित समीकरण से निरूपित कर सकते हैं:

$$\psi_{w(\text{कोशिका के बाहर})} = (\psi_\pi + \psi_p)_{\text{कोशिका के भीतर}}$$

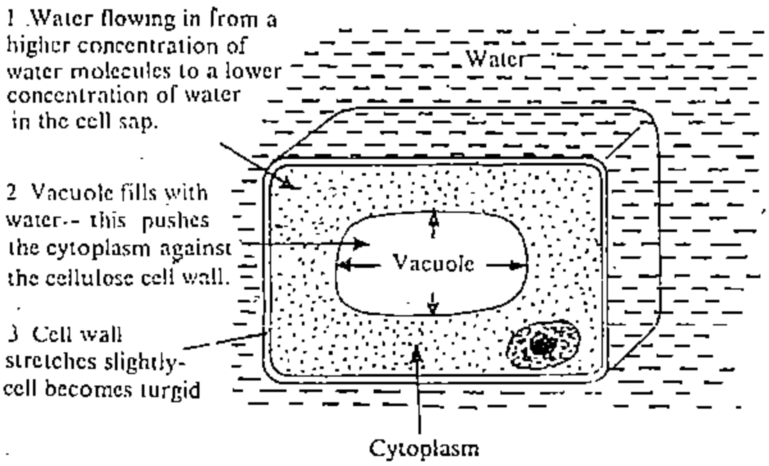

चित्र 11.12 : पानी से घिरी एक कोशिका

जहाँ कि ψ_w तंत्र का कुल जल विभव है, ψ_π परासरणी या विलेय विभव है तथा ψ_p दाब विभव है जो कोशिका भित्ति दाव अथवा स्फीति दाब के कारण है। पूरे स्फीति (full turgor) दाब पर ψ_p और ψ_π का योग शून्य होगा। अतः ψ_w भी शून्य होगा।

प्रेरक बल (F) जिसके कारण पानी की गति होती है निम्नलिखित समीकरण द्वारा निरूपित किया जा सकता है:

$$F = \text{प्रवणता } (\psi_{w(c)} - \psi_{w(e)})$$

$\psi_{w(c)}$ कोशिका का कुल जल विभव है जिसमें कोशिका रस का विभव भी शामिल है और $\psi_{w(e)}$ बाह्य (external) माध्यम का कुल, जल विभव है। अगर बाहरी माध्यम शुद्ध जल है तो इसका मान शून्य होगा। ऐसा होने पर प्रेरक बल $\psi_{w(c)}$ के बराबर होगा। लेकिन पानी जैसे-जैसे कोशिका के भीतर जाएगा $\psi_{w(c)}$ का नियमन $\psi_{\pi(c)}$ और $\psi_{p(c)}$ से होगा। इस संबंध (relationship) में कोशिकाभित्ति का लचीलापन भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। कोशिका रस की तनुता से कोशिका का आयतन कुछ सीमा तक बढ़ेगा और इससे कुल परासरण-दाब बढ़ेगा जो कोशिका और माध्यम के बीच प्रवणता के कारण उत्पन्न बल को प्रभावित करेगा।

जड़, पत्ती तथा पौधे के दूसरे भागों की कोशिकाओं का ब्राह्य माध्यम कोशिका भित्तियों और अंतराकोशिकीय अवकाशों का (एपोप्लास्ट) पानी है जो वायुमंडलीय दाब के अंतर्गत होता है और जिसका परासरण-विभव बहुत निम्न होता है। लेकिन कोशिका भित्तियों द्वारा डाले गए मैट्रिक बल उच्चतर होते हैं, इसलिए एपोप्लाज़्म में जल विभव का निर्धारण कोशिका भित्ति में आयास किए (exerted) मैट्रिक बलों द्वारा किया जाता है।

एक ऊतक के जल संबंध

उच्च कोटि पादपों (higher plants) में किसी भी कोशिका का दूसरी कोशिकाओं से वियुक्त अस्तित्व नहीं होता है। यहाँ तक कि मूल रोम जो एक तरफ आस-पास के माध्यम में प्रक्षेपित (projected) रहता है वह भी दूसरी तरफ से अन्य कोशिकाओं से संलग्न रहता है। अनुप्रस्थ काट में यह तीन तरफ से दूसरी कोशिकाओं से घिरा हुआ दिखाई देता है। इस तरह, मूल रोम के जल संबंध एक ओर तो बाहरी माध्यम से और दूसरी ओर अन्य कोशिकाओं से नियंत्रित रहते हैं। आइए, हम A और B दो कोशिकाओं को लें जो एक साझा कोशिका भित्ति द्वारा एक-दूसरे से जुड़ी हैं। अगर इन दोनों कोशिकाओं का व्यष्टिगत रूप से (individually) कुल जल विभव एक-सा है तो उन दोनों के बीच पानी का कोई नेट विनिमय, यानि अदला-बदली नहीं होगी। इसे निम्न प्रकार से दिखाया जा सकता है:

कोशिका A का कुल जल विभव $\psi_{w(A)}$ इसके परासरण-विभव और दाब विभव $(\psi_{\pi(A)} + \psi_{P(A)})$ के योग के बराबर होगा। हम कह सकते हैं कि कोशिका A और B के लिए ये मान इस प्रकार होगें

$$\psi_{w(A)} = \psi_{\pi(A)} + \psi_{P(A)}$$
$$\psi_{w(B)} = \psi_{\pi(B)} + \psi_{P(B)}$$

कोशिका में मैट्रिक बल बहुत कम होते हैं। यहाँ ψ_w निम्न होने का कारण ψ_π है। अगर रसधानी का ψ_w एपोप्लास्ट के ψ_w से निम्न है तब पानी भीतर की ओर बहता है।

अत, प्रेरक बल (F) इन दो कोशिकाओं के जल विभव में अंतर होगा।

$$F = (\psi_{wA} - \psi_{wB})$$

अगर ψ_{wA} ψ_{wB} के बराबर होगा तो प्रवणता शून्य होगी और F भी शून्य ही होगा। इसलिए A और B कोशिकाओं के बीच जल का कोई नेट विनिमय नहीं होगा। लेकिन हमें यह जान लेना चाहिए कि ψ_{wA} और ψ_{wB} के मान समान होने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि दोनों कोशिकाओं का एक-समान परासरण विभव और एक-समान स्फीति दाब या भित्ति दाब हो।

दूसरी तरफ अगर कोशिका B का कुल जल विभव कोशिका A से निम्नतर है तो एक प्रेरक बल पैदा होगा जो कोशिका B में पानी का अभिवाह तब तक होने देगा जब तक कि दोनों कोशिकाओं का जल विभव एक-समान नहीं हो जाता। यह उदाहरण उन असंख्य कोशिकाओं पर लागू होता है

जो ऊतक में एक-दूसरे से जुड़ी हैं। अगर 1 से शुरू कर के 20 तक कोशिकाएं हैं तो वे भी अपने कुल जल विभव पर निर्भर करते हुए आपस में उसी तरह संतुलन प्राप्त कर लेती हैं जैसे कि ऊपर बताई गई एक दूसरे से संलग्न दो कोशिकाएं प्राप्त करती हैं। ऐसी परिस्थितियों में एक स्थिति ऐसी आ सकती है जब नेट जल अवशोषण और नेट जल की गति न हो।

पूर्ण पौधे का जल संबंध

आइए, अब हम पत्तियों, तनों और जड़ों को ध्यान में रखते हुए पूरे पौधे के जल संबंध के बारे में विचार करें जो मृदा-पादप-वायुमंडल तंत्र में पानी के लिए एक सांतत्यक (continuum) प्रदान करता है। वायुमंडल में कुल जल विभव बहुत निम्न हो सकता है। यह तापमान और आर्द्रता (humidity) पर निर्भर है। सारणी 11.1 में मृदा-पादप-वायुमंडल तंत्र में जल विभव के लगभग परिमाण दिखाये गये हैं।

सारणी 11.1 : मृदा-पादप-वायुमंडल तंत्र में जल विभव के लगभग परिमाण

घटक	जल विभव
मिट्टी	–0.1 से –20.0
पत्ती	–5.0 से –50.0
वायुमंडल	–100 से –2000

सारणी 11.1 के आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि मृदा-पादप-वायुमंडल में कुल जल विभव में अंतर एक प्रेरक बल पैदा करेगा। यह बल मिट्टी से पौधे में होते हुए वायुमंडल में जल गति के लिए है। अगर यह सांतत्यक तोड़ दिया जाए तो प्रेरक बल स्वतः ही गायब हो जाएगा।

बोध प्रश्न 3

क) पौधे में पानी A अंग से B अंग में प्रवेश करेगा अगर

i) $\psi_{W(A)} < \psi_{W(B)}$

ii) $\psi_{W(A)} > \psi_{W(B)}$

iii) $\psi_{W(A)} = \psi_{W(B)}$

ख) अगर दारु का जल विभव पेड़ के स्तंभ (trunk) के आधार पर –0.5 MPa और चोटी पर –1.5 MPa है तो $\Delta\psi_w$ का मान निकालिए।

ग) एक पेड़ में तीन ऊतकों - क, ख और ग - में जल विभव –0.4, –3.1, और –0.09 MPa पाया गया। जल की गति की दिशा क्या होगी?

घ) पानी में किशमिश फूलने का निम्नलिखित में से कौन-सा कारण है?

i) $\psi_{w(\text{किशमिश})} > \psi_{w(\text{पानी})}$

ii) $\psi_{w(\text{पानी})} > \psi_{w(\text{किशमिश})}$

11.8 जल अवशोषण

दो प्रमुख कारक पौधे की जल स्थिति (status) निर्धारित करते हैं : i) जल अवशोषण और ii) जल हानि। हम इस भाग में जल अवशोषण के बारे में और आगामी भाग में जल हानि के बारे में बतलाएंगे।

मृदा कारकों, वाष्पोत्सर्जन दर और जड़ों के साइज और वितरण से जल अवशोषण नियंत्रित होता है। जल अवशोषण का नियमन करने वाले मृदा कारक हैं : i) मृदा जल अंश, ii) मृदा और मूल (जड़) के बीच जल विभव में अंतर, iii) मृदा विलयन का सांद्रण या सांद्रता, iv) मृदा तापमान और v) मृदा का वातन (aeration).

मृदा अभिलक्षण

मृदा के भौतिक गुण पौधे की जल-धारण क्षमता और पौधे की जल प्राप्यता को नियंत्रित करते हैं। गाद (silt) और बालू के बजाय मृतिका यानि चिकनी मिट्टी (clay) के सूक्ष्म मृदा कणों की जल धारण क्षमता कहीं ज्यादा होती है। ह्यूमस मिला देने से मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ जाती है। मिट्टी में मौजूद छिद्रों में पानी गति (move) करता है। छिद्र बनने का कारण यह है कि व्यष्टि मृदा कण पुंजित (aggregate) होकर विभिन्न साइज के बड़े कण बनाते हैं जिन्हें मिसेल (micelles) कहते हैं। मिसेलों के बीच में छूटे हुए अवकाश ही छिद्र हैं। छिद्रों के साइज छोटे (सूक्ष्म छिद्र) या बड़े (स्थूल छिद्र) हो सकते हैं जो मिट्टी की किस्म पर निर्भर करते हैं। छिद्र पानी से भर जाते हैं।

थोड़े समय पहले सिंचाई या वर्षा के जल से ताजी गीली हुई मिट्टी सारे पानी को सोखकर नहीं रख सकती। अधिकांश जल गुरुत्व (gravity) के कारण स्थूल छिद्रों से रिस जाता है। इस पानी को **गुरुत्वीय जल (gravitational water)** कहते हैं। बाकी बचे पानी को जिसे हाइड्रोजन आबंध मजबूती से पकड़कर गुरुत्वीय बलों के विरुद्ध मृदा कणों से बांधते हैं उसे **केशिका जल (capillary water)** कहते हैं। यह पानी जड़ों को उपलब्ध रहता है। केशिका जल का कुछ अंश जो बहुत ही दृढ़ता से पकड़कर रखा जाता है और जो जड़ के लिए उपलब्ध नहीं होता उसे आर्द्रता-जल (hygroscopic water) कहते हैं।

मृदा के जल अंश को निम्नलिखित ढंग से व्यक्त करते हैं:

$$\text{मृदा जल का \%} = \frac{FW - DW}{DW} \times 100$$

FW = गीली मिट्टी का क्षेत्र भार (field weight)

DW = शुष्क भार (मिट्टी को 60° से. तक गर्म करने पर पाया गया)।

मिट्टी की जल स्थिति (केशिका जल) का वर्णन करने के लिए प्रायः दो शब्दों का प्रायः प्रयोग किया जाता है। ये हैं — नमी धारण क्षमता (field capacity—FW) और स्थायी म्लानि प्रतिशतता (permanent wilting percentage - PWP)

नमी धारण क्षमता (FC)

यह किसी क्षेत्र की गुरुत्वीय बलों के विरुद्ध जल की मात्रा धारण करने की क्षमता है। यह मृदा के शुष्क भार की प्रतिशतता के रूप में अभिव्यक्त की जाती है। नमी धारण क्षमता जल प्राप्यता की ऊपरी सीमा (upper limit) निरुपित करती है और इसका मान भिन्न-भिन्न मृदाओं में अलग-अलग होता है। मृतिका मिट्टी की औसतन नमी धारण क्षमता लगभग 40-50%, गाद की 20% और बालू की 5-10% है।

स्थायी म्लानि प्रतिशतता (PWP)

यह मिट्टी में नमी का वह प्रतिशत है जिस पर पौधा मुरझा जाता है और जब तक मिट्टी में पानी नहीं डाला जाएगा पौधा फिर से ठीक नहीं होता। मृतिका, गाद और बालू की PWP क्रमशः लगभग 26%, 10% और 3-5% है। यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि PWP को मृदा के गुण न कि पौधे के गुण व्यक्त करने के लिए काम में लाया जाता है।

यह जरूरी नहीं है कि जिस नमी अंश पर एक पौधा स्थायी म्लानि (permanent wilting) दिखाता है, उतनी ही नमी में, उसी मिट्टी में दूसरे पौधे भी म्लान हों। यानि PWP एक ही मिट्टी में विभिन्न फसलों के लिए भिन्न-भिन्न होते हैं। यह इसलिए होता है क्योंकि कुछ पौधों की मिट्टी में पर्याप्त जल अंश होने पर मुरझा जाने की प्रवृत्ति होती है। जबकि दूसरे पौधे केवल तभी मुरझाते हैं जब नमी अंश बहुत ज्यादा घट जाता है।

FC और PWP के संदर्भ में पौधे की जल स्थिति केवल तभी महत्वपूर्ण है जब मृदा के गुण मालूम हों। इसकी वजह यह है कि मिट्टी जल की प्राप्यता निर्धारित करती है। लेकिन मृदा जल स्थिति को जल-विभव के तौर पर व्यक्त करना वांछनीय और सरल भी है ताकि जल विभव के संदर्भ में मृदाएं पानी के संदर्भ में एक-समान हो जाएं।

मृदा तापमान

मृदा का तापमान जल अवशोषण और अंततः वाष्पोत्सर्जन को बहुत सीमा तक प्रभावित करता है। कई पौधों में 10° से. कम तापक्रम होने पर जल अवशोषण तीव्रता से मन्द हो जाता है। 25° से. से अधिक तापक्रम पर भी जल अवशोषण मन्द हो जाता है। अधिकांश मामलों में मूल परिवेश (rhizosphere) में 40° से. से अधिक तापमान होने पर, जल अवशोषण नहीं हो पाता और पौधे में मुरझाने के लक्षण दिखाई पड़ सकते हैं। निम्न तापमान पर जल अवशोषण घट जाने के निम्नलिखित कारण सुझाए जाते हैं: i) मूल वृद्धि में कमी, ii) जल की बढ़ी हुई श्यानता (viscosity) iii) कोशिका झिल्लियों की घटी हुई पारगम्यता के कारण जड़ो में पानी का बढ़ा हुआ प्रतिरोध (hydraulic resistance) और iv) मूल कोशिकाओं की घटी हुई उपापचय गतिविधि।

मृदा वातन और आप्लावन

पानी में खड़े हुए कुछ पौधों को मुरझाते हुए देखना असामान्य नहीं है। बाढ़ से होने वाली क्षति के सम्भावित कारण निम्नलिखित हैं:

i) O_2 की बहुत कम प्राप्यता और जड़ों के चारों और CO_2 के उच्च सांद्रण का संचयन (accumulation)।

ii) आयन उद्ग्रहण में परिवर्तनों के फलस्वरूप कुछ आयनों का आविषालु स्तर (toxic level) तक संचयन।

iii) जड़ों में और/या उनके चारो ओर विषालु पदार्थों का संचयन।

ऑक्सीजन की कम प्राप्यता जड़ों की श्वसन क्रिया पर प्रभाव डालती है और इस प्रकार ATP की सप्लाई घट जाती है। आगामी इकाइयों में आप सीखेंगे कि आयनों के सक्रिय उद्ग्रहण के लिए ATP की जरूरत होती है। कम उद्ग्रहण से मूल कोशिकाओं का परासरण-विभव घट जाता है और इसलिए पानी प्रवेश नहीं कर सकता क्योंकि मूल कोशिकाओं और मृदा के बीच $\Delta\psi$ क़ायम नहीं रहता। CO_2 की बढ़ी हुई सांद्रता, झिल्लियों की पारगम्यता को प्रभावित करती है और इस प्रकार जल उद्ग्रहण पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

आविषालु (toxic) पदार्थों में उपापचयज (metabolites) होते हैं जो अनॉक्सीय (anaerobic) श्वसन के फलस्वरूप बनते हैं। ये ऐल्कोहॉल या ऐल्डिहाइड और एथिलीन भी हो सकते हैं।

जलाप्लावित (waterlogged) परिस्थितियों में पौधे आमतौर पर हरिमाहीन (chlorotic) बन जाते हैं। इसका कारण मूलों से पेड़ की चोटी तक लौह आयनों के स्थानांतरण में कमी प्रतीत होती है।

मूल तंत्र

मूल तंत्र प्रत्यक्ष रूप से जल-अवशोषण से संबंधित है और क्षेत्र परिस्थितियों में, इसकी वृद्धि मृदा द्वारा बहुत अधिक प्रभावित होती है। विशेष रूप से बारानी (dryland farming) खेती में मूल संरचना का बहुत अधिक महत्व स्पष्ट है। विभिन्न पौधों की जड़ों में जल-अवशोषण की दरें पौधों में वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न होती हैं। जल प्रवेश की उच्चतम दरें मूल रोम और बिना सुबेरिनमय (unsuberised) जड़ों से सम्बद्ध है और सुबेरिनमय काष्ठिल (woody) मूल से जल प्रवेश निम्नतम होता है।

जल अवशोषण और वाष्पोत्सर्जन

जल अवशोषण की दर वाष्पोत्सर्जन की दर द्वारा नियंत्रित होती है। वायुमंडल में उच्च जल विभव की स्थिति में पौधे से जल हानि कम हो जाती है और फलस्वरूप जल अवशोषण धीमा पड़ जाता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि अगर वायुमंडल का जल विभव बहुत कम हो और मिट्टी लगभग सूख रही हो तो जल लगातार अवशोषित होगा। जब मृदा या वायुमं... किसी के भी कारण मृदा-पादप-वायुमंडल तंत्र में संतुलन गड़बड़ा जाता है तब पौधा उचित ... अनुक्रिया (respond) कर सकता है और जल अवशोषण या जल हानि को नियंत्रित कर सकता है। हम इन... पहलुओं पर नीचे चर्चा करने जा रहे हैं।

पहले हम एक अच्छी तरह सींचे गए पौधे में जल अवशोषण और वाष्पोत्सर्जन का संबंध देखते हैं (चित्र 11.13)। मोटे तौर पर सभी पौधे अपनी वाष्पोत्सर्जन दरों में दिवा (diurnal) व्यवहार दिखाते हैं। सुबह के समय वाष्पोत्सर्जन तेजी से बढ़ता है और दोपहर बाद शुरू में यह सबसे ज्यादा होता है, उसके बाद गिरावट शुरू हो जाती है और रात को वाष्पोत्सर्जन न्यूनतम हो जाता है।

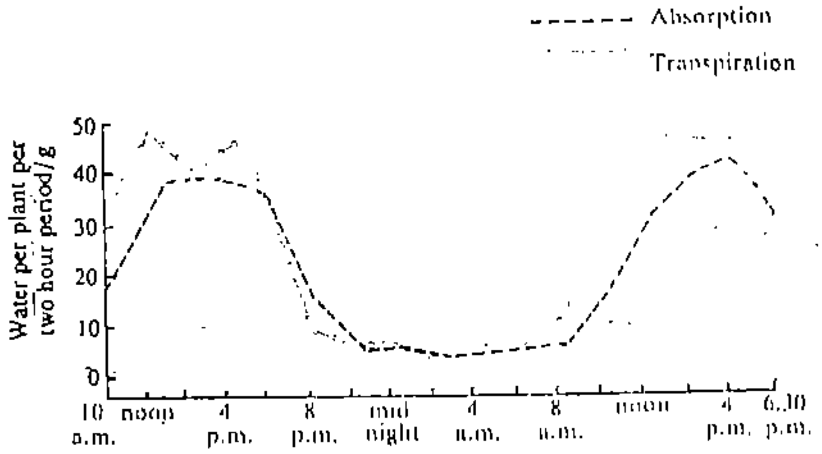

चित्र 11.13 : पौधे द्वारा वाष्पोत्सर्जन और जल अवशोषण की दरों में दिवा परिवर्तन।

आप आलेख (ग्राफ) में देख सकते हैं कि जल-अवशोषण वाष्पोत्सर्जन से होने वाली जल हानि का अनुसरण करता है। बस दोपहर के आस-पास का समय ही ऐसा है जब यह पिछड़ जाता है। ऐसा क्यों होता है? आपको बताया गया था कि पत्तियों की बजाय जड़ों को पार करने में जल की गति में प्रतिरोध सामान्यतया अधिक होता है। इसका कारण यह है कि जड़ों में पानी संद्रव्य (सिम्प्लैज़्म) से होकर जाता है। इसे वल्कुट-कोशिकाओं की झिल्लियों के ऊंचे प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। अवशोषण में पिछड़ जाने का यही कारण है। इस विचार को एक प्रयोग से आधार मिलता है — जहाँ एक पौधे की जड़ें हटाने के बाद जल अवशोषण रिकार्ड किया गया। जैसाकि आलेख में दिखाया गया है (चित्र 11.14) अवशोषण पश्चता (lag) अत्यधिक घट जाती है।

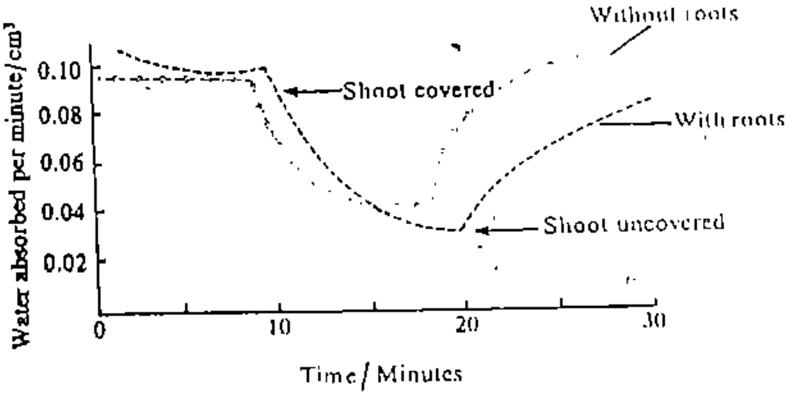

चित्र 11.14 : जड़ वाले और बिना जड़ वाले पौधे में जल-अवशोषण की दर की तुलना। जब वाष्पोत्सर्जन अधिक (shoot uncovered) होता है, तब मूलरहित पादप की अपेक्षा समूल पौधे में जल-अवशोषण की दर कम होती है।

आइए, अब हम यह देखें कि अगर मिट्टी नम न हो तो जल हानि का क्या होता है? आस्ट्रेलिया विश्वविद्यालय, केनबरा, के रैल्फ़ ओ स्लेटर (Ralph O.Slater 1967) नामक पादप कार्यकीविज्ञानी, ने एक प्रयोग में पौधे में पानी की सप्लाई पांच दिन के लिए रोक दी और वहाँ मृदा ($\psi_{w(मृदा)}$), मूल ($\psi_{w(मूल)}$) और पत्ती ($\psi_{w(पत्ती)}$) के जल विभव के बीच संबंध का अध्ययन किया। आलेख (चित्र 11.15) में पर्ण विभव में दिवा परिवर्तन, दोपहर के समय के आस-पास जल की कमी का तनाव (stress) और रात को जल-अवशोषण में पश्चता की पुनःप्राप्ति (recovery) दिखाई गई है। दूसरे दिन के बाद मिट्टी का जल विभव लगभग रैखिक रूप से (linearly) घटा।

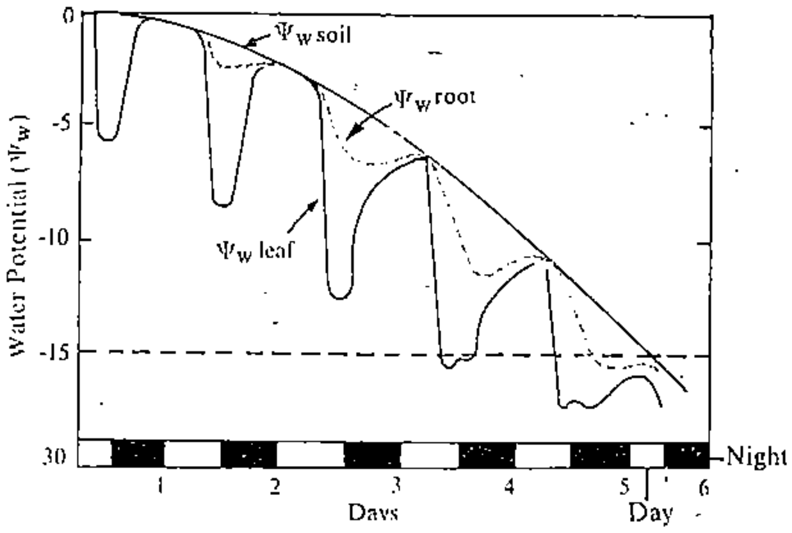

चित्र 11.15 : मिट्टी में जड़ जमाए वाष्पोत्सर्जी पौधे के पर्ण जल विभव (ψ_w **leaf**) और मूल जल विभव (ψ_w **root**) में संभावित परिवर्तनों को दर्शाता हुआ आरेख। इस मिट्टी को लगभग शून्य जल विभव से उस जल विभव तक सूखने दिया गया था जिस पर पौधे का मुरझाना शुरू हो जाता है।

यहाँ यह भी बताना आवश्यक है कि जब पौधों में जल की कमी से तनाव होता है तो जो कोशिकाएं जल-परिवहन के मुख्य मार्ग में स्थित नहीं हैं उनमें से भी पानी बाहर जाने की कोशिश करता है। इससे स्फीति में, अर्थात कोशिकाओं के आयतन में कमी होती है। वस्तुतः जोसेफ़ फ्रेड्रिक (Josef Friedrich) ने एक सदी पहले यह दिखला दिया था कि पेड़ के स्तंभ के व्यास (diameter) में दिवा घटोत्तरी व बढ़ोतरी होती है, दिन के समय व्यास सिमटता है और रात को पुनः पहले वाली स्थिति में आने लगता है।

बोध प्रश्न 4

स्वस्थ पौधे उगाने के लिए नीचे दिए गए सुझावों में से कौन-से सुझाव वांछनीय हैं। सही उत्तर के लिए सही का निशान लगाइए।

i) उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग ☐

ii) पौधों, विशेषकर गमलों में उग रहे पौधों, की जल से संतृप्ति (saturation) ☐

iii) जल-सुग्राही (water sensitive) पौधे के लिए अधिक आर्द्रता क्षेत्र ☐

iv) गर्म ऋतु में पौधे सींचने के लिए बहुत ठंडे पानी का उपयोग ☐

v) शीत ऋतु में गुनगुने पानी का उपयोग ☐

11.9 जल हानि

पौधों का लगभग 98% पानी वाष्पोत्सर्जन द्वारा वायुमंडल में चला जाता है। प्रायः वाष्पोत्सर्जन से होने वाली जल हानि अवशोषण से होने वाले लाभ से बढ़कर होती है और इसके फलस्वरूप पौधे के भीतर जल संतुलन ऋण हो जाता है। दिन के दौरान उच्च तापमान के कारण होने वाली थोड़ी और मध्यम दर्जे की पानी की कमी रात के दौरान पूरी हो सकती है लेकिन लम्बे समय तक कमी रहने से ऐसी क्षति होती है जिसे पूरा नहीं किया जा सकता और यह पौधे के जीवन को खतरा पैदा कर देती है।

पौधे के वायवी (aerial) भागों से पानी का वाष्पन ही वस्तुतः वाष्पोत्सर्जन है। लेकिन खुली सतहों से पानी के वाष्पन को कम प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है जबकि पत्तियों से जल के वाष्पन को पर्याप्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। वाष्पोत्सर्जन प्रमुखतः पत्तियों के रंध्रों से होता है। इसे **रंध्रीय वाष्पोत्सर्जन (stomatal transpiration)** कहते हैं। लगभग 5% पानी पत्ती की उपत्वचा

(क्यूटिकल) के द्वारा पत्ती से निकल जाता है। यह **उपत्वचीय वाष्पोत्सर्जन (cuticular transpiration)** कहलाता है। काष्ठिल पौधों में छाल में ही खुलने वाले वातरंध्र (lenticels) होते हैं जिनका प्रकार्य गैस विनिमय है। इन कोशिकाओं से होने वाली जल हानि वातरंध्री **वाष्पोत्सर्जन (lenticular transpiration)** कहलाती है।

11.9.1 रंध्र

चित्र 11.16 में एक प्ररूपी (typical) रंध्र की संरचना दिखाई गई है लेकिन छिद्र (pore) की साइज, द्वार-कोशिकाओं की संरचना और साइज तथा रंध्री-गुहिका (stomatal cavity) की गहराई और साइज के मामले में रंध्र भिन्न-भिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होते हैं। जैसाकि आरेख में दिखाया

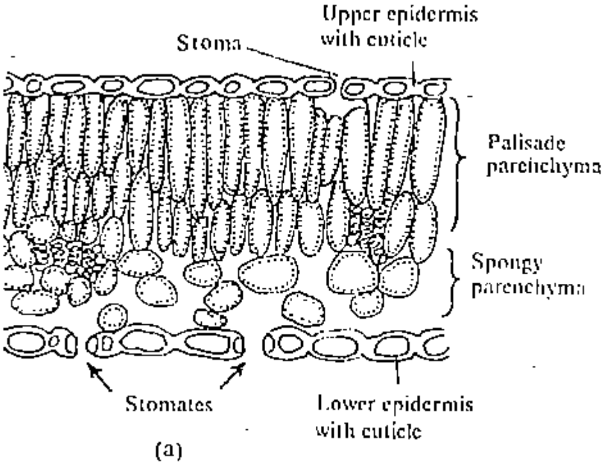

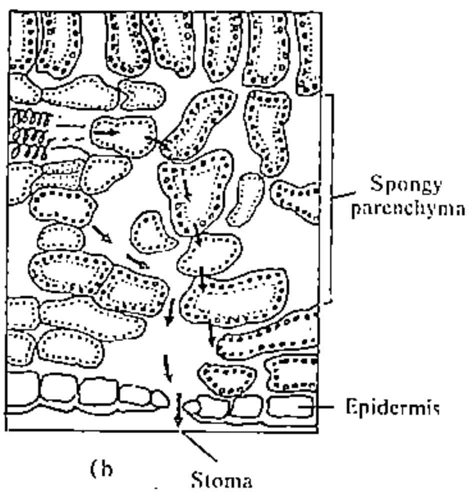

चित्र 11.16 : a) रंध्र का दूसरे पर्ण ऊतकों से संबंध दिखाते हुए पत्ती की अनुप्रस्थ काट (cross section)
b) पत्ती से वायुमंडल को जाने वाली जल वाष्प के मार्ग को दिखाने के लिए रंध्र को बड़ा करके दिखाया गया है।

गया है पानी अंतराकोशिकीय अवकाशों की सीमा से लगी गीली पर्ण मध्य कोशिका भित्तियों से वाष्पित होता है। उसके बाद वाष्प अधोरंध्री गुहिका (sub-stomatal cavity) और रंध्री छिद्रों से पत्ती के बाहर हवा में विसरित हो जाती है। अधोरंध्री गुहिका, रंध्री छिद्र, परिसीमा स्तर (boundary layer) और वायुमंडल के बीच जल विभव प्रवणता 11.17 में दिखाई गई है। वायुमंडल की तुलना में अधोरंध्री गुहिका का जल विभव अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा होता है, इसलिए जल वाष्प बाहर निकल जाती है। उसकी वजह से अधोरंध्री गुहिका का जल विभव घट जाता है फलस्वरूप अधोरंध्री गुहिका को घेरे रहने वाली कोशिकाएं अपनी भित्तियों से जल वाष्पित करती हैं। वायुमंडल के जल विभव के अनुसार अधोरंध्री गुहिका और आस-पड़ोस की कोशिकाओं का जल विभव कम हो जाता है। यह प्रवणता अंततः जल स्तंभ पर "अभिकर्ष ('pull')" के रूप में कार्य करती है जो पत्ती के संवहनी पूल (vascular bundles) के द्वारा निरन्तरता बनाए रखता है। इस संदर्भ में अंतराकोशिकीय अवकाश भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि वे अधोरंध्री गुहिका से अविच्छिन्न हैं और ज़ल्दी से प्रवणता बनाते हैं।

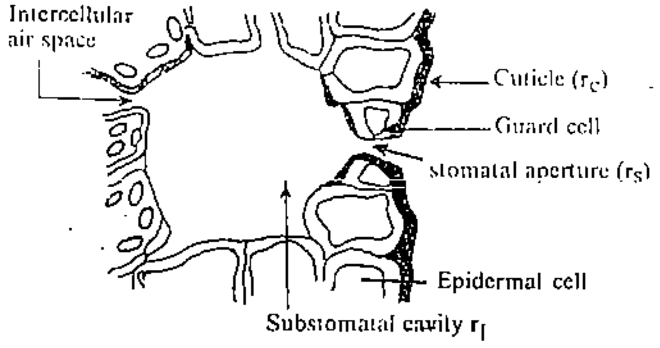

चित्र 11.17 : विभिन्न प्रतिरोध दर्शाने वाली पत्ती की एक व्यवस्था अनुप्रस्थ काट।

जब पानी पत्तियों से वाष्प बनकर उड़ता है तो उसे पर्याप्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है (चित्र 11.17)। इस प्रतिरोध को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है : क) पर्ण-प्रतिरोध (आंतरिक प्रतिरोध), ख) वायु परिसीमा प्रतिरोध (बाह्य प्रतिरोध)। पर्ण-प्रतिरोध के घटक है : उपत्वचा, मध्यम पर्ण कोशिकाएं, अंतराकोशिकीय अवकाश और रंध्र। उपत्वचीय प्रतिरोध अधिकतम होता है और उसके बाद रंध्री प्रतिरोध और वायु परिसीमा स्तर प्रतिरोध (air boundary layer resistance) का नम्बर आता है। जल वाष्प की गति का मार्ग परिपथ (circuit) में बहती विद्युत धारा (current) के सदृश है। प्रतिरोध जितना अधिक होगा जल का प्रवाह उतना ही कम होगा और प्रतिरोध जितना कम होगा, प्रवाह उतना ही अधिक होगा।

उपत्वचा पत्ती की सबसे बाहरी सतह है और जल वाष्प के वाष्पन तथा प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक कार्बन डाइऑक्साइड के प्रवेश का प्रतिरोध करती है। रंध्रों के निम्नलिखित प्रमुख प्रकार्य हैं:

i) वे CO_2 को प्रवेश देते हैं जो कि प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है,

ii) वाष्पोत्सर्जन से होने वाली जल हानि का नियंत्रण करते हैं और इस तरह पौधे को सूखने से बचाते हैं,

iii) उच्चतर तापमान (35° से॰ से ऊपर) पर रंध्र वाष्पोत्सर्जन को बढ़ावा देते हैं जिससे पत्तियाँ ठंडी रहती हैं।

रंध्री प्रतिरोध सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि पत्तियों और बाह्य वायुमंडल के बीच गैस विनिमय पूरी तरह से इन रंध्री छिद्रों से होता है। रंध्री प्रतिरोध प्रमुख रूप से रंध्री गुहिका के साइज और आकार और रंध्री द्वारक (stomatal aperture) के साइज पर निर्भर करता है। क्या आप बता सकते हैं कि बड़े और छोटे में से कौन-सा साइज अधिकाधिक प्रतिरोध करेगा? निस्संदेह, छिद्र जितना ही छोटा होगा बाहर की ओर गति के लिए जल वाष्प का प्रतिरोध उतना ही ज्यादा होगा। पूरी तरह खुले हुए मानक छिद्र की औसत लम्बाई लगभग 20 μm और सबसे अधिक चौड़ाई लगभग 11 μm होती है।

पत्ती से होने वाली जल हानि प्रति पर्ण रंध्रों की संख्या पर भी निर्भर करती है। कृषि वैज्ञानिकों का एक लक्ष्य पौधे से होने वाली जल हानि को न्यूनतम करने के तरीके खोजना है ताकि जल उपयोग की दक्षता बढ़ सके। एक तरीका प्रति पर्ण रंध्रों की संख्या का अध्ययन करना है। नीचे दिए गए प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए कुछ खोज इस प्रकार की गई है :

i) रंध्र का वितरण क्या है और यह जल हानि तथा कार्बन डाइऑक्साइड अंतर्ग्रहण से कैसे संबंधित है?

ii) कार्बन डाइऑक्साइड के अंतर्ग्रहण को गंभीर क्षति पहुंचाए बिना जल हानि को कैसे कम किया जा सकता है?

iii) क्या ऐसी किस्में (varieties) विकसित करना संभव है जिनमें ऐसी विशेषताएं हों जो जल के कम वाष्पन से सम्बद्ध हों?

रंध्र के वितरण को व्यक्त करने के लिए सामान्यतया दो प्राचल (पैरामीटर) काम में लाए जाते हैं

क) रंध्र बहुलता (stomatal frequency) - प्रति यूनिट क्षेत्रफल में रंध्र-संख्या।

ख) रंध्रांक (रंध्र-अंक) (stomatal index) - प्रति यूनिट क्षेत्रफल में कोशिकाओं की कुल संख्या से रंध्र संख्या का अनुपात।

विभिन्न पौधों की रंध्र-बहुलता भिन्न-भिन्न होती है। एक बीजपत्री (monocot) पौधों में ऊपरी और निचली सतहों पर आमतौर पर एक जैसी बहुलता होती है लेकिन द्विबीजपत्री पौधों (dicot) में ऊपर की सतह की अपेक्षा निचली सतह पर आमतौर से रंध्रों की अधिक बहुलता होती है। लेकिन, पौधे पर पत्तियों की स्थिति के अनुसार रंध्रों की बहुलता बदल सकती है।

निम्नलिखित के बीच कोई संबंध है या नहीं, यह जानने के लिए अध्ययन किए गए हैं :

i) रंध्र-बहुलता या रंध्रांक और वाष्पोत्सर्जन तथा,

ii) रंध्र-छिद्र या रंध्रांक और प्रकाश संश्लेषण।

जौ (barley) के दो वंशक्रम (lines) लिए गए जिनमें से एक की रंध्र-बहुलता अधिक और दूसरे की कम थी, मिस्केन (Misken) और उसके सहकर्मियों (1972) ने पाया कि रंध्र-प्रतिरोध और

वाष्पोत्सर्जन दर में तो दोनों वंशक्रमों के बीच महत्वपूर्ण अंतर था किंतु प्रकाश संश्लेषी दरें एक समान थी। जिन वंशक्रमों में रंध्र अधिक थे उनकी अपेक्षा जिन वंशक्रमों में रंध्र-बहुलता कम थी उनमें रंध्र प्रतिरोध उच्चतर था और उन्होंने कम पानी वाष्पित किया। रंध्र-बहुलता में 25% कमी करने से वाष्पोत्सर्जन की दरें भी लगभग 25% घट गईं। लेकिन रंध्र-बहुलता में कमी से प्रकाश संश्लेषी दर पर असर नहीं पड़ा। इन अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि जौ या दूसरी फसलों में ऐसी किस्में चुनकर जिनमें कम रंध्र हो, वाष्पोत्सर्जन में परिवर्तन करना संभव है और प्रकाश संश्लेषण भी अप्रभावित रहेगा।

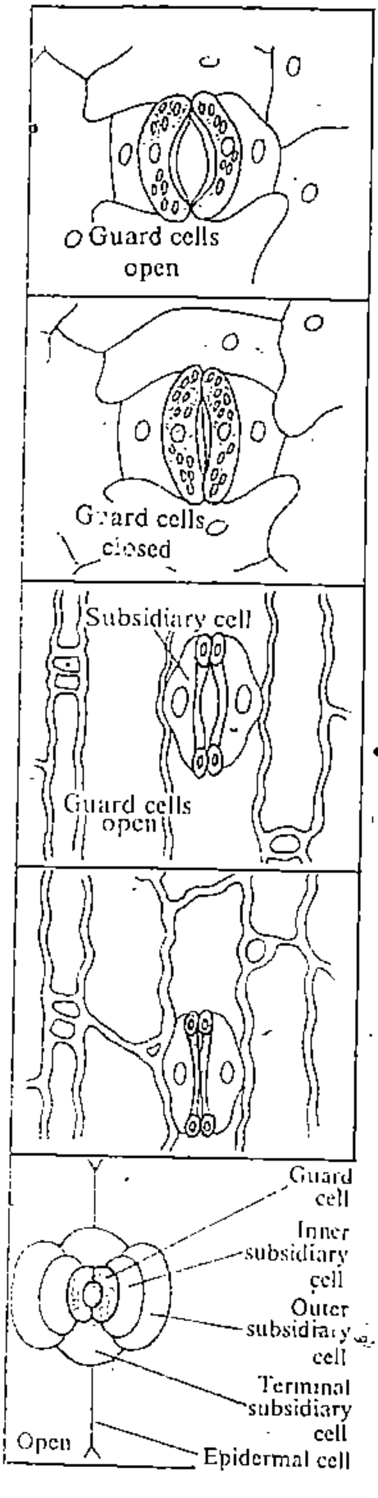

चित्र 11.18 : द्विबीजपत्री की पत्ती के खुले a) और बन्द b) रंध्रछिद्र का पृष्ठ-दृश्य c) और d) एकबीजपत्री e) सहायक कोशिकाओं subsidiary cells) सहित द्वार-कोशिकाओं से घिरा हुआ रंध्र।

आइए, हम रंध्र-छिद्र को नजदीक से देखें। चित्र 11.18 में खुले (a) और बंद (b) रंध्रों का पृष्ठ-दृश्य दिखाया गया है। आप जानते ही हैं कि प्रत्येक रंध्र-छिद्र एक जोड़ी द्वार-कोशिकाओं से घिरा रहता है। बंद रंध्र में द्वार-कोशिकाएं दो जुड़ी हुई वृक्क-सेम (kidney beans) जैसी दिखाई देती हैं। एकबीजपत्री पौधों में द्वार-कोशिकाएं डम्बलाकार (dumbell-shaped) होती हैं और कंदीय सिरों (bulbous ends) के सम्पर्क में जोड़ों में व्यवस्थित होती हैं (चित्र 11.18 c और d)। कुछ जातियों में द्वार-कोशिकाओं से लगी हुई बाह्यत्वचीय कोशिकाएं विशिष्टीकृत होती हैं और सहायक कोशिकाएं (subsidiary cells) कहलाती हैं (चित्र 11.18 e)। यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि द्वार-कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट और माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं और वे स्टार्च संश्लेषित कर सकती हैं जबकि किसी अन्य बाह्यत्वचीय कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट नहीं होता।

11.9.2 रंध्र-छिद्रों के खुलने की क्रियाविधि

एक सदी से भी पहले से यह पता था कि कोशिका में उत्क्रमणीय (reversible) यानि पलटवाँ स्फीति परिवर्तन के कारण रंध्र द्वार खुलते हैं। द्वार-कोशिका में स्फीति ज्यादा होने से रंध्र खुल जाते हैं और कम होने से बंद हो जाते हैं। यह स्पष्ट है कि स्फीति केवल तभी बढ़ेगी जब द्वार-कोशिकाओं के विलय अंश (solute contents) पड़ौसी बाह्यत्वचीय कोशिकाओं से ज्यादा होंगे। विलेय अंश कम होने से स्फीति घट जाएगी।

अब प्रश्न यह है कि किस प्रकार फूल जाने पर दो द्वार-कोशिकाएं एक छिद्र (aperture) बनाती हैं? द्वार-कोशिकाओं की कोशिका-भित्ति विशिष्ट है क्योंकि सेलुलोस सूक्ष्मतंतुक (cellulose microfibrils) जो पादप कोशिका के प्रमुख संरचनात्मक लक्षण हैं, अरीय रूप (radially) से व्यवस्थित होते हैं। ये केन्द्र से निकलते हुए परिधि (periphery) की ओर जाते हैं (चित्र 11.19) यह विन्यास कोशिका-भित्ति के अनुप्रस्थ (transverse) दिशा में विस्तार को सीमित करता है। बाहरी भित्ति की अपेक्षा भीतरी भित्ति (छिद्र की तरफ) मोटी और कम लचीली होती हैं, इसलिए असमान अनुदैर्ध्य (longitudinal) विस्तार के कारण कोशिकाएं एक-दूसरे से चाप (arch) बनाती हुई दूर हो जाती हैं और केन्द्र में एक छिद्र बन जाता है।

चित्र 11.19 : द्वार-कोशिकाओं में सेलुलोस सूक्ष्मतंतुकों (cellulose microfibrils) के विन्यास (arrangement) का आरेखीय निरूपण।

रंध्र के नियंत्रण की क्रियाविधि (mechanism) की चर्चा करने से पूर्व इस बारे में किए गए निम्नलिखित प्रेक्षण (observation) ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है।

i) सामान्यतया, रंध्र दिन में खुले और रात में बंद रहते हैं। फिर भी, पानी की सप्लाई में कमी हो जाने से रंध्र दिन में बंद हो जाते हैं।

ii) जब CO_2 का आंतरिक सांद्रण कम हो जाता है तो रंध्र खुल जाते हैं और जब CO_2 का आंतरिक सांद्रण अधिकतम होता है तो बंद हो जाते हैं।

iii) द्वार-कोशिकाओं में रात को CO_2 स्थिरीकरण (CAM पौधों की तरह होता है इसके बारे में आप इकाई 13 में पढ़ेंगे) होता है।

iv) द्वार कोशिकाओं का pH रोशनी (दिन) और अंधेरे (रात) में बदलता है जो स्टार्च और शर्करा के अंतरारूपांतरण (interconversion) से संबद्ध है।

v) रंध्र का बंद होना और खुलना द्वार कोशिकाओं के परासरण विभव और झिल्लियों की पारगम्यता से संबंधित है।

vi) रंध्र के खुलने के समय, द्वार-कोशिका में पोटैशियम आयनों का अंतर्वाह (inflow) होता है लेकिन जब रंध्र बंद होते हैं तो द्वार-कोशिकाएं जो पोटैशियम पाती हैं, उसे वे आस-पास की कोशिकाओं को दे डालती हैं।

vii) चक्रीय फॉस्फोरिलीकरण (cyclic phosphorylation) के संदमक (inhibitors) भी रंध्र बंद कर सकते हैं।

viii) नीली रोशनी भी रंध्र गति में परिवर्तन ला सकती है — यह रंध्र को खोलती है।

ix) एबसिसिक अम्ल (ABA) एक पादप हार्मोन है। बहुत कम सांद्रण पर इसका पत्तियों पर छिड़काव रंध्रों को बंद कर सकता है।

द्वार-कोशिकाओं की आपेक्षिक स्फीति को पलटने के दो तरीके हो सकते हैं : i) परासरण-विभव में कमी या ii) दाब विभव में कमी। दोनों ही मामलों में द्वार-कोशिकाओं का जल विभव गिर जाएगा और इसलिए पड़ौसी कोशिकाओं से पानी अंदर आएगा। विकल्प के तौर पर, अगर द्वार कोशिकाओं को अपनी स्फीति में अचानक परिवर्तन का सामना करना पड़े तो उन्हें सहायक कोशिकाओं के यांत्रिक-दाब (mechanical pressure) का सामना करना पड़ सकता है।

इस बात का जबरदस्त प्रमाण है कि द्वार-कोशिका में पड़ौसी कोशिकाओं से K^+ आयनों की गति के कारण द्वार-कोशिका का परासरण दाब घट जाता है (चित्र 11.20)। यह भी देखा गया है कि K^+

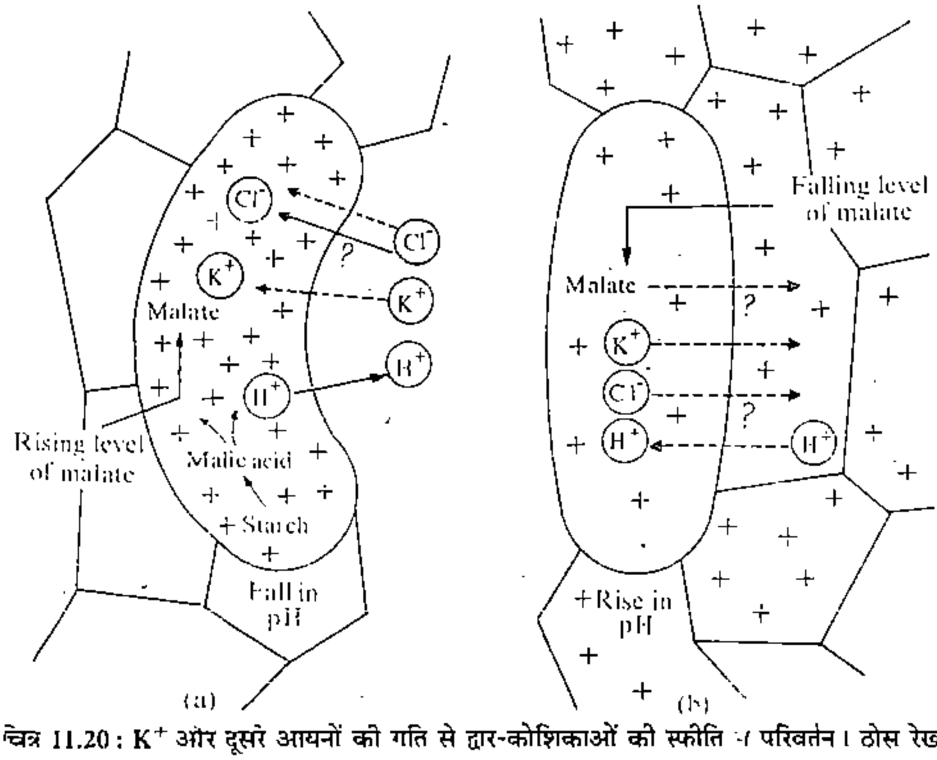

चित्र 11.20 : K^+ और दूसरे आयनों की गति से द्वार-कोशिकाओं की स्फीति में परिवर्तन। ठोस रेखाएं सक्रिय परिवहन, टूटी रेखाएं निष्क्रिय अभिवाह और? चिह्न अनिश्चितता बताती हैं। ऊर्ध्वमुखी तीर मैलेट के बढ़ते स्तर a) और अधोमुखी तीर घटते स्तर b) का संकेत करते हैं।

के उद्ग्रहण में ATP की आवश्यकता होती है। ATP श्वसन उपापचय और फॉस्फ़ोरिलीकरण द्वारा स्टार्च के निम्नीकरण (degradation) से उत्पन्न हो सकती है। ATP झिल्ली परिबद्ध ATPase द्वारा प्रोटोनों को द्वार-कोशिकाओं से बाहर पम्प करने के काम आता है (देखिए भाग 8.4, एल एस ई -01)। मैलिक अम्ल, प्रोटोनों की सप्लाई बनाए रखता है। यह अम्ल, संग्रहीत स्टार्च से संश्लेषित होता है। प्रोटोनों के सक्रिय पम्पन (pumping) के कारण द्वारकोशिका की झिल्ली के पार एक विद्युत-रासायनिक प्रवणता पैदा हो जाती है। फलस्वरूप अब आयन द्वार-कोशिका में निष्क्रिय रूप से जा सकते हैं। कुछ जातियों में Cl^- आयन और अन्य दूसरे आयन K^+ के साथ-साथ द्वार-कोशिकाओं के भीतर बाहर आ जा सकते हैं। इस प्रकार K^+, Cl^- और/या जैव अम्लों के पोटैशियम लवण, अधिकतर मैलेट के संचयन के कारण परासरण विभव में कमी आ जाती है। फलस्वरूप द्वार-कोशिकाओं में पानी घुस जाता है और स्फीति बढ़ जाती है। इससे विपरीत घटनाओं से रंध्र बंद हो जाएंगे।

11.10 रंध्र-द्वारक को नियंत्रित करने वाले कारक

"खुल जा सिम सिम" कहते ही दो चट्टानें सरक जाती हैं और एक अनमोल खजाने का दरवाजा खुल जाता है। इन जादू भरे शब्दों से अलीबाबा और चालीस चोर" दरवाजे को खोल सकते थे। आइए, अब हम यह पता करें कि रंध्र की द्वार-कोशिकाओं को सरकाने के लिए "खुल जा सिम सिम" क्या है, ताकि CO_2 रंध्रों में घुस सके और पृथ्वी भर के जीवों के लिए खाद्य तैयार कर सकें। आप सीख चुके हैं कि एक से अधिक कारक द्वार-कोशिकाओं की स्फीति में परिवर्तन और रंध्रों में गति ला सकते हैं तथा रंध्र-द्वारक का साइज नियंत्रित कर सकते हैं। नियंत्रण करने वाले प्रमुख कारक हैं

i) प्रकाश,

ii) CO_2 का स्तर, और

iii) उच्च तापमान।

इस बात को और अच्छी तरह से समझने के लिए आप ऐसी कल्पना कर सकते हैं कि यह कारक वे हाथ हैं जो स्फीति प्रचालित कपाट (turgor operated value) यानि कि "द्वार-कोशिकाओं" को खिसकाकर रंध्रों को खोल और बंद कर सकते हैं (चित्र 11.21)। दिन में प्रकाश संश्लेषण में CO_2 का बहुत तेजी से उपयोग होता है और जब इसका स्तर गिर जाता है तो रंध्र खुल जाते हैं। लेकिन यह पता नहीं है कि द्वार-कोशिकाओं को CO_2 के निम्न स्तर का आभास कैसे होता है? प्रकाश संश्लेषण की दरें उस समय उच्चतम होती हैं जब प्रकाश और तापमान की परिस्थितियाँ इष्टतम हों और यदि पौधों को अच्छी तरह पानी दिया गया हो लेकिन अगर ऊपर बताई गई परिस्थितियों में पौधे का जल विभव गिर जाता है तो पौधे के लिए खाद्य उत्पादन की बजाय जल संरक्षण (conservation) अधिक आवश्यक हो जाता है और रंध्र बंद हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में पौधे

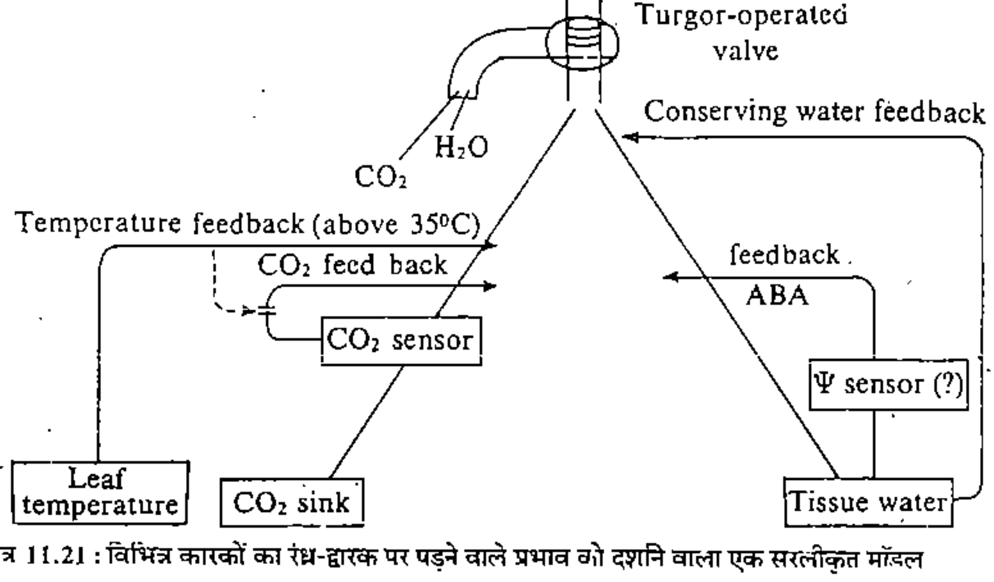

चित्र 11.21 : विभिन्न कारकों का रंध्र-द्वारक पर पड़ने वाले प्रभाव को दर्शाने वाला एक सरलीकृत मॉडल

की जल स्थिति CO_2 द्वारा नियंत्रण को रद्द कर देती है। तापमान बढ़ने के साथ-साथ प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ जाती है। लेकिन 35° से. से ऊपर पौधे का ठंडा होना जरूरी हो जाता है। इसलिए CO_2 का सांद्रण भले ही कुछ भी हो, 35° से से ऊपर तापमान पर रंध्र चौड़े खुल जाते हैं बशर्ते पानी की कमी न हो। यहाँ भी तापमान का नियंत्रण CO_2 के सांद्रण द्वारा होने वाले नियंत्रण से ऊपर रहता है। इसमें तुक भी दिखाई देती है क्योंकि पत्तियों के लिए उच्च तापमान हानिकारक होता है और वाष्पोत्सर्जन द्वारा पानी के वाष्पन से ही पत्तियों का तापमान कम हो सकता है।

इस इकाई को समाप्त करने से पूर्व यह बता देना महत्वपूर्ण है कि वाष्पोत्सर्जन से पौधे को बहुत ज्यादा जल हानि होती है। दिन में यह आमतौर पर 0.1 से 2.5 $g\ dm^{-2}\ h^{-1}$ तक होती है। लेकिन जहाँ तक पता है यह पौधे की वृद्धि और परिवर्धन में कोई प्रमुख भूमिका नहीं निभाता। हम ऊपर बता चुके हैं कि वाष्पोत्सर्जन से उच्च ताप पर पौधे ठंडे रहते है और शायद वाष्पोत्सर्जन धारा पौधे के सभी भागों को खनिज आयनें सुगमता से उपलब्ध कराती है। मिट्टी में खनिज बहुत तनु सांद्रण में होते हैं लेकिन सक्रिय परिवहन के कारण ये कोशिकाओं में बहुत ऊंचे सांद्रण में संचित हो जाते हैं। वाष्पोत्सर्जन धारा सम्पूर्ण पौधे में इनकी शीघ्र प्राप्यता में सहायता करती है। आप सीख चुके हैं कि पत्तियों पर पादप हार्मोन एबसिसिक अम्ल का छिड़काव करने से रंध्र बंद हो जाते हैं। जल की तंगी के दौरान पत्तियों के ABA के स्तर में वृद्धि देखी गई है। इसलिए यह बहुत संभव है कि जल अंश के नियमन के लिए ABA हॉर्मोन एक आंतरिक नियंत्रण है। निम्न सांद्रण ($10^{-4}M$) से फ़ेनिल मरक्यूरिक ऐसीटेट-कवकनाशी (fungicide) पत्तियों पर छिड़काव के लिए काम में लाया जाता है। इसकी वजह से लगभग दो सप्ताह के लिए रंध्र आंशिक रूप से बंद हो जाते हैं और पौधों पर कोई स्पष्ट हानिकारक प्रभाव भी नहीं पड़ता। अन्य रसायन भी पर्ण-छिड़काव के रूप में काम में लाए जाते हैं। ये हैं — रंगहीन प्लास्टिक, सिलिकॉन तेल और निम्न श्यानता मोम। ये रसायन पत्तियों पर एक परत (फिल्म) बनाते हैं जो CO_2 और O_2 के लिए तो पारगम्य होता है पर H_2O के लिए नहीं होता। हालांकि वाष्पोत्सर्जन घटाकर पानी बचाने की कार्यनीति काफी आशाजनक लगती है लेकिन यह पादप कार्यकीविज्ञानियों के लिए भारी चुनौती है।

बोध प्रश्न 5

क) रंध्रो को खोलने के लिए द्वार-कोशिकाओं के अपरिहार्य लक्षण बताइए।

....
....
....
....
....
....

11.11 सारांश

- पृथ्वी पर जीवन बनाए रखने के लिए पानी एक प्रमुख अणु है। पौधे का लगभग 85 से 90% भाग पानी से बना होता है। पौधों द्वारा काम में लाए जाने वाली पानी की मात्रा बहुत अधिक होती है।
- कोशिका में जल एक अच्छा विलेय और अभिकारक है। पौधों के लिए पानी इसलिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि पानी के द्रवस्थैतिक दाब से कोशिकाओं में स्फीति आती है। इसी वजह से तने के कोमल भाग सीधे खड़े रह पाते हैं।
- वाष्पोत्सर्जी पत्तियों द्वारा दारु में उत्पन्न ऋण द्रवस्थैतिक दाब के कारण पानी पेड़ों में ऊपर चढ़ता है। दारु में पानी की अविच्छिन्नता पानी के संसंजन गुण के कारण बनी रहती है।
- पादप ऊतक में जल के अणु दो रास्तों से चलते हैं — एपोप्लैज़्म और संद्रव्य। एपोप्लास्ट परिवहन पौधे के अजीवित भाग से होता है और संलवक (सिम्प्लास्ट) का परिवहन बरास्ता प्लैज़्मो... कोशिका दर कोशिका होता है।

- पौधे में जल की स्थिति जल विभव द्वारा व्यक्त की जाती है। प्रवाह की दर और गति की दिशा दो स्थलों (points) के बीच जल विभव की प्रवणता पर निर्भर करती है। पानी उच्च जल विभव के क्षेत्र से निम्न जल विभव के क्षेत्र की तरफ़ जाता है।
- जल विभव (ψ_w) विलेय सांद्रण, दाब और अवशोषी (absorptive) अथवा मैट्रिक बलों से प्रभावित होता है। विलेय मिलाने से जल विभव कम हो जाता है जबकि पानी पर दाब बढ़ाने से जल विभव बढ़ता है। ठोस-द्रव अंतरापृष्ठों के बीच अवशोषी बल जल विभव को कम देता है। ψ_w को घटक (component) बलों के बीजगणितीय योग (algebraic sum) के रूप में कंप्यूट किया जाता है।
- कोशिका में विलेय सांद्रता और स्फीति दाब दोनों का जल विभव पर प्रतिसंतुलित (offsetting) प्रभाव पड़ता है। कोशिका में दोनों के संयुक्त प्रभाव से प्रवणता बन सकती है और जल के प्रवाह की दर तथा जल गति की दिशा निर्धारित हो सकती है।
- मिट्टी में जल गति के लिए प्रेरक बल, जल विभव की प्रवणता और मैट्रिक विभव में अंतर के कारण होता है। यह प्रवणता कोशिका भित्तियों के साथ-साथ भी होती है।
- मृत दारु कोशिकाओं के भीतर जल गति, द्रवस्थैतिक दाब की प्रवणता के साथ-साथ होती है।
- मिट्टी और पौधे में जल प्रवाह के प्रति प्रतिरोध होता है। जल वह रास्ता अपनाता है जो कम से कम प्रतिरोध वाला हो। कोशिका की झिल्लियां सबसे ज्यादा प्रतिरोध करती हैं जबकि दारु में सबसे कम प्रतिरोध होता है।
- पौधे की जल स्थिति; वाष्पोत्सर्जन के कारण जल हानि और जल अवशोषण पर निर्भर करती है। मृदा विशिष्टताएं, मृदा तापमान, वातन (aeration) आप्लावन (flooding) और मूलों की संरचना ऐसे कारक हैं जो जल अवशोषण को प्रभावित करते हैं।
- पौधे में जल-गति की दर एक अच्छी तरह सींचे गए पौधे में वाष्पोत्सर्जन की दर से निर्धारित होती है। तापमान, पवन वेग, वायु की आर्द्रता, प्रकाश तीव्रता और रंध्र खुलने की सीमा इत्यादि वाष्पोत्सर्जन की दर को प्रभावित करते हैं। लेकिन मिट्टी से पानी की सप्लाई वाष्पोत्सर्जन की चरम सीमा है।
- रंध्री, उपत्वचीय और वातरंध्री वाष्पोत्सर्जन में से जल की प्रमुख हानि रंध्री वाष्पेत्सर्जन से होती है। जल वाष्पन को पत्ती, उपत्वचा, मध्यम पर्ण कोशिका अंतराकोशिकीय अवकाश, रंध्र और पत्ती के वायु परिसीमा स्तर से पर्याप्त प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है।
- रंध्र वाष्पोत्सर्जन द्वारा होने वाली जल हानि का नियंत्रण करते हैं, यह गैस विनिमय होने देते हैं और पत्ती के तापमान का नियंत्रण करते हैं। CO_2 के अंतर्ग्रहण को प्रभावित किए बिना रंध्र से होने वाली जल हानि को घटाने के कुछ प्रयास किए गए हैं।
- द्वार-कोशिकाओं की स्फीति में परिवर्तन से रंध्र-द्वारक नियंत्रित होते हैं। द्वार-कोशिकाओं के भीतर और उससे बाहर उपापचयज, K^+ तथा अन्य आयनों के प्रवेश व निवेश से उनकी स्फीति पर प्रभाव पड़ता है। प्रोटोन पम्प ATPase के द्वारा शक्ति पाकर द्वार कोशिकाओं की प्लैज्मा झिल्ली में कार्य करता है। K^+ का उद्ग्रहण एक निष्क्रिय उद्ग्रहण है।
- रंध्र-द्वारक CO_2 के स्तर, प्रकाश और उच्च तापमान से नियंत्रित होते हैं। लेकिन, अगर खाद्य उत्पादन की अपेक्षा पानी का संरक्षण करना या पौधों को उच्च ताप के हानिकारक प्रभावों से बचाना अधिक आवश्यक हो जाता है तब ये कारक तंत्र को नियंत्रित करते हैं।

11.12 अंत में कुछ प्रश्न

1. पौधों की अपेक्षा प्राणियों को क्यों कम पानी चाहिए?

   ....

   ....

   ....

   ....

2. अगर गमले में लगे एक पौधे की एक टहनी को दो टुकड़ों में काट दिया जाए और टाइगॉन नलिका से इस प्रकार जोड़ दिया जाए कि दो कटे हुए सिरों के बीच हवा-अंतराल (airgap) रह जाए तो क्या होगा?

....

....

....

....

3. एक पादप कोशिका जिसका परासरण विभव 7.6 बार और दाब-विभव 3 बार है, को एक बूंद शुद्ध जल के साथ एक स्लाइड पर रखा जाता है। पानी किस दिशा में बहेगा? प्रारंभ में और साम्यावस्था (equilibrium) के बाद, कोशिका और पानी का ψ_π, ψ_p और ψ_w क्या होगा?

....

....

....

....

4. रंध्र की संरचना बनाइए और यह स्पष्ट कीजिए कि द्वार-कोशिकाओं की स्फीति में वृद्धि से रंध्र-द्वारक कैसे खुलते हैं।

....

....

....

....

11.13 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क) i) गलत, ii) गलत, iii) सच, iv) सच

2. क) परासरण विभव (ψ_π), दाब विभव (ψ_p) और मैट्रिक विभ्व (ψ_m)

   ख) $\psi_{w(c)} = \psi_w$ प्याले में लवण विलयन का ψ_w शून्य होगा क्योंकि झिल्लियां अनुपस्थित हैं। इसलिए इसका जल विभव, शुद्ध जल के विभव के बराबर है।

   ग) −7.9 MPa

   हम जानते हैं कि $\pi = -\psi_\pi$ इसलिए परासरण विभव −7.9 MPa होगा।

   घ) i) शून्य, ii) विपरांत, iii) निम्न (कम)

3. क) ii

   ख) $\Delta\psi_w = \psi_{w(\text{आधार})} - \psi_{w(\text{शीर्ष})}$

   $= -0.5 - (-1.5) = -0.5 + 1.5 = 1$ MPa

   ग) चूंकि क = −0.4 MPa, ख = −3.1 MPa, ग = −0.09 MPa

   $\psi_W = -0.09 > -0.4 > -3.1$

   जल का प्रवाह ग → क → ख होगा।

   घ) ii

4. iii) और v) सही सुझाव हैं।

5. क) i) छिद्र के सामने वाली मोटी कोशिका भित्ति

   ii) क्लोरोप्लास्ट की उपस्थिति

   iii) ATP की सप्लाई

iv) झिल्ली में प्रोटोन पम्प

v) द्वार कोशिकाओं में संलग्न कोशिकाओं की अपेक्षा उच्चतर स्फीति दाब उत्पन्न करने की क्षमता

ख) i) गलत, ii) सच, iii) सच, iv) गलत

अंत में कुछ प्रश्न

1. प्राणियों में पानी की ढेर सारी मात्रा शरीर में पुनः चक्रित (recycled) हो जाती है। उदाहरण के लिए, कशेरुक प्राणियों (vertebrates) में रुधिर, प्लैज़्मा और दूसरे तरलों (fluids) के रूप में। जबकि पौधों में पत्तियों द्वारा अवशोषित 90% से अधिक पानी वाष्पोत्सर्जन के प्रक्रम द्वारा जल वाष्प बनकर हवा में खो जाता है।

2. पौधा पानी का अवशोषण करेगा लेकिन पौधे का ऊपरी भाग मुरझा जाएगा। ऐसा इसलिए होगा कि दो तनों के बीच वायु स्तंभ (air column) सांतत्यक (continuum) नहीं बनता। पौधों में जल की गति केवल द्रव अवस्था में होती है जो द्रव स्तंभ को तोड़े बिना अत्यधिक दाब सह सकती है।

3. पानी कोशिका के भीतर तब तक प्रवाहित होता रहेगा जब तक कि कोशिका और जल बिंदु (drop) का जल विभव बराबर नहीं हो जाता।

   प्रारंभिक और अंतिम साम्यावस्था विभव नीचे दिए गए हैं

	प्रारंभिक		साम्यावस्था	
	जल बिंदु	कोशिका	जलबिंदु	कोशिका
ψ_π	0	− 7.9	0	− 7.9
ψ_p	0	+ 3	0	+ 7.9
ψ_w	0	− 4.9	0	0

4. उत्तर के लिए कृपया मूल पाठ देखें।

इकाई 12 खनिज पोषण

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
12.2 पौधों के पोषक तत्व
अनिवार्यता की कसौटी
तत्वों का वर्गीकरण
अनिवार्य तत्वों के प्रकार्य
12.3 पोषकों का अवशोषण
पोषक और मृदा
खनिज आयनों का अंतर्ग्रहण
जड़ों में पोषकों की गति
12.4 आयनों का परिवहन
प्लैज़्मा झिल्ली के पार परिवहन
झिल्ली प्रोटीन की सहायता से परिवहन
जड़ों में आयनों की अरीय गति
लम्बी दूरी तक परिवहन
12.5 अनिवार्य तत्वों की भूमिका
स्थूलपोषक
सूक्ष्मपोषक
12.6 सारांश
12.7 अंत में कुछ प्रश्न
12.8 उत्तर

12.1 प्रस्तावना

मानव की तीन मूलभूत आवश्यकताएं हैं — भोजन, वस्त्र और आश्रय। इन सबके लिए हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पौधों पर निर्भर हैं। स्वर्गीय प्रोफेसर पी.महेश्वरी ने एक बार कहा था, "इस पृथ्वी पर हम सब पौधों के मेहमान हैं।" पौधों पर हमारी निर्भरता के लिए यह कितनी सटीक टिप्पणी थी। आधुनिक जीवन में अनेक औद्योगिक उत्पादों की जरूरत पड़ती है जिनमें से अधिकांश का कच्चा माल पौधों से प्राप्त होता है। इसलिए, जिन पौधों पर हम इतना निर्भर करते हैं, उनकी सफल खेती करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

मनुष्य और प्राणियों की तरह पौधों को भी स्वस्थ वृद्धि (growth) और परिवर्धन (development) के लिए पौष्टिक पोषकों की आवश्यकता होती है। मनुष्य और अन्य प्राणी गतिशील हैं इसलिए जहाँ से भी भोजन उपलब्ध होता है, वे उसे इकट्ठा कर लेते हैं जबकि पौधे स्थिर हैं वे सरल अकार्बनिक पोषकों से स्वयं का भोजन बनाते हैं। अपने समीपस्थ पर्यावरण से उन्हें पोषक तत्व मिलते हैं। अधिकतर वे उस पर ही निर्भर करते हैं। स्वस्थ फसल के सफल उत्पादन के लिए पौधों की पोषण आवश्यकताओं का आपेक्षित ज्ञान होना बहुत ज़रूरी है। इस इकाई में हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि ये ज़रूरतें क्या हैं, पौधे इन्हें पर्यावरण से कैसे प्राप्त करते हैं और ये पौधों के सभी अंगों में किस प्रकार पहुंचाई जाती हैं।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- पौधे को वृद्धि और जीवित रहने के लिए जिन अनिवार्य स्थूल और [illegible]कों (macro and micronutrients) का अवशोषण (absorption) करना ए[illegible] ज़रूरी है, उनकी सूची बना सकेंगे,

- पौधों के लिए अनिवार्य तत्वों की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे,
- मृदा से जड़ों द्वारा आयनों के अंतर्ग्रहण (uptake) को प्रभावित करने वाले कारकों (factors) की सूची बना सकेंगे,
- यह बता सकेंगे कि ये तत्व मृदा से मूल-कोशिकाओं द्वारा किस प्रकार चुन-चुन कर (selected) ग्रहण किए जाते हैं और पौधे के विभिन्न अंगों में ले जाए जाते हैं,
- पौधे में विशिष्ट पोषकों की कुछ कमी से होने वाले लक्षणों की सूची बना सकेंगे और इस कमी को ठीक करने के लिए काम में लाए जाने वाले रसायनों के नाम बता सकेंगे।

अध्ययन निर्देशिका

इस इकाई के खंड 12.4 को समझने के लिए झिल्ली परिवहन प्रक्रमों का ज्ञान आवश्यक है। आप एल एस ई - 01, खंड-II के 7.4, 7.5, 8.2, 8.3 और 8.4 अनुभागों को दोहरा सकते हैं। अनिवार्य पोषकों की भूमिका पर अनुभाग 12.5 लम्बा है लेकिन यह काफी आसान है। समय बचाने के लिए पहली बार पढ़ते समय ही महत्वपूर्ण जानकारी को कापी में लिख लें।

12.2 पौधों के पोषक तत्व

आइए हम पौधों का रासायनिक संघटन (chemical composition) मालूम करें और यह देखें कि पौधों के स्वस्थ विकास के लिए प्रकृति ने किन-किन तत्वों को चुना है। इसके बाद ही हम पौधों की पोषण संबंधी जरूरतों को जान सकेंगे।

जैसा कि आप जानते हैं पादप ऊतक का एक बड़ा भाग पानी है। यह हम एक पौधे के ऊतक की ज्ञात मात्रा लेकर किसी बंद चूल्हे (oven) में 65°-80° सें. तापमान पर कुछ घंटों में सुखाकर दिखा सकते हैं। अगर हम बंद चूल्हे में सुखाए हुए पादप ऊतक से निकल रही वाष्प को द्रवित करके उसका विश्लेषण करें तो हमें पता चलेगा कि यह पानी के सिवा कुछ नहीं है। दरअसल ऊतक का लगभग 85-90 प्रतिशत भाग पानी होता है। ऊतक का जो भाग बच जाता है उसे **शुष्क पदार्थ** कहते हैं और यह मूल भाग का लगभग 10 से 15 प्रतिशत होता है। शुष्क पदार्थ में मुख्य रूप से कार्बनिक यौगिक होते हैं। शुष्क पदार्थ का लगभग 90 प्रतिशत भाग पादप कोशिका झिल्ली का होता है जिसमें प्रमुखतया सेलुलोस और संबंधित कार्बोहाइड्रेट होते हैं। 600° सें. पर दहन करने पर ये गैस के रूप में निकल जाते हैं। अब जो अवशेष बचता है वह राख होती है जो विभिन्न पादप ऊतकों में शुष्क भाग का लगभग 1 से लेकर 1.5 प्रतिशत तक होती है। दिलचस्प बात यह है कि भस्म का सावधानी से विश्लेषण करने पर पता चलता है कि इसमें लगभग वे सभी रासायनिक तत्व होते हैं जो पौधे के चारों ओर की मिट्टी में मौजूद होते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या राख में पाए जाने वाले सभी तत्व पौधे के स्वस्थ जीवन के लिए अनिवार्य हैं? अनिवार्य (essential) तत्वों में से हम उन तत्वों को कैसे पहचान सकते हैं जो गैर-अनिवार्य (non-essential) हैं?

12.2.1 अनिवार्यता की कसौटी

आर्नान और स्टाउट (Aron and Stout), कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, यू.एस.ए.) ने 1939 में कुछ ऐसी कसौटियाँ सुझाई जिन पर खरा उतरने के बाद ही किसी तत्व को अनिवार्य वर्गीकृत किया जाता है। ये कसौटियाँ नीचे दी गई हैं —

1) वह तत्व अनिवार्य है जिसकी अनुपस्थिति में पौधा अपना जीवन चक्र पूरा नहीं कर सकता और जीवनक्षम (viable) बीज नहीं बना सकता।
2) अगर कोई तत्व पौधे के किसी ऐसे अणु या किसी संघटक (constituent) का हिस्सा है जो स्वयं पौधे के लिए अनिवार्य है तो वह तत्व अनिवार्य है। उदाहरण के लिए, प्रोटीन में नाइट्रोजन, क्लोरोफ़िल में मैग्नीशियम और साइटोक्रोम में लौह।

3) तत्व, पौधे के अन्दर प्रत्यक्ष रूप से क्रिया अवश्य करें। किसी दूसरे तत्व की प्राप्यता में संवृद्धि या दमन न करे।

हालांकि तत्व अनिवार्य हैं या नहीं यह पता लगाने के लिए ऊपर दी गई पहली दो कसौटियाँ ही पर्याप्त हैं फिर भी तीसरी कसौटी संदेहास्पद तत्वों को सूची से काटने के लिए सहायक सिद्ध होती है। उदाहरण के लिए ऐस्ट्रागैलस *(Astragalus)* सिलीनियम एकत्रित करने वाला पौधा है। सिलीनियमधारी मृदाओं में उगाने पर इसमें वृद्धि को बढ़ावा देने वाले प्रभाव दिखाई पड़ते हैं। लेकिन प्रयोगों से पता चला है कि यह गुण सेलिनेट आयन द्वारा फॉस्फ़ेट के अवशोषण को दबाने के गुण के कारण है। अगर सेलिनेट आयन न हो तो पौधा फ़ॉस्फ़ेट को विषाक्त मात्रा में अवशोषित कर लेता है। व्यवहारिक दृष्टि से, उस तत्व को अनिवार्य माना जाता है जिस तत्व के बिना यदि पौधे को माध्यम (medium) में उगाया जाए तो उनमें न्यूनता के लक्षण (deficiency symptoms) दिखाई दें। भले ही वे पौधे जीवसक्षम बीज उगाने में समर्थ हों। आप नोट करें कि तत्वों का, विशेष रूप से सूक्ष्ममात्रिक (trace) तत्वों का परिशुद्ध निष्कासन प्रयोगों के समय करना बहुत कठिन है क्योंकि ये धूल भरी हवा, प्रमुख लवणों के संदूषकों अथवा बीजमात्र से ही आ सकते हैं।

निम्नलिखित द्विपदी (couplet) आपको पौधों की खनिज लवण आवश्यकता याद करने मे मदद करेगी।

See Hopkins cafe managed by mine cousin Mo very clean naturally cool (C H O P I K N S Ca Fe Mg B Mg Mn Cu Zn Mo Va Cl Na Co).

आप नोट करें कि द्विपदी मे आयोडीन भी है। पौधे को आयोडीन की आवश्यकता नहीं होती परन्तु मनुष्यों मे इसकी कमी मे गलगंड (goitre) रोग हो जाता है।

सारणी 12.1 में सोलह तत्वों की सूची दी गई है जो ऊपर बताई गई अनिवार्यता की कसौटी पर खरे उतरते हैं। सारणी में तत्वों की सन्निकट (approximate) पर्याप्त सांद्रता या सांद्रण और मॉलिब्डेनम (Mo) की तुलना में जरूरी परमाणुओं की सन्निकट संख्या दी गई है। अंतर देखिए। मॉलिब्डेनम की परमाणु संख्या से लगभग 6 करोड़ गुना हाइड्रोजन परमाणुओं की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि पौधा जिन हजारों रासायनिक यौगिकों से बना है, हाइड्रोजन उनका अनिवार्य अंश है। जबकि मॉलिब्डेनम की जरूरत एन्ज़ाइम के माध्यमवाली केवल एक या दो अभिक्रियाओं में पड़ती है।

सारणी 12.1 : उच्च कोटि के पादपों के आवश्यक अनिवार्य तत्व**

तत्व	रासायनिक प्रतीक	पौधों को उपलब्ध रूप	शुष्क पदार्थ में सांद्रण (%)	मॉलिब्डेनम की तुलना मे परमाणुओं को आपेक्षिक संख्या
1. हाइड्रोजन	H	H_2O	6.0	60,000,000
2. कार्बन	C	CO_2	45	35,000,000
3. ऑक्सीजन	O	O_2, H_2O, CO_2	45	30,000,000
4. नाइट्रोजन	N	*NO_3^-, NH_4^+	1.5	1,000,000
5. पोटैशियम	K	K^+	1.0	250,000
6. कैल्सियम	Ca	Ca^{2+}	0.5	125,000
7. मैग्नीशियम	Mg	Mg^{2+}	0.2	80,000
8. फ़ॉस्फ़ोरस	P	*$H_2PO_4^-$; HOP_4^{2-}	0.2	60,000
9. गंधक (सल्फर)	S	SO_4^{2-}	0.1	30,000
10. क्लोरीन	Cl	Cl^-	0.01	3,000
11. लोहा	Fe	Fe^{3+}, *Fe^{2+}	0.01	2,000
12. बोरॉन	B	H_3BO_3	0.002	2,000
13. मैंगनीज	Mn	Mn^{2+}	0.005	1,000
14. जस्ता (जिंक)	Zn	Zn^{2+}	0.002	300
15. तांबा (कॉपर)	Cu	Cu^+, Cu^{2+}	0.0006	100
16. मॉलिब्डेनम	Mo	MoO_4^{2-}	0.00001	1

* अधिक सामान्य रूप

**पी.आर.स्टाउट (1961) के आधार पर संशोधित प्रोसिडिंग्स ऑफ नाइन्थ वार्षिक कैलिफोर्निया उर्वरक सम्मेलन।

वैज्ञानिकों ने सोलह तत्वों की सूची में कुछ और तत्व भी जोड़े हैं हालांकि उन्होंने इन तत्वों को पौधों के केवल कुछेक समूहों के लिए ही अनिवार्य पाया। ये तत्व हैं — सोडियम (Na), कोबाल्ट (Co) सिलीकन (Si), निकैल (Ni) और क्रोमियम (Cr), टिन (Sn) और फ्लुओरीन (F)। कुछ विशिष्ट जीवों को दूसरे तत्वों की जरूरत हो सकती है। उदाहरण के लिए, यह प्रतीत हुआ है कि कुछ शैवालों

यह दिखाया जा चुका है कि कुछ मरुस्थल जातियों को सूक्ष्मपोषक के रूप में Na^+ की आवश्यकता पड़ती है। *ऐट्रिप्लेक्स वेसिकेरिया* और कुछ जातियां इसके उदाहरण हैं जो कि C_4 मार्ग से या क्रेसुलेसीय अम्ल उपापचय से प्रकाश संश्लेषण में CO_2 का स्वांगीकरण करती हैं। Na^+ की कमी पत्तियों में अत्यधिक हरिमाहीनता और पत्तियों की कोर और नोक में ऊतकक्षय के रूप में दिखाई देती है।

को वैनेडियम (Va), सिलीकन (Si) या आयोडीन (I) की भी आवश्यकता होती है जबकि कुछ फर्न एलुमिनियम का उपयोग करती हैं तथा कुछ आम खरपतवार बड़ी मात्रा में सिलीनियम (Se) का अवशोषण करते हैं और उसे संचित करते हैं।

इकाई के अंत में आपको अनिवार्य तत्वों के बारे में विस्तारपूर्वक जानने का अवसर मिलेगा।

12.2.2 तत्वों का वर्गीकरण

वर्गीकरण की परम्परागत पद्धति पौधे में पाए जाने वाले तत्व की g^{-1} शुष्क पदार्थ सान्द्रता पर आधारित है। 1000 μg^{-1} शुष्क पदार्थ या अधिक की सान्द्रता में पाए जाने वाले तत्व स्थूलपोषक (macronutrients) कहलाते हैं और जो 100 μg^{-1} शुष्क पदार्थ से कम सान्द्रता में पाए जाते हैं उन्हें सूक्ष्मपोषक (micronutrients) कहते हैं। इस प्रकार सारणी 12.1 में दिये गये पहले नौ तत्व स्थूलपोषक हैं और बाकी सात सूक्ष्मपोषक हैं। हालांकि यह वर्गीकरण कुछ मामलों में उपयोगी है परन्तु यह आस्थिर (arbitrary) है और बहुत से मामलों में दो समूहों के अंशों के बीच अंतर ज्यादा नहीं है। उदाहरण के लिए, पादप ऊतक के Fe और Mn के अंश अधिकतर S या Mg के अंश जितने ही उच्च देखे गए हैं इसलिए वैज्ञानिक फिज़ियोलाजिकल (physiological) और जैव रासायनिक (biochemical) प्राचलों पर आधारित अधिक संतोषजनक वर्गीकरण खोजने में लगे हुए हैं।

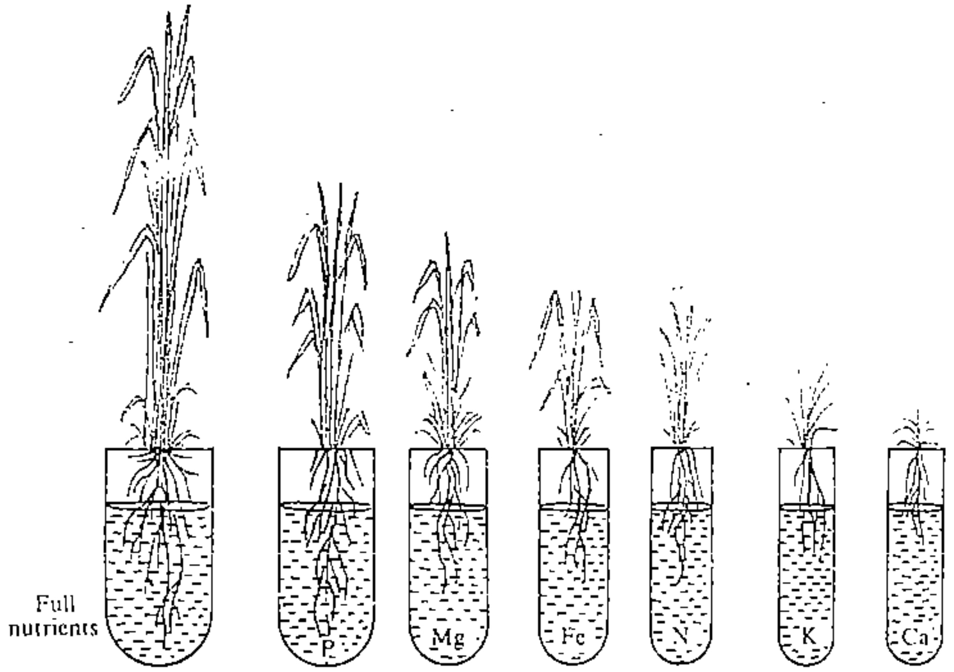

चित्र 12.1 : पोषकों की कमी का जौ के पौधों पर प्रभाव। पौधे पानी में संवर्धित किये गये है,

12.2.3 अनिवार्य तत्वों के प्रकार्य

पौधों में अनिवार्य तत्वों के निम्नलिखित तीन प्रकार्य (function) हैं:

1) **परासरणी प्रकार्य:** पौधों की कोशिकाओं में आमतौर पर चारों ओर की मिट्टी की अपेक्षा 10 से 1000 गुना खनिज आयन होते है। इसी कारण कोशिकाओं में पानी, परासरण (osmosis) द्वारा घुसता है और स्फीति (turgor) पैदा करता है। आप जानते हैं कि स्फीति पौधों के पत्तियों जैसे कोमल भागों के आकार और साइज को बनाए रखती है। इस संदर्भ में पोटैशियम मुख्य आयन है। इसके सान्द्रण में परिवर्तन से द्वार कोशिकाओं (guard cells) की स्फीति पर प्रभाव पड़ता है और इसके फलस्वरूप रंध्र (stomata) खुलते और बंद होते हैं। पादप कोशिकाओं की वृद्धि के लिए भी स्फीति आवश्यक है।

2) **संरचनात्मक प्रकार्य:** मृदा से अवशोषित नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस और गंधक तत्व, ऐमीनो अम्ल और न्यूक्लिओटाइडों के अनिवार्य घटक हैं। दो अन्य तत्व जो महत्वपूर्ण यौगिकों के घटक हैं

वह Mg^{2+} और Ca^{2+} है। Mg^{2+} क्लोरोफिल अणु का भाग है और Ca^{2+} कोशिका भित्ति की मध्य पटलिका (lamella) का अनिवार्य भाग है और इसे कोशिका भित्तियों के संरचनात्मक अभिलक्षणों को बरकरार रखने के लिए अनिवार्य माना जाता है। यह प्लैज़्मा झिल्ली की पारगम्यता (permeability) भी बनाए रखता है। इसकी अनुपस्थिति में कोशिकाएं रिसने (leak) लगती हैं। हाल ही के वर्षों में कोशिका में Ca^{2+} द्वारा निभाई जाने वाली नियामक (regulatory) भूमिका सराही जाने लगी है। यह द्वितीय दूत (secondary messenger) की भूमिका निभाता है।

3) **जैव रासायनिक प्रकार्य:** अनेक एन्ज़ाइमी अभिक्रियाओं के लिए Mg, Mn, K, Ca और Fe तत्व सहकारक (cofactors) हैं। इलेक्ट्रॉन अंतरण (परिवहन) श्रृंखला में Fe आयन इलेक्ट्रॉनों का वाहक है। कोशिका रसायन में फ़ॉस्फ़ोरस महत भूमिका निभाता है। फ़ॉस्फ़ोरिलीकृत शर्कराएं प्रकाश संश्लेषण और श्वसन उपापचय के लिए अनिवार्य हैं और ATP के उच्च ऊर्जा आबंध (bond) बनाने के लिए फ़ॉस्फ़ेट के रूप में फ़ॉस्फ़ोरस अनिवार्य है।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित में से कौन-से कथन सत्य हैं? दिए गए कोष्ठकों में सत्य के लिए 'स' और गलत के लिए 'ग' लिखिए।

i) पौधे के ऊतकों को शुष्क करने के बाद जो पदार्थ शेष रहता है, उसे भस्म या राख कहते हैं। ☐

ii) पौधों में फ़ॉस्फ़ोरस की अपेक्षा कैल्सियम ज्यादा होता है। ☐

iii) 1000 μg सान्द्रता में पाए जाने वाले तत्व सूक्ष्मपोषक कहलाते हैं। ☐

iv) पादप कोशिकाओं की स्फीति बनाए रखने में सोडियम तत्व प्रमुख भूमिका निभाता है। ☐

ख) रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरिए।

i) पौधों में परासरणीय प्रकार्य करने वाला प्रमुख तत्व .... है।

ii) .... प्लैज़्मा झिल्ली की पारगम्यता बनाए रखता है।

iii) Mg^{2+} .... अणु का भाग है।

iv) इलेक्ट्रॉन अंतरण श्रृंखला में इलेक्ट्रॉनों का वाहक .... है।

12.3 पोषकों का अवशोषण

कार्बन डाइऑक्साइड और पानी से मिलने वाले तत्वों—कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन को छोड़कर, पौधों को बाकी सारे तत्व मृदा से प्राप्त होते हैं। इसलिए अब आगे हम "खनिज पोषण" की इस इकाई में अपनी चर्चा उन तत्वों तक सीमित रखेंगे जो जड़ों द्वारा मिट्टी से प्राप्त किए जाते हैं।

12.3.1 पोषक और मृदा

खनिज अंतर्ग्रहण (uptake) पर प्रारंभिक प्रयोग हॉगलैंड (Hoagland), स्टाउट (Stout) और आर्नोन (Arnon) द्वारा 1923 में किए गए। उन्होंने दिखलाया कि मिट्टी से खनिज मुख्यतया आयनी रूप में ग्रहण किए जाते हैं। जड़ों द्वारा विभिन्न आयनों के अंतर्ग्रहण की दर भिन्न होती है और एक आयन दूसरे आयन के अंतर्ग्रहण को प्रभावित करता है। मृदा खनिज आयनों के भंडारण और विनिमय का माध्यम है इसलिए मृदा के गुण, आयन विनिमय क्षमता, pH और भिन्न-भिन्न धनायनों (cation) और ऋणायनों (anions) की उपस्थिति पौधों के लिए आयनों की प्राप्यता को प्रभावित करती है। दूसरे शब्दों में मृदा में किन्हीं खनिज आयनों की प्रचुरता का यह अर्थ कदापि नहीं है कि ये पौधे के लिए उपलब्ध हैं क्योंकि आयन मृत्तिका यानि मटियार (clay) से चिपक सकते हैं या घोल से अघुलनशील लवण के रूप में अवक्षेपित (precipitate) हो सकते हैं। अधिक जल धारण करने की क्षमता वाली मृदा में आमतौर पर खनिज धारण क्षमता भी अधिक होती है। मृत्तिका और ह्यूमस के बारीक कणों के आयतन से सतह का अनुपात अपेक्षाकृत बड़ा होता है और ये कण ऋणात्मकतः आवेशित (charged) होते हैं। इसलिए मोटे कणों वाली मृदा की अपेक्षा इनमें आयन-बंधन (binding) क्षमता अधिक होती है। चित्र 12.2 से ऋणात्मक पृष्ठ (surface) आवेशों सहित

पौधे मृदा के बिना ज़रूरी लवणों के विलयन में भी उगाये जा सकते हैं। इस तरह पौधे उगाने की तकनीक को जल संवर्धन (hydroponics) मृदा-हीन संवर्धन या विलयन संवर्धन कहते हैं।

मिसेल - $Mg^{2+} + 2H^+ \rightarrow$
मिसेल - $H^+ + Mg^{2+}$
मृदा घोल में

कोलॉइडीय मृत्तिका क्रिस्टल (मिसेल-micelles) दिखाया गया है। धनायन आयनी आबंध द्वारा ऋण आवेशों से ढीली तरह परिबद्ध (bound) रहते हैं और मृदा घोल में धनायने से तेजी और व्युत्क्रम से (reversibly) अदला-बदली करने में सक्षम होते हैं। Ca^{2+}, Mg^{2+} या K आयनों की अपेक्षा H^+ आयनों में आवेशित मृदा कणों के प्रति अधिक बंधुता (affinity) होती है। इसलिए, H^+ आयनों द्वारा मुक्त होकर ये धनायनें मृदा जल में जाती हैं और जड़ों द्वारा अंतर्ग्रहण किए जाने के लिए उपलब्ध रहती है। मृदा की अम्लता भी श्वसन के कारण बढ़ जाती है क्योंकि छोड़ी गई CO_2 मृदा जल से अभिक्रिया करके कार्बोनिक अम्ल बनाती है।

$CO_2 + H_2O \rightleftharpoons H_2CO_3 \rightleftharpoons$
(श्वसन से)
$H^+ + HCO_3^-$

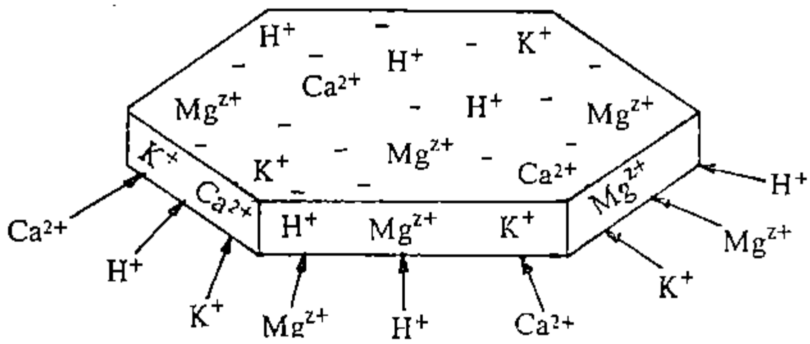

चित्र 12.2 : मृत्तिका मिसेल की बाहरी सतह का एक आरेखी निरूपण। अनेक ऋणात्मक पृष्ठ आवेशों और उनके घेरे हुए विभिन्न धनायनों को देखिए।

खनिज आयनों की (चित्र 12.2) विनिमय क्षमता मृदा की pH से प्रभावित होती है जो बदले में पौधे के विभिन्न आयनों की प्राप्यता को प्रभावित करती है जैसाकि नीचे (चित्र 12.3) के ग्राफ में दिखाया गया है।

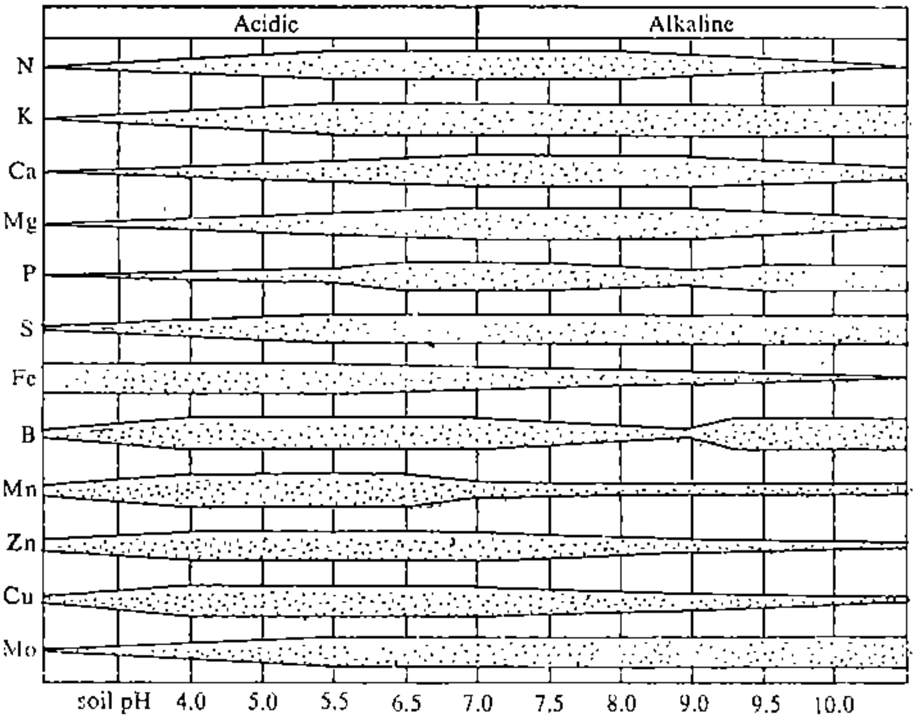

चित्र 12.3 : पौधे को विभिन्न आयनों की प्राप्यता पर मृदा pH का प्रभाव। चित्र में आयनों की प्राप्यता छड़ की चौड़ाई द्वारा दिखाई गई है।

12.3.2 खनिज आयनों का अंतर्ग्रहण

आइए, अब हम देखें कि जब पौधों को कुछ दिनों के लिए ज्ञात सांद्रता के पोषक घोल में उगाया जाता है तो जड़ की कोशिकाओं में विलेय सांद्रता का क्या होता है। एक प्ररूपी प्रयोग से प्राप्त आंकड़े सारणी 12.2 में दिए गए हैं। तुलना के लिए मक्का (corn) और सेम (bean) के दो पौधे लिए गए हैं।

सारणी 12.2: बाहरी पोषक घोल की आयन सान्द्रता में और मक्का तथा सेम के मूल रस (root sap) में परिवर्तन mM में व्यक्त किए गए हैं। आंकड़े 4 दिन बाद रिकॉर्ड किए गए।

आयन		4 दिन बाद			
		बाहरी सांद्रता		मूल रस में सांद्रता	
	आरंभिक सांद्रता	मक्का	सेम	मक्का	सेम
पोटैशियम	2.00	0.14	0.67	(160)	(84)
नाइट्रेट	2.00	0.13	0.07	(38)	35
कैल्सियम	1.00	0.94	0.59	3	10
सल्फेट	0.67	0.61	0.81	14	6
सोडियम	0.32	0.51	0.58	0.6	6
फ़ॉस्फ़ेट	0.25	0.06	0.09	6	12

ऊपर दी गई सारणी का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने से निम्नलिखित बातों का पता चलता है:

i) चार दिनों के भीतर ही कुंडिका माध्यम (bathing medium) यानि पोषक घोल में पोटैशियम, फ़ॉस्फ़ेट और नाइट्रेट की सांद्रता काफी कम हुई।

ii) लेकिन सोडियम और सल्फ़ेट की सांद्रता बढ़ी जो इस बात की सूचक है कि दोनों ही आयनों की तुलना में पानी अधिक जल्दी अवशोषित किया गया था। सम्भवतया ये दोनों आयनें बाहर निक्षालित (leach) हो गई।

iii) मक्का और सेम दोनों पौधों की जाति के बीच विशेष रूप से पोटैशियम और कैल्सियम के अंतर्ग्रहण की दर भिन्न-भिन्न थी।

iv) प्रयोग के लिए काम में लाए गए पोषक घोल की अपेक्षा जड़ में आयनों की सांद्रता विशेषतया K^+, NO_3^- और SO_4^{2-} की पर्याप्त रूप से अधिक थी।

ये परिणाम पोषक अंतर्ग्रहण की कुछ विशेषताओं को दर्शाते हैं।

1. **वरणात्मकता (Selectivity):** कुछ खनिज तत्वों को ग्रहण करने में तरजीह (preference) दी जाती है जबकि दूसरे तत्वों के साथ भेदभाव (discriminate) किया जाता है या उन्हें लगभग ग्रहण नहीं किया जाता।
2. **संचयन (Accumulation):** बाहरी घोल की अपेक्षा पादप रस में खनिज तत्वों की सान्द्रता कहीं अधिक हो सकती है। इसका अर्थ यह है कि अंतर्ग्रहण सांद्रण प्रवणता के विपरीत होता है।
3. **जीन प्रारूप (Genotype):** पोषक अंतर्ग्रहण विशेषताओं में पादप जातियाँ आनुवंशिक रूप (genetically) से भिन्न हैं।

आप जानते हैं कि रासायनिक रूप से Na^+, K^+ से बहुत ज्यादा मिलता-जुलता है लेकिन K^+ के अवशोषण की दर, माध्यम में उपस्थित Na^+ की उतनी ही सान्द्रता से प्रभावित नहीं होती। इसलिए K^+ अवशोषण की प्रक्रिया वरणात्मक है और संबंधित आयन से अप्रभावित रहती है। इसी तरह अनेक दूसरी एक संयोजक (monovalent) और कम संबंधित द्विसंयोजक आयनों का भी K^+ अंतर्ग्रहण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसी प्रकार Cl^- का अवशोषण भी संबंधित हैलाइड फ्लुओराइड और आयोडाइड तथा NO_3^-, $H_2PO_4^-$ या SO_4^{2-} जैसी ऋणायनों से भी अप्रभावित रहता है। लेकिन यह दिलचस्प बात है कि इस वरणात्मकता के लिए Ca^{2+} परम आवश्यक है। उदाहरण के लिए Ca^{2+} की अनुपस्थिति में K^+ का अवशोषण Na^+ द्वारा संदमित (inhibited) हो जाता है।

हालांकि आयन अंतर्ग्रहण क्रियाविधि अत्यधिक विशिष्ट है, फिर भी यह प्राय: एक जैसी आयनों से "बेवकूफ" बन सकती है। उदाहरण के लिए, यह देखा गया है कि रूबिडियम (Rb^+) द्वारा K^+ के अवशोषण का स्पर्धी संदमन (competitive inhibition) किया जा सकता है। इसी प्रकार,

ऐसा देखने में आया है कि Br^- से Cl^- का Mg^{2+} से Ca^{2+} व Sr^{2+} का तथा SeO_4^{2-} (सेलिनेट) से SO_4^{2-} का अवशोषण संदमित हो जाता है।

पोषकों और उपापचयजों (metabolites) की वरणात्मकता और अंतर्ग्रहण की दर तापमान, O_2, विष, ऊतकों के कार्बोहाइड्रेट अंश और प्रकाश से प्रभावित होती है। इनके प्रभाव एन्ज़ाइम-माध्यमी अभिक्रियाओं (enzyme-mediated reactions) जैसे हैं और यह संकेत देते हैं कि आयन अंतर्ग्रहण में प्रोटीनों का हाथ है। परिवहन प्रोटीनों और आयन अंतर्ग्रहण की क्रियाविधि के बारे में आप बाद के अनुभागों में पढ़ेंगे।

12.3.3 जड़ों में पोषकों की गति

कुछ कवक मिट्टी में जड़ों से एकदम सटी हुई या उनके अंदर ही उगती हैं। इसे सहजीवन कहते हैं। कवक की जड़ें कवकमूल (mycorrhiza) कहलाती हैं। कवक तंतुओं (hyphae) में खनिज अवशोषण की श्रेष्ठ क्षमता है और ये पौधे को अधिक नाइट्रोजन, फ़ॉस्फ़ोरस और पोटैशियम सप्लाई करती हैं।

पिछली इकाई में हमने आपको दो मुख्य पथों के बारे में बताया था — एपोप्लास्ट और सिम्प्लास्ट जिनके द्वारा पानी और घुले हुए विलेय, जड़ के भीतरी भाग के पार दारु वाहिकाओं (xylem vessels) और वाहिनिकाओं (tracheids) में जाते हैं। जड़ की वाह्य त्वचा (epidermis) और वल्कुट (cortex) में कोशिकाभित्ति अवकाश और अंतराकोशिक अवकाश (intercellular space) बाहरी मृदा घोल से लगभग अविच्छिन्न हैं।

जैसाकि चित्र 11.9 में दिखाया गया है आयन मूल-रोम और बाह्य त्वचा कोशिकाओं से प्रवेश कर सकते हैं। जो आयन बाह्य त्वचा कोशिका द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं और सिम्प्लास्ट से दारू की ओर बढ़ते हैं उन्हें बाह्य त्वचा, बहुत सी वल्कुटी कोशिकाओं (cortex), अंतस्त्वचा (endodermis) और परिरंभ (pericycle) से होकर गुजरना पड़ता है। आयनों का परिवहन इस गति में संलग्न कोशिकाओं की दोनों ही प्राथमिक भित्तियों, मध्य पटलिका (lamella) और प्लैज़्मा झिल्ली पार कर साइटोसॉल के बीच से होगा। विकल्प के तौर पर विलेय, साइटोसोल में पहुंचने के पश्चात् प्लैज्मा झिल्ली को पार किए बिना या कोशिका भित्तियों से विसरित हुए बिना, प्लैज़्मोडेस्मेटा से जा सकता है।

एपोप्लैज़्म के साथ-साथ पोषकों की गति मूल अंतस्त्वचा कोशिकाओं पर रोक दी जाती है क्योंकि इन कोशिकाओं में कैस्पेरी पट्टी (casparian strip) का आस्तर होता है। इसलिए पानी और घुले हुए पदार्थों के लिए यह जरूरी है कि वे कोशिका में घुसें और सिम्प्लास्ट के रास्ते से गुजरें। इस प्रकार दारू में पहुंचने के लिए खनिजों का साइटोप्लाज़्म से होकर गुजरना जरूरी है।

इस पृष्ठभूमि से अब हम आस-पास के मृदा घोल से जड़ में घुसने वाले विलेय (या पोषक) के मार्ग को खोजने के लिए तैयार हैं।

मुक्त अवकाश

आपने सीखा है कि पादप कोशिका की प्राथमिक कोशिका भित्ति में मुख्य रूप से सेलुलोस सूक्ष्मतंतुक (microfibril) होते हैं जो दो बहुशर्कराओं (polysaccharide) के आधात्री मैट्रिक्स (amorphous matrix) में अंतःस्थापित (embedded) होते हैं। ये बहुशर्कराएं हैं — हेमिसेलुलोस और पेक्टिन पदार्थ। हेमिसेलुलोस ग्लुकोस को छोड़कर दूसरी शर्कराओं (जैसे कि ज़ाइलोग्लुकैन्स) से बने होते हैं जबकि पेक्टिन पदार्थों का निर्माण आंशिक रूप से पॉलिगैलेक्टुरॉनिक अम्लों से होता है। इन अम्लों में तनु (weak) कार्बोक्सिलिक अम्ल समूह ($-COOH$) होते हैं जो आयनीकृत (ionise) हो जाते हैं और ऋण आवेश (negative charges $-COO^-$) उत्पन्न करते हैं। इन आवेशो पर हाइड्रोजन आयनें ढीली तरह बंधी रहती हैं। जब K^+, Mg^{2+} Ca^{2+} जैसे धन आवेशित आयनें पादप कोशिका भित्ति से गुजरती हैं तो वे कार्बोक्सिलिक समूह की हाइड्रोजन आयनों को विस्थापित कर देती हैं और वहाँ दुर्बल अंतराआयनी (interionic) आकर्षी बलों द्वारा जकड़ी रहती हैं। कोशिका भित्ति के ऋण आवेशों यानि COO^- समूहों को धनायन अधिशोषण स्थल (cation adsorption sites) या धनायन विनिमय स्थल या डोनन मुक्त अवकाश (Donnan Free Space) कहते हैं। अपेक्षाकृत उच्च अधिशोषी क्षमता वाली धनायन जैसे कि Ca^{2+} निम्नतर अधिशोषी बंधुता (affinity) वाली आयनों (जैसे कि K^+) को विस्थापित कर सकते हैं।

सेलुलोस सूक्ष्मतंतुक बहुत मजबूती से पैक नहीं होते जिसके फलस्वरूप उनके बीच छोटे-छोटे छिद्र रह जाते हैं। छिद्र इस मायने में पर्याप्त रूप से बड़े होते हैं कि वे पानी और घुले हुए पदार्थों की मुक्त गति (movement) होने देते हैं। इन सुराखों का व्यास (diameter) 5.0 nm के बराबर होता है। जबकि जलयोजित (hydrated) आयनों, जैसे कि Ca^{2+} और K^+ की विमाएं छोटी होती हैं (सारणी 12.3)। इसलिए आयनों की गति छिद्रों द्वारा नहीं रुक सकती है। ग्लूकोस, सुक्रोस और ऐमीनों अम्लों की साइज़ वाले घुले हुए पोषकों के अणु और उपापचयज (metabolites) तथा जल प्राथमिक कोशिका भित्ति के पार आसानी से विसरित (diffuse) हो सकते हैं।

सारणी 12.3 : तुलनात्मक विमाएं (dimensions in nm) में

मक्का की वल्कुटीय कोशिका भित्ति	100-200
कोशिका भित्ति के छिद्र	5.0
सुक्रोस	1.0
जलयोजित (hydrated) आयन	
K^+	0.66
Ca^{2+}	0.82

अंतराकोशीय अवकाश, आकारहीन आधात्री (amorphous matrix) में ऋणात्मक रूप से आवेशित क्षेत्र (डोनन मुक्त अवकाश—Donnan free space) और सेलुलोस के सूक्ष्म तंतुकों (microfibrils) के छिद्रों तक, पानी और घुली हुई आयनों की पहुंच आसान है। पानी में घुले हुए बाहरी विलेय के विसरण के लिए आसानी से सुलभ पादप ऊतक के आयतन के अंश (fraction) को "मुक्त अवकाश" (free space) कहते हैं। जड़ में मुक्त अवकाश बाह्य त्वचीय और वल्कुटी कोशिकाओं की प्लैज़्मा झिल्ली और अंतस्त्वचा की कैस्पेरियन पट्टी से परिबद्ध है।

जो भी पदार्थ मुक्त अवकाश से आसानी से गुज़र सकता है वह प्रोटोप्लाज़्म की बाहरी सतह तक पहुंच जाता है। यहाँ उसका सामना प्लैज़्मा झिल्ली से होता है जो अधिक भीतर जाने की गति के लिए एक प्रभावशाली रोधक (barrier) है। फिर भी, प्लैज़्मा झिल्ली निष्क्रिय रोधिका की तरह क्रिया नहीं करती। यह वरणात्मकतः कुछ दूसरे पदार्थों के मार्ग को अवरुद्ध करते हुए, कुछ पदार्थों को कोशिका के भीतरी भाग में जाने देती है। आगामी अनुभाग में हम प्लैज़्मा झिल्ली के पार पोषकों के परिवहन की चर्चा करेंगे। आप अपनी प्रगति परखने के लिए नीचे दिए गए बोध प्रश्नों को हल करें।

बोध प्रश्न 2

क) प्रत्येक कोष्ठक में दिए गए शब्दों से सही विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइए।

i) मृत्तिका मिसेल (micelle) का आवेश (धन/ऋण) होता है। ☐

ii) संलग्न कोशिकाओं को जोड़ने वाले साइटोप्लाज़्मीय लड़ियों (Strands) को (प्लैज़्मोडेस्मैटा/कैस्पेरी पट्टी) कहते हैं। ☐

iii) आयनों की विनिमय क्षमता मृदा के (तापमान/pH) से प्रभावित होती है। ☐

iv) ऐपोप्लास्टिक मार्ग अंतस्त्वचा-कोशिकाओं की (कैस्पेरी पट्टी/प्लैस्मोडेस्मैटा) पर टूट जाता है। ☐

v) पॉलिगैलैक्टुरोनिक अम्लों के दुर्बल अम्लीय कार्बोक्सिल समूहों द्वारा बनाया जाने वाला स्थिर ऋण आवेश (धनायन विनिमय/ऋणायन विनिमय स्थल) बनाता है। ☐

vi) (सोडियम/रूबिडियम) द्वारा K^+ अवशोषण का स्पर्धी संदमन होता है। ☐

12.4 आयनों का परिवहन

इस अनुभाग में हम विलेयों, विशेषतया अकार्बनिक आयनों का प्लैज़्मा झिल्ली को पार करना, दारु अवयवों में उनके प्रवेश और जड़ों से प्रोह तक उनके लम्बी दूरी के परिवहन के बारे में अध्ययन करेंगे। कोशिका जैविकी पाठ्यक्रम की 7 और 8 इकाइयों में आपने झिल्ली परिवहन के बारे पढ़ा है कि झिल्ली के पार विलेयों का परिवहन सरल विसरण (simple diffusion) सुगमीकृत विसरण (facililated diffusion) और सक्रिय परिवहन (active transport) द्वारा हो सकता है।

12.4.1 प्लैज़्मा झिल्ली के पार परिवहन

जैसाकि हम पहले बता चुके हैं आयनों के आगे बढ़ने के लिए यह आवश्यक है कि वे प्लैज़्मा झिल्ली को या तो कैस्पेरी पट्टी से पहले या कैस्पेरी पट्टी पर पार करें। परिवहन निष्क्रिय और सक्रिय दोनों ही प्रकार के प्रक्रमों (proceses) से हो सकता है।

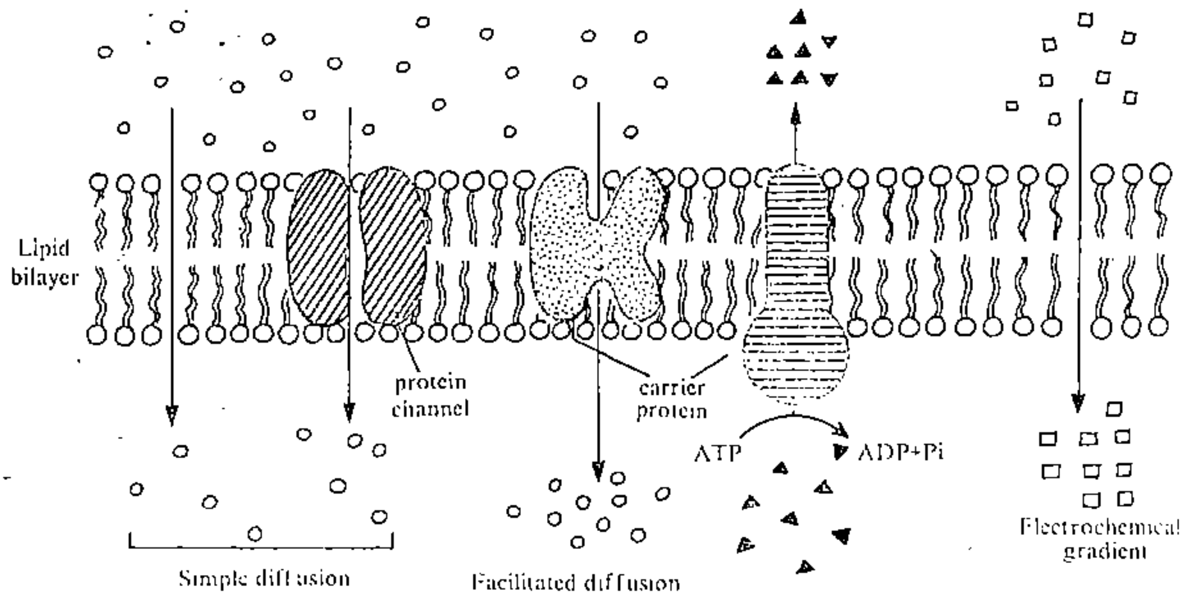

चित्र 12.4 : खनिज आयनों और दूसरे अणुओं की प्लैज्मा झिल्ली को पार करने की निष्क्रिय और सक्रिय परिवहन की क्रियाविधि।

विसरण

सरल विसरण, पादप कोशिका झिल्ली के पार आयनों की एक परिवहन क्रियाविधि हो सकती है। आइए, हम एक ऐसी लिपिड द्विपरत (bilayer) की कल्पना करते हैं जिसमें विभिन्न प्रोटीन नहीं हैं (चित्र 12.5)। ऐसी झिल्ली प्रयोगशाला में बनाई जा सकती है। पर्याप्त समय मिलने पर अणु अपनी स्वयं की गतिज ऊर्जा (kinetic energy) से ही, सांद्रण के उतार (down its gradient) की तरफ, लिपिड द्विपरत के पार विसरित हो सकते हैं। लेकिन अणुओं के विसरण की दर ऐसी लिपिड परत के पार, अणु की साइज और लिपिड में उसकी आपेक्षिक घुलनशीलता (relative solubility) पर निर्भर करती है। अनायनिक जलरागी (non-ionic hydrophilic) पदार्थ आमतौर पर अपने साइज के प्रतिलोम फलन (inverse function) के रूप में ग्रहण किए जाते हैं तो जल विरोधी (hydrophobic) पदार्थ अपनी लिपिड घुलनशीलता के फलन के रूप में ग्रहण किए जाते हैं। O_2 और N_2 जैसे छोटे अ-ध्रुवीय (non-polar) और जल विरोधी अणु लिपिड में आसानी से

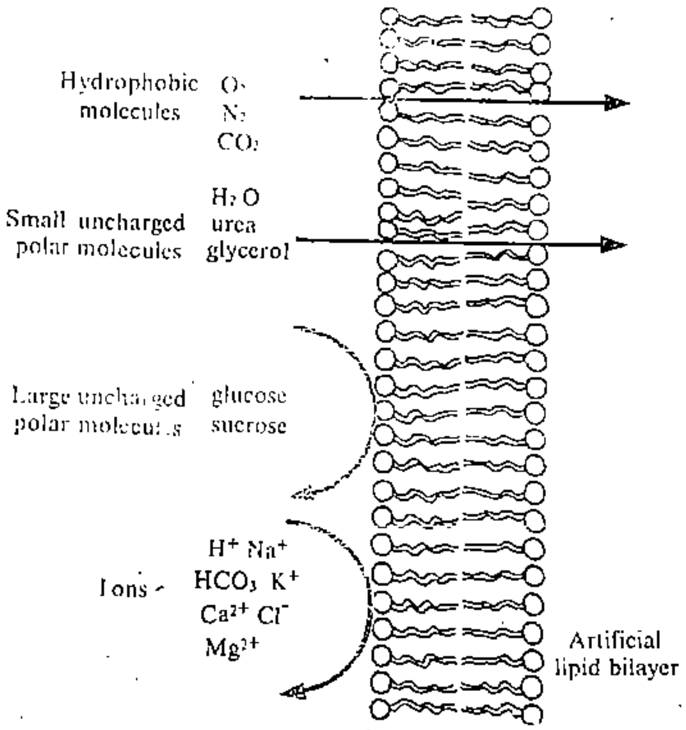

चित्र 12.5 : विभिन्न वर्ग के अणुओं की कृत्रिम लिपिड द्विपरत को पार करने की आपेक्षिक पारगम्यता।

घुल जाते हैं और इसलिए द्विपरत के पार तेजी से विसरित हो जाते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड (44 डाल्टन) और यूरिया (60 डाल्टन) भी द्विपरत को तेजी से पार कर लेते हैं जबकि ग्लिसरॉल (92 डाल्टन) जैसे बड़े अणु कम तेजी से पार करते हैं तथा ग्लूकोस (180 डाल्टन) न के बराबर। जल अणु (18 डाल्टन) लिपिड में अपेक्षाकृत घुलनशील न होते हुए भी लिपिड द्विपरतों के पार बहुत तेजी से विसरित होता है। इसके विपरीत, आवेशित अणुओं (आयनों) के लिए लिपिड द्विपरतें अपारगम्य हैं भले ही अणु बहुत छोटे हों। इन अणुओं (आयनों) के चारों ओर का धन आवेश (charge) और बड़ा उदकन कोश (hydration shell) उन्हें द्विपरत के हाइड्रोकार्बन फेज़ में घुसने से रोकता है। फलस्वरूप, लिपिड द्विपरतें Na^+ या K^+ जैसी बहुत ही छोटी आयनों की अपेक्षा जल के लिए 10^9 गुना पारगम्य है (चित्र 12.6)।

अधिकांश आयनों से K^+ अधिक पारगम्य है। इसका पारगम्यता गुणांक (permeability coefficient) स्वेच्छ ढंग से 1.0 पर सेट कर दिया गया है और मानक के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। दूसरी आयनों की पारगम्यता की तुलना K^+ से की जाती है।

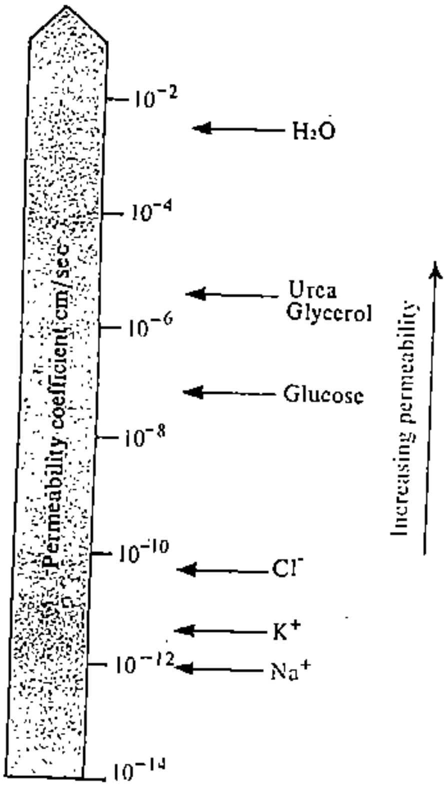

चित्र 12.6 : कृत्रिम लिपिड द्विपरतों से होकर विभिन्न अणुओं के मार्ग के लिए पारगम्यता गुणांक cm sec^{-1}।

लिपिड द्विपरत द्वारा निम्न अणु-भार और उच्च अणु-भार वाले जलरागी पदार्थों में पहचान करने और पहले पदार्थों को पार जाने देने और दूसरे पदार्थ को पार न जाने देने की क्षमता द्विपरत में छिद्र होने के कारण है। ये छिद्र एसिल फ़ॉस्फ़ोलिपिड श्रृंखलाओं की तापीय गति के परिणामस्वरुप यादृच्छिक रूप यानि बेतरतीब ढ़ग से(randomly) बन जाते हैं। ये "सांख्यिकीय छिद्र" (statistical pores) कहलाते हैं। चूंकि छिद्र क्षणिक (transient) होते हैं, इसलिए इन्हें इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप के नीचे भी नहीं देखा जा सकता है।

विसरण के लिए प्रेरक बल (driving force) है सान्द्रण प्रवणता। जो फ़िक के नियम (Fick's law) का पालन करती है। इस नियम के अनुसार पदार्थ की गति की दर, सांद्रण प्रवणता से अनुक्रमानुपाती (directly proportional) है। इस प्रकार सरल विसरण, विलेय की सान्द्रता और झिल्ली के पार परिवहन की इसकी दर के बीच एक रैखिक (linear) संबंध बताता है।

12.4.2 झिल्ली प्रोटीन की सहायता से परिवहन

हालांकि लिपिड द्विपरतें आयनों, शर्कराओं, ऐमीनों अम्लों, न्यूक्लिओटाइडों और कोशिका उपापचयजों जैसे ध्रुवीय अणुओं का प्रवेश नहीं होने देती, लेकिन ये अणु निम्न प्रकार से जैव कोशिका में घुस जाते हैं —

i) जलीय प्रोटीन वाहिका या चैनल (aqueous protein channel) से,

ii) झिल्ली में गति करने वाली वाहक प्रोटीनो से, (carrier proteins that move across the membrane),

iii) पार-झिल्ली (transmembrane) प्रोटीनों से, जो आकार में परिवर्तन करके विलेय का परिवहन करती हैं (चित्र 12.7)।

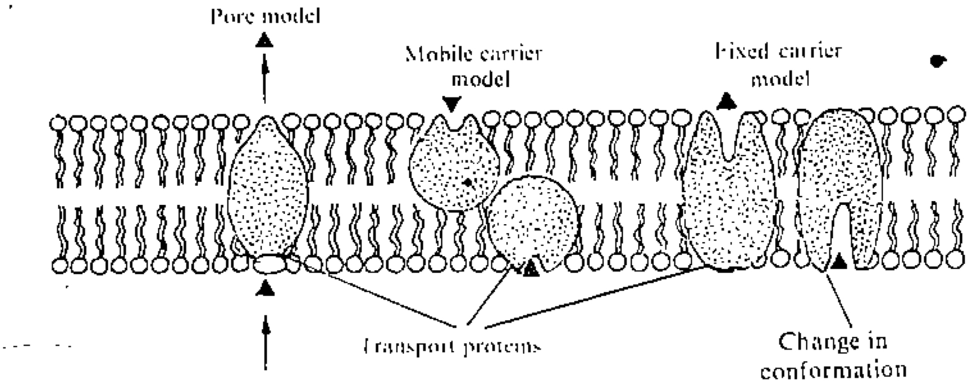

चित्र 12.7: आयनों और अन्य अणुओं की प्लेज़्मा झिल्ली के पार परिवहन की संभावित तीन भिन्न विधियाँ।

पौधों की कोशिका झिल्ली के अध्ययनों से संकेत मिलता है कि अकार्बनिक आयनें जलीय प्रोटीन चैनल से पारगमन कर सकते हैं। इन्हें परमीएस (permease) कहते हैं। परमीएस से विशिष्ट आयन पारगम्य हो सकते हैं क्योंकि विभिन्न आयनों की पारगम्यता अलग-अलग है। अधिकांश झिल्लियां अन्य आयनों की अपेक्षा K^+ के लिए अधिक पारगम्य होती हैं।

हमने अनुभाग 12.3.1 में उल्लेख किया था कि आयन अंतर्ग्रहण विशिष्ट होते हुए भी समान गुणों वाले आयनों से धोखा खा सकता है ऐसा सम्भव लगता है कि कुछ वाहक प्रोटीनें एक ही स्थल (site) पर एक से अधिक, आयनों का परिवहन करती हैं और इसलिए आयन एक दूसरे से प्लैज़्मा झिल्ली पार करने में स्पर्धा करते हैं। उदाहरण के लिए K^+, Cs^+, Rb^+ के परिवहन के लिए एक ही स्थल होता है और Na^+ तथा K^+ दोनों का ही परिवहन दूसरे स्थल पर होता है। लेकिन भिन्न भिन्न स्थलों पर परिवहन की जाने वाली आयनें एक दूसरे से स्पर्धा नहीं करती; उदाहरण के लिए K^+ की Na^+ से स्पर्धा नहीं होती।

आयनधरें (ionophores) द्वारा भी शायद पौधों में आयन परिवहन होता है। आप जानते हैं कि आयनधर छोटे पॉलिपेप्टाइड और प्रोटीन होते हैं जो आयनों के आवेश की झिल्ली जल विरोधी पर्यावरण से रक्षा करते हैं। अभी तक आयनधर जीवाणुओं और कवकों से विलग किए गये हैं। जब यह कृत्रिम लिपिड द्विपरतों पर डाले जाते हैं तो ये विशिष्ट आयनों की विसरण दर को 10 लाख गुना तक बढ़ा देते हैं।

प्रेरक बल

आइए अब मालूम करें कि प्रोटीनों के माध्यम से होने वाले परिवहन में कौन सा प्रेरक बल शामिल है। अनेक झिल्ली परिवहन प्रोटीने विशिष्ट विलेयों को लिपिड द्विपरत के पार जाने देती है। अगर परिवाहित अणु आवेशित नहीं है तब झिल्ली के दोनों तरफ इसकी सांद्रता अर्थात् इसकी सांद्रण-प्रवणता परिवहन की दिशा तय करती है। लेकिन, अगर परिवहन किए जाने वाला विलेय नेट, आवेश वाला है, तो झिल्ली के पार इसकी सांद्रण प्रवणता और कुल विद्युत-प्रवणता इसके परिवहन को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए आयन किसी झिल्ली के पार तभी जाएगा जब झिल्ली के पार पर्याप्त विद्युत-प्रवणता हो भले ही सांद्रण-प्रवणता इस प्रकार की गति के अनुकूल न हो। दूसरे शब्दों में, गति की दिशा दोनों में से उस बल से तय होती है जो सबसे प्रबल है। दोनों प्रवणताओं से मिलकर विद्युत रासायनिक प्रवणता (electrochemical gradient) बनती है। कुछ हद तक प्रवणता झिल्ली की वरणात्मक पारगम्यता के कारण बनती है। इस प्रकार धनायन का संबंधित विसरण ऋणायन से अधिक हो सकता है अथवा इसके विपरीत भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, निकटतम बहिर्भाग में Cl^- की अपेक्षा K^+ अधिक तेजी से विसरित होता है और इसलिए कोशिका में अत्यधिक Cl^- कोशिका को ऋण आवेश देता है।

दरअसल सभी प्लैज्मा झिल्लियों के आरपार विद्युत विभव होता है जिसे पारझिल्ली विभव (transmembrane potential) कहते हैं जिसमें कोशिका का भितरी भाग उसके बाहर के भाग की अपेक्षा अधिक ऋणात्मक होता है। ऐसा आयनों, विशेषतया H^+ आयनों का, कोशिका के बाहर सक्रिय परिवहन होने के कारण होता है। यह विभव अन्तर धनात्मकरूप से आवेशित आयनों को तो कोशिका के अन्दर जाने देता है लेकिन ऋणात्मकरूप से आवेशित आयनों के प्रवेश का विरोध करता है।

कोशिका के भीतर विद्युत-विभव का, कोशिका के भीतर और बाहर आवेशित आयनों के वितरण से जो संबंध है उसे नेर्न्स्ट समीकरण (Nernst equation) से समझाया गया है। आप कोशिका जैविकी पाठ्यक्रम (इकाई 7, अनुभाग 7.4) में इस समीकरण को पढ़ चुके हैं। पारझिल्ली विभव को शीशे के बहुत सूक्ष्म इलेक्ट्रोड (microelectrod—μm व्यास वाली) से मापना सम्भव है। पौधों में कोशिका रसधानी और कोशिकीय बहिर्भाग के विभव में अन्तर मापने के लिए, एक पतली नोकवाला बारीक आयन-वरणात्मक सूक्ष्म इलेक्ट्रोड कोशिका भित्ति और प्लैज्मा झिल्ली से होकर रसधानी में घुसेड़ दिया जाता है (चित्र 12.8)। दूसरी बड़ी मानक इलेक्ट्रोड ऊतक को डुबाए रखने वाले घोल में रखा जाती है। ऐसे मापों में 50 से 200 मिलीवोल्ट (mv) के बीच तक विस्तार वाले विभव अन्तर दर्शाये गये हैं। कोशिका का भीतरी भाग अधिक ऋणात्मक पाया गया है।

जब मुक्त रूप से भिन्न-भिन्न सांद्रण वाले विसरित हो रहे (diffusing) आयनों को एक झिल्ली द्वारा अलग किया जाता है तब झिल्ली के पार एक वोल्टता (voltage) पैदा होती है। यह पारझिल्ली विभव कहलाता है।

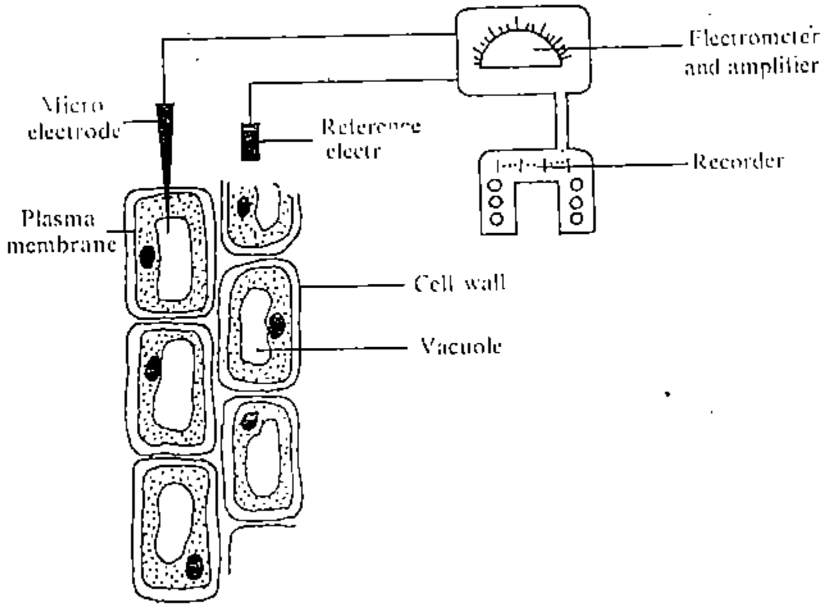

चित्र 12.8 : पादप कोशिकाओं के पार झिल्ली विभव को मापने के काम आने वाला उपस्कर (equipment)। (विवरण के लिए मूल पाठ देखिए)

सक्रिय परिवहन

हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं कि पारझिल्ली विभव कोशिका के बाहर आयनों (H^+) के सक्रिय परिवहन के कारण उत्पन्न होता है। यह परिवहन सांद्रण-प्रवणता की विपरीत दिशा में होने के कारण ATP के जल अपघटन (hydrolysis) की ऊर्जा का उपयोग करता है। प्रोटॉन पम्पन (proton pumping) से उत्पन्न प्रोटॉन (H^+) गतिदायी बल (motive force), विलेयों के परिवहन के लिए प्रेरक बल है। इन विलेयों में धनायन, ऋणायन, ऐमीनो अम्ल और शर्कराएं शामिल हैं। अविकल (intact) पादप कोशिकाओं के विद्युत-विभव और pH मापने से पता चलता है कि प्रोटॉन पम्प प्लैज्माझिल्ली पर स्थानगत (localised) रहते हैं।

परिवहन जिसमें एनर्जी का व्यय न हो को निष्क्रिय कहा गया है।

पादप प्लैज्मा झिल्ली ATPase एकल पॉलिपेप्टाइड शृंखला से बनी एक पारझिल्ली प्रोटीन है। ATP जल-अपघटन और प्रोटॉन परिवहन के बीच ज्यादा सम्भव युग्मन-क्रियाविधि (coupling mechanism) चित्र 12.9 में दिखाई गई है। एन्ज़ाइम दो संरूपणों (conformation) में होता है जिनके उत्प्रेरक (catalytic) और परिवहन गुणों में भिन्नता है। संरूपण I में परिवहन स्थल (site) साइटोप्लाज़्म के सामने होता है और इसमें प्रोटॉनों के प्रति अधिक बंधुता है। संरूपण II में, परिवहन स्थल बाहर की ओर अभिविन्यस्त (oriented) होता है और इसमें प्रोटॉनों के प्रति कम बंधुता है। एन्ज़ाइम को इन दो संरूपणों के बीच बारी-बारी से बदलते रहना पड़ता है और परिवहन किए

डाल्टन द्रव्यमान (mass) की एक यूनिट है जो ^{12}C के द्रव्यमान के 1/12 के तुल्य है। इस प्रकार ^{12}C का द्रव्यमान 12 डाल्टन है। डाल्टन को 1.66×10^{-24} ग्राम से गुना करके ग्राम में बदला जा सकता है।

जानेवाले प्रोटॉनों को बांधते और निर्मुक्त करते रहना पड़ता है क्योंकि दोनों में से कोई भी संरूपण पूरे उत्प्रेरक चक्र को प्रभावित नहीं कर सकता। संरूपण I में एन्ज़ाइम एक काइनेज़ (kinase) की तरह काम करता है। प्रोटॉन को बांधने के बाद यह फ़ास्फ़ोरिलीकृत माध्यमिक (phosphorylated intermediate) के निर्माण को उत्प्रेरित करता है। नई अवस्था (संरूपण II) में यह फ़ॉस्फ़ेटेस (phosphatase) के रूप में कार्य करता है। प्रोटॉन निर्मुक्त करने के बाद यह अपनी मूल अवस्था यानि संरूपण I में लौट आता है। इस प्रकार जब एक स्थायी अवस्था (steady state) आ जाती है तब एक प्रोटॉन प्रवणता बन जाती है जिसमें प्रोटॉनों का सांद्रण झिल्ली के बाहर की तरफ (अर्थात् कोशिका भित्ति क्षेत्र के चारों ओर) अधिक होता है और साइटोप्लाज़्म में कम होता है। इससे प्रोटॉन गतिदायी (proton motive force) बल उत्पन्न होता है। प्रोटोन पम्प का कुल परिणाम यह होता है कि प्लैज़्मा झिल्ली के बाहर के माध्यम की pH अधिक अम्लीय हो जाती है और साइटोप्लाज़्म की अधिक क्षारीय।

K^+ की उपस्थिति में ATP के जल-अपघटन को बढ़ावा देने वाले एन्ज़ाइम को भी पौधों से विलग कर लिया गया है यह एन्जाइम K^+ ion को, विशिष्ट स्थल पर बांधता है और बंधनकारी ATPase के संरूपण (conformation) को बदल देता है। ATP के जल-अपघटन के बाद यह अपने मूल संरूपण में लौट आता है और आयन, झिल्ली के दूसरी तरफ निर्मुक्त कर दिया जाता है। पादप कोशिकाओं में सक्रिय परिवहन दर्शाने वाला एक कार्यदर्शी मॉडल चित्र 12.9 में दिखाया गया है जिसमें H^+ स्थानान्तरित करने वाला ATPase प्लैज़्मा झिल्ली और टोनोप्लास्ट में स्थित है।

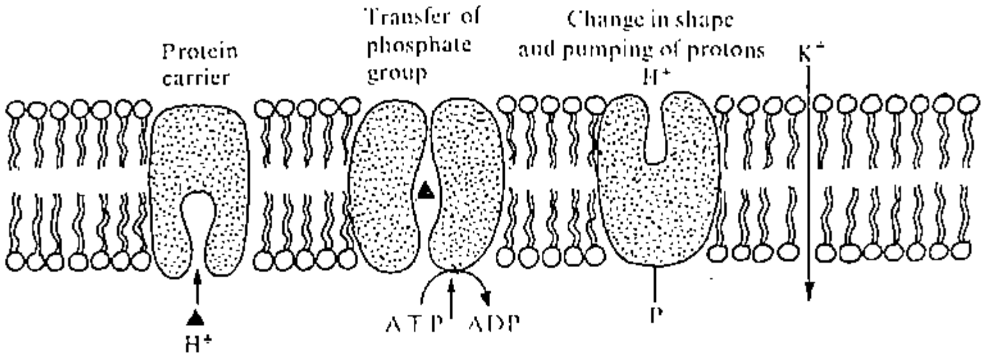

चित्र 12.9 : सक्रिय परिवहन का सरलीकृत चित्र। झिल्ली के पार प्रोटॉनों का परिवहन धनायनों की विपरीत दिशा में परिवहन से युग्म होता है। परिवहन प्रोटीन को ATP से बढ़ावा मिलता है जिससे इसके आकार में परिवर्तन होता है जो परिवहन प्रक्रम के लिए जरूरी है।

रेडियोएक्टिव आइसोटोप (isotope) काम में लाते हुए K^+ के अंतर्ग्रहण की दर के अध्ययन से पता चलता है कि अंतर्ग्रहण एन्ज़ाइम-सबस्ट्रेट अभिक्रिया वक्र (curve) से मिलता-जुलता है और इसमें शामिल प्रोटीन वाहक विशिष्टीकृत झिल्ली-आबंद्ध एन्ज़ाइमों की तरह व्यवहार करते हैं। आयनों के उच्च सांद्रण पर वाहक स्थल संतृप्त (saturated) हो जाते हैं, इसलिए घोल में आयनों की सांद्रता बढ़ने से अंतर्ग्रहण में वृद्धि नहीं होती। वाहक के बंधन स्थलों का भी स्पर्धी संदमकों (inhibitors) द्वारा संदमन हो सकता है।

प्रोटॉन पम्पन से इस प्रकार उत्पन्न पारझिल्ली विभव, विशिष्ट वाहक या आयन चैनल प्रोटीनों द्वारा धनायनों, ऋणायनों, ऐमीनों अम्लों और शर्कराओं की अनुवर्ती गति के लिए प्रेरक बल देता है। पोषवाह कोशिका के भीतर और बाहर सुक्रोस की गति एक परमीएस द्वारा H^+ सिम्पोर्ट (symport) के साथ-साथ होती है। जड़ों में अक्सर हाइड्रोजन की K^+ से अदला बदली होती है। आयन चैनल व प्रोटॉन एन्टीपोर्ट टोनाप्लास्ट में भी होते हैं इनके द्वारा कई आयन और उपापचयज पादप कोशिका रसधानी में एकत्रित हो जाते हैं (चित्र 12.10)।

एन्ज़ाइम की प्रोटॉन पम्पन क्रिया अंतराकोशिका pH, पोषक अंतर्ग्रहण, स्फीति, कोशिका वृद्धि, मूल दारु में पोषकों का भारण (loading) यानि भरना, पर्ण पोषवाह का कार्बनिक पोषकों से भरण, रंध्रों और पर्णवृंततल्पों (pulvine) की गति के लिए उत्तरदायी स्फीति परिवर्तन, कोशिका दैर्ध्यवृद्धि (elongation) और कोशिका भित्ति संश्लेषण के नियमन, हार्मोनों विशेषतया आई ए ए (IAA--

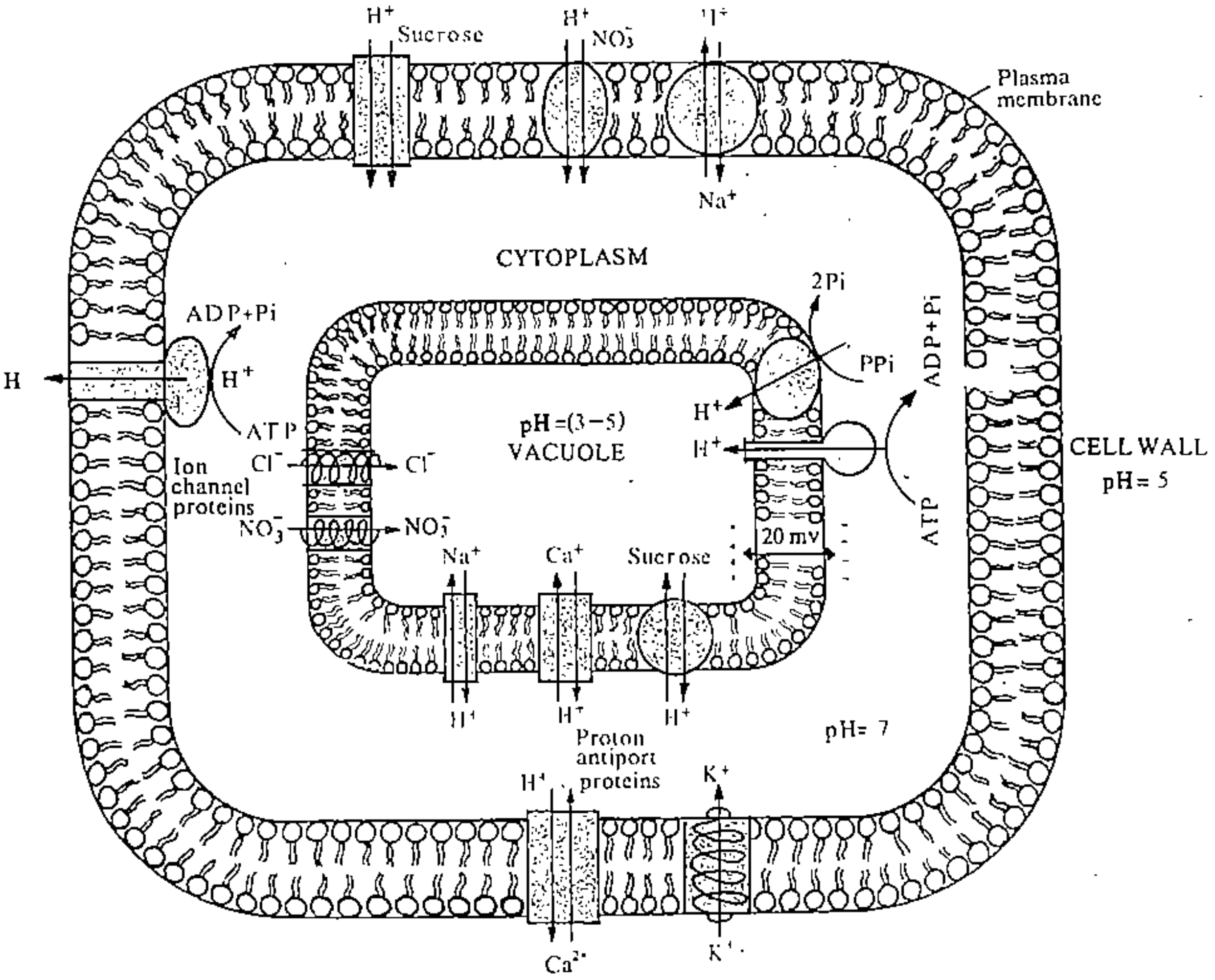

चित्र 12.10 : कोशिका और रसधानी की प्लेज्मा झिल्ली द्वारा आयनों का परिवहन। नोट करें कि झिल्ली में दो प्रकार के प्रोटॉन पम्प है। एक ATPase प्रोटॉन पम्प व दूसरा अनन्य पायरो फ़ॉस्फ़ेट अपघटित करने वाला प्रोटॉन पम्प। रसधानी का pH प्रोटॉन की गति से कम हो जाता है।

indole acetic acid) के प्रति प्रारंभिक अनुक्रिया और बहुत से दूसरे प्रकार्यों का नियंत्रण करती है। अब प्रोटॉन पम्प विलगित कर लिया गया है और इसके जैव रासायनिकतः लक्षण मालूम कर लिए गए हैं।

12.4.3 जड़ों में आयनों की अरीय गति

सिम्प्लास्टिक और एपोप्लास्टिक मार्गों से आयनों की अरीय गति का व्यवस्था-आरेख पिछली इकाई में चित्र 11.9 में दिखाया गया है। जैसे-जैसे पोषक कोशिका भित्ति और वाह्यत्वचीय कोशिकाओं तथा वल्कुट-कोशिकाओं के अंतराकोशिका अवकाशों के साथ-साथ आगे बढ़ते हैं, कुछ पोषक इन कोशिकाओं द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं और ये प्लैज़्मोडेस्मेटा द्वारा सिम्प्लास्टिक मार्ग में घुस जाते हैं। अंतस्त्वचीय कोशिकाओं की झिल्लियां बाकी आयनों का सन्निरीक्षण (screening) कर लेती हैं। ये झिल्लियां अवशोषण की दर और अवशोषित विलेय की किस्म का नियंत्रण करती हैं। इनमें से कुछ विलेय रसधानी के भीतर परिवाहित कर दिए जाते हैं जहाँ वे जड़ों के ऋणात्मक परासरणी विभव (negative osmotic potential) में बहुत ज्यादा योग देते हैं जिससे जल अंतर्ग्रहण, स्फोति दाब और मिट्टी में जड़ों की वृद्धि सुगम हो जाती है।

विभिन्न आयनों द्वारा एपोप्लास्टिक और सिम्प्लास्टिक मार्ग के वरणात्मक (preferential) उपयोग के बारे में स्पष्ट रूप से पता नहीं है। ^{86}Rb और ^{36}Cl के सक्रिय रेडियो आइसोटोप से पानी के पौधे *वैलिस्नेरिया (Vallisneria)* पर किए गए प्रयोगों से पता चला कि ये आयनें शायद प्लैज़्मोडेस्मेटा से होकर केवल सिम्प्लास्टिक मार्ग अपनाती हैं। अभी तक प्लैज़्मोडेस्टमेटा की भूमिका

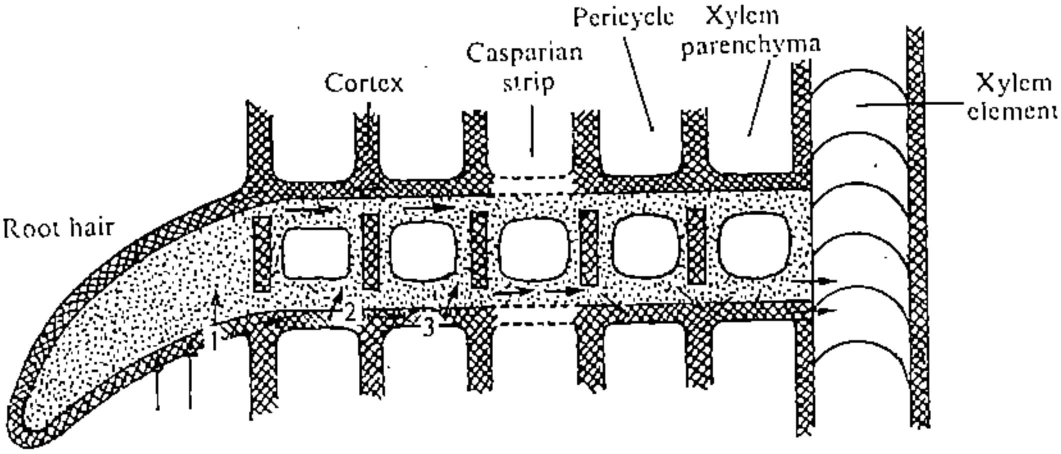

चित्र 12.11 : व्यवस्था आरेख जिसमें जड़ की अनुप्रस्थ काट (cross section) में एपोप्लास्ट और सिम्प्लास्ट दिखाए गए हैं। अत्यधिक बिन्दुचित्रित क्षेत्र एपोप्लास्ट वाले हैं जबकि हल्के बिन्दुचित्रित क्षेत्र सिम्प्लास्ट के हैं। रसधानी दोनों में से किसी भी तंत्र का भाग नहीं है। कैस्पेरी पट्टी एपोप्लास्ट में विच्छिन्नता पैदा करती है। इसलिए, मूल रोमों द्वारा अवशोषित सभी आयनों को कैस्पेरी पट्टी से बाहर कोशिका (1, 2 और 3) की प्लैज़्मा झिल्ली को जरूर पार करना पड़ता है। तब वे सिम्प्लास्ट में घुसते हैं।

निश्चित करना तकनीकी रूप से कठिन रहा है। लेकिन जिन क्षेत्रों में परिवहन सक्रिय होता है वहाँ उनकी उपस्थिति अप्रत्यक्ष रूप से यह संकेत देती है कि आयन उनमें से होकर सिम्प्लास्टिक मार्गों में जाते हैं।

जौ की पौद (seedling) में ^{45}Ca के α-विकिरण समस्थानिकों (isotopes) के उपयोग द्वारा किए गए अध्ययनों ने दिखाया कि Ca^{2+} वरणात्मकतः एपोप्लास्टिक मार्ग के साथ-साथ परिवहन करता है और साइटोप्लैज्म में इसका सांद्रण न्यूनतम रहता है। ऐसा इसलिए है कि यह कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों ही तरह के फ़ॉस्फ़ेटों को कोशिकाओं के भीतर ही अवक्षेपित (precipitate) कर सकता है। Mg^{2+} भी एपोप्लास्टिक मार्ग से धीरे-धीरे चलता है।

मार्ग भले ही कोई भी हो, सिम्प्लाज़्म से होकर अरीय गति से खनिज तत्व और अन्य विलेय रंभ (stele) को पहुंच जाते हैं जहाँ वे दारु में छोड़ दिए जाते हैं। स्थानांतरण एक ऐसा प्रक्रम है जिसमें ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है और जिसमें दारु मृदूतक (xylem parenchyma) एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह क्रियाविधि लगभग वैसी ही है जैसी कोशिका के भीतर पोषकों के भारण के लिए ऊपर बतलाई गई है और इसमें वाहक प्रोटीन शामिल हैं।

12.4.4 लम्बी दूरी तक परिवहन

खनिज तत्व एक बार दारु वाहिकाओं में पहुंच भर जाएं, फिर तो जड़ से प्ररोह तक उनका परिवहन जलस्थैतिक दाब (मूल दाब) की प्रवणता और जल विभव की प्रवणता से प्रेरित होता है। दिन के समय जब रंध्र खुले होते हैं तो आमतौर पर जड़ और प्ररोह के बीच पानी की प्रवणता अति प्रवण होती है। यह पैटर्न इस प्रकार होता है : वायुमंडल $<<$ पर्ण कोशिकाएं $<<$ दारु रस $<<$ मूल कोशिकाएं $<<$ बाह्य घोल (मृदा)। दारु वाहिकाओं में परिवहन मुख्य रूप से एकदिशीय होता है। वाष्पोत्सर्जन दर में वृद्धि से दारु में खनिज तत्वों का अंतर्ग्रहण और स्थानांतरण दोनों ही बढ़ जाते हैं।

मूल दारु से पत्तियों तक आयनों का पार्श्व परिवहन सम्भवतया बरास्ता दारु स्थानांतरण कोशिकाओं (xylem transfer cell) से होता है (चित्र 12.12) जिसके दो विशेष लक्षण हैं

i) दारु के सामने वाली इन कोशिकाओं की भित्ति बहुत अच्छी तरह वलिमय (corrugated) होती है ताकि अवशोषण के लिए बड़ी सतह वाले क्षेत्र मिल सकें।

ii) कोशिकाओं में अनेक माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं जो वलिमय भित्ति के निकट स्थित होते हैं। माइटोकॉन्ड्रिया इन भित्तियों के पार होने वाले सक्रिय परिवहन को ATP सप्लाई करते हैं।

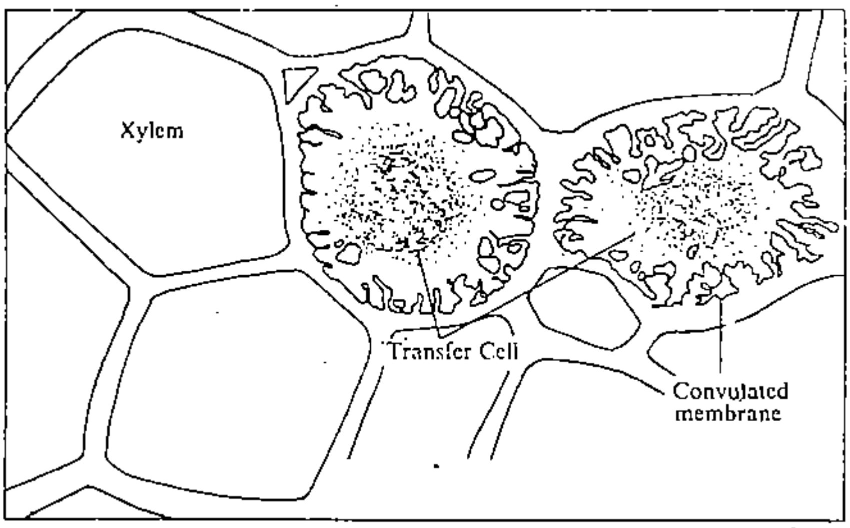

चित्र 12.12 : एक द्वार स्थानांतरण कोशिका।

जहाँ चालक (conducting) कोशिकाओं या संग्रह कोशिकाओं के भीतर तथा बाहर आयनों या कार्बनिक विलेयों की बड़ी मात्रा गति करती है उन जगहों पर भी स्थानांतरण कोशिकाएं होती हैं। पोषवाह परिवहन पर इकाई 14 में आप स्थानांतरण कोशिकाओं के बारे में और भी जानकारी प्राप्त करेंगे।

जो खनिज तत्व पोषवाह में गतिशील होते हैं उन्हें प्ररोह से जड़ तक बरास्ता पोषवाह द्वारा पुनः स्थानांतरित किया जा सकता है, हालांकि पोषवाह में मुख्य स्थानांतरित यौगिक सुक्रोस और अन्य कार्बनिक यौगिक होते हैं। पोषवाह में होने वाला परिवहन द्विदिशिक (bidirectional) है। परिवहन की दिशा विभिन्न पादप अंगों (organs) या ऊतकों की पोषण-आवश्यकताओं से तय होती है।

बोध प्रश्न 3

क) नीचे दिए गए कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।
   i) विसरण के लिए प्रेरक बल .... है।
   ii) पौधों में प्रोटॉन पम्प एक ए टी पी जल अपघटनी एन्जाइम है जो .... कहलाती है।
   iii) जब प्रोटॉन पम्प काम करता है तब प्रोटॉनों का कोशिका के साइटोप्लाज्म से .... की तरफ परिवहन होता है।

ख) निम्नलिखित वाक्यों में कोष्ठक में दिए गए सही शब्द पर सही का निशान (✓) लगाइए:
   i) अधिकांश झिल्लियाँ (K^+/Na^+) के लिए पारगम्य हैं।
   ii) जब कृत्रिम लिपिड द्विपरत (bilayer) में आयनधर डाले जाते हैं तब झिल्ली की पारगम्यता (घटती/बढ़ती) है।
   iii) झिल्ली के पार प्रोटॉनों का परिवहन एक विद्युत प्रवणता बना लेता है जो कि कोशिका के बाहर की तरफ (ऋणात्मक/धनात्मक) होता है।
   iv) प्रोटॉन पम्प के आपरेशन का सफल परिणाम यह होता है कि प्लैज्मा झिल्ली के बाहरी माध्यम का pH (अम्लीय/क्षारीय) बन जाता है।
   v) एपोप्लास्टिक मार्ग से वरणात्मकतः स्थानांतरित तत्व (पोटैशियम/कैल्सियम) है।

12.5 अनिवार्य तत्वों की भूमिका

12.5.1 स्थूलपोषक

नाइट्रोजन, (N)

वायुमंडल में, नाइट्रोजन गैस (N_2) के रूप में होती है। इसका आयतन 79% तक होता है। लेकिन कुछ अपवादों को छोड़कर पौधे इसका उपयोग नहीं कर सकते। पौधों को मिट्टी से नाइट्रोजन

का बहुत थोड़ा सा अंश ही मिल पाता है। मृदा में उपलब्ध इसके रूप NO_3^- और NH_4^+ आयन हैं। मृदा में नाइट्रोजन के टर्न ओवर (turn over) को प्रभावित करने वाले अनेक कारक होते हैं इसलिए मृदा घोल में घुली हुई N की सांद्रता थोड़े से काल में ही काफी बदल सकती है। NO_3^- के बारे में तो यह विशेष रूप से सही है। सामान्यतया मृदा घोल में उपस्थित NO_3^- के अंश का पादप नाइट्रोजन पोषण में, प्रमुख महत्व है।

ऐमीनो अम्ल, प्रोटीन और न्यूक्लीक अम्लों जैसे महत्वपूर्ण कार्बनिक यौगिकों के लिए नाइट्रोजन एक अपरिहार्य मूल घटक है। शुष्क पादप पदार्थ में लगभग 2 से 4% N होती है। हरे पौधे के अंगों में प्रोटीन नाइट्रोजन पौधे की सम्पूर्ण नाइट्रोजन का सबसे बड़ा N प्रभाज (fraction) है और कुल नाइट्रोजन का 80 से 85% है। वानस्पतिक भागों में पाई जाने वाली प्रोटीनें मुख्यतया एन्ज़ाइम प्रोटीनें होती हैं जबकि बीजों और दानों में प्रमुख प्रोटीन प्रभाज विशेष संग्रह प्रोटीन का होता है। नाइट्रोजन विभिन्न सह-एन्ज़ाइमों (coenzymes) का भी एक अनिवार्य घटक है।

हालांकि पौधे नाइट्रेट आयन को तरजीह (preference) देते हैं लेकिन वे NH_4^+ भी अवशोषित कर सकते हैं। NH_4^+ उर्वरक डाले जाने पर भी फसलें मुख्य रूप से NO_3^- ग्रहण करती हैं। इसका कारण मिट्टी में NH_4^+ का NO_3^- में तेजी से सूक्ष्मजैविक ऑक्सीकरण (microbial oxidation) है। पौधों को नाइट्रोजन की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है इसलिए NO_3^- की अंतर्ग्रहण दर आमतौर पर बहुत ज्यादा होती है। NO_3^- और NH_4^+ आयन के अंतर्ग्रहण में महत्वपूर्ण अंतर pH के प्रति उनकी संवेदनशीलता (sensitivity) है। NH_4^+ का अंतर्ग्रहण उदासीन (neutral) माध्यम में सर्वोत्तम होता है और pH कम होने के साथ-साथ मंद हो जाता है। NO_3^- का अवशोषण इसके विपरीत होता है। निम्न pH मान पर इसका अंतर्ग्रहण अधिक तेजी से होता है। पौधे के ऊपरी अंगों से गैसीय अमोनिया भी रंध्रों द्वारा अवशोषित की जा सकती है।

पौधे में नाइट्रेट ऐमीनो अम्लों और प्रोटीनों में सम्मिलित होने से पूर्व अमोनिया में अपचित (reduced) किया जाता है। अगले खंड की इकाई 15, नाइट्रोजन के उपापचय में आप इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करेंगे।

जिस रूप में नाइट्रोजन का स्थानांतरण होता है वह इसके स्रोत और मूल की उपापचय पर निर्भर करता है। अवशोषित किये गये लगभग सारे NH_4^+ आयन मूल-ऊतक (root tissue) में स्वांगीकृत (assimilate) हो जाते हैं और ऐमिनो अम्लों के रूप में स्थानांतरित हो जाते हैं। प्ररोहों और पत्तियों में नाइट्रोजन नाइट्रेट के रूप में स्थानांतरित हो सकता है लेकिन यह जड़ों की नाइट्रेट अपचयन क्षमता पर निर्भर करता है। फलियों में जिस रूप में संयुक्त (fixed) नाइट्रोजन स्थानांतरित की जाती है वह इस बात पर निर्भर करती है कि यह शीतोष्ण (temperate) जलवायु में उग रही है अथवा उष्णकटिबंधीय (tropical) जलवायु में। शीतोष्ण जलवायु में यह मुख्यतया ऐमाइड, ऐस्पेराजीन और ग्लूटेमीन के रूप में स्थानांतरित होती है जबकि उष्णकटिबंधीय जलवायु में यह यूराइड, ऐलेन्टॉइन और ऐलेन्टोइक अम्ल के रूप में स्थानांतरित होती है।

जब जड़ों से नाइट्रोजन की सप्लाई अपर्याप्त होती है, तब पौधे के नए अंगों को पोषण देने के लिए यह पुरानी पत्तियों से गतिमान (mobalised) की जाती है। यही कारण है कि जो पौधे नाइट्रोजन की कमी के शिकार होते हैं, उनकी पुरानी पत्तियों में कमी के लक्षण सबसे पहले दिखाई देते हैं।

नाइट्रोजन की कमी से वृद्धि दर कम हो जाती है। पत्तियाँ छोटी हो जाती हैं और पुरानी पत्तियाँ प्रायः अपरिपक्व अवस्था में ही गिर जाती हैं। प्ररोह की वृद्धि भी प्रभावित होती है और विशेषतया शाखन (branching) सीमित हो जाता है। नाइट्रोजन की कमी वाली पत्तियों में हरिमाहीनता (chlorosis) नजर आने लगती है जिसका प्रभाव आमतौर पर पूरी पत्ती पर समान रूप से वितरित रहता है। जब कमी अत्यधिक होती है तो पत्तियों में ऊतकक्षय (necrosis) होने लगता है। Fe, Ca की कमी से उत्पन्न लक्षणों में भी पत्तियाँ पीली सी और फीकी पड़ जाती हैं जैसा कि नाइट्रोजन की कमी से होता है। लेकिन एक अंतर यह है कि इनकी कमी से होने वाले ये लक्षण नई पत्तियों में पहले पैदा होते हैं। अनाज में नाइट्रोजन की कमी से जो लक्षण दिखाई देने लगते हैं, वे हैं — घटिया तलशाखन

(tillering), प्रति यूनिट क्षेत्रफल बालियों (ears) की संख्या में कमी और प्रति बाली दानों की संख्या में भी कमी।

मृदा में पोषक संबंधी जितने भी सुधार किए गए हैं उन सबमें फसल उत्पादन बढ़ाने में नाइट्रोजन उर्वरक अनुप्रयोग (application) सबसे ज्यादा सफल रहा है। विशेषतया अधिक उत्पादन वाली फसल कृषि जोप जाति (cultivars) पर N-उर्वरकों का अच्छा असर पड़ता है। धान्य की फसलों में नाइट्रोजन का उत्तम क्रियात्मक उपयोग उस समय होता है जब अंतर्ग्रहण की जाने वाली नाइट्रोजन की बड़ी मात्रा दाने बनाने में काम आती है।

सर्वाधिक सामान्य उर्वरक सारणी 12.4 में दिये गये हैं।

सारणी 12.4: नाइट्रोजन उर्वरक

उर्वरक	सूत्र	%N
अमोनियम सल्फ़ेट	$(NH_4)_2SO_4$	21
अमोनियम क्लोराइड	NH_4Cl	26
अमोनियम नाइट्रेट	NH_4NO_3	35
पोटैशियम नाइट्रेट	KNO_3	14
यूरिया	$CO(NH_2)_2$	46
कैल्सियम सायनेमाइड	$CaCN_2$	21
निर्जल अमोनिया	NH_3	82

नाइट्रोजन उर्वरक मिट्टी को NO_3^- और NH_4^+ सप्लाई करते हैं। इन दोनों में से NH_4^+ मृदा कोलॉइडों पर आंशिक रूप से अवशोषित हो जाते है और इसलिए इनकी अंतर्ग्रहण दर खेत की परिस्थितियों में NO_3^- की अपेक्षा कम है। यही कारण है कि अधिकांश फसलें NH_4^+ उर्वरकों के प्रति उतनी तेजी से अनुक्रिया नहीं दिखातीं जितनी कि NO_3^- के अनुप्रयोग के प्रति।

धान की मृदाओं में विनाइट्रीकरण (denitrification) के फलस्वरूप नाइट्रोजन की हानि होती है। इसलिए इन मृदाओं में ऐसे उर्वरक नहीं डाले जाने चाहिए जिनमें NO_3^- हो। इसलिए यूरिया और NH_4^+ वाले उर्वरकों का सुझाव दिया जाता है। निर्जल अमोनिया के बारे में मुख्य कठिनाई यह है कि इसके परिवहन और अनुप्रयोग के लिए विशेष उपस्कर (equipment) चाहिए।

फ़ॉस्फ़ोरस (P)

मिट्टी में फ़ॉस्फ़ोरस एकमात्र ऑर्थोफ़ॉस्फ़ेट के रूप में पाया जाता है। P की काफी मात्रा मृदा जैव पदार्थों से सम्बद्ध रहती है। मृदा घोल में HPO_4^{2-} और $H_2PO_4^-$, प्रमुख आयनें हैं जिनमें P होती है।

जड़ों में ऐसे घोल से फ़ॉस्फ़ेट अवशोषित करने की क्षमता होती है जिसमें फ़ॉस्फ़ेट की मात्रा कम होती है। जड़ों और दारु रस में फ़ॉस्फ़ेट की मात्रा मृदा घोल की अपेक्षा लगभग 100-1000 गुना अधिक होती है। इससे स्पष्ट है कि पौधे फ़ास्फ़ेट का अवशोषण एक बहुत अंतर (steep) वाली सांद्रण प्रवणता के विपरीत करते हैं। पौधों में फ़ास्फ़ेट अत्यधिक गतिशील है और यह दोनों दिशाओं ऊपर तथा नीचे की ओर स्थानांतरित किया जा सकता है।

पौधों में पाए जाने वाले फ़ॉस्फ़ेट के अकार्बनिक रूप ऑर्थोफ़ॉस्फ़ेट और कुछ सीमा तक पाइरोफ़ॉस्फ़ेट हैं। फ़ास्फ़ेट के कार्बनिक रूप वे यौगिक हैं जिनमें ऑर्थोफ़ॉस्फ़ेट शर्कराओं और ऐल्कोहॉल के हाइड्रॉक्सिल समूह से एस्टरीकृत (esterified) हो जाता है या पाइरोफ़ॉस्फ़ेट आबंध द्वारा दूसरे फ़ॉस्फ़ेट समूह से बंध जाता है। आप जानते हैं कि फ़ॉस्फ़ोरिलीकृत शर्कराएं और ऐल्कोहॉलें उपापचय के प्रमुख मध्यस्थ यौगिक हैं। फ़ॉस्फ़ोलिपिडों में भी फ़ॉस्फ़ेट होता है। ATP, UTP, GTP, CTP, जैसे न्यूक्लीओटाइड फ़ॉस्फ़ेट विभिन्न ऊर्जाशोषी (endergonic) प्रक्रमों को ऊर्जा सप्लाई करते हैं। इन प्रक्रमों में सक्रिय आयन अंतर्ग्रहण और विभिन्न कार्बनिक यौगिकों का संश्लेषण शामिल है।

दूसरा महत्वपूर्ण यौगिक जिसमें फ़ॉस्फ़ोरस होता है फ़ाइटिन (phytin) है जो मुख्यतः बीजों में पाया जाता है। यह फ़ाइटिक अम्ल का Ca और Mg लवण है और यह बीजों के बनने के समय बनता है। दरअसल फ़ाइटिक अम्ल, नोसिटॉल (inositol) का हैक्साफ़ॉस्फ़ोरिक एस्टर है। परागण के तुरंत बाद P का परिवहन परिवर्धनशील (development) बीजों की तरफ बढ़ जाता है। फ़ाइटिन का फ़ॉस्फ़ोरस बीजों में P निचय (reserve) के रूप में होता है। बीज अंकुरण (germination) के दौरान फ़ाइटिन गतिशील हो जाता है और दूसरे फ़ॉस्फ़ेट रूपों में बदल जाता है। इन फ़ॉस्फ़ेट रूपों की तरुण पौधों के उपापचय में आवश्यकता होती है।

फ़ास्फ़ोरस की कमी से पीड़ित पौधों की वृद्धि मंद हो जाती है। अनाजों में तलशाखन (tiltering) कम हो जाता है। आमतौर पर P की कमी के लक्षण पुरानी पत्तियों में नजर आते हैं जिनका रंग गहरा हरा हो जाता। फ़ास्फ़ोरस से ग्रस्त अनेक एकवर्षी (annual) पादप जातियों (species) के तनों का रंग लाल हो जाता है। ऐसा अधिक ऐन्थोसाइएनिक वर्णक (anthocyanin pigment) बनने से होता है।

पोटैशियम (K)

पौधों को K प्राप्त करने का मुख्य स्रोत उन खनिजों का सूख जाना है जिनमें K होता है। सूख जाने से पोटैशियम निर्मुक्त होता है। वह मृदा कोलॉइडों के ऊपर अवशोषित मृदा घोल में घुल जाता है और तब पौधे इसका अंतर्ग्रहण कर सकते हैं।

पौधों में K^+ एक महत्वपूर्ण धनायन है झिल्लियों में उपस्थिति K^+ चैनल प्रोटीन से इसका अंतर्ग्रहण बहुत उच्च दर पर होता है।

साइटोप्लाज़्म में K^+ का सांद्रण लगभग 100mM है जो रसधानी में K^+ की सांद्रता से 5-10 गुना ज्यादा है। फ्लोएम रस K^+ से भरपूर होता है। फ्लोएम में मौजूद यह सबसे ज्यादा प्रचुर धनायन है। इसका सांद्रण साइटोप्लाज़्म वाली सांद्रता के बराबर सा है, फ्लोएम रस के विलेय पौधे में ऊपर और नीचे दोनों ही ओर स्थानांतरित हो सकते हैं इसलिए K^+ की गति द्विदिशीय है।

मेरिस्टेमेटिक वृद्धि के लिए पोटैशियम जरूरी है। यह पौधों में पानी की स्थिति पर नियंत्रण रखता है और कोशिका स्फीति बनाए रखता है। जिन पौधों को K^+ की सप्लाई की जाती है उनमें वाष्पोत्सर्जन दर घट जाने के कारण जल-हानि कम होती है। जैसाकि आप पढ़ चुके हैं रंध्रों को बंद करने और खोलने में K^+ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जिन पौधों को K^+ की अपर्याप्त सप्लाई होती है उनकी रंध्रीय सक्रियता गड़बड़ा जाती है। प्रकाश संश्लेषजों (photosynthates) के स्थानांतरण में भी K^+ का हाथ है। K^+ का प्रमुख जैव रासायनिक प्रकार्य विभिन्न एन्ज़ाइमों का सक्रियण है।

पोटैशियम की कमी के लक्षण फौरन दिखाई नहीं देते। शुरू में सिर्फ वृद्धि दर में कमी आती है। हरिमाहीनता और ऊतकक्षय बाद में स्पष्ट होते हैं। शुरू में ये लक्षण आमतौर से पुरानी पत्तियों के अग्र भागों और उनकी कोर (margin) पर होते हैं। K^+ की कमी से पीड़ित पौधों में स्फीति कम हो जाती है। जल की कमी से तनाव (stress) के कारण वे आसानी से ढीले हो जाते हैं। इसलिए सूखे की परिस्थिति में प्रतिरोध (resistance) घट जाता है। अपर्याप्त K^+ स्तरों को, K^+ उर्वरकों के उपयोग से सुधारा जा सकता है। सबसे व्यापकरूप से काम में लाया जाने वाला और सबसे सस्ता पोटाश उर्वरक पोटैशियम क्लोराइड (KCl) है जो आम बाजारों में म्यूरिएट ऑफ पोटैश के नाम से बिकता है।

गंधक (S)

मिट्टी में गंधक अकार्बनिक और कार्बनिक रूप में मौजूद होती है। अधिकतर मृदाओं में कार्बनिक रूप से परिबद्ध S ही पौधों को उपलब्ध होने वाली गंधक का प्रमुख भंडार है। मृदा में S के अकार्बनिक रूपों में मुख्यतया SO_4^{2-} होता है। शुष्क (arid) प्रदेशों की मृदाओं में $CaSO_4$, $MgSO_4$ और Na_2SO_4 जैसे गंधक लवण भारी मात्रा में इकट्ठे हो जाते हैं। लेकिन आर्द्र (humid) परिस्थितियों में SO_4^{2-} या तो मृदा घोल में मौजूद होता है अथवा मृदा कोलॉइडों पर अवशोषित हो जाता है।

मृदा का कार्बनिक S पौधों को सूक्ष्म जैविको की सक्रियता से उपलब्ध होता है। खनिजन (mineralisation) के इस प्रक्रम में H_2S बनती है जिसमें ऑक्सीय (aerobic) परिस्थितियों में आसानी से स्वतः ऑक्सीकरण (auto-oxidation) हो जाता है और SO_4^{2-} बनता है। लेकिन अनॉक्सी (anaerobic) माध्यम में रसायनपोषित (chemotrophic) गंधक जीवाणु जैसे कि *बेजियाटोआ (Beggiatoa)* और *थायोथ्रिक्स (Thiothrix)* H_2S को तात्विक S में ऑक्सीकृत कर देते हैं। S के और अधिक ऑक्सीकरण से H_2SO_4 बन जाता है। इसके परिणामस्वरूप मिट्टी की अम्लता बढ़ सकती है।

पौधे, S को मुख्यतया SO_4^{2-} के रूप में अवशोषित करते हैं। यह मुख्यतया ऊपर की ओर (अग्राभिसारी — acropetal) स्थानांतरित होती है। S की नीचे की ओर (तलाभिसारी — basipetal) गति अपेक्षाकृत कम ही है। अब ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जिनसे ज्ञात होता है कि पौधे सल्फर डाइऑक्साइड को भी उपयोग में ला सकते हैं।

सबसे महत्वपूर्ण यौगिक जिनमें गंधक होती है वह सिस्टीन (cysteine), मेथाइओनीन (methionine) लिपोइक अम्ल (lipoic acid), सह-एन्जाइम A (coenzyme A), बायोटिन (biotin), थायमीन (thiamine) फेरेडॉक्सिन (ferredoxin) है। इनमें फेरेडॉक्सिन इलेक्ट्रॉन वाहक है (एक प्रकार की नॉन-हीम लोह-गंधक प्रोटीन)। आप जानते हैं कि S पॉलिपेप्टाइडों में डाइसल्फाइड योजक (bridge) बनाती है।

खेतों में उगी फसलों में कभी-कभी गंधक और नाइट्रोजन की कमी में फर्क करना मुश्किल होता है। S की कमी से पीड़ित पौधों में पादप वृद्धि की दर घट जाती है। आमतौर पर जड़ों की वृद्धि की अपेक्षा प्ररोहों की वृद्धि पर अधिक असर पड़ता है। परन्तु नाइट्रोजन कमी के विपरीत हरिमाहीनता के लक्षण पहले नई कोपलों यानि अभी हाल ही निकली पत्तियों में दिखाई पड़ते हैं।

अनेक पादप जातियों में वाष्पशील (volatile) यौगिकों की थोड़ी मात्रा होती है। ये मुख्यतया डाइसल्फाइड या पॉलिसल्फाइड होते हैं। प्याज में ये यौगिक अश्रुकारी (lachrymatory) प्रभाव के लिए उत्तरदायी हैं। लहसुन के तेल का प्रमुख घटक डाइऐलिल डाइसल्फाइड है।

हालांकि फसलों में S के अंश P के समान ही होते हैं लेकिन S अनुप्रयोग की उतनी महत्वपूर्ण भूमिका नहीं है जितनी P उर्वरक की। इसका कारण यह है कि SO_4^{2-} मृदा कणों में उतनी मजबूती से परिबद्ध नहीं होती जैसे कि फ़ॉस्फ़ेट। इस प्रकार पौधों को SO_4^{2-} अधिक उपलब्ध होता है। इसके अतिरिक्त, S की भारी मात्रा वायुमंडल से भी आ सकती है अथवा उन उर्वरकों से प्राप्त हो सकती है जिनमें अन्य प्रमुख पोषकों के साथ-साथ S भी होता है जैसे कि अमोनियम सल्फ़ेट या पोटैशियम सल्फ़ेट। सबसे महत्वपूर्ण उर्वरक जिनमें गंधक होती है, वे हैं, जिप्सम, सुपरफ़ॉस्फ़ेट, अमोनियम सल्फ़ेट और पोटैशियम सल्फ़ेट।

कैल्सियम (Ca)

मृदाओं में Ca की मात्रा बहुत भिन्न-भिन्न होती है। पादप जातियों को कैल्सियमवासी या चूनावासी (calcicoles) और कैल्सियमभीरू या चूनाभीरू (calcifuge) में वर्गीकृत किया जा सकता है। कैल्सियमवासी जातियां वे हैं जो कैल्सियमी मृदाओं में उगती है जबकि कैल्सियमभीरू जातियां कम Ca वाली अम्लीय मृदाओं में उगती हैं।

सामान्यतया K^+ की अपेक्षा मृदा घोल में Ca^{2+} की सांद्रता लगभग 10 गुना अधिक होती है लेकिन K^+ की अपेक्षा Ca^{2+} की अंतर्ग्रहण दर आमतौर पर कम होती है। इसके कम अंतर्ग्रहण का कारण यह है कि Ca^{2+} केवल तरुण मूलाग्रों (root tips) द्वारा ही अवशोषित हो सकता है। ऐसे मूलाग्रों से जिनमें अंतस्त्वचा की कोशिकाभित्तियाँ अभी भी सुबेरिनमय (suberised) नहीं हुई हैं। Ca^{2+} का अंतर्ग्रहण, K^+ और NH_4^+ द्वारा भी स्पर्धी तौर पर मंद हो सकता है। K^+ और NH_4^+ को जड़ें बहुत जल्दी ग्रहण कर लेती हैं। कैल्सियम वाष्पोत्सर्जन-धारा के साथ दारु में ऊपर की दिशा में स्थानांतरित होता है। फ्लोएम में यह केवल बहुत ही थोड़े सांद्रण में स्थानांतरित होता है। एक बार पुरानी पत्तियों में निक्षेपित (deposited) हो जाने के बाद इसे वर्धी शीर्षों की ओर गतिशील नहीं किया जा सकता। Ca^{2+} की अनुपस्थिति में वृद्धि दर घट जाती है, और कुछ दिनों बाद मूलाग्र भूरे हो जाते हैं और धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं। कोशिका दैर्ध्यवृद्धि (elongation) और कोशिका विभाजन में Ca^{2+} की आवश्यकता पड़ती है। यह नई-नई संश्लेषित (synthesised) झिल्लियों

स्थायीकरण के लिए अनिवार्य हैं। Ca^{2+} की अनुपस्थिति में झिल्ली पारगम्यता (permeability) इस सीमा तक बढ़ जाती है कि अकार्बनिक और कार्बनिक घटक कोशिका के बाहर विसरित हो सकते हैं जिसके फलस्वरूप कोशिकाओं को बहुत ही ज्यादा क्षति हो सकती है। पूरे पौधे में यह अव्यवस्था पहले मेरिस्टेमेटिक ऊतकों में फैलती है। ये ऊतक हैं — मूलाग्र, ऊपरी पादप अंगों के वर्धी भाग और भंडारण अंग।

पादप ऊतकों में मौजूद अधिकांश Ca^{2+} एपोप्लास्ट और रसधानियों में स्थित होता है। साइटोप्लाज़्म में Ca^{2+} का सांद्रण कम होता है। निम्न साइटोप्लाज़्मीय Ca^{2+} बनाए रखना पादप कोशिका के लिए नितांत महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रमाणों से पता चलता है कि Ca^{2+} विभिन्न साइटोप्लाज़्मी एन्ज़ाइमों का संदमन (inhibition) कर सकता है और Ca-फ़ॉस्फ़ेट के रूप में भी अवक्षेपित (precipitate) हो सकता है। Ca^{2+} निम्न बनाए रखने के लिए Ca^{2+} को साइटोप्लाज़्म से बाहर एपोप्लास्ट में या रसधानी के भीतर पम्प किया जाता है।

साइटोप्लाज़्म में Ca^{2+} का प्रकार्य कॉलमोडलिन (calmodulin) से संबंधित है। कॉलमोडलिन एलोस्टेरिक प्रेरण (allosteric induction) द्वारा अनेक एन्ज़ाइमों के सक्रियण में शामिल है। पादप ऊतक में कैल्सियम कार्बोक्सिलिक, फ़ॉस्फ़ोरिक और फ़ीनॉलिक हाइड्रॉक्सिल समूहों जैसी अविसरणीय (indiffusible) आयनों पर मुक्त Ca^{2+} के रूप में अधिशोषित (adsorbed) होता है। यह Ca-ऑक्सेलेट, कार्बोनेट और फ़ॉस्फ़ेट के रूप में भी उपस्थित रहता है। ये यौगिक निक्षेपों के रूप में प्रायः कोशिका रसधानी में जमा रहते हैं। कोशिका भित्ति में कैल्सियम पेक्टिन के मुक्त कार्बोक्सिलिक समूहों से संबद्ध रहता है।

कैल्सियम की कमी के लक्षण है—मेरिस्टेमेटिक ऊतकों की वृद्धि घट जाना। कमी को पहले पहल वर्धी अग्रांगों और नई पत्तियों में देखा जा सकता है। वे विरूपित और हरिमाहीन हो जाती हैं। अधिक अग्रिम अवस्था में पत्तियों के कोरों पर ऊतकक्षय होने लगता है। कोशिका भित्ति के विलयन (dissolution) के कारण प्रभावित ऊतक नरम हो जाता है। अतः कोशिकी (intercellular) अवकाशों और संवहनी ऊतकों में भी भूरे रंग के पदार्थ संचित हो जाते हैं जहाँ वे परिवहन क्रियाविधि को प्रभावित कर सकते हैं। सेब में इस रोग को "गंभीर गर्त" (bitter pit) कहते हैं क्योंकि सेब की सतह पर छोटे भूरे ऊतकक्षयी धब्बे पड़ जाते हैं। टमाटर में यह रोग "पुष्पाग्र विलगन" ('blossom end rot') कहलाता है जिसमें फल के दूरस्थ भागो पर कोशिकीय भंजन (breakdown) हो जाता है।

मैग्नीशियम (Mg)

Ca^{2+} की तरह मैग्नीशियम भी मृदा में अच्छी खासी सांद्रता में होता है। सामान्यतया मृदा घोल में इसका सांद्रण K^+ की अपेक्षा उच्च होता है लेकिन Mg^{2+} के अंतर्ग्रहण की दर K^+ के अंतर्ग्रहण की दर की अपेक्षा बहुत निम्न है। फ्लोएम में Mg^{2+} बहुत गतिशील होता है और पुरानी पत्तियों से नई पत्तियों में अथवा शीर्ष तक स्थानांतरित किया जा सकता है।

Mg क्लोरोफिल अणु का एक संघटक है। यह लगभग सभी फ़ॉस्फ़ोरिलीकरण अभिक्रियाओं में एक सहकारक (cofactor) है। Mg^{2+} ए टी पी या ए डी पी की पाइरोफ़ॉस्फ़ेट संरचना और एन्ज़ाइम अणु के बीच एक सेतु बनाता है। Mg^{2+} द्वारा ए टी पीएस का सक्रियण, इस सेतु के बनने से होता है। Mg^{2+} का दूसरा मुख्य प्रकार्य रिबुलोस बिसफ़ॉस्फ़ेट (RuBP) कार्बोक्सिलेस का सक्रियण है। क्लोरोप्लास्ट की पीठिका (stroma) के भीतर H^+ के बदले में Mg^{2+} के आयात को प्रकाश प्रेरित करता है। इस प्रकार यह कार्बोक्सिलेस अभिक्रिया के लिए इष्टतम (optimum) परिस्थितियाँ उपलब्ध कराता है। Mg^{2+} की कमी प्रोटीन संश्लेषण का संदमन करती है।

Mg^{2+} पौधे में गतिशील है और इसकी कमी हमेशा ही पहले पुरानी पत्तियों में होती है और बाद में नई पत्तियों में । अंतराशिरीय (interveinal) पीलायन या हरिमाहीनता हो जाती है और चरम मामलों में क्षेत्र ऊतकक्षयी बन जाते हैं।

जिन मृदाओं में विनिमयशील (exchangeable) Mg, 25 ppm से कम भाग प्रति दस लाख होता है उनमें उगने वाली सभी फसलों के लिए Mg अनुप्रयोग की सिफारिश की जाती है। मेग्नीशियम चूना पत्थर ($MgCO_3$—5 से 20% MgO), भूदग्ध मैग्नीशियम चूना (Mg ऑक्साइड – 10 से 33% MgO) कीसेऑनाइट ($MgSO_4.H_2O$ – 27% MgO), एप्सम लवण ($MgSO_4$ $7H_2O$ – 16% MgO) और मैग्नेसाइट ($MgCO_3$ – 45% MgO) कुछ प्रमुख Mg उर्वरक हैं।

बोध प्रश्न 4

क) नीचे दिए गए वाक्यों में कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही शब्द पर सही का निशान (✓) लगाइए।

i) पौधा नाइट्रोजन के जिस रूप को तरजीह (preference) देता है वह (NH_4^+/NO_3^-) है।

ii) पौधे में मौजूद N का सबसे बड़ा अंश (fraction) (प्रोटीन/न्यूक्लीक अम्ल) के रूप में है।

iii) मृदा में (NO_3^-/NH_4^+) सूक्ष्मजैविक क्रिया द्वारा (NO_3^-/NH_4^+) में बदल दी जाती है।

iv) NH_4^+ का अंतर्ग्रहण उदासीन (neutral) माध्यम में सर्वोत्तम होता है। यह pH कम होने के साथ-साथ (घटता/बढ़ता) है।

v) (NH_4^+/NO_3^-) पौधों में प्रोटीन में सम्मिलित किए जाने से पूर्व (NH_4^+/NO_3^-) में बदला जाता है।

vi) नाइट्रोजन कमी के लक्षण पहले (पुरानी/नई) पत्तियों में दिखाई देते हैं।

vii) आमतौर पर मृदा में (Ca^{2+}/K^+) का सांद्रण उच्च होता है लेकिन अंतर्ग्रहण दर (Ca^{2+}/K^+) की उच्च है।

viii) कैल्सियम मुख्यतया (दारु/फ्लोएम) से स्थानांतरित होता है। यह पुरानी पत्तियों से नई पत्तियों में गतिशील (किया/नहीं किया) जा सकता है।

ix) (Mg^{2+}/K^+) की अपेक्षा (Mg^{2+}/K^+) की अंतर्ग्रहण दर कम है।

x) फ़ॉस्फ़ोरस की कमी (कार्बोहाइड्रेट/प्रोटीन) उपापचय को प्रभावित करती है।

xi) कुछ एकवर्षीय पौधों के तनों का रंग एन्थोसाइएनिन बनने के कारण लाल हो जाता है। ऐसा (फ़ॉस्फ़ोरस/गंधक) की कमी के कारण होता है।

xii) पौधों में फ़ॉस्फ़ोरस अत्यधिक (गतिशील/अचल) होता है।

xiii) पौधों में सबसे ज्यादा गतिशील पोषक तत्व (K/P) हैं।

xiv) K^+ की कमी के फलस्वरूप (झिल्ली पारगम्यता/स्फीति) में कमी आ जाती है।

ख) पौधे के चार महत्वपूर्ण यौगिक बताइए जिनमें गंधक होता है।

....

....

ग) कालम 1 की विषयवस्तु का कॉलम 2 की विषयवस्तु से मिलान कीजिए।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) मैग्नीशियम	क) कमी से कोशिका विभाजन और कोशिका दैर्घ्यवृद्धि प्रभावित होती है।
ii) कैल्सियम	ख) सभी फ़ॉस्फ़ोरिलीकरण प्रतिक्रियाओं में सह कारक (cofactor) है।
iii) गंधक	ग) सहएन्जाइम A का घटक (component) है।

12.5.2 सूक्ष्मपोषक

लौह (Fe)

लौह सभी मृदाओं में मौजूद होता है। मृदा में लौह की कुल मात्रा की तुलना में घुलनशील लौह अत्यधिक कम होता है। Fe^{+3}, $Fe(OH)^{2+}$ (हाइड्रॉक्सोफेरिक आयन), $Fe(OH)_2^+$ (डाइहाइड्रॉक्सोफेरिक आयन) और Fe^{2+} घुलनशील अकार्बनिक रूप हैं।

इससे पूर्व कि जड़ें लौह को ग्रहण कर सके इसका अपचित (reduced) होना आवश्यक है। जड़ों के मुक्त अवकाश में लौह आयन के रूप में या कीलेट रूप में मौजूद हो सकता है। Fe^{3+} कीलेट का अपचयन कीलेट कॉम्प्लेक्स को अस्थायी बना देता है और तब Fe^{2+} अवशोषित हो सकता है। Fe के अपचयन की दर pH पर निर्भर करती है और निम्न pH पर दर उच्च होती है।

लौह का अंतर्ग्रहण Mn^{2+}, Cu^{2+}, Ca^{2+}, Mg^{2+}, K^+, और Zn^{2+}, जैसे धनायनों से स्पर्धा के तौर पर संदमित किया जाता है। लौह विभिन्न पादप अंगों के बीच सहजरूप से गतिशील नहीं है। जिन हरे पौधों में Fe की कमी होती है उनके नए अंग हरिमाहीन हो जाते हैं जबकि पुराने भाग हरे बने रहते हैं। इसलिए नए अंग दारु के जरिए लौह की लगातार सप्लाई पर निर्भर हैं। राय है कि Fe जिस प्रमुख रूप में दारु में स्थानांतरित होता है, वह फेरिक सिट्रेट है।

Fe का सुप्रसिद्ध प्रकार्य एन्ज़ाइम तंत्रों में है जिनमें हीम प्रोस्थेटिक समूह बनाता है। यहाँ Fe कुछ कुछ वैसी ही भूमिका निभाता है जैसी कि क्लोरोफिल अणु में Mg की होती है। हीम एन्ज़ाइम तंत्रों में जैसे कि कैटालेस (catalase), परऑक्सीडेस (peroxidase) साइटोक्रोम ऑक्सीडेस (cytochrome oxidase) और विभिन्न साइटोक्रोमों में शामिल हैं। दूसरा महत्वपूर्ण यौगिक जिसमें Fe होता है नॉन-हीम लौह प्रोटीन "फेरोडॉक्सिन" है जो लौह-गंधक प्रोटीन है। यह प्रकाश संश्लेषण की प्रकाश अभिक्रियाओं में इलेक्ट्रॉन वाहक है।

Fe और Mg की कमी लगभग एक जैसी है। दोनों ही मामले में क्लोरोफिल का उत्पादन बंद हो जाता है। लेकिन लौह की कमी एक मामले में Mg की कमी से भिन्न है। यह नई पत्तियों में शुरू होती हैं। हल्की हरी या पीली पृष्ठभूमि में गहरी हरी शिराएं बहुत ही ज्यादा भिन्न दिखाई देती हैं। सबसे नई पत्तियाँ अक्सर पूरी तरह सफेद हो जाती हैं और इनमें क्लोरोफिल पूर्णतया नहीं होता। धान्यों की पत्तियों में Fe की कमी के कारण पत्ती की लम्बाई के साथ-साथ एक के बाद एक क्रम से पीली और हरी पट्टियाँ होती हैं।

जब मृदाएं जलाक्रांत (water-logged) हो जाती हैं तो Fe^{3+} का Fe^{2+} में अपचयन हो जाता है। इसके बाद घुलनशीलता बढ़ जाती है। अवायुजीवी जीवाणु श्वसन में Fe ऑक्साइडों को इलेक्ट्रॉनग्राही (electron acceptor) के रूप में काम में लाते हैं। यह अपचयन ये जीवाणु करते हैं। धान मृदाओं में यह प्रक्रम विशेष रूप से दिलचस्प है जहाँ इसकी वजह से Fe^{2+} की सांद्रता बढ़ जाती है।

आप्लावित (flooded) धान मृदाओं में लौह विषाक्तता विशेष रूप से एक समस्या है क्योंकि आप्लावन के कुछ सप्ताहों में ही यह 500 – 1000 गुना बढ़ सकती है। धान में लौह विषाक्तता "कांस्यन" (bronzing) कहलाती है। इस अव्यवस्था में पहले तो पत्तियाँ बारीक भूरे धब्बों से ढक जाती हैं। बाद में ये धब्बे बढ़कर एकसमान भूरे रंग के हो जाते हैं। यह धान की उन पत्तियों में बार-बार होता है जिनमें Fe की अत्यधिक सांद्रता होती है।

Fe हरिमाहीनता के उपचार के लिए, मृदा में अकार्बनिक Fe लवणों को डालने का प्रायः कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। इसका कारण यह है कि Fe तेजी से ऑक्साइडों के रूप में अघुलनशील बन जाता है। पत्तियों

का फेरस लवणों से उपचार भी कारगर साबित नहीं होता। लौह कीलेट अधिक प्रभावकारी होते हैं। ये उर्वरकों के रूप में मिट्टी में डाले जा सकते हैं अथवा पत्तियों पर फुहारे जा सकते हैं।

मैंगनीज (Mn)

Mn^{2+} और Mn ऑक्साइडों जिनमें Mn त्रिसंयोजक (trivalent) या चतुःसंयोजक (tetravalent) के रूप में होता है, वे रूप महत्वपूर्ण मृदा प्रभाज (fraction) हैं। मृदा घोलों में द्विसंयोजक Mn सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप है।

Mn^{2+} के जैव रासायनिक प्रकार्य Mg^{2+} से मिलते हैं। दोनों आयनें ए टी पी को एन्ज़ाइम कॉम्प्लेक्स से जोड़ती हैं। Mn^{2+} टी सी ए चक्र के डिहाइड्रोजेनेसों और डिकार्बोक्सिलेसों को भी सक्रियित कर देता है। फिर भी Mn^{2+} इन एन्ज़ाइमों के लिए विशिष्ट नहीं है और Mg^{2+} इसकी जगह ले सकता है। प्रकाश संश्लेषण की हिल अभिक्रिया (Hill reaction), हरे पौधों में Mn की भूमिका को सबसे अच्छी तरह स्पष्ट करती है। इस अभिक्रिया में एक मैंगनीज वाली प्रोटीन, जल विपाटन (splitting) और O_2 निकास को उत्प्रेरित करती है।

Mn की कमी क्लोरोप्लास्टों के पटलीय तंत्र (lamellar system) को विसंगठित करती है। Mn की कमी के लक्षण Mg की कमी से मिलते-जुलते हैं। दोनों ही मामले में पत्तियों में अंतराशिरीय हरिमाहीनता हो जाती है। लेकिन Mg की कमी के विपरीत Mn की कमी के लक्षण पहले नई पत्तियों में दिखाई देते हैं जबकि Mg की कमी में पुरानी पत्तियों पर पहले असर पड़ता है। जिन कार्बनिक मृदाओं में pH उच्च होता है उनमें उपलब्ध Mn विशेष रूप से निम्न होता है। इन मृदाओं में उगने वाली फसलों में प्रायः Mn की कमी हो जाती है। मिट्टी में Mn लवण जैसे कि $MnSO_4$ डालने से सामान्यता यह कमी कम नहीं होती क्योंकि डाला गया Mn^{2+} तेजी से ऑक्सीकृत हो जाता है। अधिकांश फसलों में कमी दूर करने के लिए 1 से 5 कि.ग्रा. $MnSO_4$/हेक्ट. का छिड़काव करना सर्वोत्तम साधन है। कार्बनिक Mn वाहकों में MnEDTA से सर्वोत्तम नतीजे प्राप्त होते हैं।

जस्त (Zn)

कुछ एन्ज़ाइम तंत्रों में Zn^{2+} का प्रकार्य Mn^{2+} से मिलता है। यह एन्ज़ाइम में सब्स्ट्रेट बंधन (binding) और संरूपीय (conformational) परिवर्तन करता है। इस प्रकार Mn^{2+} Mg^{2+}, या Zn^{2+} लगभग एक ही तरह से अनेक एन्ज़ाइमों को सक्रिय करते हैं।

Zn पौधे के N उपापचय में सक्रिय रूप से शामिल है। Zn की कमी वाले पौधों में प्रोटीन संश्लेषण और प्रोटीन स्तर बहुत ज्यादा गिर जाता है और ऐमीनों अम्ल तथा ऐमाइड संचित हो जाते है। Zn की कमी आर एन ए पॉलिमरेस (RNA polymerase) के निष्क्रियण से प्रोटीन उपापचय को

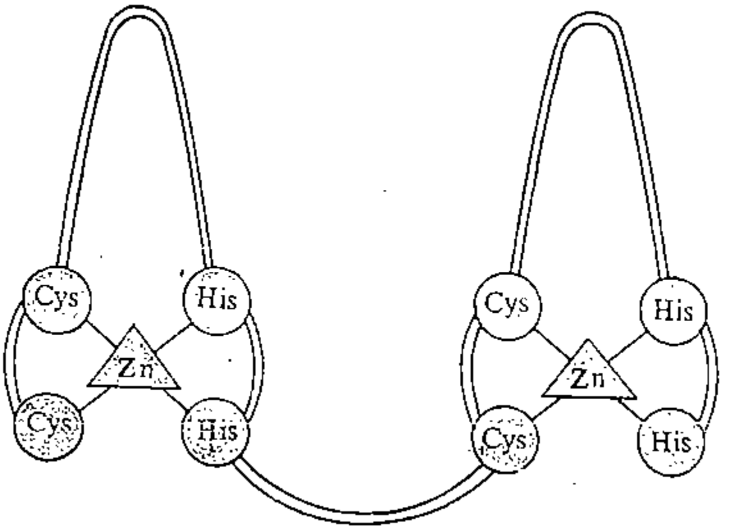

चित्र 12.13: प्रत्येक अंगुली में जिंक चार ऐमीनो अम्लों से बंधन बनाता है दो सिस्टीन व दो हिस्टिडीन। इस प्रकार DNA बंधन के लिए अंगुलियों को सही आकार में रखता है।

प्रभावित करती है। यह राइबोसोम के संरचनात्मक ढांचे को प्रभावित करता है और आर एनेस सक्रियता बढ़ाकर आर एन ए का निम्नीकरण (degradation) बढ़ा देता है। ट्रिप्टोफान से इन्डोल ऐसीटिक अम्ल (IAA) के संश्लेषण के लिए भी Zn की आवश्यकता पड़ती है।

जीन सक्रियण (gene activation) में जस्त द्वारा निभाई जाने वाली एक बहुत विशेष भूमिका अभी हाल ही में खोजी गई है पता चला है कि कुछ ऐसी प्रोटीनें हैं जो अनुखेलन कारकों (transcription factors) के रूप में कार्य करती हैं। ये उंगलियों के आकार में वलित (folded) रहती हैं। हर अंगुलि का तला जस्त संलग्नी होता है। यह दिलचस्प बात है कि जैसे ही अंगुलियाँ DNA को छूती हैं जीन का कार्य चालू हो जाता है।

Zn की कमी से पीड़ित पौधों की पत्तियों के अंतराशिरीय क्षेत्रों में प्रायः हरिमाहीनता दिखाई देती है। पत्तियाँ फीकी हरी, पीली या सफेद भी हो जाती हैं। फल देने वाले वृक्षों में पर्ण-परिवर्धन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। नए प्ररोहों के सिरों पर छोटी कड़ी पत्तियों के असमान रूप से वितरित गुच्छे या रोज़ेट (rosettes) बन जाते हैं। प्ररोह प्रायः मर जाते हैं और पत्तियाँ परिपक्व होने से पूर्व ही गिर जाती हैं। सेब के पेड़ों में इस रोग को "रोजेट रोग" या "लघु-पत्र रोग" (little leaf disease) कहते हैं।

Zn अयस्क (ore) निक्षेपों वाले क्षेत्रों में Zn विषाक्तता हो जाती है। लेकिन कुछ पादप जातियाँ Zn सह्य होती हैं और वे मृदा में Zn के उच्च स्तरों को भी बर्दाश्त कर सकती हैं।

Zn की कमी सबसे आम सूक्ष्मपोषक कमी है और यह अधिक उपज वाले कृषि क्षेत्रों में दिन-ब-दिन महत्वपूर्ण होती जा रही है। Zn की कमी के प्रति सुग्राही (susceptible) विभिन्न पादप जातियों और कृषि जोप (cultivars) जातियों में पर्याप्त भिन्नता होती है।

Zn उर्वरकों के छिड़काव या मृदा में अनुप्रयोग से Zn की कमी दूर की जा सकती है। $ZnSO_4$ की उच्च घुलनशीलता के कारण यह उर्वरक सामान्यतः काम में लाया जाता है। अम्ल बलुई मृदाओं में फसलों पर छिड़काव करना अधिक कारगर रहता है क्योंकि $ZnSO_4$ मिट्टी से बहुत आसानी से निक्षालित हो जाता है।

तांबा या ताम्र (Cu)

मृदा में तांबा लगभग द्विसंयोजक रूप में ही होता है। पौधे तांबे की बहुत थोड़ी सी मात्रा अवशोषित करते हैं। Zn तांबे के अंतर्ग्रहण का संदमन करता है और Cu जस्त का। यह निश्चित रूप से पता नहीं है कि तांबा Cu^{2+} के रूप में अथवा कॉपर कीलेट के रूप में ग्रहण किया जाता है। तांबा पौधे में जल्दी गतिशील नहीं होता हालांकि यह पुरानी से नई पत्तियों में स्थानांतरित हो सकता है।

तांबे में अनेक गुण होते हैं, जो इसके जैव रासायनिक व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। प्रोटीन से परिबद्ध (bound) Cu^{2+} रेडॉक्स अभिक्रियाओं में हिस्सा लेता है। ये अभिक्रियाएं संयोजकता (valancy) परिवर्तन पर निर्भर है। ($Cu^{2+} + e^- \rightarrow Cu^+$)

एन्ज़ाइम जिनमें तांबा होता है उनमें प्लैस्टोसायानीन, सुपरऑक्साइड डिस्म्यूटेस, ऐमीन ऑक्सीडेस, ऐस्कॉर्बिक अम्ल ऑक्सीडेस और लैक्टेस सबसे महत्वपूर्ण हैं। साइटोक्रोम ऑक्सीडेस माइटोकॉन्ड्रिया परिवहन श्रृंखला में टर्मिनल ऑक्सीडेस है। Cu धारण करने वाली एन्ज़ाइमों में इसका सबसे अच्छी तरह अध्ययन किया गया है। लौह की तरह क्लोरोप्लास्ट में Cu की उच्च सांद्रता पाई गई है। सहजीवी नाइट्रोजन-यौगिकीकरण में Cu की विशिष्ट आवश्यकता है। Cu की अनुपस्थिति में ग्रंथिका (nodule) परिवर्धन और N_2-यौगिकीकरण मंद हो जाता है।

Cu की कमी के लक्षण पहले तरुण पत्तियों में दिखाई देते हैं। अनाजों में कमी सबसे पहले पत्ती की नोक पर व्यक्त होती है। पौधे झाड़ीनुमा और शीर्ष ऐंठे हुए सफेद हो जाते हैं तथा पुष्पगुच्छ (panicle) कम बनते हैं। कॉपर कीलेट या तो पत्तियों पर छिड़काव के रूप में अथवा कमी पर काबू पाने के लिए मिट्टी को संवारने के काम में लाया जा सकता है।

मॉलिब्डेनम (Mo)

पौधे Mo को मॉलिब्डेट (MoO_4^{2-}) के रूप में अवशोषित करते हैं। SO_4^{2-} इसके अंतर्ग्रहण को स्पर्धा से घटा सकता है। जैसा कि तालिका 12.1 में दिखाया गया है कि पौधों को Mo की आवश्यकता बहुत थोड़ी होती है। Mo दो प्रमुख एन्ज़ाइमों का अनिवार्य घटक है। ये हैं — नाइट्रोजिनेस और नाइट्रेट रिडक्टेस। दोनों एन्ज़ाइमों की प्रकार्यात्मक क्रियाविधि सम्भवतया Mo की संयोजकता परिवर्तन पर निर्भर है। इकाई 15 में आप इन एन्ज़ाइमों के बारे में पढ़ेंगे।

पादप उपापचय में Mo का सबसे महत्वपूर्ण कार्य N_2-स्वांगीकरण (assimilation) है। Mo की कमी N की कमी से मिलती-जुलती है। पहले पुरानी पत्तियाँ हरिमाहीन हो जाती हैं। लेकिन N कमी के विपरीत ऊतकक्षयी लक्षण पत्तियों के कोरों पर तेजी से स्पष्ट होते हैं। ऐसा नाइट्रेट जमा हो जाने के कारण होता है। क्रूसिफ़ेरी में Mo की अत्यधिक कमी की स्थिति में, पत्ती के पटल (laminae) नहीं बनते और केवल मध्य शिरा (midrib) बनती है। पत्तियाँ चाबुक जैसी दिखाई देती हैं और इसी वजह से इस कमी को "कशा पुच्छ" ('whip tail') कहते हैं।

बोरॉन (B)

पौधे बोरॉन को सम्बद्ध बोरिक अम्ल के रूप में अवशोषित करते हैं। हालांकि यह निश्चित रूप से दिखाया जा चुका है कि उच्च कोटि के पादपों के लिए B एक अनिवार्य तत्व है फिर भी इसकी प्रकार्यात्मक भूमिका भलीभाँति नहीं समझी गई है। दूसरे पादप पोषकों से अलग B को किसी एन्ज़ाइम के घटक के रूप में नहीं जाना गया है।

शीर्ष वृद्धि (apical growth) का अपसामान्य होना या मंद वृद्धि होना B कमी का पहला लक्षण है। इससे नई पत्तियाँ झुर्रीदार या प्रायः मोटी और गहरे नीले हरे रंग की होती हैं। पत्तियाँ और तने भंगुर (brittle) बन जाते हैं जो वाष्पोत्सर्जन में गड़बड़ी का सूचक है। कमी के बढ़ने के साथ-साथ टर्मिनल वर्धी अंग मर जाते हैं और फूल तथा फल बनना सीमित या संदमित हो जाता है। पराग और पराग नलिकाओं के बनने में B की भूमिका ज्ञात है। इस तरह बोरॉन की कमी वाली मृदाओं में उग रहे पौधों में पराग अंकुरण में गड़बड़ी और फल बनने में रुकावट आती है। कुछ पादप जातियों में पराग की वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभाव से अनिषेकजनन (parthenogenesis) होने लगता है। चुकंदर में "क्राउन" (crown) और 'अंतः विगलन' (heart rot) B की कमी के जाने-माने लक्षण हैं।

किसी और सूक्ष्म पोषक की कमी की तुलना में बोरॉन की कमी बहुत तरह की फसलों में और विभिन्न प्रकार की जलवायु-परिस्थितियों में पाई जाती है। सर्वाधिक प्रसिद्ध B उर्वरक बोरेक्स ($Na_2 B_2 O_4 \cdot 10H_2O$) है। बोरेकृत (borated) सुपर फ़ॉस्फ़ेट भी उपलब्ध है। पत्तियों पर छिड़काव के रूप मे बोरिक अम्ल ($H_3 BO_3$) का अनुप्रयोग अक्सर किया जाता है, विशेष रूप से उस समय जब मृदा में भारी मात्रा में बोरॉन यौगिकीकरण की संभावित क्षमता होती है।

क्लोरीन (Cl)

पौधे में Cl^- की भूमिका साफ-साफ समझ में नहीं आई है। हिल अभिक्रिया, प्रकाश तंत्र II (photosystem II) में जल विपाटन में Cl^- की आवश्यकता पड़ती है। इसके बारे में आप इकाई 13 में पढ़ेंगे। Cl^- की उपस्थिति में O_2 का निकास और फोटोफ़ॉस्फ़ोरिलीकरण दोनों ही में संवृद्धि हो जाती है। Cl^- द्वार-कोशिका के रंध्र-नियंत्रण पर सीधे प्रभाव डालकर अप्रत्यक्ष रूप से प्रकाश संश्लेषण को भी प्रभावित करती है।

कोर पर पत्तियों का मुरझाना क्लोराइड की कमी का लक्षण है। Cl^- की कमी कभी-कभार ही देखने को मिलती है। वायुमंडल में और वर्षा के जल में Cl^- की उपस्थिति फसलों की मांग पूरा करने के लिए पर्याप्त है। सच तो यह है कि पौधों में इसकी अधिकता ही गंभीर समस्या है। लवण प्रभावित मृदाओं में उग रही फसलों में प्रायः Cl^- विषाक्तता के लक्षण दिखाई देते हैं। ये लक्षण हैं — पत्तियों की नोक या कोरों का दग्ध होना (burning), कांस्यन (bronzing), पत्तियों का समय से पहले पीला पड़ना और विलगन (abscission)।

सिलिकन (Si)

पादप जातियों को Si संचायकों (accumulators) और गैर-संचायकों (non-accumulators) में बांटा जा सकता है। संचायकों में धान चावल (*Oryza sativa*), हार्स टेल (*Equisetum arvense*) और पाइनेसी (pinaceae) के सदस्य शामिल हैं। इन सब में शुष्क पदार्थ में 10-15% SiO_2 होता है। दूसरे अनाज, ईख और अनेक द्विबीजीय (dicots) जिनमें SiO_2 1 से 3% होता

है वे भी इस श्रेणी में शामिल किये गये हैं। फलियों समेत अधिकांश द्विबीज पत्री जिनमें SiO_2, 0.5% से कम होता है गैर-संचायकों की श्रेणी में आते हैं।

पुरानी पत्तियों का ऊतकक्षय और वाष्पोत्सर्जन की ऊँची दर से सम्बद्ध पत्तियों का कुम्हलाना Si की कमी के विशिष्ट लक्षण हैं। जैव रासायनिक प्रमाण उपलब्ध न होने के कारण यह सिद्ध नहीं हो पाया है कि उच्च कोटि पादपों के लिए Si एक अनिवार्य तत्व है। लेकिन यह एक सुस्थापित तथ्य है कि यह पादप वृद्धि पर अनेक लाभदायक प्रभाव दर्शाता है। जिन पौधों में Si की सप्लाई अच्छी है उनमें सिलिका के बाह्यत्वचीय संचयन के कारण क्यूटिकली (cuticular) जल हानि कम हो जाती है। अनाजों में पत्तियों को सीधा खड़ा रखने और जीवाक्रांति के प्रति उनकी सुग्राह्यता कम करने के लिए सिलिकन की उपस्थिति महत्वपूर्ण है। चावलों में, भूसों में Si अंश और चावल की पैदावार के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध देखा गया है। सिलिकन चावल के जनन अंग के निर्माण को विशेष रूप से बढ़ावा देता है। घुलनशील सिलिकेट, सिन्टर फ़ॉस्फ़ेट और Ca सिलिकेट, धातुमल (slags) महत्वपूर्ण सिलिका उर्वरक हैं।

कोबाल्ट (Co)

मिट्टी में उगाए गए पौधों के शुष्क पदार्थ में Co सांद्रण लगभग 0.02 से 0.5 ppm (भाग प्रति दस लाख) होता है। मृदाओं में Co के अंश 1 से लेकर 40 ppm तक होते हैं। पौधे में कोबाल्ट आसानी से गतिशील नहीं होता।

सहजीवी N_2-यौगिकीकरण के लिए Co अनिवार्य है। Co की सप्लाई बढ़ाने से ग्रंथिकाओं (nodules) में राइजोबियल (Rhizobial) वृद्धि, N_2-यौगिकीकरण और लेगहीमोग्लोबिन (leghemoglobin) अधिक बनता है। Co विटामिन सायनोकोबालेमिन (cyanocobalamin) का अनिवार्य घटक है।

बोध प्रश्न 5

क) तीन तरह के अणुओं के उदाहरण दें जिनके प्रोस्थेटिक समूह में हीम लौह होता है।

....

....

....

ख) i) Mn आयन वाली प्रोटीन प्रकाश संश्लेषण के दौरान .... की अभिक्रिया को उत्प्रेरित (catalyse) करती है।

ii) जस्त की कमी .... के निम्नीकरण को बढ़ाती है और .... एन्ज़ाइम को निष्क्रिय बनाती है।

iii) हार्मोन .... के संश्लेषण के लिए जस्त की आवश्यकता होती है।

iv) कोशिका में Cu आयनें .... अभिक्रियाओं में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आयनें संयोजकता परिवर्तन द्वारा ऐसा करती हैं।

v) एन्ज़ाइम नाइट्रोजिनेस और नाइट्रोजन रिडक्टेस में .... तत्व होता है।

vi) .... एक अनिवार्य तत्व है लेकिन यह किसी भी पादप रसायन का घटक नहीं है।

vii) कुछ पौधों में बोरॉन की कमी के कारण फल .... से बनते हैं।

viii) प्रकाश संश्लेषण की .... अभिक्रिया में क्लोरीन की जरूरत पड़ती है।

ix) क्लोरीन की अधिकता से पत्ती की नोक और कोर .... हो जाती हैं, ... हो जाता है तथा समय से पूर्व ही पत्तियों में पीलापन आ जाता है और विलगन हो जाता है।

x) सहजीवी (symbiotic) नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए अनिवार्य तत्व .... और .... हैं।

ग) तीन महत्वपूर्ण यौगिक बताइए जिनमें Cu होता है।

....

....

....

....

12.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- पौधे के ताजा भार का औसतन 1.5 प्रतिशत भाग खनिज तत्व होते हैं। जो तत्व पौधों में पाए गए हैं वे सभी पौधे के लिए अनिवार्य नहीं हैं। अनिवार्य तत्व कुछ पादपों के अनिवार्य घटक (component) के संघटक (constituent) हैं और पौधे के जीवन-चक्र को पूरा करने के लिए आवश्यक हैं।
- तत्व C, H और O, कार्बनिक अणुओं के स्तंभ हैं। इनके अलावा पौधों को N, P, K, Ca, S और Mg की अपेक्षाकृत बड़ी मात्रा में आवश्यकता पड़ती है और इन्हें स्थूलपोषक (macronutrient) कहते हैं। इनकी तुलना में Fe, Cu, Mn, Zn, Cl, B और Mo की अपेक्षाकृत कम मात्रा में जरूरत पड़ती है और ये सूक्ष्मपोषक (micronutrient) कहलाते हैं।
- खनिज तत्व पौधों में संरचनात्मक, परासरणी (osmotic) और जैव रासायनिक प्रकार्य (biochemical functions) करते हैं।
- पौधे CO_2 और पानी से कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन प्राप्त करते हैं। दूसरे तत्वों को जड़ मृदा से आयनी रूप में अवशोषित करती हैं।
- मृदा की आयन विनिमय क्षमता, pH और विभिन्न धनायनों तथा ऋणायनों की उपस्थिति, जड़ों द्वारा मिट्टी से आयनों के अंतर्ग्रहण को प्रभावित करती हैं।
- खनिज तेजी से जड़ों के आंतरिक भाग की ओर या तो मूल बाह्यत्वचा, वल्कुट में अंतराकोशिकीय अवकाशों द्वारा जाते हैं अथवा बाह्यत्वचा या वल्कुट की वरणात्मकतः पारगम्य झिल्ली को पार करके जाते हैं तथा सिम्प्लाज्म से मिल जाते हैं। दारु वाहिकाओं तक पहुंचाने के लिए खनिजों को कोशिका झिल्लियों को अवश्य पार कर साइटोप्लाज्म से गुजरना पड़ता है। दारु उन्हें पानी के साथ-साथ ऊपर की ओर ले जाता है और पौधे के सभी अंगों तक उनका परिवहन करता है।
- लिपिड द्विपरत में प्रोटीनों की मदद से आयनों का परिवहन प्लैज्माझिल्ली के पार होता है। परमीएस जैसी कुछ प्रोटीनें आयन मार्ग बनाती हैं और दूसरी कुछ प्रोटीनें गतिशील अथवा स्थिर वाहकों (carrier) के रूप में प्रकार्य करती हैं। परिवहन का प्रेरक बल सांद्रण प्रवणता या विद्युतरासायनिक प्रवणता होती है। विद्युतरासायनिक प्रवणता के विरुद्ध आयनों की गति एक सक्रिय परिवहन प्रक्रम होती है और इसमें ऊर्जा की ATP के रूप में आवश्यकता पड़ती है। प्रोटॉन पम्प भी विद्युतरासायनिक प्रवणता बनाए रखते हैं। ये पम्प लगातार काम करते हैं और झिल्ली के पार झिल्ली विभव पैदा करते हैं और धनायनों, ऐमीनो अम्लों और शर्करा के परिवहन को सुगम बनाते हैं।
- जड़ से प्रोह तक की लम्बी दूरी का परिवहन द्रवस्थैतिक दाब की प्रवणता और जल विभव द्वारा प्रेरित होता है।

- नाइट्रेट और अमोनिया पौधों के लिए नाइट्रोजन के दो स्रोत हैं। इन दोनों में NO_3^- वरीय (preferred) स्रोत है और कम pH पर अवशोषित होता है। नाइट्रेट इसी रूप में स्थानांतरित हो सकता है या स्थानांतरण से पहले अपचित हो सकता है। इसकी कमी के लक्षण हैं — हरिमाहीनता जो पहले पुरानी पत्तियों में दिखाई देती है और पौधों में वृद्धि दर घट जाती है।
- पौधे फ़ॉस्फोरस को प्रवण (steep) सांद्रण प्रवणता के विरुद्ध अवशोषित करते हैं। P अत्यधिक गतिशील है। इसकी कमी एन्थोसाइएनिन वर्णकों (pigments) के बनने से और पुरानी पत्तियों का कालापन लिए हरी पड़ जाने से प्रकट होती है।
- पोटैशियम की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होती है क्योंकि यह कोशिका की स्फीति बनाए रखता है। इसकी कमी से सूखे के प्रति पौधों का प्रतिरोध (resistance) घट जाता है।
- गंधक, पौधों में अनेक यौगिकों का एक महत्वपूर्ण संघटक है। इसकी कमी के फलस्वरूप वृद्धि दर कम हो जाती है।
- कैल्सियम की जरूरत कोशिका दैर्ध्यवृद्धि और कोशिका विभाजन के लिए पड़ती है। इसकी कमी से झिल्लियों की पारगम्यता बढ़ जाती है और इस तरह कोशिकाओं को क्षति पहुंचती है।
- Mg और Mn फ़ॉस्फ़ोरिलीकरण प्रक्रम में सहकारक हैं। Mg क्लोरोफिल का भाग है। Mn और Cl प्रकाशसंश्लेषण में जल अपघटन अभिक्रिया के लिए आवश्यक हैं।
- Fe, Cu और Mo रेडॉक्स अभिक्रियाओं में भाग लेने वाली प्रोटीनों के संघटक हैं। Fe और Mn दोनों ही क्लोरोफिल संश्लेषण के लिए आवश्यक हैं। Zn प्रोटीन संश्लेषण के लिए और Co आयन, N_2-यौगिकीकरण के लिए आवश्यक है।

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्नलिखित तत्व पौधों को किस रूप में मृदा से प्राप्त होते हैं:
   i) नाइट्रोजन
   ii) फ़ॉस्फ़ोरस
   iii) बोरॉन
   iv) मॉलिब्डेनम

   ....
   ....

2. क) खनिजों का अंतर्ग्रहण बहुत विशिष्ट है। इसकी विशिष्टता (Specificity) सुनिश्चित करने वाली क्रियाविधि बताइए।

   ....
   ....
   ....
   ....

   ख) कुछ मामलों में एक जैसे आयनों के अंतर्ग्रहण में किस प्रकार धोखा हो जाता है?

   ....
   ....
   ....

3. मृदा से जड़ों द्वारा अंतर्ग्रहण को प्रभावित करने वाले तीन कारक बताइए।

   ....
   ....
   ....

4. पोटैशियम और सोडियम आयनें कृत्रिम लिपिड द्विपरत को पार क्यों नहीं कर सकती?

....

....

....

5. पादप झिल्ली द्वारा K^+ के अंतर्ग्रहण का अध्ययन करते समय यह देखा गया कि अंतर्ग्रहण उन रसायनों द्वारा प्रभावित हुआ जो श्वसन का संदमन करते हैं। इससे क्या अनुमान लगाया जा सकता है?

....

....

....

....

12.8 उत्तर

बोध प्रश्न

1. क) i) गलत (सही शुष्क पदार्थ) ii) सत्य iii) गलत (100 μg)
   iv) गलत (सही-K^+)

   ख) i) पोटैशियम ii) कैल्सियम iii) क्लोरोफिल iv) लौह

2. i) ऋण ii) प्लैज़्मौडेस्मैटा iii) pH iv) कैस्पेरी पट्टी
   v) धनायन विनिमय स्थल vi) रूबिडियम

3. क) i) सांद्रण प्रवणता ii) ATPase iii) वाहर।

   ख) i) K^+ ii) वढ़ती iii) धनात्मक iv) अम्लीय
   v) कैल्सियम

4. क)

i)	NO_3^-	ii)	प्रोटीनों
iii)	NH_4^+, NO_3^-	iv)	घटता
v)	$NO_3^- NH_4^+$	vi)	पुरानी
vii)	Ca^{2+}, K^+	viii)	दारु, नहीं किया
ix)	K^+, Mg^{2+}	x)	कार्बोहाइड्रेट
xi)	फ़ॉस्फ़ोरस	xii)	अचल
xiii)	K^+	xiv)	स्फीति

   ख) फेरेडॉक्सिन, सिस्टीन, मेथाइओनीन, सहएन्ज़ाइए ए, बायोटिन, थायमीन

   ग) i) ख, ii) क, iii) ग,

5. क) कुछ उदाहरण निम्न है।
   साइटोक्रोम ऑक्सीडेस, कैटालेस, परऑक्सीडेस, साइटोक्रोम f, साइटोक्रोम c

   ख) i) जल विपाटन ii) आर.एन.ए., आर.एन.ए. पोलीमरेस
   iii) इन्डॉल ऐसीटिक अम्ल iv) ऑक्सीकरण-अपचयन (रेडॉक्स)
   v) मॉलिब्डेनम vi) बोरॉन vii) अनिषेकजनन viii) जल विपाटन
   ix) दग्ध, कांस्यन x) Mo और Co

ग) कुछ उदाहरण निम्न हैं। प्लैस्टोसाइएनिन, साइटोक्रोम ऑक्सीडेस, लैक्टेस, ऐस्कॉर्बिक अम्ल ऑक्सीडेस, सुपरऑक्साइड डिस्म्यूटेस।

अंत में कुछ प्रश्न

1. i) NO_3^-, NH_4^+ ii) $H_2PO_4^-$, HPO_4^{2-}

   iii) H_3BO_3 iv) MoO_4^{2-}

2. क) कुछ आयनों के परिवहन की विशिष्टता (specificity) वाहक प्रोटीनों के कारण है जो एन्ज़ाइमों की तरह व्यवहार करती हैं और परिवहन एन्ज़ाइम मध्यस्थ (enzyme-mediated) अभिक्रियाओं के समान है। जिस आयन का परिवहन किया जाता है उसे बांधने के लिए वाहक प्रोटीन एक विशिष्ट स्थल पर होती है।

   ख) जब दो या दो से अधिक आयनें वाहक प्रोटीन में एक ही स्थल पर बंध जाते हैं तो अंतर्ग्रहण को बेवकूफ बनाया जा सकता है।

3. i) मृदा की आयन विनिमय क्षमता

   ii) pH

   iii) विभिन्न धनायनों और ऋणायनों की उपस्थिति

4. हालांकि K^+ और Na^+ दोनों आयनें साइज में छोटे होते हैं लेकिन उनके चारों ओर का आवेश और उदकल कोश उन्हें लिपिड द्विपरत के जलविरोधी हाइड्रोकार्बन फ़ेज में घुसने से रोकता है।

5. श्वसन संदमकों (respiratory inhibitors) द्वारा K^+ अंतर्ग्रहण का संदमन यह दिखलाता है कि K^+ का परिवहन श्वसन द्वारा उत्पन्न ATP से सम्बद्ध है और उस पर निर्भर है।

इकाई 13 प्रकाश संश्लेषण

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
- उद्देश्य

13.2 आधारभूत संकल्पनाओं का संरूपण
- आरंभ
- प्रकाश संश्लेषण के समीकरण का संरूपण

13.3 प्रकाश संश्लेषण की क्रियाविधि को समझना
- प्रकाशीय तथा अप्रकाशीय अभिक्रियाओं के अस्तित्व का प्रमाण
- प्रकाशीय अभिक्रिया की भूमिका

13.4 क्लोरोप्लास्ट वर्णकों का रसायन

13.5 दो प्रकाशीय अभिक्रियाओं की खोज
- प्रकाश संश्लेषण की क्वांटम मांग
- रेड ड्रॉप
- एमर्सन संवृद्धि प्रभाव
- प्रकाश-तंत्र I और II

13.6 अप्रकाशीय अभिक्रियाएं
- केल्विन चक्र

13.7 प्रकाश श्वसन और C_4 पौधे
- प्रकाश श्वसन
- C_4 पौधे
- CAM पौधे

13.8 क्लोरोप्लास्ट — परासंरचना और प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली का संगठन

13.9 प्रकाश संश्लेषण, कृषि तथा मानव कल्याण
- प्रकाश संश्लेषण की दक्षता
- पर्यावरण तथा प्रकाश संश्लेषण
- कृषि संबंधी जैव प्रौद्योगिकी

13.10 क्लोरोप्लास्ट उद्भव से सम्बन्धित पहलू

13.11 निष्कर्ष

13.12 सारांश

13.13 अंत में कुछ प्रश्न

13.14 उत्तर

13.1 प्रस्तावना

इस इकाई में आप प्रकाश संश्लेषण के बारे में पढ़ेंगे। यह वह क्रिया है जिसके द्वारा पौधे सूरज की रोशनी से प्राप्त ऊर्जा का प्रयोग कर कार्बन डाइऑक्साइड और पानी से शर्करा का संश्लेषण करते हैं। यह शर्करा आगे चलकर अन्य कार्बोहाइड्रेटों अथवा अन्य खाद्य पदार्थों, जैसे वसाओं और प्रोटीनों में परिवर्तित की जा सकती है। इस क्रिया का सामान्य महत्व कोई 2000 वर्ष पहले ज्ञात हो गया था। बाइबिल में वर्णित संत ईसाइयां (Isaiah) जो ईसा से 600 से लेकर 700 वर्ष पूर्व हुए थे — ने कहा था "*हमारा सारा मांस घास ही है*" और यह उन्होंने इस बात की जानकारी के आधार पर कही थी कि सभी खाद्य शृंखलाएं अंततः पौधों से ही शुरू होती हैं। पौधों से ही जीवाश्मी ईंधन प्राप्त होता है जैसे पैट्रोल, तेल और कोयला जो कि लाखों वर्ष पहले कार्बनी (carboniferous) महाकल्प में हुए प्रकाश संश्लेषण के उत्पाद के प्रतीक हैं। इसी प्रक्रिया द्वारा पौधे दिन के समय निरंतर वायु का शुद्धीकरण करते रहते हैं और इस प्रकार जंतुओं को साँस लेने के योग्य बनाते हैं।

इस प्रक्रिया के समग्र महत्व को यूजीन रैबिनोविच (Eugene Robinowitch) के शब्दों में सबसे अच्छी तरह व्यक्त किया गया है जो प्रकाश संश्लेषण के महान लेखकों और शोधकर्ताओं में से एक हैं। उन्होंने कहा था कि "*फ़िजियोलाजी की दृष्टि से कहा जाए तो इस ज़मीन और समुद्र पर पाए जाने वाले समस्त जंतु, जिनमें मनुष्य भी शामिल हैं, विशाल पादप साम्राज्य पर निर्भर रहने वाले परजीवियों का एक छोटा समुदाय मात्र हैं यदि पौधे अपनी बात कह सकते तो संभवतः उनकी भी जंतुओं के बारे में वैसी ही बुरी धारणा होती जैसी कि हमारी पिस्सुओं और फीता कृति (tape worm) के बारे में है ऐसे जीव जिन्हें अन्य जीवों पर सुस्ती से आश्रित रहना ही पड़ता है।*" प्रकाश संश्लेषी उत्पादों को मनुष्य तथा अन्य जंतु ऊर्जा प्राप्त करने के लिए प्रयोग में लेते हैं। उन्होंने आगे कहा कि "*इनके बिना कोई हृदय गति नहीं कर सकता, अमीबा तैर नहीं सकता, तंत्रिका में होकर कोई संवेदन तेज़ी से जा नहीं सकता और मनुष्य के मस्तिष्क में कोई विचार नहीं आ सकता*"। स्पष्ट है कि इन सभी क्रियाओं के लिए हम पौधों पर निर्भर रहते है।

शुद्ध परिमाण में यह क्रिया पृथ्वी पर होने वाली किसी भी अन्य रासायनिक गतिविधि से अधिक होती है। अनुमान लगाया गया है कि प्रकाश संश्लेषण से प्रति वर्ष 200×10^9 टन ठोस पादप पदार्थ प्राप्त होता है जिससे लगभग 70 से 80 टन शर्करा तुल्य प्रति व्यक्ति (sugar equivalent per person) को प्राप्त होती है। बात बड़ी साफ है कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पृथ्वी पर सबसे बड़ा रासायनिक कारखाना है इसलिए इस प्रक्रिया की क्रियाविधि को पता लगाने का कार्य पादप कार्यकी विज्ञानी का सबसे महत्वपूर्ण कार्य हो गया है।

आशा करते है कि इस इकाई में वर्णित विषय आपको अद्वितीय और रोचक प्रतीत होगा। यहाँ हम एक कहानी के रूप में उन अमुख प्रयोगों का ऐतिहासिक विवरण दे रहे है जिनसे हमें प्रकाश संश्लेषण के संबंध में आज तक ज्ञात जानकारी प्राप्त हो पाई है। हमने खासतौर से इस बात पर जोर दिया है कि प्रकाश संश्लेषण की प्रमुख संकल्पनाओं का संरूपण किस प्रकार हुआ था।

इसके विभिन्न भागों और उपभागों को काल क्रमिक रूप में व्यवस्थित किया गया है उन प्रयोगों से शुरू करके जिनसे आधार भूत समीकरण का संरूपण किया गया, हम आपको प्रकाश संशलेषण कि प्रकाशीय और अप्रकाशीय अभिक्रिया, पानी का प्रकाश अपघटन (photolysis) प्रकाश फ़ॉस्फ़ेटीकरण (photophosphorylation) द्वारा ATP का उत्पादन, इन प्रक्रमों में वर्णकों की भूमिका और C_3 तथा C_4 मार्गों द्वारा CO_2 के स्थिरीकरण के बारे में बताएंगे। प्रकाश संश्लेषण के जटिल विवरण पर हम बाद में विचार करेंगे। जिनका अंशतः पता हमें पिछले दो दशकों में लगा है।

प्रकाश श्वसन (photorespiration) तथा कृषि और मानवकल्याण के लिए प्रकाश संश्लेषण की सार्थकता पर भी एक भाग इसमें शामिल किया गया है। अंत में हम क्लोरोप्लास्ट के विकासगत पहलुओं पर संक्षेप में चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप इस योग्य हो जाएंगे कि :

- उन वैज्ञानिक विकासों की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे जिनसे प्रकाश संश्लेषण के लिए ज़रूरी कच्ची सामग्री और अंतिम उत्पादों का अभिज्ञान प्राप्त हुआ।
- मुख्य प्रकाश संश्लेषी वर्णकों के नाम लिख सकेंगे और उनके कार्य बता सकेंगे,
- उन प्रमाणों को लिख सकेंगे जिनसे पहले तो प्रकाशीय और अप्रकाशीय अभिक्रियाओं की खोज संभव हुई और बाद में दो प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं का पता चला।
- इलेक्ट्रॉन अभिगमन शृंखला में पानी से लेकर अंतिम इलेक्ट्रॉन ग्राही तक इलेक्ट्रॉन के मार्ग की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे।
- C_3 यानि केल्विन चक्र की रूपरेखा दे सकेंगे और थाइलैकॉइड झिल्ली में ऊर्जा प्रग्रहणी अभिक्रियाओं के साथ इसके संबंधों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- क्लोरोप्लास्ट की संरचना और उसकी झिल्लियों का चित्र खींच कर उसे नामांकित कर सकेंगे और PS I और PS II की स्थिति, इलेक्ट्रॉन अभिगमन शृंखला के संघटकों की संस्थिति तथा विभिन्न प्रक्रम जैसे कि जल का प्रकाश अपघटन, प्रकाशापचयन और प्रकाश फ़ॉस्फ़ेटीकरण के बारे में बता सकेंगे।

- उन अभिक्रियाओं को बता सकेंगे जिनसे यह सिद्ध होता है कि प्रकाश श्वसन के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड की हानि होती है।
- C_3, C_4 और CAM पौधों में CO_2 के स्थिरीकरण (fixation) की तुलना कर सकेंगे और बता सकेंगे कि किस प्रकार C_3 पौधों की तुलना में C_4 पौधे प्रकाश संश्लेषण की दृष्टि से अधिक सक्षम होते हैं।
- जैव प्रौद्योगिकी के जरिए प्रकाश संश्लेषी दक्षता को बढ़ाने की भावी संभावनाओं को बता सकेंगे।
- वर्तमान क्लोरोप्लास्ट पहले कभी मुक्त रूप से विचरण करने वाला प्रोकैरियोट (procaryote) रहा होगा जो विकास के दौरान अंतः सहजीवी (endosymbiont) हो गया। इस राय के कारण बता सकेंगे।

अध्ययन निर्देश : यह इकाई बहुत बड़ी है। वास्तव में यह दो इकाइयों के बराबर है। प्रकाश संश्लेषण इस पाठ्यक्रम का एक महत्वपूर्ण विषय है इसलिए इस इकाई पर विशेष ध्यान दें।

13.2 आधारभूत संकल्पनाओं का संरूपण

13.2.1 आरंभ

प्रकाश संश्लेषण पर हुए अनुसंधानों की शुरुआत लगभग 300 वर्ष पहले हुई। वान हेलमॉट (Van Helmont) नामक डच कीमियागर (Dutch alchemist) द्वारा किए गए प्रयोगों से यह विचार सामने आया कि पानी एक महत्वपूर्ण अभिकारक है। उन्होंने ये प्रयोग सन् 1648 में किए थे परंतु मरणोपरांत सन् 1740 में उन्हें इस शीर्षक के तहत प्रकाशित किया गया कि "*प्रयोगों के आधार पर कह सकते हैं कि समस्त वनस्पतिक पदार्थ पूर्णतः और पदार्थ के रूप में केवल जल ही है*"। उन्होंने एक गमले में मिट्टी भरी, जिसे उन्होंने सावधानी पूर्वक सुखा लिया था और उसका वजन कर लिया था। इस गमले में उन्होंने विलो वृक्ष (*सैलिक्स*) की पौद लगाई जिसका वजन 5 पौंड था। इस गमले का कुल वजन 200 पौंड था। वर्षा न होने पर उन्होंने इस पौद की व्यवस्थित रूप में आसवित जल से सिंचाई की और पांच वर्ष बाद उन्होंने इस प्रयोग की जाँच करने का निश्चय किया। उन्होंने देखा कि वृक्ष का वजन बढ़कर 169 पौंड हो गया है परंतु मिट्टी का वजन लगभग उतना ही है बस केवल 2 औंस कम (चित्र 13.1)। इससे उन्होंने निष्कर्ष यह निकाला कि 164 पौंड लकड़ी, छाल और जड़ें केवल पानी से ही बनी हैं।

चित्र 13.1 : वान हेलमॉट का प्रयोग जिससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि पौधा केवल पानी से ही वृद्धि करता है (अधिक जानकारी के लिए पाठ सामग्री देखिए)।

आज हम अवश्य जानते हैं कि वान हेलमाँट कार्बन डाइऑक्साइड के योगदान के बारे में पूर्णतः अनभिज्ञ थे।

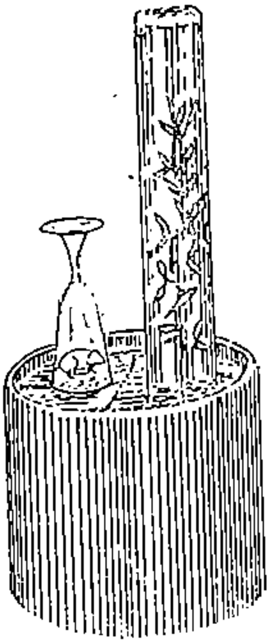

चित्र 13.2 : प्रीस्टले ने पोदीने की छोटी-छोटी टहनियों को उलटी को हुई नली में लगाया और उसकी हवा को नली द्वारा एक जार में पहुँचाया जिसमें एक चूहा रखा गया था। ऐसे प्रयोगों द्वारा उन्होंने यह सिद्ध किया कि पौधों में वायु को शुद्ध करने की क्षमता होती है।

प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में गैसें भी योग देती हैं, यह जानकारी अंग्रेज़ पादरी जोसफ़ प्रीस्टले के अध्ययनों से प्राप्त हुई, जिनकी उस प्रक्रिया को जानने में गहरी रुचि थी जिसके द्वारा गंदी वायु को शुद्ध किया जा सके। *"विभिन्न प्रकार की वायु पर किये गये प्रेक्षण"* नामक अपने एक लेख में उन्होंने लिखा था कि *"मैं मोमबत्ती के जलने से दूषित होने वाली हवा को फिर से शुद्ध करने की विधि का अकस्मात ही पता लगाने पर बहुत ही खुश हुआ और यह पुनःशुद्ध करने वाली कम से कम एक विधि जिसे प्रकृति इस कार्य के लिए प्रयोग में लेती है वनस्पति है"*। उन्होंने पता लगाया कि जंतु, जैसे चूहे, सामान्य वायु को दूषित करते हैं और उस वायु में मोमबत्ती जलती नहीं रह सकती (चित्र 13.2)। उन्होंने सन् 1771 में कई प्रयोग किए और यह सिद्ध किया कि पौधों में अशुद्ध वायु को शुद्ध वायु में बदलने की अपूर्व क्षमता होती है। उन्हीं के शब्दों में *"अतः 17 अगस्त 1771 को मैंने पोदीने की एक टहनी को उस हवा में रखा जिसमें एक मोमबत्ती जल चुकी थी और देखा कि उसी महीने की 27 तारीख को एक दूसरी मोमबत्ती उसमें अच्छी तरह से जलती रही*। उन्होंने आगे लिखा, *"आमतौर पर मैंने पाया कि इतनी हवा को पुनः शुद्ध करने में 5-6 दिन पर्याप्त थे यदि पौधा पूरी तरह स्वस्थ हो।"* उस ज़माने में रसायनज्ञ फ्लोजिस्टन (phlogiston) के विचार से अभिभूत थे जो कि ज्वलनशीलता (flammability) का सिद्धांत माना गया था। प्रीस्टले के अनुसार गंदी हवा को पौधे अफ्लोजिस्टीकृत (dephlogisticate) करते हैं। यही नहीं इस शुद्ध वायु में उसी प्रकार के गुण मौजूद थे जो गुण उस गैस मे थे जिसकी उन्होंने खोज की थी। यह गैस सूरज की किरणों को एक बड़े लैन्स द्वारा मर्करी के रेड ऑक्साइड पर फोकस करने पर निकली थी — उन्होंने लगभग एक फुट व्यास का एक लैन्स इसके लिए उपलब्ध किया था।

प्रीस्टले के प्रयोग से वियना के जान इंगन-हाउस (Jan Ingen-Housz) की रुचि जागृत हुई जो कि ऑस्ट्रिया की साम्राज्ञी मारिया थिरेसा (Maria Theresa) के कोर्ट चिकित्सक थे। सन् 1778 में तीन महीने के अवकाश के लिए वह इंग्लैंड गये और एक निवास स्थान किराए पर लेकर उन्होंने कोई 500 प्रयोग किए। उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि न केवल पोदीना बल्कि अन्य पौधे भी वायु को शुद्ध करते हैं। परन्तु अधिक महत्वपूर्ण बात यह देखी गई कि यह शुद्ध करने की प्रक्रिया केवल सूरज की रोशनी में ही होती है और पौधे कुछ ही घंटों में सार्थक रूप में वायु को शुद्ध कर देते है। उनकी पुस्तक से यह उद्धरण है, *"वनस्पतियों पर जो प्रयोग किये गए उनसे पता चलता है कि पौधों में सामान्य वायु को शुद्ध करने की महान शक्ति सूरज की रोशनी है और रात्रि में यह वायु को अशुद्ध कर देते हैं। उन्होंने लिखा है कि थोड़े ही समय में मैंने अपने सामने अत्यंत महत्वपूर्ण दृश्य देखा। मैंने देखा कि जैसे प्रीस्टले के प्रयोगों से पता चलता है पौधों में न केवल 6 से लेकर 10 दिन में गंदी हवा को ठीक करने की क्षमता होती है बल्कि वे इस महत्वपूर्ण कार्य को कुछ ही घंटों में पूरा कर लेते हैं। और उनका यह आश्चर्यजनक कार्य पौधों की वनस्पति के कारण नहीं बल्कि पौधे पर सूरज की रोशनी के प्रभाव के कारण हैं।"*

फ्लोजिस्टन (Phlogiston) : कीमियागरों (alchemists) ने सोचा कि जब धातुएं जंग पकड़ती हैं अथवा मोमबत्ती जलती है तो कुछ वस्तु नष्ट होती है। इस वस्तु को फ्लोजिस्टॉन कहते हैं। आज हम जानते हैं कि कुछ भी नष्ट नहीं होता और वास्तव में तो एक जलता हुआ पदार्थ ऑक्सीजन के साथ मिलता है। इसी प्रकार जंग खाई हुई धातु जब ऑक्सीजन से मिलती है तो उसका वज़न शुद्ध धातु से अधिक हो जाता है।

उन्होंने यह भी देखा कि पौधे के हरे भाग ही वायु को शुद्ध करते हैं न कि अहरित भाग और जब तक पौधे हरे रहते हैं तब तक। तीखे बुरी गंध वाले और यहां तक कि विषैले पौधे भी इस कार्य को सामान्य मंद गति से और अत्यंत अभिनंदनपूर्वक करते हैं। न तो प्रीस्टले और न ही इंगनहाउस अशुद्ध वायु के वास्तविक रासायनिक स्वरूप को जानते थे। फ्रांस के मेधावी रसायनज्ञ एन्टोनी लैवोइज़ियर (Antoine Lavoisier) पहले व्यक्ति थे जिन्होंने दहन के सिद्धांत की खोज की और वायु के शुद्ध घटक — ऑक्सीजन (O_2) और अशुद्ध वायु के घटक — कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) का पता लगाया। दुर्भाग्यवश लैवोइज़ियर को फ्रांसीसी क्रांति के दौरान आंतकवादियों ने मार डाला परंतु इसी रूप में भाग्य कभी-कभी सर्वोत्तम मनुष्य को समाप्त कर देता है। एक और महत्वपूर्ण प्रगति जिनेवावासी जीन सिनेबियर (Jean Senebier) ने की जिन्होंने पता लगाया कि शुद्ध वायु (O_2) की उत्पन्न मात्रा प्रयोग आरंभ करने के समय गंदी वायु (CO_2) की मात्रा की मौजूदगी पर निर्भर करती है।

बोध प्रश्न 1

क) प्रकाश संश्लेषण से संबंधित प्रयोगात्मक जानकारियों का (जिन्हें कॉलम 1 में दिया गया है) पता लगाने वाले वैज्ञानिकों के नामों के साथ (जिन्हें कॉलम 2 में दिया गया है) मेल बैठाइए जिन्होंने ने खोज की थी।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) पोदीने की एक टहनी उस हवा को शुद्ध कर सकती है जो जंतुओं के साँस लेने से दूषित हो जाती है	क) ऐन्टोनी लैवांइज़ियर
ii) पौधे केवल पानी से बने होते हैं	ख) जान इंगन हाउज
iii) सभी प्रकार के पौधे दूषित वायु को शुद्ध करते हैं परन्तु इस प्रकार की शुद्ध करने की क्रिया के लिए प्रकाश आवश्यक होता है	ग) वॉन हेलमंट
iv) शुद्ध वायु O_2 और अशुद्ध वायु CO_2 है इसकी जानकारी दी	घ) जोसफ़ प्रीस्टले

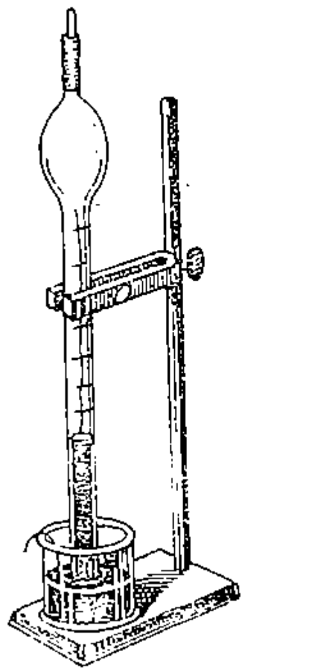

चित्र 13.3 : प्रकाश संश्लेषण के दौरान गैस-विनिमय को ज्ञात करने के लिए एक उपकरण। इस प्रकार के उपकरण की व्यवस्था निकोलस थियोडोर डी सौसूरे द्वारा की गई थी। एक पत्ती अथवा पौधे के किसी अन्य भाग को बल्ब के क्षेत्र में उपयुक्त सहारे के साथ रखा जा सकता है। वायु की रचना को, प्रयोग के अंत में एक क्षार और पाइरोगैलोल का प्रयोग करके ज्ञात किया जा सकता है।

13.2.2 प्रकाश संश्लेषण के समीकरण का संरूपण

गैसों के मात्रात्मक मापन की विधियां 1804 तक अच्छी तरह स्थापित हो चुकी थीं। यूडियोमीटर (eudiometer, चित्र 13.3) अर्थात् गैस आयतनमापी के इस्तेमाल से सरल विधियों द्वारा गैस विश्लेषण करके निकोलस थियोडोर डी सैसूरे (Theodore Nicolas de saussure), जो कि जिनेवावासी थे, ने इस बात की पुष्टि की कि श्वसन की तरह प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया मे CO_2 की खपत के बराबर O_2 का मोचन होता है। परंतु और भी अधिक महत्त्व की बात यह रही कि इन्होंने जल की भूमिका की ओर ध्यान दिलाया, वह संघटक जिसके प्रकाश संश्लेषण में भाग की ओर वान हेलमँट के पश्चात कतई कोई ध्यान नहीं दिया गया था। सन् 1837 में क्लोरोप्लास्टो का भी विवरण दिया गया। इस प्रकार पिछली शताब्दी के अंत तक यह अवस्था आ गई कि प्रकाश संश्लेषण के लिए निम्नलिखित समीकरण का संरूपण किया जा सका:

$$6\,CO_2 + 6\,H_2O \xrightarrow[\text{हरे रंग वाला पदार्थ (क्लोरोफिल वर्णक)}]{\text{सूर्य का प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6O_2$$

पिछली शताब्दी के अंतिम चरण में प्रकाश संश्लेषण के क्रिया स्पेक्ट्रम (action spectrum) की जानकारी प्राप्त करनी थी। इससे पहले स्पैक्ट्रमिकी (spectroscopy) के उपयोग से इस बात की आसानी से स्थापना हो गई कि क्लोरोफ़िल, स्पेक्ट्रम के नीले और लाल क्षेत्रों में प्रकाश का अधिकता से (strongly) अवशोषण करता है (हरे क्षेत्र में कतई कोई अवशोषण नहीं होता जिसके कारण पौधे हरे दिखाई पड़ते हैं)। तथापि एक अनिश्चितता बनी हुई थी। यद्यपि उस समय के शोधकर्ताओं ने "हरे रंग के पदार्थ" को प्रकाश संश्लेषण के साथ संबद्ध किया था पर इस बात का कोई निष्कर्षात्मक प्रमाण नहीं था कि क्लोरोप्लास्ट ही प्रकाश संश्लेषण के स्थल हैं और उनमें मौजूद वर्णक इस महत्वपूर्ण अभिक्रिया में योग देता है। जर्मनी के वनस्पति विज्ञानी थियोडोर ऐंगलमान (Theodore Engelmann, 1882) ने प्रकाश संश्लेषण के क्रिया स्पेक्ट्रम को ज्ञात करके यह सिद्ध किया कि यह स्पेक्ट्रम वस्तुतः क्लोरोफिल वर्णकों के अवशोषण स्पेक्ट्रम के साथ निकट रूप में मेल खाता है।

व्याख्या के रूप में यह कहा जा सकता है कि अवशोषण स्पेक्ट्रम, विलयन (घोल) का प्रकाशिक गुणधर्म है। स्पेक्ट्रमदर्शी की सहायता से हम पौधों के निष्कर्ष यानि निचोड़ (extract) अथवा घोल द्वारा, (जैसे कि क्लोरोफिल वर्णकों का घोल ऐसीटोन में) अवशोषित तरंगदैर्ध्यों के बारे मे जान सकते हैं। आधुनिक स्पेक्ट्रम-फोटोमापी (modern spectrophotometer) की सहायता से हम ज्ञात कर सकते हैं कि उनके द्वारा कितना अवशोषण हुआ है। दूसरी ओर क्रिया स्पेक्ट्रम से हमें स्पेक्ट्रम के विभिन्न भागों की फ़िजियोलॉजिकल सापेक्ष सक्रियता के बारे में पता लग जाता है। (क्रिया स्पेक्ट्रम प्राप्त करने के लिए हमें स्पेक्ट्रम के विभिन्न क्षेत्रों में जीवित कोशिका, ऊतक अथवा प्राणी को मोनोक्रोमैटिक प्रकाश द्वारा प्रदीपित करना पड़ता है।) प्रत्यक्षतः प्रकाशग्राही (photoreceptor) को किसी प्रक्रिया अथवा क्रिया के साथ संबद्ध करने के लिए दोनों स्पेक्ट्रमों का मेल खाना आ... है (चित्र 13.4)।

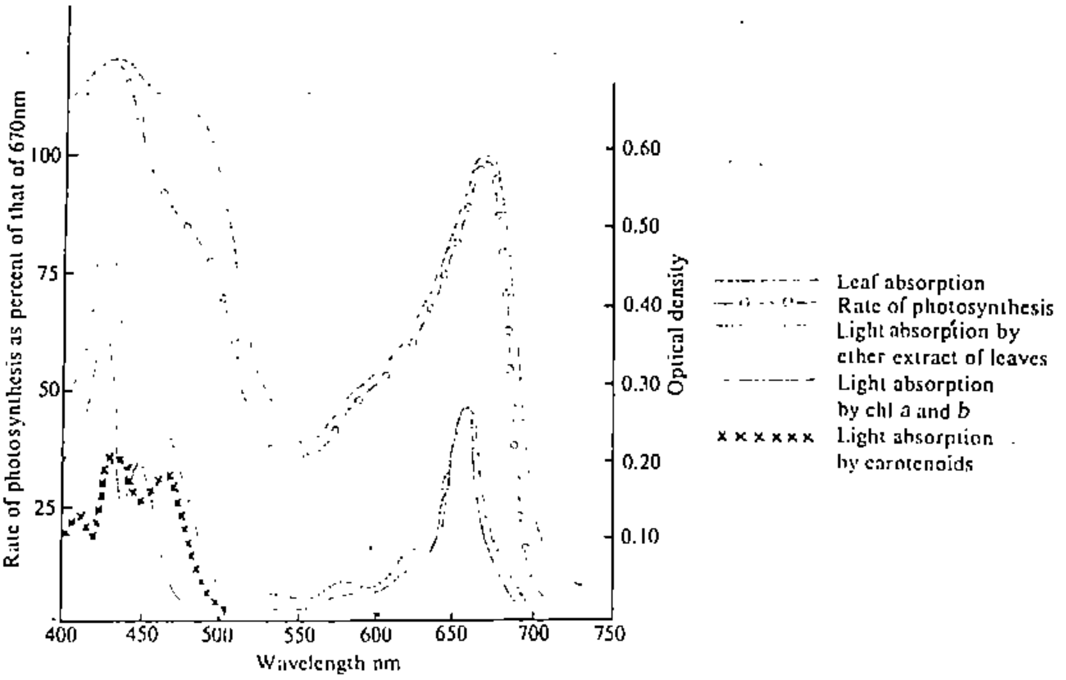

चित्र 13.4 : प्रकाश संश्लेषण की दर के लिए *इलोडिया डेन्सा (Elodea densa)* की पत्ती और निष्कर्षित वर्णकों के क्रिया स्पेक्ट्रम की अवशोषण स्पेक्ट्रम से तुलना। (Adapted from G. Ray Noggle and J. Fritz. Plant Physiology, Prentice Hall India.)

ऐंगलमान के प्रयोग — जो कि अब तक के सबसे प्रवीण और उत्तम कोटि के प्रयोगों में से हैं — तंतुमय शैवालों (filamentous algae) जैसे *क्लैडोफोरा (Cladophora)* पर किए गए थे। शैवाल के एक तंतु को उन्होंने एक स्लाइड पर लेकर सूक्ष्मदर्शी की स्टेज पर रखा। सूक्ष्मदर्शी के प्रकाशिक पथ में उन्होंने एक प्रिज्म को लगाया जिससे कि एक छोटे से स्पेक्ट्रम द्वारा शैवाल तंतु प्रदीपित हो जाए तथा उसे सूक्ष्मदर्शी के आइपीस (नेत्रिका) द्वारा सरलता से देखा जा सके। ऑक्सीजन उत्पन्न करने में प्रकाश के कौन से तरंगदैर्ध्य क्रियाशील होते है, यह पता लगाने के लिए ऐंगलमान ने अत्यधिक वायुजीवी चलायमान (motile) जीवाणु स्पीशीज़ों का प्रयोग किया। उसने शैवाल के तंतु पर जीवाणुओं के निलंबन (bacterial suspension) की एक बूँद डाली। ऐसा करने पर जीवाणु शैवाल तंतु के उस क्षेत्र में इक्ट्ठे हो गए जिसपर लाल और नीली रोशनी आ रही थी (देखिए चित्र 13.5)।

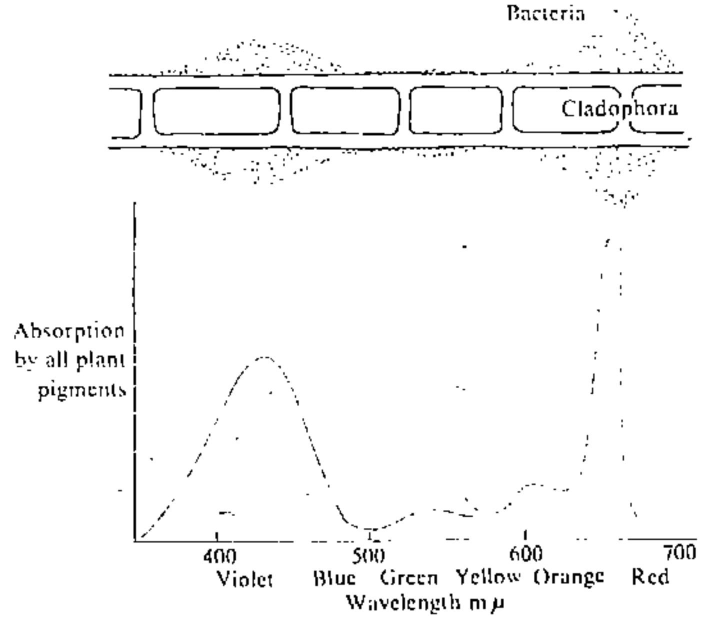

चित्र 13.5 : प्रकाश के उन तरंगदैर्ध्यों को ज्ञात करने के लिए ऐंगलमान का प्रयोग जो प्रकाश संश्लेषण के लिए सबसे अधिक प्रभावी होते हैं (और अधिक जानकारी के लिए पाठ को पढ़िए)। नीचे सभी पादप वर्णकों का अवशोषण स्पेक्ट्रम दिया गया है जिन्हें विलायक में निष्कर्षित कर लिया गया था।

इस प्रकार जीवाणुओं के वितरण की सघनता से, दृश्यमान प्रकाश के विभिन्न स्पेक्ट्रमी क्षेत्रों की सापेक्ष क्रियाशीलता का अनुमान लगाया जा सका जो क्रिया स्पेक्ट्रम को चित्रित करते हैं।

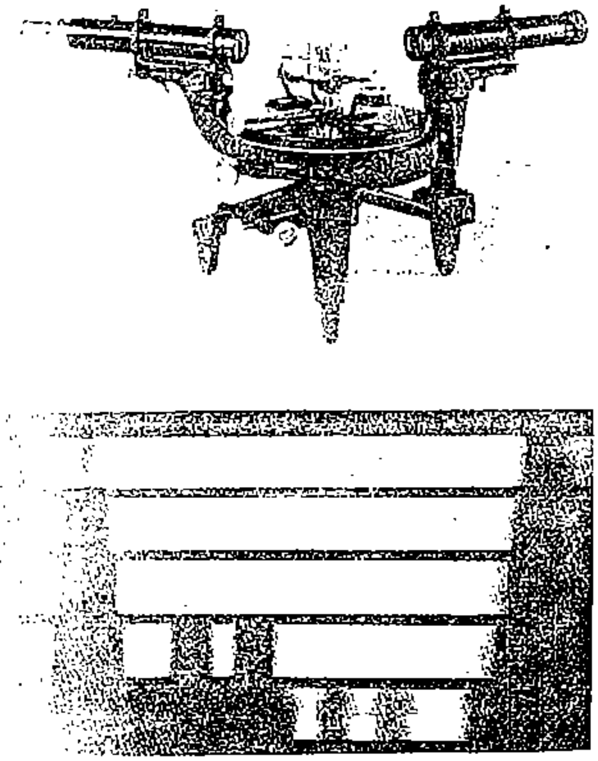

चित्र a) एक स्पेक्ट्रमदर्शी (a spectroscope)
b) क्लोरोफिल a की पाँच विभिन्न सांद्रताओं का अवशोषण स्पेक्ट्रम। ऊपर तरंगदैर्ध्य $m\mu$ में दर्शाये गये हैं।

स्पेक्ट्रमदर्शी (spectroscope)

उपरोक्त चित्र स्पेक्ट्रमदर्शी को प्रदर्शित करता है। इसकी एक ओर से झिरी में प्रकाश डाला जाता है, और दूसरी ओर से एक स्पेक्ट्रम निकलता है। यदि दृष्यक और प्रकाश के बीच में प्रकाश संश्लेषी वर्णकों का घोल रखा जाए तो क्लोरोफिल वर्णकों के होने पर स्पेक्ट्रम के नीले और लाल क्षेत्रों में तथा कैरोटीन और जैंथोफिल के होने पर नीले और बैंगनी क्षेत्रों में काली पट्टिया दिखाई देती हैं। यदि क्लोरोफिल वर्णकों की सांद्रता अधिक होती है तो अन्य क्षेत्रों में भी कुछ अवशोषण देखा जा सकता है। यदि विभिन्न तनुताओं पर अवशोषण स्पेक्ट्रमों के फोटो खींचे जाएं और उन्हें एक के नीचे दूसरा उचित रूप से रखा जाए तो हम अवशोषण शिखरों (absorption peaks) को अधिक सही रूप में ज्ञात कर सकते हैं। इस प्रकार के अवशोषण स्पेक्ट्रम जर्मनी के एक रसायनज्ञ विलस्टैटर (Willstätter) द्वारा प्राप्त किए गए थे। ये स्पेक्ट्रम आधुनिक स्पेक्ट्रम फ़ोटोमापी (spectrophotometer) द्वारा प्राप्त अवशोषण स्पेक्ट्रमों के समान हैं (स्पेक्ट्रम फ़ोटोमापी मुख्य रूप से स्पेक्ट्रममापी ही होता है परंतु इसमें अतिरिक्त पुर्जे लगे होते हैं जिससे कि बाहर आने वाली रोशनी को किसी प्रकाशीय सैल (photo cell) अथवा एक फ़ोटोमल्टीप्लायर (photomultiplier) पर डाल कर विद्युतीय रूप में मापा जा सके)। अवशोषण स्पेक्ट्रम को प्राप्त करने के लिए प्रिज़्म को घुमाया जाता है जिससे स्पेक्ट्रम के नीले सिरे से लाल सिरे तक अवशोषण मानों को स्पष्ट रूप में देखा जा सके। प्रिज़्म को धीरे-धीरे घुमाने का कार्य एक मोटर द्वारा कराया जा सकता है।

सारांश में उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक यह स्पष्ट हो गया था कि क्लोरोफिल वर्णकों और प्रकाश की मदद से, पानी और कार्बन डाइऑक्साइड, शर्करा और ऑक्सीजन में बदल जाते हैं। इसी दौरान 1842 में जूलियस मेयर (Julius Mayer) नामक जर्मनी के एक शल्य-चिकित्सक ने ऊर्जा के संरक्षण (law of conservation of energy) के नियम का संरूपण किया और इस विषय को प्रतिपादित किया कि मुख्य रूप से प्रकाश संश्लेषण ऐसी प्रक्रिया होती है जिसमें भौतिक ऊर्जा का रासायनिक ऊर्जा के रूप में संरक्षण होता है। उन्होंने 1845 में लिखा था कि *"प्रकृति ने स्वयं इस समस्या को हाथ में लिया है कि किस प्रकार भूमि पर आने वाली रोशनी को बीच में ही ग्रहण कर लिया जाए और सभी शक्तियों से अधिक दुर्गाह्य शक्ति को दृढ़ रूप में संग्रहित किया जाए। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रकृति ने भूमि की परपाटी को जीवों से आच्छादित कर दिया है जो कि अपने जीवन की प्रक्रियाओं में सूरज की रोशनी को अवशोषित करें और इस शक्ति को सतत रूप में संचित होने वाले रासायनिक अंतर उत्पन्न करें। ये प्राणी पौधे ही हैं। पौधों का विशाल साम्राज्य एक ऐसे भंडार ग्रह के रूप में है जिसमें तेजी से आने वाली सूरज की किरणों को स्थिर कर लिया जाता है और बड़े ही ढंग से भविष्य में प्रयोग के लिए संचित कर लिया जाता है — यह एक ऐसी आर्थिक व्यवस्था है जिससे मानवमात्र का भौतिक रूप में विद्यमान रहना अटल रूप में संबद्ध रहता है। पौधे एक प्रकार की शक्ति यानि प्रकाश को ग्रहण करते हैं और दूसरी प्रकार की शक्ति यानि रासायनिक अन्तर को उत्पन्न करते हैं।"*

प्रकाश संश्लेषण का मापन

प्रकाश-संश्लेषण को कई भिन्न तरीकों से मापा जा सकता है और जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है अधिकाधिक परिष्कृत तकनीकें विकसित की जा रही हैं जिससे कि परिणाम लगभग तत्काल ही या कुछ सैकण्डों में ही ज्ञात किये जा सके।

चित्र a में प्रकाश संश्लेषण के मापन का सरलतम तरीका दिखाया गया है जिसे जलीय पौधों के लिए प्रयोग में लिया जा सकता है। कटे हुए तनों से या पौधे के अन्य भागों से निकलने वाली ऑक्सीजन के बुलबुलों को उल्टी परखनली में इक्ट्ठा किया जा सकता है। अधिक परिशुद्धता के लिए विश्लेषण करने की रासायनिक विधियों द्वारा गैस के संघटन की जाँच की जा सकती है, जैसे पाइरोगैलोल अथवा KOH को काम में लेकर। चित्र b में एक और तकनीक को बताया गया है जिसे आरंभ में शोधकर्ताओं ने भूमि पर पाए जाने वाले पौधों की पत्तियों अथवा अन्य इसी प्रकार के अंगों में प्रकाश संश्लेषण की दर को [illegible] करने के काम में लिया था जो कि अंशांकित नली में बंद किये जा सकते थे। यह नली पारे के प्याले में उल्टी रखी जाती है और कुछ समय बाद गैस विनिमय को, विश्लेषण की रासायनिक विधियों द्वारा ज्ञात कर लिया जाता है। चित्र c में गैस ट्रेन विधि (gas train method) को प्रदर्शित किया गया है। इस विधि का [illegible] व्यापक रूप से प्रयोग किया गया (इस विधि का प्रयोग प्रकाश संश्लेषण अभिक्रिया के Q_{10} को ज्ञात करने के लिए ब्लैकमैन ने प्रयुक्त किया था)। इसमें वायु को एक कक्ष से गुजारा जाता है जिसमें पादप रखा होता है। इस वायु में से कितनी कार्बन डाइऑक्साइड का स्वांगीकरण हुआ इसे CO_2 अवशोषक विलयन अर्थात् क्षार (जैसे बेरियम हाइड्रॉक्साइड) को अम्ल के मानक विलयन के साथ नियत समय के पश्चात टाइट्रेट (titrate) करके मापा जा सकता है। पादप-पदार्थ के बगैर यदि खाली कक्ष में से वायु को गुजारा जाए तो वायु के इस नमूने में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा पता लगाई जा सकती है। परंतु जब प्रयोग किया जाता है तब बेरियम कार्बोनेट कम मात्रा में अवक्षेपित होता है और नियंत्रित तथा प्रयोगात्मक सैटों के टाइट्रेशन मानों में अंतर से हमें प्रकाश संश्लेषण की माप ज्ञात हो जाती है।

प्रारम्भ में एक और विधि आम प्रयोग में ली जाती थी और वह यह कि पत्तियों के [illegible] चित्र d में दिखाए गए [illegible] अनुसार लेते हैं और प्रयोग की शुरुआत में और कुछ देर प्रकाश संश्लेषण होने के बाद उनका शुष्क भार ज्ञात करते हैं। भार में अंतर से प्रकाश संश्लेषण की माप मालूम हो जाती है। यह जानना महत्वपूर्ण है कि इन सभी विधियों में एक कमी होती है और वह यह कि हम जो माप प्राप्त करते हैं वह निवल प्रकाश संश्लेषण की माप नहीं है क्योंकि साथ ही साथ श्वसन भी होता रहता है और इसलिए स्थिर किये गये कार्बन में कमी हो जाती है। प्रकाश संश्लेषण

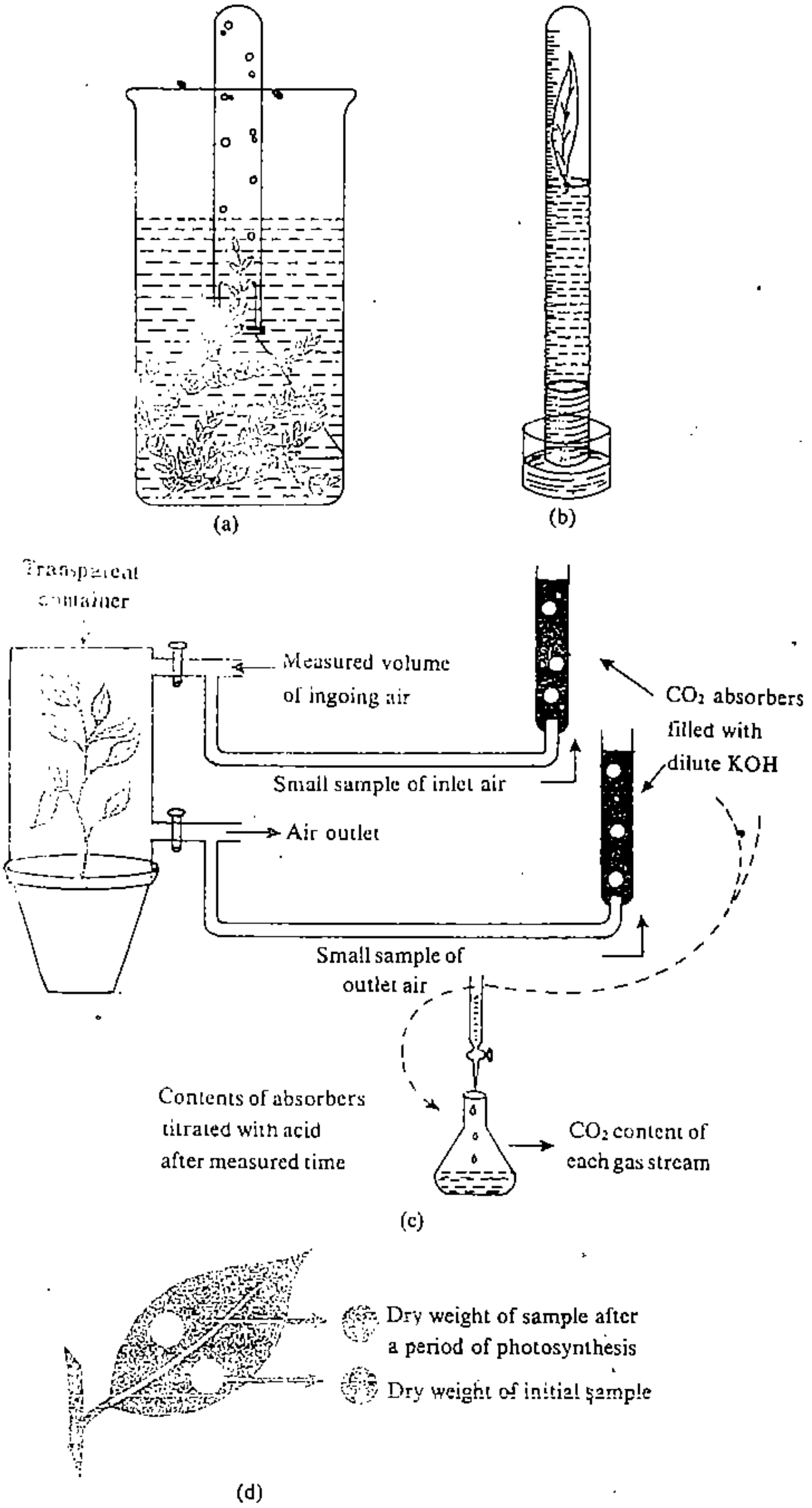

चित्र a) जलीय पादपों द्वारा प्रकाश में मोचित ऑक्सीजन को एकत्रित करना।

b) प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड के अवशोषण व O_2 निराकरण को दर्शाने के लिए एक माण्न नली में पत्ती।

c) गतिशील वायु में से CO_2 उद्ग्रहण के मापन के आधार पर प्रकाश संश्लेषण की दर का निर्धारण। बाहर जाने व अंदर प्रवेश करने वाली वायु के थोड़े नमूने में CO_2 का विश्लेषण करने पर।

d) CO_2 स्वांगीकरण के दौरान पत्ती की सतह के क्षेत्र में शुष्क भार में वृद्धि को मापकर कुल प्रकाश संश्लेषण की दर का निर्धारण।

की वास्तविक दर का अनुमान लगाने के लिए हमें अंधेरे में श्वसन की दर को भी मापना चाहिए और उपयुक्त संशोधन कर लेने चाहिए।

मैनोमीटरी तकनीक में — जिसका विकास वारबर्ग (warburg) ने सन् 1920 के दशक में किया था और जो साठवें दशक तक अत्यधिक प्रयोग में ली जाने वाली तकनीक रही — इसमें उत्पन्न ऑक्सीजन का आयतन, सीधे ही मैनोमीटर से संलग्न अंशांकित मापनी को देखकर पता लगाया जा सकता है (चित्र e)। यह तकनीक खासतौर से शैवालों अथवा हरे ऊतकों वाले अन्य छोटे पादप नमूनों के लिए उपयुक्त है जो कि सोडियम बाइकार्बोनेट के तनु विलयन (जो कि HCO_3^- आयन अथवा CO_2 उत्पन्न करता है) में निलंबित कर दिए जाते हैं। नली

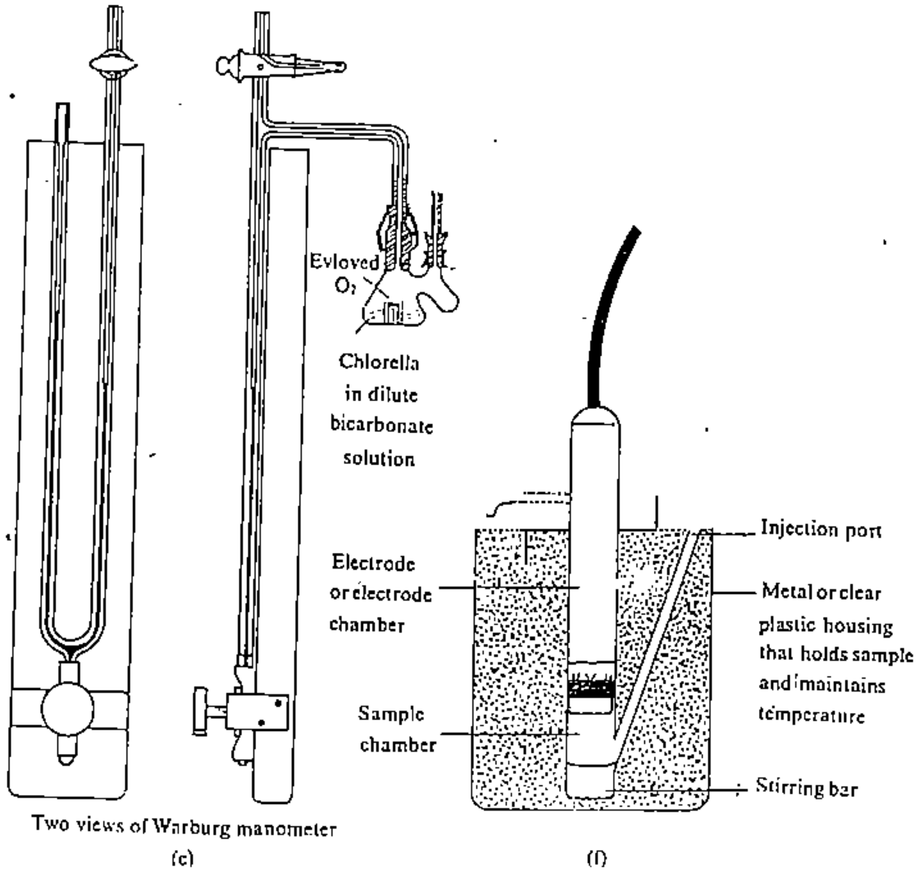

e) वारबर्ग मैनोमीटर व क्रिया फ्लास्क।
f) प्रारूपिक ऑक्सीजन इलैक्ट्रोड के लक्षण।

की बंद बाहु में मैनोमीटर में तरल के स्तर के नीचे होने के कारण उत्पन्न ऑक्सीजन के फलस्वरूप दाब बढ़ेगा। बहुत कम उत्पन्न ऑक्सीजन की मात्रा ज्ञात करने के लिए, बारीक व्यास वाली काँच की नली मैनोमीटर बनाने के काम में लायी जा सकती है। अभिक्रिया फ्लास्क (reaction flask) को सदैव नियत ताप वाले जल में डुबोए रखा जाता है ताकि दशाएं नियत बनी रहें। एक ही उपकरण में एक साथ 14 मैनोमीटर तक काम में लिए जा सकते हैं। तथापि उनमें से एक मैनोमीटर को पादप-पदार्थ विहीन रखा जाता है जिससे कि वह दाबमापी (barometer) के रूप में काम कर सके और गैस विनिमय के वास्तविक आयतन को ज्ञात करने के लिए उपयुक्त सुधार किए जा सकें।

आधुनिकतम विधि-जिसका व्यापक प्रयोग हो रहा है — ऑक्सीजन इलेक्ट्रोड तकनीक (oxygen electrode technique) है (चित्र f)। ऑक्सीजन इलेक्ट्रोड ऑक्सीजन के सांद्रण के प्रति संवेदनशील होता है और उत्पन्न ऑक्सीजन को विद्युतीय रूप में मापा जा सकता है।

बोध प्रश्न 2

क) उन प्रयोगों का वर्णन कीजिए जिससे निम्न बातों की खोज हुई :

1) प्रकाश-संश्लेषण में क्लोरोफिल की भूमिका।

....

....

....

....

2) दृष्यमान स्पेक्ट्रम के तरंगदैर्ध्य जो प्रकाश-संश्लेषण में प्रभावकारी होते हैं।

....

....

....

....

ख) निम्नलिखित तीन क्रिया स्पेक्ट्रम नीले हरे शैवालों, बैंगनी गंधक जीवाणुओं और जौ की पत्तियों के हैं। इन स्पेक्ट्रमो का निगमन कीजिए जो किसी उपरोक्त प्राणी के अनुरूप हो।

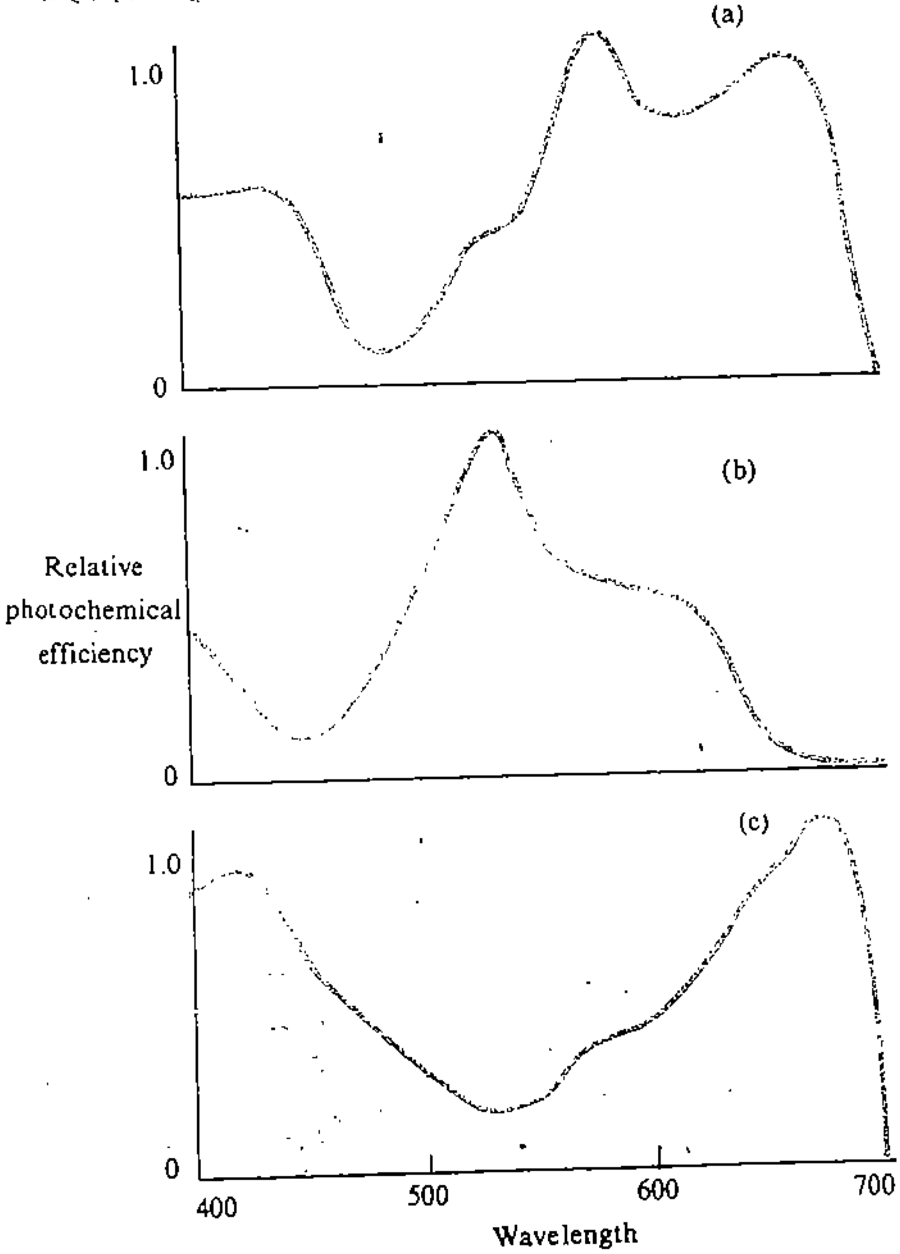

13.4 क्लोरोप्लास्ट वर्णकों का रसायन

प्रकाश संश्लेषण की क्रियाविधि के बारे में और अधिक आधुनिक विचारों की जानकारी प्राप्त करने से पहले हमारे लिए कुछ आधारभूत बातों को समझ लेना आवश्यक है, उदाहरण के लिए प्रकाश-संश्लेषी वर्णकों की रासायनिक संरचना तथा भूमिका। पत्तियों के पीले पड़ जाने पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि पत्तियों में एक से अधिक वर्णक होते हैं। मिखाइल स्वेट (Mikhail Tswett) नामक एक रूसी वनस्पति विशेषज्ञ ने इस शताब्दी के आरंभिक वर्षों में क्रोमैटोग्राफी (chromatography) द्वारा क्लोरोप्लास्ट के वर्णकों को, स्वयं द्वारा विकसित तकनीक की सहायता से, पृथक किया और यह सिद्ध किया कि पत्तियों में चार प्रकार के प्रकाश संश्लेषी वर्णक पाए जाते हैं :

वर्णक	रंग	अत्यधिक अवशोषण का परिसर	
		नीला क्षेत्र	लाल क्षेत्र
क्लोरोफिल *a*	नीला हरा	(400-500 nm) शिखर 430 nm पर	(600-700 nm) शिखर 670 nm पर
क्लोरोफिल *b*	हरा	400-500 nm शिखर 470 nm पर	(600-700 nm) शिखर 650 nm पर
कैरोटिनॉइड	पीला और संतरी	400-500 nm शिखर 450 nm	

नोट : अवशोषण शिखर (absorption peak) विलायक के बदलने से बदल जाता है।

कैरोटीन और जैंथोफिल मूलतः दो ऐरोमैटिक रिंग वाले हाइड्रोकार्बन होते हैं जिनके अंतिम सिरे एक लंबी पोलीन ऐलिफैटिक शृंखला द्वारा जुड़े रहते हैं। अपनी संरचना के कारण ये अत्यधिक अध्रुवीय अथवा जलविरोधी (hydrophobic) होते हैं (चित्र 13.10 b)। दूसरी ओर तुलनात्मक दृष्टि से क्लोरोफिल कम जलविरोधी और अधिक ध्रुवीय होते हैं क्योंकि इनमें पॉर्फिरिन (porphyrin) "सिर" (head) होता है और आवेशित N परमाणु होते हैं। "सिर" अथवा "झंडा" (flag) ऐलीफैटिक ऐल्कोहॉल की एक लंबी हाइड्रोकार्बन "पूँछ" (tail) अथवा "ध्रुव" (pole) पर लगा होता है (चित्र 13.10 a)। क्लोरोफिल *a* और क्लोरोफिल *b* में मामूली किस्म का अंतर होता है — क्लोरोफिल *b* में पॉर्फिरिन "सिर" में पाए जाने वाला मेथिल ग्रुप का प्रतिस्थापन CHO— एल्डिहाइड ग्रुप द्वारा हो जाता है। पॉर्फिरिन रिंग के केंद्र में एक बड़ा Mg^{2+} आयन होता है। हीमोग्लोबिन के हीम (heme) की संरचना भी इसी प्रकार की होती है परंतु इसके पॉर्फिरिन रिंग में धातु आयन, Mg^{2+} न होकर Fe^{3+}/Fe^{2+} होता है।

कैरोटिनॉइडों और क्लोरोफिलों दोनों की अद्वितीय विशेषता यह है कि इनमें अनुनादी (resonating) इलेक्ट्रॉनों वाले प्रत्यावर्ती द्वि-आबंधों (alternating double bond) का तंत्र होता है जो कि दृश्यमान प्रकाश के फ़ोटॉनों द्वारा खासतौर से नीले और लाल सिरों पर — सुगमता से उत्तेजित हो जाते हैं (चित्र 13.4)। वास्तव में क्लोरोप्लास्ट वर्णक, प्रकृति में पाए जाने वाले अत्यधिक तेज़ी से प्रकाश को अवशोषित करने वाले अणुओं में शामिल किये जाते हैं।

अब हमें उस रासायनिक क्रियाविधि की ओर ध्यान देना चाहिए जिससे वर्णक $NADP^+$ के माध्यम से H_2O से CO_2 में इलेक्ट्रॉनों को अंतरित करने में मदद देते हैं। सबसे महत्वपूर्ण भूमिका क्लोरोफिल अणु (P_{680} और P_{700}) "क्लोरोफिल *a*" की एक विशेष जोड़ी अदा करती है जिसे "डैडी" (daddy) अणु कह सकते हैं। चूंकि क्लोरोफिल *a* सबसे लंबे तरंगदैर्ध्य को अवशोषित करने वाला वर्णक होता है इसलिए यह उत्तेजित क्लोरोफिल *b* अणु से ऊर्जा प्राप्त कर सकता है बशर्ते कि यह उसके काफी पास में स्थित हो। इसके विपरीत क्लोरोफिल *b* अणु कैरोटीनों और जैंथोफिलों के उत्तेजित

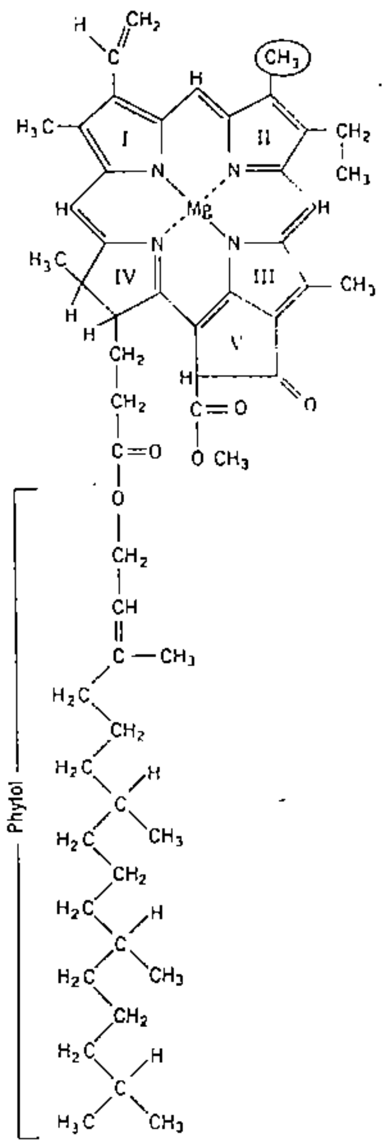

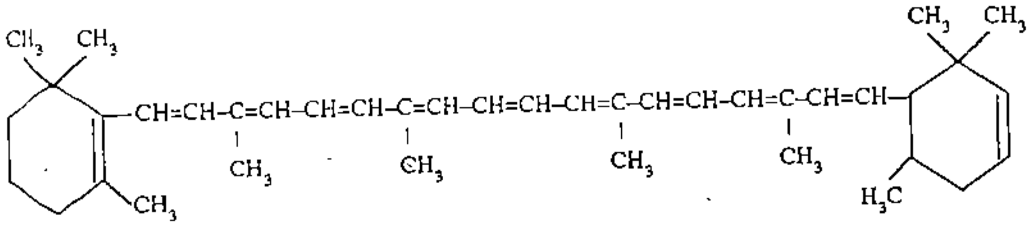

चित्र 13.10 : a) क्लोरोफिल अणु की संरचना : क्लोरोफिल *a* में घेरे वाला मेथिल वर्ग एक ऐल्डिहाइड वर्ग (aldehyde) द्वारा प्रतिस्थापित हो जाता है तो क्लोरोफिल *b* बनता है। जैसाकि दिखाया गया है।

b) कैरोटीन की संरचना।

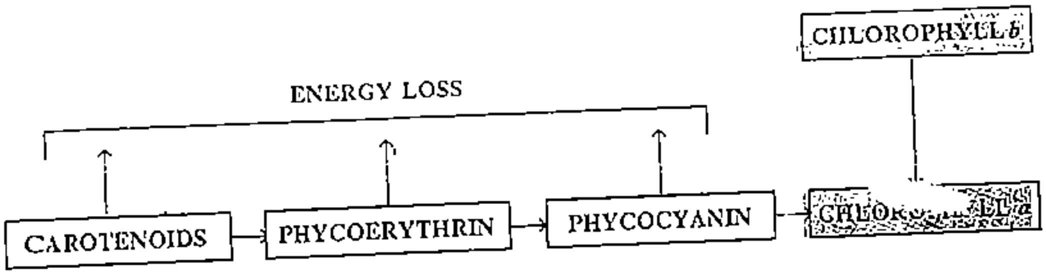

चित्र 13.11: विभिन्न वर्णकों के बीच ऊर्जा की योजना।

अणुओं से ऊर्जा को अवशोषित कर सकते हैं। इलेक्ट्रानों के अंतरण की दिशा सदैव उस वर्णक से — जो कि उच्चतर ऊर्जा वाले फ़ोटॉनों को अवशोषित करता है — उस वर्णक की ओर होती है जो निम्नतर ऊर्जा वाले फ़ोटॉनों द्वारा उत्तेजित हो सकता है, जैसाकि चित्र 13.11 में दिखाया गया है:

चूँकि प्रकाश की ऊर्जा, फ़ोटॉन के तरंगदैर्ध्य से व्युत्क्रमानुपाती रूप में भिन्न होती है, इसलिए इसका अर्थ यह है कि इसका अंतरण सदैव निम्नतर तरंगदैर्ध्य (परंतु उच्चतर ऊर्जा फ़ोटॉन) अवशोषक अणु (जैसे कैरोटिनॉइड) से उच्चतर तरंगदैर्ध्य (निम्न ऊर्जा फ़ोटॉन) अवशोषक अणु (जैसे क्लोरोफिल *a* की ओर होता है। हां, यह हो सकता है कि फ़ोटॉन आंशिक रूप से अंतरण की प्रक्रिया के दौरान कुछ ऊर्जा को त्याग दे और यही कारण है कि ऊर्जा का अंतरण कभी भी विपरीत दिशा में नहीं होता।

प्रकाश का अवशोषण विविक्त पैकटों (discrete packets) में होता है जिन्हें फ़ोटॉन (photon) अथवा प्रकाश के क्वांटा (क्वान्टम एकवचन) कहते हैं। फ़ोटॉन की ऊर्जा हमें निम्नलिखित समीकरण से ज्ञात होती है

$$E = h\,\frac{c}{\lambda}$$

जिसमें h = प्लैंक का अचर (6.626×10^{-34} J*-s.)

C = प्रकाश का वेग (3.0×10^{8} ms^{-1})

λ = प्रकाश का तरंगदैर्ध्य (nm में)

$$E = \frac{6.62 \times 10^{-34} \times 3 \times 10^{8}}{\lambda}\ \text{J Photon}^{-1}$$

$$= \frac{1.988 \times 10^{-25}}{\lambda}\ \text{J Photon}^{-1} \qquad \ldots(1)$$

उदाहरण के लिए नीले प्रकाश के लिए E (λ = 450 nm) है :

$$E = \frac{1.988 \times 10^{-25}}{450 \times 10^{-9}} = 4.42 \times 10^{-19}\ \text{J Photon}^{-1}$$

$$= 4.42 \times 10^{-19}\ \text{J Photon}^{-1}$$

फ़ोटॉन के एक अणु के लिए (यानि 1 आइनस्टाइन के लिए) ऊर्जा होगी :

$$E = N \times h\,\frac{C}{\lambda}$$

N = *एवोगाड्रो - संख्या* (6.022×10^{23} फ़ोटॉन अथवा एक आइनस्टाइन (समीकरण (1) से

$$E = \frac{6.022 \times 10^{23} \times 1.988 \times 10^{-25}}{\lambda}$$

$$= \frac{0.1197}{\lambda}\ \text{J आइनस्टाइन}^{-1}$$

अतः हम फ़ोटॉन के एक आइनस्टाइन की ऊर्जा का आकलन 0.1197 को प्रकाश के तरंगदैर्ध्य से विभाजित करके प्राप्त कर सकते हैं।

J* = जूल (joule), 4.184 J = 1 कैलोरी।

आइए अब हम उस तरीके का बारीकी से अध्ययन करते हैं जिसके द्वारा क्लोरोफिल अणु H_2O से $NADP^+$ में इलेक्ट्रॉनों का अंतरण करने में मदद देते हैं। भौतिकी के नियमों के अनुसार न्यूनतम ऊर्जा वाले फ़ोटॉन से टकराने वाला इलेक्ट्रॉन — निम्न (lower) परमाणु आर्बिटल (orbital) से अगले उच्च-(higher) परमाणु आर्बिटल में जा सकता है। वास्तव में उच्च ऊर्जा वाले फ़ोटॉन से

— जैसे नीली रोशनी में — इलेक्ट्रॉन कूद कर अगली कक्षा में भी जा सकता है। फिर भी चूँकि उत्तेजित अवस्थाएं क्षणिक होती हैं, इसलिए इलेक्ट्रॉन की प्रवृत्ति अपनी ऊर्जा को शीघ्रता से पड़ौसी अणुओं को दे देने की होती है विशेषकर उन अणुओं को जो अपेक्षाकृत लंबे तरंगदैर्ध्य को अवशोषित करते हैं। अंतरण की सही क्रियाविधि आज भी भौतिकीविदों के लिए विवाद का विषय बनी हुई है परंतु हो सकता है कि एक अणु जिसे "एक्साइटॉन" (exciton) कहते हैं इस प्रक्रिया में मध्यस्थता करता हो। अंत में प्रकाश संश्लेषी यूनिट (photosynthetic unit) के अभिक्रिया केंद्र (reaction centre) में स्थित एक विशिष्ट क्लोरौफिल *a* अणु, अंतिम रूप में फ़ोटॉन की ऊर्जा को कैद करने वाले केंद्र के रूप में कार्य करता है।

यद्यपि इस बात के प्रमाण हैं कि प्रकाशसंश्लेषी यंत्रावली (photosynthetic machinery) दो प्रकार के प्रकाश-तंत्रों (phorosystems) यथा PS-I और PS-II वाले प्रकाश संश्लेषी यूनिटों के रूप में संगठित पाई जाती हैं, जो कि थाइलैकॉइड झिल्ली (thylakoid membrane) में अंतर्ग्रथित रहते हैं। इसकी विवेचना अगले खंड में की जाएगी और यहां हम संकल्पना के विकास के इतिहास को छोड़कर इस बात का अधिक बारीकी से अध्ययन करते हैं कि उनमें क्लोरोफिल के अणुओं की व्यवस्था कैसी होती है। प्रत्येक प्रकाश संश्लेषी यूनिट में लगभग 200 से 300 क्लोरोफिल अणु होते हैं। वास्तव में प्रकाश संश्लेषी यूनिटों में बहुत सारी प्रोटीनें (प्रत्येक प्रकाश-संश्लेषी यूनिट में लगभग 2 दर्जन) भी होती हैं। प्रत्येक यूनिट के परिधीय घटक (peripheral components) प्रकाश संग्राही सम्मिश्र (light harvesting complexes — LHC) होते हैं जहां क्लोरोफिल अणु बहुत संख्या में बंधित रहते हैं। प्रकाश-संग्राही सम्मिश्र एक भीतर क्रोड (core) को घेरे रहते हैं और इस कोड सम्मिश्र के केंद्र में अभिक्रिया केंद्र (reaction centre) होता है। प्रकाश-संग्राही सम्मिश्रों में सहायक वर्णक भी पाए जाते हैं और ये प्रकाश-संश्लेषण में सक्रिय विकिरण (photosynthetically active radiation PAR) के समस्त परिसर में प्रकाश का अवशोषण करते हैं। इन्हें सामान्यतः ऐन्टिना (antenna) वर्णक कहा जाता है क्योंकि ये काफ़ी कुछ उसी तरह से कार्य करते हैं जैसे छतों पर लगाए गए ऐन्टिना घरों के टी.वी. सैटों से जुड़ें रहते हैं। इन ऐन्टिनाओं द्वारा ग्रहण किए गए फ़ोटॉनों की ऊर्जा, विशिष्ट क्लोरोफिल *a* अणुओं (डैडी) में भेज दी जाती है जो कि प्रकाश-संश्लेषी यंत्रावली का केंद्र बनाते हैं।

अभिक्रिया केंद्र में पाए जाने वाले क्लोरोफिल *a* और ऐन्टिना जैसे स्थान पर पाए जाने वाले क्लोरोफिल *a* अणुओं में भेद यह होता है कि जब अभिक्रिया केंद्र के क्लोरोफिल को उत्तेजित किया जाता है तो परमाणु कक्षों से इलेक्ट्रॉन पूर्णतः बाहर निकल जाता है जिससे प्रकाश-आयनीकरण (photoionisation) हो जाता है। यह इलेक्ट्रॉन अंततः $NADP^+$ में चला जाता है। अभिक्रिया केंद्र का क्लोरोफिल *a* जो कि अब धनात्मक रूप में आवेशित होता है — H_2O से एक इलेक्ट्रॉन पुनः प्राप्त कर लेता है और इस प्रक्रिया में यह प्रोटॉनों और साथ ही ऑक्सीजन को भी मुक्त कर देता है (हम प्रोटॉनों के बारे में आगे चलकर चर्चा करेंगे)। सरल शब्दों में कहें तो क्लोरोफिल एक पंप के रूप में इलेक्ट्रानों को अंतरित करने का काम करता है और प्रकाश इस प्रक्रिया के लिए ऊर्जा प्रदान करता है। जैसाकि किसी ने कहा है पृथ्वी पर जीवन के लिए क्लोरोफिल से इलेक्ट्रॉन का कूदना, मनुष्य का किसी भी वस्तु को किसी भी हद तक उछाल सकने से अधिक महत्वपूर्ण है ("the jump of electron from chlorophyll *a* is more significant for life on earth than the highest "jump" of any object that human can effect!")

$$\text{Chl} \xrightarrow{\text{प्रकाश}} \text{Chl}^+ + e^-$$

$$NADP^+ + 2H^+ + 2e^- \longrightarrow NADPH + H^+$$

13.5 दो प्रकाशीय अभिक्रियाओं की खोज

विशुद्ध रूप से रसायन पक्ष की ओर थोड़ा ध्यान देने के पश्चात (जो कि सही रूप में जानकारी हासिल करने के लिए आवश्यक हैं, अब हम प्रकाशीय तथा अप्रकाशीय अभिक्रियाओं दोनों की क्रियाविधि का विस्तार से अध्ययन करते हैं। इस खंड का आरंभ हम प्रकाश बक्स (light box) से करते हैं

और प्रकाश-संश्लेषण के क्षेत्र में हुई एक महान संकल्पनात्मक प्रगति की चर्चा करतें हैं अर्थात् वह खोज जिससे मालूम हुआ कि प्रकाश अभिक्रियाएं दो हैं न कि एक, जैसाकि पहले माना जाता था।

13.5.1 प्रकाश संश्लेषण की क्वान्टम मांग

पिछले भाग-''प्रकाश संश्लेषण की क्रियाविधि को समझना'' में जब हम फ्लैशिंग प्रकाश प्रयोगों (flashing light experiments) की चर्चा कर रहे थे तो इस बात की पुष्टि करने पर जोर दिया गया था कि प्रकाश-संश्लेषण में प्रकाशीय और अप्रकाशीय अभिक्रियाएं होती हैं। परंतु इन प्रयोगों को करने के पीछे एक और उद्देश्य था, वह यह कि प्रकाश संश्लेषण की क्वान्टम आवश्यकता को निर्धारित कर सकें जिससे हमें इस प्रक्रिया की दक्षता तथा इसकी क्रियाविधि का समग्र रूप में अंदाजा लग सके। चूंकि निकलने वाली ऑक्सीजन की मात्रा से ही प्रकाश-संश्लेषी प्रक्रिया का पता चलता है, इसलिए जिस बात को प्रयोगात्मक रूप से सिद्ध करना आवश्यक था, वह यह थी कि ऑक्सीजन के एक अणु को उत्पन्न करने के लिए प्रकाश के कितने क्वान्टमों की आवश्यकता होती है।

इस शताब्दी के आरंभिक भाग में परमाणु-सिद्धांत के विकसित होने, साथ ही प्रकाश-संश्लेषण की नई समीकरण (यह कि ऑक्सीजन के एक अणु को उत्पन्न करने के लिए कम से कम 4 इलेक्ट्रानों की जरूरत पड़ती है और आइनस्टीन के प्रकाश रासायनिक समतुल्यता नियम Einstein's Law of phochemical equivalence) से प्रकाश संश्लेषण की क्वान्टम माँग (quantum requirement of photosynthesis) के अध्ययन ने बिल्कुल ही नया मोड़ लिया।

आइनस्टाइन के ''प्रकाश रासायनिक तुल्यता नियम'' के अनुसार, प्रकाश वैद्युत प्रभाव (photoelectric effect) में, फ़ोटॉन की एक टक्कर (one hit by a photon) लगने से एक अणु से एक समय में केवल एक ही इलेक्ट्रॉन बाहर निकल सकता है। अतः ऑक्सीजन के एक अणु के विमोचन (evolution) के लिए कुल क्वांटमों की आवश्यकता की जानकारी इस बात की संकेतक हो सकती हैं कि पानी से इलेक्ट्रॉन को बरास्ता उच्च ऊर्जा स्थिति जैसे कि NADPH में जाने के लिए कितनी टक्करों की आवश्यकता होगी।

प्रकाश संश्लेषण की नई समीकरण के अनुसार ऑक्सीजन के एक अणु के विमोचन के लिए H_2O के अणु से 4 इलेक्ट्रॉनों को निकालने की आवश्यकता होती है। अतः यदि क्वांटमों की जरूरत 4 है तो इसका अर्थ यह हो सकता है कि प्रकाश संश्लेषण में केवल एक इलेक्ट्रॉन को निकालने में केवल एक प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया योग देती है। तथापि यदि क्वांटमों की आवश्यकता 8 हो तो इसका मतलब यह होगा कि प्रत्येक इलेक्ट्रान को ऊपर की ओर जाने में दो चरणों से गुजरना होगा और इसी प्रकार क्रम चलता रहेगा (यह समझ लेना चाहिए कि क्वांटम आवश्यकता सरल गुणांकों में होती है और हमें 4, 8, 12 और इसी प्रकार की संख्याओं में से कोई संख्या चुननी होती है (चित्र 13.12)। यद्यपि वारवर्ग ने — जिन्होंने ये अध्ययन आरंभ किए थे — क्वांटम आवश्यकता 4 पाई जिससे प्रकाश-संश्लेषी प्रक्रिया की असाधारण दक्षता का भ्रामक विचार जन्मा जिससे, एमर्सन और आर्नोल्ड (Emerson and Arnold) ने तथा बाद में कई और शोधकर्ताओं ने यह पता लगाया कि क्वांटम आवश्यकता लगभग 8 थी जिसका अर्थ यह हुआ कि समग्र प्रकाश रासायनिक प्रक्रिया में दो चरणों में होने वाली अभिक्रिया होती है।

13.5.2 रेड ड्राप (Red drop)

तरंगदैर्ध्यों के फलन के रूप में क्वान्टम मांग (quantum requirement as a function of wavelength of light) के अध्ययन से भी इस बात का एक अन्य संकेत मिला कि दो प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाएं दो भिन्न प्रकाश तंत्रों में होती है। चूंकि क्वान्टम मांग का परिकलन वास्तव में एक यूनिट प्रकाश ऊर्जा द्वारा उत्पन्न ऑक्सीजन की मात्रा के रूप में किया जाता है इसलिए यह आशा की गई कि लगभग क्वान्टम मांग के लिए 400 से 700 nm तरंग दैर्ध्यों तक यानि दोनों छोरों तक स्पेक्ट्रम को लेते हुए जहां तक कि प्रकाश संश्लेषी वर्णकों द्वारा थोड़ा भी अवशोषण होता है (खींचा हुआ वक्र करीब-करीब स्थिर रहना चाहिए)। परंतु परिणाम अजीब थे। लाल प्रकाश में क्वान्टम उत्पादन

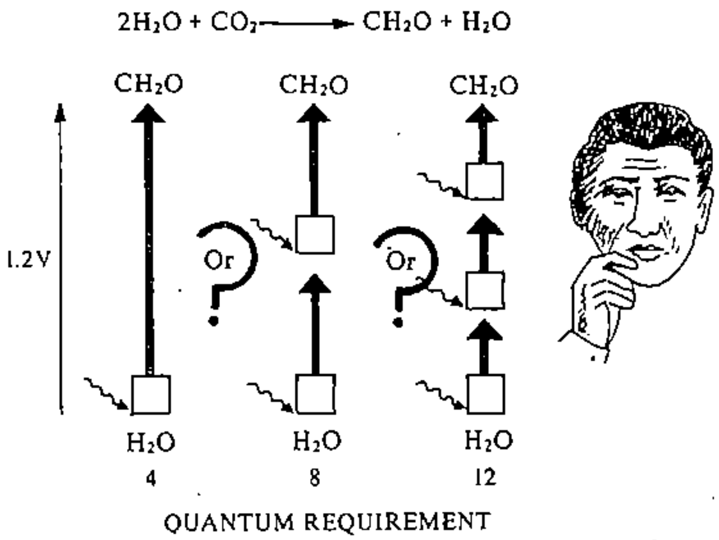

चित्र 13.12: a) आरेख में प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन के उत्पन्न करने में क्वांटम आवश्यकता पर किए जाने वाले अध्ययनों का महत्व दिखाया गया है। ऊपर दी गई समीकरण के अनुसार, क्लोरोफिल के अणुओं को टक्कर मारने वाले फ़ोटॉनों द्वारा 4 इलेक्ट्रॉनों को जल से मुक्त होना पड़ेगा। वर्गाकार बक्से अभिक्रिया केंद्रों (reaction centre) पर स्थित क्लोरोफिल अणुओं को व्यक्त करते हैं। 8 क्वांटमों की आवश्यकता से यह संकेत मिलता है कि प्रकाश संश्लेषण में प्रत्येक इलेक्ट्रॉन के अंतरण में कम से कम दो प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएं योग देती हैं।

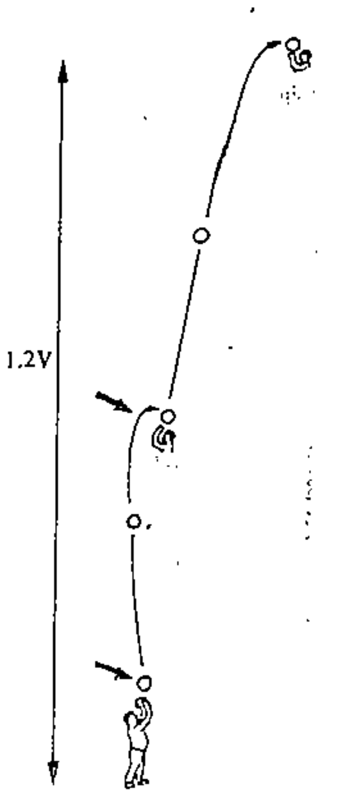

चित्र 13.12 : b) पानी से इलेक्ट्रॉन दो चरणों की प्रतिक्रिया से $NADP^+$ तक पहुंचते हैं यह कार्टून द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

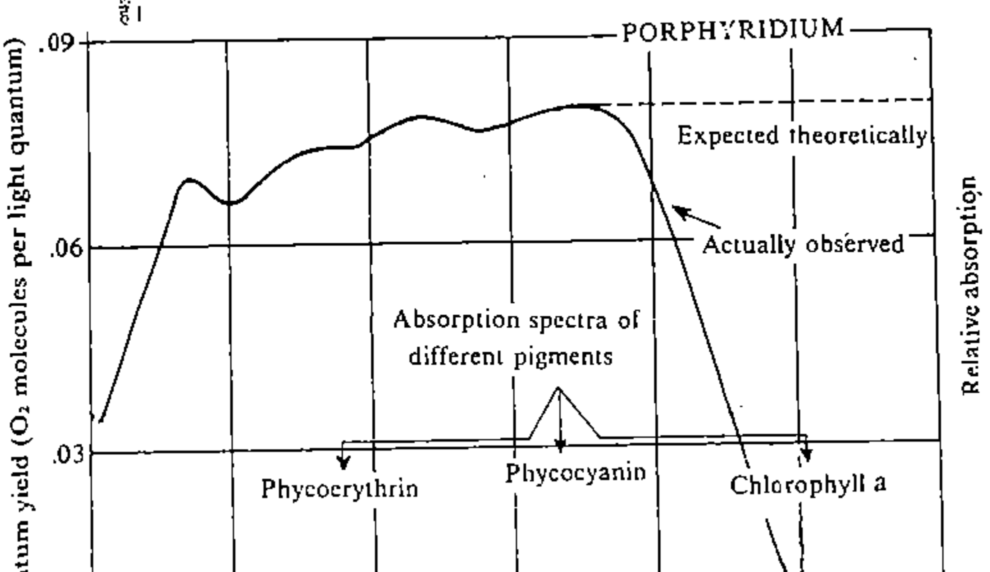

चित्र 13.13: प्रकाश-संश्लेषण के लिए क्वान्टम उत्पादन का क्रिया स्पेक्ट्रम अर्थात् तरंग दैर्ध्यों के फलन के रूप में विमोचित ऑक्सीजन का उत्पादन प्रति क्वान्टम अवशोषण से। सबसे ऊपर की ठोस रेखा स्पेक्ट्रम के विभिन्न क्षेत्रों द्वारा सैद्धांतिक रूप में क्वांटम उत्पादन को दर्शाती है। ठोस रेखा यह सिद्ध करती है कि वास्तव में लाल क्षेत्र में इसमें गिरावट आई है जबकि क्लोरोफिल *a* अभी भी अवशोषण कर रहा है। तथापि यदि लाल प्रकाश के साथ ही साथ निम्न तरंगदैर्ध्य वाली मंद प्रकाश डाली जाए तो क्वान्टम उत्पादन फिर से उतना ही हो जाता है।

(विमोचित ऑक्सीजन के अणुओं की संख्या प्रति एक क्वान्टम अवशोषित प्रकाश से) एक दम गिर गया जब O_2 का उत्पादन प्रकाश संश्लेषण के लिए लाल प्रकाश देकर निर्धारित किया गया (हालांकि क्लोरोफिल *a* ने लाल प्रकाश अवशोषित किया)। लाल तरंगदैर्ध्यों के प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण में घटोतरी को "रैड ड्राप" कहा जाता है। रैड ड्राप विशेष रूप से लाल शैवालों पर किए गए प्रयोगों से स्पष्ट थी। यह और भी परेशानी की बात थी।

रेडॉक्स अभिक्रियाएँ (Redox Reactions)

जिन अभिक्रियाओं में इलेक्ट्रॉनों का अंतरण एक अणु से दूसरे अणु में होता है उन्हें उपचयन-अपचयन (उपापचयन) अभिक्रियाएँ अथवा **रेडॉक्स अभिक्रियाएँ** कहते हैं। जिस अणु से इलेक्ट्रॉन निकलता है वह उपचित या आक्सीकृत (oxidised) होता है और जिसमें इलेक्ट्रॉन जाता है वह अपचित (reduced) होता है। पूर्ण रेडॉक्स अभिक्रिया में दोनों कार्य साथ-साथ ही होते हैं :

$$y_{(red)} \rightarrow y_{(ox)} + e^-$$
$$x^+_{ox} + e^- \rightarrow x_{(red)}$$
$$x_{(ox)} + y_{(red)} \rightarrow x_{(red)} + y_{(ox)}$$

X के उपचयित और अपचयित रूप **रेडॉक्स युग्म** (redox couple) कहलाते हैं और इन्हें $x_{(ox)}/x_{(red)}$ लिखा जाता है। इलेक्ट्रॉनों के अंतरण से संगुणित ऊर्जा (मानक जैविक दशाओं में—standard biological conditions) को मानक अपचयन विभव (standard reduction potential-E_0') के रूप में व्यक्त किया जाता है जिसकी गणना वोल्टों में होती है। चूँकि विभिन्न रेडॉक्स युग्म वाले इलेक्ट्रॉनों से सगुणित ऊर्जा में विविधता पाई जाती है इनको एक पैमाने पर रखा जा सकता है। हाइड्रोजन को यादृच्छिक मानक जीरो दिया जाता है (इसका $pH = 7.0$ पर मान, $E_0' = -0.42$ वोल्ट होगा)। $2H^+/H_2$ रेडॉक्स युग्म से अधिक ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉनों से संबंधित रेडॉक्स युग्म के E_0' मानों को ऋण चिह्न और $2H^+/H_2$ से कम ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉनों से संबंधित रेडॉक्स युग्म के लिए धनात्मक चिह्न दिया जा सकता है। उच्चतम ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉन (अधिकतम ऋणात्मक) वाला रेडॉक्स युग्म को रेडॉक्स मापनी के सबसे ऊपर और न्यूनतम ऊर्जा वाले रेडॉक्स युग्म (अधिकतम धनात्मक) को सबसे नीचे की ओर व्यवस्थित किया जाता है। इलेक्ट्रॉन का स्वतः अंतरण केवल नीचे की दिशा में ही हो सकता है। जैविक तंत्रों के कुछ महत्वपूर्ण रेडॉक्स युग्मों को तालिका 13.1 में दिया गया है।

तालिका 13.1 : जैविक महत्व के कुछ महत्वपूर्ण रेडॉक्स युग्म विभव

रेडॉक्स युग्म	अंतरित इलेक्ट्रॉनों की संख्या	E_0' (वोल्ट)
ऐसीटेट + $CO_2 + 2H^+$ /पाइरुवेट + H_2O	2	−0.70
क्लोरोफिल : P_I^+/P_I^*	1	−0.60
फेरोडॉक्सिन ox/red	1	−0.43
$2H^+/H_2$	2	−0.42
$S + 2H^+/H_2S$	2	−0.23
क्लोरोफिल : P_{II}/P_{II}^*	1	−0.20
FAD (फ्लैविन एडेनीन डाइन्यूक्लिओटाइड) + 2H/$FADH_2$ (मुक्त)	2	−0.18
मानक हाइड्रोजन अर्ध सेल ($2H^+/H_2$)	2	$E_0' = 0.00$
साइटोक्रोम b (Fe^{3+}/Fe^{2+})	1	0.06
यूबिक्विनोन ox/red	2	0.10
Cu^{2+}/Cu^+	1	0.15
हीमोग्लोबिन (Fe^{3+}/Fe^{2+})	1	0.17
साइटोक्रोम C (Fe^{3+}/Fe^{2+})	1	0.22
साइटोक्रोम a (Fe^{3+}/Fe^{2+})	1	0.29
$2H^+ + O_2/H_2O_2$	2	0.30
क्लोरोफिल : P_I^*/P_I°	1	0.40
Fe^{3+}/Fe^{2+}	1	0.77
$2H^+ + \frac{1}{2}O_2/H_2O$	2	0.82
क्लोरोफिल : P_{II}^+/P_{II}°	1	0.90

P_I^*, P_I^+ तथा P° उत्तेजित, इलेक्ट्रॉन की कमी वाली तथा आधारिक अवस्था को व्यक्त करते हैं।

इलेक्ट्रॉन परिवहन मार्ग की मुख्य विशेषता यह है कि (चित्र 13.15 देखिए) H_2O से $NADP^+$ में इलेक्ट्रॉन को अंतरित करने में अनेक इलेक्ट्रॉन वाहक योग देते हैं। इनमें से दो cyt b_6 और cyt f (cyt = साइटोक्रोम) श्वसन में योग देने वाले साइटोक्रोमों से मिलते-जुलते हैं। तथापि हरी पत्ती में पाए जाने वाले साइटोक्रोम अद्वितीय (unique) होते हैं। इनके अलावा कुछ अन्य इलेक्ट्रॉन वाहक, जैसे कि प्लास्टोक्विनोन (plastoquinone), प्लैस्टोसायनिन (plastocyanin), फेरोडोक्सिन (ferrodoxin) है, जो श्वसन इलेक्ट्रॉन अंतरण शृंखला के वाहकों से मिलते-जुलते है (कोशिका-जीवविज्ञान की यूनिट 11 को देखिए)। आप चित्र में देख सकते हैं कि दोनों प्रकाश-तंत्र एक "अप्रकाशित सेतु" (dark bridge) द्वारा जुड़े हुए हैं जिसमें थोड़ी दूर तक इलेक्ट्रॉन एक वाहक से दूसरे वाहक तक प्रकाश की आवश्यकता के बिना चले जाते हैं। यह इसलिए संभव होता है कि प्रत्येक प्रकाश-रासायनिक क्रिया में इलेक्ट्रॉन उस हद तक उत्तेजित होता है जो हद अगले प्रकाश-तंत्र को उत्तेजित करने के लिए आवश्यक हद से कुछ अधिक होती है। ऐसा माना जाता है कि इलेक्ट्रॉनों की उतार (चित्र 13.15 ध्यान से देखिए) वाली यात्रा (down hill) अतिरिक्त ATP अणुओं के संश्लेषण की क्रियाविधि उपलब्ध कराती है।

बोध प्रश्न 4

क) प्रकाश संश्लेषण में एक के बजाए दो प्रकाश-रासायनिक अभिक्रियाएं होने के प्रमाणों को लिखिए।

....

....

....

....

ख) निम्नलिखित कथनों में उपयुक्त शब्दों की सहायता से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

i) प्रकाश संवेदी वर्णक एक समय में .... इलेक्ट्रॉनों का अंतरण करते हैं जबकि $NADP^+$ के अणु को अपने अपचयन के लिए .... इलेक्ट्रॉनों की ज़रूरत होती है।

ii) क्लोरोफिल द्वारा ग्रहण की गई प्रकाश-ऊर्जा कमज़ोर से .... दाता से मज़बूत से दाता बनाने के काम में आती है।

iii) .... वर्णकों द्वारा अवशोषित प्रकाश ऊर्जा .... के एकल अणु में चली जाती है।

iv) P .... से बाहर निकाला गया इलेक्ट्रॉन, इलेक्ट्रॉन अंतरण शृंखला के जरिए P .... पर पहुँच जाता है। इलेक्ट्रॉन का अंतिम ग्राही .... होता है।

ग) निम्नलिखित कथनों में कोष्ठकों में दिए गए विकल्पी शब्दों में से सही शब्द का चयन कीजिए:

i) प्रकाश संश्लेषण की सापेक्ष क्वांटम दक्षता स्पेक्ट्रम के रेड क्षेत्र में (घटती/बढ़ती) है।

ii) जब किसी पत्ती पर लाल रोशनी के साथ-साथ नीली रोशनी भी डाली जाती है तब प्रकाश संश्लेषी क्वांटम दक्षता में [बढ़ोतरी/रेड ड्रॉप] होती है।

iii) PSI पर अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल अणु *a*, PSII की अपेक्षा (उच्च/निम्न) ऊर्जा फोटॉन को अवशोषित करता है।

घ) निम्नलिखित कथनों में से कौन से सही हैं। दिए गए बक्सों में सही के लिए स और गलत के लिए ग लिखिए:

i) $NADP^+$ के प्रकाश-अपचयन (photoreduction) के लिए CO_2 की ज़रूरत होती है। ☐

ii) धनात्मक रेडॉक्स विभव वाले रेडॉक्स युग्म से इलेक्ट्रॉन ऋणात्मक रेडॉक्स विभव वाले रेडॉक्स युग्म में जा सकते है। ☐

iii) इलेक्ट्रॉन अंतरण श्रृंखला में, उच्च ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉन जब ऋणात्मक रेडॉक्स विभव से नीचे की ओर धनात्मक रेडॉक्स विभव की ओर जाते हैं तो ATP का निर्माण होता है। ☐

iv) PS I में अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल *a*, PS II में अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल *a* की तुलना में, अधिक ऊर्जा का अवशोषण करता है। ☐

v) दृश्यमान स्पेक्ट्रम के पीले क्षेत्र में अवशोषण करने वाले वर्णक अणु अपनी ऊर्जा को, नारंगी क्षेत्र में अवशोषण करने वाले वर्णकों को अंतरित कर सकते हैं। ☐

vi) ऑक्सीजन के एक अणु को उत्पन्न करने में 8 क्वांटम प्रकाश की आवश्यकता होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि क्लोरोफिल अणु से कुल 8 इलेक्ट्रॉन बाहर निकाले जाते हैं। ☐

Melvin Calvim

13.6 अप्रकाशीय अभिक्रियाएँ

13.6.1 केल्विन चक्र

अब हम इस स्थिति में आ गए हैं कि प्रकाश संश्लेपण की अप्रकाशीय अभिक्रियाओं पर विचार कर सकें। CO_2 के स्थिरीकरण के प्रक्रम पर वैज्ञानिक मेल्विन कैल्विन (Melvin Calvin) ने प्रकाश डाला था जो कि बर्कले में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में रसायनशास्त्र के प्रोफेसर थे। कार्बन के रेडियम सक्रिय आइसोटोप C^{14} का प्रयोग करके उन्होंने जो खोज की उसे आज हम उन्हीं के सम्मान में *कैल्विन चक्र* कहते हैं। इस खोज के लिए उन्हें नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

उन्होंने निलम्बित (suspended) *क्लोरेला* कोशिकाओं में रेडियम सक्रिय सोडियम बाइकार्बोनेट ($NaHC^{14}O_3$ जो कि $C^{14}O_2$ का उत्पादन करता है) मिलाया। एक कांच के बर्तन में जो लोलीपोप (lollipop) के आकार का था (चित्र 13.16); निलम्बन को रखा गया। थोड़े समय प्रदीप्त करने के बाद इसके पदार्थों का गर्म ऐल्कोहॉल में निष्कर्षण किया गया और वाष्पन द्वारा उन्हें सांद्रित किया गया। इसके रचक तत्वों को क्रोमैटोग्राफी द्वारा पृथक किया गया। जो पदार्थ रेडियम सक्रिय थे उनकी पहचान रेडियोग्राफी की तकनीक द्वारा की गई। ऑटोरेडियोग्राम (autoradiogram) पर जब किसी धब्बे (spot) में यौगिक की पहचान हो जाती है तो मूल ऑटोग्राम से वह धब्बे का हिस्सा काट दिया जाता है और उचित विलायक में उसे रखकर यौगिक निक्षालित (extract) कर लिया जाता है फिर उसकी संरचना तथा अन्य विशेषताओं की जानकारी हासिल की जाती है (चित्र 13.17)।

रसायनशास्त्री होने के कारण कैल्विन एक कदम और आगे बढ़े उन्होंने "आण्विक विच्छेदन" (molecular dissection) की तकनीक का प्रयोग किया। उन्होंने प्राप्त रेडियमसक्रिय मध्यवर्ती में अंतिम कार्बन परमाणु को अपचित करके $C^{14}O_2$ में बदला और इस $C^{14}O_2$ को बेरियम हाइड्रॉक्साइड के विलयन से गुज़ार कर $BaCO_3$ के रूप में प्राप्त किया। तत्पश्चात् कार्बन परमाणुओं में रेडियम सक्रियता को गाइगर मुलर काउंटर (Geiger- Müller counter) द्वारा ज्ञात किया गया। इस प्रकार न केवल वे दिए गए नमूने यौगिक में यह जान सके कि अमुक कार्बन परमाणु रेडियम सक्रिय है या नहीं, वरन् यह भी पता कर सके कि वह किस हद तक रेडियम सक्रिय है। उन्होंने मालूम किया कि प्रकाश संश्लेषण के कुछ ही सैकंडों में रेडियम सक्रिय होने वाला सबसे पहला यौगिक तीन कार्बन वाला यौगिक-3 फॉस्फोग्लिसरिक ऐसिड (3-PGA) था। चित्र 13.17 देखिये। चूंकि केवल अंतस्थ (terminal) कार्बन परमाणु ही रेडियम सक्रिय था इससे यह बात साफ हो गई कि CO_2 का योग पहले से विद्यमान ग्राही अणु (acceptor molecule) से हुआ। शुरू में यह ग्राही 2-कार्बन

चित्र 13.16: कार्बन डाइऑक्साइड के स्थिरीकरण के मार्ग को जानने के प्रयोगों के लिए केल्विन द्वारा लोलीपाप उपकरण का प्रयोग।

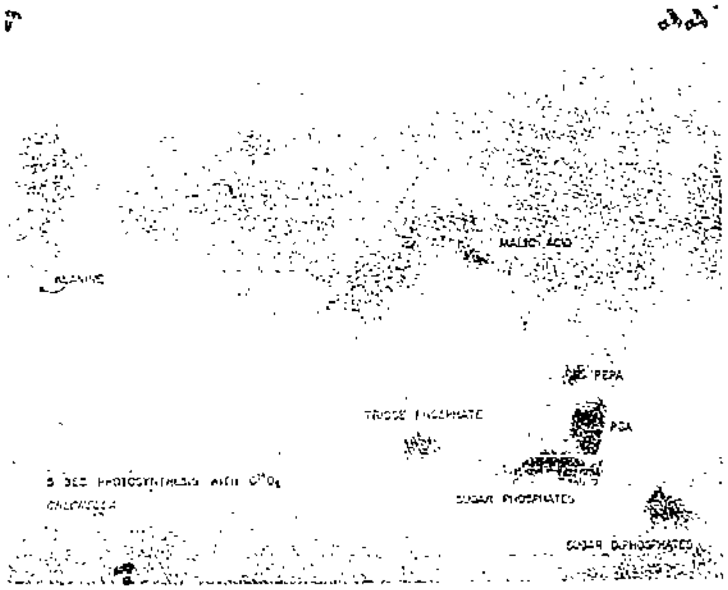

चित्र 13.17: रेडियोऑटोग्राफ मे दृष्टिगत कार्बन डाइऑक्साइड के स्थिरीकरण के उत्पाद (विवरण के लिए मूल पाठ देखिए) यहाँ यह देखा जा सकता है कि अधिक रेडियोसक्रियता 3-PGA में विद्यमान है।

वाला अणु सोचा गया परंतु बाद में पता लगा कि यह ग्राही अणु 5-C वाली शर्करा रिब्युलोज़ बिस फ़ॉस्फ़ेट (RuBP) है और साथ ही CO_2 को स्थिर करने वाले अनुरूपी एन्ज़ाइम *रिब्युलोज-बिस-फ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज* (जिसे रूबिस्को कहा जाता है) का भी पता चला चूँकि अभी तक किसी भी

6-कार्बन वाले मध्यवर्ती की पहचान नहीं हो पाई है इसलिए लगता है मध्यवर्ती तुरंत ही दो 3 कार्बन वाले दो यौगिकों—फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल और डाइहाइड्रॉक्सी ऐसीटोन फ़ॉस्फ़ेट में विखंडित हो जाता है। यह पूर्ण रूप से ज्ञात है कि ये दोनों यौगिक ग्लाइकोलिटिक मार्ग से उत्पन्न होने वाले मध्यवर्तीय है।

स्पष्ट रूप में कहा जाए तो प्रकाश संश्लेषण के किसी पर्याप्त स्तर तक चलते रहने के लिए किसी CO_2 ग्राही का लगातार उत्पन्न होना जरूरी होता है। कैल्विन चक्र — जिसका चित्रण चित्र 13.18 में किया गया है — संक्षेप में उस क्रियाविधि को स्पष्ट करता है जिसके द्वारा ग्राही अणु RuBP पुनर्योजित होता है। यदि हम 6 RuBP से शुरू करें तो बनने वाले 12 PGAL अणुओं में से वास्तव में केवल दो ही ग्लूकोज़ के एक अणु के संश्लेषण में योग देते हैं जो बाद में अन्य पदार्थ बनाते हैं, जैसे स्टार्च, सैल्यूलोज़, इत्यादि। शेष 10 कार्बन परमाणु अभिक्रियाओं के एकक्रम से होकर पुनः चक्रण

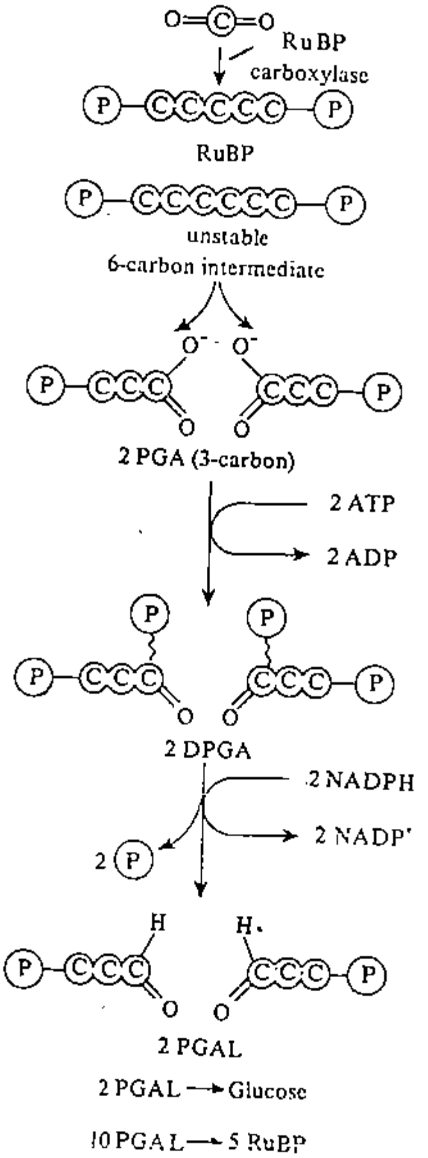

चित्र 13.18: कैल्विन चक्र के ज़रिए कार्बन स्थिरीकरण। कार्बन-डाइऑक्साइड रिब्यूलोज़ बिस फ़ॉस्फ़ेट के साथ जुड़कर अस्थायी 6 कार्बन मध्यवर्ती बनाती है जो कि फ़ॉस्फ़ोग्लिसरेट (PGA) में टूट जाता है। ATP द्वारा PGA के फ़ॉस्फ़ेटीकरण से डाइफ़ॉस्फ़ोग्लिसरेट (DPGA) बनता है जो कि NADPH द्वारा PGAL में अपचित हो जाता है। $6CO_2$ अणुओं के स्थिरीकरण द्वारा उत्पन्न 12 PGAL में से 2 मिलकर ग्लूकोज़ का एक अणु बनाते हैं और शेष 10 PGAL अणु पुनर्योजित होकर RuBP के 6 अणुओं का पुनर्योजन करते हैं जिनको कैल्विन चक्र को शुरू करने के लिए ज़रूरत होती है। PGAL के निर्माण के लिए प्रत्येक PGA को एक ATP और एक NADH की ज़रूरत होती है। तीसरे ATP की RuBP के पुनर्योजन के लिए जरूरत पड़ती है। कुल मिलाकर एक ग्लूकोज़ अणु को उत्पन्न करने में 12 NADPH और 18 ATP अणुओं की आवश्यकता होती है।

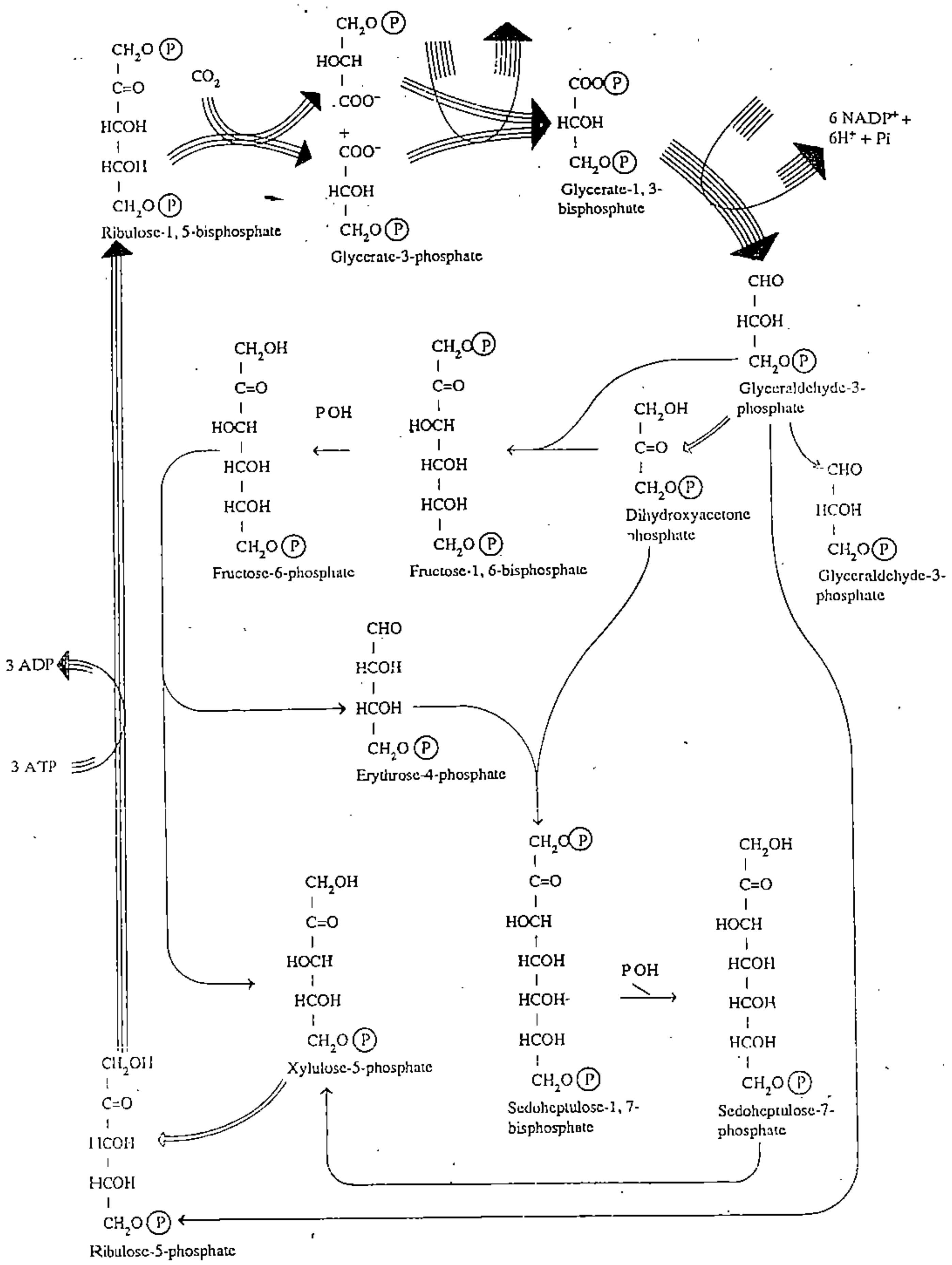

चित्र 13.19: केल्विन चक्र की अभिक्रियाओं का विस्तार से विवरण।

करते हैं जिनमें 4-C, 5-C, और 7-C मध्यवर्ती योग देते हैं और 10 PGA से RuBP के 5 अणुओं को पुनर्योजित करते हैं। कैल्विन चक्र के विद्यमान होने की पुष्टि न केवल विभिन्न शर्कराओं के कार्बन परमाणु में रेडियम-सक्रियता के वितरण के विश्लेषण द्वारा होती है वरन् रूबिस्को — जिसका जिक्र पहले किया जा चुका है — के अलावा इस प्रक्रिया से संबंधित विभिन्न एन्ज़ाइमों के पृथक्कण द्वारा भी होती है। चित्र 13.19: से यह भी स्पष्ट होता है कि इस चक्र को चलाने में ATP और NADPH अणुओं की जरूरत होती है। कार्बन स्थिरीकरण की कुल मिलाकर जो अभिक्रिया सामने आती है वह आगे दी जा रही है:

$$6RuBP + 6CO_2 + 12NADPH + 12H^+ + 18ATP \rightarrow$$
$$5RuBP + C_6H_{12}O_6 + 12NADP^+ + 18ADP + 18Pi$$

बोध प्रश्न 5

क) मेल्विन कैल्विन ने CO_2 के स्थिरीकरण में कार्बन के मार्ग को स्पष्ट किया। निम्नलिखित कथन उनकी इस पद्धति को स्पष्ट करते हैं। कथनों में जो शब्द नहीं हैं उन्हें लिखकर पूरा कीजिए।

i) .... $NaHCO_3$ का प्रयोग $C^{14}O_2$ के उत्पादन के लिए किया गया था।

ii) .... तकनीक का प्रयोग रेडियमसक्रिय कार्बन के मार्ग का पता लगाने के लिए किया गया था।

iii) .... की तकनीक ने अंतस्थ कार्बन परमाणु को CO_2 में बदल दिया।

iv) कार्बन परमाणुओं में रेडियमसक्रियता की पहचान .... काउंटर द्वारा की गई थी।

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए:

i) प्रथम यौगिक, जिसमें रेडियमसक्रियता दिखाई दी, ... था।

ii) CO_2 ग्राही अणु .... था।

iii) CO_2 स्थिरीकरण का अंतिम उत्पाद .... था।

iv) CO_2 के 6 अणुओं के स्थिरीकरण के लिए ATP अणुओ की संख्या .... है।

v) ग्लूकोज़ के एक अणु के उत्पादन के लिए काम में आने वाले ATP अणुओं की संख्या .... है।

vi) $6CO_2$ के स्थिरीकरण के लिए प्रयुक्त NAPH की संख्या .... है।

vii) एक RuBP के पुनर्योजन के लिए आवश्यक ATP अणुओं की संख्या .... है।

13.7 प्रकाश श्वसन और C_4 पौधे

13.7.1 प्रकाश श्वसन

प्रकाश संश्लेषण लाखों करोड़ों वर्षों से होता आ रहा है इससे यह लग सकता है कि CO_2 स्वांगीकरण की क्रिया-प्रणाली का विकास पूर्ण रूप से हो गया होगा। फिर भी प्रकाश संश्लेषण में जो महान कठिनाइयाँ सामने आती हैं उनमें से एक स्वयं *रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज़* के साथ है जो कि CO_2 स्थिरीकरण से संबंधित प्रमुख एन्ज़ाइम है। इसका उत्प्रेरक स्थल ऐसा होता है कि एन्ज़ाइम CO_2 और O_2 में पूर्णतः भेद नहीं कर पाता है। इसलिए O_2 भी CO_2 के अणुओं के साथ उत्प्रेरक स्थल पर आबंधित होने की कोशिश करती है और अक्सर रिब्युलोस बिस फ़ॉस्फ़ेट को 3 कार्बन वाले PGA में जो कि सामान्यतः उत्पन्न होने चाहिए — में विखंडित न करके फ़ॉस्फ़ोग्लाइकोलिक अम्ल (2 कार्बन वाला यौगिक) और 3C- फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल (चित्र 13.20) में विखंडित कर देती है। इस अभिक्रिया की खोज के पश्चात इस एन्ज़ाइम को सामान्यतः *रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज़ ऑक्सीजनेज़* कहते हैं। ऑक्सीजनेज़ क्रिया बड़ी महत्वपूर्ण होती है क्योंकि प्रकृति में O_2 के अणुओं की मात्रा CO_2 के अणुओं की मात्रा से काफ़ी अधिक होती है। स्थानीय रूप में अर्थात् पत्ती के भीतर O_2 की सांद्रता इससे भी अधिक हो सकती है जितनी कि वायुमंडल में होती है।

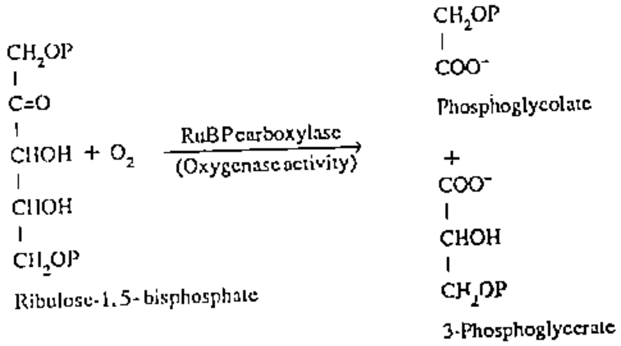

चित्र 13.20: RuBP कार्बोक्सिलेज़ एन्ज़ाइम की ऑक्सीजनेज़ सक्रियता दर्शाने वाली अभिक्रियाएं।

ग्लाइकॉलिक अम्ल का उपदन एक क्षतिपूर्ण क्रिया है क्योंकि इससे न केवल शक्तिशाली कार्बन परमाणु की क्षति होती है जिसे स्थिर किया जा सकता था बल्कि यौगिकों की उपचयन की स्थिति (state of oxidation) पहले से उच्च हो जाती है जितनी कि ऑक्सीजनेज़ अभिक्रिया से पहले विद्यमान थी। अंततः ग्लाइकॉलेट की रचना करने वाले दो कार्बन परमाणुओं में से एक CO_2 के रूप में श्वसन द्वारा बाहर निकल जाता है। अतः CO_2 का स्थिरीकरण करने के बजाए पौधे अधिक तीव्र प्रकाश की दशा में वास्तव में CO_2 को उत्पन्न करते हैं — यही वह प्रक्रिया है जिसे "प्रकाश श्वसन" (photorespiration) कहते हैं परन्तु इस प्रक्रिया में ऊर्जा का मोचन नहीं होता है। ऐसा अनुमान है कि यदि ऑक्सीजनेज़ की क्रिया और प्रकाश श्वसन को रोका जा सकता तो पौधे 30 प्रतिशत और अधिक कार्बन को स्थिर करते।

बहुत वर्ष पहले ओटो वारबर्ग (Otto Warburg) ने स्वयं यह देखा था कि O_2 की सांद्रता के बढ़ने पर *क्लोरेला* में प्रकाश संश्लेषण अवरूद्ध हो जाता है। बाद में 60 वें दशक में वनस्पतिविदों ने उच्च कोटि के पौधों पर प्रयोग शुरू किए। उन्होंने देखा कि यदि पौधों को लगातार रोशनी में रखकर और फिर अंधेरे में रखकर CO_2 की उत्पत्ति को मापा जाए — तो कुछ पौधों में निवल CO_2 के उत्पादन में क्षणिक विस्फोट (transient burst) होता है। विचित्र रूप में यह विस्फोट उस समय अधिक तीव्र होता है जब वायुमंडल में O_2 की सांद्रता अधिक होती है। अतः प्रकाश श्वसन के होने की आशंका बहुत पहले से चली आ रही थी। तथापि O^{18} के प्रयोग द्वारा ही इसका सुनिश्चित प्रमाण प्राप्त हुआ जिससे ऑक्सीजन की खपत को पौधे को लगातार प्रकाश में रखने पर भी मापना संभव हुआ। जब O^{18} की खपत को आसपास के वातावरण में द्रव्यमान स्पेक्ट्रमिकी (mass spectrometry) द्वारा मॉनीटर किया गया तो यह पता चला कि प्रकाशित किए जाने के बाद O^{18} की खपत की दर काफ़ी बढ़ जाती है।

CO_2 कैसे उत्पन्न होती है इस क्रियाविधि की विस्तार से खोज अमरीकी जैव रसायनज्ञों ने की है और इसे चित्र 13.21 में प्रदर्शित किया गया है। इस योजना के अनुसार फ़ॉस्फ़ोग्लाइकॉलिक अम्ल, परऑक्सिसोमों (peroxisomes) में प्रवेश करता है और वहाँ यह ग्लाइकॉलेट में बदल जाता है तथा इसका आगे ऑक्सीकरण ग्लॉयाक्सिलेट (glyoxylate) में हो जाता है। ग्लॉयाक्सिलेट के ट्रांसएमिनेशन (transamination) द्वारा ग्लाइसिन उत्पन्न होता है (2 कार्बन वाला ऐमीनो अम्ल)। यह ग्लाइसिन अब माइटोकॉन्ड्रियम में प्रवेश कर लेता है जहाँ ग्लाइसिन के दो अणुओं से *सेरीन* (serine) का एक अणु बनता है और इस प्रक्रिया में CO_2 और NH_3 का एक-एक अणु मोचित होता है। ऐमीनोअम्ल सेरीन (3 कार्बन वाला यौगिक) जब फिर से परऑक्सिसोमों में प्रवेश करता है तो विऐमीनीकृत होकर ग्लिसरिक अम्ल बना देता है जो कि क्लोरोप्लास्टों में पुनः फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल में बदल जाता है। स्पष्टतः इस संपूर्ण मार्ग के लिए तीन अंगकों क्लोरोप्लास्टों, परऑक्सिसोमों और माइटोकॉन्ड्रियमों — में जैव रासायनिक क्रियाओं में निकट सहयोग की आवश्यकता होती है। यह बात ध्यान देने की है कि इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफों में ये तीनों अंगक एक-दूसरे के बहुत निकट संपर्क में पाए जाते हैं जिससे यह संकेत मिलता है कि वास्तव में इनमें कोई महत्वपूर्ण कार्यात्मक संबंध होता है।

आगे चलकर स्पष्ट हो जाएगा कि यह मार्ग, ग्लाइकोलेट के दो अणुओं में से यानि 4 कार्बन परमाणुओं में से तीन कार्बन परमाणुओं के पुनःचक्रण का काम करता है (जिससे अंत में PGA बनता है)। इनमें से एक कार्बन परमाणु CO_2 के रूप में निकल जाता है। साथ ही दो NH_2 वर्गों में से — जो कि ट्रांसऐमिनेशन अभिक्रिया में योग देते हैं — एक NH_3 के रूप में निकल जाता है।

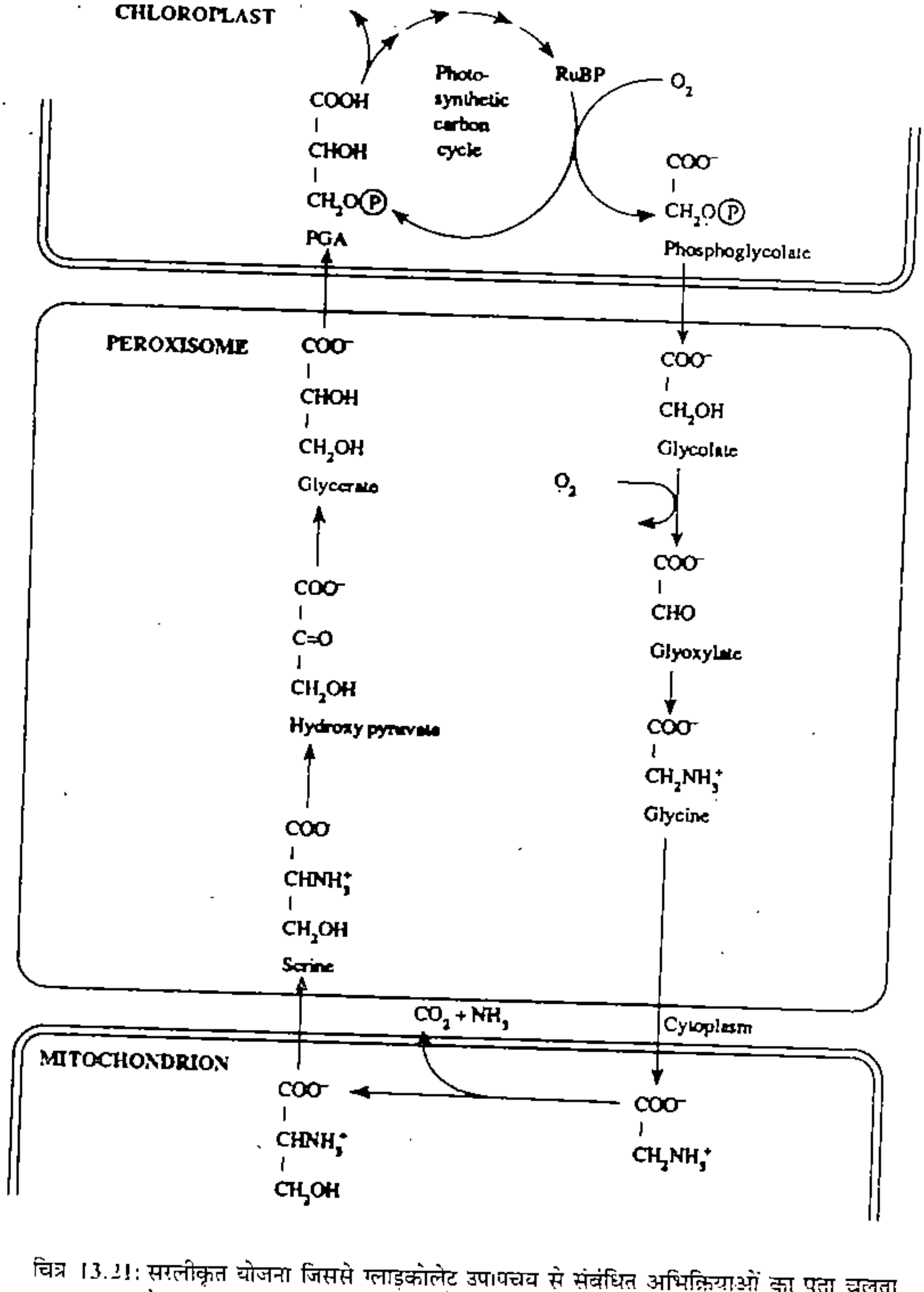

चित्र 13.21: सरलीकृत योजना जिससे ग्लाइकोलेट उपापचय से संबंधित अभिक्रियाओं का पता चलता है। RuBP कार्बोक्सिलेज़ एन्ज़ाइम की केवल ऑक्सीजनेज़ क्रिया ही दिखाई गई है जिसके फलस्वरूप ग्लाइकॉलिक अम्ल का निर्माण होता है। ये अणु कोशिकाद्रव्य से जिन अंगकों में चले जाते हैं उन्हें *परऑक्सिसोम अथवा ग्लॉयाक्सिसोम कहते हैं। ये अंगक ग्लाइकॉलेट को ग्लॉयाक्सिलेट* में बदल देते हैं और फिर *ग्लाइसिन* में जो कि अब माइटोकॉन्ड्रियम में चला जाता है। यद्यपि यह माना जाता है कि प्रकाश श्वसनी CO_2 अंततः माइटोकॉन्ड्रियमों से बाहर निकलती है — फिर भी श्वसन की यह क्रिया-विधि माइटोकॉन्ड्रियमों में सामान्यतः होने वाली क्रिया से बिल्कुल भिन्न होती है।

एक बारगी में तो CO_2 और NH_3 की क्षति केवल बेकार की प्रक्रिया प्रतीत होती है परंतु इस चक्र को दूसरी दृष्टि से भी देखा जा सकता है। कम से कम कार्बन के एक परमाणु की (और एक परमाणु

नाइट्रोजन की) हानि द्वारा तीन अन्य कार्बन परमाणुओं का संरक्षण हो जाता है और फ़ॉस्फ़ोग्लिसरेट के एक अणु का निर्माण होता है जो कि अपचित होकर फ़ॉस्फ़ोग्लिसरैल्डिहाइड में बदलने को तैयार होता है और कैल्विन चक्र में प्रवेश कर सकता है या सीधे ही शर्करा में वदल सकता है। इस दृष्टि से देखने पर प्रकाश श्वसन पौधों के हित में ही होता है अतः हमें इसे एक आवश्यक अनिष्ट मानना होगा।

13.7.2 C_4 पौधे

एक और महत्वपूर्ण क्रियाविधि — जिसको पौधों ने CO_2 को ग्रहण करने के लिए विकसित किया है (C_4 चक्र से जितनी CO_2 का स्थायीकरण होना संभव है उसके अलावा) वह एक अन्य एन्ज़ाइम द्वारा संपन्न होती है जिसे फ़ॉस्फ़ोईनॉल पाइरुवेट कार्बोक्सिलेज़ (PEP कार्बोक्सिलेज़) कहते हैं। यह निम्नलिखित अभिक्रिया से स्पष्ट होता है:

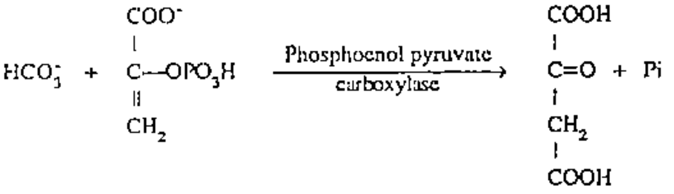

Phosphoenol pyruvate (PEP) — Oxaloacetic acid (OAA)

इसमें कार्बन डाइऑक्साइड एक तीन कार्बन वाले यौगिक द्वारा ग्रहण की जाती है जिसे फ़ॉस्फ़ोईनॉल पाइरुविक अम्ल (PEP) कहते हैं। यह 4 कार्बन वाले अम्ल ऑक्सैलोऐसीटिक एसिड (OAA) के रूप में स्थिर की जाती है जो कि तुरंत ही NADH की सहायता से मैलिक अम्ल में अपचित हो जाता है (एक ऐमीनीकरण (amination) अभिक्रिया से ऐस्पार्टिक अम्ल (aspartic acid) उत्पन्न होता है)। चूँकि इस मार्ग में 4 कार्बन वाला अम्ल CO_2 के स्थिरीकरण का पहला उत्पाद होता है इसलिए इसे C_4 चक्र कहते हैं ताकि कैल्विन चक्र और इसमें अंतर किया जा सके। कैल्विन चक्र में CO_2 का स्थिरीकरण 3 कार्बन वाले अम्ल के रूप में होता है। इस नए चक्र की खोज अकस्मात् ही हुई जब कोर्टशाह और उनके सहकर्मी (Kortshah and co-workers), जो शूगरकेन एक्सपेरीमेन्टल स्टेशन हवाई में नियुक्त थे, गन्ने में CO_2 के स्थिरीकरण का तरीका जानने के लिए शोध कार्य कर रहे थे। वे ये देखकर उलझन में पड़ गए कि गन्ने में प्रकाश संश्लेषण का प्रथम यौगिक फ़ास्फ़ोग्लिसरिक अम्ल (PGA) नहीं था बल्कि रेडियो सक्रियता आक्सैलो ऐसीटेट, मैलेट और एस्पार्टेट जैसे अम्लों में पाई गई तथा रेडियो सक्रियता का पैटर्न (यानि विभिन्न यौगिकों में पारी से उपस्थिति) कैल्विन द्वारा *क्लोरेला* शैवाल पर किए गए प्रयोगों से भिन्न था। इस तथ्य की कई अन्य उच्चकोटि पादप जैसे कि पालक में भी पुष्टि हुई। बाद में आस्ट्रेलिया में एम.डी. हैच (M.D. Hatch) और सी. आर. स्लेक (C.R. Slack) ने शोध कार्यों से यह दिखाया कि यह CO_2 स्वांगीकरण का एक और मार्ग है।

हालांकि C_4 चक्र एक नयी खोज थी इसके बावजूद भी इस मार्ग के बारे में एक बात पर ध्यान दे कि वह कैल्विन चक्र से बिल्कुल अलग स्वतंत्र रूप में नहीं चलता। एक क्रिया विधि द्वारा, जिसको संतोषजनक रूप में समझना बाकी है — यह 4-कार्बन वाला अम्ल अर्थात् ऑक्सैलो ऐसीटेट, तुरंत CO_2 को त्याग देता है जिससे कि CO_2 फिर से कैल्विन चक्र के जरिए रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज़ द्वारा स्थिर की जा सके। इस प्रक्रिया में फ़ॉस्फ़ोईनॉलपाइरुवेट का पुनर्योजन होता है जो कि C_4 चक्र में CO_2 का ग्राही है। इसलिए C_4 चक्र को स्वतंत्र चक्र के रूप में न देखकर कैल्विन चक्र के एक उपबंध (adjunct) के रूप में देखना चाहिए। फिर भी पौधे प्रकाश संश्लेषी कोशिकाओं में C_3 और C_4, दोनों मार्गों द्वारा एक ही कोशिका में CO_2 का स्थिरीकरण नहीं करते। वास्तव में पौधों में, जैसे घासों, जिनमें C_4 चक्र चलता है अवकाशीय पृथक्करण होता। जैसा कि सुविदित है, इन पौधों में क्रांज की तरह की संरचना (Kranz anatomy — क्रांज जर्मन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है माला-जैसा) होती है (चित्र 13.22) इसमें केंद्रीय पूलाच्छद (bundle sheath) क्षेत्र होता है जिसमें बड़े आकार की क्लोरोफिल युक्त कोशिकाओं का एक वलय होता है और चारों ओर स्पंजी मध्यम पर्ण कोशिकाएँ बहुत ढीले रूप में व्यवस्थित होती है। बाहरी मध्यम पर्ण कोशि[illegible] में एन्ज़ाइम PEP कार्बोक्सिलेज़ बहुतायत में होता है जबकि रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज़ केवल पूलाच्छद की कोशिकाओं में सीमित होता है।

Some common examples of photorespiring (C_3) and non-photorespiring (C_4) plants

Photo respiring C_3	Non-photo respiring C_4
Wheat	Corn
Rice	Sugarcane
Legumes	Sorghum
Potato	Sugar-beet
Tomato	Bajra

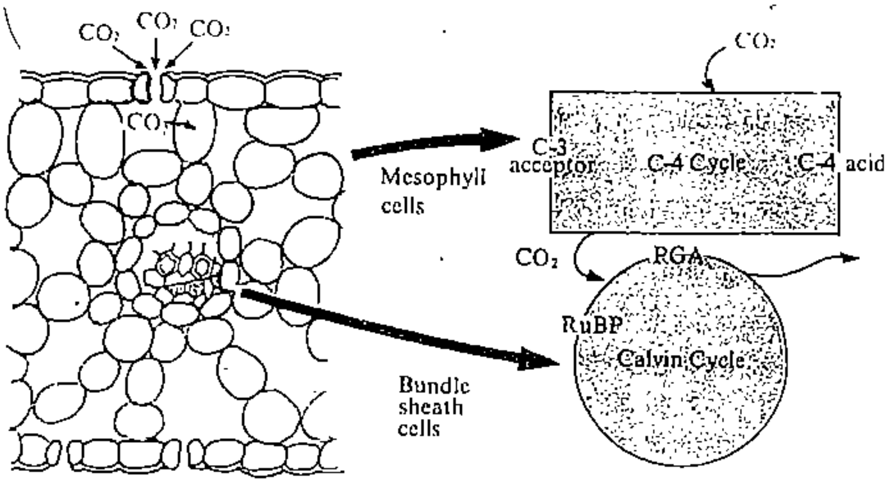

चित्र 13.22: पौधों की पत्ती की संरचना जो कि आभास्तः प्रकाश श्वसन नहीं करते। कार्बन डाइऑक्साइड स्थिरीकरण के C_4 मार्ग को भी प्रदर्शित किया गया है जो उनकी विशेषता होती है। यहाँ आरंभ में CO_2 को एन्ज़ाइम PEP कार्बोक्सिलेज़ द्वारा वायुमंडल से ग्रहण किया जाता है न कि RuBP कार्बोक्सिलेज़ द्वारा जैसा कि कैल्विन चक्र वाले पौधों में होता है जिन्हें अब सामान्यतः C_3 पौधे कहते हैं क्योंकि इस चक्र में स्थिरीकरण का प्रथम उत्पाद फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल का 3-कार्बन वाला अणु होता है न कि ऑक्सेलोऐसीटिक अम्ल। यदि पौधों की पूलाच्छद कोशिकाओं में प्रकाश श्वसन होता भी है तो उससे उत्पन्न CO_2 संभवतः ग्रहण कर ली जाएगी और उसे वापस चक्र में डाल दिया जाएगा।

एक ओर रोचक बात यह है कि RuBP कार्बोक्सिलेज़ की तुलना में PEP कार्बोक्सिलेज़ में CO_2 के लिए काफ़ी अधिक बंधुता पाई जाती है। इसलिए यह प्रतीत होता है कि PEP कार्बोक्लिेज़ आदर्श रूप में वायुमंडल से CO_2 को स्थिर करने के लिए अनूकूलित है। जैसा कि हम इससे पहले देख चुके हैं, इस प्रकार स्थरीकृत CO_2 को फिर से कैल्विन चक्र में जाना होता है। इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ़ों से यह स्पष्ट होता है कि पूलाच्छद कोशिकाओं की बाहरी सतह पर झिल्लियों का एक विशेष प्रकार का जाल होता है — हो सकता है कि यह 4-C वाले अम्लों जैसे कि मैलेट के लिए अतिरिक्त अवशोषक सतह उपलब्ध कराने के लिए हो जो पूलाच्छद कोशिकाओं में परिवाहित होता है ताकि वे अपना कार्बन, केल्विन चक्र को दे सकें। अधिक सफल पौधों में, C_4 चक्र एक अपेक्षाकृत अधिक दक्ष एन्ज़ाइम द्वारा वायुमंडल से CO_2 ग्रहण करने की अद्वितीय तथा रोचक क्रियाविधि है।

क्रांज़-संरचना द्वारा पौधों को होने वाले एक और लाभ की ओर ध्यान दिए बगैर हम नहीं रह सकते। पत्तियों के बाहरी क्षेत्रों में ऑक्सीजन तनाव उच्च हो सकता है और सबसे भीतरी भागों में निम्न अतः रुबिस्को (Rubisco) की ऑक्सीजनेज़ क्रिया घट जाती है। तथापि यदि भीतरी पूलाच्छद कोशिकाओं में कुछ प्रकाश श्वसन होता भी है तो उसके फलस्वरूप बनी CO_2 पत्ती से बाहर निकलने से पहले ही PEP कार्बोक्सिलेज़ द्वारा पुनः ग्रहण की जा सकती है। अतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि C_4 पौधे प्रकाश संश्लेषण के लिए अधिक दक्ष होते हैं पृथ्वी पर पाई जाने वाली घासें (grasses) व्यापक रूप में सबसे दक्ष स्पीशीज़ों में से एक मानी जाती हैं और यह उनमें C_4 मार्ग होने के कारण ही हो सकता है। गन्ने के अलावा जिसकी इससे पहले चर्चा की जा चुकी है हमारी बहुत सारी फसलें, जैसे मक्का, बाजरा और चुकुन्दर भी C_4 पौधे हैं। दूसरी ओर द्विबीजपत्री पौधे अधिकांशतः C_3 पौधे होते हैं। फिर भी द्विबीजपत्री पौधों में कुछ उल्लेखनीय प्रतिवाद पाए जाते हैं, जैसे चुकंदर और कीनोपोडिएसी (chenopodiaceae) तथा (portulacaceae) कुलों के सदस्य। यह बात महत्वपूर्ण है कि इन पौधों में भी एकबीजपत्री पौधों की तरह "क्रांज़" संरचना होती है न कि द्विबीजपत्री पत्तियों में पाया जाने वाला खंभ (पैलिसेड) स्तर और स्पंजनुमा मृदूतक (पैरेन्काइमा)। कुल मिलाकर C_4 मार्ग एक प्रकार का अनुकूलन होता है जिससे कि पौधे उच्च ताप और कम पानी उपलब्ध होने की स्थिति में अच्छी तरह जीवित रह सकें। यह बात ध्यान देने की है कि यदि हम भौगोलिक दृष्टि से C_3 और C_4 स्पीशीज़ों के वितरण का अध्ययन करें तो C_3 पौधे शीतोष्ण क्षेत्रों में प्रमुख रूप में पाए जाते हैं और जैसे-जैसे हम विषुवत् रेखा की ओर बढ़ते हैं C_4 स्पीशीज़ें प्रमुख देखी जाती है।

13.7.3 CAM पौधे

द्विबीजपत्री पौधों में CO_2 स्थिरीकरण की दृष्टि से जो अपवाद पाए जाते हैं उनमें *ब्रायोफिलम (Bryophyllum)*, कैलेनकोई *(Kalanchoe)*, तथा मरुस्थल में उगने वाले यूफोर्बिएसी कुल

के कुछ सदस्य शामिल हैं। इन सदस्यों में मूलतः कार्बन स्थिरीकरण का C_4 मार्ग पाया जाता है परंतु इन्हें कैम पौधे (CAM) कहते हैं (कैम शब्द क्रैसुलेसियन ऐसिड मेटाबोलिज्म का संक्षेपण है) क्योंकि इनमें कुछ और भी अद्वितीय विशेषताएँ पाई जाती हैं।

वनस्पतिविदों को बहुत पहले से इस बात की जानकारी थी कि गूदेदार [illegible] वाले अनेक पौधों का स्वाद खारा होता है क्योंकि उनमें बड़ी मात्रा में कार्बनिक अम्ल पाए जाते हैं, जस मैलिक और ऑक्सैलिक अम्ल। तथापि इन अम्लों के महत्व की जानकारी हमें अब हो पाई है। इनमें से कई पौधे कार्बन का स्थिरीकरण 4-कार्बन वाले कार्बनिक अम्लों के रूप में करते हैं। साथ ही इन पौधों में मरुस्थलीय वातावरण में (जहाँ दिन का ताप बहुत अधिक होता है और पानी का संरक्षण आवश्यक होता है) रहने के लिए अद्वितीय तथा वास्तव में चतुराई पूर्ण अनुकूलन देखा जाता है। जो नीति इन पौधों ने अपनाई है वह यह है कि रात्रि के समय CO_2 को स्थिर करते है और कार्बनिक अम्लों को, कैल्विन चक्र वाले मार्ग के ज़रिए दिन में NADPH का प्रयोग करके अपचित करते है (चित्र 13.23 और 13.24)। अतः पौधे दिन के समय अपने रंध्रों को बंद रखते हैं (ताकि वाष्पोत्सर्जन न हो) परंत

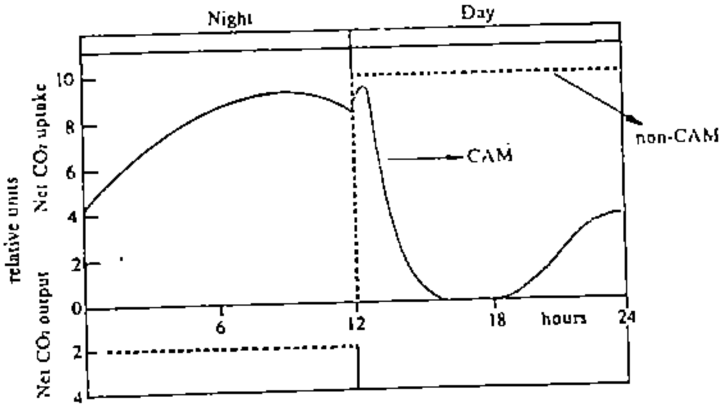

चित्र 13.23: कैम पौधों में गैस-विनियम की प्ररूपी व्यवस्था को ग्रहण करने का कार्य अधिकतर रात को होता है। दिन में CO_2 की मात्रा में कमी हो जाती है क्योंकि इसे कार्बनिक अम्लों के उत्पादन के लिए पुनः अवशोषित कर लिया जाता है। डैश (—) द्वारा खींची गई रेखा, गैर-कैम पौधों के लिए CO_2 विनिमय चक्र को प्रदर्शित करती है।

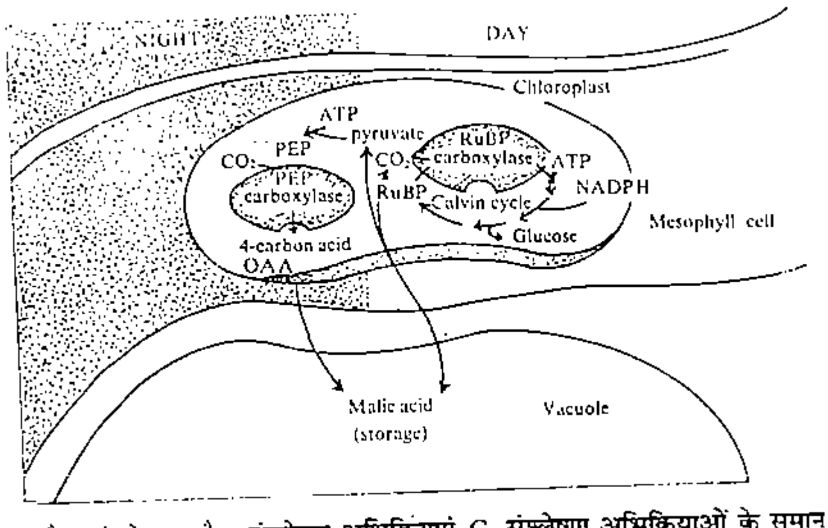

चित्र 13.24: कैम संश्लेषण। कैम संश्लेषण अभिक्रियाएं C_4 संश्लेषण अभिक्रियाओं के समान होती हैं बस फर्क यह होता है कि ये मध्यम पर्ण कोशिकाओं में ही भिन्न-भिन्न समय पर होती हैं। रात के समय रंध्र खुलते हैं और CO_2 ले ली जाती है। PEP में CO_2 का स्थिरीकरण पाइरूवेट कार्बोक्सिलेज़ एन्ज़ाइम द्वारा होता है और ऑक्सैलोऐसीटेट उत्पन्न होता है। ऑक्सैलोऐसीटेट अब मैलिक अम्ल में बदल जाता है जिसका संग्रहण कोशिका की रसधानी (vacuole) में हो जाता है। दिन के समय कैम पौधे अपने रंध्रों को बंद कर देते हैं और पानी का संरक्षण करते हैं। संचित मैलिक अम्ल धीरे-धीरे वापिस क्लोरोप्लास्टों में चला जाता है और वहां खंडित होकर पाइरूवेट और CO_2 का मोचन कर देता है। इस प्रकार मोचित CO_2, RuBP कार्बोक्सिलेज़ द्वारा RuBP में स्थिर हो जाती है और कैल्विन चक्र में प्रवेश कर जाती है। पाइरूवेट ATP से ऊर्जा लेकर PEP में बदल जाता है

उन्हें रात के समय खोल देते हैं (ताकि CO_2 भीतर प्रवेश कर सके)। इसलिए कैम पौधों के कालगत दृष्टि से CO_2 स्थिरीकरण और कार्बनिक अम्लों के अपचयन (ऐल्डिहाइड और ऐल्कोहॉलीय वर्गों जैसे कि शर्करा में) के लिए इलेक्ट्रॉन अंतरण शृंखला को पृथक कर दिया है अर्थात् एक प्रक्रिया दिन में और दूसरी रात में चलती है।

बोध प्रश्न 6

क) प्रकाश श्वसन की आवश्यक दशाओं को सूचीबद्ध कीजिए:

....

ख) कॉलम I में दी गई प्रकाश श्वसन की अभिक्रियाओं का कॉलम II में उनके होने के स्थलों के साथ मेल बैठाइए।

कॉलम I	कॉलम II
i) CO_2 का दो ग्लाइसिन अणुओं से उत्पन्न होना	क) क्लोरोप्लास्ट
ii) RuBP का उपचयन	ख) परऑक्सिसोम
iii) सेरीन का निर्माण	ग) माइटोकॉन्ड्रिया
iv) ग्लाइऑक्सिलेट का निर्माण	
v) PGA का पुनर्योजन	

ग) C_4 पौधों के बारे में प्रस्तुत किए गए निम्नलिखित कथनों को पूरा कीजिए:

i) CO_2 का ग्राही तीन कार्बन वाला यौगिक .... होता है।

ii) CO_2 के स्थिरीकरण के लिए एन्ज़ाइम .... होता है।

iii) CO_2 के एक अणु को स्थिर करने में .... का एक अणु काम में आता है।

iv) यह मार्ग मध्यम पर्ण कोशिकाओं के .... में पाया जाता है।

v) जो पौधे C_4 मार्गों का प्रयोग करते हैं वे .... का भी इस्तेमाल करते हैं जो मध्यम पर्ण कोशिकाओं में नहीं होता बल्कि .... कोशिकाओं में होता है।

vi) PEP कार्बोक्सिलेज़ की CO_2 के लिए बंधुता .... कार्बोक्सिलेज़ से अधिक होती है।

vii) C_4 पौधों की पूलाच्छद कोशिकाओं में CO_2 के अवशोषण के लिए एक खास प्रकार का .... होता है।

viii) C_3 पौधों की तुलना में C_4 पौधे प्रकाश संश्लेषण की दृष्टि से .... दक्ष होते हैं।

13.8 क्लोरोप्लास्ट — परासंरचना तथा प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली का संगठन

अब हम क्लोरोप्लास्ट की संरचना और उसमें प्रकाश संश्लेषी व्यवस्था का बारीकी से अध्ययन कर सकते हैं (चित्र 13.25)। क्लोरोप्लास्ट की सर्वप्रथम खोज जर्मन वनस्पतिविद वॉन मोल (von Mohl) ने 1837 में की थी और 1882 में ऐंगलमान (Engelmann) निश्च्यात्मक रूप में प्रकाश संश्लेषण को इस अंगक (organelle) से संबंधित सिद्ध कर सके। उसके पश्चात क्लोरोप्लास्ट की संरचना के बारे में काफ़ी जानकारी हासिल हो चुकी है। इस संबंध में प्रमुख रहस्योद्घाटन पचासवें दशक में हुआ जब अतिसूक्ष्म सैक्शन काटने की तकनीक और इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी उपलब्ध हुआ। पता चला कि क्लोरोप्लास्ट में विस्तृत आंतरिक झिल्ली तंत्र होता है जिसमें *थाइलैकॉइड* जैसी संरचनाएं होती हैं (ग्रीक शब्द-थाइला यानि थैलियां : थाइलैकॉइड यानि थैलीनुमा) जो कि नलिकाओं द्वारा परस्पर जुड़ी रहती है और ये सब *स्ट्रोमा* के अंदर दबी रहती हैं। स्ट्रोमा में DNA के अतिरिक्त राइबोसोम तथा अन्य विलेयशील रचक तत्व होते हैं। थाइलैकॉइड एक-दूसरे पर ढेरी के रूप में जमी रहती हैं जिन्हें ग्रेना (grana) कहते हैं जो डिस्क जैसी शक्ल की होती हैं। ग्रेना काफी कुछ सिक्कों की ढेरी की तरह

(a)

(b)

(c)

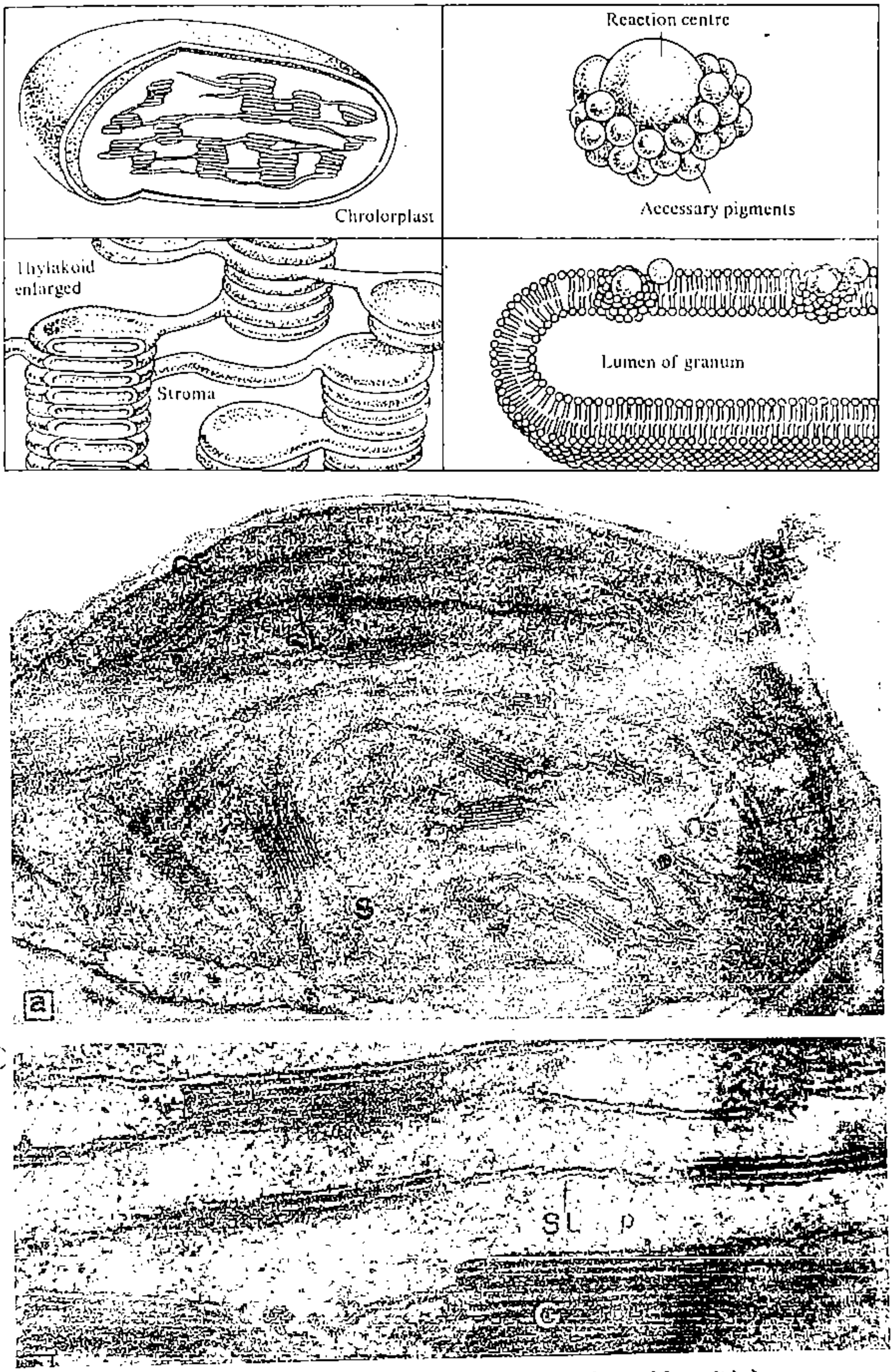

Chloroplast enevelop (CE),
Stroma (S)
Stroma lamellae (SL)
Grana (G)

चित्र 13.25: प्रकाश संश्लेषण की व्यवस्था: a) प्रकाश संश्लेषण पादप कोशिकाओं के क्लोरोप्लास्टों में होता है। क्लोरोप्लास्ट के थाइलेकॉइड तंत्र में ही प्रकाशीय अभिक्रियाएं और स्ट्रोमा में संश्लेषण अभिक्रियाएं संपन्न होती हैं। प्रकाश संश्लेषी वर्णक थाइलेकॉइड झिल्ली में व्यवस्थित रहते हैं और प्रकाश को ग्रहण करने के लिए प्रकाश तंत्र बनाते हैं। प्रत्येक प्रकाश-तंत्र के अभिक्रिया केंद्र (reaction centre) को आस-पड़ौस के एन्टिना वर्णकों (antenna pigment) से ऊर्जा प्राप्त होती है। b) क्लोरोप्लास्ट का इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा फोटोग्राफ। c) ग्रेना झिल्लियों का आवर्धित प्रतिबिम्ब। (E.M. Photograph by Swadesh Jhamb Taneja, 1973).

लगती है। कोशिकाओं और अंगकों को लाइसिस (lysis) अथवा ध्वनिकरण (sonication) द्वारा खंडित करने की तकनीकों से तथा बहुत तेज गति से अपकेंद्रीकरण (centrifugation) करने की विधि द्वारा ग्रैना पृथक किए जा सकते हैं और शोधित (purified) ग्रैना पर किए गए प्रयोगों से यह बात स्पष्ट हो गई है कि यहीं वास्तविक प्रकाश संश्लेषी संयंत्र स्थित होता है।

साठवें और सत्तरवें दशकों में इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के लिए अधिक परिष्कृत नमूने (specimen) तैयार करने की तकनीकों के विकसित हो जाने पर अर्थात् हिमीभूत करके भंजन करना यानि फ्रीज़-फ्रैक्चरिंग (freeze-fracturing) तथा छायाकरण (shadowing) विधियों के प्रयोग से (LSE-01 खंड को देखिए) छोटे-छोटे कणिकामय संरचनाओं के विद्यमान होने की बात का पता चल गया है जो कि प्रकाश संश्लेषी व्यवस्था की यूनिटों को दर्शाते हैं। इसकी आगे चर्चा की गई है।

यह विचार कि प्रकाश संश्लेषी व्यवस्था यादृच्छिक रूप में (randomly) क्लोरोप्लास्ट में वितरित नहीं होती बल्कि यह छोटी-छोटी इकाइयों में व्यवस्थित होती है — पहली बार एमर्सन के प्रयोगों से प्राप्त हुआ कोई 50 वर्ष पहले जब उन्होंने प्रकाश की फ्लैश इस्तेमाल करते हुए प्रयोग किए और प्रति दमक (flash) की उत्पादकता को नापा। इन प्रयोगों के बाद एमर्सन इस बात की भी खोज में रुचि लेने लगे कि ऑक्सीजन के एक अणु को उत्पन्न करने में कितने क्लोरोफिल अणुओं की आवश्यकता

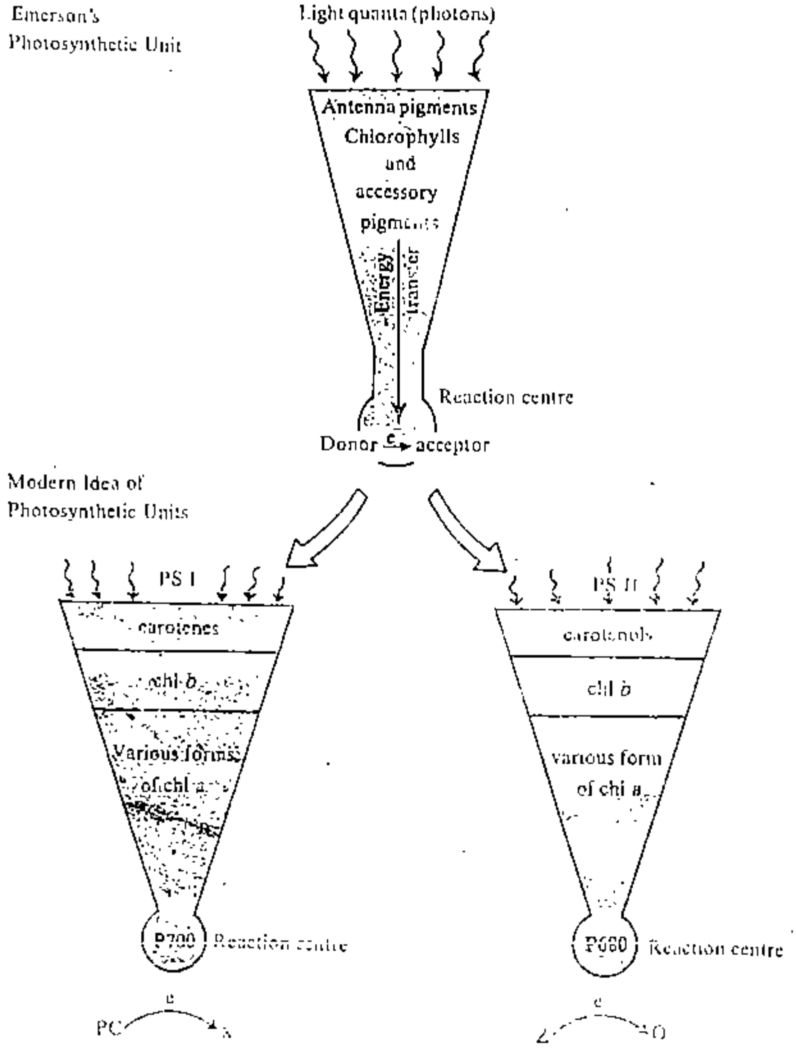

चित्र 13.26: प्रकाश संश्लेषी इकाई: सबसे ऊपर एक प्रकाश संश्लेषी इकाई को सरलरूप में दिखाया गया है जैसा कि एमर्सन और उसके सहकर्मियों ने अनुमान लगाया था। यह इकाई ऐन्टिना वर्णकों और अभिक्रिया केंद्र को व्यक्त करती है। नीचे की ओर प्रकाश संश्लेषी इकाई का आधुनिक स्वरूप दिखाया गया है। ये चित्र प्रकाश संश्लेषी वर्णकों के केवल विपर्यास (contrast) और वितरण को व्यक्त करते हैं। अब यह भली प्रकार स्थापित हो चुका है, कि ऐसी दो प्रकाश संश्लेषी इकाइयाँ होती हैं, प्रत्येक में कैरोटीन (carotenes), क्लोरोफिल *b* और क्लोरोफिल *a* के विविध रूप शामिल हैं। अभिक्रिया केंद्रों पर पाए जाने वाले क्लोरोफिलों को P_{700} और P_{680} कहते हैं।

होगी। उन्होंने देखा कि प्रयोगों को सबसे उत्तम दशाओं के अंतर्गत करने पर भी O_2 के एक अणु को उत्पन्न करने में सदैव 2000 और 2500 क्लोरोफिल अणुओं का योग होता है जो कि लगभग 250 से 300 प्रति क्वांटम अवशोषित प्रकाश के मान के अनुरूप है (यह परिकलन यह मानकर किया गया कि O_2 के अणु के उत्पन्न करने में 8 क्वांटमों की आवश्यकता 2000-2500 क्लोरोफिल अणु 8 क्वांटम के लिए इसलिए 250-300 अणु प्रति क्वांटम) होता। स्पष्ट ही है कि क्लोरोफिल अणु बड़ी बहुतायत में होते हैं। यदि प्रकाश संश्लेषी इकाई के निर्माण में 250 क्लोरोफिल योग देते हैं तो इलेक्ट्रान अंतरण में सक्रिय योग देने वाले क्लोरोफिल के एक अणु के लिए (विशिष्ट युग्म के) 249 अणु आपातोपयोगी (stand by) अणु रहते हैं। इससे तुरंत ही यह संकल्पना सामने आई कि प्रकाश संश्लेषी इकाइयाँ विद्यमान हैं जिनमें क्लोरोफिल का एक अणु अभिक्रिया केंद्र का हिस्सा होता है और अन्य "ऐन्टिना" (antenna) बनाते हैं (चित्र 13.26)।

हिमन-भंजन (फ्रीज़ फ्रैक्चरिंग) प्रविधि का प्रयोग करके इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा जो नए प्रेक्षण किए गए हैं उनसे यह सिद्ध होता है कि प्रकाश संश्लेषी इकाइयों के अनुमानित आकार के लगभग आकार वाले कण झिल्लियों में विद्यमान होते हैं। इन कणों के साफ प्रतिबिंबों पर सर्वप्रथम प्रेक्षण साठवें दशक के अंतिम वर्षों में किए गए। इन कणों को क्वांटासोम (quantasomes) कहा गया था क्योंकि यह सोचा गया था कि इनमें से प्रत्येक एक क्वांटम प्रकाश ऊर्जा को ग्रहण कर सकता है (चित्र 13.27)। चूँकि अब यह ज्ञात हो चुका है कि दो प्रकाशतंत्र (photosystems) होते हैं इसलिए क्वांटासोम शब्द का अब अधिक प्रयोग नहीं किया जाता। इसके स्थान पर अब इनके लिए प्रकाशतंत्र नाम दिया गया है और आधुनिक इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा किए गए अध्ययनों से यह सिद्ध हो गया है कि ये कण समांगी (homogenous) नहीं होते क्योंकि इनकी कम से कम दो क़िस्में

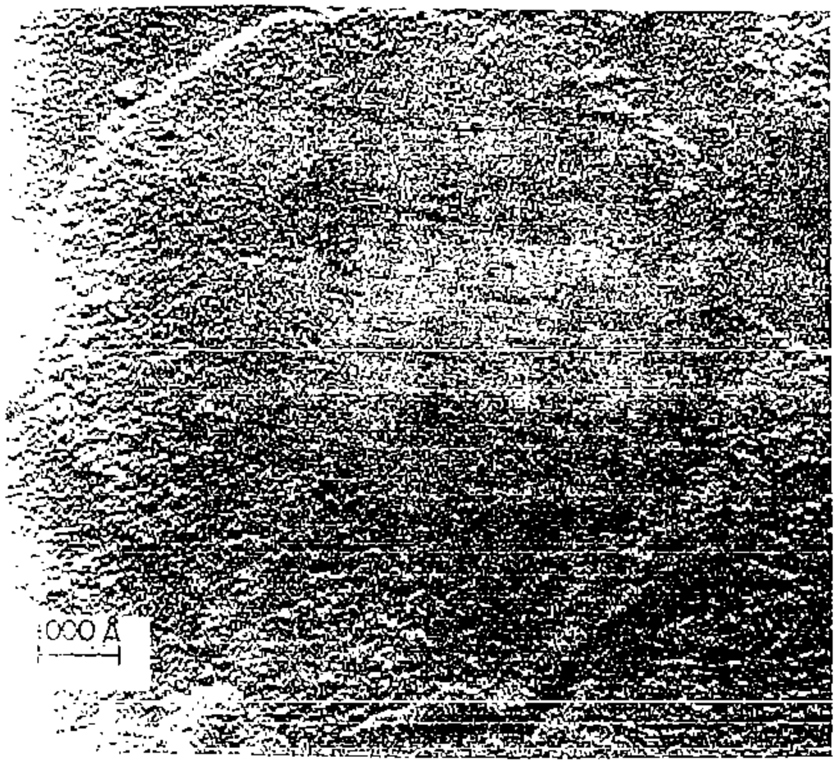

चित्र 13.27: हिमन-भंजन तथा हिमन-उत्कीर्णन (freeze-etching) विधियों को काम में लेकर खींचे गए इलेक्ट्रॉन माइक्रोफ़ोटोग्राफ जिनसे प्रकाश संश्लेषी इकाइयों को प्रदर्शित किया जा सके। यह फ़ोटोग्राफ़ रोडरिक पार्क (Roderik Park) और बिगिन्स (Biggins) द्वारा लिया गया था और उन्होंने इन इकाइयों को "***क्वांटासोम***" नाम दिया था।

होती हैं जो दो प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं वाली संकल्पना के अनुरूप होती हैं। प्रकाश तंत्र II अपेक्षाकृत बड़ा होता है और जब इसे थाइलैकॉइड की अवकाशिका (lumen) वाली तरफ से देखा जाता है तो इसमें नियमित क्रिस्टलीय संरचना देखी जाती है — दूसरी ओर यह माना जाता है कि

छोटे कण प्रकाश-तंत्र I का प्रतिनिधित्व करते हैं। अन्य कण *साइटोक्रोम* b_6f सम्मिश्र और साथ ही ATP सिंथेटेज़ सम्मिश्र का प्रतिनिधान करते हैं जो प्रकाश फ़ॉस्फ़ेटीकरण करते हैं।

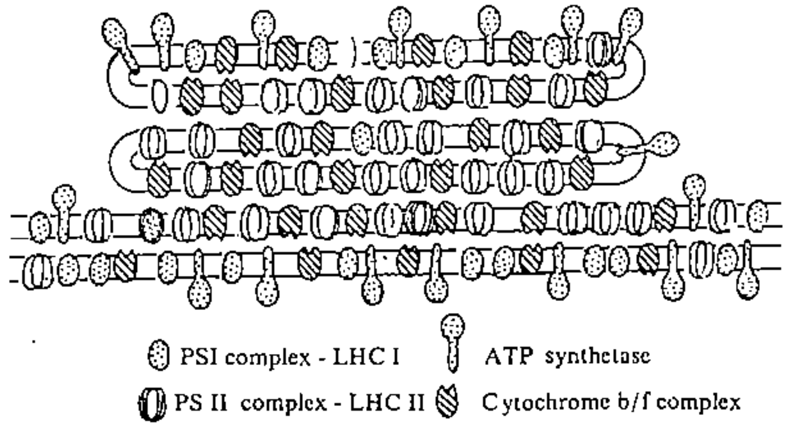

चित्र 13.28: थाइलैकॉइड झिल्ली में PS I व PS II की स्थिति का आरेखीय निरूपण। Cyt b_6f व ATP सिंथेटेज सम्मिश्र भी दिखाए गए हैं। ध्यान दीजिए कि PS II अधिकांशतः अधिलग्न (appressed) झिल्लियों में होता है।

दुर्भाग्यवश आज की स्थिति यह है कि सबसे अच्छी इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी तकनीकों में भी इतनी पर्याप्त शक्ति नहीं है कि वह इन कणों की भीतरी उपसंरचना को स्पष्ट कर सकें। इसलिए इस संरचना को समझने के लिए जैव रासायनिक तकनीकों का आश्रय लिया जा रहा है। चित्र 13.29 में प्रदर्शित व्यवस्था अधिकांशतः जैव रसायनज्ञों तथा आण्विक जीववैज्ञानिकों के शोध-कार्य पर आधारित है। प्रकाशतंत्र I और II की संरचना की मूलभूत विशेषता यह है कि इनमें एक भीतरी क्रोड सम्मिश्र (core complex, जिसे अभिक्रिया केंद्र कहते हैं) होता है जिसमें "डैडी" (daddy) क्लोरोफिल अणु

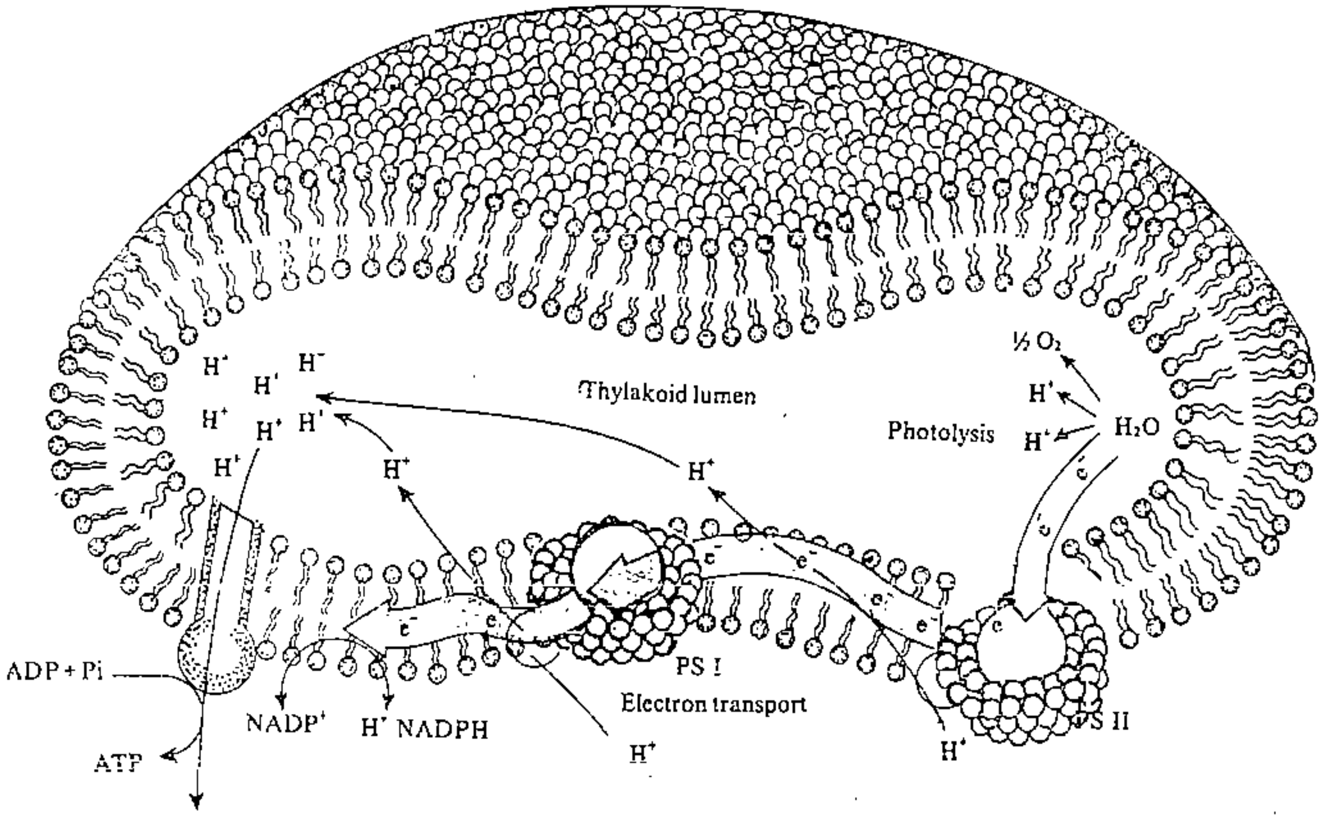

चित्र 13.29: प्रकाश ऊर्जा की सहायता [illegible] कि प्रकाश तंत्र I या II पकड़ते हैं, इलेक्ट्रॉन पानी से $NADP^+$ में स्थानांतरित होते हैं। चित्र में यह भी दर्शाया गया है कि पानी के विघटन से पैदा हुई प्रोटॉन प्रवणता से किस प्रकार ATP का संश्लेषण होता है। जैसे ही प्रोटॉन ए टी पीऐस की गुफा से बच निकलता है ATP संश्लेषित होता है।

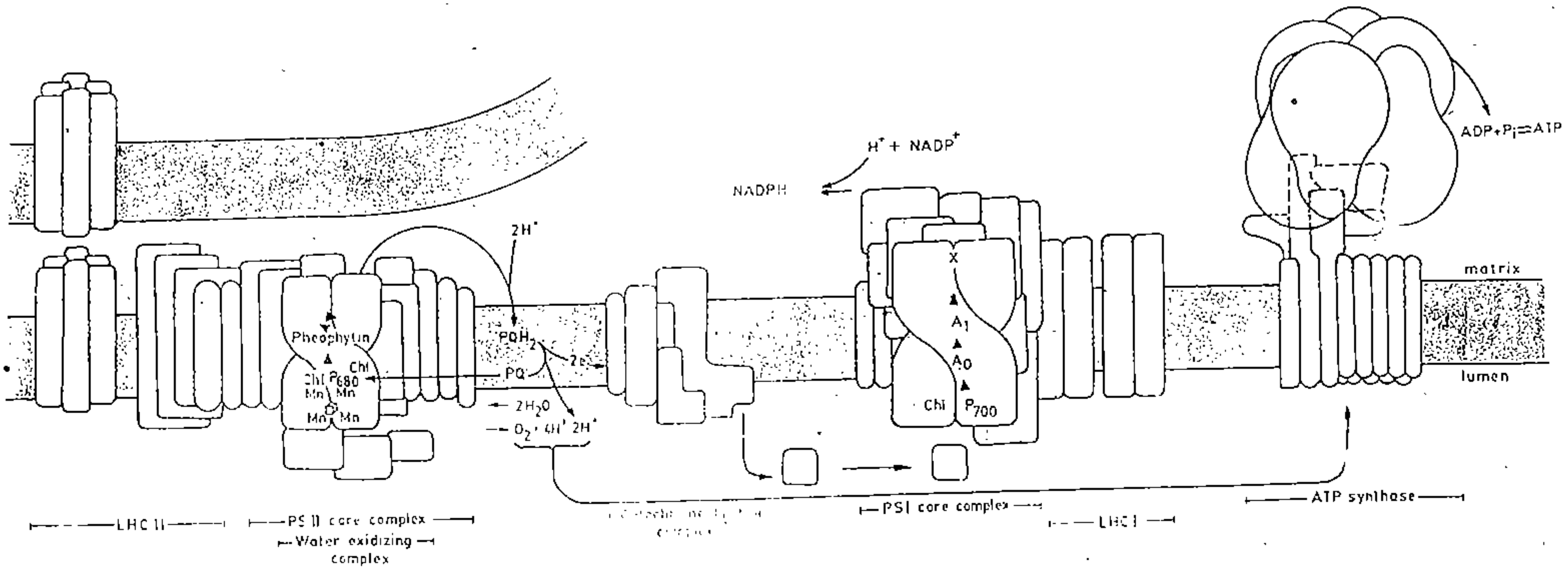

चित्र 13.30: प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली की संरचना का विस्तृत निरूपण। बायें से दायें PS II, $cytb_6/f$, PS I व ATPase सम्मिश्र है। प्रत्येक सम्मिश्र में अनेक पॉलिपेप्टॉइड होते हैं जिनका सही अभिविन्यास मालूम करना अभी बाकी है। प्रकाश तंत्र II से $cytb_6/f$ सम्मिश्र बरास्ता प्लैस्टोक्विनोन के कुंड से तथा $cytb_6/f$ से प्रकाश तंत्र II बरास्ता प्लास्टोसायनिन (जो कि गतिशील है) से इलेक्ट्रॉन स्थानांतरित होते हैं।

होते हैं जो कि समस्त इलेक्ट्रॉन अंतरण अभिक्रियाओं में भाग लेते हैं डेडी क्लोरोफिल अणुओं का यहाँ प्रकाश आयनीकरण (photoionisation) होता है। तथापि यह क्रोड ऐन्टिना (antenna) यानि प्रकाश को ग्रहण करने वाले (light harvesting) सम्मिश्र द्वारा घिरा रहता है जिसमें अतिरिक्त वर्णक अणु स्थित होते हैं इसकी अधिक संभावना है कि एक फ़ोटॉन (photon) का अवशोषण एक बाहरी क्लोरोफिल अणु द्वारा हो। परंतु भौतिकी के सिद्धांतों के अनुसार — जिनकी चर्चा हम इससे पहले कर आए हैं — ऊर्जा अंततः अभिक्रिया केंद्र वाले क्लोरोफिल अणु द्वारा ग्रहण की जाती है।

यद्यपि दोनों प्रकाश तंत्रों का मूलभूत डिज़ाइन समान होता है परंतु इनकी विस्तृत संरचनाएं प्राकृतिक रूप में भिन्न होती हैं। वास्तव में जैसा कि चित्र 13.30 से स्पष्ट होता है, प्रत्येक प्रकाश तंत्र की संरचना अद्वितीय और जटिल होती है। परिशोधित (purified) प्रकाश तंत्रों के वैद्युत कण संचलन (electrophoresis) द्वारा — उनको इस तरह से उपचारित करके जिससे उनके सभी घटक अलग-अलग हो सकें — प्रत्येक प्रकाश तंत्र में अनेक अद्वितीय क़िस्म के *पॉलिपेप्टाइडों* के पाए जाने का पता चला है। उदाहरण के लिए प्रकाश तंत्र II में कुछेक पॉलिपेप्टाइड, H_2O-विखंडन सम्मिश्र से संबंधित होते हैं जो कि प्रकाश तंत्र I में नहीं होते। इसी प्रकार प्रकाश तंत्र I में पाए जाने वाले कुछ पॉलिपेप्टाइडों के अनुरूप प्रकाश तंत्र II में कोई घटक नहीं होते। तथापि इस बात को महत्व देना होगा कि इनकी विस्तृत संरचना के लिए प्रस्तुत किए गए प्रमाण अधिकांशतः परोक्ष तथा अत्यधिक परिकल्पित (speculative) हैं। दीर्घाणुओं (macromolecule) अथवा उनके सम्मिश्रों की विस्तृत संरचना को स्पष्ट करने के लिए जीवरसायनज्ञों द्वारा सबसे अधिक व्यापक रूप में अपनाई जाने वाली तकनीक एक्सरे क्रिस्टैलोग्राफी (x-ray crystallography) है। परंतु प्रकाश संश्लेषण पर शोध करने वालों को इन प्रकाश तंत्रों को क्रिस्टलीकृत करने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ा है जो कि ऐसे कार्य के लिए अनिवार्य है। फिर भी जर्मनी के तीन वैज्ञानिकों — हार्टमट माइकल (Hartmut Michel), जोहान डीसनहोफर (Johann Deisenhofer) और हयूबर (Hüber) — ने हाल ही में एक्सरे क्रिस्टेलोग्राफी द्वारा जीवाणु के प्रकाश तंत्र की विस्तृत संरचना को बताया है जिसके लिए उन्हें नोबल पुरस्कार मिला। उच्चकोटि के पौधों में इस प्रकार का शोधकार्य अभी चल रहा है।

बोध प्रश्न 7

कॉलम 1 में हमने प्रकाश संश्लेषण से संबंधित बातों को सूचिबद्ध किया है। कॉलम 2 में दिए गए स्थलों के साथ उनका मेल बैठाइए:

कॉलम 1	कॉलम 2
i) प्रकाश संश्लेषी वर्णावली का केंद्र	क) स्ट्रोमा
ii) C_3 चक्र	ख) ग्रैना झिल्लियां
iii) P_{680}	ग) क्लोरोप्लास्ट झिल्लियाँ
iv) P_{700}	घ) झिल्ली की दीप्ति वाली ओर
v) इलेक्ट्रॉन संवाहक	ङ) स्ट्रोमा से थाइलैकॉइड की अवकाशिका में
vi) जल-विखंडन उपकरण	च) पार झिल्ली (transmembrane) प्रोटीन, स्ट्रोमा की ओर अधिक
vii) प्रकाश-ग्राही सम्मिश्र	
viii) NADPH का निर्माण	
ix) ATP का निर्माण	
x) ATPase	
xi) प्रोटॉनों का संचलन	

13.9 प्रकाश संश्लेषण, कृषि तथा मानव-कल्याण

आइए अब हम अंत में यह देखते हैं कि संश्लेषण क्रियाविधि पर किये गए अध्ययनों का कृषि और उत्पादकता से क्या संबंध है। पहले हम इस प्रश्न को लेते हैं कि संश्लेषण की सैद्धांतिक और अधिकतम दक्षता कितनी है? फिर हम खेतों और प्रकृति में इसकी वास्तविक दक्षता पर विचार करेंगे। और यदि यह दक्षता कम होगी तो हम उसके कारणों का पता लगाएँगे और देखेंगे कि इसके बारे में किया जा सकता है।

13.9.1 प्रकाश संश्लेषण की दक्षता

पहली बार जब इस शताब्दी के दूसरे दशक में वारबर्ग (Warburg) ने इसकी सैद्धांतिक दक्षता के प्रश्न का हल ढूंढने की कोशिश की थी तब से अनेक अध्ययनकर्ताओं ने इस विषय में रुचि ली है। वारबर्ग ने देखा कि हर अपचित CO_2 अणु के लिए (अथवा उत्पन्न O_2 के अणु के लिए) 4 क्वांटमों की आवश्यकता होती है। केवल सैद्धांतिक दृष्टि से देखा जाए तो CO_2 के 6 अणुओं को अपचित करने के लिए $4 \times 6 = 24$ क्वांटम पर्याप्त से भी अधिक होने चाहिए क्योंकि ग्लूकोज़ के एक अणु में 686 किलो कैलोरी ऊर्जा होती है जबकि लाल रोशनी के 24 मोल के क्वांटमों में $24 \times 41 = 984$ किलो कैलोरी ऊर्जा होती है जो कि ग्लूकोज़ के निर्माण के लिए आवश्यक ऊर्जा की अधिकतम आवश्यकता से भी काफी ज्यादा होती है। परंतु यदि हम प्रकाश संश्लेषण के लिए वास्तव में क्वांटमों की आवश्यकता जो कि 8 क्वांटम है पर विचार करें जैसाकि बाद के शोधकर्ताओं ने स्थापित किया है — तो दक्षता लगभग 35% होगी।

जो भी हो, प्राकृतिक दशाओं में 35% तक की ऊपर दी गई संख्या के बिल्कुल विपरीत, प्रकाश संश्लेषण की दक्षता कभी भी कुल सौर-ऊर्जा का एक या दो प्रतिशत से अधिक नहीं होती। इससे पता चलता है कि सूरज की रोशनी से युक्त ऊर्जा को प्राप्त करने की मनुष्य की क्षमता बहुत ही कम है। इसके अनेक कारण हैं। पहला यह है कि पत्ती पर पड़ने वाले कुल प्रकाश ऊर्जा का 50% से अधिक ऐसे विकिरण (radiation) के रूप में होता है जिससे प्रकाश संश्लेषण नहीं होता — उदाहरण के लिए पराबैंगनी, अवरक्त तथा अन्य इसी प्रकार की किरणें इत्यादि। प्रकाश संश्लेषणात्मक दृष्टि से सक्रिय विकिरण-पुंज (PAR) से भी — जो 400 से 800 nm के बीच होता है — हरा प्रकाश पत्ती की सतह से परावर्तित हो जाता है (केवल कुछ शैवालों को छोड़कर जिसमें इस प्रकाश को प्रयोग में लेने की क्षमता होती है)। कुछ प्रकाश पत्ती में होकर बाहर निकल जाता है और बड़ी मात्रा में यह ऊष्मा में बदल जाता है। सच्चाई तो यह है कि लगभग 20 प्रतिशत तक भाग बेकार चला जाता है। यदि हम सारे साल में फसल की कुल पादप-उत्पादकता पर विचार करें तो बहुत सारे और बेकार खर्चे तुरंत सामने आ जाते हैं। कुछ समय ऐसे भी आते हैं जब ज़मीन पर किसी प्रकार का पादप आवरण (plant cover) नहीं होता और जमीन वनस्पतिहीन पड़ी रहती है। और यदि भूमि

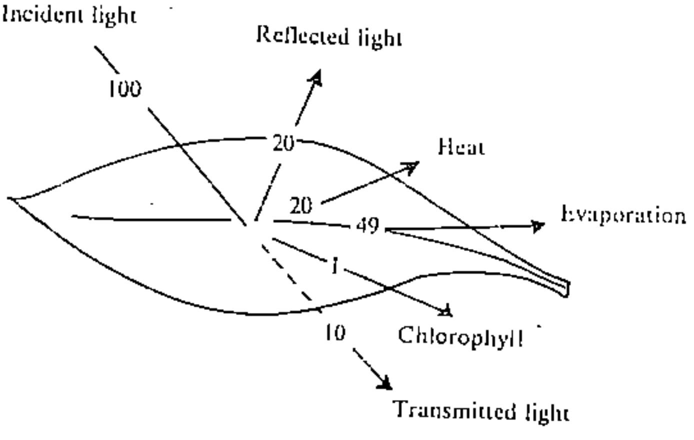

चित्र 13.31: विभिन्न चरणों में पौधों द्वारा प्रयोग में ली गई या बेकार की गई प्रकाश ऊर्जा के वितरण को दिखाते हुए आरेख, जिसे प्ररूपी पत्ती पर सीधे ही पड़ने वाले आपतित प्रकाश (incident radiation) के अनुपात के रूप में दिखाया गया है।

उर्वर भी हो तो अधिकांश फसलें मौसमी होती हैं और बहुत थोड़े समय के लिए ही पौधे की पत्ती की सतह पूरी तरह विकसित होती है। इसके अतिरिक्त फसल वाले पौधे का हर भाग खाने योग्य अथवा उपयोगी नहीं होता। यदि हम केवल उपयोग में लाए जाने वाले भागों पर ही विचार करें तो दक्षता और भी कम हो जाती है। यही नहीं सभी क्षेत्र उर्वर नहीं होते और यदि इस सूखे से प्रभावित क्षेत्रों और मरुस्थलों पर विचार करें जो पृथ्वी की सतह के बहुत बड़े क्षेत्र पर फैले हुए हैं, तो देखेंगे कि प्रकाश को रोकने के लिए पौधों का कोई आवरण यहां नहीं मिलता।

अगर हम विविध प्रकार के पौधों पर विचार करें तो हम देखते हैं कि अधिकतम प्रकाश ग्रहण करने की दक्षता वृक्षों द्वारा (5%) प्राप्त की जाती है क्योंकि ये पत्तियों की सतह के रूप में भूमि पर स्थायी आवरण का निर्माण करते हैं। फसलों के संबंध में देखें तो एक मौसम के लिए अथवा वर्ष भर के आधार पर आकलित दक्षता काफी कम होती है यथा एक से दो प्रतिशत के लगभग। तथापि सिंचाई की सर्वोत्तम दशाओं में और उर्वरकों के अधिकतम उपयोग करने पर और यदि प्रकाश संश्लेषण को थोड़े-थोड़े समय के लिए मापा जाए तो दक्षता 12% तक पहुंच सकती है जो कि अधिकतम सैद्धांतिक दक्षता का लगभग एक-तिहाई है। स्विटज़रलैंड और डेनमार्क जैसे देशों में दक्षता के ऐसे स्तर संभव हुए हैं। क्योंकि वहां फसल रख-रखाव की उन्नत किस्म की तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। परंतु विश्व का औसत काफी कम है।

पूर्ण पृथ्वी की प्रकाश संश्लेषी उत्पादकता के लिए कई अनुमान लगाए गए हैं। कुल मिलाकर प्रकाश संश्लेषी रूप में उपलब्ध सक्रिय विकिरण (PAR) लगभग 0.17% है जो कि प्रति वर्ष 0.4×10^{11} टन कार्बन को स्थिर करने के लिए सक्षम ऊर्जा के समुतुल्य है। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि शायद कुल प्रकाश संश्लेषण का लगभग एक-तिहाई से अधिक महासमुद्रों में होता हैं। महासमुद्रों में प्रकाश संश्लेषण की औसत दक्षता प्रतिमीटर के आधर पर अपेक्षाकृत कम (भूमि पर पाई जाने वाली दक्षता से लगभग आधी) होती है। तथापि चूँकि महासमुद्र भूमि की सतह का लगभग दो-तिहाई भाग घेरे रहता है इसलिए इसका कुल योगदान बहुत महत्वपूर्ण है।

13.9.2 पर्यावरण तथा प्रकाश संश्लेषण

सैद्धांतिक रूप में प्राप्त की जा सकने वाली उत्पादकता से विश्व की उत्पादकता काफी कम है, इस बात को ध्यान में रखते हुए अब हम इस प्रश्न पर विचार करते हैं कि मनुष्य किस प्रकार प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से उत्पादकता को बढ़ा सकता है। सूक्ष्मपर्यावरण (microenvironment) में सुधार करना कृषि की सबसे मुख्य जरूरतों में से एक है।

प्रकाश संश्लेषण पर प्रभाव डालने वाले पर्यावरणीय कारकों की भूमिका पर अनेक शोध कार्य हुए हैं। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण (critical) कारक CO_2 की सांद्रता है जो प्राकृतिक वातावरण में केवल 0.03 है। ब्लैकमैन के प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि यदि CO_2 की सांद्रता बढ़ा दी जाए तो प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ जाती है, और यदि CO_2 की सांद्रता 10 से 20 गुना तक भी बढ़ा दी जाए तो भी यह कुछ अवधि तक तो पौधों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाती। तथापि दुर्भाग्यवश कृषि-भूमि के बड़े क्षेत्रों या वन क्षेत्रों में CO_2 की सांद्रता को बढ़ाने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं है जिनका हम उपयोग कर सकें। परंतु CO_2 की सांद्रता वायुमंडल में जीवाश्मों से प्राप्त ईंधन के प्रयोग से और औद्योगिक क्रियाकलापों के कारण बढ़ती जा रही है। बहुत कम या बहुत अधिक ताप भी प्रकाश संश्लेषण को सीमित कर देते हैं। जहाँ उच्च ताप के फलस्वरूप प्रकाश-विरंजन (photobleaching) तथा क्लोरोफिल की क्षति होती है, वहीं निम्न ताप यद्यपि क्षति नहीं पहुंचाता, परंतु ताप-रासायनिक अप्रकाशीय अभिक्रियाओं का कम कर देता है। इसी प्रकार यद्यपि जल भी प्रकाश संश्लेषण को विश्व के बहुत सारे क्षेत्रों में गंभीर रूप में सीमित कर देता है और रंध्र दिन के समय अकसर बंद हो जाते हैं और CO_2 पत्ती की कोशिकाओं में प्रवेश नहीं कर पाती पर कुछ किया नहीं जा सकता है। सिंचाई से निश्चय ही मदद मिल सकती है और ऐसी योजनाएं जैसे पश्चिमी राजस्थान के मरुस्थल में इंदिरा गांधी नहर योजना परिदृश्य को तेजी से बदल रही है क्योंकि इसने बंजर पड़ी हुई भूमि को बम्पर फसल उत्पादन करने वाले क्षेत्रों में बदल दिया है। उत्तम किस्म की कृषि कर्म-संबंधी अन्य पद्धतियों से और अच्छे पोषण से विशेषकर नाइट्रोजन और फ़ॉस्फ़ोरस जो कि पर्यावरण में सीमित हैं — प्रकाश संश्लेषण की कुल मात्रा में स्पष्टतः सुधार लाया जा सकता है। शोध के लिए एक और

महत्वपूर्ण क्षेत्र पादप-स्थापत्य कला (plant architecture) जिसमें वितान (canopy) की संरचना में सुधार लाया जा सकता है जिससे कि प्रकाश-अपरोधन (light interception) अधिक दक्षतापूर्वक हो। खड़ी पत्तियां उन पत्तियों से बेहतर होती हैं जो क्षैतिज रूप में फैली होती हैं। हम बौनी किस्में (varieties) उगा सकते हैं जैसे कि गेहूं। क्योंकि ऐसी किस्मों में तनों और वृंतों की तुलना में बालों (ears) में क्लोरोफिल की मात्रा अधिक होती है. बौने पौधों से प्राप्त होने वाले लाभों के अतिरिक्त यह लाभ भी प्राप्त है कि इनमें क्लोरोफिल अधि" जाता है। सुधार का एक और क्षेत्र है शीघ्र परिपक्व होने वाली किस्मों को विकसित करना ताकि वर्ष-दर-वर्ष पृथ्वी पर पौधों का आवरण बढ़ता जाए।

13.9.3 कृषि संबंधी जैव प्रौद्योगिकी

ऊपर की गई चर्चा से ऐसा प्रतीत होगा कि मौजूदा परिस्थितियों में प्रकाश संश्लेषण की दक्षता को बढ़ाने की कोई गुंजाइश नहीं है जब तक कि स्वयं पर्यावरण में जल की उपलब्धता बढ़ाने या उर्वरकों को उपलब्ध कराने इत्यादि तरीकों में सुधार न आए। प्रश्न यह उठता है कि क्या हम पौधे को मौजूदा परिस्थितियों के प्रति अधिक अनुकूल बनाने के लिए कुछ कर सकते हैं। हाँ इसकी काफी आशा है कि आधुनिक आण्विक जीवविज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी में हुई उन्नति से पौधों को वास्तव में रूपांतरित किया जा सकता है जिससे कि प्रकाश संश्लेषण की दक्षता अथवा उत्पादकता को स्थायी रूप में बढ़ाया जा सके।

क्लोरोप्लास्ट संबंधी आण्विक जीवविज्ञान पर कुछेक संक्षिप्त टिप्पणियां देना उपयुक्त होगा और यह आधारभूत ज्ञान की दृष्टि से भी आवश्यक है। साठवें और सत्तरवें दशकों में किए गए शोध कार्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि क्लोरोप्लास्ट, और साथ ही माइटोकॉन्ड्रियों में उनके स्वयं DNA तो होते ही हैं वल्कि उनमें RNA और प्रोटीन संश्लेषी यंत्रावली भी होती है। तथापि क्लोरोप्लास्ट के DNA का आकार अपेक्षाकृत छोटा होता है यह लगभग 100 जीनों को कोड (code) कर सकता है। क्लोरोप्लास्टों में विद्यमान प्रोटीनों की वास्तविक संख्या काफी अधिक यानि हजारों में होती है और इसीलिए अधिकांश प्रोटीनों केंद्रक द्वारा कोडित (encoded) होती हैं। वास्तव में इसके बहुत सारे रोचक उदाहरण मिलते है, जैसे बहु उपइकाइयों वाली प्रोटीन या एन्ज़ाइमों (जैसे रुबिस्को) के कुछ पॉलिपेप्टाइड केंद्रक से और अन्य पालिपेप्टाइड क्लोरोप्लास्ट से कोडित होते हैं और इसके लिए दो कोशिकीय घटकों के वीच बहुत अधिक तुल्यकालन (synchronisation) की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की प्रोटीनों के अद्वितीय उद्भव से इस प्रकार की अन्योन्यक्रिया का जैव रासायनिक दृष्टि से अध्ययन और क्लोरोप्लास्ट के विकास के सामान्य नियमन का अध्ययन करने का सर्वोत्तम अवसर मिलता है। क्लोरोप्लास्ट और केंद्रकीय जीनोम में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के जीनों का धीरे-धीरे पता लगाया जा रहा है। क्लोरोप्लास्ट का जीनोम अपेक्षाकृत छोटा होता है और हाल ही में जापान में सुगियूरा (Sugiura) तथा उसके सहकर्मियों ने इसे पूरी तरह से तम्बाकू, धान और *मारकेन्शिया (Marchantia)* में अनुक्रमित कर लिया है और अधिकांश जीनों की पहचान भी हो चुकी है। क्लोरोप्लास्ट प्रोटीनों को कोडित करने वाले केंद्रकीय जीनों पर शोध कार्य अभी शुरू ही हुआ है। जब महत्वपूर्ण जीनों की पहचान कर ली जाएगी तब इस बात की आशा की जा सकती है कि उनको बदलने के लिए प्रयास किए जाएं। उन्हें किस प्रकार अधिक दक्ष बनाया जाए। यह कार्य भविष्य के लिए शेष है।

कृषि की दृष्टि से कुछ उदाहरण पेश किये जा सकते है कि भविष्य में किस प्रकार के अनुसंधान हो। संभवतः रुबिस्को को इतना दक्ष बनाया जा सकता है कि यह O_2 को स्वीकार ही न करे और इस प्रकार प्रकाश श्वसन की प्रक्रिया बिल्कुल ही रुक जाए। यदि कोई चाहे तो C_4 पौधों की विशेषताओं को C_3 पौधों में जैसे कि सक्रिय PEP कार्बोक्सिलेज़ — अंतरित करने का प्रयत्न कर सकता है। इसी प्रकार प्रकाश संश्लेषण को बढ़ाने के और भी तरीकों पर विचार करते समय हम क्लोरोप्लास्ट को अधिक लंबे समय तक जीवित रहने अथवा अधिक तेजी से विभाजित करने के लिए उद्यत कर सकते हैं। शायद हम उपापचय मार्गों को परिवर्तित कर पाएँ जिससे कि अधिकांशतः कार्बोहाइड्रेटों का निर्माण करने के बजाए ऐमीनों अम्लों के संश्लेषण को बढ़ा सकें। इस रूपांतरण से विश्व भर में पोषण के प्रबंधन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ सकता है। साथ ही हम क्लोरोप्लास्टों में प्रोटीनों को परिवर्तित

करके और इलेक्ट्रॉन अंतरण कार्यों को अवरुद्ध किये बिना शाकनाशियों (herbicide) के प्रति प्रतिरोधी पौधे तैयार कर सकते हैं (अक्सर क्लोरोप्लास्ट प्रोटीन ही इनकी क्रिया के निर्धारित स्थल होते हैं)। आनुवंशिक रूप में तैयार की गई शाकनाशी प्रतिरोधी फसलों को पश्चिमी देशों में विकसित भी कर लिया गया है और इसका संभवतः बड़ा व्यापार होगा।

बाहर के (foreign) जीनों को केंद्रकों में अंतरित करने की तकनीकों को विकसित किया जा चुका है और जब केंद्रकीय रूप में कोडित जीन इसमें शामिल किये जाएंगे तो उनमें रूपांतरण होना कठिन नहीं होना चाहिए। तथापि क्लोरोप्लास्ट जीनों का स्थायी तौर पर रूपांतरण बहुत गंभीर चुनौती प्रस्तुत करता है क्योंकि आम वेक्टर (vectors) जैसे Ti प्लैस्मिड (plasmid) स्थायी तौर पर क्लोरोप्लास्ट जीनोम में समग्र (integrate) नहीं होता। एक और कठिनाई यह आती है कि क्लोरोप्लास्ट जीनोम बहुत ही संहतरूप (compactly) में व्यवस्थित होता है — अक्सर DNA के एक ही क्षेत्र में दो जीन रहते हैं और वे विपरीत दिशाओं में अनुलेखन (transcribe) करते हैं। इसलिए पहले से मौजूद उपयोगी जीनों को निष्क्रिय किए बगैर क्लोरोप्लास्ट में जीनों को घुसाना मुश्किल हो सकता है, यद्यपि जीन को अंतरित करने में जैसे विशुद्ध रूप से परीक्षण के लिए जानबूझ कर सही क्लोरोप्लास्ट जीन को पारटिकल गन टेकनीक द्वारा उत्परिवर्तित करने में सफलता मिली है। शायद अधिक उपयोगी पद्धति, वांछित जीन को केंद्रक में इस तरीके से अंतरित करने की होगी कि प्रोटीन उत्पाद अंततः क्लोरोप्लास्ट में पहुँच जाए। इसके लिए हम सिग्नल पॉलिपेप्टाइडों के लिए DNA कोडिंग वाले क्षेत्र को ले सकते हैं जिनमें पॉलिपेप्टाइड शृंखला को आसानी से क्लोरोप्लास्ट में ले जाने की क्षमता होती है। वास्तव में अधिकांश केंद्रक कोडित क्लोरोप्लास्ट पेप्टाइडों में से एक न एक सिग्नल पॉलिपेप्टाइड शृंखला अवश्य संबद्ध होती है जिसके कारण उनके लिए क्लोरोप्लास्ट में प्रवेश करना संभव होता है। मनुष्य इस पद्धति का अनुसरण निर्देशित जीनों के परिवर्तनों के लिए कर सकते हैं।

13.10 क्लोरोप्लास्ट के उद्भव से संबंधित पहलू

अंत में हम संक्षेप में इस प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया और स्वयं क्लोरोप्लास्ट के उद्भव संबंधी पहलू पर विचार कर सकते हैं। ऐसा माना जाता है कि प्रकाश संश्लेषण वायुवी (aerobic) श्वसन के पहले शुरू हुआ। आज जो प्रमाण मिलते हैं उनके अनुसार आदिम काल के विश्व में मुक्त ऑक्सीजन की मात्रा बहुत कम थी। प्राणी अवायुवी श्वसन के आधार पर जीवित रहते थे, और धीरे-धीरे वायुमंडल में CO_2 हो गई। ऐसी स्थिति आने पर प्रकाश संश्लेषण की शुरुआत हुई। अंततः जब CO_2 का वायुमंडल में जमाव शुरू हो गया तो वायुवी श्वसन का उद्भव हुआ।

एक और रोचक तथ्य यह है कि आज जो क्लोरोप्लास्ट है शायद वह एक ऐसे प्रोकेरियोटी एक कोशिकीय शैवाल का प्रतिनिधित्व करता है जिसने साधारण किस्म की ग़ैर प्रकाश संश्लेषी यूकेरियोटी कोशिका में प्रवेश किया होगा। वास्तव में ऐसे अनेक प्रमाण हैं जो क्लोरोप्लास्टों के प्रोकेरियोटी उद्भव की ओर संकेत करते हैं : उदाहरण के लिए क्लोरोप्लास्ट के जीनोम की वर्तुलता (circularity), अपेक्षाकृत छोटे राइबोसोमों का विद्यमान होना जैसे जीवाणुओं में अथवा tRNA के एक अतिरिक्त सैट का केवल इसी अंगक में पाया जाना। जब एककोशिकीय शैवाल अंतः सहजीवी (endosymbiont) बन गया तो अधिकांश जीन (जिनकी सामूहिक जीवन के लिए आवश्यकता नहीं रही थी) धीरे-धीरे समाप्त हो गए और जो जीन आवश्यक थे वे धीरे-धीरे केंद्रक में चले गए। जीन अब भी संचलन की प्रक्रिया में हैं, इसके कुछ प्रमाण कुछेक निम्नकोटि के पौधों के अध्ययन से प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ जीन जो क्लोरोप्लास्टों में पाए गए हैं वे उच्च कोटि के स्थलीय पौधों में केंद्रक में हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकाश संश्लेषण की यंत्रावली से संबद्ध जीन ही मूलतः क्लोरोप्लास्ट में निवास करते हैं। शायद ऐसा इसलिए होता है कि यह प्रोटीने अत्यधिक जलविरोधी (hydrophobic) होती है और इस प्रकार उन्हें कोशिका द्रव्य के जलीय वातावरण से होकर गुजारने की बजाए उन्हें संश्लेषित करना और थाइलैकॉइड क्रिया प्रणाली में एकत्रित करना आसान है।

13.11 निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रकाश संश्लेषण सजीव संसार की सबसे अधिक मूलभूत घटनाओं में से एक है। प्रकाश संश्लेषण एक ऐसा विषय है जिसने सभी विषयों से संबंधित वैज्ञानिकों का ध्यान आकृष्ट किया है, जैसे भौतिकी, रसायन, जैव रसायन, आण्विक जैव विज्ञान, आनुवंशिकी, वनस्पतिविज्ञान, प्राणि-विज्ञान तथा विकास। इसके बारे में बहुत कुछ जानकारी हो चुकी है और इस प्रक्रिया की रूपरेखा अब काफ़ी स्पष्ट हो गई है। तथापि इतना अधिक शोधकार्य हो चुकने के बाद भी प्रकाश तंत्रों की वास्तविक संरचना और क्लोरोफिल तथा अन्य घटकों का स्थान-निर्धारण अब भी अनिश्चित है। भविष्य के लिए यह कार्य बाकी है।

जैव प्रौद्योगिकी तथा आनुवंशिक इंजीनियरों ने उत्पादन को बढ़ाने के लिए नई पद्धतियाँ उपलब्ध की हैं। तथापि इन तकनीकों द्वारा पौधों की दक्षता बढ़ाने के कार्य भी भविष्य के लिए है क्योंकि क्लोरोप्लास्टों के आण्विक जैव विज्ञान के बारे में बहुत-सी बातों की जानकारी आवश्यक है और तभी सोच विचार कर मानव लाभ के लिए प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली रूपांतरित की जा सकेगी। एक बात निश्चित है कि भौतिकी, रसायन, जैव रसायन और आण्विक जैविकी के आधारिक ज्ञान में पारस्परिक संबंध होने के कारण आने वाले दशकों में वैज्ञानिकों के लिए यह बड़े महत्व का विषय बना रहेगा।

13.12 सारांश

- प्रकाश संश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा CO_2 और H_2O का, सूरज की रोशनी की ऊर्जा की मदद से कार्बोहाइड्रेटों में स्वांगीकरण होता है। यह अभिक्रिया समस्त हरे पौधों में — जिनमें शैवाल भी शामिल हैं — होती रहती है और इसकी बहुत अधिक महत्ता है क्योंकि न केवल जंतु अपना भोजन इस प्रक्रिया द्वारा प्राप्त करते हैं वरन् हमारी ऊर्जा संबंधी आवश्यकताएँ भी अधिकांशतः जीवाश्मीय ईंधनों, जैसे कोयला और पैट्रोलियम, द्वारा पूरी होती हैं।

- प्रकाश संश्लेषी प्रक्रिया में दो प्रकार की अभिक्रियाएँ शामिल हैं — प्रकाशीय और अप्रकाशीय। प्रकाशीय अभिक्रिया में मुख्य भूमिका चार वर्णकों द्वारा अदा की जाती है — ये हैं क्लोरोफिल *a*, क्लोरोफिल *b*, जैंथोफिल और कैरोटिनॉइड, ये सभी क्लोरोप्लास्ट की थाइलैकॉइड झिल्लियों में स्थित रहते हैं। कैरोटिनॉइड और जैंथोफिल स्पेक्ट्रम के नीचे क्षेत्र को अवशोषित करते हैं जबकि क्लोरोफिल नीले और लाल दोनों क्षेत्रों को अवशोषित करते हैं। चूँकि क्लोरोफिल *a* सबसे अधिक लंबे तरंगदैर्ध्य वाले प्रकाश को अवशोषित करता है इसलिए यह अन्य सभी वर्णकों द्वारा ग्रहण की गई ऊर्जा को एकत्रित कर सकता है। क्लोरोफिल *a* से यह ऊर्जा अंततः विशिष्ट किस्म के क्लोरोफिल *a* में अंतरित कर दी जाती है।

- क्लोरोफिल वर्णकों द्वारा फ़ोटॉनों को ग्रहण कर लेने के बाद अंततः जल-अणु का प्रकाश अपघटन (photolysis) हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप इलेक्ट्रॉनों, प्रोटॉनों और O_2 का मोचन होता है। जल-अणु के विखंडन के बाद विशिष्ट क्लोरोफिल *a* अणु का आयनीकरण होता है क्योंकि इलेक्ट्रॉन के मोचन के पश्चात chl *a* धनात्मक रूप में आवेशित हो जाता है ($chl\ a^+$)। इलेक्ट्रॉन पुनः जल से प्राप्त कर लिया जाता है, इसलिए chl *a* अणु एक पंप की तरह कार्य करता है जो कि H_2O से इलेक्ट्रॉन को निकाल कर CO_2 को अपचित करता है और कार्बोहाइड्रेटों का संश्लेषण करता है। इस पंप को चलाने के लिए ऊर्जा सूरज की रोशनी से प्राप्त होती है। सामान्य (common) इलेक्ट्रॉन वाहक $NADP^+$, इलेक्ट्रॉनों के अंतिम ग्राही के रूप में कार्य करता है (और CO_2 का अपचयन NADPH के जरिए होता है)।

- वास्तव में H_2O से NADPH में इलेक्ट्रॉनों का अंतरण, वर्णकों के दो सैटों के जरिए दो पृथक प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं के माध्यम से होता है। ये वर्णक प्रकाश-संश्लेषी यूनिटों के रूप में व्यवस्थित होते हैं और प्रकाश तंत्र I और प्रकाश तंत्र II का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन प्रकाश तंत्रों में दो विशेष प्रकार के क्लोरोफिल *a* अणु पाए जाते हैं। प्रकाश तंत्र II में पाए जाने वाला

विशेष क्लोरोफिल *a* अणु अधिकतम रूप में 680 nm अवशोषित करता है और P_{680} कहलाता है जबकि प्रकाश तंत्र I में पाए जाने वाला विशेष क्लोरोफिल *a* अणु 700 nm अवशोषित करता है और P_{700} कहलाता है। प्रकाश ऊर्जा का P_{680} और P_{700} में अंतरण, प्रकाश तंत्रों से जुड़े हुए एन्टेनाओं के होने से अधिक सुगम हो जाता है और इनमें से प्रत्येक में लगभग 250 से 300 तक क्लोरोफिल अणु होते हैं जो विशेष प्रकार के वर्णक-प्रोटीन सम्मिश्रों में बंधित होते हैं। जल का प्रकाश अपघटन प्रकाशतंत्र II में होता है और इलेक्ट्रॉन का अंतरण साइटोक्रोम b_6/f सम्मिश्र के ज़रिए प्रकाशतंत्र I में हो जाता है। यहाँ इलेक्ट्रॉन अतिरिक्त फ़ोटॉन से ऊर्जा अवशोषित करके और अधिक ऊर्जा प्राप्त कर लेता है और फिर यह $NADP^+$ में पहुँचकर उसे NADPH में अपचित कर देता है।

- प्रकाश संश्लेषण की अप्रकाशीय अभिक्रियाओं को चलाने के लिए NADPH के अलावा ATP की भी आवश्यकता होती है। चूँकि श्वसन की तुलना में यह अधिक तेज़ गति से होता है इसलिए हरे पौधों में प्रकाश-फ़ॉस्फ़ेटीकरण (photophosphorylation) के प्रक्रम द्वारा ATP को संश्लेषित करने की क्षमता होती हैं जिसका माइटोकॉन्ड्रियमों में होने वाली उपचयी, फ़ॉस्फ़ेटीकरण (oxidative phosphorylation) क्रिया से कोई संबंध नहीं होता। यह H_2O के विखंडन के दौरान प्रोटॉनों के मोचन द्वारा संभव होता है और इसके परिणामस्वरूप प्रोटॉन-प्रवणता (proton gradient) उत्पन्न हो जाती है (इसके साथ ही थाइलैकॉइडों की अवकाशिकाओं में H^+ उच्च सांद्रता में मौजूद होती है)। स्ट्रोमा के बाहर ATPase सम्मिश्र में होकर प्रोटोनों के संचलन द्वारा जैसे-जैसे प्रवणता खत्म होती जाती है — ATP का संश्लेषण रसायन-परासरणी (chemiosmotic) क्रियाविधि द्वारा हो जाता है।
- अधिकांश पौधों में CO_2 का स्थिरीकरण कैल्विन चक्र के जरिए रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेज़ एन्ज़ाइम के माध्यम से होता है। रिब्युलोज़ बिसफ़ॉस्फ़ेट (RuBP), 5 कार्बनवाली शर्करा (प्राथमिक ग्राही (primary acceptor) के रूप में कार्य करती है। चूँकि यह मध्यवर्ती अस्थायी होता है इसलिए प्रथम स्थायी उत्पाद 3-कार्बन वाला यौगिक फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल — होता है जो कि प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं के दौरान उत्पन्न NADPH की मदद से फ़ॉस्फ़ोग्लिसरैल्डिहाइड में अपचित हो जाता है। फ़ॉस्फ़ोग्लिसरैल्डिहाइड के दो अणु जुड़ कर ग्लाइकॉलिसिस अभिक्रियाओं के उत्क्रमण (reversal) द्वारा ग्लूकोज़ का निर्माण करते हैं। तथापि कुछ फ़ॉस्फ़ोग्लिसरैल्डिहाइड अणु कैल्विन चक्र की अभिक्रियाओं से होकर RuBP ग्राही को पुनर्योजित करने का काम करते हैं।
- C_4 पौधों का एक विशेष वर्ग है (मुख्यतः घासें इस किस्म की होती हैं)। इन पौधों में CO_2 का प्राथमिक ग्राही एक तीन कार्बन वाला अम्ल होता है जिसे फ़ॉस्फ़ोईनॉल पाइरुविक अम्ल कहते हैं और इसका प्रथम उत्पाद 4 कार्बन वाला यौगिक-ऑक्सैलोऐसीटिक अम्ल होता है जो अपचित होकर मैलिक अम्ल में बदल जाता है। इन पौधों में CO_2 को स्थिर करने वाला एन्ज़ाइम PEP-कार्बोक्सिलेज़ कहलाता है। चूँकि इस एन्जाइम की CO_2 के लिए RuBP कार्बोक्सिलेज़ की तुलना में उच्च बंधुता होती है इसलिए C_4 पौधे अपेक्षाकृत अधिक दक्षता के साथ प्रकाश संश्लेषण करते हैं। तथापि 4-कार्बन वाले अम्ल सीधे ही कार्बोहाइड्रेटों में नहीं बदल सकते। इसके बजाए स्थिर की गई CO_2 एक अभिक्रिया द्वारा पुनः कैल्विन चक्र में प्रवेश कर लेती है। परंतु इस अभिक्रिया के बारे में समुचित जानकारी नहीं हो पाई है। परंतु यह अब सुस्थापित हो चुका है कि प्ररूपी एक बीज पत्री की बाहरी कोशिकाओं में PEP-कार्बोक्सिलेज़ होता है। दूसरी ओर पूलाच्छद कोशिकाओं में — जो कि अधिक केंद्रीय रूप में स्थित होती हैं — RuBP-कार्बोक्सिलेज़ मिलता है। ये कार्बनिक अम्ल अनुमानतः पूलाच्छद कोशिकाओं में चले जाते हैं जहां CO_2 मोचित होती है ताकि वह C_3 चक्र द्वारा फिर से स्थिर की जा सके। कैम पौधे (वह वर्ग जिसमें कैक्टस तथा अन्य कई गूदेदार-पौधे शामिल किए जाते हैं) अनिवार्यतः C_4 पौधों के ही एक भिन्न वर्ग के रूप में होते हैं जिनमें स्टोमैटा (रंध्र) रात के समय खुलते हैं ताकि PEP-कार्बोक्सिलेज़ द्वारा CO_2 का स्थिरीकरण हो सके। CO_2 के फिर से कैल्विन चक्र में प्रवेश करने की प्रक्रिया तथा NADPH द्वारा PGA के अपचित होकर फ़ॉस्फ़ोग्लिसरैल्डिहाइड में बदलने की क्रिया दिन के समय होती है।

- एन्ज़ाइम RuBP कार्बोक्सिलेज CO_2 और O_2 में पूरी तरह अन्तर नहीं कर सकता, इसके कारण ऑक्सीजनेज़ क्रिया होती है और फलतः प्रकाश श्वसन होने लगता है। इसीलिए अक्सर PGA के दो अणु न बनकर केवल एक अणु का निर्माण होता है और अन्य उत्पाद 2-कार्बन वाले ग्लाइकॉलिक अम्ल का एक अणु होता है। तथापि ग्लाइकॉलिक अम्ल के दो अणुओं को पुनर्चक्रित (recycled) किया जा सकता है जिससे कि फ़ॉस्फ़ोग्लिसरिक अम्ल का एक और अणु उत्पन्न हो सके और इस प्रक्रिया में एक CO_2 के अणु की हानि होती है। फिर भी C_4 पौधों में CO_2 के स्थिरीकरण की प्रक्रिया अधिक दक्षता के साथ होती है इसलिए दिन के प्रकाश में जो भी CO_2 मोचित होती है वह पूरी की पूरी PEP कार्बोक्सिलेज़ द्वारा फिर से ग्रहण कर ली जाती है। अतः उनमें प्रकाश श्वसन होता नहीं देखा जाता। अनुसंधाताओं के सामने जो लक्ष्य हैं उनमें से एक यह है कि C_3 पौधों को C_4 पौधों में बदला जाए और प्रकाश श्वसन को न होने दिया जाए। जिससे कि स्थायी हुए कार्बन का संरक्षण हो।

- हाल ही के वर्षों में इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी तथा एक्स-रे विवर्तन क्रिस्टेलोग्राफी (x-ray diffraction, crystallography) की तकनीकों द्वारा हम प्रकाश संश्लेषी क्रिया प्रणाली की संरचना को विस्तारपूर्वक समझ पाए हैं। प्रकाश संश्लेषी यूनिटें — जिनको मूलतः केवल सैद्धांतिक आधार पर प्रस्तावित किया गया था — इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफों में देखी जा सकती हैं और जीवाणुओं में तो हाल ही में प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली के अभिक्रिया केंद्र के विस्तृत मॉडल की जानकारी उपलब्ध हुई है। आशा की जाती है कि निकट भविष्य में उच्च कोटि के पौधों में प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली के गठन का विस्तृत मॉडल उपलब्ध हो जाएगा। क्लोरोप्लास्ट के आण्विक जीव-विज्ञान का क्षेत्र भी बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है और न केवल प्रोटीन बल्कि प्रकाश संश्लेषण से संबंधित प्रत्येक जीन की पहचान की जा रही है। साथ ही साथ आनुवंशिक इंजीनियरी तकनीकों का भी विकास किया जा रहा है जिससे कि क्लोरोप्लास्टों में प्रकाश संश्लेषी यंत्रावली को उपयुक्त रूप से बदला जा सके और यह संभव है कि उपयोगी पौधों में भविष्य में प्रकाश संश्लेषण को और अधिक दक्षता से संपन्न कराया जा सके।

अंत में क्लोरोप्लास्ट का उद्‌भव, विकास तथा वर्गिकी दृष्टि से, पहेली है। व्यापक रूप में यह माना जाता है कि क्लोरोप्लास्ट आदिम प्रोकैरियोटी कोशिकाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं जो कि प्रकाश संश्लेषण करने योग्य थे और ये यूकैरियोटी कोशिका के भीतर आ गए जिससे कि उच्च कोटि के पौधों का जन्म हुआ, जो आज हम देखते है।

13.12 अंत में कुछ प्रश्न

1. ग्रेना में होने वाली प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाएं प्रकाश की ऊर्जा को ग्रहण कर लेती है और इसे रासायनिक ऊर्जा, जैसे कि ATP और NADPH, में बदल देती है। तो फिर कार्बन स्थिरीकरण की आवश्यकता क्यों हुई?

....

....

....

....

2. प्रकाश संश्लेषण की निम्नलिखित अभिक्रियाओं के पदार्थों और अंतिम उत्पादों को लिखिए।

प्रकाश संश्लेषण अभिक्रियाएं	कच्चा माल	अन्य उत्पाद
1) PS I		
2) PS I के पश्चात इलेक्ट्रॉन परिवहन		
3) PS II		
4) PS II के पश्चात इलेक्ट्रॉन परिवहन		
5) चक्रिय फ़ॉस्फ़ेटीकरण		
6) कार्बन स्थिरीकरण		

3. प्रकाश श्वसन और श्वसन की तुलना कीजिए।

....

....

....

....

....

(संकेत : सब्स्ट्रेट, एन्ज़ाइम, बेकार पदार्थ, ऊर्जा में वृद्धि तथा कार्बन की हानि से संबंधित बातों के आधार पर तुलना कीजिए)।

13.13 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) i) घ, ii) ग, iii) ख, iv) क

2) क) i) दृश्यमान स्पेक्ट्रम के विभिन्न तरंगदैर्ध्यों की सापेक्ष प्रकाश रसायन दक्षता को ज्ञात करना। यह क्लोरोफिल के अवशोषण स्पेक्ट्रम के साथ बहुत अधिक मिलती।

ii) शैवालों के तंतुओं के हिस्सों को विभिन्न तरंगदैर्ध्यों के प्रभाव में रखना और प्रकाश-रासायनिक दक्षता को मापना (कितनी O_2 उत्पन्न हुई है इसका मापन तंतु पर वायुवी सुचल जीवाणुओं के विभेदित रूप में एकत्रित (defferential accumulation) होने से किया जाता है।

ख) किसी वस्तु का रंग उसके द्वारा परावर्तित प्रकाश के कारण होता है। तीन जीव — बैंगनी-गंधक जीवाणु, नीला हरा शैवाल तथा जौ की पत्तियां क्रमशः बैंगनी, नीली-हरी और हरी रोशनी को परावर्तित करती हैं और इसीलिए ये बैंगनी, नीली-हरी और हरी दिखाई देती हैं। ये दृश्यमान स्पेक्ट्रम के सभी रंगों को अवशोषित कर लेते हैं, केवल उन रंगों को नहीं जिन्हें ये परावर्तित करते हैं। चूंकि क्रिया स्पेक्ट्रम और अवशोषण स्पेक्ट्रम सामान्यतः समांतर होते हैं इसलिए स्पेक्ट्रम (क) जौ की पत्तियों का (ख) नीले-हरे शैवालों का और (ग) बैंगनी गंधक-जीवाणुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

3) क) i) Q_{10} का मान 1 से अधिक था।
जब रुक-रुक कर प्रकाश दमक (flashes) दी गई और उसके बाद अंधेरे में रखा गया तो प्रकाश संश्लेषी दक्षता में वृद्धि हुई।

ii) पानी प्रकाश अपघटन, ATP और NADPH का बनना।

ख) i) H_2O, प्रकाश अपघटन, वान नील, गंधक
ii) H_2O, ^{18}O
iii) प्रकाश अपचयन, NADPH, प्रकाश फ़ास्फ़ेटीकरण, ATP
iv) हिल-अभिक्रिया

4) क) i) ऑक्सीजन के प्रति अणु की उत्पत्ति के लिए क्वांटम मांग 4 की जगह 8 थी।

ii) उच्चतम तरंगदैर्ध्यों (लाल क्षेत्र) पर क्वांटम उत्पादन में घटोतरी हो जाती है। परंतु अपेक्षाकृत छोटे तरंगदैर्ध्य वाला प्रकाश पुंज साथ ही साथ दिया जाता है तो घटोतरी नहीं होती है।

ख) i) एक, दो

ii) इलेक्ट्रॉन,
iii) एन्टेना सम्मिश्र, अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल *a*
iv) 680, 700, $NADP^+$

ग) i) घटती, ii) बढ़ोतरी, iii) निम्न

घ) i) ग, ii) ग, iii) स, iv) ग, v) स, vi) ग

5) क) 1) रेडियमसक्रिय, 2) ऑटोरेडियोग्राफी 3) आण्विक विच्छेदन,
4) गाइगर मूलर

ख). i) 3-PGA, ii) RuBP, iii) ग्लूकोज़, iv) 18, v) 12
vi) 12, vii) एक

6) क) 1) प्रकाश, 2) RuBP, 3) पत्तियों में O_2 की उच्च सांद्रता,
4) प्रकाश की उच्च तीव्रता, 5) C_3 पौधे, 6) परऑक्सिसोम

ख) i) ग, ii) क, iii) ग, iv) ख, v) क

ग) i) फ़ॉस्फ़ोईनॉल पाइरुवेट
ii) पाइरुवेट कार्बोक्सिलेज़
iii) ATP
iv) क्लोरोप्लास्ट
v) C_3 मार्ग, पूलाच्छद कोशिकाएँ
vi) RuBP
vii) झिल्लियों का जाल
viii) अधिक

7) i) ग, ii) क, iii) ग, iv) ग, v) ग, vi) घ,
vii) ग, viii) क, ix) क, x) च, xi) ङ

अंत में कुछ प्रश्न

1) i) ऊर्जा का संचयन कार्बोहाइड्रेटों के रूप में अपेक्षाकृत अधिक आसान होता है और इस रूप में और भी अधिक ऊर्जा संचित की जा सकती है।

ii) विभिन्न जैव संश्लेषी क्रियाओं के लिए कार्बोहाइड्रेटों के कार्बन-कंकाल की आवश्यकता पड़ती है।

2)

प्रकाश रासायनिक अभिक्रियां	कच्चा माल	अंत्य उत्पाद
1) PS I	1) hv + (प्रकाश को ग्रहण करने वाले वर्णक सम्मिश्र + P_{700})	उत्तेजित इलेक्ट्रॉन
2) PS I के पश्चात इलेक्ट्रॉन परिवहन	2) hv + (प्रकाश को ग्रहण करने वाला वर्णक सम्मिश्र + P_{700})	NADPH
3) PS II	hv + (प्रकाश को ग्रहण करने वाला वर्णक सम्मिश्र, P_{680})	उत्तेजित इलेक्ट्रॉन
4) PS II के पश्चात इलेक्ट्रॉन परिवहन	hv + (प्रकाश को ग्रहण करने वाला वर्णक सम्मिश्र + P_{680} + ADP + P_i)	उत्तेजित इलेक्ट्रॉन, ATP
5) चक्रिय प्रकाश फ़ॉस्फ़ेटीकरण	H^+ भंडार, ADP + P_i	ATP
6) कार्बन स्थिरीकरण (अप्रकाशीय) अभिक्रियाएं	RuBP + CO_2 + ATP + NADPH	शर्कराएँ ADP + P_i + $NADP^+$

3)

	श्वसन	प्रकाश श्वसन
सब्स्ट्रेट	कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन + O_2 अथवा उनकी मोनोमरिक इकाइयाँ	RuBP
एन्ज़ाइम	ग्लाइकोलिसिस, TCA चक्र, इलेक्ट्रॉन-परिवहन श्रृंखला के विभिन्न एन्ज़ाइम	RuBP कार्बोक्सिलेज़/ऑक्सीजनेज़
हानि	कार्बन की हानि	कार्बन की हानि
लाभ	ऊर्जा 36 ATP/ग्लूकोज़	कोई ATP नहीं बनता
बेकार उत्पाद	CO_2, H_2O	CO_2, NH_3

इकाई 14 पोषवाह में परिवहन

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
 उद्देश्य
14.2 परिवहन आवश्यक क्यों है?
14.3 परिवहन नेटवर्क
14.4 उत्पत्ति और वितरण—स्रोत और सिंक
14.5 पोषवाह — संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक संबंध
14.6 चालनी नलिकाओं का भारण और अभारण
14.7 चालनी नलिकाओं में उपापचयजों की प्रकृति
14.8 पोषवाह परिवहन पर प्रयोग
14.9 पोषवाह परिवहन की क्रियाविधि
 मन्च का दाब प्रवाह मॉडल
 फेन्सम और स्पैनर की विद्युत-परासरणी प्रवाह परिकल्पना
 जीवद्रव्यी अभिस्रवण और नलिकाकार क्रमाकुंचक-प्रवाह मॉडल
 प्रोटोपरासरणी मॉडल
14.10 सारांश
14.11 अंत में कुछ प्रश्न
14.12 उत्तर

14.1 प्रस्तावना

अब तक आपने सीखा कि पानी, पौधों की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। पानी जड़ों द्वारा ग्रहण किया जाता है। जड़ों का दूसरा कार्य है मिट्टी से जल में घुले खनिज पोषकों का अवशोषण करना। पूर्ण पौधे में खनिज पोषक पानी के साथ-साथ लम्बी दूरी वाले रास्तों पर चलते हैं। ये रास्ते संवहनी तंत्र (vascular system) ने प्रदान किए हैं। जड़ें अपना भरण-पोषण नहीं कर सकतीं। पौधे के कई अन्य ऊतकों में भी प्रकाश संश्लेषी उपकरण (photosynthetic apparatus) या तो पूरी तरह गायब होता है यदि होता भी है तो आंशिक रूप में। इस प्रकार कई ऊतक अपने जीवन प्रक्रमों (life processes) को सहारा देने के लिए पर्याप्त भोजन का निर्माण नहीं कर सकते। दूसरी तरफ पत्तियां पानी के लिए जड़ों पर निर्भर हैं लेकिन वे इतना खाना निर्मित करती हैं जितना उन्हें आवश्यक नहीं होता। इस प्रकार पत्तियां दूसरे ऊतकों के लिए आहार का स्रोत बनती हैं। कुछ ऊतक अतिरिक्त खाद्य का संग्रह कर सकते हैं ताकि पौधा अपनी जाति को बनाए रखने और अपनी वृद्धि के लिए इन खाद्यों को काम में ला सके। अब देखना यह है कि ऊतकों, और विशेष रूप से जड़ों तथा पत्तियों के बीच ऐसा पूरक श्रम-विभाजन कैसे संभव होता है और प्रकाश संश्लेषण और जैव संश्लेषण (biosynthesis) द्वारा बनाए गए जैव अणु (organic molecules) किस प्रकार पौधों के विभिन्न अंगों में वितरित होते हैं?

इस इकाई में आप पौधों के विभिन्न भागों जैसे कि बीजों, फलों और भंडारण ऊतकों में पत्तियों से खाद्य के वितरण के बारे में जानेंगे। जब आप खाद्य के परिवहन के बारे में सोचते हैं तो आपके दिमाग में किस तरह के प्रश्न उठते हैं? संभवतया आप नीचे दी गई बातें जानना चाहें :

i) पौधों में स्थानांतरण (translocation) कहाँ होता है? ii) किस तरह के पदार्थों का परिवहन होता है? iii) स्थानांतरण की क्रियाविधि (mechanism) क्या है? iv) परिवहन को प्रभावित करने वाले आंतरिक और बाह्य यानि भीतरी तथा बाहरी कारक (factors) क्या हैं? उदाहरण के लिए तरबूज और अंगूर कैसे इतने रसदार बन जाते है जबकि उनके एकदम साथ लगी पत्तियाँ कागजी और स्वादहीन होती हैं?

इस इकाई में हम ऊपर उठाए गए प्रश्नों के उत्तर जानने की कोशिश करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप :

- खाद्य पदार्थों के स्थानांतरण के लिए परिवहन नेटवर्क का वर्णन कर सकेंगे,
- स्थानांतरण के संदर्भ में स्रोत और सिंक की संकल्पना (concept) की व्याख्या कर सकेंगे,
- पोषवाह (phloem) के संरचनात्मक (structural) और प्रकार्यात्मक (functional) संगठन का वर्णन और आरेखन (skétch) कर सकेंगे, विशेषतया उन क्षेत्रों का जो चालनी नलिकाओं में भारण और अभारण (loading and unloading) के पास होते हैं,
- पोषवाह संनालों (conduits) द्वारा जिन पदार्थों का परिवहन होता है उनकी सूची बना सकेंगे,
- पोषवाह परिवहन के अध्ययन के निमित किए गए विभिन्न प्रयोगों का वर्णन कर सकेंगे और
- पोषवाह द्वारा स्थानांतरण की क्रियाविधि के लिए प्रस्तावित विभिन्न मॉडलों का वर्णन और तुलना कर सकेंगे।

अध्ययन निर्देशिका

इस इकाई के अध्ययन के लिए आपको द्रवगतिकीय (hydrodynamics) का प्रारंभिक ज्ञान तो होना ही चाहिए। द्रवगतिकीय में, केशिकाओं में श्यान द्रवों का प्रवाह (flow of viscous fluids in capillaries), स्फीति दाब की संकल्पना (concept of turgor pressure), परासरणी दाब (osmotic pressure) और जल-विभव की संकल्पना (concept of water potential) शामिल हैं। इनमें से कुछ के बारे में पिछली इकाइयों में बताया जा चुका है। आपको जड़ों, तनों और पत्तियों की रचना (anatomy) तथा उनका गठन करने वाली विभिन्न कोशिकाओं का भी ज्ञान होना चाहिए। इसलिए पढ़ते समय संदर्भ के लिए कोशिका जैविकी (Cell Biology, LSE-01) के खंड 4 वाले पाठ्यक्रम को अपने पास रख लें।

14.2 परिवहन आवश्यक क्यों है?

आप जानते हैं कि पत्तियां प्रकाशस्वांगीकरणज (photoassimilates) बनाती हैं और जड़ों सहित विभिन्न ऊतकों का भरण-पोषण करती हैं। विशिष्ट ऊतकों में संग्रहीत अतिरिक्त प्रकाशस्वांगीकरणजों और उपापचयजों (metabolites) से फल और बीज बनते हैं। बीज उचित ऋतु में अंकुरित होते हैं और पौधे को पुनः जन्म देते हैं। पेड़ के वितान (canopy) पर स्थित पत्तियाँ जड़ों से दूर होती हैं। यह दूरी कुछ मिलीमीटर से लेकर 100 मीटर तक हो सकती है। पोषवाह और दारू मृदूतक (xylem parenchyma) संवहन-तंत्र की पूरी लम्बाई के साथ साथ होते हैं लेकिन ऐसा नहीं है कि वे सभी ऊतकों के एकदम सामीप्य में हों। इसलिए एक ऐसे व्यापक परिवहन तंत्र की जरूरत होती है जो प्रकाश संश्लेषण और नाइट्रोजन उपापचय (metabolism) के उत्पादों को मध्यम और लम्बी दूरी तक ले जा सके। इस कार्य को लम्बी दूरियों तक सम्पन्न करने के लिए विसरण (diffusion) एक बहुत ही धीमा प्रक्रम है। आवश्यकता इस बात की है कि विशिष्टीकृत संवहनी तंत्र में एक संवहनी (convective) प्रवाह हो जिससे कि प्रकाश संश्लेषज (photosynthates) सभी जरूरतमंद ऊतकों तक पहुंच सकें। परिवहन तंत्र का भी उसी तरह व्यापक और शाखित होना आवश्यक है जैसा कि प्राणी के शरीर में धमनियों (arterial) और शिराओं (venous) नेटवर्क होता है। लेकिन पौधों में कोई रक्त परिसंचरण (circulation) के लिए हृदय की तरह विशिष्ट पम्प नहीं होता है। हालांकि हम अभी तक भी यह पूरी तरह से नहीं समझ पाए हैं कि पौधे इस लक्ष्य को कैसे प्राप्त करते हैं लेकिन हमें इतना जरूर मालूम है कि हृदय न होते हुए भी पौधे इस अत्यधिक कठिन कार्य को संपन्न करते हैं। पौधों के अंगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पत्तियाँ दूर-दूर तक फैले ऊतकों को प्रकाश संश्लेषज पहुंचाने की व्यवस्था करती हैं।

14.3 परिवहन नेटवर्क

आप जानते हैं कि पौधों में एक विस्तृत नलकर्म नेटवर्क (plumbing network) होता है जो पौधों के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ता है। उच्च कोटि पादपों (higher plants) में खाद्य परिवहन

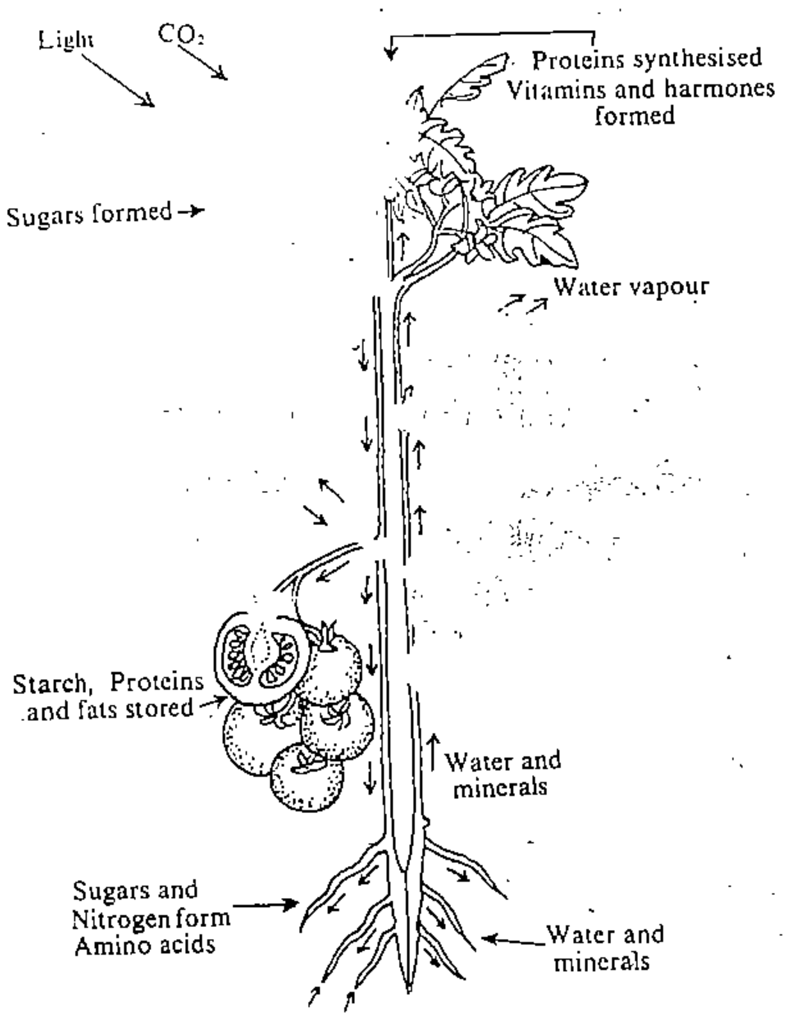

चित्र 14.1: पौधों में हृदय नहीं होता फिर भी उनमें प्रभावशाली परिवहन प्रक्रम चलते रहते है। अवमृदा (sub-soil) में जड़ों से प्ररोहों तक जल और अकार्बनिक पोषकों का परिवहन वाष्पोत्सर्जन धारा करती है। यह धारा कभी-कभी 100 मीटर की ऊंचाई तक का सफर तय करती है। प्रकाश संश्लेषण के प्रक्रम में पत्तियाँ सौर ऊर्जा को लेकर CO_2 से कार्बन के स्वांगीकरण द्वारा उपापचयजों का एक श्यान घोल उत्पन्न करती हैं। यह घोल स्थानांतरण द्वारा सिंक ऊतकों को वितरित होता है।

के लिए पोषवाह ऐसा ही नेटवर्क है। यह पौधे के दूसरे प्रमुख परिवहन तंत्र, दारू के समानांतर होता है (चित्र 14.1) जो पौधों से पानी और खनिज पोषकों को ग्रहण करता है और उन्हें सारे पौधे में वितरित करता है। पोषवाह में चालनी नलिकाएं (sieve tubes) होती हैं जो आपस में जुड़कर एक लम्बी परस्पर सम्बद्ध (interconnected) पाइप लाइन का रूप ले लेती हैं। चालनी नलिकाएं जल संवाहक दारु कोशिकाओं की तरह मृत नहीं होती हैं वरन् ये परिपक्व होने पर भी जीवित रहती हैं। लम्बी दूरी वाले ये दोनों परिवहन तंत्र और उनका अरीय (radial) शाखन पादप शरीर के हर छोटे क्षेत्र के लिए सप्लाई लाइन बना देते हैं।

पौधे के परिवर्धन की (developing) अवस्थाओं के दौरान पोषवाह में परिवहन की दिशा बदलती रहती है। उदाहरण के लिए एक तरुण पौद (seedling) में खाद्य पदार्थ, बीज से कोपलों (नई पत्तियों —juvenile leaves) की ओर ऊपर जाते हैं। ऐसा तब तक होता रहता है जब तक कि कोपलें अपना खाना संश्लेषित करना शुरू नहीं करतीं। इसकी तुलना में फल बनने के दौरान या जड़ों अथवा तनों में भंडारण के लिए खाद्य पदार्थ नीचे की ओर जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जिन ऊतकों में आवश्यकता से अधिक खाद्य होता है वहां से उन ऊतकों को जाता है जहाँ उसकी जरूरत होती है। अत्यधिक खाद्य वाले ऊतक **स्रोत** और आवश्यकता वाले ऊतक **सिंक** कहलाते हैं (चित्र 14.2)।

वास्तव में परिवहन को निम्न प्रकार से उप-विभाजित (subdivide) किया जा सकता है :

i) मध्यम पर्ण (mesophyll) कोशिकाओं से जैव पोषकों (organic nutrients) का पत्तियों के पोषवाह में "भारण" (loading),

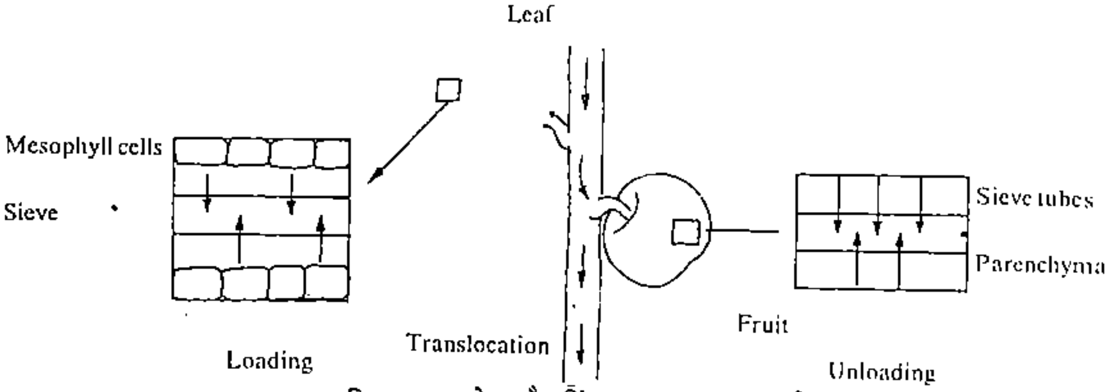

चित्र 14.2: स्रोत और सिंक—एक व्यवस्था आरेख।

ii) इन पोषकों का दूर-दूर तक स्थानांतरण—जहां ऊतक इनकी सप्लाई का इंतजार कर रहे हों,

iii) पोषवाह से सिंक की कोशिकाओं में पोषकों का "अभारण" (unloading)।

ये तीनों ही प्रक्रम परस्पर सम्बद्ध हैं। परिवहन की दर नियत (constant) नहीं होती है। एक ओर तो यह सिंकों की उपापचयी आवश्यकताओं पर निर्भर करती है और दूसरी ओर स्रोत अर्थात् पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण की दर पर। पोषवाह परिवहन एक बहुत ही जटिल परिघटना (phenomenon) है और हम आपको शुरू में ही बता दें कि गहन अनुसंधान के बावजूद आज तक भी इसे पूरी तरह नहीं समझा जा सका है। इसलिए पादप संरचना (anatomy) और कार्यकी (physiology) के लिए यह क्षेत्र एक बहुत ही चुनौती भरा विषय है।

14.4 उत्पत्ति और वितरण—स्रोत और सिंक

हम ऊपर बता चुके हैं कि प्रकाश संश्लेषजों का परिवहन पत्तियों से शुरू होता है और एक या दूसरे सिंक ऊतक में जाकर समाप्त होता है। हालांकि यह सच है फिर भी सिंकों और स्रोतों की संकल्पना को परिभाषित करना आवश्यक है। इसके लिए *सैक्सिफ्रैगा* (*Sexifraga* चित्र 14.3) के पौधे पर किए गए प्रयोग को लीजिए। यह पौधा लम्बी उप-शाखाओं (offshoots) द्वारा फैलता है।

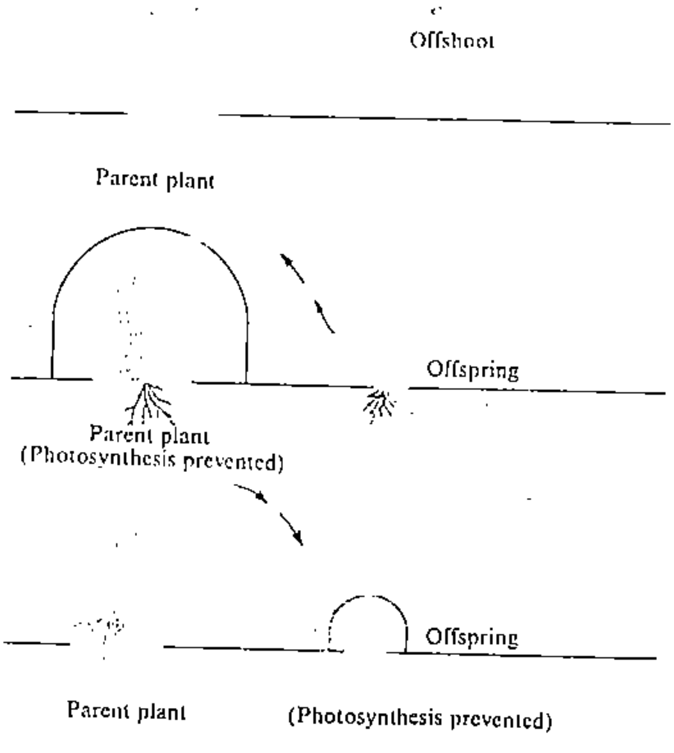

चित्र 14.3: a) उपशाखा सहित *सैक्सिफ्रैगा* पौधा, b) संतति द्वारा खाद्य सप्लाई, c) जनक पादप द्वारा खाद्य सप्लाई

उप-शाखाओं के सिरे पर पत्तियों का एक गुच्छा होता है साथ ही साथ एक योग्य मूल तंत्र विकसित होने की व्यवस्था भी। अगर मूल तंत्र गीली मिट्टी के संपर्क में आता है तो यह आत्मनिर्भर प्ररोह-मूल तंत्र (shoot-root system) में परिवर्धित हो जाता है। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता तब तक लंबी लिंक (link) शाखा जनक पादप (parent plant) की जड़ों द्वारा ग्रहण किए गए जल और खनिज को, नई पत्तियों के समूह तक पहुंचाती है। शुरू में दूरस्थ प्ररोहों की कलिकाओं (buds) को जरूरी पोषण पहुंचाने का काम पोषवाह परिवहन तंत्र करता है। पूरी वृद्धि हो जाने पर पत्तियों का नया गुच्छा अत्यधिक प्रकाश संश्लेषज का उत्पादन करने लगता है और अपने उत्पाद को जनक पादप को बांट देता है। अगर हम जनक पादप या उप-शाखा पर पड़ने वाले प्रकाश को एक लम्बे समय तक रोक दें या विपरीत यानि संतति में रोक दे ताकि दोनों में से एक ही प्रकाश संश्लेषण के लिए सक्षम हो तो पोषवाह किस रास्ते से खाद्य का स्थानांतरण करेगा? हमें यकीन है कि आप पहले ही सही जवाब सोच चुके हैं। यह देखा गया है कि जिस तंत्र में प्रकाश संश्लेषण हो रहा है उससे स्थानांतरण होता है और जिस तंत्र को प्रकाश संश्लेषण से वंचित कर दिया गया है, उसकी ओर होता है। इस प्रकार पत्तियों के दो तंत्र जनक पादप या उपशाखा एक समय सिंक हो सकते हैं तो दूसरे समय स्रोत हो सकते हैं। इसलिए उपरोक्त मामले में, पोषवाह परिवहन की दिशा, पत्तियों के दो तंत्रों में प्रकाश संश्लेषणजों के आपेक्षिक उत्पादन पर निर्भर करती है।

विशिष्ट सिंकों में भी ऐसी ही परिस्थितियाँ होती हैं। ऊष्णकटिबंध (tropics) में जब वसंत ऋतु में पर्णपाती (deciduous) पौधों के अनाच्छादित वृक्षों पर नई पत्तियाँ निकल आती हैं तब उनको पोषकों की जरूरत होती है। जब परिपक्व पत्तियाँ मौजूद न हों तो पोषकों का सम्भावित स्रोत क्या हो सकता है? स्वाभाविक है कि सिंक ऊतकों में संगृहीत उपापचयजों का भंडार ही यह स्रोत होगा। वसंत ऋतु में दारु और पोषवाह दोनों को ही पूरे पौधे से उपापचयज मिलते हैं और वे इन्हें कलिकाओं में वितरित कर देते हैं।

बोध प्रश्न 1

i) अपने विभिन्न अंगों में .... और .... उपापचय (मेटाबोलिज्म) के उत्पादों को ले जाने के लिए पौधों को एक व्यापक और शाखित परिवहन तंत्र की आवश्यकता होती है।

ii) पौधों में .... और .... दो विस्तृत परिवहन नेटवर्क हैं जो एक-दूसरे के समानांतर चलते हैं।

iii) .... एक रैखिक सारणी (linear array) में व्यवस्थित होते हैं जो पोषवाह की लम्बाई में उदग्र (vertical) होते हैं।

iv) पोषवाह खाद्य को .... से .... की तरफ स्थानांतरित करता है।

v) चालनी नलिकाओं (sieve tubes) में भारण .... पर और अभारण .... पर होता है।

14.5 पोषवाह—संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक संबंध

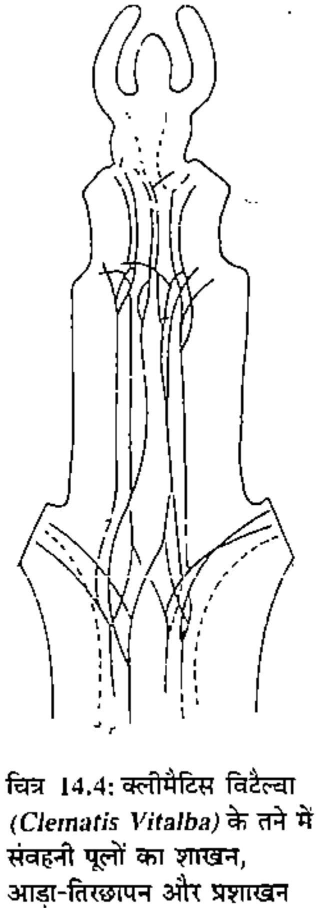

चित्र 14.4: क्लीमैटिस विटैल्बा *(Clematis Vitalba)* के तने में संवहनी पूलों का शाखन, आड़ा-तिरछापन और प्रशाखन (व्यवस्था चित्र)।

इस भाग में हम पोषवाह के संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक संबंध की व्याख्या करेंगे तथा दारु से इसकी तुलना करेंगे। अन्य ऊतकों के संदर्भ में पोषवाह की स्थिति (location) की जाँच एक ही अनुप्रस्थ काट (transverse section) से की जा सकती है लेकिन तने से विभिन्न शाखाओं तक उनके अनुदैर्ध्य (longitudinal) मार्ग की जानकारी पाने के लिए पौधे की ऊंचाई के साथ-साथ असंख्य क्रमिक अनुप्रस्थ काटों के कष्टसाध्य अध्ययन की आवश्यकता होती है। चित्र 14.4 में क्रमिक काटों द्वारा प्राप्त व्यवस्था आरेख दिखाया गया है। संवहनी पूलों (vascular bundles) का शाखन (branching), आड़ा-तिरछापन (criss-crossing) और प्रशाखन (ramification) ... ए। विशेषतया पर्वसंधियों (nodes) यानि गांठों पर पोषवाह का अनुदैर्ध्य शाखन और संलयन (fusion) यह दिखाता है कि तने के एक तरफ का पोषवाह अपने अनुदैर्ध्य पथ पर दूसरी तरफ पार जा सकता है। हम जानते हैं कि पोषवाह में चार प्रकार की कोशिकाएं होती हैं : (i) चालनी अवयव (sieve elements), (ii) सहचर कोशिकाएं (companion cells), (iii) पोषवाह मृदूतक (phloem

parenchyma), और (iv) कभी-कभी पोषवाह रेशे (phloem fibres)। उपापचयज केवल चालनी अवयवों में ही बहते हैं। ये अवयव खोखली पाइप लाइनों से मिलते-जुलते हैं और कोशिकीय चैनल (cellular channel) कहलाते हैं (चित्र 14.5)।

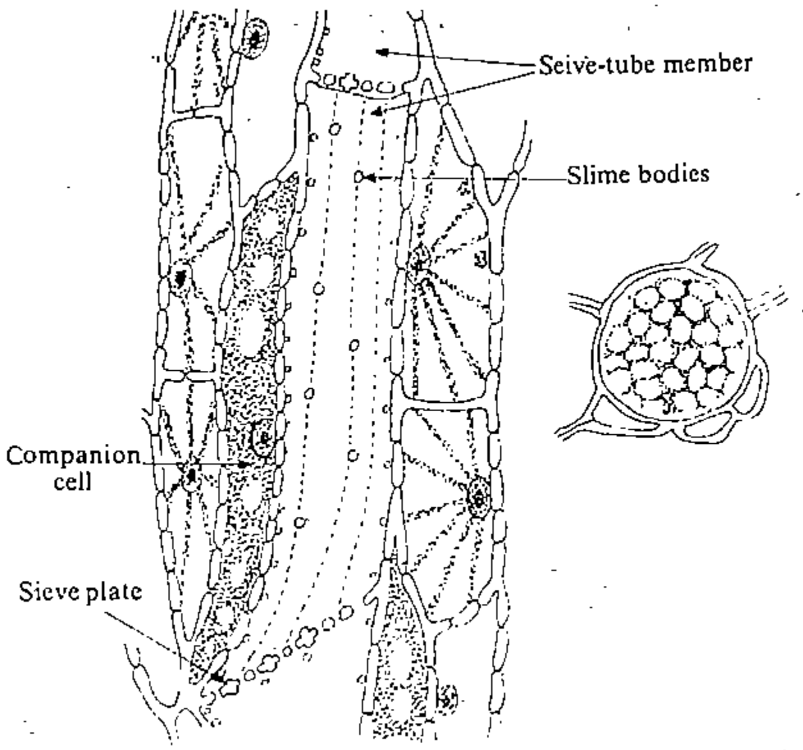

चित्र 14.5: पोषवाह की बारीक संरचना जिसमें चालनी नलिका अवयव, इसकी सहचर कोशिकाएं और पोषवाह की दूसरी कोशिकाएं दिखलाई गई हैं। चालनी पट्टिका रंध्र (sieve plate pore) पास वाले चालनी अवयवों की कोशिका भित्तियों में गोलाकार छेद हैं (आंतरचित्र — inset)।

चालनी नलिका अवयवों में केन्द्रक नहीं होता लेकिन लवक (plastid) और माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं। पारकोशिकीय तंतु गुच्छों (transcellular strands) को छोड़कर चालनी अवयव की कोशिका-अवकाशिका (cell lumen) खाली दिखाई देती है। पारकोशिकीय तंतुगुच्छ बरास्ता प्लैज्मोडेसमेटा द्वारा चालनी छिद्र पट्टिका पर पड़ोसी चालनी कोशिकाओं से मिल जाते हैं। प्लैज्मा झिल्ली और

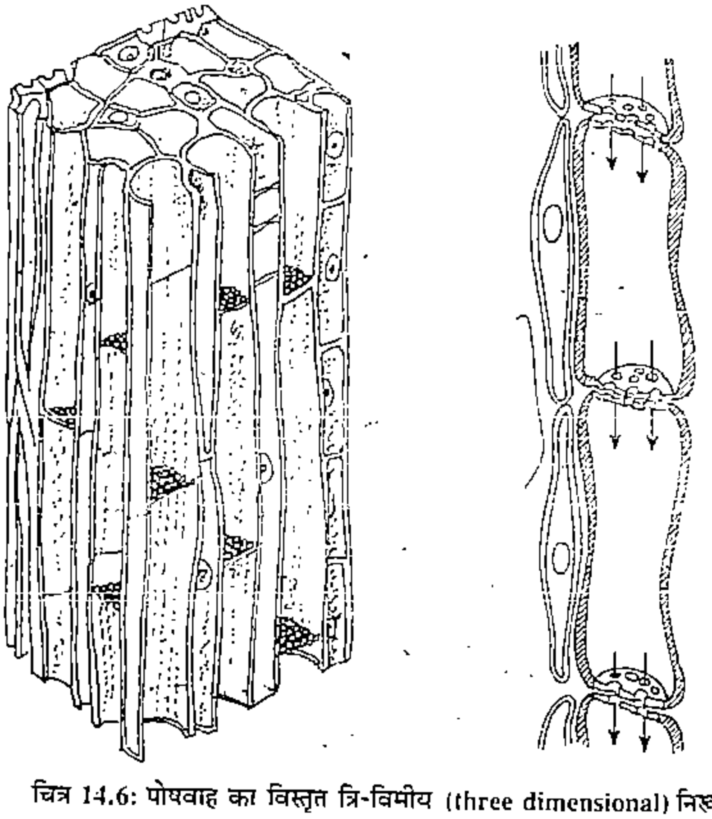

चित्र 14.6: पोषवाह का विस्तृत त्रि-विमीय (three dimensional) निरूपण।

कोशिकाद्रव्य की अविच्छिन्नता चालनी नलिकाओं को अनुदैर्ध्यतः विस्तरित संलवक (symplast) बना देती है। क्या आप बता सकते हैं कि दारु वाहिकाओं (xylem vessels) संलवक बनाती है या ऐपोप्लास्ट (apoplast)?

पोषवाह उपापचयजों के एक श्यान (viscous) घोल को ले जाता है। यह घोल मुख्य रूप से सुक्रोस होता है। दारु-वाहिकाओं और वाहिनिकाओं (tracheids) की तुलना में चालनी नलिका अवयवों का व्यास बहुत छोटा होता है। संकरे चालनी पट्टिका रंध्रों (sieve tube pores) से श्यान पोषवाह रस (sap) के मुक्त प्रवाह पर स्पष्ट प्रभाव नहीं पड़ता। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी चित्रों से पता चलता है कि चालनी पट्टिका रंध्र कैलोस-आस्तरित (callose-linned) होते हैं और प्रायः अंतर्द्रव्यी जालिका (endoplasmic reticulum) तथा पोषवाह प्रोटीन (पी-प्रोटीन) से अधिविष्ट (occluded) होते हैं। पहले इस बात का निश्चित रूप से पता नहीं था, कि चालनी पट्टिका रंध्र सामान्य रूप से अधिविष्ट होते हैं अथवा अधिवेष्टन सम्भावित कृत्रिम (artefact) है जो अध्ययनों के लिए नमूने तैयार करते समय आ जाते हैं। बाद में विशेष तकनीकों (जिनसे कृत्रिमता नहीं आती है) का प्रयोग करके यह सुझाव दिया गया है कि सामान्य उग रहे पौधों में चालनी रंध्र पट्टिकाएं खुली होती हैं और विलेयों का प्रवाह बिना प्लग (plug) हुई चालनी पट्टिका रंध्रों से होता है। जब पौधों को काटा जाता है या उन्हें क्षति पहुंचाई जाती है तब पी-प्रोटीन चालनी पट्टिका की ओर प्रवाहित होती है और रंध्रों को अवरुद्ध कर देती हैं। अगर पी-प्रोटीन न होती तो उपापचयज कटे हुए भाग से बाहर बहते रहते और आखिर में पौधा मर जाता। पी-प्रोटीन स्पष्ट रूप से रक्त प्रोटीन फाइब्रिन जैसी भूमिका निभाती हैं। शायद आप जानते हो कि फ़ाइब्रिन की अनुपस्थिति में किसी अंग के कटने पर व्यक्ति का खून बहता रहता है और वह मर जाता है।

हर चालनी अवयव का अनिवार्य रूप से पड़ोसी सहचर कोशिका से संबंध रहता है। दोनों ही आमतौर पर एक दूसरे से अनेक प्लैज़्मोडेस्मेटा से जुड़ी रहती हैं। दोनों ही एक कोशिका से उत्पन्न होती हैं। सहचर कोशिका के प्रकार्य (function) का पता नहीं है लेकिन जब तक चालनी कोशिकाएं जीवित रहती हैं, सहचर कोशिकाएं भी जिंदा रहती हैं। इस रूप में वे सच्ची सहचरी हैं। उनमें सुक्रोस का सांद्रण (concentration) और परासरणीय विभव (osmotic potential) वही है जो चालनी नलिका अवयवों का होता है। सहचर कोशिकाओं का कोशिकाद्रव्य घना होता है और उसमें अनेक कोशिका अंगक (organelles) विशेषतया माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं जो इस बात का सूचक हैं कि उनकी उपापचयी दर ऊंची होती है। यह बहुत संभव है कि सहचर कोशिकाएं स्थानांतरण को सहारा देती हैं। इसके अलावा, इन दोनों कोशिकाओं के बीच अनेक प्लैज़्मोडेस्मेटी संबंधों से इस विचार को बल मिलता है कि सहचर कोशिकाएं चालनी नलिका अवयवों को भारी मात्रा में खाद्य पदार्थों की सप्लाई करती हैं और उन्हें वह प्रोटीन तथा एन्ज़ाइम देती हैं जिन्हें चालनी नलिका अवयव संश्लेषित नहीं कर सकते हैं।

कुछ जातियों (species) में पोषवाह भारण (पत्तियों की चालनी नलिकाओं के पास) और अभारण स्थलों (किसी भी सिंक के अंदर चालनी नलिकाओं के पास) पर विशेष प्रकार की कोशिकाएं होती हैं जो स्थानांतर कोशिकाएं (transfer cells) कहलाती हैं। जैसा कि नाम से ही आभास मिलता है, वे स्रोत से सिंक में उपापचयजों के स्थानांतरण में एक प्रमुख भूमिका निभाती हैं। ये कोशिकाएं रूपांतरित (modified) सहचर कोशिकाएं अथवा पोषवाह मृदूतक की कोशिकाएं हैं। पोषवाह में और दारु में उनकी स्थिति (location) भिन्न होती है जो पादप के भिन्न भागों पर निर्भर करती है लेकिन आमतौर पर ये अजैव (inorganic) विलेयों या उपापचयजों के भारी परिवहन के क्रांतिक (critical) स्थलों पर स्थित होती हैं। स्थानांतर कोशिकाओं की प्लैज़्मा झिल्ली अत्यधिक संवलित (convoluted) होती है। विलेय विनिमय के लिए पृष्ठ क्षेत्र (surface area) कोशिका भित्ति के पार (एपोप्लास्ट) और अनेक प्लैज़्मोडेस्मेटा (संद्रव्य) के द्वारा बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त इन कोशिकाओं का द्रव्य घना (dense) होता है और उनमें अनेक माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं जो उच्च उपापचयी गतिविधि के सूचक हैं।

14.6 चालनी नलिकाओं का भारण और अभारण

खाद्य का निर्माण करने वाली पर्ण-कोशिकाओं से चालनी नलिकाओं तक आहार के भारण को समझने के लिए हमें चित्र 14.7 में दिखाई गई एक लघु शिरा (minor vein) की रचना अवश्य जाननी

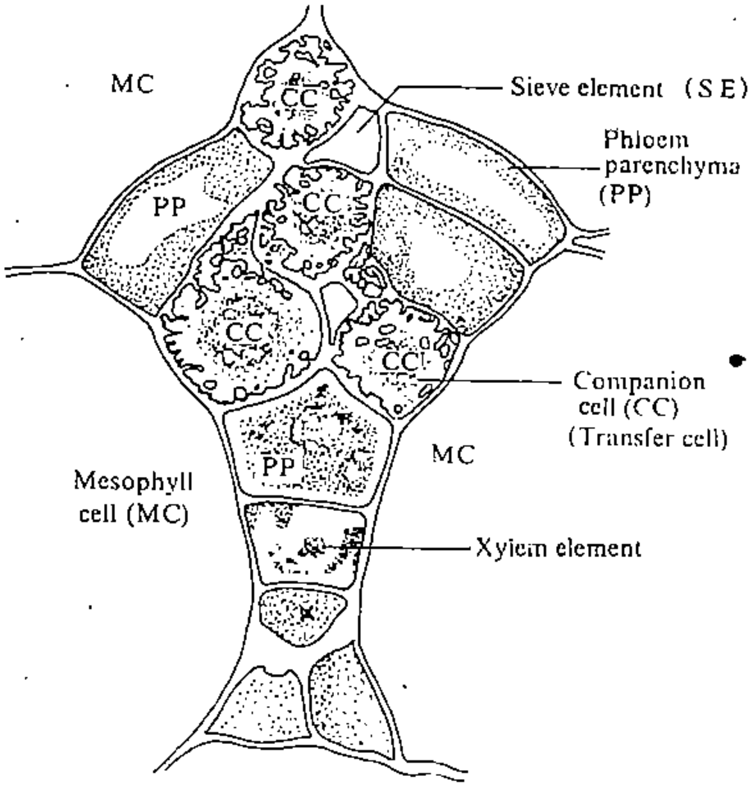

चित्र 14.7: लघु पर्ण-शिरा की अनुप्रस्थ काट (MC-पर्णमध्य कोशिका, X-दारु अवयव, SE-चालनी अवयव, TC-स्थानांतर कोशिकाएं)।

चाहिए। इसमें हम दारु वाहिका (X), दो चालनी अवयव (SE), रूपांतरित सहचर कोशिकाएं (CC) या स्थानांतर कोशिकाएं (transfer cells) और पोषवाह मृदूतक (PP) देख सकते हैं। चालनी अवयव दूसरी कोशिकाओं से अपेक्षाकृत छोटे और बिना कोशिकाद्रव्य वाले होते हैं। सहचर या स्थानांतर कोशिकाओं का कोशिकाद्रव्य घना होता है जबकि पोषवाह मृदूतक कम घना और रसधानीयुक्त (vacuolated) होता है। स्थानांतर कोशिकाएं पूलाच्छद (bundle sheath) और पर्णमध्य कोशिकाओं से सम्बद्ध होती हैं। पत्तियों के परिपक्व होने के साथ, सहचर कोशिकाओं की कोशिका भित्तियों की अंतर्वृद्धि (ingrowth) होने लगती है। इनका निर्माण शायद चालनी नलिका अवयवों को भारण करने की दक्षता बढ़ाना है। स्थानांतर कोशिकाओं द्वारा भारण करने के लिए चालनी अवयवों के चारों ओर की तमाम पर्णमध्य कोशिकाओं के उपापचयज मिलकर एक साझा पूल बना लेते हैं। उपापचयजों और

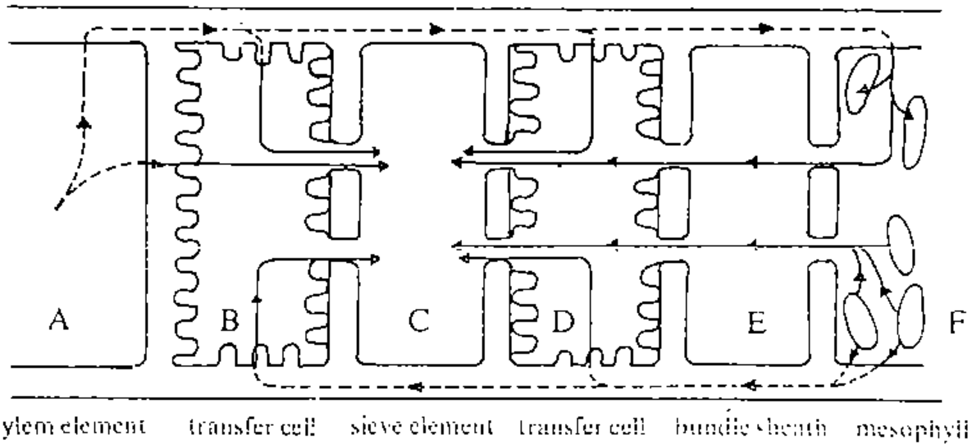

चित्र 14.8: पत्ती की लघु शिरा में स्थानांतर कोशिकाओं की भूमिका : ये पर्ण-ऐपोप्लाज्म के रास्ते, पर्णमध्य कोशिकाओं से विलेय प्रवाहों (fluxes) को चालनी अवयवों तक ले जाने (भारण) के लिए मध्यस्थ का काम करती है। जल और खनिज पोषक पर्णमध्य कोशिकाओं में कोशिका भित्ति फेज़ (ऐपोप्लाज्म) से पहुंचते हैं। पर्णमध्य कोशिकाओं द्वारा एपोप्लाज्म मे निर्मुक्त झिल्ली पारगम्य उपापचयज और K^+ स्थानांतर कोशिकाओं के रास्ते चालनी अवयवों में घुसते है।

दूसरे विलेयों का पथ चित्र 14.8 में दिखाया गया है। उपापचयज सम्भवतया नीचे दी गई तीन प्रकार की परिवहन प्रक्रियाओं द्वारा चालनी नलिकाओं में उड़ेल दिए जाते हैं।

i) संद्रव्यी (symplasmic) परिवहन प्लैज्माडेसमेटी [illegible] (connection) के द्वारा।

ii) कोशिका भित्ति के पार अपद्रव्यी (apoplasmic) परिवहन — (passive transport) और

iii) सक्रिय परिवहन (संपरिवहन—symport और प्रतिपरिवहन—antiport)।

सभी गैर-प्रकाश संश्लेषी (non-photosynthetic) कोशिकाएं और तरुण कलिकाएं प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपनी आवश्यकता से कम ऊर्जा उत्पन्न कर पाती हैं। ये कोशिकाएं और कलिकाएं वितरण स्थल यानि अभारण स्थल हैं। अगर मोटे तौर पर कहा जाए तो जड़ें उपापचयजों की प्रमुख आयातक (importers) हैं। कलिकाओं, पोषवाह तथा दारु मृदूतक को उनकी सप्लाई, संवहनी तंत्र की पूरी लम्बाई के साथ-साथ मिलती रहती है। वृद्धि और परिवर्धन (growth and development) के दौरान बीज, फल, कंद (tubers) आदि प्रमुख आयातक बन जाते हैं। बीजों, कलिकाओं, फलों आदि में उपापचयजों के स्थानांतर के स्थल पर पोषवाह की आकृति विशिष्ट हो जाती है। ऐसा स्थानांतर कोशिकाओं के कारण होता है जो उसी तरह विन्यस्त (arranged) रहती हैं जैसे कि प्राणी-भ्रूण की अपरा (placenta) रहती है। अभारण की प्रक्रिया भारण जैसी ही है। फर्क केवल इतना है कि घटनाएँ विपरीत दिशा में घटती हैं।

बोध प्रश्न 2

क) स्तंभ 1 में दिए गए मदों का स्तंभ 2 में दिए गए मदों से मिलान कीजिए।

स्तंभ 1	स्तंभ 2
i) चालनी नलिकाएं	क) क्षतिग्रस्त कोशिकाओं से पोषवाह रस के प्रवाह को रोकती हैं।
ii) दारु वाहिकाएं	ख) पादप में सब जगह फैली हुई कोशिकीय चैनल
iii) पी-प्रोटीन	ग) परिपक्वता तक जीवित।
iv) चालनी नलिका अवयव	घ) पादप भर में फैली हुई सेलुलोस पाइप लाइन।

ख) नीचे दिए गए कथनों में से कौन-से कथन सही हैं और कौन से गलत हैं। कथनों के सामने दिए गए कोष्ठकों में सही के लिए स और गलत के लिए ग लिखिए।

i) दारु वाहिकाओं और वाहिनिकाओं से चालनी नलिका अवयवों का व्यास छोटा होता है। ☐

ii) चालनी नलिका अवयव प्रोटीन का संश्लेषण कर सकते हैं। ☐

iii) उच्च उपापचयी गतिविधि के हेतू सहचर कोशिकाओं में अनेक माइटोकॉन्ड्रिया होते हैं। ☐

iv) स्थानांतर कोशिकाएं, कार्बनिक विलेयों और उपापचयजों के भारी परिवहन स्थलों पर स्थित होती हैं। ☐

v) स्थानांतर कोशिकाएं, उपापचयजों को पर्णमध्य कोशिकाओं में स्थानांतरित करती हैं और उन्हें चालनी नलिकाओं में भारित कर देती हैं। ☐

vii) शर्कराएं, संलवक और ऐपोप्लास्टीय दोनों ही प्रकार के मार्गों से परिवाहित होती हैं। ☐

14.7 चालनी नलिकाओं में उपापचयजों की प्रकृति

पोषवाह रस में कार्बनिक यौगिकों के तीन प्रमुख वर्ग होते हैं—कार्बनिक अम्ल, ऐमीनो अम्ल और सुक्रोस तथा कुछ धनायन, ऋणायन और हार्मोन। उनके सांद्रण नीचे दिए गए आयतचित्र

(histogram) में निरूपित किए गए हैं। पौधों में सुक्रोस एक प्रमुख ऊर्जा स्रोत है। पत्तियों से सिंक को परिवाहित यह एक प्रमुख उपापचयज है। रैफ़िनोस या मैनिटॉल जैसी असामान्य शर्कराएं कुछ बिरली ही जातियों में परिवाहित होती हैं। पोषवाह में कुल विलेय अंश का सुक्रोस अंश 50% से 90% तक होता है। सुक्रोस ऊर्जा का प्रमुख परिवाहक क्यों है, इनका कारण ज्ञात नहीं हो सका है। चालनी नलिकाओं में सुक्रोस की उच्च सांद्रता के कारण यह सक्रिय परिवहन द्वारा भारित होता है। ऐमीनों अम्ल और कार्बनिक अम्ल, मुख्यतया मैलेट, भी पोषवाह रस के महत्वपूर्ण घटक (components) हैं। धनायनों में K^+ की सांद्रता बहुत ऊंची होती है। दारु रस में NO_3^- और K^+ के सांद्रण लगभग समान होते हैं लेकिन पोषवाह में NO_3^- की सांद्रता बहुत थोड़ी होती है।

क्या आप बता सकते हैं कि NO_3^- कहाँ गायब हो जाता है? नाइट्रेट पत्तियों में अपचित (reduce) हो जाता है और ऐमीनों अम्लों तथा अनेक उन यौगिकों के संश्लेषण के लिए काम में ले लिया जाता है जिन यौगिकों में नाइट्रोजन होता है। क्या अब आप अनुमान लगा सकते हैं कि पोषवाह रस में इतना K^+ क्यों होता है? NO_3^- के विपरीत K^+ का कार्बनिक अणुओं में समावेशन (incorporation) नहीं होता है। वाष्पोत्सर्जन के कारण पत्तियों में K^+ का लगातार अंतर्वाह (influx) होता है। जल के वाष्पोत्सर्जन के बाद K^+ पीछे रह जाता है इसलिए प्ररोह में बढ़े हुए स्तर के कारण दारु में इसके पुनः चक्रण (recycling) की आवश्यकता होती है।

मूल ऊतकों में अत्यधिक आयनों की उपस्थिति मूलों की कोशिकाओं को प्रभावित करके मिट्टी से इन खनिज पोषकों के उद्ग्रहण (uptake) पर असर डालती है। यहाँ हम इस बात पर जोर देना चाहेंगे कि पर्ण एपोप्लाज़्म में जिन आयनों का अत्यधिक संचयन हो जाता है वे स्थानांतर कोशिकाओं के रास्ते से चालनी अवयवों की ओर भेज दिये जाते हैं। कार्बनिक अम्लों और ऐमीनों अम्लों के लिए प्रतिआयन (counter ion) के रूप में सभी कोशिकाओं के द्रव्य के भीतर K^+ की उपस्थिति महत्वपूर्ण है। यह वर्धी पादप ऊतकों की कोशिकाओं में धीरे-धीरे स्वांगीकृत हो जाता है।

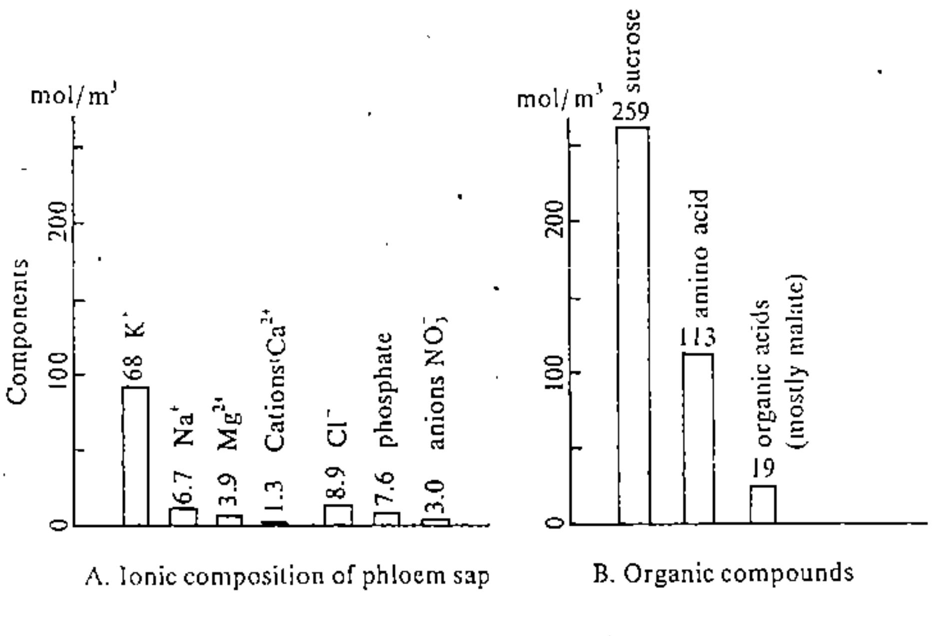

चित्र 14.9: *रिसिनस* के पोषवाह रस के आयनी और कार्बनिक यौगिक। सामान्य तौर पर पोषवाह रस क्षारीय होता है (pH 7.2 – 8.5)।

बोध प्रश्न 3

नीचे दिए गए कथनों के बारे में कोष्ठक में दिए गए दो शब्दों में से एक सही शब्द पर सही का निशान (√) लगाइए :

i) पोषवाह रस (ऐमीनो अम्ल/न्यूक्लीक अम्ल) से भरपूर होता है। ☐

ii) वाष्पोत्सर्जन के कारण पत्तियों में (Ca^{2+}/K^+) का निरंतर अंतर्वाह होता है। ☐

iii) ऐमीनो अम्लों के संश्लेषण के लिए (नाइट्रेट/सल्फेट) अपचित हो जाते हैं। ☐

iv) कोशिका अंगकों में रेडियोसक्रिय कार्बन की संस्थिति देखने के लिए (फोटोग्राफी/ आॅटोरेडियोग्राफी) तकनीक काम में लाई जाती है। ☐

14.8 पोषवाह परिवहन पर प्रयोग

शुरू में इस मूलभूत तथ्य को प्रमाणित करना आवश्यक था कि उपापचयज पोषवाह से होकर स्रोत से सिंक को प्रवाहित होते हैं। पहले पहल जो प्रयोग किए गए थे उनमें एक तने की छाल वलय यानि छल्ले के रूप में काट दी गई (पोषवाह हटाने के लिए) और दारु को सही सलामत रखा गया। कुछ सप्ताह बाद ऊपर की तरफ की छाल में उभार दिखाई दिया जबकि नीचे की तरफ वाली छाल का व्यास पहले जितना बना रहा (चित्र 14.10)। इससे संकेत मिलता है कि खाद्य सामग्री पोषवाह के द्वारा गई होगी जो ऊपरी भाग में संचित हो गई।

इस शताब्दी के आरंभ में विज्ञानविद मन्च (Münch) ने सेब के एक पेड़ से दो ऐसे वलय काटकर दूर कर दिए जैसाकि चित्र 14.11 में दिखाया गया है। सेब B में वृद्धि रूक गई, जिसमें ऊपर और

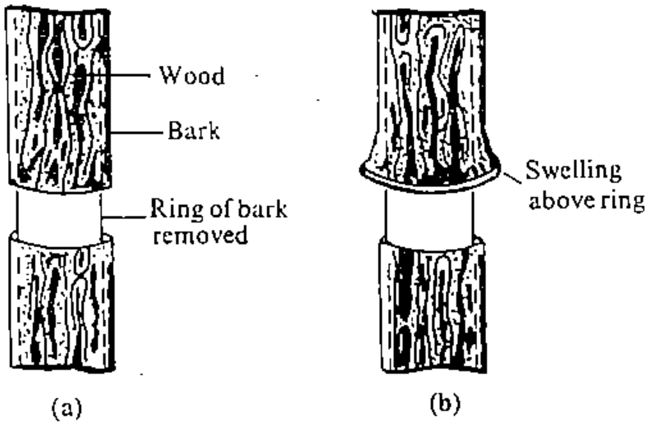

चित्र 14.10: एक पेड़ का वलयन (ringing or girdling)। a) पेड़ से छाल का एक छल्ला दारु को बचा कर हटा दिया जाता है। b) वलय के नीचे की तुलना में उसके ऊपर की छाल में सूजन जैसी उभार आ जाती है। ऐसा समझा जाता है कि यह उभार नीचे की ओर परिवहन की गई सामग्री के संचयन और वलय के एकदम ऊपर कोशिकाओं में तेजी से होते रहने वाले परिवर्धन के कारण होता है। पेड़ के निचले हिस्से को पत्तियों में संश्लेषित होने वाली खाद्य सामग्री नहीं मिलती इसलिए अंततः पौधा मर जाता है।

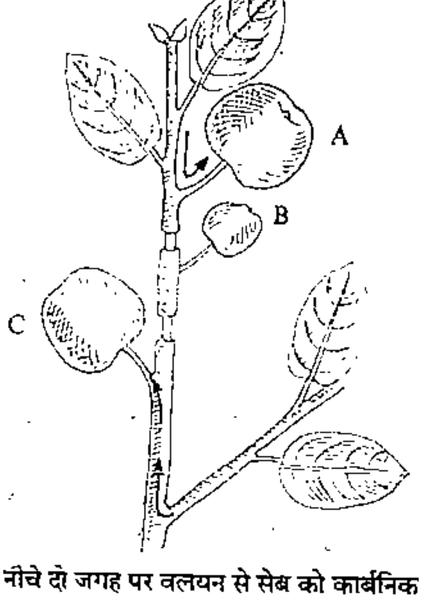

चित्र 14.11: सेब B के ऊपर और नीचे दो जगह पर वलयन से सेब को कार्बनिक पोषण मिलना बंद हो गया और इसकी वृद्धि रुक गई। सेब A और C क्रमशः वलयन के ऊपर और नीचे वाली पत्तियों से प्रकाश संश्लेषज प्राप्त करते हैं।

नीचे वलयन किया गया था, जबकि दो अन्य सेब A और C में अच्छी तरह से वृद्धि होती रही क्योंकि वे अपने उपापचयज क्रमशः ऊपर और नीचे से लेते रहे।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर जब चिह्नकों (markers) के रूप में रेडियो आइसोटोप उपलब्ध होने लगे तब प्रकाश संश्लेषणजों के रास्तों को खोजने के लिए रेडियोऐक्टिव $^{14}CO_2$ प्रयोग की गई। एक अकेली पत्ती को $^{14}CO_2$ और प्रकाश दिया गया ताकि यही एकमात्र ऐसी पत्ती हो जो प्रकाश संश्लेषण द्वारा $^{14}CO_2$ को स्थिर करें (चित्र 14.12)। कुछ घंटे बीत जाने के बाद $^{14}CO_2$ द्वारा बनाए गए प्रकाश संश्लेषजों के वितरण को देखने के लिए तने को अनेक खंडों (segments) में

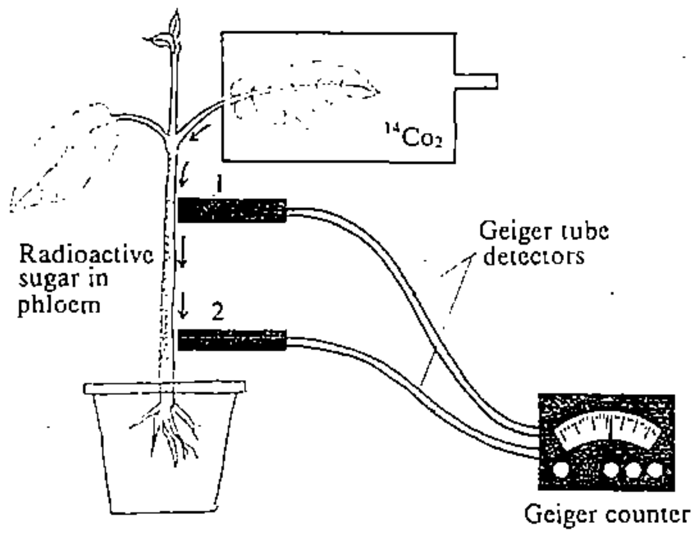

चित्र 14.12: पोषवाह रस गति के वेग (velocity) मापन के लिए प्रयोगात्मक डिज़ाइन। एक पत्ती को बंद कक्ष में सील कर दिया जाता है। इस कक्ष में रेडियोसक्रिय $^{14}CO_2$ भेजी जाती है। पत्ती पर प्रकाश डाला जाता है और रेडियोसक्रिय कार्बन डाइऑक्साइड प्रकाश संश्लेषित शर्करा में समाविष्ट हो जाती है। रेडियोसक्रिय शर्करा के स्थानांतरण का पता तने के साथ लगाई हुई गाइगर नलिका (Geiger tube) से लगाया जा सकता है। शर्करा गाइगर नलिका 1 से गाइगर नलिका 2 तक की दूरी तय करने में जो समय लेती है उसे पोषवाह रस की गति (movement) के वेग निकालने के काम लाया जा सकता है।

काटा गया। तने के विभिन्न खंडों में ^{14}C की रेडियोऐक्टिव गणना से पता चला कि केवल उन्हीं खंडों में रेडियोऐक्टिव प्रकाश स्वांगीकरणज (photoassimilates) थे। जिन भागों को पत्तियों के संपर्क में रहने के कारण $^{14}CO_2$ मिल रही थी। अब अनेक ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि प्रकाश स्वांगीकरणज और उपापचयज, चालनी नलिका अवयवों में बहते हैं। चालनी नलिका अवयव ही वास्तविक चैनल हैं। पत्तियों से दूसरे भागों में शर्करा-स्थानांतरण का पता गाइगर नलिका (Geiger tube) रखकर लगाया जा सकता है। यह नलिका रेडियोसक्रियता (radioactivity) का पता लगाती है। पोषवाह के वेग का निर्धारण तने के साथ दो गाइगर नलिकाएं लगाने के पश्चात और नलिका 1 से नलिका 2 तक होने वाली रेडियोसक्रियता की गति में लगने वाले समय को देखकर किया जा सकता है। इस प्रकार जो वेग आता है उसका मान आमतौर पर 20 से 100 cm hr^{-1} तक होता है पर यह कभी-कभी तीन मीटर hr^{-1} तक हो सकता है।

पोषवाह रस के थोड़े से भाग को मामूली सा ग[illegible]कर भी उसका वेग निर्धारित किया जा सकता है। इसके अलावा गुनगुना किए गए रस के आगमन का पता तने के नीचे की तरफ सुग्राही ताप-वैद्युत युग्म (sensitive thermocouple) लगाकर किया जाता है। आपको याद होगा कि दारु रस का वेग भी इसी विधि से निर्धारित किया जाता है। पोषवाह में परिवहन की क्रियाविधि का अध्ययन करना कठिन है। इसका कारण यह है कि जब पोषवाह की कोशिकाएं काट दी जाती हैं तब चालनी नलिका पट्टिकाएं फ़ौरन प्लग हो जाती हैं और परिवहन बिल्कुल बंद हो जाता है। इसके अतिरिक्त कोशिकीय संरचना बदल जाती है या नष्ट हो जाती है।

पोषवाह परिवहन के अध्ययन के लिए प्रकृति ने एक सरल साफ-सुथरी तकनीक हमें दी है। ऐफिड्स (Aphids) ऐसे कीट हैं जो पोषवाह रस चूसते हैं। वे चालनी नलिका अवयवों में अपनी शूकिकाएं (stylets) घुसेड़कर सीधे ही पोषवाह से अपना पोषण लेते हैं (चित्र 14.13)। चालनी नलिका का स्फीति दाब पर्याप्त रूप से उच्च होता है इसलिए रस सीधे ही ऐफिड की आहार नाल में बह जाता है। जिस ऐफिड ने डटकर रस पिया हो उसकी दुम पर मधु बिन्दु (honey dew) देखा जा सकता है। अगर घुसी हुई शूकिकाओं को इस तरह काटा जाए कि कीट तो पौधे से जुदा हो जाए लेकिन शूकिका छाल में घुसी रहे तो कटे हुए सिरे से पोषवाह रस रिसता रहता है। यह रिसाव (exudate) मधु बिंदु कहलाता है और पोषवाह रस की अंतर्वस्तु के बारे में जानकारी देता है। शूकिका की तीखी नोक की स्थिति जब सूक्ष्मदर्शी प्रेक्षण (observation) से तय की गई तो पता चला कि शूकिकाएं एक अकेले चालनी अवयव को वेधती हैं। इस सरल तकनीक से एक पूरी तरह प्रकार्य कर रहे पूर्ण पौधे में विभिन्न परिस्थितियों (ताप, मृदा, जल, अंतर्वस्तु आदि) में वाहित पदार्थ और परिवहन की दर के बारे में मूल्यवान जानकारी मिलती है।

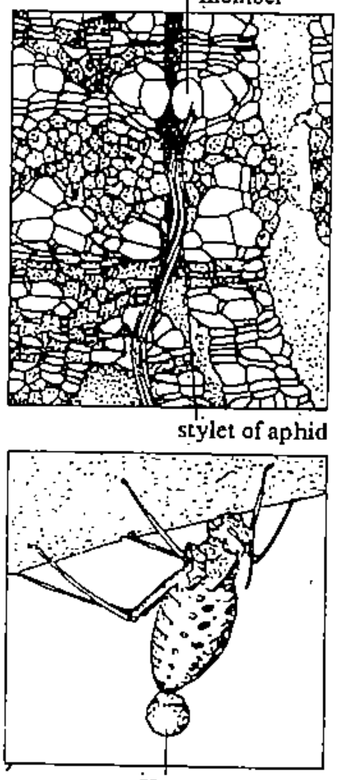

चित्र 14.13: प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले अनुसंधान औजार
क) छाल को बेधती एक ऐफिड। ऐफिड के पिछले सिरे पर एक मधु बिन्दु (honey dew) देखा जा सकता है।
ख) चालनी नलिका अवयव में घुसती हुई ऐफिड की शूकिका।

14.9 पोषवाह परिवहन की क्रियाविधि

फसलों और फलों की वार्षिक पैदावार से खाद्य पदार्थों के स्थानांतरण की दक्षता और उनका महत्व स्पष्ट है। अब प्रश्न यह उठता है कि स्थानांतरण की क्रियाविधि क्या है? विसरण एक इतना धीमा प्रक्रम है कि इसे स्थानांतरण का कारण नहीं माना जा सकता क्योंकि ज्ञात वेगों की गति कहीं अधिक है। इसके अतिरिक्त प्रायः गति की दिशा कम सांद्रण से अधिक सांद्रण की ओर होती है। पोषवाह में स्थानांतरण की क्रियाविधि के बारे में प्रस्तावित कुछ सिद्धांतों (theories) के बारे में नीचे चर्चा की गई है :

14.9.1 मन्च का दाब प्रवाह मॉडल

मन्च (Münch) एक जर्मन पादप कार्यकी विज्ञानविद (plant physiologist) थे। उन्होंने 1930 में एक सरल भौतिक मॉडल बनाया जिसका प्रयोगशाला में पोषवाह परिवहन की क्रियाविधि देखने के लिए परीक्षण किया जा सकता है। जैसाकि चित्र 14.14 में दिखाया गया है, दो परासरणमापी (osmometer) होते हैं। एक (A) में दूसरे (B) की अपेक्षा अधिक सांद्रता वाला विलेय होता है। इन दोनों को एक नलिका (C) द्वारा जोड़ दिया जाता है और पानी में डुबा दिया जाता है। A में विलेय सांद्रण उच्च होने के कारण पानी इसमें बहकर आता है। आप जानते हैं कि यह प्रक्रम परासरण कहलाता है। फलस्वरूप इसमें दाब बढ़ता है जो विलयन को जोड़ने वाली नलिका में चढ़ने के लिए मजबूर कर देता है और A की मात्रा B में प्रवाहित होती है। यह दाब माध्यम में झिल्ली के द्वारा पानी को B से बाहर बहने को बाध्य करता है।

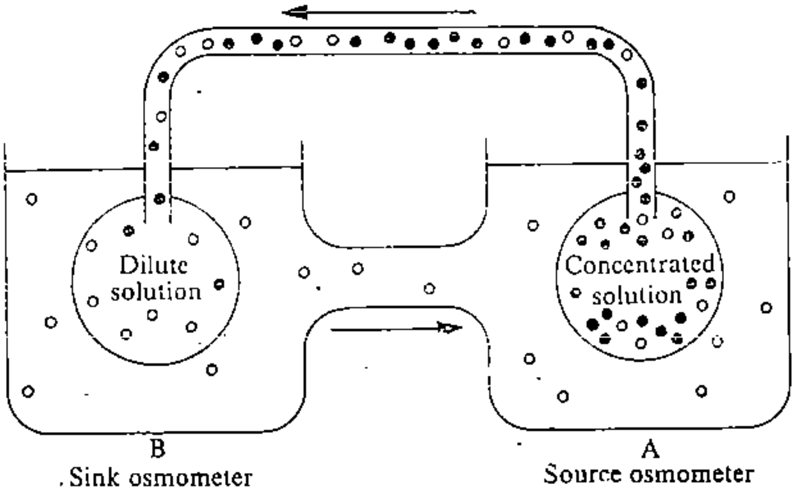

चित्र 14.14: मन्च दाब प्रवाह परिकल्पना दर्शाने वाले मॉडल तंत्र (विवरण के लिए मूलपाठ देखिए)।

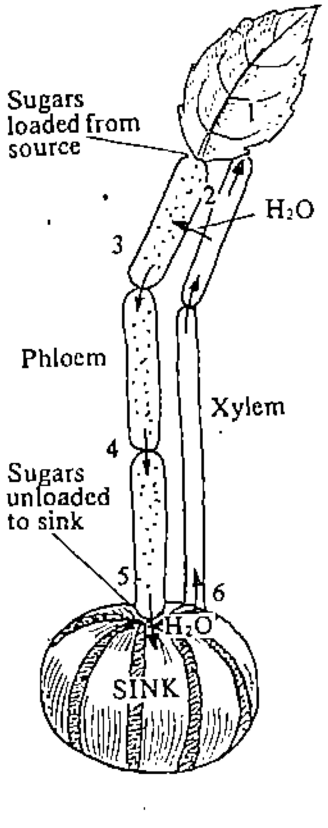

चित्र 14.15: पौधे पर लागू किया जाने वाला मन्च दाब प्रवाह मॉडल। (1) पत्ती से शर्करा सबसे ऊपरी चालनी नलिका अवयव में सक्रिय रूप से भारित की जाती है। (2) उच्चतर शर्करा सांद्रण के कारण दारू से जल परासरण द्वारा अंदर घुसकर उच्च जल दाब पैदा कर देता है। (3), (4) उच्च जल दाब से चालनी नलिका रस शेष चालनी नलिका अवयवों में फल की ओर बहने लगता है। (5) सबसे निचले चालनी नलिका अवयव से शर्करा फल में सक्रिय रूप से अभारित कर दी जाती है। (6) सिंक को वितरित अतिरिक्त जल दारू में घुस जाता है और वापस पौधे के ऊपरी तरफ चल देता है।

पौधों में स्रोत और सिंक की स्थिति दोनों परासरणमापियों के सदृश्य है। स्रोत क्षेत्र में सिंक क्षेत्र की अपेक्षा विलेय का सांद्रण उच्च होता है। पोषवाह संनाल (conduits) स्रोत क्षेत्र में परासरण के प्रक्रम से जल का अंतःशोषण (imbibe) करते है और उच्च स्फीति ज़ोन पैदा करते है। दूसरी तरफ, सिंक क्षेत्र में पोषवाह में कम स्फीति होती है। इसलिए पोषवाह की लम्बाई के साथ-साथ दाब प्रवणता बन जाती है जिसके कारण विलायक और विलेयों का समान वेग से भारी प्रवाह होता है। इस उत्तम रूप से सरल और आकर्षक परिकल्पना को स्वीकार करने में अनेक कठिनाइयां हैं। पहली यह कि, ऊपर दिए गए मॉडल में दाब प्रवणता बनने की सम्भावना केवल तभी है यदि दोनों क्षेत्रों में जल विभव लगभग समान हो। लेकिन पौधों में जल विभव, पत्तियों में निम्न और जड़ों में उच्च होता है। इस तरह, पत्ती के आस पास जल की पोषवाह में घुसने की प्रवृत्ति घट जाती है। जबकि जड़ क्षेत्र में, चालनी अवयव पड़ोसी कोशिकाओं और/या एपोप्लाज़्म से आसानी से जल अंतःशोषित कर सकते हैं। पोषवाह रस की विलेय सांद्रता कम होते हुए भी यह अंतःशोषण हो सकता है। इसलिए ऐसा नहीं माना जा सकता कि विलेय सांद्रण प्रवणता, स्रोत से सिंक की तरफ दाब प्रवणता पैदा करेगी। इसके अतिरिक्त यह देखा गया है कि विलेय अणुओं की गतिशीलता K^+ के लिए उच्चतम और Ca^{2+} के लिए निम्नतम होती है। यह दाब प्रवाह परिकल्पना के विपरीत बात की पुष्टि करता है। इस समस्या को दूर करने के लिए मूल मॉडल को संशोधित किया गया है जैसाकि चित्र 14.15 में दिखाया गया है।

अभी तक किसी भी पौधे में भारी प्रवाह के लिए पर्याप्त दाब प्रवणताएं रिकार्ड नहीं की गई हैं। चालनी पट्टिका रंध्र, पी-प्रोटीन की उपस्थिति और कैलोस निर्माण की मात्रा पर बहुत कुछ निर्भर करता है। इसलिए मंच मॉडल पर अभी भी बहस जारी है। इसका प्रमुख कारण यह है कि अभी तक कोई ऐसा विकल्पी मॉडल सामने नहीं आया है जो अपेक्षाकृत व्यवहार्य हो। आप देख सकते हैं कि भारण और अभारण स्थलों पर सक्रिय परिवहन होता है जो कि सांद्रण प्रवणता के विपरीत आयनों की विभेदी गतिशीलताओं (differential mobilities) और शर्करा जैसे अणुओं के बड़ी मात्रा में जमा हो जाने का कारण हो सकता है।

14.9.2 फेन्सम (Fensom) और स्पैनर (Spanners) की विद्युत-परासरणी प्रवाह परिकल्पना

विद्युत परासरण में, आयनें विद्युत प्रवणता की अनुक्रिया (response) में झिल्ली के पार प्रवाहित होती हैं। आयनें विलायक कर्षण (solvent drag) प्रभाव के कारण जल और अन्य वस्तुओं के साथ खिंचती हैं। इस परिकल्पना में ऐसा सोचा गया है कि रस, चालनी अवयव की अन्तःकोशिका में बहता है और चालनी पट्टिका के पार विद्युत परासरण होता है। इस मॉडल की आधारभूत धारणा चित्र 14.16 में निरूपित की गई है। चालनी के रंध्र, ऋणात्मक रूप से आवेशित (negatively charged) होते हैं और अनेक धन (positive) आयनें उनसे सम्बद्ध होती हैं। क्रमागत (consecutive) यानि क्रम से आने वाले चालनी अवयवों की सहचर कोशिकाएं K^+ उद्ग्रहण और निर्मुक्ति (release) में जुटी हुई बतलाई गई हैं। इससे पोषवाह रस अभिवाह (flux) की दिशा में (K^+) प्रवणता बनती है। दूसरे विलेयों के अभिवाह भी K^+ अभिवाह से जुड़ जाते हैं और विद्युत-परासरणीय प्रवाह के साथ-साथ एक चालनी नलिका से अगली में जाते हैं। मन्च के मॉडल की तुलना में इस मॉडल में कई विशेषताएं हैं। पी-प्रोटीन की उपस्थिति और ऋण स्थिर आवेशों वाले तंतुओं द्वारा चालनी पट्टिका छिद्रों का अधिरोधन (occlusion) इस मॉडल के पक्ष में जाते हैं क्योंकि, जब ये तंतु, एक दाब प्रवणता के अंतर्गत पोषवाह रस के प्रवाह को बहुत ही ज्यादा रोकेंगे तो ये विद्युत परासरणी प्रवाह को अधिक दक्ष बना देंगे। इस मॉडल के नकारात्मक पक्ष ये हैं :

क) स्रोत-सिंक दूरी संबंध की स्पष्ट अप्रासंगिकता,

ख) सहचर कोशिकाओं द्वारा K^+ उद्ग्रहण और निर्मुक्ति के लिए ऊर्जा (ATP) का निषेधात्मक (prohibitively) भारी अपव्यय,

ग) ऋण स्थिर आवेशों वाले चैनल के पार विद्युत परासरण द्वारा बहिष्कृत ऋण आयनी अभिवाह के संदर्भ में मॉडल का खंडन।

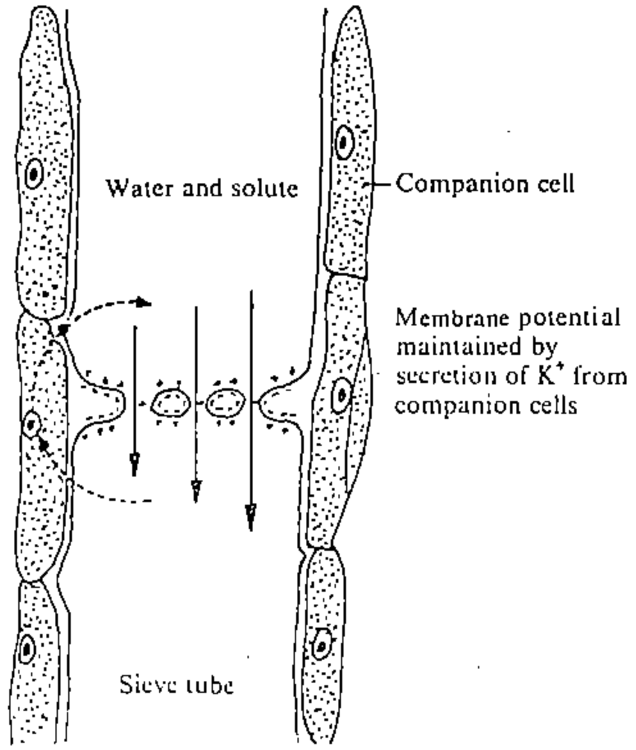

चित्र 14.16: सहचर कोशिकाएं अपने बाईं तरफ की सम्बद्ध चालनी नलिका से K^+ का सक्रिय अंतर्ग्रहण करती हैं और दाईं तरफ की चालनी नलिकाओं में इसकी सहचर कोशिकाएं K^+ का स्रवण (secretion) करती हैं। इस वजह से विभव-अंतर (potential difference) और K^+ सांद्रण प्रवणता दोनों उत्पन्न होते हैं। इसके कारण K^+ आयनों और अन्य विलेयों का दाईं ओर से बाईं ओर प्रवाह होता है।

जब तक प्रयोगात्मक प्रमाणों द्वारा इस मॉडल के मूलभूत परिसर स्थापित नहीं हो जाते तब तक यह मॉडल, पोषवाह की स्थानांतरण क्रियाविधि के लिए एक दिलचस्प विषय बना रहेगा।

14.9.3 जीवद्रव्यी अभिस्रवण और नलिकाकार क्रमाकुंचन-प्रवाह मॉडल (Protoplasmic Streaming and Tubular Peristaltic Flow Model)

उपरोक्त दो मॉडलों में से पहले में विशाल शैवाली कोशिकाओं में जीवद्रव्यी अभिस्रवण (protoplasmic streaming) की सुप्रसिद्ध परिघटना शामिल है। चालनी पट्टिका रंध्रों के पार सक्रिय परिवहन सहित कोशिकाद्रव्य की नियमित चक्रीय गति को जोड़ने से सिंकों की दिशा में पोषवाह रस का नेट अभिवाह होने लगता है। परन्तु गति के उच्चतम आकलन भी पोषवाह द्वारा परिवहन की प्रेक्षित दरों की व्याख्या करने में जीवद्रव्य भ्रमण (साइक्लोसिस — cyclosis) अपर्याप्त हैं। दूसरा मॉडल पार-चालनी (trans-sieve) अवयव नलिकाकार संरचनाओं की परिकल्पना पर आधारित है जिसमें क्रमाकुंचन (peristaltic) गतियाँ होती हैं जो हमारी आहार नाल में होने वाली क्रिया के समान है। दोनों मॉडलो की प्रयोगात्मक पुष्टि होनी आवश्यक है।

14.9.4 प्रोटोपरासरणी मॉडल

एम.एम अमीन (1982) द्वारा प्रस्तावित यह मॉडल इस तथ्य पर आधारित है कि सिंकों और स्रोतों के बीच उपापचयज द्वारा (metabolically) उत्पन्न pH में असंतुलन होता है। नियम के अनुसार जो कोशिकाएं बहिर्जात (exogenous) उपापचयज काम में लाती हैं और जिनका उपापचय, श्वसन से प्राप्त ऊर्जा पर आधारित है वे सभी अत्यधिक H^+ पैदा करती हैं जबकि ऐसी कोशिकाएं जिनमें प्रकाश संश्लेषण और नाइट्रेट अपचयन (reduction) प्रक्रम उनकी श्वसन गतिविधि से अधिक हैं उन्हें अपनी कोशिकाद्रव्यी pH उदासीन (neutral) बनाए रखने के लिए H^+ के अंतर्ग्रहण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार सिंकों (जड़ें) से स्रोतों (पत्तियां) को H^+ अभिवाह की जरूरत

पड़ती है (चित्र 14.17)। अधोगामी प्रक्रम (downhill process) होने के कारण यह ऊर्जा का स्रोत है। इस ऊर्जा का प्रयोग पोषवाह परिवहन में लिया जा सकता है। इस मॉडल में H^+/K^+ प्रति परिवहन (antiport) प्रक्रम की लम्बी दूरी तक स्थानांतरण की कल्पना की गई है जो पादप कोशिका झिल्लियों के लिए सुप्रसिद्ध है। सिंकों से स्रोतों को H^+ का यह अभिवाह K^+ अभिवाह द्वारा आवेशित-प्रतिकारित है (charged compensated) इसीलिए प्रोटॉपरासरण कहलाता है। K^+ अभिवाह की प्रकृति विद्युतपरासरणी है जो अपने साथ अन्य विलेय ले जाता है। ऊपर वर्णित विद्युत-परासरणी मॉडल के विपरीत, इस मॉडल में सिंक-स्रोत का वह संबंध भी समाविष्ट है जिसमें उनकी उपापचयी गतिविधियों के अनुसार पदार्थों का विनिमय होता है। इस मॉडल का खंडन अथवा पुष्टि करने के लिए कोई प्रयोगात्मक प्रमाण प्रस्तुत नहीं किए गए हैं।

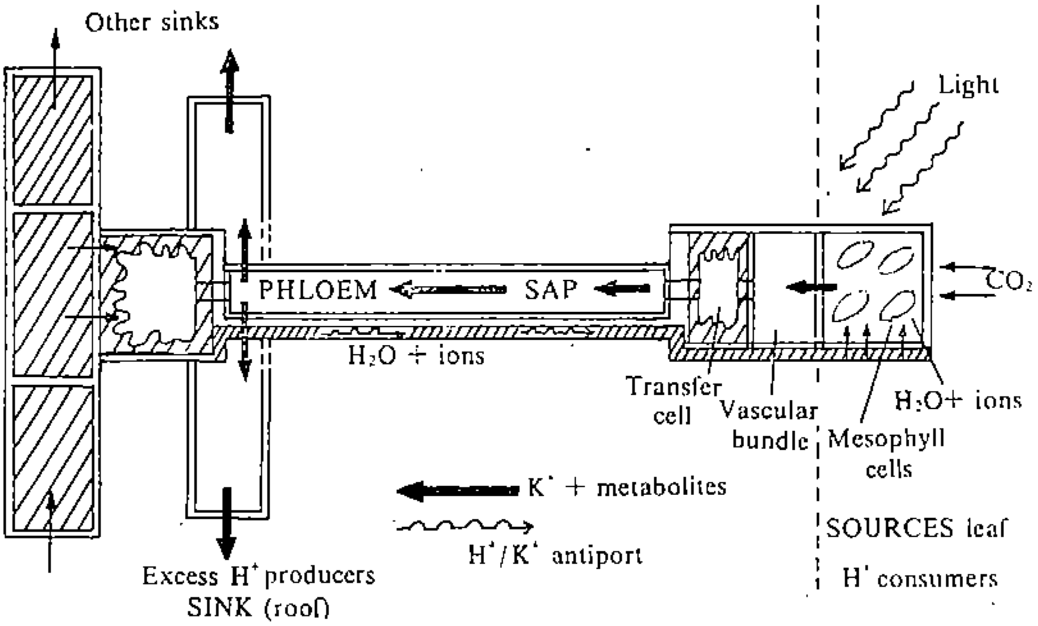

चित्र 14.17: अपनी प्रवणता के उतार पर सिंकों से स्रोतों तक प्रोटॉन अभिवाह के कारण पोषवाह में K^+ का प्रति अभिवाह (counter flux) होता है। ऐसा समझा जाता है कि यह प्रति-अभिवाह उपापचयजों को सिंकों में ले जाता है। पोषवाह परिवहन के लिए ऊर्जा, स्रोतों (क्षारीय) और सिंकों (अम्लीय) के pH में असंतुलन द्वारा मिलती है। यह प्रवृत्तियाँ उनकी प्रकाशसंश्लेषणीय/N_2-यौगिकीकरण और श्वसन गतिविधियों से पैदा होती हैं। पोटैशियम आयन दो संवहनी तंत्रों में पुनः चक्रित होते हैं।

यह एक दिलचस्प बात है कि यह मॉडल पोषवाह और दारु के बीच अरीय (radial) परिवहन पर भी लागू होता है। दारु-रस हमेशा अम्लीय होता है जबकि पोषवाह रस सदैव ही क्षारीय और K^+ से भरा पूरा होता है। इस मामले में दारु से पोषवाह को H^+ का अभिवाह प्रोटॉन-परासरण द्वारा दारु में K^+ और जल लाता है। यह पोषवाह रस को समृद्ध करता है (अर्थात् शर्कराओं का सांद्रण बढ़ाता है)। उदाहरण के लिए, रस एक सिंक की तरफ चलता है। वस्तुतः अनुरेखक (tracer) प्रयोगों ने पोषवाह से दारु तक जल (^{3}H tritium) और K^+ की इस गति को चक्रीय रूप में दिखाया है : तने का पोषवाह ⟶ दारु ⟶ पत्ती ⟶ पोषवाह।

बोध प्रश्न 4

नीचे दिए गए प्रत्येक कथन के लिए एक या अधिक शब्द दीजिए:

i) चालनी अवयवों द्वारा संलग्न मृदूतक कोशिकाओं, सहचर कोशिकाओं या स्थानांतर कोशिकाओं से कार्बनिक विलेयों (organic solutes) का उद्ग्रहण।

ii) विद्युत प्रवणता की अनुक्रिया में झिल्ली के पार आयनों की गति। यह प्रवणता विलेय कर्षण (solvent drag) के कारण जल और अन्य पदार्थों को खींचती है।

iii) दाब प्रवणता के कारण विलेय का स्रोत से सिंक को प्रवाह।

iv) उपापचयजों को सिंक में पहुंचाने के लिए प्रोटॉन का अपनी प्रवणता के साथ सिंक से स्रोत तक अभिवाह और K^+ का स्रोत से सिंक तक प्रति-अभिवाह।

14.10 सारांश

इस इकाई में आपने सीखा कि :

- जैव पदार्थों के परिवहन के लिए पौधों को विस्तृत नलकर्म नेटवर्क (plumbing network) की जरूरत पड़ती है। यह परिवहन मुख्य रूप से उन स्थलों तक होता है जहाँ प्रकाश संश्लेषण के उत्पाद संश्लेषित होते हैं तथा जहां उनकी खपत होती है या जहाँ उनका भंडारण होता है।
- यह परिवहन पोषवाह ऊतक के नेटवर्क के माध्यम से होता है। यह नेटवर्क जड़ से तनों के रास्ते प्रत्येक पत्ती की नोंक तक फैला हुआ है।
- वे स्थल या पौधों के भाग जहाँ से कार्बनिक पदार्थों का परिवहन होता है स्रोत (source) कहलाते हैं और वे स्थल या पौधे के भाग जो स्रोत से पदार्थ को प्राप्त करते हैं सिंक (sink) कहलाते हैं। पौधे की आवश्यकता के अनुसार जो भाग कभी स्रोत होता है, वही सिंक भी बन सकता है।
- चालनी नलिका अवयव चालनी पट्टिका में सुराखों से कोशिकाद्रव्यी संबंधनों (connections) द्वारा आपस में जुड़े होते हैं। इस तरह वे लगातार कोशिकाद्रव्य चैनल बनाते हैं जो चालनी नलिकाएं कहलाती हैं।
- प्रयोगात्मक अध्ययनों से पता चलता है कि कार्बनिक पदार्थ चालनी नलिकाओं से जाते हैं।
- सहचर (companion) कोशिकाओं की संस्थिति (location) और उनकी विशेष संरचना संकेत करती है कि वे स्थानांतरण में मदद करती हैं।
- स्थानांतर कोशिकाएं रूपांतरित (modified) सहचर कोशिकाएं हैं। उनकी संवलित (convoluted) प्लैज़्मा झिल्ली और अनेक प्लैज्मोडेस्मेटा शायद चालनी नलिका में भारण (loading) पदार्थ का क्षेत्रफल बढ़ाने के लिए हैं।
- पोषवाह रस में मुख्यतया, सुक्रोस, ऐमीनों अम्ल और पोटैशियम आयनें होती हैं। कुछ दूसरे आयन और कार्बनिक अम्ल भी होते हैं।
- पोषवाह परिवहन के बारे में बहुत कम जानकारी है। मन्च (Münch) की दाब-प्रवाह परिकल्पना (hypothesis) के अनुसार पानी परासरण द्वारा चालनी नलिकाओं में घुसता है और द्रवस्थैतिक (hydrostatic) दाब पैदा करता है जो पोषवाह की अंतर्वस्तुओं को एक कोशिका से दूसरी में धकेलता है।
- विद्युत-परासरणी मॉडल कल्पना करता है कि पदार्थ का प्रवाह विद्युत प्रवणता के कारण होता है। यह प्रवणता क्रमागत चालनी अवयवों द्वारा K^+ आयनों के उद्ग्रहण (uptake) और निर्मुक्ति (release) से पैदा होती है।
- प्रोटॉपरासरणी (protoosmotic) मॉडल सिंक से स्रोत की तरफ H^+ आयनों के लगातार अभिवाह का प्रस्ताव करता है। इस अभिवाह की क्षतिपूर्ति स्रोत से सिंक को होने वाले प्रति अभिवाह से हो जाती है। ऐसा समझा जाता है कि K^+ का प्रति-अभिवाह (counter flux) उपापचयजों को सिंक में भेजता है।

14.11 अंत में कुछ प्रश्न

1) दारु की वाहिकाओं (vessels) और वाहिनिकाओं (tracheids) की पोषवाह के चालनी नलिका अवयवों से तुलना कीजिए।

....

....

....

2) चालनी अवयव में खाद्य के स्थानांतरण की परिघटना (phenomenon) का अध्ययन एक कठिन प्रक्रम क्यों है?

....

....

....

3) छाल में चीरा लगाकर पोषवाह रस को विश्लेषण के लिए इकट्ठा किया जा सकता है लेकिन ऐफिड विधि द्वारा रस को संचित करना क्यों श्रेष्ठ माना जाता है?

....

....

....

....

4) पौधों में जैव विलेयों के परिवहन का कारण जीवद्रव्य भ्रमण और विसरण क्यों नहीं है?

....

....

....

14.12 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) प्रकाश संश्लेषज, नाइट्रोजन   ii) दारु, पोषवाह
iii) चालनी नलिका अवयव   iv) स्रोत, सिंक
v) स्रोत, सिंक

2) क) i) ख, ii) घ, iii) क, iv) ग
ख) i) स, ii) ग, iii) स, iv) स, v) ग, vi) ग

3) i) ऐमीनो अम्ल, ii) K^+, iii) नाइट्रेट, iv) ऑटोरेडियोग्राफी, v) दाब प्रवणता

4) i) भारण, ii) विद्युत परासरण, iii) मन्च संहति (प्रवाह परिकल्पना),
iv) प्रोटोपरासरणी परिकल्पना

अंत में कुछ प्रश्न

1) दारु वाहिकाएं पौधे में फैले हुए मृत सेलुलोस पाइप हैं। ये ऐपोप्लास्टिक मार्ग का हिस्सा हैं जबकि पोषवाह की चालनी नलिकाएं जीवित कोशिकाद्रव्यी चैनल हैं जिनसे सिम्प्लाज़्म बनता है। जल और खनिज आयनों का परिवहन दारु वाहिकाओं और वाहिनिकाओं द्वारा होता है जबकि प्रकाश स्वांगीकरणजों तथा हार्मोन सहित जैव विलेयों का परिवहन पोषवाह की चालनी नलिकाओं द्वारा होता है।

2) पोषवाह में परिवहन का अध्ययन करना कठिन है क्योंकि इसमें शामिल कोशिकाएं बहुत नाजुक होती है और आसानी से क्षतिग्रस्त हो जाने पर पी-प्रोटीन तंतुकों (filament) की मनकायुक्त शृंखलाएं बन जाती हैं। इसके अलावा प्रत्येक पट्टिका रंध्र में कैलोस की एक अवपंकी (slimy) डाट बन जाती है।

3) पोषवाह रस के संग्रहण से चालनी नलिका अंतर्वस्तु का वरणात्मक नमूना नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि पोषवाह में अनेक दूसरी कोशिकाएं भी होती हैं जबकि ऐफिड विधि से केवल

चालनी नलिका रस ही प्राप्त होता है क्योंकि शुकिकाएं केवल चालनी नलिका अवयव में ही घुसेड़ी जाती हैं।

4) जीवद्रव्यभ्रमण और विसरण से पोषवाह की जो परिवहन दर आती है उससे प्रेक्षित दरें बहुत अधिक (high) होती हैं।

शब्दावली

अंतरण कोशिका (transfer cell) : यह एक मृदूतक कोशिका भित्ति के आंतरिक विस्तार से रूपांतरित हो जाती है। ये विस्तार प्लैज़्मा झिल्ली की सतह को काफी हद तक बढ़ा देता है।

अधोकुंचन (epinasty) : ऑक्सिन (auxin) और एथिलीन के अनुप्रयोग से पत्तियों के ऊपरी किनारों पर होने वाला कुंचन और अतिवृद्धि।

अनिषेकजनन (parthenogenesis) : निषेचन के बिना ही अण्डज का विकास होना। यानि इस अनिषेचित अण्डज से प्राणी का पैदा होना।

अनिषेकफलन (parthenocarpy) : निषेचन न होने पर फल का विकास।

आर्द्रताग्राही जल (hygroscopic water) : मृदा जल का वह भाग जिसे अधिशोषण के ज़रिए मिट्टी के कणों की सतह पर रोके रखा जाता है और जो पौधों को नहीं मिल पाता।

आसंजन (adhesion) : अंतराअणुक बल के कारण एक पदार्थ की दूसरे पदार्थ से चिपके रहने की प्रवृत्ति।

ऊतकक्षय (necrosis) : जख्म लगने, रोग या पोषक तत्वों की कमी से कोशिका या कोशिकाओं के समूह की मृत्यु।

एकवर्णी (monochromatic) : एक रंग या तरंगदैर्ध्य वाला।

एमर्सन प्रभाव (Emerson effect) : रॉबर्ट एमर्सन द्वारा सन् 1957 में किए गए प्रायोगिक प्रेक्षण, जिसके अनुसार पौधों की प्रकाशसंश्लेषी दक्षता दीर्घ तरंग दैर्ध्य (लाल प्रकाश) की मौजूदगी में बढ़ जाती है, जब इस प्रकाश को लघु तरंग दैर्ध्य के प्रकाश से संपूरित किया जाए।

कुम्हलाना (wilting) : कोशिकाओं में स्फीति में कमी आने से पत्तियों या पौधे के दूसरे हिस्सों का लटकना। ऐसा वाष्पोत्सर्जन के जरिए भारी जल हानि के कारण होता है।

कैरोटिनॉइड (carotenoid) : वसा में घुलनशील पीले, गुलाबी, लाल या बैंगनी वर्णकों का कोई भी एक समूह।

कैलोस (callose) : एक जटिल कार्बोहाइड्रेट (1,3 संयोजी ग्लूकैन)। यह चालनी नलिका अवयवों, परागकण, पराग नलिका और कई सजीव कोशिकाओं की प्राथमिक भित्तियों से जुड़ा होता है।

केशिका जल (capillary water) : मृदाजल का वह हिस्सा जो केशिकत्व (capillarity) के जरिए मिट्टी के छिद्रों में बंधा रहता है।

कोशिका भित्ति (cell wall) : पादप जीवद्रव्य को चारों ओर से ढक कर रखने वाली मृत परत। यह सेलुलोस, हेमीसेलुलोस, पेक्टिन लिग्निन और दूसरे पदार्थों से मिलकर बनी होती है। इसमें एक प्राथमिक कोशिका भित्ति (बाहरी भित्ति जो कोशिका फैलाव के दौरान बनती है) और एक द्वितीयक कोशिका भित्ति (कोशिका फैलाव रुकने के बाद बनने वाली भीतरी भित्ति परतें) होती है।

क्यूटिन (cutin) : बाह्य कोशिकाओं की बाहरी भित्ति पर क्यूटिन की वसीय परत।

हरिमाहीनता या क्लोरोसिस (chlorosis) : क्षय या कम उत्पादन के कारण क्लोरोफिल की मात्रा में होने वाली कमी।

क्वांटम (quantum) : विद्युत चुंबकीय ऊर्जा की एक विविक्त (distinct) इकाई। वस्तु जिसके कणों जैसे गुण होते हैं। प्रकाश के संदर्भ में यह एक कण जैसी इकाई या फोटॉन से जुड़ी ऊर्जा की मात्रा।

क्षेत्र धारण क्षमता (field capacity) : मृदा की जल-धारण क्षमता की माप। यह मिट्टी को संतृप्त करने और पानी के गुरूत्वीय वहन के बाद मृदा में जल मात्रा (भार प्रतिशत), है।

गुरूत्वीय जल (gravitational water) : मिट्टी में डाले गये पानी का वह भाग जो गुरूत्व बल के कारण गर्भ में बहकर लुप्त हो जाता है।

चक्रीय फ़ोटोफ़ॉस्फ़ोरिलीकरण (cyclic photophosphorylation) : क्लोरोप्लास्ट के प्रकाश तंत्रों के बीच चक्रीय विधि से होने वाले इलेक्ट्रॉन परिवहन से जुड़ा ATP का संश्लेषण।

चालनी पट्टिका (sieve tube) : किसी चालनी नलिका अवयव की कोशिका भित्ति का एक प्रदेश जहां छिद्र संकेन्द्रित होते हैं।

चालनी पट्टिका अवयव (sieve tube element) : दीर्घित या लंबी कोशिका जिसकी छोर कोशिका भित्तियों (end walls) में छिद्र होते हैं।

जल उपयोग दक्षता (water use efficiency) : किसी पौधे द्वारा उत्पादित कार्बनिक पदार्थ और उपयोग किए गए पानी (मिट्टी से अवशोषित और वाष्पोत्सर्जन से हानि का ब्यौरा करते हुए) का अनुपात।

जल विभव (water potential) : परासरण विभव और दाब विभव की विभव ऊर्जा की माप। पानी की एक स्थान से बह जाने की प्रवृत्ति की माप।

जीवाणु क्लोरोफिल (bacteriochlorophyll) : a और b रूपों में पाया जाने वाला एक प्रकार का पर्ण हरित यानि क्लोरोफिल जिससे जीवाणुओं में प्रकाश संश्लेषण होता है।

थाइलैकॉइड (thylakoid) : यूकैरीयाटी के क्लोरोप्लास्ट की प्रकाश संश्लेषी झिल्ली। क्लोरोप्लास्ट में थाइलैकॉइडों की ढेरी ग्रैना कहलाती है।

द्रव्यमान स्पेक्ट्रम मापी (mass spectrophotometer) : उचित रूप से तैयार चुम्बकीय और विद्युत क्षेत्रों के माध्यम द्वारा आयनों के पुंज के द्रव्यमान स्पेक्ट्रम को प्राप्त करने का उपकरण।

नेट प्रकाश संश्लेषण (net photosynthesis) : प्रकाशसंश्लेषी कार्बन के स्थायीकरण में से श्वसन जैसी प्रक्रियाओं के जरिए कार्बनडाइऑक्साइड के रूप में निकला कार्बन घटाने के बाद कुल कार्बन का स्थायीकरण।

P_{680} क्लोरोफिल का एक विशेष अणु जो प्रकाश तंत्र II के प्रकाश संग्राही वर्णकों से ऊर्जा को स्वीकार करता है और अपने एक उच्च ऊर्जा इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन ग्राही में अंतरिक कर देता है।

P_{700} क्लोरोफिल का एक विशेष अणु जो प्रकाश तंत्र के प्रकाश-संग्राही वर्णक से ऊर्जा लेता है फिर अपने एक उच्च ऊर्जा इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन ग्राही में अंतरित कर देता है।

पीठिका (stroma) : लवक (प्लैस्टिड) जैसे किसी कोशिका अंगक में पाया जाने वाला तरल पदार्थ है।

पूलाच्छद (bundle-sheath) : संवहन पूल के चारों ओर कोशिकाओं की एक या अधिक परतें।

पेक्टिन (pectin) : 1,4-संयोजी गैलेक्टुरोनिक अम्ल के अवशेषों (residues) से बना कोशिका भित्ति का एक बहुलक जिसमें कार्बोक्सिल समूह का मैथेनॉल, रैम्नोसगलेक्ट्रोनन (रैम्नोस और गैलेक्टोस) तथा अरैबिनोस गैलेक्टन (अरैबिनोस और गैलेक्टोस) के साथ एस्टरीकरण होता है।

प्रकाश ग्राही (photoreceptor) : प्रकाश संवेदनशील स्थल जैसे कशेरूकी जीव की आंख।

प्रकाश तंत्र (photosystem) : क्लोरोप्लास्ट में काम करने वाले ऊर्जा संग्राही और ऊर्जा स्थानांतरित तंत्र।

फ़ाइकोइरिथ्रिन (phycoerythrin) : अधिकांश नीले हरे शैवालों और सभी लाल शैवालों में पाए जाने वाले पानी में अघुलनशील लाल प्रोटीन वर्णक।

फ़ाइकोसायनिन (phycocyanin) : नीले हरे शैवालों में पाए जाने वाले अनेक नीले प्रोटीन वर्णक जो पानी में घुलनशील होते हैं।

बिंदुस्राव (guttation) : पत्ती के किनारे और सिरे पर जल रंध्रों से तरल पानी का स्राव।

मध्य पटलिका (middle lamellae) : निकटवर्ती कोशिकाओं की प्राथमिक भित्तियों के बीच एक संयोजी (cementing) पदार्थ की परत।

रंध्री उपकरण (stomatal apparatus) : द्वार कोशिकाएं का जोड़ा और संबद्ध सहायक कोशिकाएं जो द्वार कोशिकाओं के बीच के छिद्र को खोलने और बंद करने में लगी होती है।

लिग्निन (lignin) : कोनिफ़ेरिल, सिनापिल या पी-कूमैरिल ऐल्कोहॉल से बना एक जटिल बहुलक जो प्राथमिक और द्वितीयक कोशिका भित्तियों खास तौर से द्वितीयक दारु के सेलुलोस से सगुणित हो जाता है और कोशिका भित्ति को बल प्रदान करता।

वाहिका (vessel) : लम्बी, खोखली एक दूसरे से सिरों पर जुड़ी वाहिका अवयवों की शृंखला जो आवृतबीजी और कुछ फर्नों में पानी और खनिज पोषक तत्वों का ऊर्ध्व परिवहन करती है।

वाहिनिकाएं (tracheids) : दारु की एक दीर्घित खाली कोशिका जिसमें छिद्रित भित्ति नहीं होती। संवहनी पादपों में यह पानी और खनिज पोषक तत्वों के ऊर्ध्व परिवहन में सक्रिय रहती है।

वैद्युत कण संचलन (electrophoresis) : यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके जरिए आवेशित यौगिकों (जैसे प्रोटीन) के मिश्रण को किसी विद्युत क्षेत्र में स्टार्च जेल जैसे मैट्रिक्स पर अलग किया जा सकता है।

शुष्क भूमि कृषि (dry land farming) : एक किस्म का खेती कर्म जिसमें नमी गिरने पर उसका एक पर्याप्त भंडार बनाए रखने के लिए मिट्टी की गहरी जुताई और वाष्पीकरण को रोकने या कम करने के लिए सतही जुताई की जाती है।

संसंजन (cohesion) : अंतअणुक बल की वजह से एक ही पदार्थ के अणुओं की एक दूसरे से चिपकने की प्रवृत्ति।

साइक्लोसिस (cyclosis) : कोशिकाओं के अंदर जीवद्रव्य का गमन इसे जीवद्रव्यी प्रवाह भी कहते है।

स्थिरीकरण (fixation) : कार्बनिक पदार्थ में मुक्त गैस के घटकों का मिलना। प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड के कार्बन का स्थिरीकरण कार्बोहाइड्रेट में हो जाता है। नाइट्रोजन स्थिरीकरण में गैसीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण अमोनिया में और फिर अन्य यौगिकों में होता है।

स्फीति (turgor) : परासरणी जल प्रवेश के फलस्वरूप, पादप कोशिकाओं में पैदा होने वाला धनात्मक जलस्थैतिक दाब प्रसारण जो इस दाब के परिणामस्वरूप होता है।

हिम विभंजन (freeze fracture) : इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी में प्रेक्षण के लिए प्रयोग सामग्री तैयार करने की तकनीक। इसमें नमूने को जमा दिया जाता है। और फिर उसे ब्लेड से कुछ इस तरह से खंडित किया जाता है कि अक्सर प्लैज्मा झिल्लियों की द्विपरत मध्य से फट जाती है।

ह्यूमस (humus) : मिट्टी में कोलॉइडी पदार्थों का जटिल मिश्रण जो कि पौधों, जंतुओं और सूक्ष्मजीवों के उन कार्बनिक पदार्थों अंशों से बना होता है जो आसानी से अपघटित नहीं होते।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGZY/BY-08
फ़िज़ियोलॉजी

खंड

4

पादप कार्यिकी विज्ञान—II

इकाई 15

अकार्बनिक नाइट्रोजन और गंधक उपापचय 5

इकाई 16

पादप हॉर्मोन 33

इकाई 17

परिवर्धन और विभेदन 51

इकाई 18

तनाव के प्रति पौधों की अनुक्रियाएं 85

खंड 4 पादप कार्यकी विज्ञान-II

पिछले खंड में हमने पादप कार्यकी विज्ञान पर चर्चा करते हुए पौधों में पोषण के बारे में बताया था। नाइट्रोजन और गंधक (सल्फर) के बारे में इस खंड की पहली इकाई पुनः पोषण से संबंधित है। पौधों को नाइट्रोजन की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा की जरूरत पड़ती है क्योंकि यह ऐमीनो अम्लों और न्यूक्लीक अम्लों का संघटक (constituent) है। सभी पेड़ पौधे कार्बन का यौगिकीकरण (fixation) कर सकते हैं लेकिन दुर्भाग्यवश सभी पेड़-पौधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन को यौगिकीकृत नहीं कर सकते। केवल कुछ क्षमता सम्पन्न (gifted) प्रोकैरिओटों में, भले ही वे मुक्तजीवी (free living) (जैसे कि *नोस्टॉक, एज़ोटोबैक्टर* — *Nostoc, Azotobacter*) हों अथवा यूकैरिओटों के सहजीवी सहवास (symbiotic association) में हों (*राइज़ोबियम*-फली— *Rhizobium*-legume), वायुमंडलीय नाइट्रोजन को यौगिकीकृत करने की असाधारण क्षमता है। इस इकाई में हम नाइट्रोजन यौगिकीकरण के जीव रसायन और क्रियाविधियों और नाइट्रेट तथा अमोनिया के उपापचय (metabolism) को विस्तार से समझाएंगे। गंधक के उपापचय पर एक छोटा-सा भाग भी इस इकाई में शामिल किया गया है।

इकाई 16 और 17 वृद्धि (growth), विभेदन (differentiation) और परिवर्धन (development) के नियमन (regulation) के बारे में हैं। पौधा एक युग्मनज (zygote) से वर्धित और परिवर्धित होता है। ऐसा तीन स्तरों पर नियंत्रित श्रेणीबद्ध चरणों में होता है। ये चरण हैं — आनुवंशिक (genetic), हॉर्मोनी (hormonal) और पर्यावरणीय। नियंत्रण के तीनों स्तरों में एक जटिल पारस्परिक क्रिया (interaction) होती है। इकाई 16 में हम हॉर्मोनों के पांच समूहों की खोज और उनकी भूमिका तथा कृषि में उनके अनुप्रयोग (application) की चर्चा करेंगे। पादप हॉर्मोनों का वृद्धि पर बहुविध प्रभाव पड़ता है और विशेषतया परिवर्धनीय प्रक्रम (process) एक से अधिक हॉर्मोनों द्वारा नियंत्रित होते हैं।

इकाई 17 में आप बीजांकुरण, वनस्पतिक वृद्धि (vegetative growth), पुष्पन (flowering), फल का बनना, पर्णविलगन (abscission) और जीर्णता (senescence) को नियंत्रित करने वाले पर्यावरणीय कारकों का अध्ययन करेंगे। पौधों में रासायनिक ग्राही (chemical receptor) होते हैं जो ऐसे सिग्नल प्राप्त करते हैं जिनसे संकेत मिलता है कि किसी विशेष परिवर्धनीय घटना को चालू करने के लिए पर्यावरण अनुकूल है और समय उचित है। इस इकाई के छोटे से भाग में ऊतक संवर्धन (tissue culture) और जैवघड़ी (biological clock) के बारे में भी बताया गया है।

इस पाठ्यक्रम की अंतिम इकाई में आप विभिन्न प्रकार की तनाव की परिस्थितियाँ जिनका पौधों को सामना करना पड़ता है, के बारे में और तनाव से निबटने के लिए पौधों की विविध अनुक्रियाओं (responses) के बारे में पढ़ेंगे। तनाव की परिस्थितियों में भी उत्तरजीविता (survival) के लिए आनुवंशिक इंजीनियरी (genetic engineering) द्वारा पौधों में हेरा-फेरी की संभावना का पता लगाने की चेष्टा की गई है।

उद्देश्य

इस खंड को पढ़ने के बाद आप :

- नाइट्रोजन यौगिकीकरण और नाइट्रोजन उपापचय का वर्णन कर सकेंगे,
- सल्फर के उपापचय का वर्णन कर सकेंगे,
- आंतरिक और बाह्य कारकों द्वारा पादप वृद्धि, परिवर्धन और विभेदन के नियमन का वर्णन कर सकेंगे,
- तनाव की विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत पौधों की विविध अनुक्रियाओं और तनावों के प्रति उनके अनुकूलन के तरीकों का वर्णन कर सकेंगे।

आभार

दिल्ली विश्वविद्यालय के डॉ. अनिल ग्रोवर, के प्रति इस पाठ्यक्रम की इकाई 18 पर टिप्पणी के लिए आभार व्यक्त किया जाता है।

इकाई 15 अकार्बनिक नाइट्रोजन और गंधक उपापचय

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
15.2 जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण
क्षमता सम्पन्न जातियाँ
नाइट्रोजन यौगिकीकरण की मांग
फलियों में ग्रंथिकाओं का परिवर्धन और निर्माण
नाइट्रोजन यौगिकीकरण का जैव रसायन
नाइट्रोजिनेस के प्रकार्यों को प्रभावित करने वाले कारक
नाइट्रोजन यौगिकीकरण की आनुवंशिकता
नाइट्रोजिनेस सक्रियता का मापन
15.3 नाइट्रेट स्वांगीकरण
जैव रासायनिक अभिक्रियाएं
स्वांगीकारी नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस
नाइट्रेट उद्ग्रहण
नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस का अलगाव
नाइट्रेट स्वांगीकरण का नियमन
15.4 नाइट्रोजन और कार्बन स्वांगीकरण की पारस्परिक क्रिया
15.5 अमोनिया स्वांगीकरण
जैव रासायनिक अभिक्रियाएं
अमोनिया का उद्ग्रहण
अमोनिया स्वांगीकरण का नियमन
15.6 नाइट्रोजन स्वांगीकरण का नाइट्रोजन नियंत्रण
15.7 सल्फेट स्वांगीकरण
15.8 नाइट्रोजन, कार्बन और सल्फ़र के उपापचयी पारस्परिक संबंध
15.9 सारांश
15.10 अंत में कुछ प्रश्न
15.11 उत्तर

15.1 प्रस्तावना

कृषि, वन और अन्य पारितंत्रों में उत्पादकता मूलरूप से नाइट्रेट अथवा अमोनिया जैसे नाइट्राजन पोषकों की प्राप्यता द्वारा सीमित है। आधुनिक खेती-बाड़ी की सफलता औद्योगिक रूप से यौगिकीकृत (fixed) नाइट्रोजन उर्वरकों की बहुतायत में उपलब्धता पर टिकी हुई है। लेकिन यह गंभीर चिंता की बात है कि जीवाश्म ईंधन (fossil fuel) के भंडारों में लगातार हो रही कमी के मद्देनज़र ऐसी प्रौद्योगिकी का लम्बे समय तक बने रहना संदिग्ध है। इसलिए, प्राकृतिक अथवा जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण को दोहने के प्रयासों को तेज करना महत्वपूर्ण है ताकि यह कृषि में नाइट्रोजन के मुख्य स्रोत के रूप में कार्य कर सकें। वस्तुतः जहाँ तक महत्व का सवाल है, जीवों के जीवन में नाइट्रोजन पोषण का स्थान पानी के बाद दूसरा ही है।

प्रकृति में पौधों के लिए उपलब्ध नाइट्रोजन के संतुलन को नियंत्रित करने के दो प्रमुख प्रक्रम (process) हैं। संयुक्त-(combined) नाइट्रोजन की हानि का प्रमुख कारण विनाइट्रीकरण (denitrification) द्वारा नाइट्रोजन गैस के वायुमंडलीय पूल में चले जाने के कारण है। जबकि वायुमंडलीय नाइट्रोजन को संयुक्त रूपों — अमोनिया और नाइट्रोजन के ऑक्साइडों में रूपांतरित करने में जैविक (biological) और अजैविक (abiological—तडित् (lightening) और दहन

(combustion)) प्रक्रम शामिल हैं। नाइट्रोजन को इन संयुक्त रूपों में जीव आसानी से ग्रहण कर लेते हैं।

इकाई 13 में आपको बताया गया था कि प्रकाश संश्लेषण के दौरान किस प्रकार कार्बन ग्लूकोस में स्वांगीकृत हो जाता है। इस इकाई में आपका परिचय इन बातों से कराया जाएगा — नाइट्रोजन यौगिकीकरण की आधारभूत बातें, नाइट्रेट स्वांगीकरण, अमोनिया स्वांगीकरण, नाइट्रोजन, कार्बन और सल्फ़र स्वांगीकरण की पारस्परिक क्रिया तथा अकार्बनिक नाइट्रोजन पोषण का कमी और रूप को नियमित करने वाले नियंत्रक। साथ ही हम सल्फ़र के स्वांगीकरण का भी संक्षेप में वर्णन करेंगे जो नाइट्रोजन की ही तरह पौधों के लिए अत्यावश्यक है। इसका प्रमुख प्राकृतिक रूप सल्फ़ेट है और नाइट्रेट की तरह यह भी अपचयन द्वारा (reductively) स्वांगीकृत होता है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- भोजन प्राप्त करने की विधि के (mode of living) के आधार पर नाइट्रोजन यौगिकीकारी जीवों के नाम बता सकेंगे और उन्हें वर्गीकृत कर सकेंगे,
- नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए आवश्यक परिस्थितियों और प्रक्रम के लिए अत्यावश्यक मांगों का वर्णन कर सकेंगे,
- ग्रंथिकाओं (nodules) में जीवाणुसम (bacteroid) निर्माण के दौरान होने वाले उपापचयी रूपांतरणों (metabolic modifications) का वर्णन कर सकेंगे,
- *राइज़ोबियम*-फली सहजीवन की विशिष्टता (specificity) का आधार समझ सकेंगे,
- नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के घटकों (components) के नाम बता सकेंगे, प्रत्येक घटक द्वारा की जाने वाली अभिक्रियाओं का वर्णन कर सकेंगे और प्रक्रम के दौरान H_2 उत्पन्न होने के महत्व को समझा सकेंगे,
- नाइट्रेट के स्वांगीकारी अपचयन (assimilatory reduction) में सम्मिलित चरणों का और प्रक्रम की मांगों का वर्णन कर सकेंगे,
- नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस के अंगक विशिष्ट (organelles specific) और ऊतक विशिष्ट (tissue specific) वितरण के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे,
- नाइट्रेट रिडक्टेस के प्रेरण (induction), दमन (repression) और सक्रियता (activity) के नियंत्रण के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे,
- अमोनिया के कार्बनिक रूप में स्वांगीकरण के लिए आवश्यक मांगों को लिख सकेंगे,
- सल्फेट स्वांगीकरण के मार्ग और नाइट्रेट स्वांगीकरण से इसकी भिन्नता बता सकेंगे, और
- नाइट्रोजन, कार्बन और सल्फ़र की उपापचयी पारस्परिक क्रियाओं की चर्चा कर सकेंगे।

15.2 जैविक नाइट्रोजन-यौगिकीकरण

नाइट्रोजन पोषण की विधि जिसमें आण्विक नाइट्रोजन (N_2) का स्वांगीकरण होता है डाइएज़ोट्राफ़ी (diazotrophy) कहलाता है और इस विधि को उपयोग में लाने के योग्य जीव डाइएज़ोट्रोफ़ (diazotroph) कहलाते हैं।

वह प्रक्रम जिससे आण्विक नाइट्रोजन (N_2) अमोनियम आयन (NH_4^+) में अपचित होती है, नाइट्रोजन-यौगिकीकरण (N_2-यौगिकीकरण) कहलाता है। इस इकाई का यह सबसे महत्वपूर्ण भाग है और काफी लम्बा है। सबसे पहले हम आपका परिचय उन जातियों से करवाएंगे जिनमें N_2-यौगिकीकरण की क्षमता है। सहजीवी सहवास के दौरान ग्रंथिकाओं का निर्माण कैसे होता है इसका वर्णन करेंगे। उसके बाद हम आण्विक नाइट्रोजन को NH_3 में बदलने वाली अभिक्रियाओं और एन्ज़ाइमों के बारे में बतलाएंगे। एक संक्षिप्त उपभाग N_2-यौगिकीकरण की आनुवंशिकी के बारे में है। इसमें हम आपका परिचय N_2-यौगिकीकरण क्षमता को गैर-नाइट्रोजन यौगिकीकृत (non-nitrogen fixer) करने वाले पौधों में स्थानांतरित करने की संभावना के बारे में कराएंगें।

15.2.1 क्षमता सम्पन्न जातियाँ

जैविक नाइट्रोजन-यौगिकीकरण कुछेक सुस्पष्ट (distinct) पोषणीय प्रकार के प्रोकैरिओटों तक सीमित हैं। उनमें से कुछ तो मुक्तजीवी हैं जबकि कुछ अन्य यूकैरिओटी सहयोगियों के साथ सहजीवीय सहवास (symbiotic-association) में रहते हैं। इस प्रक्रम का अंशदान, पृथ्वी पर प्रतिवर्ष नए यौगिकीकृत नाइट्रोजन बजट का लगभग 60% है। जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकृत करने वाले जीवों का विस्तार और उनके प्रकार सारणी 15.1 में दिखाए गए हैं। इनको अनेक वर्गों में वर्गीकृत किया गया है जैसे कि मुक्तजीवी (*ऐज़ोटोबैक्टर, नोस्टॉक, ऐनाबीना* (*Anabaena*), चित्र 15.1) अथवा सहजीवीय (*राइज़ोबियम*-फली सहवास)। मुक्तजीवियों को प्रकाशपोषित (phototropic, e.g. *नोस्टॉक*), रसोपोषित (chemotrophic, e.g. *क्लेब्सिला* — *Klebsiella*), वायुजीवी

सारणी 15.1: कुछ क्षमता सम्पन्न (gifted) N_2-यौगिकीकारक जातियों के उदाहरण

किस्म	उदाहरण
1) मुक्तजीवी नाइट्रोजन-यौगिकीकारक जीव	
i) अवायुजीव (anaerobes)	*क्लोस्ट्रिडियम (Clostridium)*
ii) विकल्पी वायुजीव (facultative aerobes)	*क्लेबसिएला, ऐन्टेरोबैक्टर (Enterobacter)*
iii) सूक्ष्मवायुजीव (microaerobes)	*ऐजोस्पाइरिलम (Azospirillum), ऐक्वास्पाइरिलम (Aquaspirillum), आर्थोबैक्टर (Arthobacter)*
iv) वायुजीव (aerobes)	*ऐज़ोटोबैक्टर, डर्क्सिया (Derxia)*
v) प्रकाशसंश्लेषी जीवाणु (photosynthetic bacteria)	*रोडोस्यूडोमोनास (Rhodopseudomonas), रोडोस्पाइरिलम (Rhodospirillum), क्रोमैशियम (Chromatium)*
vi) सायनोबैक्टीरिया	*ऐनाबीना, नोस्टॉक*
2) सहजीवी तंत्र	
i) *राइज़ोबियम* — शिम्ब सहवास	
क) जिनके साथ तीव्र वृद्धि करते हैं	*पिसियम (Pisum), ट्राइफोलियम (Trifolium), विसिया (Vicia)*
ख) जिनके साथ धीमी वृद्धि करते हैं	*एराक्यिा (Arachia), ग्लाइसिन (Glycine), विगना (Vigna)*
ii) *राइजोबियम*-अशिम्ब सहवास जिनके साथ धीमी वृद्धि करते हैं	*पैरास्पोनिया*
iii) सम्बद्ध सहजीवी	*ऐजोस्पाइरिलम-ब्रैसिलिएन्स-सोर्घम (Azospirillum-brasiliense-sorghum)*
iv) *फ्रैन्किया*-एक्टिनोराइज़ल का जिनके साथ सहवास है	*ऐल्नस, कैसुएरिना, मिरिका*
v) सायनोबैक्टीरियल सहवास	
क) आवृतबीजी (angiosperm) के साथ	*गुनरा (Gunnera)*
ख) अनावृतबीजी (gymnosperm) के साथ	*ऐगाथिस (Agathis), साइकस (Cycas), मैक्रोजामिया (Macrozamia)*
ग) टेरिडोफ़ाइटों (pteridophytes) के साथ	*आज़ोला*
घ) ब्रायोफ़ाइटों (bryophytes) के साथ	*ऐन्थोसेरॉस (Anthoceros), ब्लासिया (Blasia), कैरिकुला (Caricula)*
च) लाइकेनों (lichens) के साथ	*कोलेमा (Collema), लाइकिना (Lichina), पेल्टिजेरा (Peltigera)*

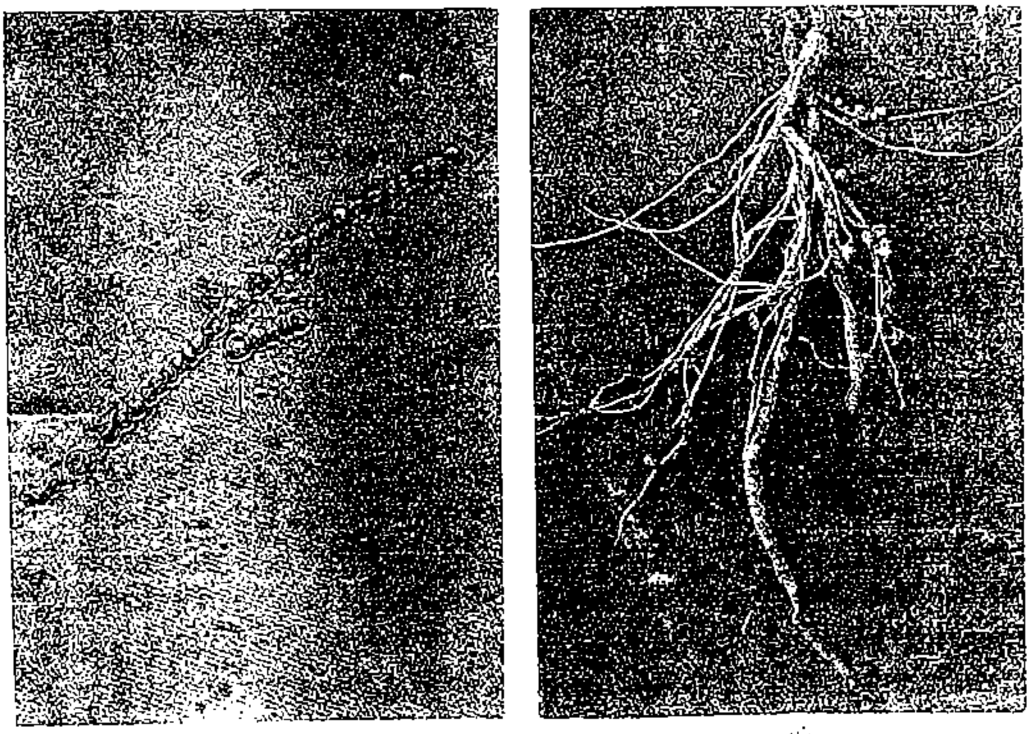

(a) (b)

चित्र 15.1 : क्षमता सम्पन्न N_2-यौगिकीकारकों के फोटोग्राफ a) *ऐनाबीना* b) *राइज़ोबियम*-शिम्ब फली ग्रंथिकाएं।

(aerobic, e.g. *ऐज़ोटोबैक्टर*) अथवा अवायुजीवी (anaerobic, e.g. *क्रोमैशियम* — *Chromatium*) में वर्गीकृत किया जा सकता है। यह वर्गीकरण इन जीवों के अस्तित्व की अवस्था और पोषण की विधि पर निर्भर है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण नाइट्रोजन यौगिकीकरण तंत्र है *राइज़ोबियम*-फली सहवास, *फ्रैंकिया-एक्टिनोराइज़ल* (*Frankia*-actinorhizal) — काष्ठिल पादप सहवास, *ऐनाबीना-आज़ोला* (*Anabaena-Azolla*) और *सायनोबैक्टीरिया-धान* (Cyanobacteria-rice) तंत्र हैं। जैसा कि आप पढ़ेंगे *राइज़ोबियम*-फली सहवास हमेशा ग्रंथिकाओं के रूप में होता है। नाइट्रोजन यौगिकीकारकों का यह समूह तीन श्रेणियों में बाँटा गया है :

i) *राइज़ोबियम* जिसमें तेजी से वृद्धि करने वाली जातियाँ शामिल हैं,

ii) *ब्रैडीराइज़ोबियम* (*Bradyrhizobium*) जिसमें धीमी वृद्धि करने वाले प्रभेद (strains) सम्मिलित है, और

iii) *एज़ोराइज़ोबियम* (*Azorhizobium*) जो *राइज़ोबियम* और *ब्रैडीराइज़ोबियम* से प्राप्त विशेषकों (traits) का मिला-जुला रूप है।

[illegible] परपोषी (host) के संदर्भ में *राइज़ोबियम* अत्यधिक विशिष्ट है और यही कारण है कि नामपद्धति (nomenclature) उस विशिष्ट परपोषी पर आधारित है जिसे यह संक्रमित (infects) करता है। उदाहरण के लिए क्लोवरों (clover) और मटरों (peas) को संक्रमित करने वाला *राइज़ोबियम* क्रमशः *ट्राइफोलिआई* (*trifolii*) और *लेग्यूमिनोसैरम* (*leguminosarum*) कहलाता है। परपोषी साथी के मामले में *ब्रैडीराइज़ोबियम* वंश (genus) उतना संकीर्ण नहीं है। *राइज़ोबियम* और *ब्रैडीराइज़ोबियम* के सभी विशेषक परपोषी की जड़ों पर ग्रंथिकाएं पैदा करते हैं लेकिन *ऐज़ोराइज़ोबियम*,

सेस्बेनिया रोस्ट्रेटा (*Sesbania rostrata*) और *ऐस्कीनोमीन एफ्रास्पेरा* (*Aeschynomene afraspera*) के तने पर ग्रंथिकाएँ उत्पन्न करता है। *पैरास्पोनिया* (*Parasponia*) ही एक मात्र शिम्ब (फली) हीन वंश है जो *राइज़ोबियम* जीवाणु का साथी है। इस उदाहरण ने यह आशा जगा दी है कि *राइज़ोबियम* और अनाजों जैसी महत्वपूर्ण फसलों के बीच नाइट्रोजन यौगिकीकरण सहवास पैदा किया जा सकता है।

ऐल्नस (*Alnus*), कैसुराइना (*Casuarina*), *मिरिका* (*Myrica*) जैसे काष्ठिल पौधों की जड़ों पर फ्रैन्किया के साथ सहजीवी सहवास से नाइट्रोजन यौगिकीकरण ग्रंथिकाएं बनती हैं जो कि एक्टिनोमाइसेटीज़ (actinomycetes) का एक सदस्य है। प्रयोगों द्वारा यह पता चला है कि नम भूमि धान की खेती में *ऐनाबीना-आजोला* सहवास नाइट्रोजन उर्वरक का एक शक्तिशाली स्रोत है। मुक्तजीवी हेटेरोसिस्ट (heterocyst) सायनोबैक्टीरिया भी नम भूमि धान पारितंत्र को महत्वपूर्ण मात्रा में नाइट्रोजन का योगदान देते हैं। लाइकेन (lichen) कवकों और N_2-यौगिकीकारक सायनोबैक्टीरिया के बीच सहवासी हैं। बंजर कठोर आवासों (habitat) में ये N_2 के बहुत महत्वपूर्ण स्रोत हैं। साइकोट्रिया *(psychotria)* जैसे उष्णकटिबंधीय (tropical) पौधों की जड़ों में भी N_2-यौगिकीकारक ग्रंथिकाएं पाई जाती हैं। इनका N_2-यौगिकीकारक साथी क्लेबसिएला होता है।

15.2.2 नाइट्रोजन-यौगिकीकरण की माँग

नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए अनिवार्य माँगे निम्नलिखित है —

i) आण्विक N_2 के NH_3 में परिवर्तन को उत्प्रेरित करने वाले (catalysing) एन्ज़ाइम को नाइट्रोजिनेस (nitrogenase) कहते हैं। इसे उत्पन्न करने वाला जीवों का समूह निफ़ (nif) जीन कहलाता है। इस प्रकार प्रकार्यात्मक (functional) नाइट्रोजिनेस के निर्माण को करने वाले निफ़ जीनों की अभिव्यक्ति अनिवार्य मांगों में से एक है।

ii) नाइट्रोजिनेस की सक्रियता ऑक्सीजन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। इसलिए यह आवश्यक है कि N_2-यौगिकीकृत करने वाले जीवों में नाइट्रोजिनेस सक्रियता को ऑक्सीजन संदमन (inhibition) से संरक्षित करने की कोशिकीय क्रियाविधि (mechanism) हो।

iii) N_2 का NH_3 में अपचयन (reduction) करने के लिए इलेक्ट्रॉनों और प्रोटॉनों की जरूरत पड़ती है। नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के लिए प्राकृतिक इलेक्ट्रॉन दाता — अपचित (reduced) फेरोडॉक्सिन (ferrodoxin) अथवा अपचित फ्लैवोडॉक्सिनें (flavodoxin) हैं। जीवों में ऐसे इलेक्ट्रॉनदाताओं की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए।

iv) N_2 का NH_3 में अपचयन एक ऐसा प्रक्रम है जिसमें उच्च-ऊर्जा की जरूरत होती है। इसमें प्रति अपचित N_2 के लिए 16 से 24 ATP अणुओं की खपत होती है। इसलिए जीवों में ATP की प्रचुर आपूर्ति के लिए प्रावधान होना चाहिए।

v) Mo और Fe, नाइट्रोजिनेस के अनिवार्य संघटक हैं और इसलिए नाइट्रोजिनेस के निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए ये दोनों तत्व पौधों को अवश्य उपलब्ध होने चाहिएं।

vi) जिन कोशिकाओं की नाइट्रेट या अमोनिया जैसे यौगिकीकृत नाइट्रोजन स्रोत तक पहुंच है उनमें नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम उत्पन्न नहीं होता। इसलिए N_2-यौगिकीकरण प्रक्रम उन परिस्थितियों में होता है जब ऐसे यौगिकीकृत नाइट्रोजन स्रोत नहीं होते।

15.2.3 फलियों में ग्रंथिकाओं का परिवर्धन और निर्माण

खेतीबाड़ी में फलियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं। इसके तीन मुख्य कारण हैं:

i) ये नाइट्रोजन को यौगिकीकृत करते हैं और इस प्रकार नाइट्रोजन उर्वरकों की खपत को कम करते हैं।

ii) प्रोटीन अंशों से भरपूर फलियों का दाना और चारा मानव और पशुधन (livestock) के लिए अपरिहार्य पोषणतः हैं।

iii) ये प्राकृतिक आवासों, जैसे कि उष्णकटिबंधीय वनों को नाइट्रोजन अंतर्वाह (inflow) उपलब्ध कराते हैं।

फलियों में N_2-यौगिकीकारक ग्रंथिकाओं के परिवर्धन और निर्माण में निम्नलिखित चार सुस्पष्ट चरण शामिल हैं :

i) पहचान (recognition)

ii) संक्रमण (infection)

iii) ग्रंथिका निर्माण (nodule formation)

iv) ग्रंथिका कार्यकी (nodule physiology)

राइज़ोबियम और इसके परपोषी के बीच सहजीवी पारस्परिक क्रिया की विशिष्टता (specificity) पहले ही चरण पर होने लगती है और **पहचान** कहलाती है। इस बात का पता है कि यह पहचान दोनों सहजीवी साझेदारों की सतह पर उपस्थित पूरक (complementary) अणुओं का प्रकार्य है। यह पूरक समूह दो प्रकार के अणुओं से बनता है। पहला तो पॉलिसैकेराइड और दूसरा लेक्टिन। पॉलिसैकेराइड घटक दोनों साझेदारों की विशेषता या अभिलक्षण है जबकि लेक्टिन अणु केवल संबंधित परपोषी (फली) द्वारा पैदा होते हैं। लेक्टिन में अनेक पार्श्व (sides) होते हैं जो परस्परक्रियाशील साझेदार के पृष्ठ (surface) पॉलिसैकेराइडों की किस्मों से बंधन (binding) के लिए विशिष्ट हैं। उदाहरण के लिए जैसाकि चित्र 15.2 में दिखाया गया है क्लोवर के मूल-रोम दो विशिष्ट स्थलों (sites) वाली एक लेक्टिन पैदा करते हैं जो ट्राइफोलिन (trifollin) कहलाती है। एक स्थल तो जीवाणु *राइज़ोबियम ट्राइफोली* की सतह पर पॉलिसैकेराइड से बंधन के लिए और दूसरा मूल-रोम की भित्ति पर पॉलिसैकेराइड से बंधन के लिए। इस प्रकार लेक्टिन, *राइजोबियम* को मूल सतह को पकड़ने के लिए लंगर (anchor) का प्रकार्य करती हैं।

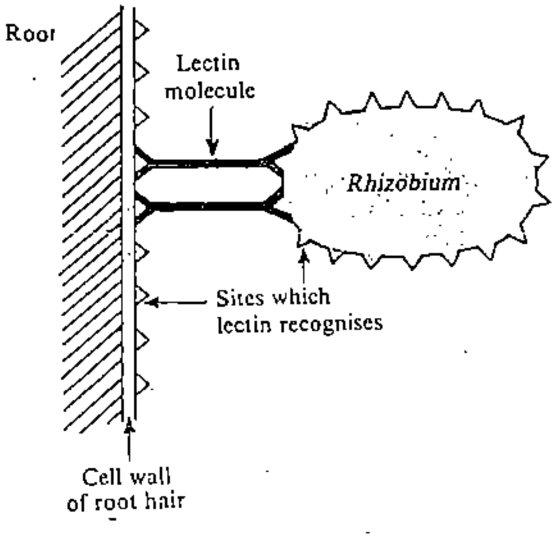

चित्र 15.2: परपोषी और सहजीवियों की पहचान में लेक्टिन की भूमिका। विशिष्ट राइजोबिया सही जाति के मूल रोम से चिपकते हैं क्योंकि द्विप्रकार्यात्मक (bifunctional) लेक्टिन अणु दोनों साझेदारों के प्रतिजनी (antigenic) स्थलों को पहचानते हैं।

स्वाभाविक रूप से आपके मन में एक प्रश्न उमड़ेगा कि क्या परपोषी के लिए अपने संगत या कहिए अनुरूप सहजीवी साथी के वास्ते कोई विशिष्ट रासायनिक सिग्नल है। हाल ही में, रिजका ऐल्फ़ाऐल्फा के मूल रिसावों (exudates) में ल्युटिओलिन (एक फ्लैवोनॉयड) नाम पदार्थ पाया गया है जो *राइज़ोबियम मेलिलोटी (Rhizobium meliloti)* में अभिक्रियाओं को प्रेरित (induce) करता है। इन अभिक्रियाओं के फलस्वरूप फलियों में परपोषी पहचान, परपोषी संक्रमण और ग्रंथिकाओं का परिवर्धन होता है।

पहचान के बाद दूसरा चरण **संक्रमण** का है। संक्रमण का पहला स्पष्ट परिवर्तन मूल रोम का कुंचन (curling) है (चित्र 15.3 देखिए)। मूल रोम कुंचन में शामिल पदार्थ जीवाणुवीय (bacterial) उद्गम का है और संभवतः यह एक छोटा निम्न अणु भार वाला पॉलिसैकैराइड है। आपको यह जरूर जानना चाहिए कि संक्रमण के लिए मूल रोम कुंचन एक अनिवार्य मांग नहीं है। ऐसा माना जाता है कि यह जीवाणु को एक अलग बन्द वातावरण उपलब्ध कराकर संक्रमण को सुगम बना देता है ताकि उस वातावरण में यह मूल रोम का स्थानिक एन्ज़ाइमी विघटन (dissolution) करके उसकी कोशिका में घुस सके

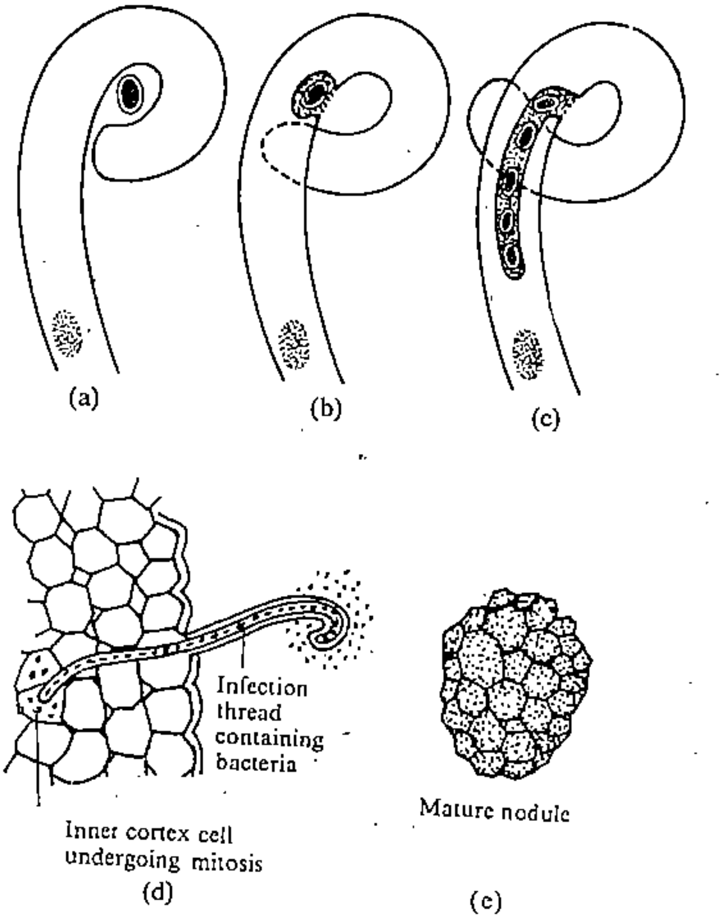

चित्र 15.3: *राइज़ोबियम* द्वारा फली के मूल रोम पर आक्रमण: a) मूल रोम में परिवेधित जीवाणु; b) जीवाणु का मूल रोम में प्रवेश; c) संक्रमण सूत्र का परिवर्धन; d) विभाजित हो रही वल्कुटीय (cortical) कोशिकाओं में संक्रमण सूत्र; e) परिपक्व ग्रन्थिका।

जीवाणु प्रवेश के बाद मूलरोम भित्ति और प्लैज्मा झिल्ली अंतर्वलित (invaginate) हो जाती है और एक नलिका जैसी संरचना वर्धित होती है जिसे संक्रमण-सूत्र (infection thread) कहते हैं (चित्र 15.3 c)। संक्रमण सूत्र में मौजूद जीवाणु, और अधिक जीवाणु पैदा करने के लिए बार-बार गुणित (multiply) होते हैं। प्रत्येक जीवाणु एक कोशिका बाह्य (extracellular) पॉलिसैकैराइड से आवेष्टित (enveloped) रहता है। ऐसे संक्रमण सूत्र वल्कुट के भीतर घुस जाते हैं जिसके बाद भीतरी वल्कुट क्षेत्र की कोशिकाएं विभाजित होने के लिए उद्दीप्त (stimulate) हो जाती हैं और चतुर्गुणित (tetraploid) हो जाती हैं। जिस जगह पर मूलरोम भित्ति नहीं होती है वहाँ से संक्रमण सूत्र नुच-नुच कर (pinches off) कटता है। एक बार में एक जीवाणु वल्कुटी भित्ति में निर्मुक्त (release) होता है। जीवाणु संक्रमण सूत्र से विभाजित हो रही कोशिका में निर्मुक्त हो सकता है। इस मामले में सभी संतति कोशिकाओं (daughter cells) में जीवाणु होंगे। बतौर विकल्प के, हो सकता है वल्कुटी क्षेत्र में कोशिकाओं का पहले ही विभाजन हो चुका हो और ऐसे मामले में संक्रमण सूत्र से संतति कोशिकाओं में जीवाणुओं का प्रवेश एक परपोषी निर्भर परिघटना (phenomenon) है। वल्कुटी कोशिका में प्रत्येक जीवाणु की निर्मुक्ति के बाद जीवाणु के चारों ओर पादप से उत्पन्न (origin) एक बाह्य झिल्ली का आवरण बनता है जिसे परिजीवाणुवी (peribacteroid) झिल्ली कहते हैं।

ग्रंथिकाओं के निर्माण और इनके परिपक्वन के दौरान, जीवाणु कोशिकाएं, जीवाणुसम (bacteroid) में रूपांतरित (transform) हो जाती हैं (चित्र 15.4)। इनमें प्रकार्यात्मक N_2-यौगिकीकरण उपकरण (apparatus) और साइटोक्रोम घटक होते हैं। ये नई जीवाणुसम झिल्लियों में स्थित होते हैं जिनमें निम्न O_2 सांद्रण पर श्वसन सुगमता से होता है। इसी दौरान लेग्हीमोग्लोबिन नामक एक विशेष प्रोटीन संश्लेषित होती है। यह भी परिजीवाणुसम झिल्ली में स्थित रहती है। केवल परपोषी द्वारा ही एन्ज़ाइमी और परिवहन प्रकृति वाली अनेक नई प्रोटीनें भी पैदा की जाती हैं। परपोषी द्वारा उत्पन्न होने वाली ये प्रोटीनें ग्रंथिकाओं के लिए विशिष्ट होने के कारण नोडुलिनें (nodulins) कहलाती हैं। ग्रंथिकाओं को जड़ों के संवहनी (vascular) ऊतकों की सप्लाई होती है।

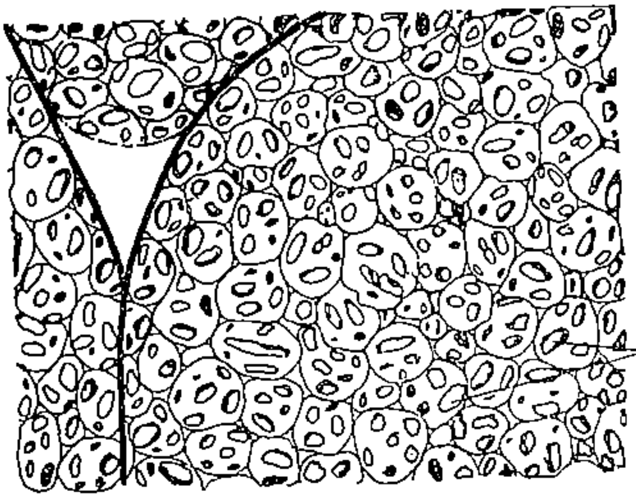

चित्र 15.4: **मूल ग्रंथिकाओं के भीतर जीवाणुसमों का आरेखी निरूपण (diagrammatic representation)। चार से लेकर छह तक के समूह में अनेक जीवाणुसम हैं। प्रत्येक समूह एक परिजीवाणुसम झिल्ली से घिरा रहता है।**

परिपक्व जीवाणुसमों में TCA चक्र और उपचायी फ़ॉस्फ़ोरिलीकरण (oxidative phosphorylation) के लिए एन्ज़ाइम होते हैं। जीवाणुसम, ATP उत्पादन में और नाइट्रोजिनेस सक्रियता के लिए अपचायक (reductant) सप्लाई करने में सक्रिय होते हैं। ATP और अपचायक उत्पादन के लिए अंततः कार्बन की मांग प्रकाश संश्लेषण क्रिया से उत्पन्न कार्बोहाइड्रेटों से पूरी होती है। ये कार्बोहाइड्रेट पोषवाह (फ्लोएम) द्वारा स्थानांतरित होते हैं। जीवाणु का जीवाणुसम में विभेदन (differentiation) के साथ-साथ एन्ज़ाइम **ग्लुटामिन सिंथेटेस** की सक्रियता में संदमन होता है, ताकि जीवाणुसम, अमोनिया को स्वांगीकृत (assimilate) न कर सके। दूसरे शब्दों में, जीवाणुसम, परपोषी के लिए अमोनिया उत्पन्न करने वाली फैक्टरी के रूप में काम करते हैं। फलस्वरूप, अमोनिया परपोषी कोशिका के जीवद्रव्य में निर्मुक्त हो जाती है। मटर और क्लोवर के मामले में यह ग्लुटामिन और ऐस्पैराजिन में स्वांगीकृत हो जाती है अथवा यूरीआइडों (ureides) में स्वांगीकृत हो जाती है जैसाकि सोयाबीन में होता है। NH_3 के ग्लुटामिन में परिवर्तन की अभिक्रिया की चर्चा हम बाद में करेंगे।

बोध प्रश्न 1

क) नीचे स्तंभ (कॉलम) 1 में कुछ N_2-यौगिकीकारक जातियाँ दी गई हैं। उनका मिलान स्तंभ 2 में दिए गए उनके सहजीवी साझेदार से कीजिए।

स्तंभ	स्तंभ 2
i) *ऐनाबीना*	क) कुछ फलीदार पौधे
ii) *राइज़ोबियम*	ख) *ऐन्थोसेरॉस*
iii) *नोस्टॉक*	ग) *आजोला* (फर्न)
iv) *फ्रैन्किया*-एक्टिनोराइज़ल	घ) *सोर्घम* (ज्वार वर्ग)
v) *ऐज़ोस्पाइरिलम*	च) *कैस्यूरिना*

ख) स्तंभ 1 में दिए गए असहजीवी N_2-यौगिकीकारकों को स्तंभ 2 में दिए गए अभिलक्षणों/विशेषताओं से मिलान कीजिए।

स्तंभ 1	स्तंभ 2
i) *नोस्टॉक*	क) अवायुजीवी
ii) *ऐज़ोटोबैक्टर*	ख) प्रकाशसंश्लेषी अवायुजीव
iii) *क्लोस्ट्रिडियम*	ग) हेटेरोसिस्ट
iv) *क्रोमैशियम*	घ) वायुजीवी

ग) नीचे दिए गए कथनों में कौन-से कथन सही हैं। सही के लिए स और गलत के लिए ग लिखिए —

i) नाइट्रोजन को यौगिकीकृत करने की क्षमता केवल प्रोकैरिओटों में है। ☐

ii) फलीदार पौधे *राइजोबियम* के बिना नहीं उग सकते। ☐

iii) नाइट्रोजन यौगिकीकरण के लिए आवश्यक एन्ज़ाइमें जीवाणुसमों में मौजूद होती हैं। ☐

iv) TCA चक्र और इलेक्ट्रॉन अंतरण श्रृंखला की एन्ज़ाइमें जीवाणुसमों में उपस्थित होती हैं। ☐

v) जीवाणुसम, वल्कुटी कोशिकाओं में ऐस्पैराजिन स्रवित (secrete) करते हैं। ☐

vi) संक्रमण सूत्र जीवाणुओं की अंतर्वलित (infolded) और विस्तरित (extended) प्लैज्मा झिल्ली का बना होता है। ☐

घ) नीचे दिए गए वाक्यों के रिक्त स्थानों में उचित शब्द भरिए :

i) N_2-यौगिकीकरण सहजीवन में दोनों साथियों को पहचानने का कार्य करने वाले अणु .... और .... हैं।

ii) .... के अणु जीवाणुसम और फली की सतह पर उपस्थित .... से बंधन द्वारा लंगर (anchor) सा बनाते हैं।

iii) जीवाणुसम, परपोषी कोशिका के कोशिकाद्रव्य में .... निर्मुक्त करते (छोड़ते) हैं क्योंकि इनमें NH_3 स्वांगीकरण के लिए आवश्यक .... नहीं होता।

iv) परिजीवाणुसम झिल्ली .... से उत्पन्न होती है।

15.2.4 नाइट्रोजन-यौगिकीकरण का जैव रसायन

नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम दो उपएककों (subunits) से बना है। इनमें से एक में नॉन-हीम (non heme) लौह होता है और यह Fe-प्रोटीन या घटक II (component II) या **डाइनाइट्रोजिनेस रिडक्टेस** कहलाता है। दूसरे में Fe और Mo होता है और यह Fe-Mo प्रोटीन या घटक I (component I) या **डाइनाइट्रोजिनेस** कहलाता है। N_2 के NH_3 में अपचयन के लिए दोनों ही घटक अनिवार्य हैं। डाइनाइट्रोजिनेस रिडक्टेस के सक्रियण (activation) के लिए ATP की जरूरत पड़ती है जो ADP और अकार्बनिक फ़ॉस्फ़ेट में जल-अपघटित (hydrolysed) हो जाता है। केवल ऐसा सक्रियित डाइनाइट्रोजिनेस रिडक्टेस ही अपचित फेरोडॉक्सिन या फ्लेवोडॉक्सिन से डाइनाइट्रोजिनेस को एक बार में एक इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण की मध्यतस्थता कर सकता है (चित्र 15.5)। बार-बार एक इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण के ऐसे प्रक्रम के फलस्वरूप डाइनाइट्रोज़िनेस में इलेक्ट्रॉनों का एक भंडार सा बन जाता है। अंत में ये इलेक्ट्रॉन नाइट्रोजिनेस के सबस्ट्रेट यानि क्रियाधार को अपचित करने के काम में आते हैं। N_2 के NH_3 और आण्विक H_2 यौगिकीकरण के प्रक्रम को निम्नलिखित समीकरण द्वारा बताया जा सकता है :

$$N_2 + 8 \text{ इलेक्ट्रॉन} + 16\ MgATP + 16\ H_2O \longrightarrow$$
$$2\ NH_3 + H_2 + 16\ MgADP + 16\ Pi + 8\ H^+$$

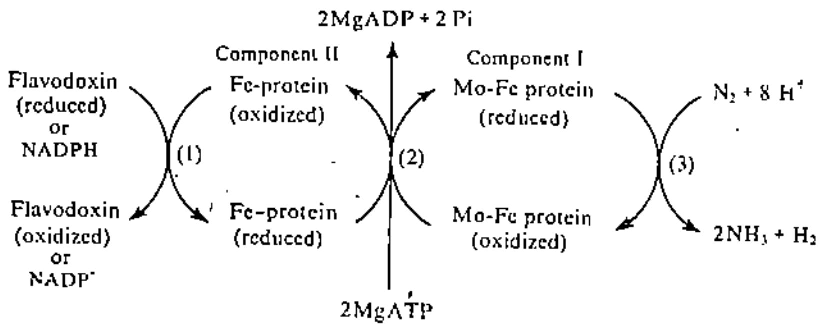

चित्र 15.5: NADPH या फ्लेवोडॉक्सिन से नाइट्रोजन को इलेक्ट्रॉन परिवहन का ब्यौरा, बरास्ता नाइट्रोजिनेस के घटक I और घटक II से।

N_2 का NH_3 में और प्रोटॉन का आण्विक हाइड्रोजन में यौगिकीकरण साथ-साथ होता है। ऐसा अनुमान है कि नाइट्रोजिनेस अभिक्रिया में एक इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण के लिए दो से लेकर तीन तक ATP के अणुओं की खपत हो सकती है। जैसाकि समीकरण में दिखाया गया है N_2-यौगिकीकरण और H_2 उत्पादन में, 8 इलेक्ट्रॉनों की जरूरत पड़ती है। इस हिसाब से इस प्रक्रम की दोनों अभिक्रियाओं के लिए मूल रूप से ATP के कुल 16 से लेकर 18 तक अणुओं की जरूरत पड़ेगी। इसलिए जहाँ तक ऊर्जा का प्रश्न है, N_2-यौगिकीकरण वास्तव में एक बहुत महंगी अभिक्रिया है। ऐसा माना जाता है कि केवल इस मांग के कारण ही N_2-यौगिकीकरण प्रक्रम ATP उत्पादन में दक्ष जीवों तक ही सीमित है। ऊर्जा की दृष्टि से खर्च को ध्यान में रखते हुए N_2-यौगिकीकरण के दौरान हाइड्रोजन उत्पादन एक खर्चीली अभिक्रिया है। हाइड्रोजन नाइट्रोजिनेस सक्रियता को भी प्रभावित करती है क्योंकि आण्विक H_2, N_2-यौगिकीकरण का संदमक है। इसलिए N_2-यौगिकीकरण के दौरान नाइट्रोजिनेस की हाइड्रोजन उत्पन्न करने वाली अभिक्रिया को किसी प्रकार निकाल दिए जाने के तरीकों की खोज की जा रही है।

जैसाकि चित्र 15.6 में दिखाया गया है, नाइट्रोजिनेस अनेक किस्म के क्रियाधारों के अपचयन को उत्प्रेरित करता है जिनमें ATP का सहगामी (concomitant) जल-अपघटन होता है। अगर क्रियाधार हाइड्रोजन सायनाइड है तो यह मेथैन और अमोनिया में अपचित हो जाता है। अगर ऐज़ाइड क्रियाधार है तो यह अमोनिया और आण्विक नाइट्रोजन में अपचित हो जाता है। इसी प्रकार अगर ऐसीटिलीन और प्रोटॉन क्रियाधार हैं तो वे क्रमशः एथिलीन और आण्विक H_2 में अपचित हो जाते हैं। नाइट्रोजिनेस द्वारा ऐसीटिलीन का एथिलीन में अपचयन से एक विधि विकसित हुई है जिसे ऐसिटिलीन अपचयन विधि (acetylene reduction method) कहते हैं। इस विधि से जीवे

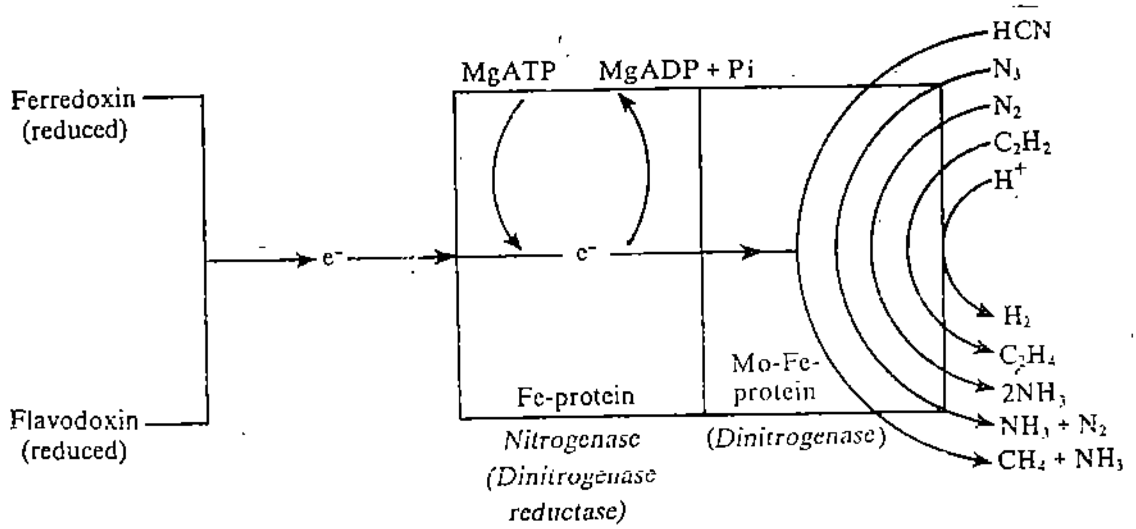

चित्र 15.6: ATP के जल-अपघटन पर आश्रित, अपचयन का उत्प्रेरित करने वाला नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम की विभिन्न अभिक्रियाएं। हाइड्रोजन सायनाइड का मेथैन और NH_3 में, एज़ाइड (N_3) का NH_3 और N_2 में, नाइट्रोजन का NH_3 में, ऐसीटिलीन का एथिलीन में, तथा प्रोटॉन का आण्विक हाइड्रोजन में।

(in vivo) में नाइट्रोजिनेस सक्रिया को सुविधापूर्वक और सस्ते में आमापित (assay) किया जा सकता है। बाद में हम संक्षेप में नाइट्रोजिनेस सक्रियता को आकलित (estimation) करने की तकनीकों की चर्चा करेंगे।

अभी हाल ही में यह सिद्ध किया गया है कि ऐज़ोटोबैक्टर में Mo-नाइट्रोजिनेस के अलावा वैनेडियम वाली नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम भी होती है।

15.2.5 नाइट्रोजिनेस के प्रकार्यों को प्रभावित करने वाले कारक

नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम की सक्रियता को पर्याप्त रूप से प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं :

i) मॉलिब्डेनम और वैनेडियम

N_2-यौगिकीकरण के वास्ते जरूरी एन्ज़ाइम नाइट्रोजिनेस के निर्माण के लिए Mo की मांग पूरी करने के लिए प्रकृति में मॉलिब्डेनम अवश्य उपलब्ध होना चाहिए। अब, यह भी पता है कि Mo ऐसी नाइट्रोजिनेस के बनने का संदमन करता है जिसमें Va हो। आप शायद जानते ही होंगे कि प्रकृति में Mo और Va के तुलनात्मक वितरण में Va अधिक पाया जाता है। इसलिए बहुत संभव है कि कुछ पारिस्थितिकीय आवासों में Mo की कमी हो और ऐसे आवासों के N_2-यौगिकीकारक Va वाली नाइट्रोजिनेस पैदा करते है, ऐसी आशा की जाती है। इसके अनुसार हो सकता है प्रकृति में दो नाइट्रोजन चक्र कार्य कर रहे हों। एक Va तंत्र से मध्यस्थ हो और दूसरा Mo तंत्र से।

ii) आण्विक हाइड्रोजन

N_2-यौगिकीकृत करने वाले जीव N_2-यौगिकीकरण परिस्थितियों में एक झिल्ली परिबद्ध (membrane bound) एन्ज़ाइम भी उत्पन्न करते हैं जिसे **उद्ग्रहण-हाइड्रोजिनेस (uptake hydrogenase)** कहते हैं। उद्ग्रहण-हाइड्रोजिनेस की उपस्थिति का महत्व नाइट्रोजिनेस सक्रियता के दौरान पैदा होने वाली हाइड्रोजन को वायुजीवी इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला द्वारा खपत कर सकने की क्षमता में निहित है। इस प्रक्रम में ATP उत्पन्न होता है। नाइट्रोजन यौगिकीकृत करने वाली कोशिकाओं में नाइट्रोजिनेस व उद्ग्रहण हाइड्रोजिनेस के इस प्रकार के संबंध से निम्नलिखित लाभ हैं :

i) वायुश्वसन (aerobic respiration) द्वारा यह ATP के रूप में ऊर्जा के अधिकांश भाग को पुनःस्थापित करता है।

ii) यह ऑक्सीजन से नाइट्रोजिनेस की रक्षा करता है।

iii) यह नाइट्रोजिनेस सक्रियता पर H_2 संदमनी प्रभाव को रोकता है।

यह देखा गया है अगर N_2-यौगिकीकारी नाइट्रोजन रहित वायुमंडल में हो तो, नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम एकमात्र हाइड्रोजन के उत्पादन को उत्प्रेरित करती है। एन्ज़ाइम के इस विशेष गुण के कारण सायनोबैक्टीरिया हेटेरोसिस्ट द्वारा H_2 को वाणिज्यिक पैमाने पर प्रकाश की उपस्थिति में उत्पादित (photoproduction) करने के प्रयास किए जा रहे हैं। इसके लिए जीवाणुओं के विशेष प्रभेदों (strains) के निर्माण की जरूरत पड़ेगी जिनमें उद्ग्रहण हाइड्रोजिनेस एन्ज़ाइम आनुवंशिकतः अपूर्ण (genetically deficient) हो। यह आशा की जाती है कि ऐसे प्रभेद प्रकाशसंश्लेषी और N_2-यौगिकीकरण परिस्थितियों में लगातार हाइड्रोजन उत्पन्न करेंगे।

ऑक्सीजन

ऑक्सीजन, N_2-यौगिकीकरण का एक शक्तिशाली संदमक है क्योंकि यह नाइट्रोजिनेस के संश्लेषण और सक्रियता दोनों को ही अवरुद्ध करती है। जैसाकि आपने सारणी 15.1 में देखा है, कुछ N_2-यौगिकीकारी अवायुजीव हैं और कुछ वायुजीव हैं। अवायुजीवों में ऑक्सीजन की समस्या का समाधान उनके अवायु-विधि से पोषण (anaerobic mode of nutrition) के कारण हो जाता है। समस्या वास्तव में ऐजोटोबैक्टर जैसे वायुजीवियों के साथ है जिन्हें ऑक्सीजन की जरूरत नाइट्रोजन-यौगिकीकृत करने और नाइट्रोजन के बलबूते पर वृद्धि करने के लिए पड़ती है। अपने नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम को ऑक्सीजन संदमन से बचाने के लिए ऐजोटोबैक्टर के पास नीचे दिए गए दो साधन हैं :

) श्वसनीय रक्षण (respiratory protection), और

ii) संरूपीय रक्षण (conformational protection)।

श्वसनीय रक्षण में N_2-यौगिकीकारक कोशिकाएँ चालू ऑक्सीजन तनाव के अनुसार वायु-श्वसन की दर को समंजित (adjust) कर लेते हैं अर्थात् बाह्य ऑक्सीजन सांद्रण के अनुसार दर को घटा-बढ़ा लेते हैं। फलस्वरूप, कोशिका के भीतर ही अवायु-परिस्थिति पैदा हो जाती है जिसमें N_2-यौगिकीकरण होता है।

संरूपीय रक्षण में एक Fe-S रेडॉक्स प्रोटीन, एन्ज़ाइम की रक्षा करती है। यह प्रोटीन ऑक्सीजन और Mg^{2+} की उपस्थिति में ऑक्सीकृत हो जाती है और तब नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के साथ एक उत्क्रमणीय सम्मिश्र (reversible complex) बनाती है। इसलिए एन्ज़ाइम ऑक्सीजन और N_2 की पहुंच के बाहर हो जाता है। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में Fe-S रेडॉक्स प्रोटीन के अपचयन के फलस्वरूप सम्मिश्र का वियोज़न (dissociation) होता है जिसकी वजह से सक्रिय नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम पुनः प्राप्त हो जाता है।

N_2-यौगिकीकृत करने वाले बैक्टीरिया-*क्लेबसिएला न्यूमोनी (Klebsiella pneumoniae)* में N_2-यौगिकीकरण की जैव रसायन, कार्यकी और आनुवंशिकी अच्छी तरह से समझ ली गई है। यह ऑक्सीजन की मौजूदगी में नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के उत्पादन का दमन (repression) या संदमन (inhibition) करके ऑक्सीजन की समस्या पर काबू पा लेता है। जबकि, *नोस्टॉक* और *ऐनाबीना* जैसे सायनोबैक्टीरिया में वायुवीय वृद्धि (aerobic growth) की परिस्थिति में हेटेरोसिस्ट नाइट्रोजन यौगिकीकरण के एकमात्र स्थलों के रूप में होते हैं। हेटेरोसिस्ट, नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के संश्लेषण और क्रिया दोनों का स्थान हैं। हेटेरोसिस्ट, नाइट्रोजिनेस के लिए ऑक्सीजन रक्षण युक्ति की भूमिका अदा करता है। हेटेरोसिस्ट जिस क्रियाविधि से यह भूमिका निभाता है वह इस प्रकार है : हेटेरोसिस्ट विशिष्टीकृत कोशिकाएं हैं जो साधारण वनस्पति कोशिकाओं से बनती हैं। विभेदन प्रक्रम के दौरान इनमें प्रकाश तंत्र II की सक्रियता विलुप्त हो जाती है जिसके फलस्वरूप प्रकाशसंश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन उत्पादन नहीं होता। इसके अलावा, विभेदन के दौरान हेटेरोसिस्ट की भित्ति में एक नये ग्लाइकोलिपिड की परत बिछ जाती है। यह संरचनात्मक रूपांतरण (modification) बाहरी पर्यावरण से ऑक्सीजन के प्रवेश के लिए अवरोध (barrier) बन जाता है। इस प्रकार PS II की सक्रियता का विलुप्त होना और नए ग्लाइकोलिपिड परत का बनना स्पष्ट क्रियाविधियाँ हैं जिनसे हेटेरोसिस्ट ऑक्सीजन द्वारा संदमन से अपने नाइट्रोजिनेस की रक्षा करता है।

iv) लेगहीमोग्लोबिन

लेगहीमोग्लोबिन, *राइज़ोबियम* और परपोषी का एक संयुक्त उत्पाद है। यह ग्रंथिका के परिपक्वन के दौरान पैदा होता है। आमतौर पर यह देखा गया है कि जिन ग्रंथिकाओं में लेगहीमोग्लोबिन होता है, वे गुलाबी रंग की दिखाई देती हैं। गुलाबी रंग की ग्रंथिकाएं हमेशा N_2-यौगिकीकरण कर सकती हैं जबकि रंगहीन ग्रंथिकाएं N_2-यौगिकीकरण में असमर्थ होती हैं। लेगहीमोग्लोबिन संश्लेषित कर सकने की असमर्थता N_2-यौगिकीकरण असमर्थता का कारण है। लेगहीमोग्लोबिन दोहरा कार्य प्रकार्य करती है। यह ऑक्सीजन के भंडार के रूप में कार्य करती है और इस प्रकार जीवाणुसम को वायु-श्वसन द्वारा ATP का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त O_2 देती है। दूसरा, यह ग्रंथिकाओं के भीतर ही विसरित (diffusing) हो रही ऑक्सीजन का बंधन करने में समर्थ है। इस प्रकार यह ऑक्सीजन को नाइट्रोजिनेस से दूर रखती है।

15.2.6 नाइट्रोजन यौगिकीकरण की आनुवंशिकता

नाइट्रोजन यौगिकीकरण की आनुवंशिकी *क्लेबसिएला न्यूमोनी* में, विस्तार से ज्ञात हो चुकी है। संपूर्ण N_2-यौगिकीकारक उपकरण (Nitrogen-fixing apparatus) के संगठन के लिए बीस जीनों की जरूरत पड़ती है। *ई. कोलाई (E. coli)* एक अयौगिकीकारक (non-N_2-fixer) है। यह दिलचस्प बात है कि अगर *क्लेबसिएला* जो N_2-यौगिकीकारक है, के सारे बीस जीन, *ई. कोलाई* में स्थानांतरित कर दिए जाएं, तो वह N_2-यौगिकीकारक बन जाता है। कुछ निफ़ (nif) जीन, नाइट्रोजिनेस के संरचनात्मक घटकों को कोड करते हैं जबकि दो जीन (nif L और nif A) नियामक (regulatory) हैं।

आर. लेग्युमिनोसैरम जैसे तेजी से वृद्धि करने वाले राइजोबिया में N_2-यौगिकीकरण के लिए तीन प्रकार के जीन होते हैं। ये हैं — i) प्रकार्यात्मक नाइट्रोजिनेस के निर्माण के लिए जरूरी **निफ़ (nif) जीन** जैसे कि *क्लेबसिएला* में, ii) जड़ों में ग्रंथिकाओं के निर्माण के लिए जरूरी **ग्रंथी-जीन (nod-gene)** और iii) ग्रंथिकाओं द्वारा N_2-यौगिकीकरण के रखरखाव (maintenance) के लिए जरूरी **यौगि-जीन (fix-gene)**। ये नाइट्रोजिनेस का ऑक्सीजन से रक्षण, ATP और अपचायक सप्लाई का नियंत्रण करते हैं। लगभग 12 ग्रंथी-जीन ज्ञात हैं, यह जड़ों के रिसाव में मौजूद फ्लेवोनाइड (लियुटोलिन-leutolin) प्रेरक द्वारा सक्रियित होते हैं। ऐसा माना जाता है कि ये *राइज़ोबियम* संक्रमण की विभिन्न अवस्थाओं को नियंत्रण करते हैं जिसके फलस्वरूप ग्रंथिकाएं बनती हैं। निफ़ और ग्रंथी-जीन गुणसूत्र यानि क्रोमोसोम पर नहीं बल्कि प्लैस्मिड (plasmid) पर स्थित होते हैं। इसी प्रकार यौगि-जीन भी प्लैस्मिड से उत्पन्न होते हैं।

यह ज्ञात है कि ग्रंथी-जीन जीवाणु के परपोषी परिसर (host range) को नियंत्रित करते हैं और यह संभव है कि आनुवंशिकी द्वारा परिपोषी परिसर को बढ़ाया जा सके जिससे कि धान्यों (अनाजों) को संक्रमित करने और उन्हें मूल-ग्रंथिकाएँ पैदा करने लायक बनाया जा सके।

हाल ही में धान और गेहूँ के संवर्धित ऊतकों को *राइज़ोबियम* से सफलतापूर्वक संक्रमित किया गया है हालांकि इस सहवास में नाइट्रोजन यौगिकीकरण कर सकने की क्षमता उत्पन्न नहीं हुई। फिर भी यह उपलब्धि *राइज़ोबियम*-गेहूँ अथवा *राइज़ोबियम*-चावल N_2-यौगिकीकरण तंत्र को उत्पन्न करने के नजदीक पहुंचने की दिशा में उठाया गया कदम है।

15.2.7 नाइट्रोजिनेस सक्रियता का मापन

कोई जीव N_2-यौगिकीकारक है या नहीं यह पता करने की अनेक विधियाँ हैं। अगर कोई जीव ऐसे प्रसामान्य (normal) वायुमंडल में उग सकता है जिसमें नाइट्रेट अथवा अमोनिया जैसे नाइट्रोजन-स्रोतों की कोई व्यवस्था न हो तो यह निष्कर्ष निकलता है कि जीव N_2-यौगिकीकारक है। यहाँ यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि यह ज्ञात हो चुका है कि N_2-यौगिकीकारक हेटेरोसिस्ट-सायनोबैक्टीरिया अथवा *राइज़ोबियम-फली* तंत्र यौगिकीकृत नाइट्रोजन सप्लाई न करने पर भी वर्धित हो सकते हैं।

दूसरा अधिक विश्वसनीय तरीका कोशिकीय नाइट्रोजन में ^{15}N समस्थानिक (isotope) का समावेशन है जिसे द्रव्यमान स्पेक्ट्रममापी (mass spectroscopy) से आकलित किया जा सकता है। यह विधि बहुत महंगी है और इसलिए नाइट्रोजिनेस सक्रियता तथा N_2-यौगिकीकरण के दिन-ब-दिन मापन के लिए उपयोग में नहीं लाई जा सकती है।

नाइट्रोजिनेस सक्रियता मापन के लिए सबसे व्यापक रूप से काम में लाई जाने वाली विधि ऐसीटिलीन अपचयन विधि है। इस विधि में N_2-यौगिकीकरण तंत्र को लगभग 10% ऐसीटिलीन से 10 से 30 मिनट तक ऊष्मायित (incubate) किया जाता है। इस अवधि के दौरान नाइट्रोजिनेस, ऐसीटिलीन को एथिलीन में बदल देता है। यह परिवर्तन नाइट्रोजिनेस की दक्षता पर निर्भर है। तब अभिक्रिया के नमूने से सिरिंज द्वारा गैस का नमूना लिया जाता है और गैस के नमूने को गैस वर्णलेख यानि क्रोमेटोग्राफ़ (chromatograph) में अंतःक्षेपण (inject) करके अपचित एथिलीन का आमापन किया जाता है। वर्णलेख ऐसीटिलीन और एथिलीन को मात्रात्मकतः पृथक कर देता है और इस प्रकार एथिलीन का मात्रात्मक आमापन आसान हो जाता है। नाइट्रोजिनेस उत्प्रेरित ऐसीटिलीन के एथिलीन में अपचयन के साथ प्रोटॉन का आण्विक हाइड्रोजन में अपचयन नहीं होता जैसाकि N_2 के NH_3 अपचयन में होता है।

जब ऐसीटिलीन का अपचयन एथिलीन में होता है तो इसमें दो इलेक्ट्रॉन शामिल होते हैं और अगर कोई उत्पादित ऐथिलीन की मात्रा को यौगिकीकृत N_2 की मात्रा से समीकृत करना या कहिए बराबर करना चाहता है तो नाइट्रोजिनेस की N_2-यौगिकीकरण सक्रियता के इष्टतम स्तर (optimal level) को जानने के लिए एथिलीन की मात्रा को 4 के गुणनखंड (factor) से भाग देना पड़ेगा (N_2-यौगिकीकरण के समीकरण को पृष्ठ (13) पर देखिए)।

बोध प्रश्न 2

क) स्तंभ 2 में दी गई विशेषताओं का स्तंभ 1 में दिये गये एन्ज़ाइमों से मिलान कीजिए।

स्तंभ 1	स्तंभ 2
i) डाइनाइट्रोजिनेस रिडक्टेस	क) Fe-Mo प्रोटीन
ii) डाइनाइट्रोजिनेस	ख) सक्रियण के लिए ATP की मांग
	ग) एक बार में एक इलेक्ट्रॉन स्थानांतरित करता है
	घ) इलेक्ट्रॉनों को N_2 पर स्थानांतरित करता है
	च) Fe-प्रोटीन

ख) नीचे दिए गए वाक्यों के रिक्त स्थानों में उचित शब्द भरिए।

i) सायनोबैक्टीरिया में नाइट्रोजिनेस.................. में मौजूद होता है।

ii) उद्ग्रहण-हाइड्रोजिनेस वायु-परिस्थिति में हाइड्रोजन का उपयोग......... .... शृंखला द्वारा करता है और..................उत्पन्न करता है।

iii) N_2-गैस से रहित वायुमंडल में नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम केवल..................के उत्पादन को उत्प्रेरित करता है।

iv) उद्ग्रहण से हाइड्रोजिनेस-अपूर्ण (deficient) सायनोबैक्टीरियल प्रभेद, N_2 मुक्त वायुमंडल में लगातार .... पैदा करेगा।

v) ....नाइट्रोजिनेस की रक्षा करती है और यह ऑक्सीजन के .... के रूप में भी प्रकार्य करती है।

ग) N_2-यौगिकीकरण जीनों का नीचे दिए गए प्रकार्यों से मिलान कीजिए :

जीन	प्रकार्य
i) निफ़ जीन	क) N_2-यौगिकीकरण का रखरखाव
ii) ग्रंथी-जीन	ख) प्रकार्यात्मक नाइट्रोजिनेस
iii) यौगि-जीन	ग) जड़ों में ग्रंथिकाओं का निर्माण

15.3 नाइट्रेट-स्वांगीकरण

15.3.1 जैव रासायनिक अभिक्रियाएं

पादप वृद्धि के लिए नाइट्रोजन का सबसे आसानी से उपलब्ध और वरीय (preferred) स्रोत नाइट्रेट है। NO_3^- का NH_3 में स्वांगीकारी अपचयन दो चरणों में होता है, जैसाकि नीचे दिखाया गया है :

i) $\underset{\text{नाइट्रेट}}{NO_3^-} + 2H^+ + 2e^- \longrightarrow \underset{\text{नाइट्राइट}}{NO_2^-} + H_2O$

ii) $\underset{\text{नाइट्राइट}}{NO_2^-} + 7H^+ + 6e^- \longrightarrow \underset{\text{अमोनिया}}{NH_3} + H_2O$

प्रथम चरण नाइट्रेट रिडक्टेस द्वारा उत्प्रेरित होता है। **नाइट्रेट रिडक्टेस** दो इलेक्ट्रॉन के बूते पर NO_3^- को NO_2^- में अपचित कर देता है। दूसरा चरण **नाइट्राइट रिडक्टेस** द्वारा उत्प्रेरित होता है जो 6 इलेक्ट्रॉन की कीमत पर NO_2^- को NH_3 में बदल देता है। डाइनाइट्रोजिनेस की तरह नाइट्रेट रिडक्टेस भी Mo वाला एन्ज़ाइम है और नाइट्राइट रिडक्टेस Fe-प्रोटीन है। दोनों अपचायी प्रक्रमों के लिए अपचायक के स्रोत है — अपचित फेरोडॉक्सिन ($Fd_{(red)}$) अथवा अपचित पिरिडीन न्यूक्लिओटाइड (NADH या NADPH) हो सकते हैं। यह स्रोत तंत्र पर निर्भर करते है। यहाँ यह बताना

महत्वपूर्ण है कि अपचयन द्वारा NO_3^- का विस्वांगीकरण (dissimilation) भी होता है जिसमें यह N_2 गैस में अपचित हो जाता है। नाइट्रेट उपापचय का ऐसा प्रक्रम नाइट्रेट श्वसन अथवा विनाइट्रीकरण (denitrification) कहलाता है और अवायु परिस्थितियों में केवल मात्र कुछ ही जीवाणुओं में होता है। नाइट्रेट की विनाइट्रीकरण के एन्ज़ाइमों को विस्वांगीकारी (dissimilatory) नाइट्रेट रिडक्टेस (nitrate reductase) कहते हैं।

15.3.2 स्वांगीकारी नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस

दो प्रकार के नाइट्रेट रिडक्टेस होते है जो अपचायकों के प्रति उनकी विशिष्टता पर निर्भर करते हैं। सायनोबैक्टीरियल तंत्र के नाइट्रेट रिडक्टेस को अभिक्रिया को उत्प्रेरित करने के लिए अपचित फेरोडॉक्सिन (Fe-निर्भर) की जरूरत होती है जबकि अभिक्रिया को पूरा करने के लिए पौधों और कवकों के नाइट्रेट रिडक्टेस को अपचित पिरिडीन न्यूक्लिओटाइड (NADH अथवा NADPH-निर्भर) की जरूरत पड़ती है। सामान्यतया अधिकतर पिरिडीन न्यूक्लिओटाइड निर्भर नाइट्रेट रिडक्टेसों में NADH और NADPH दोनों में अपचायक के स्रोत के रूप में उपयोग करने की समर्थता होती हैं। उच्च कोटि पादप और शैवाल जैसे प्रकाशसंश्लेषी जीवों से प्राप्त एन्ज़ाइम NADH के प्रति पसन्द दर्शाते हैं लेकिन कवकों से प्राप्त एन्ज़ाइम की पसन्द NADPH है। इससे स्पष्ट होता है कि अपचायक की मांग के लिए सायनोबैक्टीरियल नाइट्रेट रिडक्टेस और यूकैरिओटि नाइट्रेट रिडक्टेस के बीच स्वाभाविक अंतर है। दो प्रकार की अपचायक निर्भर नाइट्रेट अपचयन अभिक्रियाएं नीचे दिखाई गई हैं :

Eukaryotic

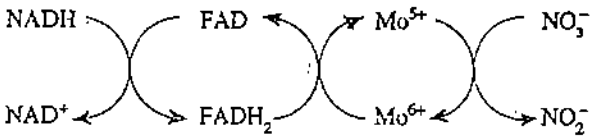

Cyanobacteria

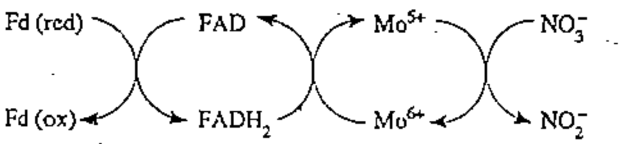

Fd-निर्भर एन्ज़ाइम में प्रॉस्थेटिक समूह के रूप में केवल मॉलिब्डेनम होता है। इसकी तुलना में NADPH-निर्भर एन्ज़ाइम में मालिब्डेनम के अतिरिक्त फ्लेविन ऐडेनीन डाइन्यूक्लिओटाइड (FAD) और साइटोक्रोम b_{557} प्रॉस्थेटिक समूह के रूप में होते है। प्रकार्यात्मकतः, Fd-निर्भर एन्ज़ाइम केवल नाइट्रेट के नाइट्राइट में अपचयन को उत्प्रेरित करता है, जबकि NAD(P)H-निर्भर एन्ज़ाइम दो आत्मनिर्भर सक्रियताओं को उत्प्रेरित करता है। पहली डायफोरेस सक्रियता (diaphorase activity) कहलाती है जिसमें NAD(P)H उपचित (ऑक्सीकृत) होता है और साइटोक्रोम अथवा फ्लेविन मोनोन्यूक्लिओटाइड (FMN) जैसा एक इलेक्ट्रॉन-ग्राही (electron acceptor) अपचित होता है। दूसरी अंतस्थ (terminal) नाइट्रेट रिडक्टेस सक्रियता कहलाती है। जो NAD(P)H पर निर्भर नहीं है जिसमें नाइट्रेट, अपचित फ्लेविनों ($FMNH_2$) अथवा वायोलोजनों (viologens) के बूते पर अपचित होता है। जीवे में (in vivo) में दोनों सक्रियताएं अपचित पिरिडीन न्यूक्लिओटाइड से नाइट्रेट को इलेक्ट्रॉनों के स्थानांतरण में संयुक्त रूप से और अनुक्रमिक रूप से (sequentially) भाग लेती हैं जैसाकि अभिक्रिया में दिखाया गया है (चित्र 15.7)। सायनोबैक्टीरिया में मौजूद नाइट्रेट रिडक्टेस में डायफ़ोरेस सक्रियता का अभाव होता है और इसमें प्रॉस्थेटिक समूह के रूप में केवल Mo होता है।

क्लोरोप्लास्ट में नाइट्राइट का अपचयन अमोनिया में होता है। सायनोबैक्टीरिया या क्लोरोप्लास्ट में नाइट्राइट रिडक्टेस एन्ज़ाइम को अपचयन के लिए अपचित फेरोडॉक्सिन की जरूरत पड़ती है। कवक

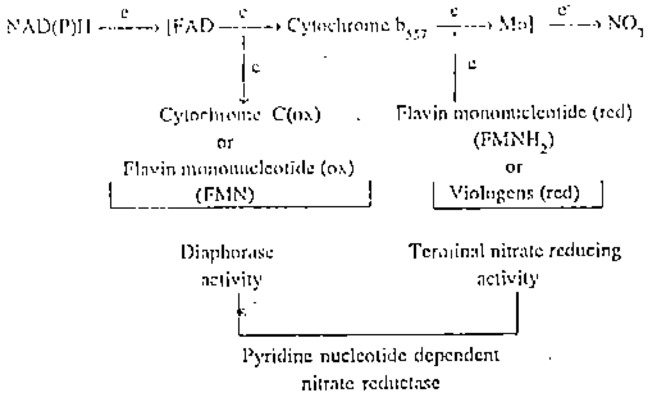

चित्र 15.7: NAD (P)H-निर्भर नाइट्रेट रिडक्टेज की सक्रियताएं (i) डायफोरेस सक्रियता, (II) अंतस्थ नाइट्रेट रिडक्टेज सक्रियता।

के नाइट्राइट रिडक्टेस को अपनायी प्रकार्य करने के लिए NADPH चाहिए। दोनों अभिक्रियाएं नीचे दिखाई गई हैं:

क्लोरोप्लास्ट

कवक

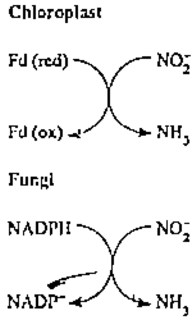

15.3.3 नाइट्रेट उद्ग्रहण

नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस के संयुक्त कार्य द्वारा स्वांगीकारी अपचयन होने से पूर्व यह आवश्यक है कि नाइट्रेट कोशिकाओं में घुसे। कोशिकाएं सांद्रण प्रवणता (concentration gradient) के विरुद्ध NO_3^- परिवहन तंत्र द्वारा होता है। नाइट्रेट उद्ग्रहण (uptake) और नाइट्रेट अपचयन दोनों आत्मनिर्भर प्रक्रम हैं क्योंकि नाइट्रेट रिडक्टेस सक्रियता में आनुवंशिकतः अपूर्ण जीवों में प्रसामान्य परिवहन सक्रियता होती है।

15.3.4 नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस का अलगाव

आइए अब देखें कि नाइट्रेट स्वांगीकरण प्रकाश संश्लेषण में उत्पन्न अपचायकों पर निर्भर करता है या उपचयी उपापचय (oxidative metabolism) में उत्पन्न अपचायकों पर निर्भर करता है। यह मालूम है कि सायनोबैक्टीरिया में नाइट्रेट रिडक्टेस और नाइट्राइट रिडक्टेस प्रकाशसंश्लेषी झिल्लियों में स्थित होते हैं।.

उच्च कोटि पादपों (C_3) में यह दिखाया गया है कि नाइट्रेट रिडक्टेस एक कोशिकाद्रव्यी एन्ज़ाइम है और नाइट्राइट रिडक्टेस एक क्लोरोप्लास्टीय एन्ज़ाइम है।

पौधों में नाइट्रेट स्वांगीकरण और कार्बन डाइऑक्साइड स्वांगीकरण कोष्ठीकृत (compart-mentalised) यानि विभक्त होते हैं। नाइट्रेट स्वांगीकरण पर्णमध्य (mesophyll) कोशिकाओं में और कार्बन डाइऑक्साइड स्वांगीकरण पूलाच्छद (bundle sheath) कोशिकाओं में स्थित है। यह देखा गया है कि C_3 पौधों की तुलना में C_4 पौधे नाइट्रेट स्वांगीकरण में अधिक दक्ष है। इसका कारण है नाइट्रेट और नाइट्राइट अपचयन का CO_2 अपचयन स्थल से विशेष अलगाव (separation)। कोशिकाद्रव्यी नाइट्रेट रिडक्टेस और क्लोरोप्लास्टीय नाइट्राइट रिडक्टेस पूलाच्छद कोशिकाओं के नहीं अपितु पर्णमध्य कोशिकाओं के अभिलक्षण हैं। जो ऊतक हरे नहीं हैं, जैसे कि उच्चकोटि पादपों की जड़, उनमें भी नाइट्रेट और नाइट्राइट रिडक्टेस सक्रिय रूप में होता हैं। इसी के अनुसार, NO_3^- अपचयन की तीन मूलभूत विधियाँ निम्नलिखित हैं:

i) प्रकाश संश्लेषण पर प्रत्यक्षतः निर्भर जैसे कि सायनोबैक्टीरिया में।

ii) आंशिक रूप से अ-प्रकाशसंश्लेषी और आंशिक रूप से प्रकाशसंश्लेषी जैसे कि पर्णमध्य कोशिकाओं में, और

iii) पूर्णतः अ-प्रकाशसंश्लेषी जैसे कि जड़ों में।

15.3.5 नाइट्रेट स्वांगीकरण का नियमन

नाइट्रेट स्वांगीकरण के नियमन के दो स्तर हैं। एक दीर्घकालिक है और दूसरा अल्पकालिक है। दीर्घकालिक नियमन एन्ज़ाइम संश्लेषण के स्तर पर प्रचालित (operate) होता है यानि क्रियाशील होता है और अल्पकालिक नियमन एन्ज़ाइम की सक्रियता के स्तर पर प्रचालित होता है।

एन्ज़ाइम संश्लेषण

नाइट्रेट स्वांगीकरण तंत्र सामान्यतया नाइट्रेट की उपस्थिति में नाइट्रेट उद्ग्रहण तंत्र और नाइट्रेट रिडक्टेस तंत्र में वृद्धि दर्शाता है। दूसरे शब्दों में, नाइट्रेट स्वांगीकरण तंत्र नाइट्रेट की उपस्थिति में प्रेरित होता है। इसी प्रकार, NH_3 का नाइट्रोजन के स्रोत के रूप में स्वांगीकरण करने वाली कोशिकाओं में या जीवों में, नाइट्रेट स्वांगीकरण तंत्र का अभाव होता है। नाइट्रेट का ऐसा नियंत्रण दमन नियंत्रण (repressor control) कहलाता है। इस प्रकार नाइट्रेट इसका एक प्रेरक है जबकि अमोनिया नाइट्रेट स्वांगीकरण तंत्र का दमनक (repressor) है।

लाल प्रकाश में नाइट्रेट स्वांगीकरण तंत्र का संश्लेषण बढ़ता है। प्रकाश का यह प्रभाव फ़ाइटोक्रोम (phytochrome) नामक सुप्रसिद्ध फ़ोटोमॉर्फोजेनिक यानि प्रकाशरूपांतरित होने वाले वर्णक द्वारा मध्यस्त होता है। आप इस पाठ्यक्रम की सत्रहवीं इकाई में इसके बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे।

एन्ज़ाइम-सक्रियता नियंत्रण

क्रियाधार, NADH और नाइट्रेट की प्राप्यता, नाइट्रेट स्वांगीकरण की दर के महत्वपूर्ण निर्धारक (determinant) होंगे। इसके अलावा अनेक ऐसे पदार्थों का पता है जो अपचायी परिस्थितियों में नाइट्रेट रिडक्टेस की उत्क्रमणीय अक्रियता (reversible inactivation) का कारण बनते हैं (चित्र 15.8)।

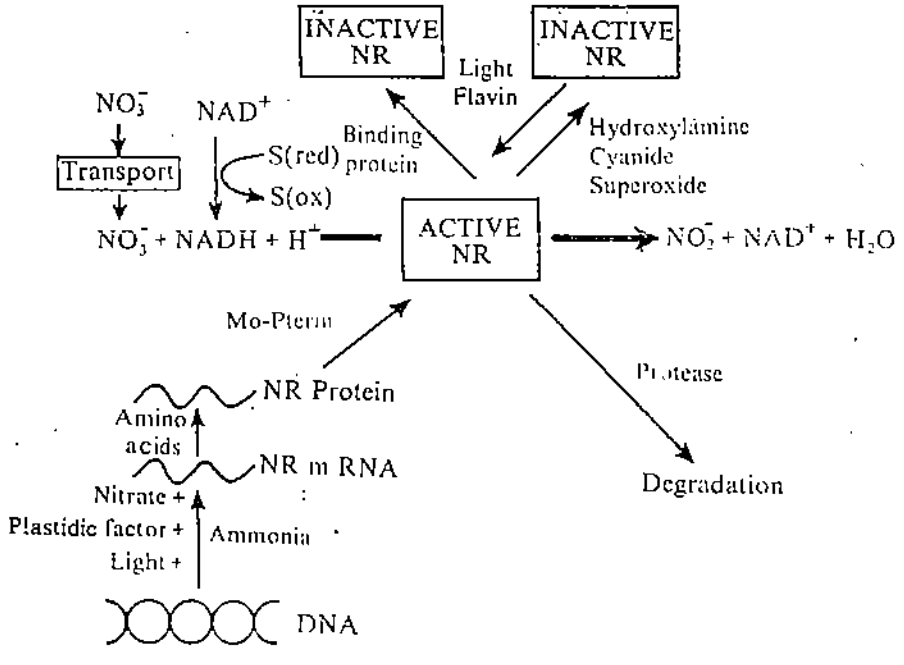

चित्र 15.8: स्वांगीकारक नाइट्रेट रिडक्टेस का नियमन। हाइड्रॉक्सिल ऐमीन, सायनाइड, अथवा सुपर ऑक्साइड से संयोजन द्वारा नाइट्रेट रिडक्टेस (NR) का उत्क्रमणीय निष्क्रियण और फ्लेविन की उपस्थिति में नीले प्रकाश द्वारा इस निष्क्रियण का उत्क्रमण यानि उलटाव; **विशिष्ट बंधन प्रोटीनों से संयोजन द्वारा अथवा सीमित प्रोटीन अपघटन (proteolysis) द्वारा निष्क्रियण।** धनात्मक प्रभावित्र (positive-effector) नाइट्रेट, प्रकाश व प्लास्टिडिक कारक और अमोनिया से व्युत्पन्न ऋणात्मक प्रभावित्र (negative-effector) द्वारा एन्ज़ाइम संश्लेषण का नियमन होता है।

सायनाइड — पौधे सायनोजनिक (cyanogenic) ग्लाइसाइड और हिस्टिडीन से सायनाइड पैदा करते हैं। सायनाइड उत्पादन के साथ-साथ एथिलीन का जैव संश्लेषण (biosynthesis) भी होता है। नाइट्रेट की अनुपस्थिति में, नाइट्रेट रिडक्टेस की NADH के साथ पारस्परिक क्रिया से नाइट्रेट रिडक्टेस अपचित रूप में मौजूद हो सकता है। एन्ज़ाइम के इस अपचित रूप में, सायनाइड से मिलकर एन्ज़ाइम सायनाइड सम्मिश्र (CN-complex) बनाने की सामर्थ्यता आ जाती है। यह सम्मिश्र एन्ज़ाइमी रूप से निष्क्रिय होता है। नाइट्रेट, नीला प्रकाश या ऑक्सीजन एन्ज़ाइम CN सम्मिश्र को उपचित करते हैं इससे सायनाइड निर्मुक्त होता है। सायनाइड मुक्त एन्ज़ाइम में फिर से सक्रियता आ जाती है।

हाइड्रॉक्सिल ऐमीन या सुपरऑक्साइड, एन्ज़ाइम को निष्क्रियित कर देता है जो कि नीले प्रकाश में उद्भासन (exposure) के बाद सक्रिय रूप में परिवर्तित हो जाता है। प्रेक्षणों द्वारा पता लगा है कि नीले प्रकाश में उगाए गए पौधों में प्रोटीन के अंश ज्यादा होते हैं। नाइट्रेट रिडक्टेस की सक्रियता का नीले प्रकाश द्वारा नियमन उच्चतर प्रोटीन संश्लेषण का प्रमुख कारक हो सकता है।

संदमक प्रोटीनें — ऐंडोपेप्टीडेस, उच्चकोटि पादपों में पाई जाने वाली एक प्रकार की संदमक प्रोटीन है जो नाइट्रेट रिडक्टेस को निम्नीकृत (degrade) करती है और इस प्रकार एन्ज़ाइम की अनुत्क्रमणीय (irreversible) हानि इसके कारण होती है। दूसरे प्रकार की प्रोटीनों में बंधन-प्रोटीनें (binding proteins) शामिल हैं जो विशिष्ट रूप से नाइट्रेट रिडक्टेस से बंध जाती हैं। इससे एन्ज़ाइम का स्थायी निष्क्रियण हो जाता है। ऐसी निष्क्रियकारी (inactivator) प्रोटीनें चावल की पौध और पालक की पत्तियों से विलग की गई हैं। इन सभी अभिक्रियाओं की चित्र 15.8 में व्याख्या की गई है। आप देखेंगे कि प्रकाश की मध्यस्थता से एन्ज़ाइम का अनुलेखन (transcription) संचरित होता है। इस प्रकार से यह एकमात्र बेजोड एन्ज़ाइम है।

15.4 नाइट्रोजन और कार्बन स्वांगीकरण की पारस्परिक क्रिया

मृदा में नाइट्रोजन का स्तर निम्न होने के कारण खेती-बाड़ी में नाइट्रोजन उर्वरकों की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजनी उर्वरकों के अनुप्रयोग से पौधे की वृद्धि और उसके कार्यों पर प्रभावशाली असर पड़ता है। सबसे महत्वपूर्ण परिणाम पौधों में कार्बोहाइड्रेटों के उपयोग पर पड़ने वाला प्रभाव है। यह सुनिश्चित हो चुका है कि पौधों में कार्बोहाइड्रेटों का स्तर उनको सप्लाई होने वाले N-उर्वरकों के स्तर के साथ-साथ कम हो जाता है उर्वरकों की सप्लाई NO_3^-, NH_3 और NH_4^+ के रूप में होती है। पौधों में NO_3^-, NH_3 में अपचित हो जाता है और NH_3 के स्वांगीकरण के लिए कार्बन-ढांचे की जरूरत पड़ती है जैसे कि α-कीटोग्लूटैरिक अम्ल जो कि TCA चक्र का मध्यवर्ती (intermediate) है, NH_3 का समावेश (incorporate) कार्बनिक रूप में करता है। इस प्रकार यह स्वाभाविक ही है कि NH_3 की कार्बनिक रूप में स्वांगीकरण की दर, TCA चक्र, जो कार्बन का ढांचा सप्लाई करता है, पर निर्भर करेगी। NH_3 के स्वांगीकरण के दौरान उपयोग किए गए C-ढांचे की पुनः पूर्ति कार्बोहाइड्रेट के अपचय (catabolism) द्वारा होना आवश्यक है। फलस्वरूप, उत्पादित कार्बनिक N की मात्रा के अनुपात में पौधे की कार्बोहाइड्रेट मात्रा घट जाती है।

जैसा कि आप पहले ही देख चुके हैं कि पौधों में नाइट्रेट स्वांगीकरण की दूसरी जगह, प्रकाशसंश्लेषी ऊतक है और इसके लिए अपचायक अपचित फेरेडॉक्सिन और पिरिडीन न्यूक्लिओटाइड हैं। ऐसे ही अपचायकों की कार्बन स्वांगीकरण के लिए भी आवश्यकता पड़ती है। इसलिए NO_3^- के अपचायी स्वांगीकरण की दर में वृद्धि के अनुपात में प्रकाश संश्लेषण से कार्बोहाइड्रेट का उत्पादन निश्चित रूप से घटेगा। दूसरे शब्दों में, पौधों में NO_3^- उपयोगिता का स्तर कार्बोहाइड्रेट के स्तर से व्युत्क्रमतः (inversely) संबंधित हैं।

अपेक्षित प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट की मात्रा वाली फसलें उगाने के लिए इस ज्ञान के व्यावहारिक अनुप्रयोग निम्नलिखित हैं। हम सलाद के रूप में खाई जाने वाली सेलरी (celery) का उदाहरण लेते हैं। यह सबसे अधिक खाने लायक तभी होता है जब इस पौधे के वृंत (stalk) मुलायम होते हैं। यह कोमलता कम कार्बोहाइड्रेट उपलब्ध होने के कारण होती है। मुलायम वृंत वाली सेलरी की

फसल उगाने के लिए अब N-उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है जिससे कार्बोहाइड्रेट का बड़ा अंश ऐमीनो अम्लों और प्रोटीनों के संश्लेषण में लग जाता हैं। अब दूसरा उदाहरण गन्ने का लेते हैं। यह उष्णकटिबंधीय प्रदेश की फसल है जिसमें रोपण से कटने तक छह महीने लगते हैं। इस मामले में गन्ना उगाने वाले नाइट्रोजन उर्वरकों को शुरू में ही डालते हैं न कि कटाई के समय से थोड़ा पहले। इसी प्रकार की पद्धति के कारण शर्करा की भरपूर सांद्रता वाले चुकंदर का उत्पादन करना संभव हुआ है। कटाई के समय से पहले N-उर्वरक को नहीं डालने से चुकंदर में शर्करा की अधिकता बढ़ जाती है इसका कारण यह है कि C-ढांचा ऐमीनो अम्लों और प्रोटीन उत्पन्न करने के लिए काम में नहीं लाया जाता।

बोध प्रश्न 3

क) नीचे स्तंभ 2 में दिए गए अभिलक्षणों का स्तंभ 1 में दिये गये एन्ज़ाइमों से मिलान कीजिए।

स्तंभ 1	स्तंभ 2
i) नाइट्रेट रिडक्टेस ii) नाइट्राइट रिडक्टेस	क) नॉन-हीम Fe-प्रोटीन ख) क्लोरोप्लास्ट में उपस्थित ग) कोशिकाद्रव्य में उपस्थित घ) मॉलिब्डो-फ्लेवो प्रोटीन च) डायफ़ोरेस सक्रियता

ख) नीचे दिए गए वाक्यों के कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही विकल्प चुनिए :

i) अधिकतर उच्चकोटि पादपों में नाइट्रेट स्वांगीकरण (जड़ों/पत्तियों) में होता है।

ii) NO_3^- के NO_2^- में अपचित होने पर काम में लाए जाने वाले इलेक्ट्रॉनों की संख्या (1/2) है।

iii) NO_2^- के अमोनिया में अपचित होने पर काम में लाए जाने वाले इलेक्ट्रॉनों की संख्या (2/6) है।

iv) सायनोबैक्टीरिया में नाइट्रेट रिडक्टेस (थायलैकॉइड झिल्लियों/प्लैज़्मा झिल्ली) में स्थित होता है।

v) उच्चकोटि पादपों में नाइट्रेट रिडक्टेस (कोशिका द्रव्य/क्लोरोप्लास्ट) में और नाइट्राइट रिडक्टेस (कोशिका द्रव्य/क्लोरोप्लास्ट) में होता है।

vi) C_4 पौधों में नाइट्रेट स्वांगीकरण (पूलाच्छद/पर्णमध्य कोशिकाओं) में और CO_2 स्वांगीकरण (पूलाच्छद/पर्णमध्य कोशिकाओं) में होता है।

vii) नाइट्रेट रिडक्टेस की सक्रियता (NO_3^-/NH_4^+) की उपस्थिति में प्रेरित होती है।

15.5 अमोनिया स्वांगीकरण

अकार्बनिक नाइट्रोजन के सबसे सामान्य उपलब्ध रूप नाइट्रोजन (N_2) गैस और NO_3^- हैं। दोनों ही एन्ज़ाइमी रूप से अमोनिया में अपचित हो जाते हैं क्योंकि केवल अमोनिया ही है जो कार्बनिक रूप में समाविष्ट होती है। चूंकि ऐमीनो अम्ल, मुक्त अथवा प्रोटीनों के अंश के रूप में, कार्बनिक नाइट्रोजन के प्रभावी रूप हैं, आमतौर पर ऐमीनो नाइट्रोजन को अमोनिया स्वांगीकरण का प्रमुख उत्पाद माना जाता है।

15.5.1 जैव रासायनिक अभिक्रियाएं

N_2-यौगिकीकरण या नाइट्रेट अपचयन से उत्पन्न या बाहर से सप्लाई होने वाली अमोनिया पौधों में नीचे दिए गए दो प्रमुख मार्गों से स्वांगीकृत होती है i) ग्लूटामेट डिहाइड्रोजेनेस (GDH) पथ, और ii) ग्लूटेमीन सिन्थेटेस (GS)—ग्लूटामेट सिन्थेस पथ।

i) उच्च कोशिकीय अमोनिया :

$$NH_3 + \alpha\text{-कीटोग्लूटेरेट} + NADPH + H^+ \xrightarrow{GDH} \text{ग्लूटामेट} + NADP^+ + H_2O$$

ii) निम्न कोशिकीय अमोनिया :

$$\text{ग्लूटामेट} + NH_3 + ATP \xrightarrow{GS} \text{ग्लूटेमीन} + ADP + Pi$$

$$\text{ग्लूटेमीन} + \alpha\text{-कीटोग्लूटेरेट} + \underset{(\text{या } Fd_{(red)})}{NADPH + H^+} \xrightarrow[\text{सिन्थेस}]{\text{ग्लूटामेट}} 2\,\text{ग्लूटामेट} + \underset{(\text{या } Fd_{(ox)})}{NADP^+} + H_2O$$

आप देख सकते हैं कि एक ही ऐमीनो अम्ल ग्लूटामेट अभिक्रिया के अंतिम उत्पाद के रूप में दोनों मार्गों से बनता है। दोनों पथ साथ-साथ क्रियाशील हो सकते हैं जैसा कि उच्चकोटि पादपों और यूकैरियोटिक शैवालों में और विकल्पतः (alternatively) भी, जैसा कि कुछ परपोषित (heterotrophic) आंत्रजीवाणुओं (enterobacteria) में है। सायनोबैक्टीरिया में अमोनिया स्वांगीकरण का मुख्य प्राथमिक मार्ग ग्लूटेमीन सिन्थेटेस-ग्लूटामेट सिन्थेटेस है।

अमोनिया स्वांगीकरण में शामिल इन दोनों एन्ज़ाइमों में अमोनिया के प्रति उनकी बंधुता में महत्वपूर्ण अंतर है। ग्लूटेमीन सिन्थेटेस के लिए यह बंधुता बहुत उच्च है और ग्लूटामेट डिहाइड्रोजेनेस के लिए अत्यधिक निम्न। दूसरे शब्दों में, ग्लूटामेट डिहाइड्रोजेनस मध्यस्थ मार्ग, उच्च कोशिकीय अमोनिया की परिस्थितियों में प्रकार्य करता है और ग्लूटेमीन सिन्थेटेस मध्यस्थ मार्ग, निम्न कोशिकीय परिस्थितियों के अंतर्गत प्रकार्य करता है (चित्र 15.9)।

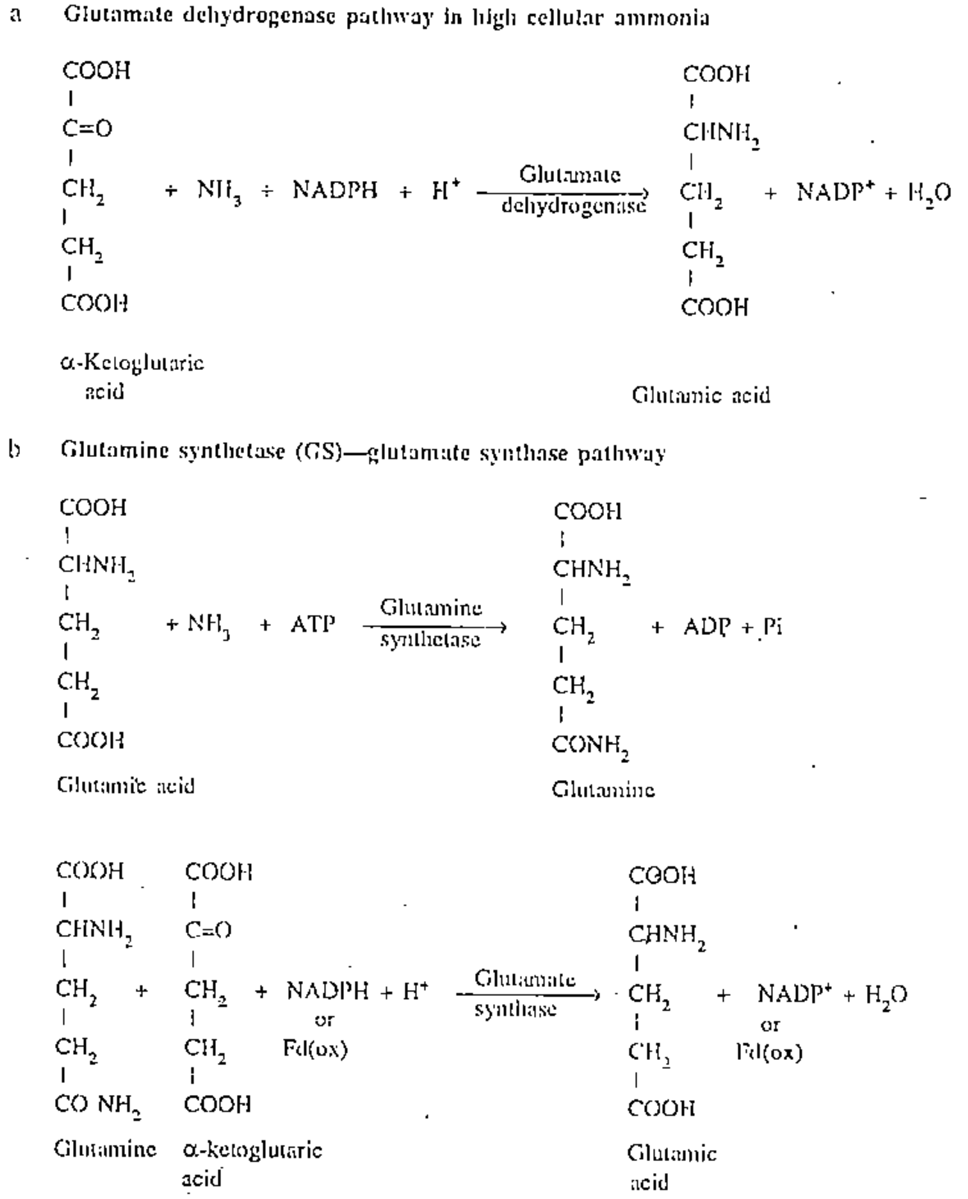

चित्र 15.9: a) ग्लूटामेट डिहाइड्रोजेनेस का पथ या मार्ग b) ग्लूटामेट सिन्थेस चक्र। ग्लूटेमीन सिन्थेटेस, ग्लूटामेट सिन्थेस।

ग्लूटामेट सिन्थेस मार्ग की प्रकृति अभिलक्षणात्मकतः यानि विशिष्टतः चक्रीय है जिसमें ग्लूटामेट अमोनिया स्वांगीकरण में ग्राही (receptor) और उत्पाद दोनों का कार्य करता है। अमोनिया स्वांगीकरण का यह पथ ग्लूटामेट सिन्थेस चक्र कहलाता है। इस मार्ग (GS) द्वारा ग्लूटामेट के एक अणु के नेट उत्पादन के लिए अमोनिया, अपचायक और α-कीटोग्लूटेरेट की जरूरत पड़ती है। इसलिए हम देखते हैं कि GDH पथ की तुलना में, अमोनिया स्वांगीकरण का यह पथ अधिक महंगा है। इसका कारण यह है कि GDH मार्ग की अपेक्षा इसमें ऊर्जा की लागत और अधिक सामग्री की आवश्यकता होती है।

15.5.2 अमोनिया का उद्ग्रहण

अपनी सांद्रण प्रवणता के अनुसार अमोनिया जैव झिल्लियों के पार मुक्त रूप से विसरित होती है। फिर भी, अमोनियम आयन (NH_4^+) को जैव झिल्ली को पार करने के लिए एक विशिष्ट परिवहन तंत्र की आवश्यकता पड़ती है। पिछले कुछ वर्षों में अमोनियम परिवहन तंत्र की सक्रियताओं और नियमन का अनेक नाइट्रोजन यौगिकीकारी तंत्रों में अध्ययन किया गया है। अमोनियम परिवहन तंत्र के अभिलक्षण नीचे दिए गए हैं:

i) अमोनियम परिवहन तंत्र के लिए अमोनिया दमनकारी है और नाइट्रोजन स्रोत के रूप में अमोनिया देकर उगाए गए संवर्धों में यह अनुपस्थित होता है,

ii) ऐसा लगता है कि पादप वृद्धि के लिए सीमित नाइट्रोजन, अमोनियम परिवहन तंत्र को प्रेरित करने के लिए एक सिग्नल है,

iii) अन्य परिवहन प्रक्रमों की तरह अमोनियम परिवहन तंत्र भी ऊर्जा की मांग वाला सक्रिय प्रक्रम है।

सायनोबैक्टीरिया जैसे निम्न कोटि पादपों की कोशिकाओं में अमोनिया के उच्चतर स्तर आविषालु (toxic) प्रभाव डालते हैं, इसलिए ऐसे तंत्रों में अमोनिया के उद्ग्रहण और स्वांगीकरण के बीच एक घनिष्ठ पारस्परिक संबंध होना चाहिए। दोनों प्रक्रमों की पारस्परिक निर्भरता को समझने के लिए और शोध कार्यों की आवश्यकता है। इस समय यह ध्यान दिलाना आवश्यक है कि उच्चकोटि पादपों में अमोनियम परिवहन प्रक्रम के अभिलक्षणों का अध्ययन नहीं किया गया है।

15.5.3 अमोनिया स्वांगीकरण का नियमन

एशिरिकिया कोलाई (Escherichia coli) और *क्लेब्सिएला एरोजीनस (Klebsiella aerogenes)* जैसे परपोषित जीवाणु अमोनिया स्वांगीकरण के GS-ग्लूटामेट सिन्थेस मार्ग का प्रचालन निम्न अमोनिया की परिस्थितियों में और GDH पथ का प्रचालन उच्च अमोनिया की परिस्थितियों में प्रेरित करते हैं। इस प्रकार ये दो मार्ग एक-दूसरे से एकदम अलग-अलग हैं। अमोनिया स्वांगीकरण के कौन-से मार्ग के प्रचालित होने की सम्भावना है यह कोशिकीय अमोनिया के स्तर से निर्धारित होता है। सायनोबैक्टीरिया जैसे तंत्रों में केवल GS-ग्लूटामेट सिन्थेस मार्ग होता है जो दोनों परिस्थितियों निम्न अथवा उच्च कोशिकीय अमोनिया में प्रकार्य करता है। उच्चकोटि के पादपों में अमोनिया के दो स्वांगीकारी मार्गों के उपापचयी नियमन में अमोनिया की भूमिका के बारे में जानकारी लगभग नहीं के बराबर है।

अमोनिया की आविषालुता से बचने के लिए प्राणी यूरिया चक्र द्वारा अत्यधिक अमोनिया से छुटकारा पा लेते हैं। पौधों में अमोनिया की आविषालुता से बचने के लिए इस तरह की कोई क्रियाविधि नहीं है। इसका कारण यह हो सकता है कि जमीन पर पौधों का विकास नाइट्रोजन सीमाबंधन परिस्थितियों में हुआ। लेकिन ऐसा लगता है कि पौधों ने नाइट्रोजन उपापचय के नियंत्रण विकसित कर लिए हैं जिससे अमोनिया का पुनःस्वांगीकरण निश्चित हो जाता है।

15.6 नाइट्रोजन स्वांगीकरण का नाइट्रोजन नियंत्रण

क्लेब्सिएला न्यूमोनी और *नोस्टॉक* जैसे N_2-यौगिकीकारक N_2, NO_3^- या NH_3 को नाइट्रोजन के स्रोत के रूप में देने पर उग सकते हैं। आप यह जानना चाहेंगे कि जब इन जीवों को तीनों स्रोत

साथ-साथ मिलते हैं तो यह नाइट्रोजन के तीन रूपों में से एक को किस प्रकार चुनकर स्वांगीकृत कर पाते हैं। यह मालूम है कि नाइट्रोजन के स्रोत के रूप में NO_3^- या N_2 की बजाय NH_4^+ को प्राथमिकता दी जाती है। अब प्रश्न यह है कि ऐसे N_2-यौगिकीकारक किस प्रकार NH_4^+ को प्राथमिकता देते हैं? विसरण द्वारा अमोनिया कोशिकाओं में आसानी से प्रवेश कर सकती हैं और कोशिकाएं इस प्रकार उपलब्ध अमोनिया को ग्लूटेमीन और ग्लूटामेट में स्वांगीकृत करती हैं। ऐसी परिस्थितियों के अंतर्गत ग्लूटेमीन/α-कीटोग्लूटेरेट का अनुपात बढ़ जाता है जो पर्याप्त नाइट्रोजन का संकेत है और यह NO_3^- स्वांगीकरण और N_2-यौगिकीकरण तंत्र दोनों का ही दमन करता है। यह ATP/ADP अनुपात के अनुरूप है जो कोशिका की ऊर्जा-स्थिति का सिग्नल देता है। उच्च ATP/ADP अनुपात यह संकेत देता है कि कोशिका के पास अपने उपापचय प्रकार्यों के लिए पर्याप्त ऊर्जा है। यही कारण है कि NH_4^+ में उगाई गई फलियाँ *राइज़ोबियम* के साथ ग्रंथिकाएं नहीं बनातीं। इस संबंध में यह बताना महत्वपूर्ण है, जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है कि *राइज़ोबियम*-फली सहजीवन की पहचान यांत्रिकी (recognition mechanics) NH_4^+ वाले माध्यम में उगाई गई फलियों के मूल रोम में नहीं पाई गई है। इसी प्रकार, जब किसी N_2-यौगिकीकारी को NO_3^- और N_2 दोनों दिए जाते हैं तो यह NO_3^- स्वांगीकरण को प्राथमिकता देता है और NO_3 स्वांगीकरण करने वाले ऐसे जीव N_2-यौगिकीकारक उपकरण पैदा नहीं करते। NO_3^- द्वारा N_2-यौगिकीकरण संदमन की क्रियाविधि वही है जैसी कि NH_4^+ द्वारा N_2-यौगिकीकरण संदमन के लिए वर्णन की गई है। अमोनियम द्वारा NO_3^- स्वांगीकरण दमन की क्रियाविधि वैसी ही है जैसी कि अमोनिया द्वारा N_2-यौगिकीकरण के दमन की होती है। इससे पता चलता है कि क्यों N_2-यौगिकीकरण, ग्रंथिका निर्माण और हेटेरोसिएट निर्माण उन परिस्थितियों में होता है जब नाइट्रोजन सीमित होती है न कि जब पौधों को नाइट्रोजन उपलब्ध होती है।

15.7 सल्फ़ेट स्वांगीकरण

आप जानते हैं कि पौधे मुख्यतः सल्फ़ेट (SO_4^{2-}) के रूप में सल्फ़र लेते हैं। यह सांद्रण प्रवणता के विरुद्ध सक्रिय रूप से लिया जाता है। सल्फ़र सिस्टिइन (cysteine) सिस्टीन (cystine) और मेथाइओनीन (methionine) जैसे ऐमीनों अम्लों का अंश है। पौधों में दो सक्रियित (activated) सल्फ़र यौगिक होते हैं जो सल्फ़ेट स्वांगीकरण में महत्वपूर्ण हैं। ये हैं — ऐडेनोसिन 5′ फ़ॉस्फ़ोसल्फ़ेट (APS) और 3′ फ़ॉस्फ़ोऐडेनोसिन, 5′ फ़ॉस्फ़ोसल्फ़ेट (PAPS) (चित्र 15.10)। ये ATP तुल्यरूप हैं। पौधों में सल्फ़ेट एस्टर भी होते हैं जैसे कि पॉलिसैकेराइड सल्फ़ेट और सरसों के तेल का ग्लाइकोसाइड।

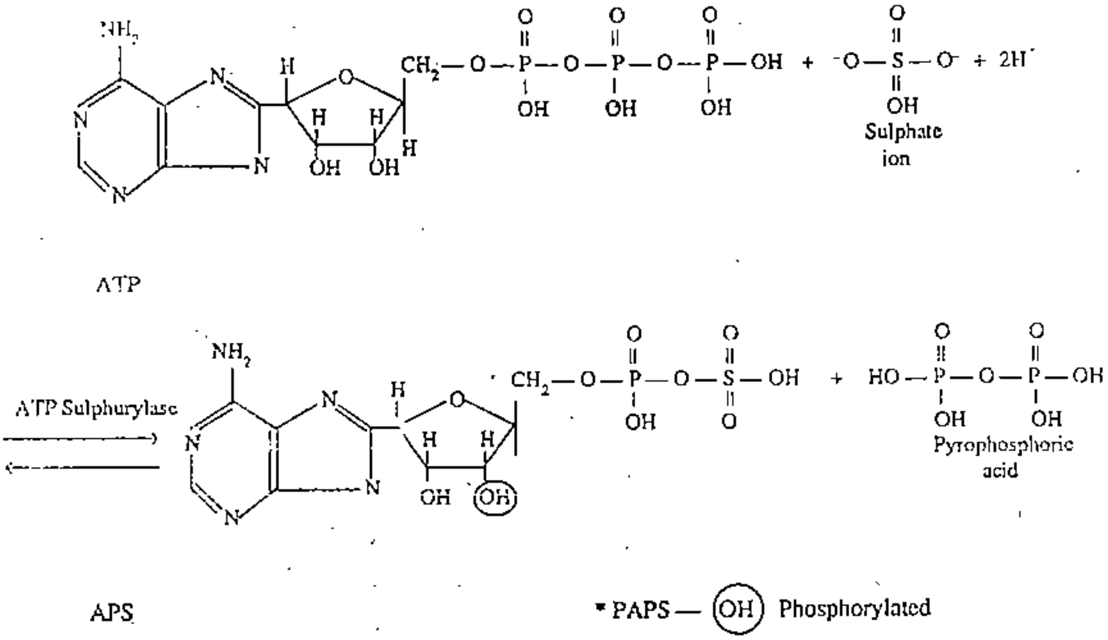

चित्र 15.10: ऐडेनोसिन 5′ फ़ॉस्फ़ोसल्फ़ेट (APS)। 3′ फ़ॉस्फ़ोऐडेनोसिन 5′ फ़ॉस्फ़ोसल्फ़ेट (PAPS) में पेन्टोस का 3′ हाइड्रॉक्सी समूह भी फ़ॉस्फ़ेटीकृत होता है (चक्र किया हुआ)।

कुछ अवायुजीवी जीवाणु जैसे कि *डीसल्फ़ोवीब्रिओ* (*Desulfovibro*), श्वसन के दौरान सल्फ़ेट को इलेक्ट्रॉनों के अंतस्थ ग्राही (terminal acceptor) के रूप में काम में लाकर ATP पैदा करते हैं। यह **सल्फ़ेट श्वसन** (sulphate respiration) कहलाता है। सल्फ़ेट का ऐसा अपचयन विस्वांगीकारी अपचयन (dissimilatory reduction) कहलाता है। पौधों द्वारा सल्फ़ेट अपचयित करने की दूसरी विधि सल्फ़ेट स्वांगीकरण है जिसमें सल्फ़ेट थाइओल (thiol) समूह में अपचित कर दिया जाता है। यह समूह कई कोएन्ज़ाइमों (coenzymes) और ऐमीनो अम्लों — सिस्टिइन और मैथाइओनीन में पाया जाता है। जैसा कि आप सीख चुके हैं बैक्टिरियल प्रकाश संश्लेषण में हाइड्रोजन सल्फ़ाइड और अन्य अपचित अकार्बनिक सल्फ़र यौगिक प्रकाशसंश्लेषी इलेक्ट्रॉन दाताओं के रूप में काम में लाए जाते हैं।

SO_4^{2-} का कार्बनिक यौगिकों में स्वांगीकरण नीचे दिए गए दो अपचायी चरणों में होता है।

$$\underset{\text{सल्फ़ेट}}{SO_4^{2-}} \longrightarrow \underset{\text{सल्फ़ाइट}}{SO_3^{2-}} \longrightarrow \underset{\text{सल्फ़ाइड}}{S^{2-}}$$

कोशिका में प्रवेश करने पर सल्फ़ेट निम्नलिखित समीकरण के अनुसार सक्रियित PAPS में बदल जाता है :

$$SO_4^{2-} + ATP \xrightarrow[\text{सल्फ़्यूरिलेस}]{ATP} AMP-SO_4^{2-}\ (APS) + PPi$$

$$APS + ATP \xrightarrow[\text{काइनेस}]{APS} PAPS + ADP$$

$$PPi \xrightarrow[\text{पाइरोफ़ॉस्फ़ेटेस}]{\text{अकार्बनिक}} 2\ Pi$$

सल्फ़ेट APS स्वांगीकरण पथ में सीधे ही प्रवेश कर सकता है अथवा APS काइनेस एन्ज़ाइम की उपस्थिति में इस पर ATP के दूसरे अणु द्वारा क्रिया हो सकती है (ऊपर दिए गए समीकरण को देखिए) और यह PAPS उत्पन्न करता है जो सक्रियित सल्फ़ेट का दूसरा रूप दर्शाता है। आप देख चुके हैं कि नाइट्रेट या कार्बन डाइऑक्साइड के स्वांगीकरण अपचयन में ATP की माँग करने वाली ऐसी अभिक्रियाओं की आवश्यकता नहीं पड़ती।

कोशिकाओं में सल्फ़ेट की कार्बनिक पदार्थों के साथ होने वाली सभी एस्टरीकरण (esterification) अभिक्रियाओं के लिए PAPS काम में लाया जाता है। उच्च कोटि पादपों, शैवालों और सायनोबैक्टीरिया में सल्फ़ेट का अपचयन APS पथ द्वारा होता है, PAPS पथ खमीर (yeast) और *एशेरिकिया कोलाई* जैसे जीवों में प्रचालित होता है।

प्रकाशसंश्लेषी तंत्रों में सल्फ़ाइट भी सल्फ़र का स्रोत हो सकता है लेकिन स्वांगीकारी सल्फ़ाइट अपचयन का पथ, सल्फ़ेट स्वांगीकरण के मार्ग से अलग रास्ता अपनाता है और यह एक ही एन्ज़ाइम द्वारा होता है जिसे सल्फ़ाइट रिडक्टेस कहते हैं। नाइट्राइट रिडक्टेस की तरह यह एन्ज़ाइम भी सल्फ़ाइट को सल्फ़ाइड में बदलने के लिए 6 इलेक्ट्रॉन वाला अभिक्रिया चरण उत्प्रेरित करता है। PAPS पथ में सल्फ़ेट के सल्फ़ाइड अपचयन में सल्फ़ाइट मध्यवर्ती है और यहाँ सल्फ़ेट का अपचयन सल्फ़ाइट रिडक्टेस द्वारा उत्प्रेरित होता है जिसके फलस्वरूप सल्फ़ाइड बनता है।

$$SO_3^{2-} + 6e^- + 6H^+ \xrightarrow[\text{रिडक्टेस}]{\text{सल्फ़ाइट}} S^{2-} + 3H_2O$$

इस बात की बहुत अधिक संभावना है कि सल्फ़ेट के सल्फ़ाइड अपचयन में SO_4^{2-} के सक्रियित रूप — APS और PAPS सीधे शामिल हों। इस बात का भी प्रमाण है कि प्रकाशसंश्लेषी ऊतक सल्फ़ाइट के सल्फ़ाइड अपचयन में अपचित फ़ेरोडॉक्सिन शामिल करते हैं।

सल्फ़हाइड्रेलेस एन्ज़ाइम सल्फ़ाइड के सेरीन (serine) में समावेशन को उत्प्रेरित करके सिस्टिइन बनाती है। सिस्टीन और मेथाइओनीन दो अन्य ऐमीनो अम्ल सिस्टिइन से संश्लेषित होते हैं।

$$\text{सेरीन} + S^{2-} \longrightarrow \text{सिस्टिइन}$$

सल्फ़ेट एस्टर ऐल्कोहॉल के साथ PAPS की अभिक्रियाओं से बनते हैं जैसाकि नीचे दिखाया गया है :

$$ROH + PAPS \longrightarrow ROSO_3^- + PAP$$

अकार्बनिक सल्फ़र उपापचय की अपेक्षा अकार्बनिक नाइट्रोजन के नियमनकारी पहलुओं को अच्छी तरह समझा जा चुका है। वैज्ञानिक अब सल्फर उपापचय की ओर अपना ध्यान दे रहे हैं।

15.8 नाइट्रोजन, कार्बन और सल्फर के उपापचयी पारस्परिक संबंध

पौधे जैव रासायनिक और संरचनात्मक घटनाओं के फलस्वरूप जो कि सुनियोजित और नियमित है अभिलक्षणिक व्यष्टियों में वर्धित और परिवर्धित होते हैं। व्यष्टि पादप के संघटन में शामिल प्रमुख तत्व कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और सल्फ़र हैं। पौधे इन तीन तत्वों को ऑक्सीकृत रूप में लेते हैं। स्वांगीकरण के लिए इनका अपचयन जरूरी है। कार्बन डाइऑक्साइड की तरह नाइट्रेट और सल्फेट के स्वांगीकरण के लिए ATP और अपचायक की आवश्यकता होती है ऐसा लगता है कि पौधों ने निश्चित रूप से तीन स्वांगीकरण अपचयनों को प्रकाश संग्राही (light harvesting) प्रकाशसंश्लेषी अभिक्रियाओं के साथ समाकलित करने की क्रियाविधि विकसित कर ली है। यह समाकलन, यूकैरियोटिक शैवालों और उच्चकोटि के पौधों ने अधिकांश स्वांगीकारी अभिक्रियाओं को क्लोरोप्लास्ट तक सीमित करके प्राप्त किया।

प्रकाशसंश्लेषण द्वारा उत्पन्न ATP और अपचायक (फेरोडॉक्सिन या NADPH) मिलकर पौधों की स्वांगीकारी शक्ति (assimilatory power) निर्मित करते हैं। प्रकाशसंश्लेषण की प्रकाशसंश्लेषी अभिक्रियाएं ATP और अपचायक उत्पन्न करती हैं तथा अप्रकाशीय अभिक्रियाएं कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रेट और सल्फेट के अपचायी (reductive) स्वांगीकरण से संबंधित हैं।

पौधों में कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फ़र तीनों ही तत्व सल्फ़र ऐमीनो अम्लों में साथ-साथ हो सकते हैं। इसलिए कार्बन डाइऑक्साइड नाइट्रेट और सल्फ़ेट के कार्बनिक रूप में समाकलित स्वांगीकरण को नियंत्रित करने के लिए नियामक साधन होना चाहिए। वैज्ञानिक अध्ययनों के परिणाम भी इस बात का समर्थन करते हैं। प्रकाशसंश्लेषी कार्बन डाइऑक्साइड स्वांगीकरण के संदमन के साथ-साथ नाइट्रेट स्वांगीकरण का भी संदमन हो जाता है। इसका कारण यह है कि α-कीटोग्लूटेरेट जैसे यौगिकों का कार्बन ढांचा अंततः कार्बनिक कार्बन से बनता है जो कि प्रकाश संश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड से उत्पन्न होता है। ग्रंथिकित फलियों द्वारा N_2-स्वांगीकरण भी ग्रंथियों तक पहुंचने वाले प्रकाश-संश्लेषणज के अंश और मात्रा यानि कार्बनिक कार्बन पर निर्भर करता है। ऐसे प्रमाण भी उपलब्ध है जो यह स्पष्ट करते हैं कि कार्बन नियंत्रण की तरह अकार्बनिक नाइट्रोजन उपापचय का सल्फ़र द्वारा नियंत्रण होता है। सल्फ़ेट परिसीमन के अंतर्गत प्रोटीन संश्लेषण घट जाता है और सल्फेट खत्म हो जाने के बाद रुक जाता है। सल्फ़र के अभाव के दौरान, नाइट्रेट या अमोनिया मुख्यता मुक्त रूप में न कि प्रोटीन आबद्ध ऐमीनो अम्लों के रूप में स्वांगीकृत होती है। इसका कारण यह है कि सल्फ़र की अनुपस्थिति में सिस्टिइन और मेथाइओनीन (ऐमीनो अम्ल जिनमें सल्फ़र होती है) का संश्लेषण नहीं हो सकता और प्रोटीन में डाइसल्फाइड पुल (bridges) यानि बंध नहीं बन सकते। इन परिस्थितियों में वरीयतः संश्लेषित कुछ ऐमीनो अम्ल हैं — आर्जिनिन, ग्लूटेमीन और ऐलानिन। अब अकार्बनिक कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फ़र उपापचय की पारस्परिक निर्भरता को नियंत्रित करने वाले प्रमुख नियामक साधनों का विस्तार से अध्ययन करना और उन्हें समझना आवश्यक है क्योंकि व्यापारिक स्तर पर पादप उत्पादों के वांछित उत्पादन इन्हीं पर निर्भर हैं।

बोध प्रश्न 4

क) i) पौधों में अमोनिया स्वांगीकरण के दो मार्ग बताइए।

....

....

ii) दोनों में से कौन-सा मार्ग कोशिका में अमोनिया के उच्च सांद्रण में कार्यशील होता है?

....

iii) ऊर्जा लागत और सामग्री की मांग के मामले में दोनों में से कौन-सा मार्ग महंगा है?

....

ख) i) NH_4^+, NO_3^- और N_2 में से किस स्रोत को पौधे अधिक पसंद करते हैं?

....

ii) पौधों में कौन-सा सिग्नल NO_3^- स्वांगीकरण और N_2-यौगिकीकरण दोनों ही का दमन करता है?

....

....

ग) पौधों में दो सक्रियित सल्फर यौगिकों के नाम बताइए। सल्फर स्वांगीकरण में उनकी क्या भूमिका है?

....

....

....

15.9 सारांश

- जैव N_2-यौगिकीकरण प्रोकैरिओटी का अभिलक्षण है और यह प्रक्रम मुक्त-जीवी अवस्था में तथा अनेक प्रकार के यूकैरिओटी साथियों के साथ सहजीवी अवस्थाओं में होता है।
- नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम दो प्रकार्यात्मक घटकों (functional component) से बना है। ये हैं — डाइनाइट्रोजिनेस रिडक्टेस (Fe-प्रोटीन) और डाइनाइट्रोजिनेस (Fe-Mo-प्रोटीन)। ये दोनों ही N_2-यौगिकीकरण, ऐसीटिलीन अपचय, प्रोटॉन अपचय और HCN अपचयन के लिए अनिवार्य हैं।
- नाइट्रोजिनेस अभिक्रिया में, प्रति स्थानांतरित इलेक्ट्रॉन के लिए ATP के 2 या 3 अणुओं की खपत होती है।
- ऑक्सीजन, नाइट्रोजिनेस सक्रियता और संश्लेषण दोनों ही की संदमक है। N_2-यौगिकीकारकों ने O_2 की समस्या से निपटने के लिए एक युक्ति निकाल ली है। यह युक्ति है : *ऐजोटोबैक्टर* में श्वसनीय और संरूपीय रक्षण, फलियों की ग्रंथिकाओं में लेगहीमोग्लोबिन और नोस्टॉक में हेटेरोसिस्ट।
- नाइट्रेट और अमोनिया दोनों ही N_2-यौगिकीकरण के शक्तिशाली संदमक हैं। इनकी उपस्थिति में N_2-यौगिकीकरण तंत्र बिल्कुल ही नहीं बनता। उद्ग्रहण हाइड्रोजिनेस सक्रियता, नाइट्रोजन सक्रियता के स्थल से हाइड्रोजन को हटाने की एक युक्ति है जो N_2-यौगिकीकरण और हाइड्रोजन उत्पादन की अभिक्रियाओं को साथ-साथ चलाती है।
- *राइज़ोबियम*-फली सहजीवी N_2-यौगिकीकरण तंत्र में, जीनों के तीन वर्ग N_2-यौगिकीकरण को *स्व स्थाने (in situ)* नियंत्रित करते हैं। ये हैं ग्रंथी जीन (nod gene), निफ़ जीन (nif gene) और यौगि ज़ीन (fix gene)।
- नाइट्रोजिनेस सक्रियता को मापने की सबसे सामान्य तकनीक ऐसीटिलीन अपचय है।
- नाइट्रेट स्वांगीकरण दो एन्ज़ाइमी चरणों में होता है। नाइट्रेट का नाइट्राइट में अपचयन नाइट्रेट रिडक्टेस द्वारा उत्प्रेरित होता है और नाइट्राइट का अमोनिया में अपचयन नाइट्राइट रिडक्टेस द्वारा होता है। पौधों में नाइट्रेट रिडक्टेस के लिए NADH अपचायक है, कवकों में NADPH अपचायक है और सायनोबैक्टीरिया में अपचित फेरीडॉक्सिन अपचायक है। कवकों में नाइट्राइट रिडक्टेस के लिए NADPH अपचायक है और पौधों तथा सायनोबैक्टीरिया में अपचित फेरेडॉक्सिन अपचायक है।

- नाइट्रेट रिडक्टेस प्रमुखतया कोशिकाद्रव्य में स्थित होता है और नाइट्राइट रिडक्टेस एकमात्र क्लोरोप्लास्ट में स्थित होता है।
- नाइट्रेट स्वांगीकरण का प्रेरक और दमनकारी नियंत्रण संश्लेषी स्तर तथा सक्रियण स्तर दोनों पर होता है। सायनाइड, हाइड्रॉक्सिल ऐमीन, सुपरऑक्साइड मूलक (radical) द्वारा एन्ज़ाइम सक्रियता का उत्क्रमणीय संदमन और नीले प्रकाश द्वारा पुनः सक्रियण से नियमन होता है।
- C_4 पौधों में नाइट्रेट स्वांगीकरण पर्णमध्य कोशिकाओं में और CO_2 स्वांगीकरण पूलाच्छद कोशिकाओं के भीतर स्थानीकृत होता है यानी स्थित होता है।
- पौधे नाइट्रोजन के स्रोत के रूप में NO_3^- या N_2 की अपेक्षा अमोनिया को प्राथमिकता देते हैं। यह नाइट्रेट स्वांगीकरण और N_2-यौगिकीकरण के संदमन नियंत्रण (repressor control) द्वारा होता है।
- अमोनिया स्वांगीकरण के दो प्रमुख एन्ज़ाइम हैं — ग्लूटामिक अम्ल डिहाइड्रोजिनेस और ग्लूटेमीन सिन्थेटेस।
- NO_3^- की तरह सल्फ़ेट भी अपचयनतः स्वांगीकृत होती है। NO_3^- से भिन्न स्वांगीकारी अपचयन के मार्ग में प्रवेश करने से पहले इसे ATP निर्भर सक्रियण से गुजरना पड़ता है।
- कृषि के लिए N, C और S पोषण के उपापचयी पारस्परिक संबंधों को स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है।

15.10 अंत में कुछ प्रश्न

1) प्रयोगात्मकतः आप N_2-यौगिकीकारकों को अयौगिकीकारकों से कैसे अलग करेंगे?

....
....
....
....
....
....
....

2) *नोस्टॉक* और *ऐनाबीना* में N_2-यौगिकीकरण के लिए हेटेरोसिस्ट अनिवार्य क्यों है?

....
....
....
....
....
....
....

3) ग्रंथिकाओं में लेगहीमोग्लोबिन की क्या भूमिका है?

....
....
....
....
....
....

4) N_2-यौगिकीकरण और नाइट्रेट स्वांगीकरण के लिए Mo एक अनिवार्य पोषक तत्व क्यों है?

....

....

....

....

....

....

5) नाइट्रेट श्वसन और सल्फ़र श्वसन से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

....

15.11 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) i) ग, ii) क, iii) ख, iv) च, v) घ

ख) i) ग, ii) घ, iii) क, iv) ख

ग) i) स, ii) ग, iii) स, iv) स, v) ग vi) ग

घ) i) पॉलिसैकेराइड, लेक्टिन, ii) लेक्टिन पॉलिसैकेराइड, iii) अमोनिया, ग्लूटामिन सिंथेटेज़ एन्ज़ाइम, iv) पादप मूल

2) क) i) ख, ग और च, ii) क और घ

ख) i) हेटेरोसिस्ट, ii) इलेक्ट्रॉन अंतरण, ATP iii) हाइड्रोजन, iv) हाइड्रोजन, v) लेगहीमोग्लोबिन, भंडार

ग) i) ख, ii) ग, iii) क

3) क) i) ग, घ, च, ii) क, ख

ख) i) पत्तियों ii) 2, iii) 6, iv) थायलैकॉइड झिल्लियों, v) कोशिका द्रव्य, क्लोरोप्लास्ट, vi) पर्णमध्य कोशिकाओं, पूलाच्छद कोशिकाएँ, vii) NO_3^-

4) क) i) ग्लूटामेट डिहाइड्रोजिनेस पथ और ग्लूटेमीन सिन्थेटेस-ग्लूटामेट सिन्थेस पथ

ii) ग्लूटामेट डिहाइड्रोजिनेस पथ

iii) GS-ग्लूटामेट सिन्थेस

ख) i) NH_4^+

ii) ग्लूटेमीन/α-कीटोग्लूटेरेट का उच्च अनुपात

ग) ऐडेनोसिन 5′-फ़ॉस्फ़ोसल्फेट (APS) और 3′-फ़ॉस्फ़ोऐडेनोसिन 5′-फ़ॉस्फ़ोसल्फ़ेट (PAPS)

ये कोशिका में कार्बनिक पदार्थों का सल्फ़ेट द्वारा एस्टरीकरण के लिए काम में लाए जाते हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1) नाइट्रोजन-यौगिकीकारकों को नाइट्रोजन-अयौगिकीकारकों से निम्नलिखित प्रयोग द्वारा अलग किया जा सकता है। *नोस्टॉक* या *ओसिलेटेरिया* जैसे सायनोबैक्टीरिया लीजिए और उन्हें NO_3^- या NH_4^+ रहित खनिज वृद्धि माध्यम (mineral growth medium) में अलग-अलग उगाइए। वृद्धि के लिए इन दोनों संवर्धों (cultures) को प्रकाशसंश्लेषी परिस्थितियों में ऊष्मायित (incubate) कीजिए। बाहरी नाइट्रोजन स्रोत के बिना उगते रहने वाला संवर्ध N_2-यौगिकीकारक होगा और संवर्धित नहीं होने वाला N_2-अयौगिकीकारक होगा।

2) N_2-यौगिकीकरण के एन्ज़ाइम नाइट्रोजिनेस के लिए O_2-रक्षण साधन होना आवश्यक है। *नोस्टाक* और *ऐनाबीना* में यह साधन हेटेरोसिस्ट द्वारा होता है जो कि एक विशिष्टीकृत संरचना है। इसमें PS II सक्रियता विभेदन के दौरान समाप्त हो जाती है। इसलिए हेटेरोसिस्ट में नाइट्रोजिनेस का रक्षण ऑक्सीजन के कम तनाव (tension) के कारण होता है। हेटेरोसिस्ट के बिना इन शैवालों द्वारा N_2 को यौगिकीकृत करना संभव नहीं होगा क्योंकि शैवाल के हरे भाग ऑक्सीजन पैदा करते हैं जो कि N_2-यौगिकीकारी एन्ज़ाइम की संदमक है।

3) ऑक्सीजन नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम की संदमक है। लेगहीमोग्लोबिन की प्रमुख भूमिका नाइट्रोजिनेस एन्ज़ाइम के आसपास की ऑक्सीजन को बांधना है। यह ऑक्सीजन के भंडार के रूप में भी काम करती है और वायु-श्वसन के दौरान ऊर्जा की उच्च मांग को पूरी करने के लिए ऑक्सीजन सप्लाई करती है।

4) Mo आयन, नाइट्रोजिनेस और नाइट्रेट रिडक्टेस एन्ज़ाइम के घटक I का भाग है। यह N_2-यौगिकीकरण के अपचयी प्रक्रम में शामिल है। Fe की तरह Mo आयन में भी उपचित से अपचित स्थिति में उत्क्रमणीयतः परिवर्तन हो सकता है और यह फेरोडॉक्सिन, फ्लोवोडॉक्सिन, NAD(P)H जैसे अपचायकों से N_2 या NO_3^- को इलेक्ट्रॉन स्थानांतरित कर सकता है। इस प्रकार यह N_2-यौगिकीकरण में इलैक्ट्रॉन के स्थानांतरण में सहायता करता है।

5) श्वसन में ATP उत्पन्न करने के लिए O_2 की बजाय नाइट्रेट या सल्फ़ेट भी इलेक्ट्रॉनों के अंतस्थ ग्राही (terminal acceptor) के रूप में काम में लाए जाते हैं। तद्नुसार इस प्रकार के श्वसन को नाइट्रेट और सल्फ़ेट श्वसन कहते हैं।

इकाई 16 पादप हॉर्मोन

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
16.2 पादप हॉर्मोनों की खोज और विशेषताएं
ऑक्सिनें
जिबरेलिनें
साइटोकाइनिनें
एथिलीन
एब्सिसिक अम्ल
अन्य वृद्धि नियामक
16.3 पादप हॉर्मोन कैसे कार्य करते हैं?
16.4 पादप हॉर्मोनों का अनुप्रयोग
16.5 सारांश
16.6 अंत में कुछ प्रश्न
16.7 उत्तर

16.1 प्रस्तावना

11 से 15 तक की इकाइयों में आपने पौधों में पोषण के बारे में जानकारी प्राप्त की। इस तथा अगली इकाई में हम पादप वृद्धि और परिवर्धन (plant growth and development) के बारे में बताएंगे।

आपको अक्सर आश्चर्य हुआ होगा कि एक अंकुरित पौध में मूल (root) नीचे की दिशा में और प्ररोह (shoot) ऊपर की दिशा में क्यों बढ़ते हैं। ऐसा क्यों है कि कुछ फूल दिन में तो खिलते हैं लेकिन रात में बंद हो जाते हैं, मानो वे सो रहे हों। एक सेब के सड़ने से टोकरी के बाकी अन्य सेब क्यों सड़ जाते हैं और पत्ते झड़ने का क्या कारण है? कोशिका विभाजन और कोशिका दैर्घ्य वृद्धि (cell elongation) के प्रक्रम (process) किस प्रकार नियंत्रित होते हैं? ये कुछ प्रश्न उन अनेक प्रश्नों में से हैं जिनका उत्तर देना आसान नहीं है क्योंकि इनमें से अधिकतर परिघटनाएं (phenomena) तीन नियंत्रण स्तरों के बीच जटिल पारस्परिक क्रियाओं (interactions) द्वारा नियंत्रित होती है। ये स्तर हैं — आनुवंशिक (genetic), हॉर्मोनी और पर्यावरणीय। किसी जाति (species) में कोशिका की गतिविधियों और जीवों के विभिन्न अभिलक्षणों को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न जीन एकदम सही समय पर चालू (turned on) किये जाते हैं। हॉर्मोन, पौधों और प्राणियों में वृद्धि और परिवर्धन का समन्वय करने वाले शक्तिशाली रसायनों का एक वर्ग है। वे लक्ष्य कोशिकाओं में कोशिकीय अभिक्रिया (cellular reaction) दाग (trigger) देते हैं यानि कि शुरू कर देते हैं और परिवर्धन की एक विशेष अवस्था पर जो जीन प्रगट या व्यक्त होने चाहिए उन्हें निर्धारित भी करते हैं। प्रकाश और तापमान जैसे पर्यावरणीय कारक भी वृद्धि और परिवर्धन का नियंत्रण करते हैं। इनके बारे में आगामी इकाई में बताया जाएगा।

इस इकाई में हम आपको पादप हॉर्मोनों के विभिन्न समूहों, उनकी खोज किस प्रकार हुई तथा पौधों की वृद्धि तथा परिवर्धन में वे क्या भूमिका निभाते हैं, इन सबके बारे में बताएंगे। अंत में हम कृषि में पादप हॉर्मोनों के अनुप्रयोग (application) की भी चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- जिन प्रयोगों से ऑक्सिनों की खोज हुई, उनका वर्णन कर सकेंगे,

- [illegible] का वर्णन कर सकेंगे,
- ऑक्सिनों के जैव-आमापन (bioassay) के लिए काम में लाई गई वैन्ट की प्रायोगिक तकनीक का वर्णन कर सकेंगे,
- पादप हॉर्मोनों के पाँच समूहों, उनके उत्पाद के स्थल और पादप वृद्धि तथा परिवर्धन में उनकी भूमिका बता सकेंगे,
- पादप हॉर्मोनों के कार्य की सम्भावित क्रियाविधि की चर्चा कर सकेंगे, और
- पादप हॉर्मोनों के वाणिज्यिक अनुप्रयोगों का वर्णन कर सकेंगे।

16.2 पादप हॉर्मोनों की खोज और विशेषताएँ

[illegible] समूह—ऑक्सिनें, [illegible] साइटोकाइनिनें, [illegible] और [illegible] रसायनों को पादप वृद्धि नियामक [illegible] करते हैं।

आज तक पादप हॉर्मोनों के पांच प्रमुख वर्गों का अन्वेषण किया जा चुका है। ये हैं — ऑक्सिनें, जिबरेलिनें, साइटोकाइनिनें, एबसिसिक अम्ल (abscisic acid) और एथिलीन। यह संभव है कि पौधों में मौजूद बहुत से दूसरे वृद्धि नियामकों (growth regulators) को भविष्य में पादप हॉर्मोनों के रूप में वर्गीकृत किया जाए। हॉर्मोन की सामान्य परिभाषा में सभी पादप हॉर्मोन सही नहीं बैठते। हॉर्मोन वह रसायन है जो किसी जीव के एक भाग में संश्लेषित होता है और जीव में किसी अन्य लक्ष्य ऊतक (target tissue) में विशिष्ट अनुक्रिया को उद्दीप्त (stimulate) या संदमित (inhibit) करता है।

अधिकांश प्राणी हॉर्मोन लक्ष्य ऊतक में, अत्यधिक विशिष्ट अनुक्रियाओं को शुरू कर देते हैं या कहिए चालू कर देते हैं। लेकिन प्राणी हॉर्मोनों की तुलना में पादप हॉर्मोनों की अनुक्रिया (response) बहुत अलग है। वृद्धि और परिवर्धन में पादप हॉर्मोनों की भूमिका के महत्वपूर्ण लक्षण नीचे दिए गए हैं :

i) हॉर्मोन पौधे के एक भाग में एक अनुक्रिया और दूसरे भाग में एकदम से भिन्न अनुक्रिया शुरू कर सकते हैं।

ii) यह देखने में आया है कि प्रत्येक हॉर्मोन अलग-अलग अनुक्रिया पैदा करता है। परंतु दो या दो से अधिक विभिन्न हॉर्मोनों का प्रभाव उनकी पारस्परिक क्रिया द्वारा प्रायः ही प्रत्याशित (expected) या भिन्न अनुक्रिया उत्पन्न करता है। वे योगवाही रूप से (synergistically) अथवा विरोधी रूप से (antagonistically) कार्य करते हैं।

iii) वर्ष के भिन्न-भिन्न समय में या पौधे की विभिन्न परिवर्धी अवस्थाओं के दौरान या विभिन्न सांद्रण (concentration) से हॉर्मोन का प्रभाव बदलता रहता है।

इन भिन्नताओं के कारण वृद्धि और परिवर्धन में पादप हॉर्मोनों की भूमिका के बारे में उठने वाले विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर दे पाना मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार यह क्षेत्र पादप कार्यकी में एक सबसे ज्यादा चुनौती भरा क्षेत्र है।

16.2.1 ऑक्सिनें

पादप कार्यकी में ऑक्सिन की खोज एक चित्ताकर्षक विषय है। चार्ल्स डार्विन (Charles Darwin) और उनके पुत्र फ्रांसिस (Francis) द्वारा 1880 के आसपास किए गए परिष्कृत प्रयोगों से ऑक्सिन हॉर्मोन का पता चला। उन्होंने देखा कि अगर घास (*फालैरिस-Phalaris*) के प्रांकुर-चोल (coleoptile) को एक तरफ से प्रकाशित किया जायं तो यह प्रकाश की ओर मुड़ (bend) जाता है। लेकिन, अगर अग्र क्षेत्र (tip region) काट कर अलग कर दिया जाएं तो वह नहीं मुड़ता (चित्र 16.1)। सन् 1880 में प्रकाशित अपनी पुस्तक "द पावर ऑफ मूवमेन्ट इन प्लान्ट्स" (यानि पौधों में गति की शक्ति) में डार्विन ने लिखा कि ऊपरी भाग में, कोई पदार्थ है जो अपने प्रभाव को निचले भाग की ओर रोशनी डालने पर संचारित करता है जिससे यह मुड़ जाता है।

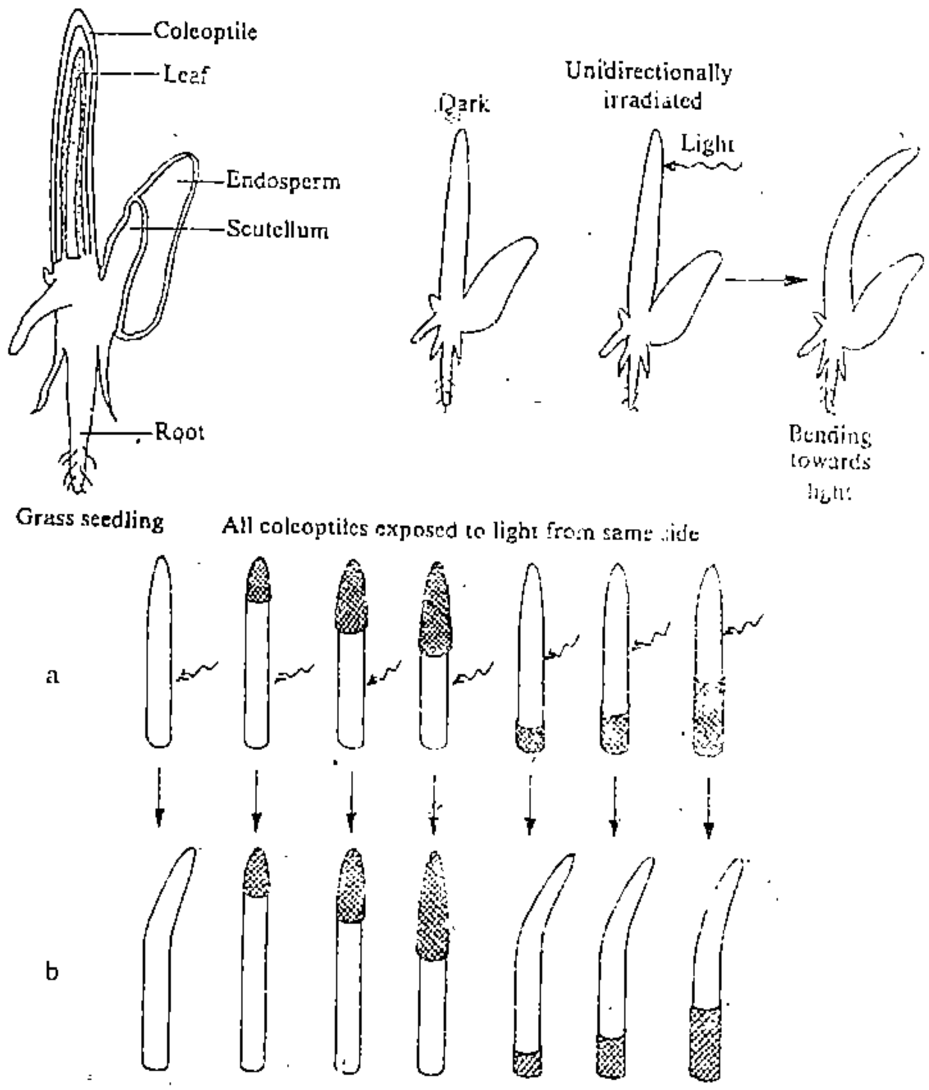

चित्र 16.1: कैनरी घास (canary grass) प्रांकुर-चोल पर किए गए डार्विन के प्रयोग : a) प्रकाशसंवेदी (photosensitive) क्षेत्र निर्धारित करने के लिए विभिन्न भागों को धातु की टोपियों (metal caps) से ढकना। b) प्रत्येक को प्रकाशित करने के परिणाम।

उद्दीपक की गति समझने के लिए पीटर बायसेन-जेन्सन (Peter Boysen Jensen) नामक डैनिश वैज्ञानिक और ए.पाल नामक (A. Paal) हंगरी के वैज्ञानिक ने डार्विन के प्रेक्षण पर और आगे प्रयोग किए (चित्र 16.2)। एक प्रयोग (a) में उन्होंने ठूंठ (stump) और कटे अग्र भाग के बीच में एक जिलेटिन (gelatin) का खंड (block) घुसेड़ दिया और दूसरे प्रयोग (b) में अभ्रक (mica) की एक पतली चादर (sheet) घुसेड़ दी। (a) में प्रांकुर-चोल में तो वक्रता (curvature) आई लेकिन (b) में नहीं आई क्योंकि उद्दीपक जिलेटिन से होकर तो नीचे जा सका लेकिन अभ्रक से होकर नहीं। लेकिन जब अभ्रक प्रकाशित पार्श्व (side) या अप्रकाशित पार्श्व पर आधी दूरी तक ही घुसेड़ी गई तो वक्रता केवल तभी हुई जब अभ्रक प्रकाशित तरफ रखा गया। इन प्रेक्षणों से पता चलता है कि उद्दीपन अंधेरे वाली तरफ दैर्ध्यवृद्धि को बढ़ावा देता है। ए. पाल ने देखा कि जब अंधेरे में, कटे अग्र भाग को भले ही किसी भी तरफ रखा गया तो वक्रता विपरीत दिशा में हुई। इसका अर्थ यह है कि अग्र भाग में मौजूद उद्दीपक सीधे-ही नीचे वाली कोशिकाओं को प्रभावित करता है। बाद में 1926 में एक डच वैज्ञानिक, एफ. डब्ल्यू वैन्ट (F.W. Went) ने पता लगाया कि यह उद्दीपक एक विसरणशील (diffusible) पदार्थ है।

वैन्ट ने प्रांकुर चोल के अग्र भागों को काट कर ऐगार खंडों (agar blocks) पर रखकर इस पदार्थ को अधिक मात्रा में जमा किया। तब उन्होंने ऐगार के छोटे-छोटे वर्ग लिए और उन्हें सिर कटी (decapitated) पौद के कटे हुए छोर (cut ends) पर उत्केन्द्रतः (eccentrically) रखा। खंड रखे जाने के बाद आमतौर पर वक्रता एक घंटे के भीतर हुई (चित्र 16.3)। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि जब ऐगार खंड को प्रांकुर-चोल के ठूंठ पर उत्केन्द्रतः रखा गया तब उसमें मौजूद पदार्थ

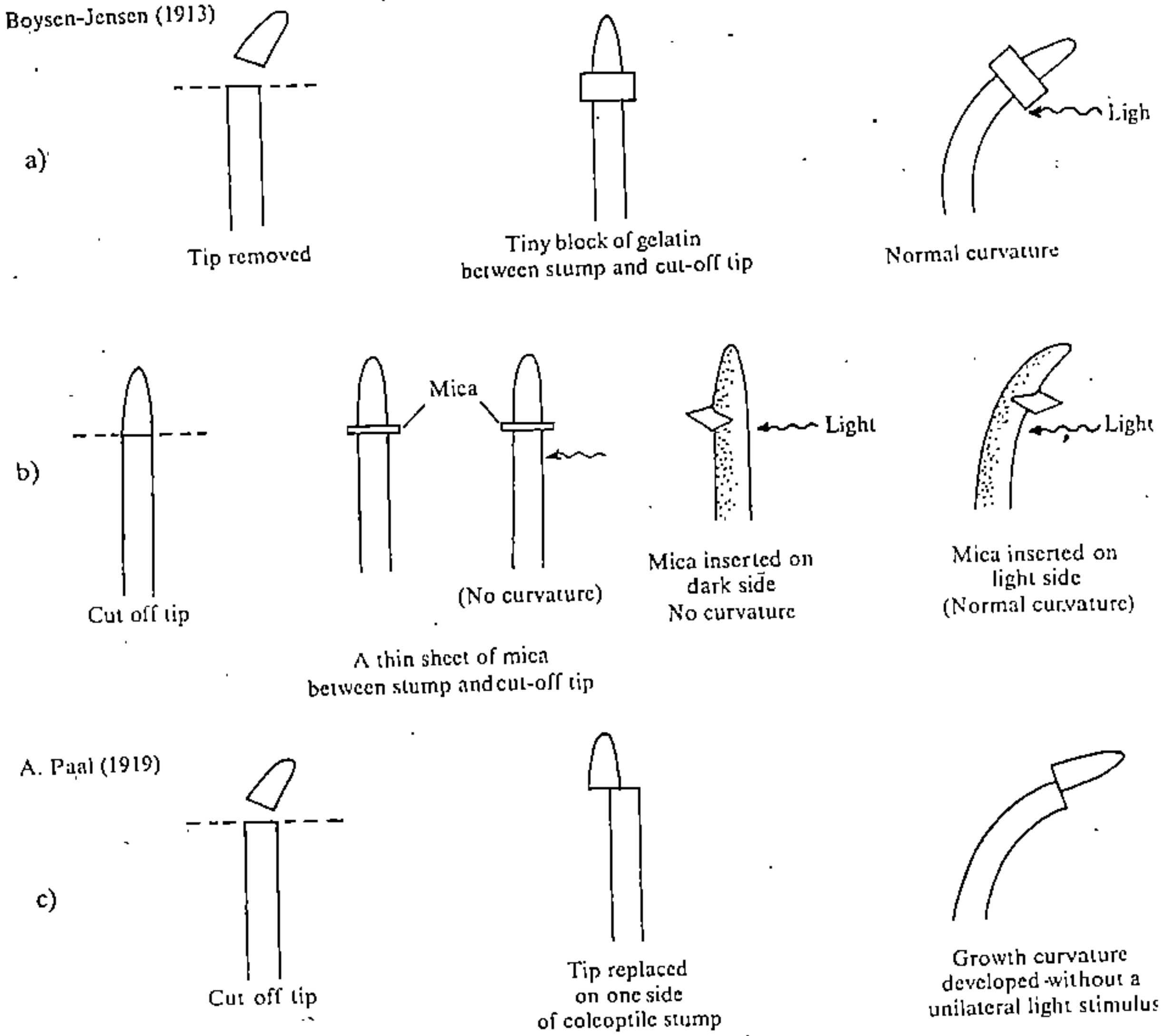

चित्र 16.2: ठूंठ और अग्र भाग के बीच आधी दूरी तक घुसेड़ा गया : a) जिलेटिन का छोटा सा टुकड़ा, b) अभ्रक की पतली सी पत्ती। नोट करें कि प्रकाशित करने पर प्रांकुर-चोल में वक्रता a) में देखी गई लेकिन b) में नहीं देखी गई। c) विस्थापित अग्र भाग (displaced tips) के कारण विपरीत दिशा में वक्रता।

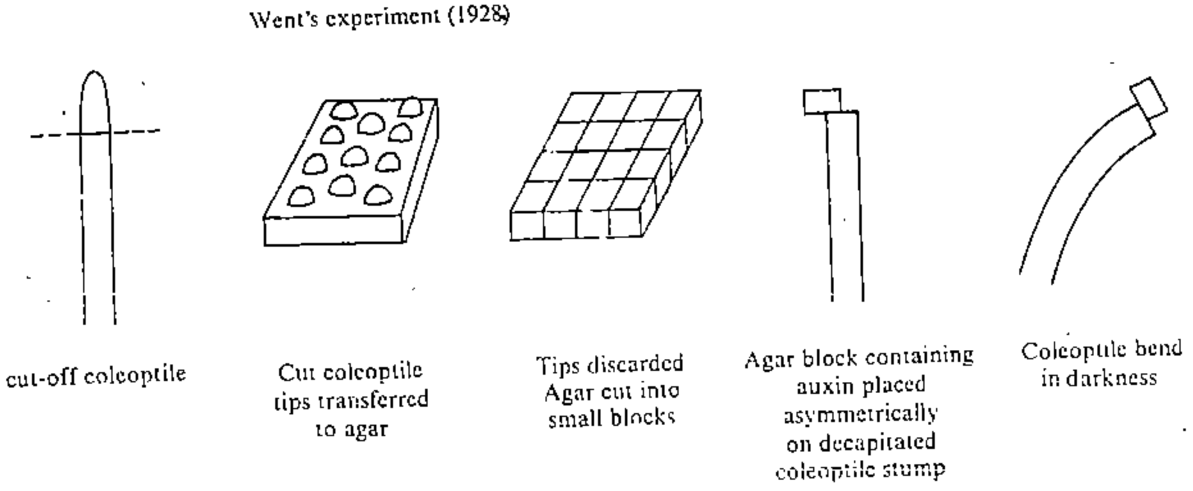

चित्र 16.3: ऑक्सिनों पर किए गए वैन्ट के प्रयोग :

a) ऐगार खंडों पर जई (oat) प्रांकुर-चोल के अग्र भाग से विसरणशील पदार्थ का संग्रह।

b) वर्धी प्ररोह की बगल में प्रांकुर चोल के कटे छोर पर उत्केन्द्रतः रखे गए ऐगार खंड। वक्रता विपरीत तरफ दिखाई देती है।

प्रांकुर-चोल की ठूंठ में विसरित हो गया जिसके कारण उस तरफ की कोशिकाओं की दैर्ध्य वृद्धि हुई। इस वृद्धि के फलस्वरूप वक्रता आई। वैन्ट ने इस पदार्थ का नाम ऑक्सिन (ऑक्सिन ग्रीक शब्द auxein से है जिसका अर्थ है "बढ़ाना") रखा। बाद में ऑक्सिन का रासायनिकतः अभिलक्षण इन्डोल एसीटिक एसिड (indole acetic acid) यानि IAA हुआ (चित्र 16.4))।

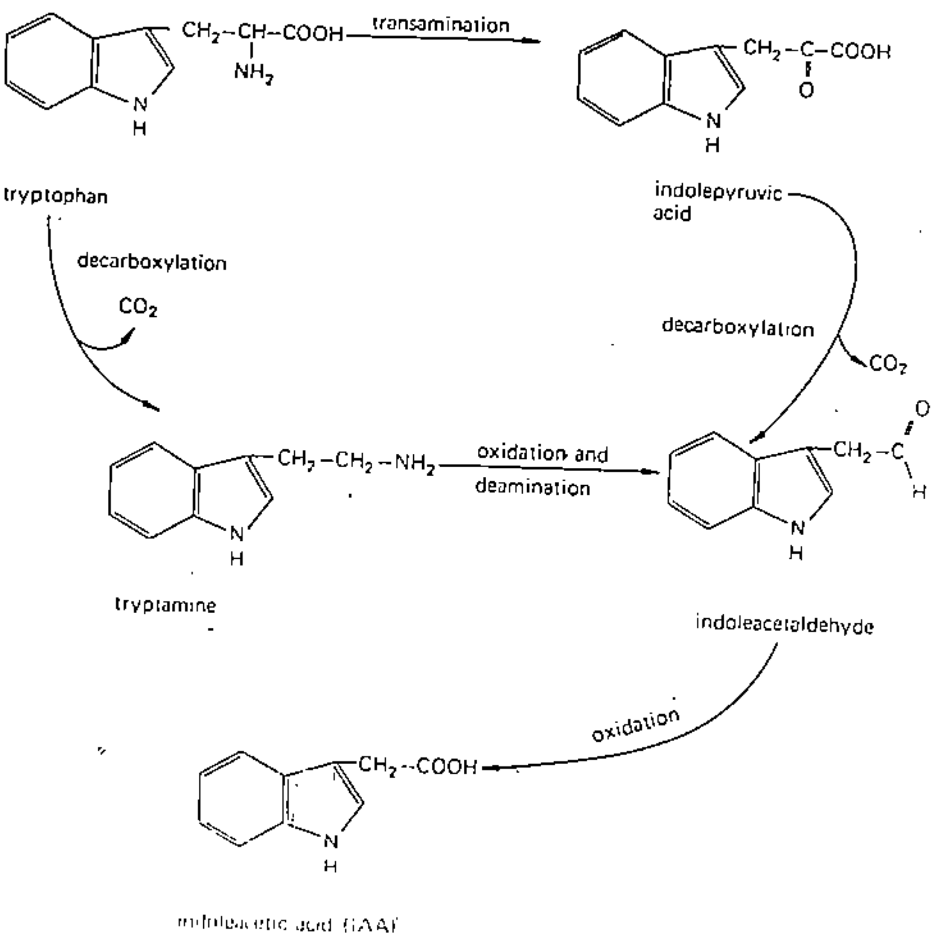

चित्र 16.4: ऑक्सिन-इन्डोल एसीटिक एसिड (IAA) की संरचना और ट्रिप्टोफ़ान से इसके जैव संश्लेषण (biosynthesis) की संभावित योजना।

ऑक्सिनें तनों के वर्धी क्षेत्रों (growing regions) और कोपलों (young leaves) में उत्पन्न होती हैं। जब ऑक्सिन की खोज हुई तो लोगों को यह आभास तक न था कि कृषि और बागवानी में इसका इतना जबरदस्त प्रभाव पड़ेगा। ऑक्सिन की उपस्थिति और वस्तुतः उसकी मात्रा का निर्धारण एक आमापन पद्धति (assay system) से प्रदर्शित किया जा सकता है। जिसे जैव आमापन (bioassay) कहते हैं। यह पद्धति वैन्ट की मूल विधि पर आधारित है जैसाकि चित्र 16.5 में दिखाया गया है। हॉर्मोन सांद्रणों का परिकलन (calculation) जई प्रांकुर चोल में देखे गए वक्रता के अंश (degree) से किया जाता है। वक्रता का कोण जितना बड़ा होगा उतना ही ज्यादा हॉर्मोन मौजूद होगा।

जड़ों, तनों और कलिकाओं की वृद्धि पर ऑक्सिन का प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है। जड़ें सर्वाधिक संवेदी होती हैं। उसके बाद तनों और कलिकाओं की बारी आती है जो ऑक्सिन की काफी अधिक डोज़ (higher dose) सह सकती हैं। चित्र 16.6 देखिए — ऑक्सिन के जिस सांद्रण से कलिकाओं और तनों में वृद्धि होती है, वस्तुतः उससे जड़ों की वृद्धि संदमित (inhibit) होती है। अगर ऑक्सिन का सांद्रण आवश्यकता (इष्टतम सांद्रण-optimum concentration) से अधिक है तो इससे वृद्धि संदमित होगी। ऑक्सिन के द्वारा कोशिका की वृद्धि विभाजन द्वारा नहीं होती बल्कि दैर्ध्यवृद्धि (elongation) द्वारा कोशिका का विवर्धन (enlargement) होता है (चित्र 16.7)।

रेडियोएक्टिव लेबल तकनीक के उपयोग से यह ज्ञात हुआ है कि ऑक्सिन चित्र 16.4 में दिखाई गई योजना द्वारा ट्रिप्टोफान से संश्लेषित की जाती है। ऑक्सिनें मुख्यतया प्ररोह शिखाग्र (shoot apex), तरुण पत्तियों और कलिकाओं में संश्लेषित होती हैं और नीचे की ओर तनों में ले जायी जाती हैं। वे मूल प्रारंभन (root initiation) को बढ़ावा देती है और पार्श्व तथा अपस्थानिक (lateral and adventitious) जड़ों के निर्माण और विभेदन (differentiation) फल और फूल के परिवर्धन को बढ़ावा देती है। ऑक्सिन का दूसरा दिलचस्प असर शिखाग्र प्रभुत्व (apical dominance)

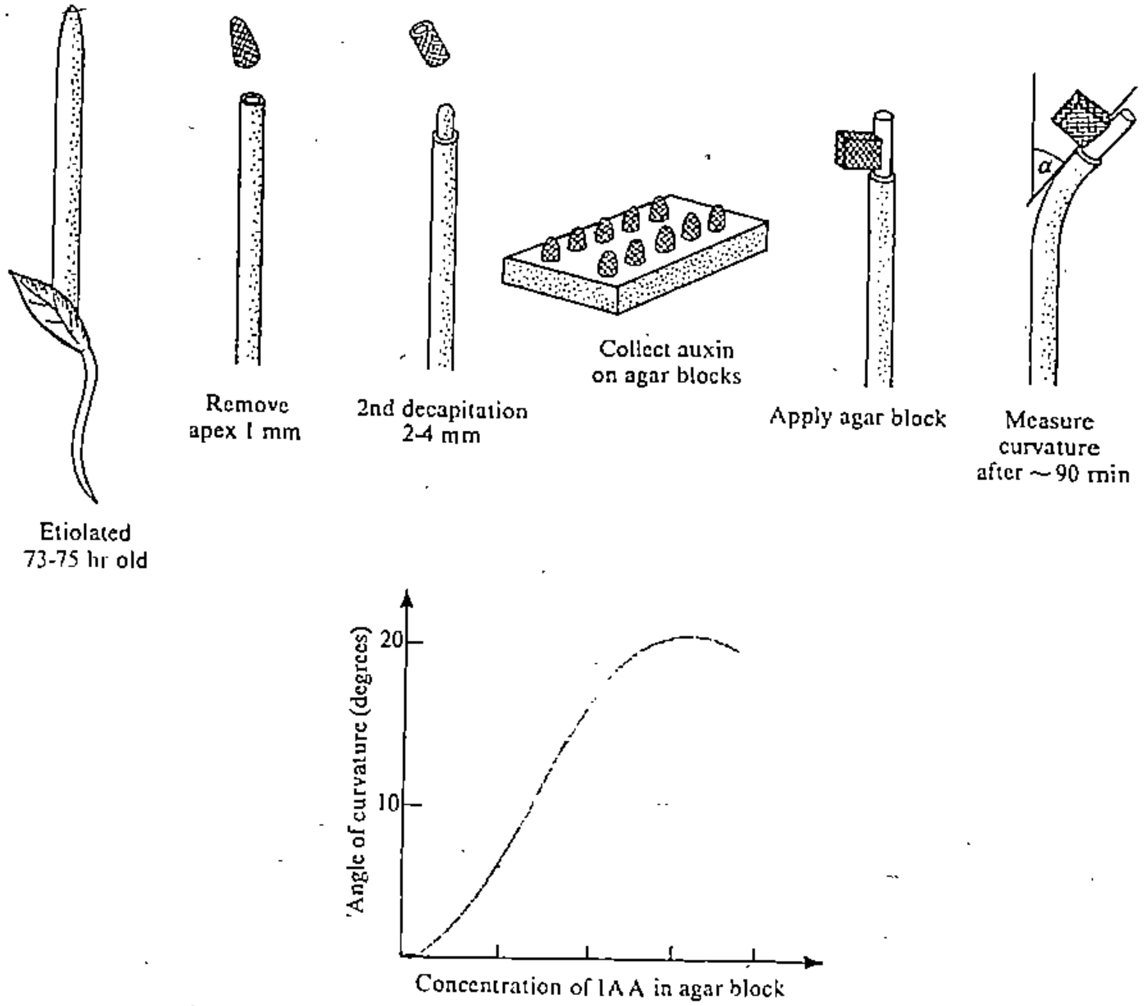

चित्र 16.5: ऑक्सिन का जैव आमापन। कोण α द्वारा मापी गई वक्रता की सीमा ऐगार खंड में मौजूद IAA यानि ऑक्सिन की मात्रा का प्रकार्य (function) है।

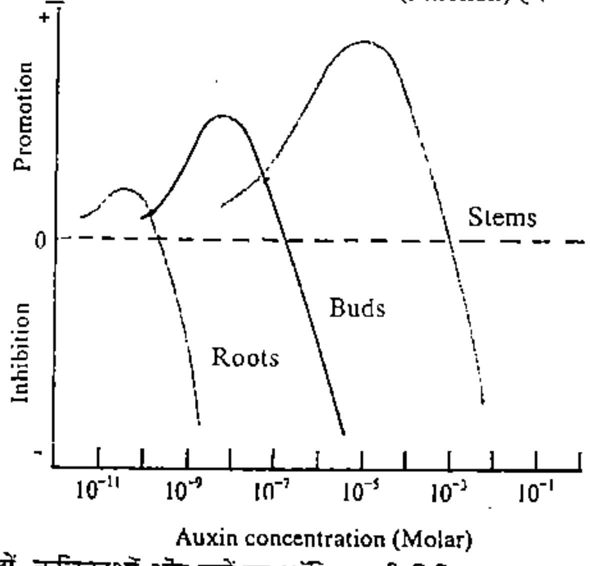

चित्र 16.6: जड़ों, कलिकाओं और तनों पर ऑक्सिन की विभिन्न मात्रा का प्रभाव। भिन्न-भिन्न पादप अंगों के लिए ऑक्सिन द्विप्रावस्थिक डोज़-अनुक्रिया वक्र (biphasic dose-response curve) दर्शाती है। (स्रोत: लिओपोल्ड-1955)।

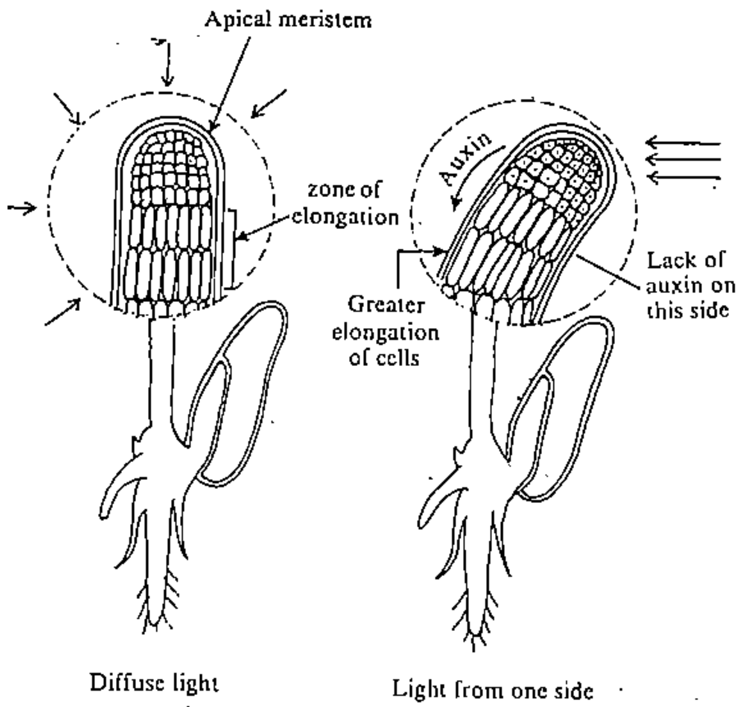

चित्र 16.7: ऑक्सिनों की क्रिया : ऑक्सिन द्वारा कोशिका दैर्घ्यवृद्धि को बढ़ावा मिलता है । a) बहुदिशीय (multidirectional) प्रकाश, b) एक ओर से प्रकाश ।

है जिससे पार्श्व कलिकाओं के परिवर्धन पर शिखाग्र कलिका संदमनी प्रभाव डालती है। शिखाग्र विभज्योतक यानि मरिस्टेम (meristems) में उत्पन्न IAA नीचे तने में जाता है और सहायक (auxillary) कलिकाओं को नए पर्णिल (leafy) तने के रूप में वृद्धि करने से रोकता है। अगर शिखाग्र कलिका उच्छेदित (excised) कर दी जाती है अर्थात् काट दी जाती है तो पार्श्व कलिकाएं फैलने वाली पर्णिल शाखाओं में परिवर्धित हो जाती हैं। (अगर वर्धी शिखाग्र कलिकाओं के कटे सिरे पर IAA लगाया जाए तब भी यही प्रभाव देखा जाता है।) बागवान इस ज्ञान का उपयोग बाड़ को साफ-सुथरी और कटी-छंटी बनाने के लिए या पौधे को शानदार रूप देने के लिए करते हैं। संश्लेषित ऑक्सिनों का अब वाणिज्यिक रूप से निर्माण होने लगा है। हालाँकि ये ऑक्सिनें रासायनिक रूप से पौधों द्वारा उत्पन्न प्राकृतिक ऑक्सिनों से भिन्न हैं लेकिन इनका प्रभाव पादप द्वारा उत्पन्न प्राकृतिक ऑक्सिनों जैसा ही है। संश्लेषित ऑक्सिनों का प्रयोग आमतौर पर IAA के प्रभावों का अनुकरण करने के लिए किया जाता है। प्रयोगशालाओं में साधारणतया जिन दो ऑक्सिनों का प्रयोग किया जाता है वे निम्नलिखित हैं :

1 ग्राम IAA के विलगन के लिए लगभग 9000 कि. ग्रा. जई (oat) मेरिस्टेम (IAA उत्पादन के लिए स्रोत) की आवश्यकता होती है।

i) नैफ्थलीन एसीटिक एसिड (NAA) और

ii) 2, 4-डाइक्लोरोफ़ीनॉक्सी एसीटिक एसिड (2,4-डी) (देखिए चित्र 16.8)।

चित्र 16.8: नैफ्थलीन एसीटिक एसिड (NAA) और 2,4-डाइक्लोरोफ़ीनॉक्सी एसीटिक एसिड (2,4-डी) की संरचना।

प्रयोगशालाओं में प्रयोगात्मक कार्यों के लिए संश्लेषित ऑक्सिनों का प्रयोग किया जाता है क्योंकि प्राकृतिक ऑक्सिनों का विलगन (isolation) यानि उन्हें पादपों से निकालना बहुत कठिन है और

इसलिए वे बहुत मंहगी होती हैं। इसके अलावा, IAA के विपरीत ये पादप ऊतकों द्वारा बहुत धीरे-धीरे नष्ट होती हैं और इसलिए अधिक स्थायी हैं।

16.2.2 जिबरेलिनें

जिबरेलिन प्रसंग वास्तव में उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में शुरू हुआ। सन् 1889 में कोनिशी (Konishi) नाम के एक कम पढ़ लिखे जापानी किसान ने चावल में एक रोग का वर्णन किया जिसे "बकेने" मूर्ख पौद ('bakanae'—foolish seedling) कहते हैं। इसका विशिष्ट लक्षण है पौधों का तर्कुरूपी (spindly) यानि कते हुए सूती धागे की कुकड़ी जैसा हो जाना। ऐसे पौध इतने लम्बे हो जाते हैं कि वे मुड़ जाते हैं और नष्ट हो जाते हैं। बाद में सन 1926 में इस रोग का कारण एक फफूंदी को पाया गया जिसे *जिबरेला फ्यूजीकुरोई (Gibberella fujikuroi)* के रूप में पहचाना गया। सन् 1935 में *जि. फ्यूजीकुरोई* संवर्ध निस्यंदों (culture filterate) में सक्रिय कारक को जिब्रेलिन नाम दिया गया। सन् 1938 में जिबरेलिन ए और बी नामक दो जैविक रूप से सक्रिय (biologically actives) क्रिस्टलीय पदार्थ विलगित किए गए। आज लगभग इसके 72 रूपों को पहचाना जा चुका है (इनका नाम अलग-अलग रखने के बजाय इन्हें GA से लेकर GA_{72} कहा जाता है)। लेकिन ये सभी सक्रिय नहीं हैं।

सभी जिबरेलिनें डाइटर्पीनोइड (diterpenoid) अम्ल हैं जिनमें एक जैसी मूलभूत एन्ट (*ent*) जिबरेलेन वलय संरचना (चित्र 16.9) होती है, लेकिन जिस स्रोत से ये विलगित की जाती हैं उसके आधार पर इनकी संरचना में मामूली सा परिवर्तन हो सकता है। जिबरेलिनों के कुछ प्रकार **जिबरेला** में पहचाने गए हैं और कुछ दूसरे प्रकार उच्च कोटि पादपों में पाये जाते हैं। कई पौधों में दोनों प्रकार की जिबरेलिनें पाई जाती हैं। जिबरेला की तरह व्यष्टि (individual) आवृत-बीजियों (angiosperm) में अनेक भिन्न-भिन्न GAs हो सकती हैं। उदाहरण के लिए कुकरबिट (cucurbit) के बीजों में कम से कम 20 GA और फैसियोलस (phaseolus) जाति में 16 ज्ञात, GAs पहचानी गई हैं।

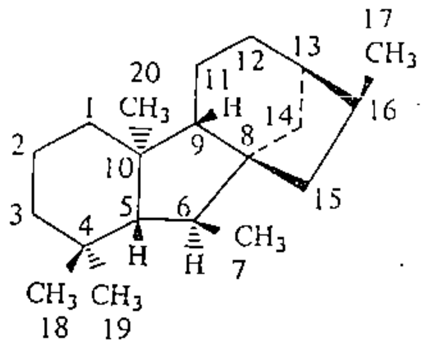

चित्र 16.9: *एन्ट-जिबरेलिन* का संरचनात्मक सूत्र।

संभवतः कुछ पौधों की जड़ों तथा तरुण पत्तियों के वर्धी अग्र भागों में जिबरेलिनें उत्पन्न होती हैं हालांकि जड़ों की गतिविधि में उनकी भूमिका मालूम नहीं है।

GA का प्रभाव आनुवंशिकतः ठिगनी (dwarf) मटर या मक्का में विशेष रूप से दर्शाया जाता है जहाँ तरुण पौदों (seedlings) पर इसका अनुप्रयोग उन्हें सामान्य (normal) ऊंचाई तक बढ़ने को प्रेरित (induce) करता है (चित्र 16.10)। इससे स्पष्ट होता है कि ठिगने अभिलक्षण जिबरेलिनों के संश्लेषण में अवरोध के कारण है। GA अनेक एन्ज़ाइमों के उत्पादन को उद्दीप्त करता है जिसमें

अंकुरणशील धान्य कणों में α-एमिलेज़ प्रमुख है। जैसे ही दानें अंकुरित होते हैं जिबरेलिनें स्रवित (secrete) करते हैं जो स्टार्ची भ्रूणपोष (starchy endosperm) को घेरे रहने वाली ऐल्यूरोन परत (aleurone layer) में पहुंच जाती है (चित्र 16.11), और α-एमिलेज़ के उत्पादन को उद्दीप्त करती है। α-एमिलेज़ स्टार्च को शर्करा में खंडित करता है और इस प्रकार बढ़ रहे भ्रूण को भोजन

2-क्लोरोएथिल ट्राइमेथि- क्लोराइड (CCC) प्रसामा- की फसल में जिब्रेलिक अम्ल संश्लेषण को अवरुद्ध करती है।

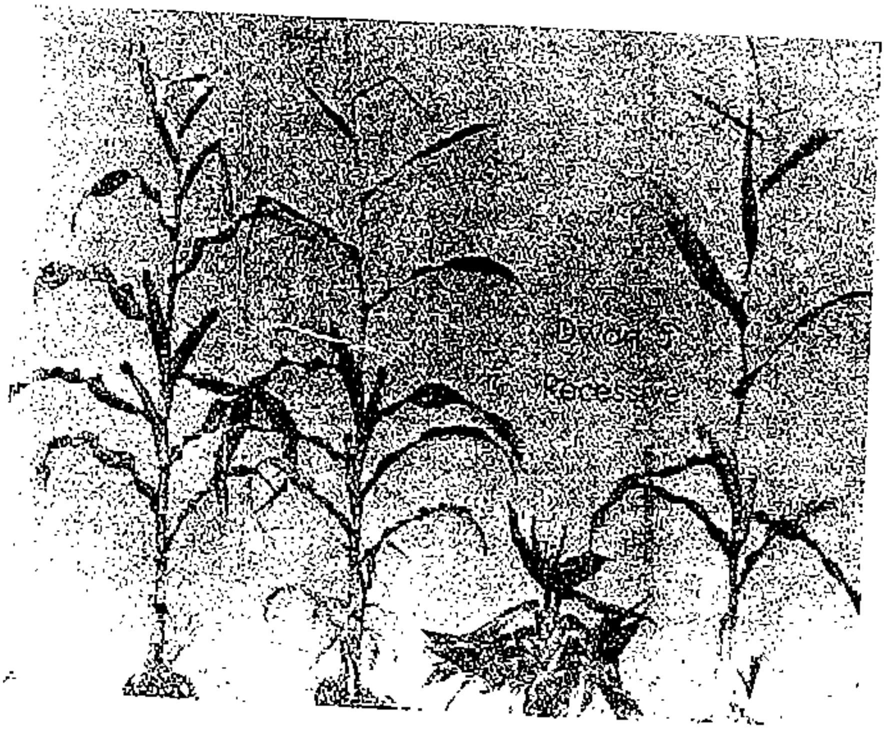

चित्र 16.10: जिबरेलिक अम्ल (GA_3) का प्रसामान्य और ठिगने मक्का पर प्रभाव।

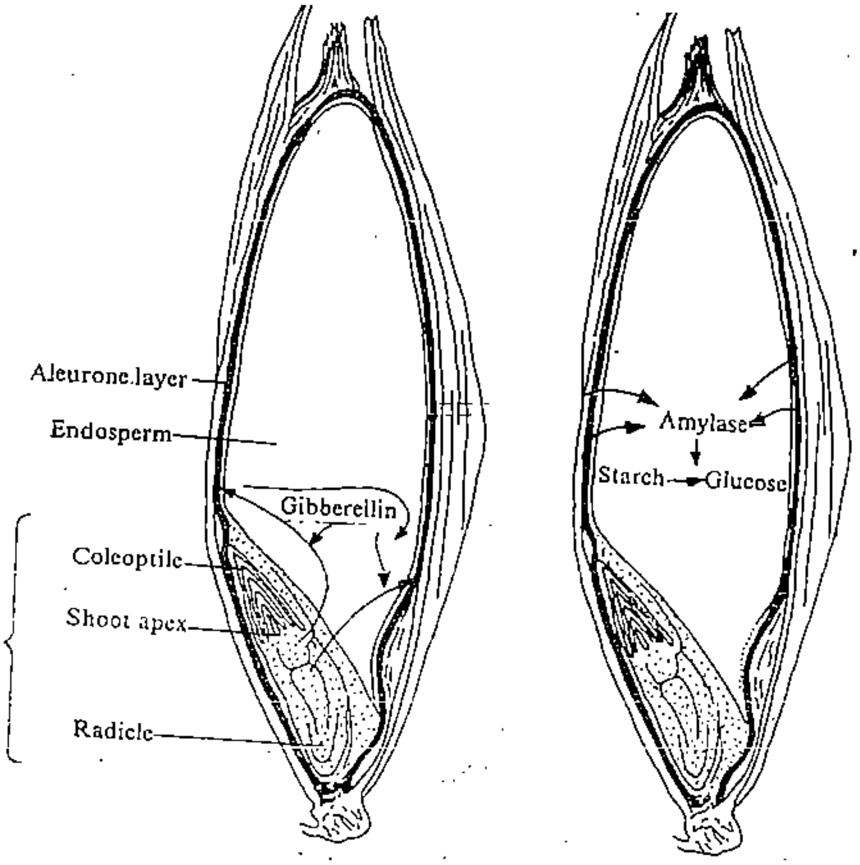

चित्र 16.11: भ्रूण द्वारा स्रवित जिबरेलिनें ऐल्यूरोन परत पर पहुंच जाती हैं और α-एमिलेज़ के उत्पादन को उद्दीप्त करती हैं।

जिबेरेलिनों के और भी अनेक दिलचस्प प्रभाव हैं। उदाहरण के लिए, वे दीर्घ प्रदीप्तिकाली पौधों (long-day plant) में बोल्टिंग (bolting) प्रेरित कर सकती हैं, तने में दैर्ध्यवृद्धि कर सकती हैं (लेकिन, अगर *एविना* प्रांकुर-चोल के कटे हुए ठूंठ पर इसे असममिततः (asymmetrically) लगाया जाए तो उसमें वक्रता प्रेरित नहीं कर सकतीं) और जिन बीजों को अंकुरित होने के लिए सामान्य रूप से ठंड या प्रकाश की आवश्यकता पड़ती है, उनमें अंकुरण प्रेरित करती हैं।

16.2.3 साइटोकाइनिनें

ऑक्सिनें और जिबेरेलिनें दोनों ही अधिकतर कोशिकाओं की दैर्ध्यवृद्धि उद्दीप्त करके वृद्धि को प्रभावित करती हैं। इसलिए ऐसे विशिष्ट पदार्थ की बड़े जोर-शोर से खोज शुरू हुई जो कोशिका के विभाजन को प्रेरित कर सके। अंततः 1950 के दशक में पात्रे *(in vitro)* में ऊतकों की वृद्धि से संबंधित अन्वेषण करते समय साइटोकाइनिन (cytokinin) की खोज हुई। हेरिंग शुक्राणु (herring sperm) के DNA के एक ऑटोक्लोवित (autoclaved) नमूने से काइनेटिन (6-फरफ्यूरिल ऐमीनो-प्यूरीन) नामक पदार्थ प्राप्त किया गया। संश्लेषित माध्यम में ऑक्सिन के साथ उगाई गई तम्बाकू की उच्छेदित मज्जा (excised pith) ऊतक में समसूत्रण यानि माइटोसिस (mitosis) और कोशिका विभाजन को बढ़ावा देने में काइनेटिन (kinetin) बहुत सक्रिय पाई गई। ऐसा देखा गया कि अगर प्रयुक्त ऑक्सिन की अपेक्षा काइनेटिन का सांद्रण उच्चतर होता है तो प्ररोह निर्माण उद्दीप्त होता है और यदि काइनेटिन की अपेक्षा ऑक्सिन का सांद्रण उच्चतर होता है तो मूल निर्माण को बढ़ावा मिलता है (चित्र 16.12)। इस प्रकार अंगविकास (organogenesis) पर हॉर्मोनों की पारस्परिक क्रिया की भूमिका के बारे में पहली बार एक साफ तस्वीर उभर कर सामने आई जिसने इससे पहले के उस सिद्धांत को गलत सिद्ध कर दिया जो यह मानता था कि जड़, तने और पत्ती के निर्माण को नियंत्रित करने के लिए पौधों में विभिन्न प्रकार के हॉर्मोन होते हैं।

कोशिका विभाजन को बढ़ावा देने वाले सभी यौगिकों के लिए साइटोकाइनिन नाम ही प्रयुक्त किया जाता है।

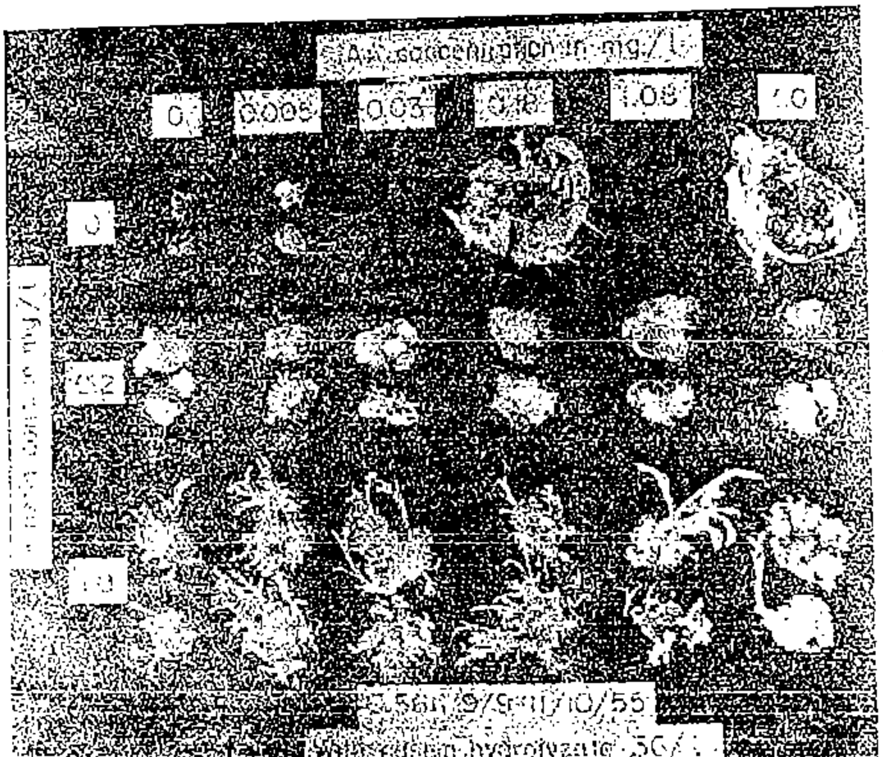

चित्र 16.12 : अंगविकास में हॉर्मोनों की पारस्परिक क्रिया। ऑक्सिन और साइटोकाइनिन के सांद्रणों को विभिन्न अनुपात में लेकर तम्बाकू के तने से लिए गए मज्जा ऊतक को उपचारित किया जाता है।

काइनेटिन (kinetin) पहली साइटोकाइनिन हैं परंतु यह ऑक्सिनें और जिबरेलिनें की तरह पादप ऊतकों में नहीं पाई गई। हालांकि बाद में दूसरी प्राकृतिक साइटोकाइनिनें पादप ऊतकों से निष्कर्षित (extract) की गई। मक्का के बीजों से प्राप्त जियाटिन zeatin) (चित्र 16.12) नामक पहली

प्राकृतिक साइटोकाइनिन का वर्णन 1964 में किया गया। उसके बाद तीन और साइटोकाइनिनें पहचानी गई हैं। साइटोकाइनिनें मूलाग्र (root tip) और परिवर्धी (developing) बीजों में बनती है। ऊपर वर्णित मूल स्थलों के अलावा, अभी हाल ही में दिखाया गया है कि साइटोकाइनिनों के जैवसंश्लेषित स्थल प्ररोह में भी स्थित होते हैं। *जिया मेज (Zea mays)* के बीज और टमाटर, मटर तथा सेम पर किए गए अध्ययनों से संकेत मिलता है कि उनमें भी साइटोकाइनिनें बनती हैं।

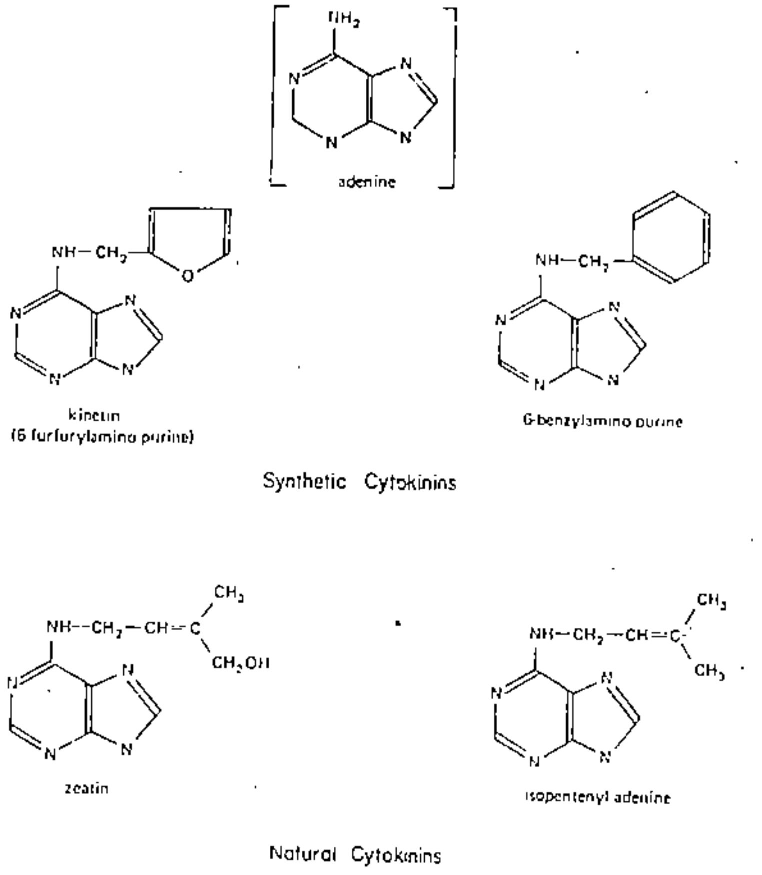

चित्र 16.13: काइनेटिन और जियाटिन की संरचना।

ऊतक संवर्धन (tissue culture) में प्ररोहों के प्रेरण (induction) के अतिरिक्त साइटोकाइनिन का अन्य प्रभाव पौधों में जीर्णता (senescence) या काल प्रभावन (aging) से जुड़ा है। अगर पत्तियाँ साइटोकाइनिनों से उपचारित की जाती हैं तो जीर्णता मंद (retarded) हो जाती है, क्लोरोफ़िल का विघटन नहीं होता और पत्तियाँ हरी बनी रहती हैं। सेलरी, ब्रोकोली जैसी सब्जियों की कटी हुई फसल पर संश्लेषित साइटोकाइनिनें लगाई जाती हैं। इससे वे अधिक समय तक ताजी बनी रहती हैं।

16.2.4 एथिलीन

पादप और प्राणी जगत दोनों में पाए जाने वाले हॉर्मोनों में एथिलीन बेजोड़ है। वह एक गैसीय हाइड्रोकार्बन है। सरल रसायन होने के बावजूद भी यह एक शक्तिमान वृद्धि नियामक (growth regulator) है। बीस साल पहले भी इसके बारे में विवाद था कि पादप ऊतकों पर बहु-प्रभाव डालने वाली इस गैस को समुचित रूप से हॉर्मोन कहा जा सकता है या नहीं। पक रहे फलों में एथिलीन की गंध आती है क्योंकि यह पकने की प्रक्रिया में शामिल है। एथिलीन गैस फल पकने की क्रिया को तेज कर देती है और जैसे-जैसे फल पकने लगता है यह और भी ज्यादा एथिलीन पैदा करने लगता है। जरूरत से ज्यादा पके हुए फलों से एथिलीन गैस के बनने से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक सड़े हुए सेब से पूरी टोकरी के सेब क्यों खराब हो जाते हैं। एथिलीन द्वारा फल पकाने के उद्दीपन का वाणिज्यिक स्तर पर उपयोग किया जा रहा है। हरी अवस्था में ही टमाटरों, केलों, संतरों, आमों और दूसरे अनेक फलों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने से पहले संवातित (ventilated) क्रेटों में भरा जाता है ताकि एथिलीन संचित न हो सके। उपभोक्ताओं को वितरण करने से पहले इन्हें एथिलीन से गैसित किया जाता है।

चित्र 16.14: एथिलीन।

एथिलीन कुछ फूलों में लिंग-निर्धारण (sex determination) में भी सहायता कर सकती है। जिबरेलिन के साथ एथिलीन फूलों में नर-मादा के अनुपात को नियंत्रित रखती है। एथिलीन उपचार से खीरा, ककड़ी जैसे कुछ एकलिंगाश्रयी (monoecious) पौधों में मादा पुष्पों का उच्चतर अनुपात सुनिश्चित हो जाता है। इसलिए, मादा फूलों के उत्पादन को प्रेरित करके ककड़ी, खीरे की पैदावार बढ़ाने के लिए ग्रीन हाउस में एथिलीन का व्यापक उपयोग होने लगा है। सिल्वर नाइट्रेट, एथिलीन का विरोधी (antagonist) है। यह नर पुष्पों के निर्माण को प्रेरित करता है।

16.2.5 एबसिसिक एसिड

एबसिसिक एसिड (ABA) एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला वृद्धि संदमक है जिसका पता दो भिन्न-भिन्न प्रयोगशालाओं में विभिन्न कार्यकी परिघटनाओं के स्वतंत्र अन्वेषणों से हुआ। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के एफ.टी. एडिकोट और सहयोगी (F.T. Adicott and collaborators) पत्ती विलगन (abscission) को त्वरित (accelerate) करने वाले प्राकृतिक पदार्थ का अन्वेषण कर रहे थे जबकि एबरिस्टवाइथ (Aberystwyth) स्थित यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ वेल्स के पी.एफ. वेरींग और उनके साथी (P.F. Wareing et.al) काष्ठीय (woody) पौधों में कलिका प्रसुप्ति (bud dormancy) से संबंधित प्राकृतिक संदमकों का अन्वेषण कर रहे थे। 1965 में दोनों अनुसंधानों से निष्कर्ष यह निकला कि दोनों परिघटनाओं में केवल एक ही हॉर्मोन शामिल था। बाद में इस यौगिक को दर्शाने के लिए एबसिसिक एसिड (ABA) नाम का प्रस्ताव रखा गया। यह एक सेस्क्वीटर्पीनॉइड (15-sesquiterpenoid) यौगिक है (चित्र 16.15)।

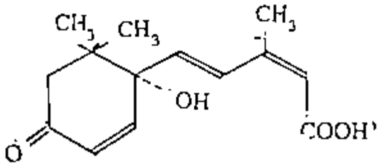

चित्र 16.15: एबसिसिक एसिड की संरचना

अपने स्वयं के स्तरों के नियमन के संदर्भ में एबसिसिक एसिड विशेष रूप से दिलचस्प हॉर्मोन है। पर्यावरणीय और परिवर्धनीय परिवर्तनों की अनुक्रिया में अनेक प्रकार के ऊतकों में इसके स्तर (levels) आश्चर्यजनक रूप से घटते और बढ़ते हैं। एबसिसिक एसिड की भूमिकाएं निम्नलिखित हैं :

i) जब समोद्भिद्-पादपों (mesophytic plants) की पत्तियों में जल के कारण तनाव (stress) होता है अर्थात् जब उन्हें पानी की कमी वाली परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तब ABA का स्तर 4-8 घंटों के भीतर 10 से लेकर 50 गुना तक बढ़ जाता है। जब पौधों को फिर से पानी दिया जाता है तब 4-8 घंटे के भीतर ही ABA का स्तर असाधारण रूप से कम हो जाता है।

ii) आमतौर पर ऐसा माना जाता है कि ABA बीजों में प्रसुप्ति प्रेरित करता है ताकि हिमकारी (freezing) तापमान या जलाभाव पैदा करने वाले गरम शुष्क कालावधि (hot dry periods) के तनावों जैसी प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों से निपटा जा सके। इससे पर्णपाती (deciduous) पौधों में भी प्रसुप्ति प्रेरित हो जाती है।

iii) आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि जलाभाव की कालावधियों के दौरान जब द्वार-कोशिकाओं (guard cells) में एबसिसिक एसिड संचित हो जाता है, तब यह रंध्रों (stomata) को बंद कर देता है जिससे पौधे पुनः जल संतुलन प्राप्त करने के योग्य बन जाय।

iv) शुरू-शुरू में एबसिसिक एसिड नाम इसलिए प्रस्तावित किया गया था क्योंकि पहले अन्वेषकों का यह विश्वास था कि इसके कारण फूल, फल और पत्तियों का विलगन (abscission) होता है। लेकिन अब इस बारे में विवाद उठ खड़ा हुआ है कि ABA विलगन प्रक्रिया में शामिल है भी या नहीं।

16.2.6 अन्य वृद्धि नियामक

पांच प्रमुख हॉर्मोनों के अलावा पॉलिऐमिनें (polyamine) भी सूक्ष्ममोलर (micromolar) सांद्रण में वृद्धि और परिवर्धन पर नियमनकारी नियंत्रण (regulatory control) डाल सकती हैं। ये व्यापक हैं और शायद सभी कोशिकाओं में पाई जाती हैं। लेकिन इन्हें हॉर्मोनों के रूप में वर्गीकृत किया जाए या नहीं इस बारे में कुछ विवाद हैं।

पादप परिवर्धन पर पॉलिऐमिनें कई तरह के प्रभाव डालती है। ऐसा लगता है कि पॉलिऐमिनें सभी कोशिकाओं में मौजूद हैं। जहाँ पर यह संश्लेषित होती हैं उन्हीं विशिष्ट स्थलों तक ही यह परिसीमित नहीं है। पॉलिऐमिनों को पादप हॉर्मोनों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है अथवा नहीं यह सारहीन है क्योंकि ये निश्चित रूप से बहुत हद तक पादप वृद्धि और परिवर्धन का नियंत्रण करती हैं तथा इसलिए, ये प्रमुख पादप वृद्धि नियामक हैं।

बोध प्रश्न 1

क) स्तंभ-1 में दिए गए वैज्ञानिकों का स्तंभ 2 में आरेखीय रूप से (diagrammatically) चित्रित उनके प्रयोगों से मिलान कीजिए।

स्तंभ-1	स्तंभ-2
i) डार्विन 1880	क) 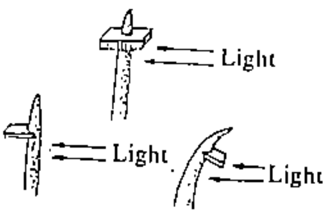
ii) बॉयसन-जेनसन 1910	ख) 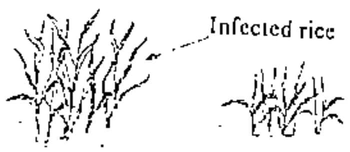
iii) एफ. डब्लू वैन्ट 1926	ग) 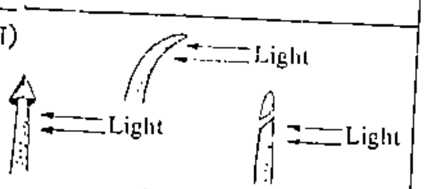
iv) ई. क्यूरोसाबा 1926	घ) 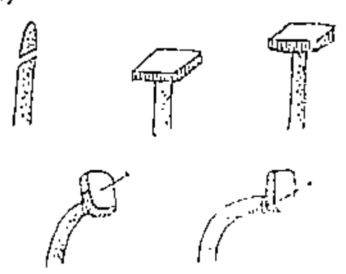

ख) नीचे दिए गए कथनों को सही बनाने के लिए कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से उचित शब्द छांटिए :

i) (जिबरेलिनें/एबसिसिक एसिड) कोशिका दैर्ध्यवृद्धि और कोशिका विभाजन को संदमित करती/करता है।

ii) (साइटोकाइनिनें/ऑक्सिनें) कोशिका विभाजन को बढ़ावा देती हैं।

iii) (ऑक्सिनें/जिबरेलिनें) जड़ निर्माण को बढ़ावा देती हैं, और (साइटोकाइनिनें/ऑक्सिनें) शिखाग्र प्रभुत्व दूर करती हैं।

iv) (जिबरेलिनें/साइटोकाइनिनें) ठिगने पौधों में सामान्य वृद्धि बहाल करती हैं।

v) (एबसिसिक एसिड/साइटोकाइनिनें) जीर्णता या कालप्रभाव को मंद करती हैं और पत्तियों के रंध्र (एबसिसिक एसिड/साइटोकाइनिनें) द्वारा बंद होते हैं।

ग) स्तंभ-1 में दिए गए हॉर्मोनों का स्तंभ-2 में दिए गए प्रकार्यों से मिलान कीजिए।

हॉर्मोन	प्रकार्य
i) ऑक्सिनें (IAA)	क) जीर्णता में देरी करती हैं।
ii) जिबरेलिनें	ख) प्रसुप्ति और रंध्र बंद होने को बढ़ावा देता है।
iii) साइटोकाइनिनें	ग) मूल परिवर्धन
iv) एथिलीन गैस	घ) ऐल्यूरोन परत को उद्दीप्त करती है और स्टार्च पाचक एन्ज़ाइम पैदा करती है।
v) एबसिसिक एसिड	च) फल पकने को बढ़ावा देती है।

घ) एक छोटा पौधा बनाइए और यह संकेत दीजिए कि ऑक्सिनें, साइटोकाइनिनें और जिबरेलिनें मुख्यतया किन-किन अंगों में संश्लेषित होती हैं।

16.3 हॉर्मोन कैसे कार्य करते हैं?

सभी पादप हॉर्मोन पादप वृद्धि और परिवर्धन नियंत्रण में असाधारण परिवर्तनशील जटिल प्रभाव दर्शाते हैं। प्राणी हॉर्मोन की कार्यविधि का बहिर्वेशन (extrapolation) करने से विभिन्न पादप हॉर्मोनों के लिए सांझा-ढांचा-कार्यविधि (common-framework) प्राप्त कर, हॉर्मोनों के परिवर्तनशील प्रभावों की व्याख्या की जा सकती है। प्राणियों में भिन्न-भिन्न हॉर्मोनों द्वारा प्रदर्शित व्यापक किस्म के प्रभावों की क्रियाविधि को कोशिका स्तर पर समझा जा सकता है। आप स्मरण कीजिए कि लक्ष्य कोशिकाओं में हॉर्मोनों के लिए समुचित ग्राही (appropriate receptor) या तो प्लैज्मा झिल्ली पर अथवा सामान्यतया कोशिका के भीतर स्थित होते हैं। ग्राही संकल्पना (receptor concept) द्वारा पादप हॉर्मोनों के कार्य की क्रियाविधि को समझने के लिए इसी तरह के प्रयास किए गए हैं। ऐसा माना जाता है कि प्राकृतिक और संश्लेषित दोनों हॉर्मोन एक जैसा व्यवहार करते हैं। किसी प्रभाव की शुरुआत के लिए यह हॉर्मोन विशिष्ट ग्राहियों से बद्ध (bind) होकर ग्राही कॉम्प्लेक्स बनाते हैं।

यद्यपि ग्राही प्रोटीन की तलाश आमतौर से निराशाजनक रही है, हाल ही में ऐसी प्रोटीनें मटर में प्रदर्शित की गई हैं जो किसी अनुक्रिया जैसे कि ऊतक संवर्धन (tissue culture) में भ्रूणाम विभेदन (embryoid differentiation) को उत्पन्न करने से पूर्व ऑक्सिनों से बद्ध हो जाती हैं।

ऑक्सिन की सर्वाधिक प्रसिद्ध अनुक्रिया कोशिका दैर्ध्यवृद्धि है। इसमें अनुदैर्ध्य भित्ति (longitudinal wall) का खिंचना आवश्यक है जिससे कोशिका भित्ति में मूलभूत परिवर्तन होंगे। खिंचने या फैलने (stretch) के लिए यह जरूरी है कि कोशिका भित्ति एक गुब्बारे (बैलून) की तरह सुघट्य (plastic) हो जाय। जिसमें आयतन बढ़ाने के लिए प्रेरक बल (driving force) गुब्बारे की भित्ति द्वारा लिए गए प्रतिरोध (resistance) के समानुपाती (proportional) हो। ऐसा माना जाता है कि ऑक्सिन द्वारा कोशिका भित्ति की बढ़ी हुई सुघट्यता (plasticity) कोशिका भित्ति के पॉलिसैकेराइड घटकों के बीच कुछ आबंधों के टूट जाने के कारण होती है। भित्ति के सुघट्य बन जाने के कारण कोशिका भित्ति आराम से खिंच सकती है।

जिबरेलिन की संरचना कुछ प्राणी स्टेरॉइड (steroid) तंत्रिकाप्रेषी (neurotransmitters) से मिलती-जुलती है। प्राणियों में तंत्रिकाप्रेषी कोशिकाद्रव्यी ग्राहियों (cytoplasmic receptors) से बंधन करते हैं। परंतु पादपों में, जिबरेलिन की खोज ग्राही की कोशिका झिल्ली के बजाय कोशिका द्रव्य में सफल साबित नहीं रही है।

यद्यपि पादप हॉर्मोनों के कार्य की जैवरासायनिक क्रियाविधि ठीक तरह से नहीं समझी गई है फिर भी चालू अनुसंधान कार्य में ऐसी आम धारणा है कि पादप कोशिकाओं में विशिष्ट ग्राही होते हैं जो हॉर्मोनों से परिबद्ध (bound) होने पर संकेत पारक्रमण मार्ग (signal transduction pathway) को अनेक गतिविधियों के लिए सक्रिय कर देते हैं। हालांकि अनेक अनुसंधानकर्ताओं ने हॉर्मोनों से परिबद्ध अनेक प्रोटीनों (protein bound to hormones) को प्राप्त किया है, परन्तु ये अक्रिय काम्प्लैक्स (inactive complex) हो सकते हैं। इस समय ग्राही की प्रकृति पहचानने और इसके कार्य की प्रणाली का अर्थ निकालने में खोज जारी है।

16.4 पादप हॉर्मोनों का अनुप्रयोग

कृषि और बागवानी में हॉर्मोन पहचाने जाने से पूर्व भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। उदाहरण के लिए, आम अथवा अनन्नास में समकालिक पुष्पन (synchronised flowering) के लिए जिन खेतों में इन फसलों को उगाया जाता था, उनसे सटे हुए खेतों में आग जलाई जाती थी हालांकि किसान पादप हॉर्मोनों से उस समय अनजान थे। उन्हें ऐसा करने का कारण मालूम न था। अपूर्ण दहन (combustion) के फलस्वरूप एथिलीन बनती है जो पुष्पन यानि फूल आने को उद्दीप्त करती है। नींबूओं में पक्वन (ripening) उद्दीप्त करने के लिए भी यही उपचार किया जाता था। फलों को दूर तक पहुंचाने के लिए एथिलीन के उपयोग के बारे में पहले ही बताया जा चुका है। दूर तक फलों को पहुंचाने के लिए कच्चे फलों को लिया जाता है जिन्हें जब कभी भी जरूरत पड़े तभी एथिलीन से उपचारित करके पकाया जा सकता है।

संश्लेषित ऑक्सिनों का एक प्रमुख अनुप्रयोग खरपतवार (weeds) नियंत्रण में है। ऐसा एक यौगिक है 2, 4, D जो बहुत निम्र सांद्रण पर वृद्धि को बढ़ावा देता है जबकि उच्च सांद्रणों पर यह पौधों को मार डालता है। संकीर्ण पत्तियों की अपेक्षा चौड़ी पत्तियों वाले पौधे शाकनाशियों (herbicides) के प्रति अधिक संवेदी होते हैं। गेहूँ, चावल अथवा जई के खेतों में खरपतवारों (आमतौर पर द्विबीजपत्री—dicots) को मारने का यही आधार है।

खरपतवार नियंत्रक (शाकनाशी या खरपतवारनाशी) बहुत खतरनाक भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए वियतनाम युद्ध के दौरान खरपतवारनाशी के रूप में काम में लाए गए 2, 4, 5-T (2, 4, 5-ट्राइक्लोरोएसीटिक एसिड) के जैविक प्रभावों के बारे में गंभीर प्रश्न उठ खड़े हुए हैं। प्रयोगशालाओं में, व प्रारंभिक सगर्भता (pregnancy) के दौरान स्तनियों (mammals — e.g. मूषक और चूहे) । इससे उपचारित किया गया तो उनके बच्चों में जन्म दोष (birth defects) आ गए। इस रिपोर्ट साथ-साथ, 1969 में दक्षिण वियतनामी जनसंख्या में मानव जन्म दोषों के मामलों में बढ़ोत्तरी की ोर्ट से इसके उपयोग के विरुद्ध व्यापक प्रदर्शन हुए हैं। लेकिन, बाद में यह मालूम हुआ है कि ंकारक प्रभाव डाइऑक्सिन (dioxine) के कारण थे जो कि एक पर्यावरणीय प्रदूषक ollutant) है जिससे 2, 4, 5-T उत्पादन के दौरान संदूषित (contaminate) हो

पादप हॉर्मोनों का निम्नलिखित कार्यों के लिए भी व्यावहारिक अनुप्रयोग होता है:

i) कटे हुए तनों के टुकड़ों में मूलोत्पत्ति (rooting),
ii) अनिषेकफलन (parthenocarpy) से फल बनाना,
iii) पेड़ों के फलों को स्वस्थ रखने के लिए कम फल पनपने देना,
iv) धान्य यानि अनाज के दानों और आलुओं में अंकुरण (sprouting) का संदमन,
v) कलिका वृद्धि का संदमन,
vi) पुष्पन प्रेरित करना, तथा निष्पत्रण (defoliation), और
vii) फलों को समय से पूर्व गिरने से रोकना।

अनन्नास में पुष्पन के प्रेरण को छोड़कर बाकी सभी कार्यों में ऑक्सिनों का उपयोग होता है। अनन्नास में पुष्पन के लिए ऐसीटिलीन काम में लाई जाती है।

पादप वृद्धि नियामकों को वाणिज्यिक स्तर पर विकसित करने के लिए विश्वव्यापी प्रयास किए जा रहे हैं जो गेहूँ, चावल या मटर जैसी फसलों की पैदावार या मूलभूत उत्पादकता को बढ़ा सकें। लेकिन अभी तक इसमें सफलता नहीं प्राप्त हुई है क्योंकि यह काम काफी पेचीदा है। पहले तो वैज्ञानिकों को सही फसल पहचाननी होगी, हॉर्मोन तथा उसके उचत सांद्रण की आवश्यकता और परिवर्धन की सही अवस्था जिसमें उसका अनुप्रयोग किया जाय का पता लगाना होगा और तब उत्पादन में हुई बढ़ोत्तरी को मापने की कसौटी खोजनी होगी। पैदावार को बढ़ावा देने में सफलता हमेशा तभी मिली है जब एक विशिष्ट लक्ष्य निर्धारित किया गया है जैसे कि गन्ने में शर्करा की मात्रा में जिबरेलिक एसिड द्वारा वृद्धि करना है। जिबरेलिक एसिड पुष्पन रोके जाने पर वृंत अनुदैर्ध्य (stalk elongation) में बढ़ोत्तरी करता है। इसके फलस्वरूप शर्करा की मात्रा में वृद्धि होती है, हीविया में रबड़ क्षीर (latex) के प्रवाह को बढ़ावा और छोटे दानों को गिरने से रोकना भी हॉर्मोनों द्वारा सम्भव है।

अंततः यह एक वास्तविकता है कि अनेक कार्यकर्ताओं द्वारा बार-बार किए गए आनुभविक परीक्षणों (empirical tests) के फलस्वरूप पादप हॉर्मोन मुख्यतः बागवानी की फसलों में उपयोग किये जाते हैं। अगर पादप वृद्धि और परिवर्धन के नियमन में न केवल पादप हॉर्मोन बल्कि संश्लेषित वृद्धि नियामकों की भूमिका स्पष्ट रूप से ज्ञात हो तो इनके अनुप्रयोग की परास (range) बढ़ाई जा सकती है। कृषि फसलों के मामले में इस ज्ञान के व्यावहारिक उपयोग में अभी देर है।

बोध प्रश्न 2

स्तम्भ 1 में दिए गए वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए आप कौन-से वृद्धि नियामक का अनुप्रयोग करेंगे:

वाणिज्यिक अनुप्रयोग	वृद्धि नियामक
i) खरपतवार का नियंत्रण	
ii) अनिषेकफलन से फल बनाना	
iii) फूलों में लिंग-निर्धारण	
iv) गन्ने में शर्करा की मात्रा बढ़ाने के लिए	
v) समकालिक पुष्पन का उद्दीपन	
vi) कलिका वृद्धि का संदमन	

16.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि:

- वृद्धि, परिवर्धन और विभेदन का नियमन हॉर्मोनों द्वारा होता है।

- पादप हॉर्मोनों के पांच समूह हैं—ऑक्सिनें, जिबरेलिनें, साइटोकाइनिनें, एथिलीन और एबसिसिक एसिड। वृद्धि का संदमन करने वाले ABA को छोड़कर सभी हॉर्मोन वृद्धि को बढ़ावा देते हैं। पॉलिऐमीन भी वृद्धि और परिवर्धन पर नियमनकारी नियंत्रण रखती हैं लेकिन उन्हें अभी तक पादप हॉर्मोनों के रूप में वर्गीकृत नहीं किया गया है।
- ऑक्सिनें, कोशिका भित्ति की पॉलिसैकेराइडों के बीच कुछ आबंधों को तोड़कर कोशिका दैर्ध्यवृद्धि को बढ़ावा देती हैं। वे मूल प्रारंभन, फल और फूल परिवर्धन को बढ़ावा देती हैं तथा संवहनी (vascular) ऊतकों के परिवर्धन और विभेदन में शामिल हैं।
- पादप हॉर्मोनों की क्रियाविधि पर अन्वेषण हो रहे हैं। ऐसा माना जाता है कि बहुत अधिक सम्भव है, पादप हॉर्मोनों की क्रियाविधि भी प्राणी हॉर्मोनों जैसे ही हो।
- पादप हॉर्मोनों का कृषि में व्यापक अनुप्रयोग होता है। ऑक्सिनें, खरपतवार नियंत्रण, कटे हुए टुकड़ों में मूलोत्पत्ति शुरू करने के लिए, ऊतक संवर्धन में, अनिषेकफलन से फल प्राप्त करने के लिए, अधिक साइज़ के फल प्राप्त करने के लिए, और पुष्पन प्रेरित करने के काम में आती है। वे अंकुरण और कलिका वृद्धि के संदमन में भी काम आती हैं। एथिलीन फल पकाने और बनने, समकालिक पुष्पन के काम आती है। जिबरेलिनें शर्करा की मात्रा बढ़ाने के उद्देश्य से गन्ने के वृंत में दैर्ध्यवृद्धि के काम आती हैं।
- जिबरेलिनें, कोशिका दैर्ध्यवृद्धि और कोशिका विभाजन द्वारा वृद्धि को बढ़ावा देती हैं। वे ठिगने मक्का के पौधों की प्रसामान्य वृद्धि बहाल करती हैं। बीज अंकुरण के दौरान वे एल्यूरोन परत को उद्दीपत करती हैं। यह परत स्टार्च पाचक एन्ज़ाइम पैदा करती है ताकि भ्रूण अपने परिवर्धन के लिए खाद्य प्राप्त कर सके।
- साइटोकाइनिनें कोशिका विभाजन को बढ़ावा देती है, शिखाग्र प्रभुत्व दूर करती हैं, जीर्णता और कालप्रभावन (ageing) में देरी करती है, फूल और फल परिवर्धन में सहायता करती हैं। ऑक्सिन के साथ यह कैलसी ऊतक में प्ररोह और मूल परिवर्धन को नियंत्रित करती हैं।
- एथिलीन फल पक्वन में सहायता करती है।
- एबसिसिक एसिड वृद्धि संदमक है। इसके स्तर पर्यावरणीय परिस्थितियों द्वारा प्रभावित होते हैं। जल की कमी के दौरान, इसका स्तर 10 से 50 गुना बढ़ जाता है। यह बीज प्रसुप्ति, रंध्र बंद होने और शायद फल, फूल या पत्ती गिरने में शामिल है।

16.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. वृद्धि और परिवर्धन को नियंत्रित करने वाले विभिन्न कारक बताइए।

....
....
....
....
....

2. यह ज्ञात है कि अगर धान्य (अनाज) फसलों के तनों की लम्बाई, ठिगना बनाने वाले जीन से अथवा पादप हॉर्मोनों द्वारा कम कर दी जाय तो दानों की उपज अप्रभावित रहती है। यह किफ़ायती है। क्या आप बता सकते हैं कि किस हार्मोन का हस्तक्षेप किया जाना चाहिए?

....
....
....
....
....

3. प्राणी हॉर्मोन और पादप हॉर्मोन के बीच क्या अन्तर है?

....

....

....

....

....

4. नीचे दिए गए कथनों में से कौन-सा कथन सच है? दिए गए खानों में सच के लिए 'स' और गलत के लिए "ग" लिखिए।

   i) NAA और 2, 4-D का प्रभाव पौधों द्वारा उत्पन्न प्राकृतिक ऑक्सिनों की तरह है। ☐

   ii) पॉलिऐमीनें वृद्धि और परिवर्धन नियंत्रित करती हैं या नहीं, इस बारे में विवाद है। ☐

   iii) कटे हुए टुकड़ों में मूलोत्पत्ति शुरू करने के लिए पानी में थोड़ा सा NAA डालना ठीक रहेगा। ☐

   iv) वर्तमान साक्ष्य संकेत देता है कि पादप हॉर्मोनों के कार्य की क्रियाविधि प्राणी हॉर्मोनों से भिन्न है। ☐

16.7 उत्तर

बोध प्रश्न 1

क) i) ग, ii) क, iii) घ, iv) ख

ख) i) एबसिसिक एसिड ii) साइटोकाइनिनें
   iii) ऑक्सिनें, साइटोकाइनिनें, iv) जिबरेलिनें
   v) साइटोकाइनिनें, एबसिसिक एसिड

ग) i) ग, ii) घ, iii) क iv) च v) ख

घ) ऑक्सिनें--प्ररोह शीर्ष, तरुण पत्तियाँ और कलिकाएं जिबरेलिनें—वर्धी अग्रभाग
   साइटोकाइनिनें—मूलाग्र और परिवर्धी बीज

बोध प्रश्न 2

i) 2, 4-D, ii) ऑक्सिनें, iii) एथिलीन, iv) जिबरेलिनें, v) एथिलीन और ऑक्सिनें, v) ऑक्सिनें

अंत में कुछ प्रश्न

1. ये हैं:
   i) आनुवंशिक नियंत्रण
   ii) हॉर्मोनी नियंत्रण
   iii) पर्यावरणीय नियंत्रण—प्रकाश, तापमान, मृदा, pH, वर्षा, आर्द्रता और वृष्टि

2. जिबरेलिक एसिड। इसका संश्लेषण 2-क्लोरो ऐथिल ट्राइमेथिल अमोनियम क्लोराइड (CCC) द्वारा अवरुद्ध हो सकता है।

3. प्राणी हॉर्मोन विशिष्ट लक्ष्य ऊतकों में अत्यधिक विशिष्ट अनुक्रिया दाग (trigger) देते हैं, यानि शुरू कर देते हैं। पादप हॉर्मोन अधिक सामान्य रूप से और शायद अधिक जटिल ढंग से कार्य करते हैं।

4. i) स, ii) ग, iii) स, और iv) ग

इकाई 17 परिवर्धन और विभेदन

इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
17.2. वनस्पतिक परिवर्धन
परिभाषाएं
बीज-निर्माण
बीजांकुरण
प्रसुप्त वनस्पतिक संरचनाएं
17.3 पुष्पन
प्रदीप्त-अप्रदीप्त चक्रों के प्रति पौधे की अनुक्रिया
अप्रदीप्तकाल का महत्व
पुष्पन हॉर्मोन
द्रुतशीतन तथा पुष्प प्रेरण
जैव रासायनिक परिवर्तन
17.4 फ़ाइटोक्रोम
फ़ाइटोक्रोम की खोज
फ़ाइटोक्रोम के गुणधर्म
फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रित जैविक अनुक्रियाएं
क्रियाविधि
17.5 जीर्णता
जीर्णता का नियमन
जीर्णता से संबंधित जैव रासायनिक परिवर्तन
17.6 ऊतक संवर्धन
ऐतिहासिक दृष्टिकोण तथा तकनीकों का विकास
अंग, ऊतक तथा प्रोटोप्लास्ट संवर्धन
17.7 जैवघड़ियाँ (जैव नियतकालिकता)
जैव आवर्तिताओं को प्रभावित करने वाले कारक
17.8 सारांश
17.9 अंत में कुछ प्रश्न
17.10 उत्तर

17.1 प्रस्तावना

पुष्पी पादपों (flowering plants) की परिवर्धन की अवस्थाओं में बीजांकुरण, वनस्पतिक वृद्धि, पुष्पन, फलन और जीर्णता शामिल हैं। ये अवस्थाएं कड़े आंतरिक और वाह्य नियंत्रणों द्वारा सही समय पर घटित होने के लिए नियमनिष्ठ हैं। आपने देखा होगा कि एक बीज जो सारी सर्दी भर मिट्टी में दबा प्रसुप्त पड़ा रहता है यकायक सर्दी समाप्त होने पर अंकुरित हो जाता है और वसंत ऋतु में उस पौधे पर फूल आ जाते हैं। मरूस्थल में थोड़ी सी वर्षा होने पर बहुत से पौधे जीवित हो उठते हैं। वसंत के आते-आते प्रसुप्तावस्था (dormancy) में पड़ी शरदकालीन कलिकाएं (winter buds) पुनः सक्रिय हो जाती हैं। प्रश्न यह है कि बीजांकुरण को शुरू करने वाले वे बाह्य अथवा आंतरिक कारक कौन-से हैं जिनसे समस्त उपापचयी क्रियाएं आरंभ हो जाती हैं? बीज को यह ज्ञान कैसे हो जाता है कि उसके अंकुरण और वृद्धि के लिए समस्त पर्यावरणीय दशाएं अनुकूल हो गई हैं और कलिकाओं को कैसे पता लगता है कि शरदकाल समाप्त हो गया है?

आप यह भी जानते हैं कि अधिकांश फल, सब्जियां और फूल मौसमी होते हैं। गुलदाउदी (*Chrysanthemum*) सर्दियों में खिलती हैं जबकि गुलमोहर (Gulmohar) तथा अमलताश (Amaltas) गर्मियों में। कुछ पौधे में बसंत में फूल आते हैं और अन्य गर्मियों, पतझड़ अथवा

सर्दियां आने का इंतजार करते हैं। अनेक पुष्प समय सारणी (schedule) के अनुसार खुलते तथा बंद होते हैं जैसे कि उनकी कोशिकाओं में घड़ी लगी हो। अब जानना यह है कि क्या गुलदाउदी सारे साल उग सकती हैं अथवा मार्निंग ग्लोरी (Morning glories) के पुष्प शाम के समय खिल सकते हैं? आप इसी प्रकार पौधों के परिवर्धन से संबंधित अनेक प्रश्न पूछ सकते हैं।

इससे पिछली इकाई में आप पढ़ चुके हैं कि हॉर्मोन, लक्ष्य कोशिकाओं में कोशिकीय अभिक्रियाओं को शुरू करके जीव के विभिन्न भागों में वृद्धि और परिवर्धन को समन्वित (coordinate) करते हैं। इस इकाई में हम पादप परिवर्धन की विभिन्न अवस्थाओं की चर्चा करेंगे जो विशिष्ट पर्यावरणीय संकेतों (environmental signals) द्वारा नियंत्रित होती है। आप देखेंगे कि पादप-कोशिकाएं पर्यावरणीय संकेतों को प्राप्त करती हैं जो परिवर्धन की विभिन्न घटनाओं को प्रेरित करते हैं। ये संकेत कुछेक विशिष्ट अणुओं द्वारा प्राप्त किए जाते हैं तथा विशिष्ट क्रियाओं और विशिष्टताओं (characteristics) के नियमन के लिए निश्चित समय पर जीन चालू कर दिए जाते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के पश्चात् आपः

- बीज निर्माण तथा बीजांकुरण का वर्णन कर सकेंगे और उन कारकों को बता सकेंगे जो इन प्रक्रमों को नियंत्रित करते हैं,
- उन कारकों को सूचीबद्ध कर सकेंगे जो पुष्प प्रेरण के लिए उत्तरदायी हैं और ग्राही की प्रवृत्ति (nature of receptor) की चर्चा कर सकेंगे जो बाह्य उद्दीपनों का अनुभव करता है,
- फ़ाइटोक्रोम की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे जो पुष्पन के दौरान प्रदीप्त (light) तथा अप्रदीप्त (dark) चक्रों की अवधि को नियंत्रित करता है,
- पादप परिवर्धन के नियमन में फ़ाइटोक्रोम की भूमिका की चर्चा कर सकेंगे,
- उन विविध कारकों को सूचीबद्ध कर सकेंगे जो जीर्णता के प्रारंभ को प्रभावित करते हैं,
- ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी के सिद्धांत तथा उपयोगों का वर्णन कर सकेंगे, और
- पादपों में जैवघड़ियों द्वारा नियमित सर्केडियन आवर्तों (circadian rhythms) के उदाहरण दे सकेंगे।

17.2 वनस्पतिक परिवर्धन

इस इकाई का अध्ययन करने से पहले हमें वृद्धि, विभेदन तथा परिवर्धन शब्दों को समझ लेना चाहिए।

17.2.1 परिभाषाएं

i) वृद्धि (Growth) : यह मात्रात्मक तथा अनुत्क्रमणीय (irreversible) परिवर्तन है। यह जीव के आकार तथा आयतन में बढ़ोत्तरी दर्शाती है। उदाहरण के लिए पत्ती के आकार में परिवर्तन अथवा तने की लंबाई या चौड़ाई में बढ़ोत्तरी को हम वृद्धि कह सकते हैं। आमतौर पर वृद्धि शक्ल और स्वरूप में परिवर्तन से मालूम होती है। पौधे की संपूर्ण वृद्धि हो सकती है या केवल एक अंग की। कोशिकीय स्तर पर वृद्धि में विभिन्न अणुओं का संश्लेषण होता है खासतौर से न्यूक्लीक अम्लों, प्रोटीनों, लिपिडों जैसे बृहदाणु का। यह वृद्धिशील संरचनाओं में अपचय से व्युत्पन्न ऊर्जा को खर्च करके संश्लेषित होते हैं। ये बृहदाणु झिल्लियों और अंगकों जैसे क्लोरोप्लास्ट, माइटोकॉन्ड्रिया तथा अन्य अंगकों में व्यवस्थित हो जाते हैं। साथ ही कोशिकाओं का सक्रिय विभाजन होता है।

ii) विभेदन (Differentiation) : यह गुणात्मक परिवर्तन है जिसके फलस्वरूप अधिक विशेषीकरण (specialisation) होता है। उदाहरण के लिए मूल, प्रांकुर तथा पत्ती की कोशिकाओं और ऊतकों का निर्माण अथवा वे परिवर्तन जिससे वनस्पतिक कलिका एक पुष्पी कलिका में बदल जाती है विभेदन कहते हैं। सरल शब्दों में वह प्रक्रम जिसके द्वारा कोशिकाएं विशेषीकृत हो जाती हैं, विभेदन कहलाता है।

iii) **संरचना विकास** (Morphogenesis) : इस शब्द का सृजन उन प्रक्रमों के लिए किया जाता है जिसके द्वारा अंगों के स्वरूप और संरचना का निर्धारण होता है। इस शब्द को मुख्यतः प्रयोगात्मक आकारिकीविद् (experimental morphologist) प्रयोग में लाते हैं। हमारे काम के लिए विभेदन और संरचना विकास का एक ही अर्थ है और हम इन्हें अदल-बदल कर प्रयोग में ला सकते हैं।

ग्रीक भाषा में मॉर्फो (morpho) का अर्थ होता है "रूप" और जिनेसिस (genesis) का अर्थ होता है — "उद्भव" अथवा शुरुआत।

iv) **परिवर्धन** (Development) : वह प्रक्रम जिसमें कोशिकाओं की वृद्धि और विभेदन द्वारा अंगों और पूर्ण जीव का निर्माण होता है, अक्सर परिवर्धन कहलाता है। उदाहरण के लिए, उच्चतर पौधे का परिवर्धन बीज के निर्माण से शुरू होता है और फिर बीजांकुरण के परिणामस्वरूप मूल और प्रांकुर निकलते है। और अधिक वृद्धि होने पर और शाखाएं तथा पत्तियां बनती है और यह क्रम तब तक चलता रहता है जब तक कि वनस्पतिक कलिकाएं पुष्पी कलिकाओं में बदल नहीं जातीं। पुष्पों के निर्माण के पश्चात् निषेचन (fertilisation) होता है जिसके फलस्वरूप फलों और बीजों का विकास होता है।

17.2.2 बीज निर्माण

परिपक्व बीज में बीजावरण (seed coat) व भ्रूण (embryo) होता है। एकबीजपत्री पौधे के एन्डोस्पर्म में आरक्षित खाद्य सामग्री होती है जबकि द्विबीजपत्री पौधों में यह सामग्री बीज पत्रों (cotyledons) में होती है। चित्र 17.1 में एकबीजपत्री तथा द्विबीजपत्री बीजों की संरचना बताई गई है। जैसाकि दिखाया गया है, भ्रूण पहले से ही सुविकसित होता है और यह भ्रूणीय मूल मूलांकुर (radicle) और प्रांकुर (plumule) में विभेदित होता है।

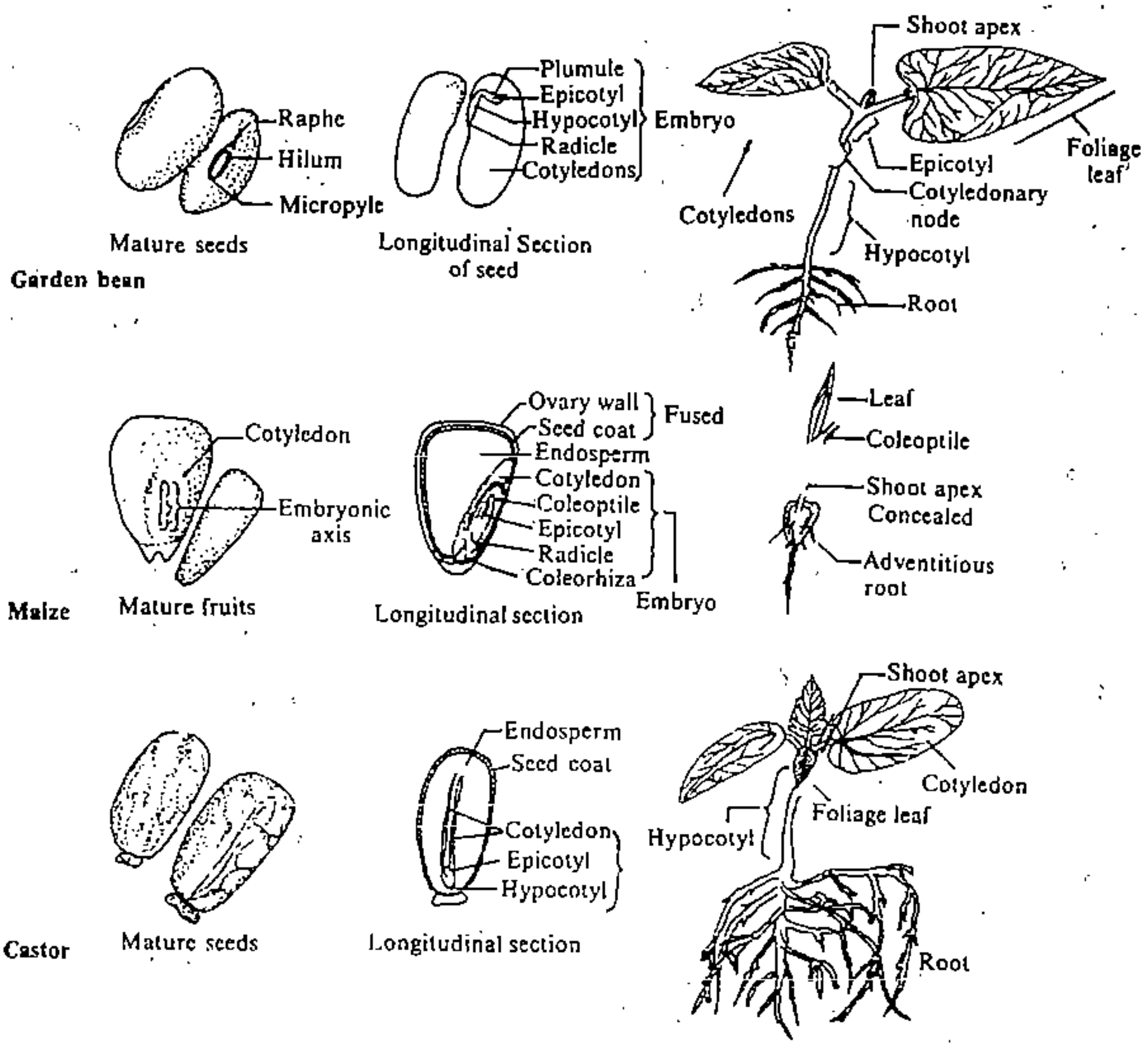

चित्र 17.1: तीन भिन्न किस्म के ऐन्जियोस्पर्मों (आवृतबीजी) के बीजों की संरचना तथा उनकी पौध। खाद्य पदार्थ बीजपत्रों में संचित रहता है (जैसे फली, द्विबीजपत्री पौधों में) या एन्डोस्पर्म में (जैसे मक्का, एक बीजपत्री और एरंड (castor bean) द्विबीजपत्री)।

आप जानते हैं कि नर युग्मक (male gamete) के अंड कोशिका के साथ संयोजन से बीज के निर्माण का प्रक्रम शुरू होता है। इस प्रकार बने युग्मनज (zygote) में विभाजन हो जाता है जिसके फलस्वरूप भ्रूण का परिवर्धन होता है। इस अवस्था पर परिवर्धन रुक जाता है और उपापचयी क्रियाओं में ठहराव आ जाता है जो फिर से शुरू तब होती है जब बीज पैत्रिक पौधे से विकीर्णित होकर अंकुरित होता है। बीज-निर्माण के प्रक्रम को दो अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है:

i) **विभाजन अवस्था** (division phase) : इसमें निषेचित अंडा सूत्री-विभाजन (mitosis) द्वारा विभक्त होता है और भ्रूणीय परिवर्धन पूरा करता है।

ii) **शुष्कन अवस्था** (desiccation phase) : इस अवस्था में भ्रूण प्रायः निष्क्रियता अथवा प्रसुप्तावस्था काल में प्रवेश करता है। इसमें और विभाजन नहीं होता, बीज में जल की औसत मात्रा 15% से भी कम हो जाती है, श्वसन धीमा पड़ जाता है, माइटोकॉन्ड्रियों की संरचना बिगड़ने लगती है (जो कि इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी का प्रयोग करके देखा गया है) और प्रोटीन संश्लेषण में भी धीरे-धीरे ठहराव आ जाता है।

शोधकार्यों द्वारा विशेष बात यह भी देखी गई है कि यद्यपि प्रोटीन-संश्लेषण नहीं हुआ था, परंतु तंत्र में तब भी काफी mRNA मौजूद थे जो कि विभाजन के दौरान उत्पन्न हुए थे। इसका अर्थ यह हुआ कि किन्हीं कारणों से प्रोटीन-संश्लेषण रुक गया था परंतु मौजूद mRNA भ्रूण में संचित रहे बाद में ये mRNA बीजांकुरण के दौरान कुछ विशिष्ट प्रोटीनों को उत्पन्न करने के काम में लिए गये। अब प्रश्न उठता है कि प्रोटीन-संश्लेषण किस प्रकार रुक जाता है? यह पता लगा है कि शुष्कन की अवस्था में *एबसिसिक अम्ल* उत्पन्न होता है जिसकी उच्च सांद्रता mRNA के स्थानांतरण (translation) को अवरुद्ध कर देती है। एबसिसिक अम्ल द्वारा प्रोटीन-संश्लेषण के अवरूद्ध होने की प्रक्रिया पौधों के परिवर्धन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यदि ABA उत्पन्न न हो तो प्रकीर्णन (dispersal) से पहले ही, फल में बीज अंकुरित होने लगेगा। यह पौधे की उत्तरजीविता (survival) को प्रभावित करेगा। एक स्पीशीज़ में बीज की प्रसुप्तावस्था की अवधि दूसरी स्पीशीज़ से भिन्न होती है। अनाजों में यह अवधि बहुत कम होती है। कुछ पौधों में कभी-कभी बीज स्वयं पितृ पौधे पर ही अंकुरित हो जाते हैं जैसाकि कभी-कभार नारंगी और पपीते में देखा जाता है। इस घटना को **सजीवप्रजता** (vivipary) कहते हैं जो कि मैंनग्रोव (mangrove) पौधों की विशेषता होती है।

17.2.3 बीजांकुरण (Seed Germination)

बीजांकुरण को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारक हैं: (i) जल की उपलब्धता, (ii) इष्टतम प्रकाश, (iii) वायु की उपलब्धता, (iv) तापमान तथा बीज की आयु। जब बीज पानी को सोख लेते हैं तो वे फूल जाते हैं। वास्तव में बीज इसलिए फूलते हैं क्योंकि कार्बोहाइड्रेटों और प्रोटीनों में विद्यमान NH_2, OH^-, COO^- जैसे जलरागी समूह (hydrophilic groups) द्विध्रुवीय (dipolar) जल-अणु को आकर्षित करते हैं। यदि ऑक्सीजन भी उपलब्ध होती है तो अंकुरण के लिए ऊर्जा (ATP) उपचायी फ़ॉस्फ़ेटीकरण (oxidative phosphorylation) द्वारा प्राप्त की जाती है।

इष्टतम तापमान (optimum temperature) पर कई जैव रासायनिक अभिक्रियाएं होती हैं। ये सभी परिवर्तन अंकुरण में योग देते हैं और अंत में बीजांकुरण के फलस्वरूप मूलांकुर और प्रांकुर का उद्‌गमन होता है। जड़ तथा तना वृद्धि करता है (देखिए चित्र 17.1) और थोड़े समय के लिए उन्हें वृद्धि के लिए बीज में संचित खाद्य पदार्थ उपलब्ध होता है। जब पत्तियां विकसित हो जाती है तब पौधा स्वपोषी (autotrophic) हो जाता है और वह अपने लिए खाद्य-पदार्थ प्रकाश की उपस्थिति में संश्लेषित कर लेता है। प्रयोगों से यह रहस्य उद्‌घाटित हो गया है कि कुछ बीजों को अंकुरण के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है। बीजांकुरण पर प्रकाश के प्रभाव, **फ़ाइटोक्रोम (phytochrome)** नामक वर्णक द्वारा नियंत्रित होता है जिसके बारे में आप खंड 17.4 में पढ़ेंगे। शीतोष्ण क्षेत्र (temperate region) के कई बीजों को अंकुरण के लिए कम से कम कुछ समय तक पूर्वद्रुतशीतन (ठंडा करने) की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, लैट्यूस के बीज ग्रैंड रेफिड (Grand raphid) नामक किस्म प्रसुप्तावस्था में रहते हैं क्योंकि ये बीजावरण द्वारा लगाए

गए भौतिक प्रतिबंध पर काबू नहीं पा सकते। इनका बीजावरण काष्ठ फल के खोल की तरह कड़ा होता है। इसके बीजों को अंकुरण के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है। ये अंधेरे में भी अंकुरित हो जाते हैं यदि कुछ घंटों के लिए इनका पूर्वद्रुतशीतन 2°C कर लिया जाए। ये प्रेक्षण सुझाते हैं कि अंकुरण को शुरू करने के लिए एक ही चलाने-रोकने वाला स्विच (single on and off switch) है जो कि प्रकाश द्वारा अथवा द्रुतशीतन द्वारा चलाने की स्थिति में आ सकता है।

आइए, अब हम बीजों में होने वाले परिवर्तनों को देखें जो जल के अंतशोषण के बाद होते हैं। सामान्यतः होने वाली सबसे महत्वपूर्ण उपापचयी घटनाएं ये हैं :

i) विभिन्न एन्ज़ाइमों की क्रिया द्वारा संचित खाद्य पदार्थों का अवकर्षण (degradation)।

ii) हॉर्मोन की मात्रा के स्तर में परिवर्तन, और

iii) नई प्रोटीनों और एन्ज़ाइमों का संश्लेषण।

बीज खाद्य-पदार्थों को वसा, प्रोटीनों तथा स्टार्च के रूप में संचित करते हैं। इन्हें भ्रूण सीधे ही प्रयोग में नहीं ले सकता। प्रयोग में लेने योग्य बनाने के लिए इन्हें अवकर्षित करना होता है। लाइपेज एन्ज़ाइम वसाओं को विखंडित करके वसा अम्लों और ग्लिसरॉल में बदल देता है। आप जानते हैं कि वसा अम्ल β-उपचयन (β-oxidation) द्वारा ऐसीटिल CoA में बदल जाते हैं। आप यह भी पढ़ चुके हैं कि यह ऐसीटिल CoA ग्लॉयाक्सिलेट चक्र (glyoxylate cycle) के जरिए सक्सिनेट उत्पन्न करता है (कोशिका जीवविज्ञान पाठ्यक्रम की इकाई 12) जो कि ग्लूकोनियोजेनेसिस (gluconeogenesis) चक्र द्वारा ग्लूकोज़ बनाता है। जल-अपघटन क्रिया द्वारा α-एमिलेज़ स्टार्च को माल्टोज इकाइयों में बदल देता है जो कि ग्लूकोज़ में परिवर्तित हो जाती है।

प्रोटीनें बीजों में प्रोटीन पिंडों (protein bodies) में संचित होती है। विभिन्न पौधे की प्रोटीनें भिन्न-भिन्न होती हैं। उदाहरण के लिए मक्का की प्रोटीनों को जीन (zein) व जौ (barley) की प्रोटीनों को होर्डेइन्स (hordeins) कहते हैं। सोयाबीन के बीजों में प्रोटीन पिंडों के आकार विभिन्न होते हैं। प्रोटीनेज़ेस द्वारा प्रोटीनों के जल-अपघटन से ऐमीनो अम्ल बनते हैं। जिनका उपयोग उन प्रोटीनों के संश्लेषण में होता है जो भ्रूण के लिए कार्यात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है। इसी प्रकार कुछ बीजों में न्यूक्लीक अम्ल न्यूक्लिएस एन्ज़ाइम द्वारा अवकर्षित होकर न्यूक्लियोटाइडों में बदल दिये जाते हैं जिन्हें फिर से DNA के संश्लेषण के निर्माण-खंडों (building blocks) के रूप में प्रयोग में ले लिया जाता है।

जाइन (Zein) : बीजों में प्रोलैमिन और ग्लूटेलिन नामक संग्रहणीय प्रोटीनें होती हैं। प्रोलैमिन में ऐमीनो अम्लों यथा लाइसीन और ट्रिप्टोफैन की कमी होती है जो कि पोषण के लिए अनिवार्य ऐमीनो अम्ल हैं। पौधे के जीनों के आधार पर बीजों को प्रोलैमिन नाम दिया जाता है। आजकल अधिकांश अनुसंधान कार्य बीज में पाई जाने वाली संग्रहणीय प्रोटीन की संरचना तथा संगठन का विश्लेषण करने के लिए किए जा रहे हैं जिससे कि उनके संगठन को रूपांतरित किया जा सके और पोषण संबंधी किसी असंतुलन को सही किया जा सके।

उपर्युक्त विवेचन से आप समझ गए होंगे कि बीजांकुरण के दौरान कई जल-अपघटनी एन्ज़ाइमों को उत्पन्न करना सबसे शुरू की घटनाओं में से एक है जिससे कि संचित खाद्य पदार्थों का छोटे-छोटे अणुओं में अपकर्षण हो और इनका इस्तेमाल भ्रूण अपनी वृद्धि के लिए कर सकें। खाद्य पदार्थ का अवकर्षण एन्डोस्पर्म अथवा संग्रहणी ऊतक (बीजपत्र cotyledon) में होता है और उत्पन्न ऊर्जा तथा कच्चे माल (raw material) को विकासशील भ्रूण में उसके पोषण के लिए पहुंचा दिया जाता है। श्वसन के द्वारा शर्कराओं के उपचयन (catabolism) से ATP तथा NADH उत्पन्न होते हैं। कुछ बीजों में ऐसा भी देखा गया है कि आरंभ में ATP बीजों में संग्रहित फ़ॉस्फ़ोरस की अधिकता वाले यौगिक नोसिटॉल 6-फ़ॉस्फेट (inositol 6-phosphate) अथवा फाइटिन (phytin) के फाइटेज़ (phytase) नामक एन्ज़ाइम द्वारा विखंडन से उत्पन्न होता है।

बीजांकुरण के दौरान हॉर्मोन के स्तर में भी बहुत से परिवर्तन होते हैं। जैसाकि पिछली इकाई में बताया गया था कि जौ के बीज का भ्रूण जिबरेलिन अम्ल उत्पन्न करता है जो कि ऐल्यूरोन परत पर क्रिया करता है और एन्ज़ाइम α-एमिलेज़ के संश्लेषण को प्रेरित करता है। आप जानते ही हैं कि α-एमिलेज़, स्टार्च का अवकर्षण करता है। अतः स्पष्ट है कि यह एन्ज़ाइम बीज में तो मौजूद नहीं था परंतु नया (*de novo*) संश्लेषित होता है। प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो गया है कि जिबरेलिन खासतौर से α-एमिलेज़ के mRNA के संश्लेषण को प्रभावित करता है (अर्थात α-एमिलेज़ के जीन के अनुलेखन को i.e. transcription of α-amylase gene) को जैसा कि हम पहले बता चुके हैं बीज में पहले से ही कुछ एन्ज़ाइम विद्यमान होते हैं और हॉर्मोन के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप अन्य एन्ज़ाइम उत्पन्न होते हैं। जौ के बीजों में होने वाले परिवर्तनों में से कुछ को चित्र 17.2 में दिखाया गया है।

फ़ाइटिन की संरचना : फ़ाइटेज़ द्वारा विखंडित होकर फ़ाइटिन अकार्बनिक फ़ॉस्फ़ेट का मोचन करता है जो कि ADP के साथ जुड़ जाता है और ATP बनाता है।

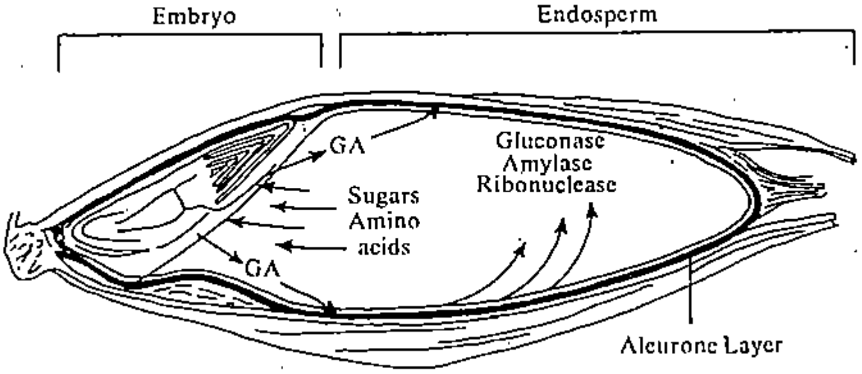

चित्र 17.2: जौ के बीज में होने वाले आरंभिक उपापचयी परिवर्तनों का कार्यकारी मॉडल। जिबरेलिन अम्ल (GA) भ्रूण से बाहर निकलता है और ऐल्यूरोन परत पर क्रिया करता है। यह नए एन्ज़ाइमों का संश्लेषण उनके mRNA के संश्लेषण द्वारा शुरू करता है। एन्डोस्पर्म में ये जल-अपघटनीय (hydrolytic) एन्ज़ाइम अपने सब्स्ट्रेटों पर क्रिया करते हैं और इस प्रकार भ्रूण को उसकी वृद्धि के लिए शर्कराएं और ऐमीनों अम्ल उपलब्ध कराते हैं।

बीजांकुरण के दौरान अनेक कोशिकीय परिवर्तनों की भी शुरुआत होती है। झिल्लियों के संगठन में जैसे कि अंतर्द्रव्यी जालिका (endoplasmic reticulum)। माइटोकॉन्ड्रिया के विकास में भी परिवर्तन होते हैं। इन सभी परिवर्तनों के परिणामस्वरूप, भ्रूण को पोषण उपलब्ध होता है जिससे कि वह विभाजित हो और वृद्धि कर सके। इन घटनाओं के फलस्वरूप मूलांकुर अर्थात् मूल निकलता है और उसके बाद प्रांकुर अर्थात् प्ररोह निकलता है। प्ररोह वृद्धि करता है और उस पर प्राथमिक पत्तियां विकसित हो जाती हैं और पत्तियों में क्लोरोप्लास्टों के विद्यमान होते ही पौधा स्वपोषी (autotrophic) हो जाता है और ज़मीन में अपनी जड़ें जमाकर अपना जीवन शुरू करता है।

17.2.4 प्रसुप्त वनस्पतिक संरचनाएं

हम पढ़ चुके हैं कि प्रकाश से, या कुछ समय के लिए द्रुतशीतन से अथवा जिबरेलिन का अनुप्रयोग करने से अक्सर बीज की प्रसुप्तावस्था खत्म हो जाती है और बीजांकुरण उद्दीपित होता है। वनस्पतिक अंग जैसे — कंद (tubers), कॉर्म (corms), बल्ब (bulb) और शीत कलिकाएं भी प्रसुप्तावस्था में प्रवेश कर सकती हैं। इन प्रसुप्त-संरचनाओं में फिर से वृद्धि करने के लिए किस प्रकार के उद्दीपन की आवश्यकता होगी? देखा गया है कि कुछ वृक्षों में प्रकाश के पड़ने पर कलिकाओं का प्रस्फुटन उद्दीपित हो सकता है और शीतोष्ण क्षेत्र के पौधों में प्रसुप्त कलिकाओं और अन्य अंगों के विकास के लिए कुछ समय तक द्रुतशीतन आवश्यक होता है। हालांकि कलिका के फूटने के लिए आमतौर पर एक सप्ताह या उससे अधिक समय तक द्रुतशीतन की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार शीतकालीन कलिकाओं की प्रसुप्तावस्था को समाप्त करने के लिए लम्बा दिन यानि दीर्घ प्रदीप्तकाल होना आवश्यक होता है जिससे कि वे अधिक समय तक प्रकाश में हों। प्रसुप्त कलिकाओं को जिबरेलिनों के छिड़काव द्वारा भी उद्दीपित किया जा सकता है। जैसाकि आप जानते हैं कि जिबरेलिन वृद्धि को उद्दीपित करता है और एबसिसिक अम्ल वृद्धि को अवरुद्ध करता है। इसलिए कलिका की प्रसुप्तावस्था खत्म होने पर GA की मात्रा में वृद्धि होती है और एबसिसिक अम्ल की मात्रा में कमी आती है। यहां इस बात पर जोर डालना जरूरी है कि यद्यपि पौधे की सभी कलिकाओं को प्रसुप्तावस्था समाप्त करने के लिए एक समान उद्दीपन प्राप्त होता है, फिर भी केवल शीर्ष कलिका ही वृद्धि करती है और शेष कलिकाओं की वृद्धि शीर्ष प्रभुत्व (apical dominance) द्वारा अवरुद्ध रहती है (देखिए इकाई 16)।

पौधों में वनस्पतिक जनन प्रकंद (rhizome) उपरिभूस्तारी (runner) अथवा भूस्तारी (stolons) के जरिए होता है। आलू में कंद निर्माण को प्रेरित किया जा सकता है यदि दिन में क्रांतिक मान (critical value) से कम समय के लिए पत्तियों को प्रकाश में रखा जाता है। हॉर्मोनों के अनुप्रयोग से देखा गया है कि कंद-निर्माण में जिबरेलिक अम्ल की मात्रा कम और ऐबसिसिक अम्ल की मात्रा बढ़ जाती है। प्रयोगों के परिणामस्वरूप यह पता चला है कि एक खास किस्म के हॉर्मोन के स्तर में वृद्धि होने से कुछ अंगों में अधिक वृद्धि होती है और कुछ में कम हो जाती है।

बोध प्रश्न 1

क) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति उपयुक्त शब्दों द्वारा कीजिए :

i) बीज निर्माण में एक बार जब युग्मनज से भ्रूण बन जाता है तो यह आमतौर पर .... अवस्था में प्रवेश कर लेता है।

ii) बीज निर्माण की निर्जलीकरण प्रावस्था में .... का संश्लेषण अवरुद्ध है परंतु बीज में .... रहता है जो कि विभाजन की अवस्था में बना था।

iii) स्वयं जनक पौधे पर बीजांकुरण की घटना को .... कहते हैं।

iv) जल शोषण प्रावस्था में प्रोटीन संश्लेषण .... हॉर्मोन द्वारा अवरुद्ध हो जाता है।

v) भ्रूण से निकलने वाला जिबरेलिक अम्ल .... परत में विसरण कर जाता है और α-एमिलेज़ के संश्लेषण के लिए mRNA उत्पन्न करता है।

vi) अंकुरण के दौरान खाद्य अणुओं, जैसे कार्बोहाइड्रेटों, प्रोटीनों और वसाओं के अणुओं का .... एन्ज़ाइमों द्वारा अवकर्षण हो जाता है और छोटे अणु बन जाते हैं जिससे कि वे भ्रूण को पोषण प्रदान कर सकें।

vii) कुछ खास स्पीशीज़ों में बीजांकुरण के लिए .... से ऊर्जा से प्राप्त होती है जो कि बीजों में संचित ऊर्जा की अधिकता वाला यौगिक है।

17.3 पुष्पन

वनस्पतिक अवस्था का पुष्पन अवस्था में बदलना पौधे के जीवन चक्र में होने वाले प्रमुख परिवर्तनों में से एक है। इसमें वनस्पतिक मेरिस्टेम ऊतक (vegetative meristematic tissue) पुष्पी मेरिस्टेमों में बदल जाते हैं जो कि पत्तियों और शाखाओं के बदले में बाह्य दल (sepals), पंखुड़ियाँ (petals), अंडप (carpels) और परागकोश (anthers) बनाते हैं। यह एक प्रमुख संरचना विकास परिवर्तन (morphogenetic change) होता है। कुछ पौधों में यह परिवर्तन जीवन में एक ही बार होता है और पुष्प, फल और बीज बनाने के बाद पौधा मर जाता है। इसके विपरीत अन्य पौधे ऐसे होते हैं जिनमें हर वर्ष पुष्प उत्पन्न होते हैं, जैसे कि वृक्षों में। अब प्रश्न यह उठता है कि विभिन्न समय पर पुष्पन क्या पौधे में होने वाली वार्षिक आवर्तिता (annual rhythm) के कारण होता है या इसके लिए किसी विशेष पर्यावरणीय स्थिति की मांग होती है। इस खंड में हम आपको बताएंगे कि पुष्पन को नियंत्रित कौन करता है और किस प्रकार यह परिवर्तन होता है।

जैसाकि अब हम जानते हैं कि पुष्पन को प्रभावित करने वाले कारकों में से एक प्रमुख कारक पर्यावरण है और खासतौर से 24 घंटे का प्रदीप्त/अप्रदीप्त काल का चक्र या तापमान है। तथापित इस तथ्य को जानने में वैज्ञानिकों को अनेक वर्ष लग गए। हम यहां ऐसे दो प्रायोगिक प्रेक्षणों का वर्णन करेंगे जिनसे पता चला कि दिन की अवधि ही पौधों में पुष्पन को निर्धारित करती है।

दीप्तिकालिता (photo-periodism) की घटना की खोज दो अमरीकी वैज्ञानिकों — गार्नर (Garner) और एलर्ड (Allard) — ने सन् 1920 में की थी जो बेल्टविले, मेरीलैंड (Belts/vile, Maryland) में स्थित संयुक्त राज्य (U.S.) कृषि विभाग में कार्य कर रहे थे।

सोयाबीन (*ग्लाइसिन मैक्स Glycine max*) के बीजों को मई, जून, जुलाई और अगस्त के महीनों में भिन्न-भिन्न समय पर बोया गया। यद्यपि ये विभिन्न समय पर बोये गए थे फिर भी सभी पर सितंबर के महीने में ही फूल आये। सबसे पहले बोए गए बीजों को फूल पैदा करने में 125 दिन लगे जबकि सबसे बाद में बोए गए बीज को केवल 58 दिन लगे। इन प्रेक्षणों से यह सिद्ध होता है कि वर्ष के निर्धारित समय पर दिन की अवधि पौधों के लिए पुष्प पैदा करने के लिए उपयुक्त थी। एक और प्रेक्षण तंबाकू के उत्परिवर्ती (mutant) पर किया गया जिसे *मेरीलैंड मैमथ (Maryland mammoth)* कहते हैं क्योंकि इसकी पत्तियों का आकार बड़ा होता है। खेतों में यह सर्दियों तक पुष्प उत्पन्न नहीं करता परंतु ग्रीन हाउस (green house) में जब प्रकाश उतनी अवधि के लिए दिया गया जितनी देर तक ग्रीष्म ऋतु में पौधों को उपलब्ध होता है, तो इस पौधे में सर्दियों में भी पुष्पन को प्रेरित किया जा सका।

शीतोष्ण क्षेत्र में ग्रीष्मकाल में दिन की लंबाई अधिक होती है।

17.3.1 प्रदीप्त-अप्रदीप्त चक्रों के प्रति पौधे की अनुक्रिया

पुष्पी पौधों को जितनी अवधि वाले दिन की आवश्यकता होती है, अर्थात् जितने घंटे तक प्रकाश मिलना चाहिए, उसके आधार पर उन्हें तीन प्रमुख कोटियों में वर्गीकृत किया गया है — अल्प प्रदीप्तकाली पौधे (Short-Day Plant—SDP), दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे (Long-Day Plant LDP) और दिवा निरपेक्ष पौधे (Day-Neutral Plant) (चित्र 17.3)।

अल्प प्रदीप्तकाली पौधे (SDP): ये पौधे तभी फूल उत्पन्न करते हैं अथवा बहुत अधिक और जल्दी फूल उत्पन्न करते हैं जब उन्हें दिन में (24 घंटे के चक्र में) निर्धारित (क्रांतिक) घंटों से कम समय के लिए प्रकाश दिया जाता है। यहां यह स्पष्ट कर दें कि क्रांतिक अवधि 12 घंटों की नहीं होती। यह 10 घंटे भी हो सकती है। ऐसी अवस्था में यदि पौधों को 10 घंटे से कम प्रकाश (यानि 8 घंटे रोशनी और 16 घंटे अंधेरा) दिया जाए तो इसमें पुष्पन शुरू हो जाएगा और यह क्रांतिक अवधि प्रयोगों द्वारा निर्धारित की जाती है तथा भिन्न-भिन्न पौधों के लिए भिन्न होती है। अल्प प्रदीप्तकाली पौधे उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मिलते हैं जहां वर्ष भर दिन की अवधि में तुलनात्मक दृष्टि से बहुत कम भिन्नता होती है।

दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे (LDP): इस प्रकार के पौधों की परिभाषा अल्प प्रदीप्तकाली पौधों से बिल्कुल विपरीत होती है अर्थात् वे पौधे जिनमें निर्धारित (क्रांतिक) घंटों से अधिक प्रदीप्तकाल (दिन की अवधि) उपलब्ध होने पर पुष्पन होता है। ये पौधे शीतोष्ण क्षेत्र में मिलते हैं और उनमें पुष्पन ग्रीष्म ऋतु में होता है।

दिवा निरपेक्ष पौधे (Day-Neutral Plants) : SDP और LDP के अतिरिक्त जो पौधे प्रकाश की अवधि के द्वारा प्रभावित हुए बगैर पुष्प पैदा करते हैं उन्हें दिवा निरपेक्ष पौधे कहते हैं। इन पौधों के लिए किसी निर्धारित प्रदीप्तकाल की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

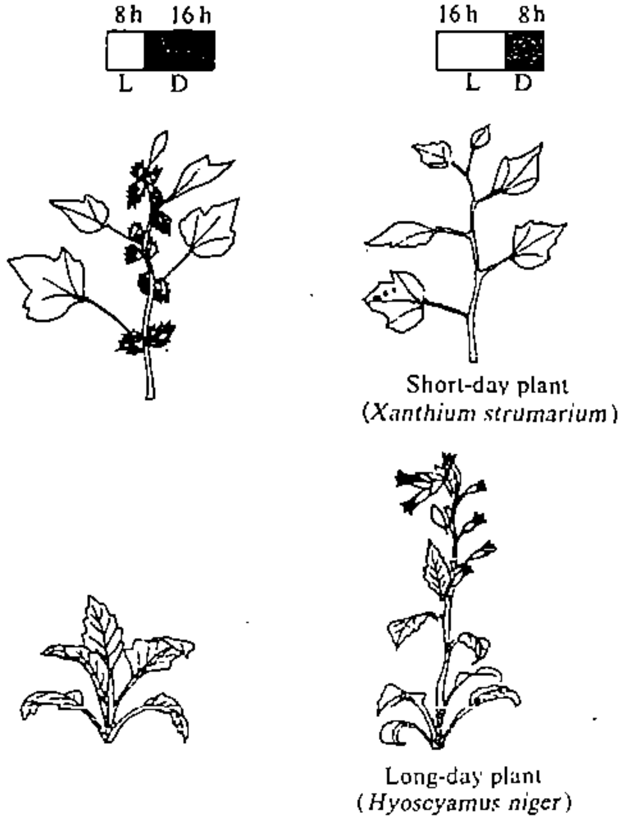

चित्र 17.3: अल्प प्रदीप्तकाली (SDP) और दीर्घप्रदीप्तकाली (LDP) पौधे में अंतर दर्शाने के लिए आरेखीय निरूपण। अल्प प्रदीप्तकाली पौधे को अप्रदीप्तकाल की क्रांतिक अवधि (critical period of darkness) से अधिक अप्रदीप्त काल की मांग होती है। उपरोक्त पौधे को 8 घंटे से अधिक अप्रदीप्त काल की या 16 घंटे से कम प्रदीप्त काल की आवश्यकता है। दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे को क्रांतिक अवधि से कम अप्रदीप्त काल या निर्धारित घंटों से अधिक प्रदीप्त काल आवश्यक है। उपरोक्त पौधे को 10 घंटे से अधिक प्रदीप्त काल आवश्यक है।

इन तीन प्रकार के पौधों के कुछ उदाहरण तालिका 17.1 में दिए गए हैं। दिन की अवधि की मांग स्पीशीज़ दर स्पीशीज़ भिन्न होती है (चित्र 17.4)। केवल एक ही स्पीशीज़ के पौधों में भी बड़े दिन वाले अथवा छोटे दिन वाले पौधों की विभिन्न किस्मों में दिन की क्रांतिक लंबाई की मांग में विविधताएं देखी जा सकती हैं। ऐसा उल्लेख किया गया है कि धान (rice) के पौधे दिन की अवधि में केवल 15 मिनट के अंतर को भी जान लेते हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि पौधों के ऊतकों में अत्यधिक शुद्धता से समय को मापने की कोई क्रिया प्रणाली होनी चाहिए। कुछ पौधों में केवल दिन की विशेष अवधि द्वारा पुष्पों का उत्पादन प्रेरित किया जा सकता है यदि पौधे को पहले से द्रुतशीतित किया जाए

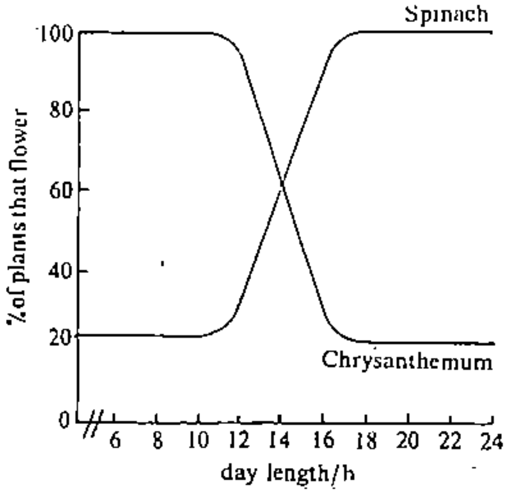

चित्र 17.4: गुलदाऊदी और पालक में पुष्पन के लिए दिन की अवधि की मांग और प्रतिशत पुष्पन।

तालिका 17.1 : अल्प प्रदीप्तकाली, दीर्घ प्रदीप्तकाली और दिवा निरपेक्ष पौधों के कुछ उदाहरण

किस्म	व्यवहार	उदाहरण
लघु-प्रदीप्तकाली	केवल छोटे दिनों में ही पुष्प उत्पन्न करते हैं।	चीनोपोडियम रूब्रम (*Chenopodium rubrum*), लेम्रा पोसिकोस्टेटा (*Lemna paucicostata*), ओराइज़ा सैटाइवा (*Oryza sativa*), ग्लाइसिन मैक्स (*Glycine max*), कैलेनकोइ ब्लॉसफेल्डियाना (*Kalanchoe blossfeldiana*), जैंथियम स्ट्रेमेरियम (*Xanthium strumarium*)।
दीर्घ-प्रदीप्तकाली पौधे	लंबे दिनों में शीघ्र ही पुष्प उत्पन्न करते है।	अरेबिडोपसिस थैलियाना (*Arabidopsis thaliana*), हायोसायमस नाइजर(*Hyoscyamus niger*), लैक्टूका सैटाइवा (*Lactuca sativa*), होर्डियम वल्गेयर (*Hordeum vulgare*), निकोशियाना सिल्वेस्ट्रिस (*Nicotiana sylvestris*), बीटा वलगैरिस (*Beta vulgaris*)।
दिवा-निरपेक्ष पौधे	दिन या रात की अवधि से पुष्पन पर कोई प्रभाव नहीं होता।	ओराइज़ा सैटाइवा (*Oryza sativa*), कुकुमिस सैटाइवा, (*Cucumis sativa*), लाइकोपर्सिकोन एस्कुलेन्टम (*Lycopersicon esculentum*), गोसिपियम हिरसूटम (*Gossypium hirsutum*)।
केवल द्रुतशीतन उपचार	द्रुतशीतन के बाद सामान्य ताप पर लौट आने पर पुष्प उत्पन्न करने वाले पौधे	प्रिमरोज़ (*Primula vulgaris*)।
द्रुतशीतन के पश्चात् दीर्घ प्रदीप्त काल	द्रुतशीतन के पश्चात् लंबे दिन होने पर पुष्प उत्पन्न करते हैं।	हेनबने (*Hyoscyamus niger*)।
द्रुतशीतन के पश्चात् लघु प्रदीप्तकाल	द्रुतशीतन के पश्चात् छोटे दिन होने पर पुष्प उत्पन्न करते हैं।	क्राइसेन्थिमम हाइब्रिड्स (*Chrysanthemum hybrids*)।

जैसे डैफ़ोडिल (daffodil) और हेनबेन (henbane)। जबकि कुछ पौधे, उदाहरण के लिए प्रिमरोज़, केवल द्रुतशातन के प्रति अनुक्रिया से पुष्प उत्पन्न करते हैं वरना ये दिवा निरपेक्ष होते हैं।

17.3.2 अप्रदीप्त काल का महत्व

काफ़ी समय से पुष्पन के लिए प्रदीप्तकाल (दीप्ति काल photoperiod) को महत्व दिया जाता रहा है। तथापित कुछ प्रयोगों के आधार पर यह महसूस किया गया कि पौधे में पुष्पन प्रेरित करने के लिए अप्रदीप्तकाल अधिक महत्वपूर्ण होता है। वास्तव में काफी पहले सन् 1912 में जुलियन टूर्नोइस (Julien Tournois) ने पुष्पन पर अपने प्रयोगों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला था कि पुष्पन छोटे दिनों के बजाय लम्बी रात होने पर होता है। यहां हम एक ऐसे प्रयोग का वर्णन करेंगे जिसे हैम्नर और बोनर (Hamner and Bonner 1936) ने काफी वर्षों बाद किया था और उससे यह धारणा सिद्ध भी हो गई।

अल्प प्रदीप्तकाली पौधा उसे कहते हैं जिसे पुष्प उत्पन्न करने के लिए 16 घंटे अप्रदीप्तकाल और 8 घंटे प्रदीप्तकाल की आवश्यकता होती है। यदि अप्रदीप्तकाल कम कर दिया जाता है तो पौधों पर पुष्प नहीं लगते। यहाँ रोचक बात यह सामने आई कि यदि 16 घंटे के अप्रदीप्त काल में रखें गए पौधों को बीच में थोड़ी देर प्रकाश दिया जाए तो भी पुष्प उत्पन्न नहीं होते। तथापि यदि प्रदीप्त काल के बीच बाधा डाली जाए अथवा पौधों को 8 घंटे से कम समय के लिए प्रकाश में रखा जाए तो पुष्पन पर कोई प्रभाव नहीं होता। इससे यह बात स्पष्ट हो गई कि प्रदीप्तकाल में परिवर्तन करने से पुष्पन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि अप्रदीप्त काल के 16 घंटे से कम कर दिये जाएं या बीच में बाधा डाली जाए तो भी पौधों पर पुष्प नहीं आएंगे। चित्र 17.5 पर ध्यान देने पर यह प्रयोग और अधिक स्पष्ट हो जाएगा और इस बात की पुष्टि हो जाएगी कि पुष्पन प्रेरित करने के लिए अप्रदीप्त काल अधिक महत्वपूर्ण होता है। यह संकल्पना अब अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी है। अप्रदीप्तकाल की भूमिका यह है कि यह पौधे में कुछ ऐसे परिवर्तन लाता है जिससे वनस्पतिक अवस्था से पुष्पी अवस्था हो जाती है। प्रदीप्त काल की भूमिका यह होती है कि पौधा इस परिवर्तन का अनुभव करता है और अधिक से अधिक पुष्प उत्पन्न करने में मदद करता है।

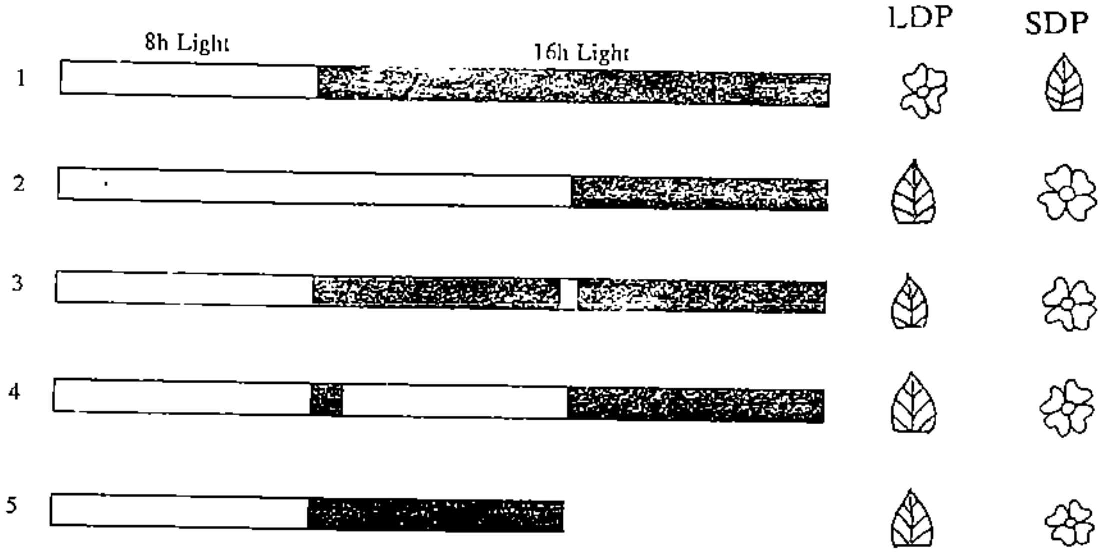

चित्र 17.5: **पुष्पन के लिए अप्रदीप्त काल का महत्व दर्शाने के लिए प्रयोग। यदि अप्रदीप्तकाल में रुकावट डाली जाए (3) तो अल्प प्रदीप्तकाली पौधे में पुष्पन नहीं होता परंतु यदि प्रदीप्तकाल में रुकावट डाली जाए (4) अथवा उसकी अवधि कम कर दी जाए (5) तो दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधों के पुष्पन पर कोई प्रभाव नहीं होता।**

17.3.3 पुष्पन हॉर्मोन

फ्लोरिजेन की संकल्पना — फ्लोरिजेन एक पुष्पी हॉर्मोन होता है जैसे यह नाम रूसी वैज्ञानिक चलखियन (Chailakhyan) ने 1930 में दिया था।

सन् 1880 में जूलियस सॉक्स (Julius Sachs) ने सुझाव दिया था कि पुष्पन के लिए कोई न कोई रासायनिक आधार (chemical basis) है। बाद में किए गए प्रयोगों से इस बात के संकेत मिले कि एक हॉर्मोन उत्पन्न होता है जो पुष्पन नियंत्रित करता है। इस हॉर्मोन को फ़्लोरिजन (florigen) नाम दिया गया। फ़्लोरिजन क्या होता है, यह पता लगाने से पहले आइए हम उन प्रयोगों को देखें जिनसे यह बात सामने आई कि पुष्पन में किसी रसायन का योग होता है और यह रसायन पत्तियों में

उत्पन्न होता है। एक प्रयोग में कैलेनकोइ (*Kalanchoe*) नामक अल्प प्रदीप्तकाला पाध का केवल पत्तियों को पुष्पन प्रेरित (flower induction) करने की दशाएं उपलब्ध कराई गई न कि पूरे पौधे को। ऐसा करने पर भी पौधे पर पुष्प लगे (चित्र 17.6)। इस प्रकार के और अनेक प्रयोग किए गए जिनमें पौधों को पुष्प प्रेरित करने के लिए प्रदीप्त काल-अप्रदीप्त काल, चक्र के रूप में केवल पत्तियों को दिया गया। कुछ वैज्ञानिकों ने एक टहनी पर इस प्रकार के प्रयोग किए जिसकी केवल एक पत्ती को प्रेरणिक दशाएं उपलब्ध कराई गई थी। इस पौधे की कलम एक ऐसे पौधे पर लगाई गई जिसे प्रेरणिक दशाएं उपलब्ध नहीं कराई गई थी। आश्चर्य इस बात पर हुआ कि कलम वाले पौधे पर भी पुष्पन शुरू हो गया (चित्र 17.6)। कुछ उदाहरणों में कलम ऐसे पौधों से ली गई थी जिसे अल्प प्रदीप्तकाल के लिए प्रेरित किया गया था जैसे ज़ैंथियम कैनाडेनसी (*Xanthium canadense*) और उसे ऐसे पौधों पर लगाया गया जिनके लिए दीर्घकालिक दशाएं आवश्यक थीं जैसे रुड्बेकिया बाइकलर (*Rudbeckia bicolour*)। इस प्रकार की कलमों से भी प्रापक पौधों में जैसे कि उपर्युक्त प्रयोग में रुड्बेकिया में पुष्पन शुरू हो गया।

प्रदीप्त-अप्रदीप्त दशाएं जो पौधों को पुष्प पैदा करने के लिए प्रेरित करती हैं — *प्रेरणिक दशाएं* (inductive conditions) कहलाती हैं।

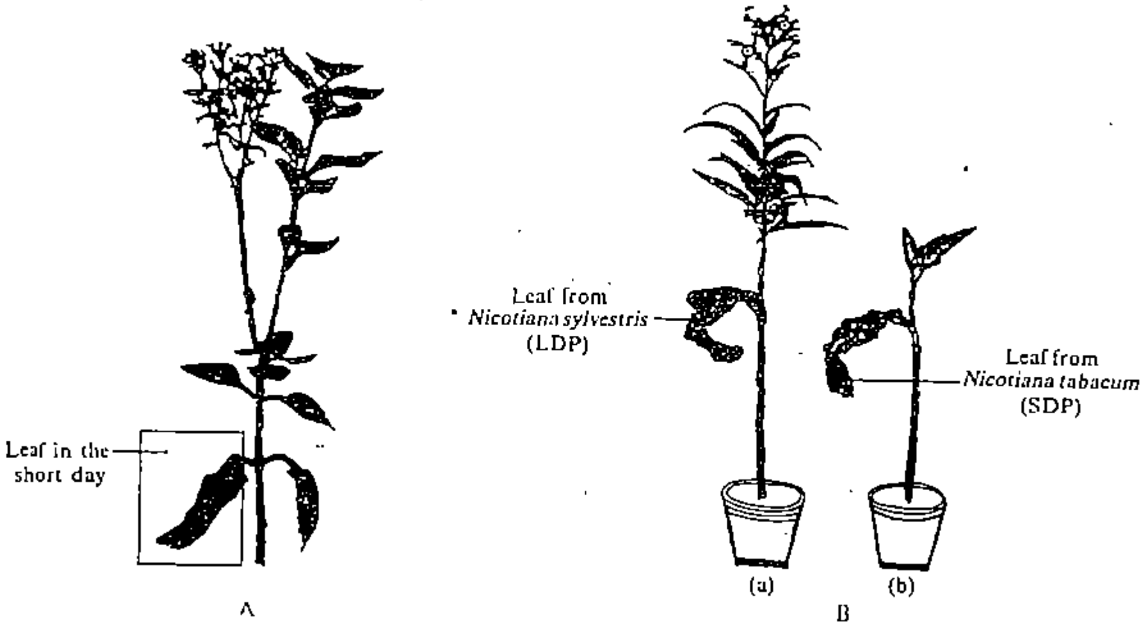

चित्र 17.6: प्रयोग द्वारा प्रदर्शन कि दीप्तकाल उद्दीपन (stimulus) पत्तियां ग्रहण करती है। (क) प्रयोग में *कैलेनकोइ ब्लौसफेल्डियाना (Kalanchoe blossfeldiana)* के पौधे की केवल एक ही पत्ती को अल्प प्रदीप्तकाल की दशा में रखने पर पौधे में पुष्पन होता है। (ख) दूसरे प्रयोग में दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे-*निकोशियाना सिल्वेस्ट्रिस (Nicotiana sylvestris)* की कलम को अल्प अप्रदीप्त काली पौधे *निकोशियाना टेबैकम (Nicotiana tabacum)* पर लगाने से लम्बी अवधि वाले दिनों में भी पुष्पन शुरू हो जाता है। तथापि यदि *निकोशियाना टैबेकम* की एक पत्ती को स्वयं *निकोशियाना टैबेकम* पर ही लगा दिया जाए (नियंत्रण प्रयोग ख) तो पुष्पन प्रेरित नहीं होता।

यदि आपने ऊपर दिए हुए प्रयोगों को पूरी तरह से समझ लिया है तो आप निम्न निष्कर्ष पर पहुंचेंगे।

i) प्रकाश के उद्दीपन को पत्तियाँ ग्रहण करती हैं और

ii) कुछ रसायन पत्तियों से बाहर निकलकर (जैसा कि कलमों में होना चाहिए) मेरिस्टेमों में चला जाता है और उन्हें वनस्पतिक से पुष्पी अवस्था में परिवर्तित कर देता है। यह रसायन कौन-सा है?

इसी रसायन को फ्लोरिजन नाम दिया गया था। तथापि हमें यहां यह बता देना चाहिए कि आज दिन तक कोई भी इस फ्लोरिजन को अथवा किसी अन्य रसायन को पौधे से पृथक नहीं कर पाया है जिससे किसी भी पौधे में पुष्पन को प्रेरित किया जा सके। संभावना यही लगती है कि फ्लोरिजन एक पादप हॉर्मोन है जो किसी नियत सांद्रताओं पर पुष्पन को प्रेरित करता है हॉर्मोन की इकाई में आप पढ़ ही चुके हैं कि हॉर्मोन विभिन्न पौधों में पुष्पन प्रेरित कर सकते हैं।

तथापि कुछेक प्रेक्षण इस मत के विपरीत हैं। यह देखा गया है कि फ्लोरिजन शीघ्रता से ऊतकों में गति कर सकता है परंतु यदि दो ऊतकों को अगार (agar) की एक पट्टी (strip) द्वारा पृथक् कर

दिया जाए तो उद्दीपन उसमें होकर नहीं गुज़र सकता जबकि हॉर्मोन अगार में होकर आसानी से आ-जा सकता है। यहीं नहीं प्रयोगों से यह पता चला है कि पुष्पन-संबंधी उद्दीपन फ़्लोएम में से होकर गुज़र सकता है। इससे यह प्रतीत होता है कि रसायन जो हॉर्मोन नहीं हैं, *जीवे (in vivo)* में पुष्पन प्रेरण में शामिल हैं। हम आशा करते हैं कि निकट भविष्य में फ़्लोरिजन को पृथक करना और उसे पहचानना संभव हो जाएगा और यह पुष्पन प्रेरण से पहले और बाद में फ़्लोएम-रस (phloem-sap) के पदार्थों का विश्लेषण करके और उनकी तुलना करके संभव हो सकेगा।

17.3.4 द्रुतशीतन तथा पुष्प प्रेरण

वसंतीकरण एक लेटिन शब्द है जिसका अर्थ होता है — "वसंतनुमा बनाना"।

कुछ पौधों में पुष्पन शिशिर ऋतु समाप्त हो जाने के बाद ही होता है। उदाहरण के लिए गेहूँ शिशिर ऋतु में बोया जाता है ताकि अगली गर्मियों में उसे काटा जा सके। इसे ठंड में उदभासन की आवश्यकता होती है यदि सर्दी कम पड़ती है तो पौधों पर पुष्प नहीं आते और फसल बेकार हो जाती है। यह सिद्ध हो चुका है कि सर्दियों के गेहूँ और कई अन्य पौधों को पुष्प-निर्माण के लिए लगभग 1 सप्ताह तक 0° से 2°C तक द्रुतशीतन (chilling) की ज़रूरत होती है। पुष्प-प्रेरण के लिए शीत उपचार को वसन्तीकरण (vernalisation) कहते हैं। वसन्तीकरण की तकनीक रूस में विकसित की गई थी। जहां सर्दियों की फसल के लिए द्रुतशीतन की ज़रूरत होती है ताकि अच्छी फसल प्राप्त हो सके। इस विधि में बीजांकुरण आरंभ करने के लिए बीजों को थोड़े समय के लिए भिगोया जाता है और फिर उन्हें बर्फ में दबा दिया जाता है। बाद में जब अत्यधिक शीत की दशाएं समाप्त हो जाती हैं, तो इन बीजों को बसन्त ऋतु में बोया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि द्रुतशीतन भी पुष्प-प्रेरण का उद्दीपन है।

प्रश्न उठता है कि पौधे के किस भाग को पुष्प-प्रेरण के लिए द्रुतशीतन उद्दीपन (chilling stimulus) की आवश्यकता होती है? प्रयोगों द्वारा यह पता चला है कि प्ररोह-शीर्ष (इसी को वसन्तीकरण की आवश्यकता होती है) ही यह उद्दीपन प्राप्त करता है और प्ररोह से यह उद्दीपन पौधे के अन्य भागों में पहुंच जाता है। यदि प्ररोह शीर्ष जिसने उद्दीपन प्राप्त किया है — को तोड़ दिया जाए तो प्ररोहों की शाखाओं पर पुष्प आने लगते हैं और यदि इनके भी शीर्षों को तोड़ दिया जाए तो उनकी पार्श्व प्ररोह (side shoots) विकसित हो जाते हैं और उन पर पुष्प लगते हैं। यही नहीं, यदि वसन्तीकृत पौधे के निकर्षणों को दीर्घ प्रदीप्तकाली पौधे पर लगा दिया जाता है जो अल्पप्रदीप्त काल की स्थिति में उग रहे हो तो प्रापक पौधे पर पुष्प आने लगते हैं। प्रकाश-प्रेरण की तरह द्रुतशीतन उद्दीपन भी एक कलम के द्वारा अवसन्तीकृत पौधे में पहुँचाया जा सकता है। इन परिणामों में यह सिद्ध होता है कि किसी न किसी प्रकार पुष्पन उद्दीपन प्ररोह-शीर्ष से अन्य ऊतकों में संचरित होता है। इस द्रुतशीतन उद्दीपन को वर्नेलिन (vernalin) नाम दिया गया था। इस यौगिक की प्रकृति का अभी तक पता नहीं लग पाया है।

17.3.5 जैव रासायनिक परिवर्तन

कई शोधकर्ताओं ने उन जैव रासायनिक परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की है जो पुष्पन से पहले होते हैं और परिणामस्वरूप पुष्पी मेरिस्टेमों को बनाते हैं जिनसे वनस्पतिक संरचनाओं के स्थान पर पुष्प उत्पन्न होते हैं। *फ़ारबिटिस (Pharbitis)* नामक अल्पकाली पौधे में जिसे पुष्पन के लिए केवल एक अप्रदीप्त काल यानि एक रात की आवश्यकता होती है, यह देखा गया कि प्रदीप्त काल के तुरंत बाद, पुष्पन उद्दीपन पत्तियों से बाहर गति करता है। इस प्रयोग में पौधे को प्रेरणा दशाएं उपलब्ध करवाकर विशिष्ट समयांतरालों के बाद मेरिस्टेमों में जीवरासायनिक परिवर्तन मापे गए थे। चालीसवें घंटे के लगभग पुष्पी शीर्ष (floral apex) पर उपापचयी क्रियाशीलता में वृद्धि के साथ-साथ mRNA, प्रोटीन और राइबोसोमों के स्तर में वृद्धि देखी गई। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा किए गए प्रेक्षणों से भी यह पता चला कि अंतर्द्रव्यी जालिका (endoplasmic reticulum) का व्यापक रूप में निर्माण हो जाता है। इन क्रियाओं के होने पर DNA संश्लेषण तथा सूत्री विभाजन संबंधी क्रियाओं में वृद्धि देखी गई। पुष्पी-प्रेरण के लगभग 88 घंटे के बाद शीर्षस्थ तथा कक्षीय (axillary) मेरिस्टेमों में कोशिका विभाजन में वृद्धि देखी गई और शीर्षस्थ मेरिस्टेमों के केन्द्रीय तथा परिधीय (peripheral) क्षेत्रों में खासतौर से कोशिका-विभाजन में वृद्धि देखी गई।

इस प्रकार के प्रयोग अन्य पौधों पर भी किए गए हैं। तथापि अभी तक यह पता नहीं चल पाया है कि कौन-से mRNA अथवा प्रोटीनें पुष्पन को प्रारंभ करने के लिए ज़िम्मेदार हैं। नवीनतर तकनीकों के अनुप्रयोग से यह सुझाव दिया गया है कि कुछ विशिष्ट पुष्पी जीन (floral gene) होते हैं जो खास प्रकार के प्रदीप्त-अप्रदीप्त काल के चक्रण से गुज़रने पर सक्रिय हो जाते हैं। यद्यपि हमें इन सभी जीनों के उत्पादों की जानकारी नहीं है, फिर भी इनमें से कुछ जीन उन प्रोटीनों को कोड करते हैं जो अनुलेखन को नियमित करती हैं।

बोध प्रश्न 2

क) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) पुष्पन के समय होने वाला प्रमुख संरचना विकास परिवर्तन .... मेरिस्टेमों का .... मेरिस्टेमों में बदलना है।

ii) पुष्पन का दीप्तिकालिक, नियंत्रण, दिए गए अनअवरुद्ध (uninterrupted) .... की अवधि पर निर्भर करता है।

iii) .... पौधा वर्ष में नियत समय पर ही पुष्प पैदा करता है चाहे उसे घर में, मैदान में अथवा पौद घर में उगाया जाए।

iv) पुष्पन को प्रेरित करने वाले अनुमानित रसायन को .... नाम दिया गया है और यह .... में उत्पन्न होता है।

v) अल्प प्रदीप्तकाली पौधे को .... की क्रांतिक अवधि या उससे अधिक की आवश्यकता होती है।

ख) पुष्पन से पूर्व होने वाले जैव रासायनिक परिवर्तनों की सूची बनाइए।

....

....

....

17.4 फ़ाइटोक्रोम

आप जानते ही हैं कि पौधे प्रकाश-संश्लेषण के दौरान प्रकाश-ऊर्जा को ग्रहण करते हैं। अब आपने परिवर्धन संबंधी घटनाओं में प्रकाश की एक और महत्वपूर्ण तथा रोचक भूमिका के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली है। प्रकाश संश्लेषण के लिए वर्णक, अर्थात् क्लोरोफिल तथा कैरोटिनॉइड प्रकाश अवशोषित करते हैं। उसी प्रकार प्रकाश द्वारा नियमित परिवर्धन अनुक्रियाओं के लिए प्रकाश का अवशोषण किसी वर्णक द्वारा होगा। फ़ाइटोक्रोम एक ऐसा वर्णक है जो 600 से 800nm क्षेत्र में प्रकाश की गुणता को पहचानता है। यहां यह भी बता देना चाहिए कि कुछेक परिवर्धन संबंधी घटनाएं पूर्ण अंधकार की अवस्था में भी होती हैं। ये प्रक्रियाएं फ़ाइटोक्रोम के सक्रिय रूप पर निर्भर नहीं होती है। इस प्रकार के परिवर्तनों को स्कोटोमॉर्फोजिनेटिक (skotomorphogenetic) परिवर्तन कहते हैं। जबकि प्रकाश द्वारा होने वाले संरचना विकास परिवर्तन फोटोमॉर्फोजिनेटिक परिवर्तन (photomorphogenetic) कहलाते हैं। साथ ही एक और प्रकार का अज्ञात वर्णक नीले प्रकाश का अवशोषण करने वाला होता है जो प्रकाशानुवर्तन (phototropism) तथा नैश गति (nastic movement) को शुरू करता हैं।

17.4.1 फ़ाइटोक्रोम की खोज

भाग 17.3.2 में हमने एक प्रयोग का वर्णन किया था जिससे यह सिद्ध किया गया था कि पुष्पन में अप्रदीप्तकाल का महत्व होता है। उस प्रयोग में जब अप्रदीप्त काल में थोड़े समय प्रदीप्त करके रुकावट डाली गई तो अल्प प्रदीप्तकाली पौधों में पुष्पन नहीं हुआ। आगे जो प्रयोग किए गए उनमें अप्रदीप्त काल को श्वेत प्रकाश के बदले विभिन्न तरंग दैर्ध्यों वाले प्रकाश द्वारा जैसे लाल, नीला,

लाल और सुदूर-लाल प्रकाश के उत्क्रमणीय प्रभाव से संबंधित प्रयोग — जो परिवर्धन संबंधी अनुक्रियाओं का अध्ययन करने के लिए किए गए थे — बोर्थविक (Borthwick) और हैन्डरिक्स (Hendricks) द्वारा उसी स्थान पर किए गए थे जहां गार्नर और एलर्ड ने दीप्तिकालिता की घटना की खोज की थी।

पीला या सुदूर लाल रंग वाले प्रकाश से प्रदीप्त करके रुकावट डाली गई। इन प्रयोगों द्वारा मालूम हुआ कि केवल लाल प्रकाश ही पुष्पन का अवरोध करने में समर्थ है तथापि लाल प्रकाश का प्रभाव सदैव अवरोधक नहीं था भिन्न-भिन्न परिवर्धन की अनुक्रियाओं के लिए इनका प्रभाव भिन्न पाया गया। उदाहरण के लिए, लेट्यूस (lettuce) के बीज के अंकुरण पर लाल रोशनी के प्रभाव को देखने के लिए किए गए प्रयोग में मालूम हुआ कि इसका प्रभाव उद्दीपनकारी था। एक और रोचक बात यह देखी गई कि लाल रोशनी के प्रति होने वाली अनुक्रिया सुदूर लाल (far-red) रोशनी द्वारा शून्य (nullify) हो जाती है (चित्र 17.7)।

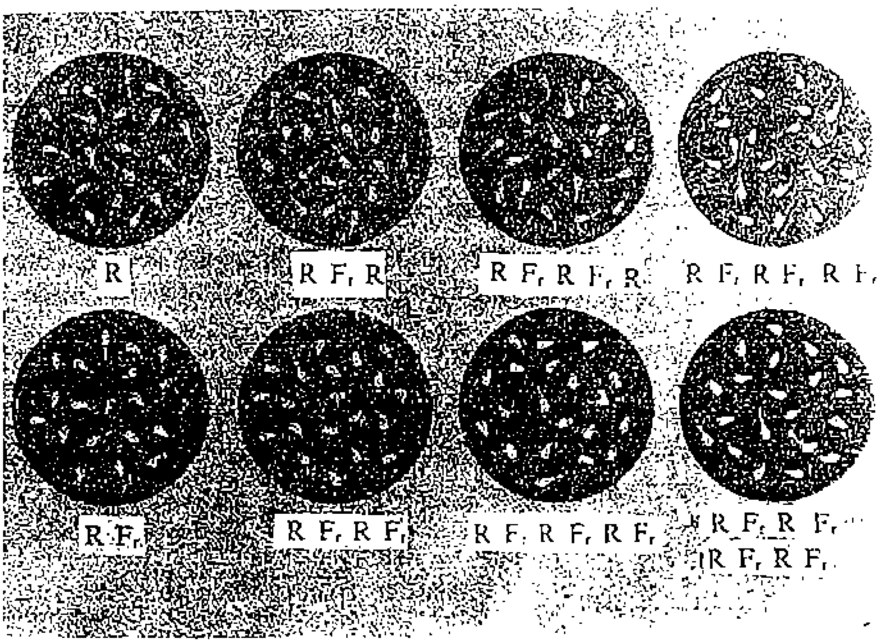

चित्र 17.7: लाल (red) और सुदूर लाल प्रकाश (far-red) से बीजांकुरण का उत्क्रमण। लाल प्रकाश द्वारा विकिरित किए जाने पर लेट्यूस के बीज अंकुरित हो जाते हैं तथापि यदि लाल रोशनी के बाद सुदूर लाल रोशनी डाली जाए तो बीजों में अंकुरण नहीं होता। यह भी देखा गया कि क्रमिक रूप में विकिरित किए जाने पर भी यदि बीजों को अंतिम विकिरित रूप में लाल प्रकाश दिया जाए तो वे अंकुरित हो जाते हैं परंतु यदि अंत में सुदूर-लाल प्रकाश दिया जाए (जैसा कि निचले पैनल में बताया गया है) तो बीज प्रसुप्त बने रहते हैं।

इस प्रकार के अनेक प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि लाल प्रकाश द्वारा उत्पन्न किसी परिवर्धन की अनुक्रिया को सुदूर-लाल प्रकाश देकर व्युत्क्रमित किया जा सकता है और विपरीत भी। इन

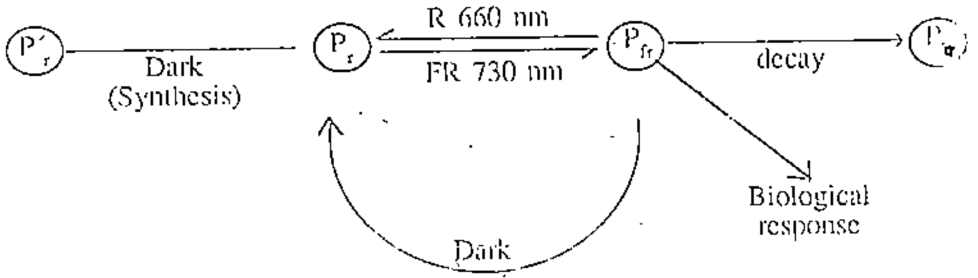

चित्र 17.8: फ़ाइटोक्रोम के प्रकाशीय-रूपांतरण (photoconversion) का योजना-आरेख। फ़ाइटोक्रोम का संश्लेषण अंधेरे में होता है। लाल परिसर(R) में प्रकाश प्राप्त करने पर यह P_r (लाल प्रकाश अवशोषित करने वाला रूप) से P_{fr} (सुदूर लाल प्रकाश अवशोषित करने वाले रूप) में बदल जाता है। P_{fr} रूप जैविक दृष्टि से सक्रिय होता है और अनुक्रिया प्रेरित करता है। इस रूप का क्षय (P_{fr}) भी होने लगता है अर्थात् यह समय के साथ अवकर्षित (degrade) हो जाता है। जब पौधों को लंबे समय तक अंधेरे में रखा जाता है तब कुछ पौधों में P_{fr} रूप P_r अवस्था में लौट सकता है। यह सुदूर लाल प्रकाश द्वारा विकिरित किए जाने पर भी P_r अवस्था में वापस लाया जा सकता है।

कार्यिकीय (physiological) प्रयोगों के आधार पर यह प्रस्ताव रखा गया कि लाल और सुदूर-लाल रोशनी को एक ही वर्णक अवशोषित करता है। इस वर्णक को फ़ाइटोक्रोम नाम दिया गया।

अतः फ़ाइटोक्रोम दो रूपों में विद्यमान रहता है: एक लाल रोशनी को अवशोषित करने वाला रूप-P_r जो कि लाल रोशनी को अवशोषित कर लेने के बाद सुदूर-लाल रोशनी को अवशोषित करने वाले रूप P_{fr} में बदल जाता है। जब P_{fr} रूप सुदूर-लाल रोशनी को अवशोषित करता है तो वह पुनः P_r रूप में बदल जाता है जैसा कि चित्र 17.8 में दिखाया गया है। इस प्रकार दोनों रूप अंतरा-रूपांतरणीय (interconvertible) होते हैं।

17.4.2 फ़ाइटोक्रोम के गुणधर्म

फ़ाइटोक्रोम एक क्रोमोप्रोटीन (chromoprotein) है। इसका अर्थ यह है कि यह एक प्रोटीन और एक क्रोमोफ़ोर (chromophore) से बना होता है। क्रोमोफोर वास्तव में प्रोटीन से जुड़ा रहता है, उसको रंग प्रदान करता है तथा प्रकाश अवशोषित करता है। प्रोटीन शुद्धीकरण की प्रविधि का अनुसरण करके फ़ाइटोक्रोम को पूर्णतः शुद्ध रूप में पृथक किया जा सकता है। परखनली में फ़ाइटोक्रोम की अवशोषण विशेषताएं बनी रहती हैं। यह लाल प्रकाश अवशोषित करता है (अधिकतम अवशोषण 660nm तरंगदैर्ध्य पर होता है) और परिवर्तन के पश्चात् सुदूर-लाल क्षेत्र में (अधिकतम अवशोषण 730nm पर होता है)। फ़ाइटोक्रोम के प्ररूपी (typical) अवशोषण स्पेक्ट्रम को चित्र 17.9 में दिखाया गया है। यह एक विलेयशील प्रोटीन होती है और साइटोप्लाज़्म में विद्यमान रहती है। ऐसा माना जाता है कि P_{fr} रूप झिल्लियों से संबद्ध होता है। अविच्छिन्न (intact) फ़ाइटोक्रोम प्रोटीन का आण्विक भार 124,000 डाल्टन होता है। इस प्रोटीन के संपूर्ण ऐमीनों अम्लों अनुक्रम की जानकारी हो चुकी है और पुनर्योगज DNA प्रौद्योगिकी (recombinant DNA technology) का इस्तेमाल करके फ़ाइटोक्रोम को कोड करने वाले जीन-को विलग कर लिया गया है।

प्रोटीनें दृश्यमान प्रकाश (visible light) को अवशोषित नहीं कर सकतीं। ये केवल पराबैंगनी प्रकाश का अवशोषण करती हैं। इसलिए दृष्य परिसर में प्रकाश के अवशोषण के लिए क्रोमोफोर भाग अनिवार्य होता है।

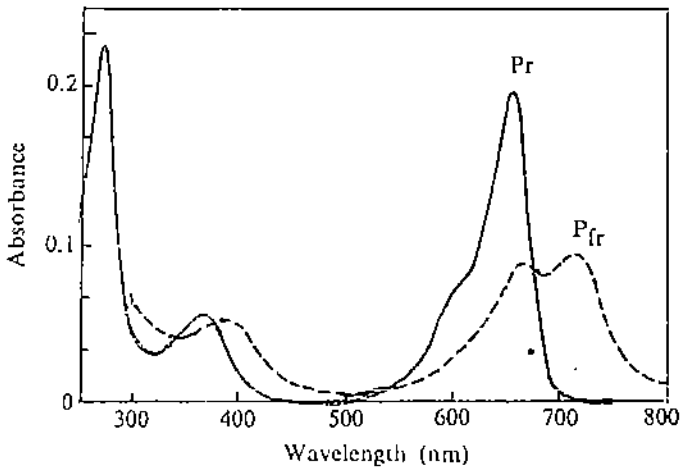

चित्र 17.9: पात्रे (*in vivo*) फ़ाइटोक्रोम का अवशोषण स्पेक्ट्रम। फ़ाइटोक्रोम को शुद्ध किया गया और उसके अवशोषण स्पेक्ट्रम को स्पेक्ट्रोफोटोमीटर द्वारा मापा गया। जब P_r रूप को लाल रोशनी से विकिरित किया गया तो अवशोषण स्पेक्ट्रम (बिंदुकित रेखा) प्राप्त हुआ। यह P_r का P_{fr} रूप में रूपांतरण दर्शाता है। ध्यान दीजिए कि सारा P_r रूप P_{fr} रूप में नहीं बदलता। अतः हमें स्पेक्ट्रम में दो शीर्ष देखने को मिलते हैं।

फ़ाइटोक्रोम का क्रोमोफोर, क्लोरोफिल की तरह ही एक टेट्रापाइरोल अणु होता है (चित्र 17.10)। परंतु इसमें टेट्रापाइरोल खुला होता है और धातुई आयन नहीं होता। यह सहसंयोजी रूप में प्रोटीन से संलग्न होता हैं। यह सिद्ध हो चुका है कि जैविक रूप में सक्रिय फ़ाइटोक्रोम का रूप P_{fr} है। P_r के P_{fr} में रूपांतरित होते समय इसकी संरचना में परिवर्तन होता है (चित्र 17.10) जो कि संभवतः P_{fr} रूप को सक्रिय बना देता है।

फ़ाइटोक्रोम का अनुमान लगाने की विधि

फ़ाइटोक्रोम को पहचानने के लिए कोई रासायनिक परीक्षण नहीं है। इसकी पहचान तथा आकलन की एक ही विधि है — स्पेक्ट्रोफोटोमीटरी। सर्वप्रथम लाल रोशनी द्वारा विकिरित करके 660nm और 730 nm के बीच अवशोषण में परिवर्तन को मापा जाता है। △OD लाल, सं. 1)। इस... [illegible]

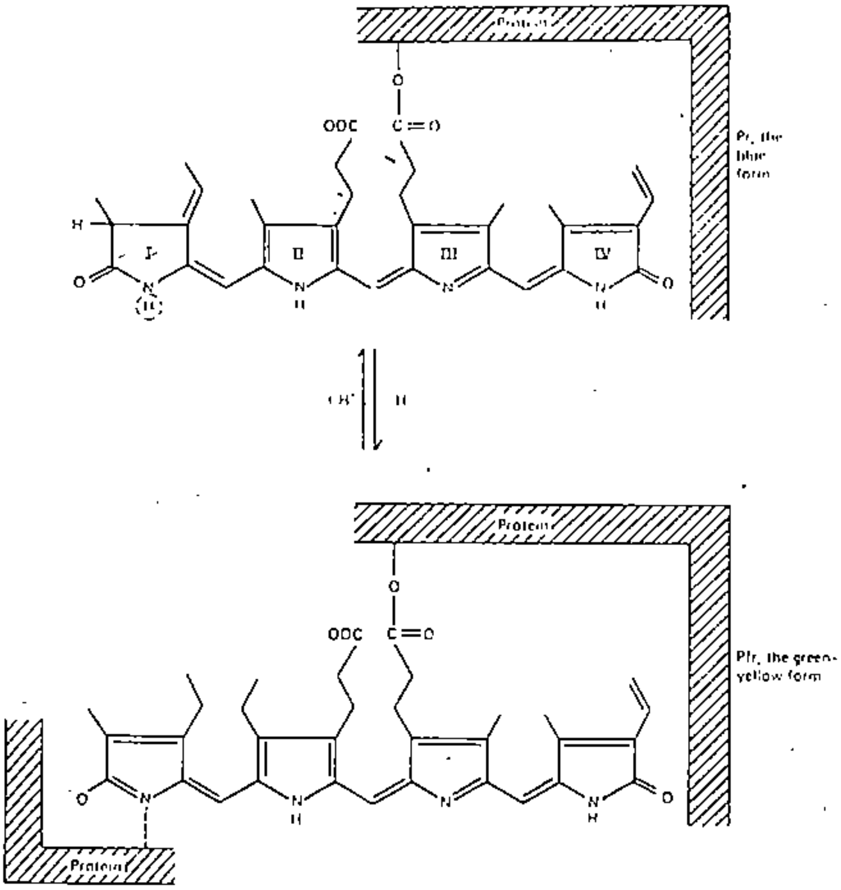

चित्र 17.10: क्रोमोफोर की संरचना तथा उसका प्रोटीन से जुड़ा होना। फाइटोक्रोम में क्रोमोफोर खुला टेट्रापाइरोल होता है। यह प्रोटीन से विशिष्ट स्थल पर जुड़ा होता है और P_r से P_{fr} में रूपांतरित होने पर प्रोटॉन को अपने स्थान से हटा देता है।

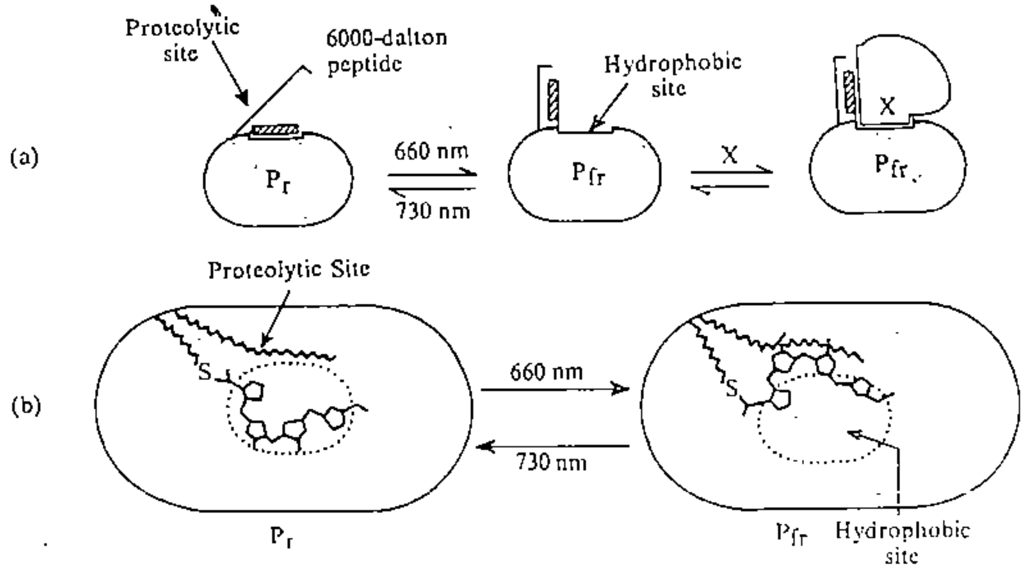

चित्र 17.11: (a) P_r से P_{fr} रूप में अंतरारूपांतरण का मॉडल। टेट्रापाइरोल प्रोटीन से उस समय दूर चला जाता है जब फाइटोक्रोम लाल से सुदूर-लाल रूप में बदलता है और P_{fr} रूप में प्रोटीन के कुछ जल-विरोधी स्थलों को उद्भाषित (expose) कर देता है। यह संरूपीय परिवर्तन P_{fr} को सक्रिय स्पीशीज़ बना देता है। कुछ प्रोटीनें जो कि जैविक क्रियाओं (x) के लिए अनिवार्य होती हैं जलविरोधी स्थलों से बंध जाती हैं और सक्रियित हो जाती हैं।

(b) P_r और P_{fr} अवस्था में टेट्रापाइरोल की प्रोटीन-संबंधी गति।

इस नमूने को सुदूर-लाल प्रकाश द्वारा विकिरित किया जाता है और फिर से OD में परिवर्तन को मापा जाता है (ΔOD सुदूर-लाल सं. 2)। सुदूर-लाल प्रकाश द्वारा विकिरित मान (value) में से लाल प्रकाश विकिरित के बाद प्राप्त मान को घटाकर कुल फ़ाइटोक्रोम की मात्रा प्राप्त कर ली जाती है।

P (कुल) $\Delta(\Delta OD)$ = [ΔOD सुदूर-लाल - ΔOD लाल]

1. ΔOD लाल = [$OD_{660} - OD_{730}$] लाल विकिरण के बाद

2. ΔOD सुदूर-लाल = [$OD_{660} - OD_{730}$] सुदूर-लाल विकिरण के बाद

आजकल विशेष प्रकार के स्पेक्ट्रोफोटोमीटर भी उपलब्ध हैं जो दो तरंगदैर्ध्यों के बीच अवशोषण के अंतर को नाप सकते हैं। इन्हें द्विक् तरंगदैर्ध्य स्पेक्ट्रोफ़ोटोमीटर (dual spectrophotometer) कहते हैं।

17.4.3 फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रित जैविक अनुक्रियाएं

फ़ाइटोक्रोम अनुक्रियाएं वे होती हैं जिन्हें लाल तथा सुदूर-लाल प्रकाश द्वारा उत्क्रमणीय रूप में नियंत्रित किया जा सकता है। इन्हें मोटे तौर पर इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है :

i) **तेज अनुक्रियाएं (fast responses)** : जो सेकंडों से मिनटों तक की समय-सीमा में होती हैं और

ii) **धीमी अनुक्रियाएं (slow responses)** : जो कुछ घंटों से कई दिन तक लेती हैं तब जाकर व्यक्त (manifest) होती हैं।

कुछेक तेजी से होने वाली अनुक्रियाओं की आगे विवेचना की जा रही है :

i) यह पता लगा कि जब विशिष्ट घोल में रखे (जिसमें ATP, IAA, एस्कोर्बिक अम्ल, $MnCl_2$, KCl मौजूद होता है)। मूंग की फली के मूलाग्रों को लाल-प्रकाश द्वारा विकिरित किया जाता है तो वे कांच के बीकर से चिपक जाते हैं। यह प्रभाव सुदूर-लाल प्रकाश द्वारा 30 सेकंडों में ही उलट जाता है। यह सुझाव दिया गया है कि तेज़ी से होने वाली यह अनुक्रिया, संभवतः लाल प्रकाश,के प्रति अनुक्रिया में मूलाग्रों पर विद्युत आवेशों में परिवर्तन के कारण होती है जिससे ऋणात्मक रूप में आवेशित कांच की सतह से मूलाग्र चिपक जाते हैं। इस प्रकार की अनुक्रियाओं को तेजी से होने वाली अनुक्रियाओं में वर्गीकृत किया जाता है।

ii) इसी प्रकार यह भी सिद्ध किया गया कि जब *मोजियोशिया (Mougeotia)* नामक शैवाल को विकिरित किया गया तो उसका एकल क्लोरोप्लास्ट लाल प्रकाश के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप उलट (*turned*) गया परंतु अकेले सुदूर-लाल प्रकाश का कोई प्रभाव नहीं हुआ (चित्र

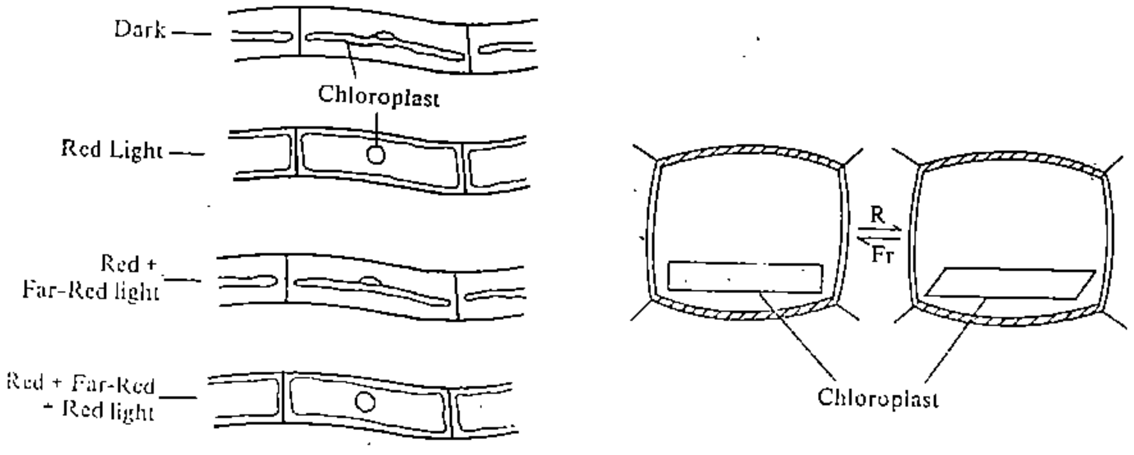

चित्र 17.12: *मोजियोशिया (Mougeotia)* पर तीव्र अनुक्रिया को प्रदर्शित करने के लिए एक प्रयोग। *मोजियोशिया* के तंतु लंबी कोशिकाओं से बने होते हैं जिनमें प्रत्येक में एक चपटी पट्टी जैसा क्लोरोप्लास्ट होता है जो कि प्रकाश के प्रति अनुक्रिया से कोशिका में उलट सकता है। प्रकाश द्वारा प्रेरित क्लोरोप्लास्ट की गति को लाल/सुदूर-लाल प्रकाश की उत्क्रमणीय अनुक्रिया के रूप में दिखाया गया था जैसा कि ऊपर बताया गया है गति की शुरुआत केवल कुछ की सेकंडों की प्राश्चता प्रावस्था (lag phase) के बाद होती है।

17.12) यह लाल प्रकाश का प्रभाव सुदूर-लाल प्रकाश द्वारा उत्क्रमित हो गया। इस प्रकार की गति विकिरण करने पर कुछ ही मिनटों में देखी गई। वास्तव में इन प्रयोगों में साइटोप्लाज्म पर अथवा अवरोधक झिल्लियां (membrane barrier) पर प्रकाश विकिरित किया गया था, न कि सीधे ही क्लोरोप्लास्ट पर।

iii) कई लैग्यूमिनस पौधों में देखा गया कि उनकी पत्तियां बंद हो जाती हैं जब उन्हें प्रकाश से अंधकार में स्थानांतरित किया जाता है और यह सिद्ध हो गया है कि यह क्रिया फ़ाइटोक्रोम के नियंत्रण में होती है (चित्र 17.13)।

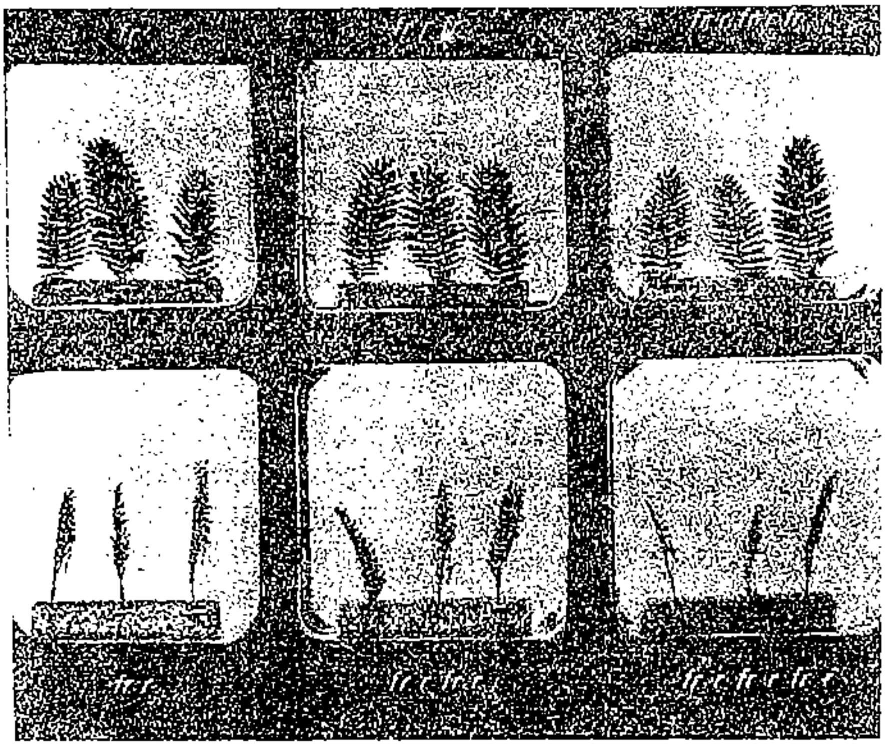

चित्र 17.13: *मिइमोसा पुडिका (Mimosa pudica*—छुई मुई) के पौधे के पिच्छकों (pinnae) के खुलने और बंद होने पर फ़ाइटोक्रोम का प्रभाव। जब केवल सुदूर-लाल प्रकाश दी गई या लाल प्रकाश के बाद सुदूर-लाल प्रकाश दी गई तो पिच्छक खुले ही रहे (ऊपरी पंक्ति) तथापि जब सुदूर-लाल प्रकाश के बाद लाल प्रकाश दी गई और कई बार इस प्रकार प्रकाश में परिवर्तन करने पर भी पिच्छक बंद ही रहे (निचली पंक्ति)। पौधों को प्रत्येक प्रकार की प्रकाश द्वारा 2 मिनट के लिए विकिरित किया और फिर उन्हें अंधेरे में रखा गया। 30 मिनट में ही अनुक्रिया देखी गई।

फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रित कई और अनुक्रियाएं भी पाई गई हैं जिन्हें धीमी अनुक्रियाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे बीजांकुरण (seed germination), बीजपत्राधार (cotyledons) का लंबा होना, पत्ती का फैलना, विलगन (abscission), पुष्पन, फल लगना। चित्र 17.14 में ऐसी अनुक्रियाओं पर लाल और सुदूर-लाल प्रकाश में प्रभावों के उदाहरण दिए गए हैं।

17.4.4 क्रियाविधि

आप यह पढ़ चुके हैं कि फ़ाइटोक्रोम द्वारा कोशिकाओं में जैव रासायनिक तथा आण्विक परिवर्तन (molecular changes) होते हैं तथापि अभी तक इन परिवर्तनों का किसी एक विशिष्ट परिवर्धन की घटना से संबंध स्पष्ट नहीं हुआ है। चूँकि फ़ाइटोक्रोम एक ही पौधे में बहुत सारे प्रक्रमों को नियंत्रित करता है (तालिका 17.2) इसलिए इसकी आण्विक क्रियाविधि का विश्लेषण करने का कार्य कठिन हो जाता है।

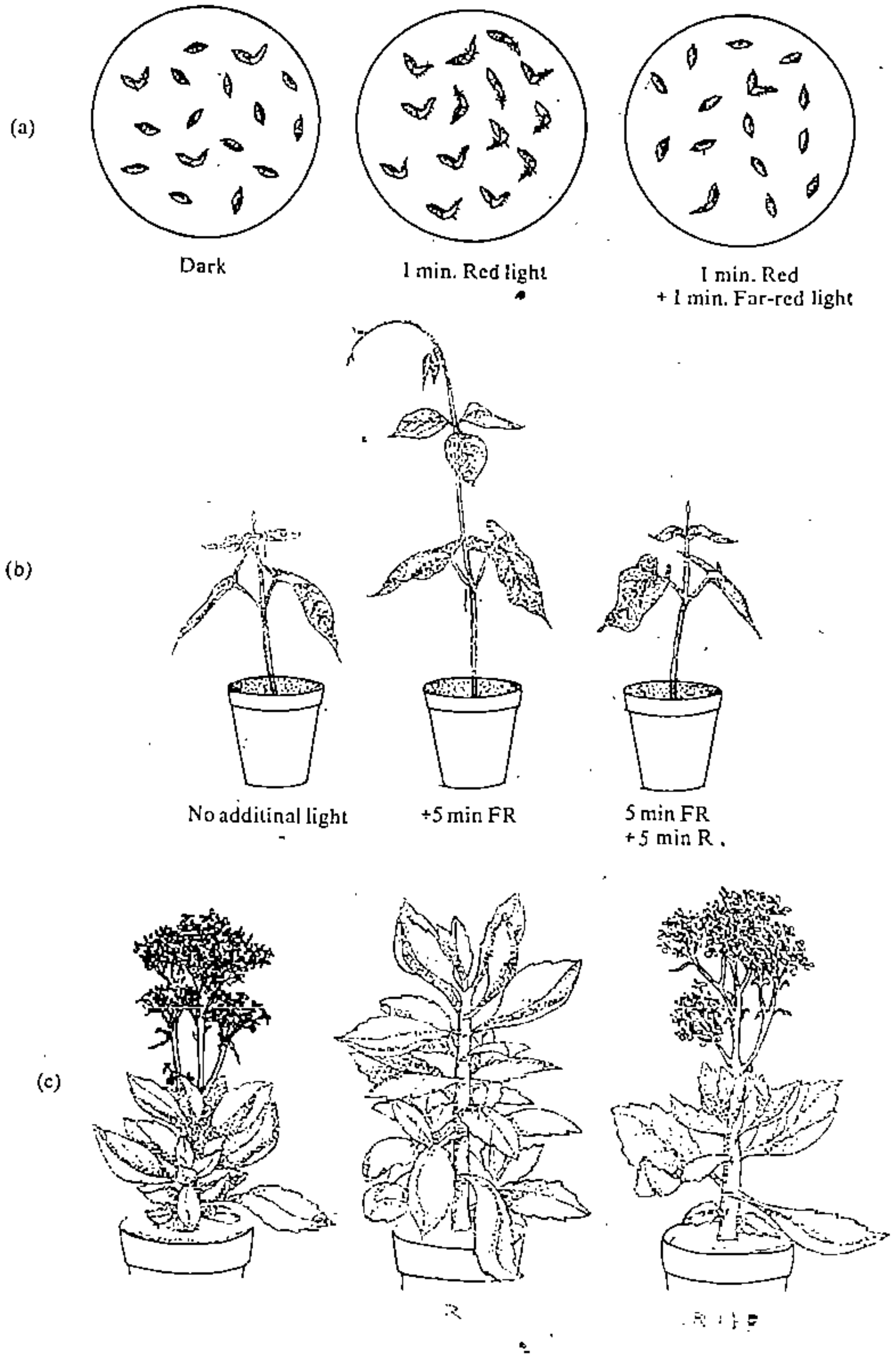

चित्र 17.14: फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रित कुछेक धीमी अनुक्रियाएं

क) लाल प्रकाश से उद्दीपित बीजांकुरण का सुदूर-लाल रोशनी द्वारा उत्क्रमण (reversal)।

ख) फ़ाइटोक्रोम द्वारा पर्व (internode) के लंबे होने पर नियंत्रण का प्रदर्शन — ये प्रभाव 8 दिन बाद देखे गए। पौधों को प्रदीप्त-अप्रदीप्त चक्र में रखा गया और उन्हें लाल प्रकाश या सुदूर-लाल प्रकाश दी गई।

ग) कैलेनकोइ (SDP) में पुष्पन का फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रण। केंद्र में स्थित पौधे को लघु प्रदीप्त काल के प्रभाव में रखा गया परंतु मध्य में उसे लाल प्रकाश दी गई।

तालिका 17.2 : अप्रदीप्त स्थान पर उगाए गए सरसों की पौद पर प्रकाश के अनेक प्रभाव

बीजपत्राधार (hypocotyl) की दैर्घ्यवृद्धि (lengthening) का संदमन।
बीजपत्रों (cotyledons) का विवर्धन (enlargement)।
बीजपत्राधारी (hypocotylar) प्रांकुरीय अंकुश (hook) का खुलना प्राथमिक पत्तियों का परिवर्धन।
ऐन्थोसायनिन का संश्लेषण।
क्लोरोफिल संचयन की दर में वृद्धि (श्वेत प्रकाश में)।
कोशिका श्वसन के दर में परिवर्तन।
संग्रहित प्रोटीन के अवकर्षण की दर में परिवर्तन।
बीजपत्राधार की ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती अभिक्रियात्मकता (negative geotropic reactivity) में वृद्धि।
बीजपत्रों में प्रोटीन संश्लेषण की वृद्धि।
बीजपत्राधार में RNA की मात्रा में कमी।
बीजपत्रों में RNA की मात्रा में वृद्धि।
बीजपत्रों की बाह्यत्वचा (epidermis) के रंध्रों (stomata) में विभेदन।
कैरोटीनॉइड संश्लेषण की दर में वृद्धि।
mRNA और कुछ एन्ज़ाइमी प्रोटीनों, जैसे नाइट्रेट रिडक्टेस, RuBP कार्बोक्सिलेज़ की मात्रा में वृद्धि।

इसी प्रकार यह भी पता लगाया गया है कि फ़ाइटोक्रोम, कैल्सियम आयनों की गति को भी प्रभावित करता है। फ़ाइटोक्रोम द्वारा झिल्ली वाहक प्रोटीनों को प्रभावित करने की सही क्रियाविधि का पता अभी तक नहीं लगा है।

जैसाकि आप पढ़ चुके हैं कि फ़ाइटोक्रोम द्वारा किए जाने वाले विभिन्न परिवर्तनों में से अनेक तो कुछ ही मिनटो में हो जाते हैं और कुछ अन्य 1-2 या अधिक घंटों के बाद होते हैं। यह सुझाव दिया गया है कि वे अनुक्रियाएं जो तेजी से होती हैं यानि 0 से 15 मिनट के भीतर, उन्हें **"झिल्ली से संबंधित घटनाएं" (membrane associated events)** मान सकते हैं और वे अनुक्रियाएं जो कुछ घंटों के पश्चात् होती हैं उनमें विभिन्न प्रोटीनों और एन्ज़ाइमों की मात्राओं अथवा सक्रियता में परिवर्तन हो सकता है और उन्हें **जीन-अभिव्यक्ति घटनाएं (gene expression events)** कहा जा सकता है (चित्र 17.15)। वे अनुक्रियाएं जो वृद्धि में परिवर्तन के रूप में मापी जा सकती हैं, उन्हें अंतिम **परिवर्धन अनुक्रियाएं (developmental responses)** माना जा सकता है। अनेक तंत्रों में देखा गया है कि फ़ाइटोक्रोम, झिल्ली-संबंधी घटनाओं पर असर करता है। पहली बात तो यह है कि शोधकार्यों द्वारा कुछ उदाहरणों में यह सूचना दी गई है कि फ़ाइटोक्रोम झिल्लियों से संबंधित हो सकता है। उदाहरण के लिए *मोजियोशिया (Mougeotia)* में यदि झिल्लियों को प्रकाश द्वारा विकिरित किया जाता है तो क्लोरोप्लास्ट की गति देखी जा सकती है साथ ही प्रयोगों से भी यह पता चला है कि फ़ाइटोक्रोम झिल्लियों से बंध जाता है परंतु इन परिणामों की पुष्टि आवश्यक है। तथापि यह साफ़ तौर से स्थापित हो चुका है कि उदाहरणार्थ *ऐल्बिज़िया (Albizzia)* में, कि फ़ाइटोक्रोम K^+ आयनों का परिवहन प्लैज़्मा झिल्ली के पार नियंत्रित करता है।

जीन-अभिव्यक्ति घटनाओं पर और अधिक शोध कार्य हो चुका है और यह दिखाया गया है कि फ़ाइटोक्रोम एन्ज़ाइमों के स्तर और उनकी सक्रियता पर प्रभाव डालता है। तथापि कुछ उदाहरणों में यह वर्णक एन्ज़ाइम सक्रियता को बढ़ा देता है, उदाहरण के लिए फेनिल ऐलानिन अमोनिया लाथेज़ (phenyl alanine ammonia lyase), नाइट्रेट रिडक्टेज़ (nitrate reductase), RuBP कार्बोक्सिलेज़ (RuBP carboxylase) प्रकाश ग्रहण करने वाली क्लोरोफिल a/b के साथ की प्रोटीनें। जबकि फ़ाइटोक्रोम अन्य एन्ज़ाइमों की मात्रा को घटा देता है, जैसे NADH प्रोटोक्लोरोफ़िलाइड ऑक्सिडोरिडक्टेज़ (NADH protochlorophyllide oxidoreductase)। उदाहरण के लिए, फ़ाइटोक्रोम द्वारा नाइट्रेट रिडक्टेज़ एन्ज़ाइम के नियमन को चित्र 17.16 में दिखाया गया है।

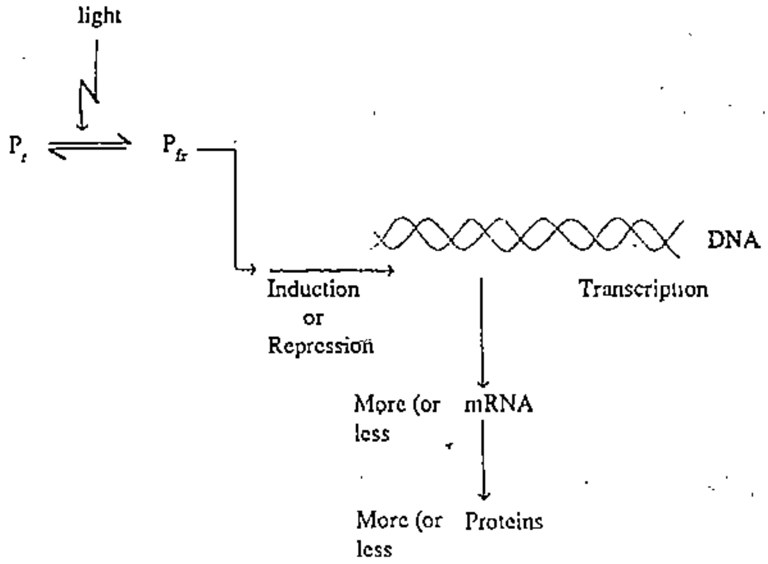

चित्र 17.15: जीन अभिव्यक्ति (gene expression) के विभेदन नियमन (differential regulation) की परिकल्पना (hypothesis)। जैविक दृष्टि से सक्रिय रूप P_{fr} नए mRNA के संश्लेषण को प्रेरित करके या अंधेरे में संश्लेषित mRNA के संश्लेषण का दमन (repression) करके अनुलेखन प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है। एन्ज़ाइमों और प्रोटीनों के स्तर तथा गुणता को बदलकर परिवर्धन की अनुक्रियाओं को फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

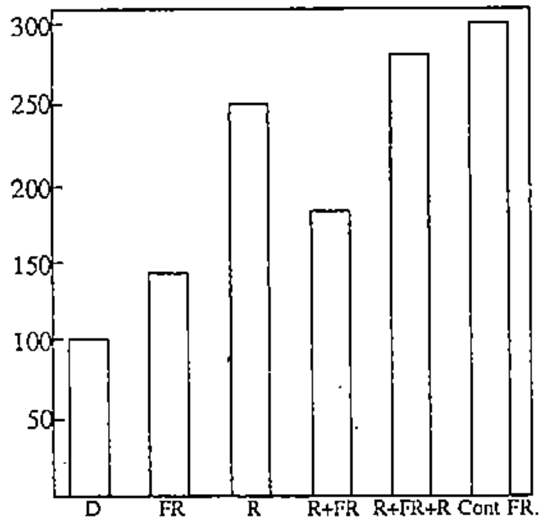

चित्र 17.16: नाइट्रेट रिडक्टेज़ के प्रेरण पर R और FR प्रकाश का प्रकाश-उत्क्रमणीय (photoreversible) प्रभाव। पांडुरित (etiolated) मक्के की पत्तियों को केवल पांच मिनट के लिए लाल तथा सुदूर-लाल प्रकाश दिया गया था।

हाल ही में यह स्पष्ट किया गया है कि फ़ाइटोक्रोम अनुलेखन (transcription) की प्रक्रिया पर प्रभाव डालकर एन्ज़ाइमों की मात्रा को प्रभावित करता है। यह प्रदर्शित किया गया है कि प्रकाश-विकिरण के प्रति अनुक्रिया से कई प्रोटीनों के mRNA के स्तर में वृद्धि होती है।

एक मुख्य प्रश्न जिसका उत्तर दिया जाना शेष है, वह यह है कि फ़ाइटोक्रोम तो कोशिकाद्रव्य में विद्यमान होता है, फिर वह किस प्रकार केन्द्रक में जीन अभिव्यक्ति को प्रभावित करता है? ऐसा कहा गया है कि संभवतः फ़ाइटोक्रोम द्वारा कुछ संकेत या द्वितीयक प्रेषक (second messengers)

उत्पन्न हो जाते हैं जो कि अनुलेखन स्तर पर प्रभाव डालते हैं जैसा कि चित्र 17.17 में दिखाया गया है। हाल ही में प्रकाश मध्यस्थ अनुक्रियाओं में प्रेषक के रूप में कैल्सियम आयनों की भूमिका बताई गई है। यह इन खोजों पर आधारित है कि कई पौधों में कैल्सियम आयन भी प्रकाश के प्रभाव की नकल कर सकते हैं।

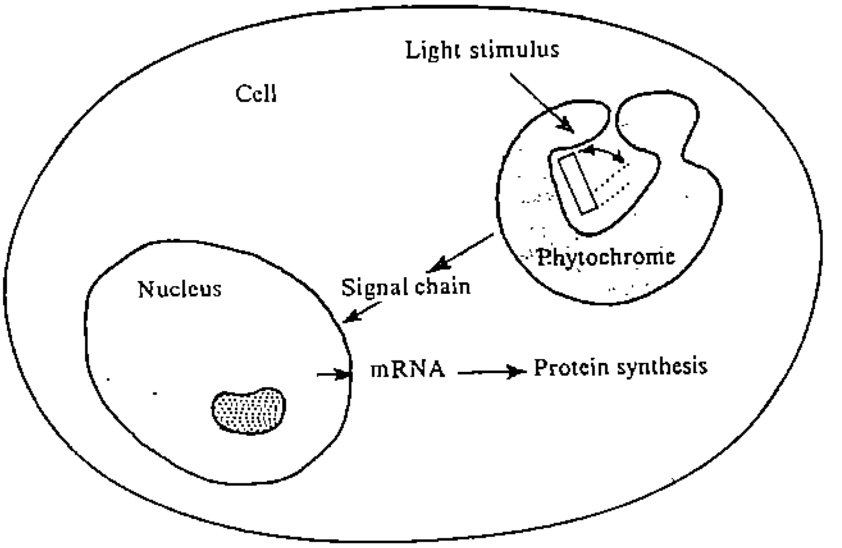

चित्र 17.17: सामान्य योजना से यह प्रदर्शित किया गया है कि प्रकाश अवशोषण और P_{fr} के बनने के बाद नई प्रोटीन के संश्लेषण के लिए, नए mRNA को बनाने हेतु केन्द्रक को एक जैव रासायनिक संकेत भेजना ज़रूरी होता है। यह पता नहीं चल पाया है कि इस संकेत की प्रकृति क्या है परंतु कुछ प्रमाण मिले हैं जिनसे यह लगता है कि यह कैल्सियम आयन जैसा एक सरल अणु हो सकता है।

बोध प्रश्न 3

क) निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति उपयुक्त शब्दों से कीजिए :

i) P_r .... nm तरंगदैर्ध्य पर और P_{fr} .... nm पर प्रकाश का अवशोषण करता है।

ii) .... प्रकाश द्वारा लाल प्रकाश का प्रभाव पूर्ण रूप से उत्क्रमित हो सकता है।

iii) फ़ाइटोक्रोम एक .... प्रोटीन होता है। यह कोशिका के .... में विद्यमान होता है।

iv) नए mRNA को बनाने के लिए फ़ाइटोक्रोम द्वारा केंद्रक को भेजा गया जैव रासायनिक संकेत .... प्रतीत होता है।

v) फ़ाइटोक्रोम का जैविक दृष्टि से सक्रिय रूप .... है जो प्रेरण अथवा दमन द्वारा .... प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है।

17.5 जीर्णता

पौधे बीजांकुरण के पश्चात् अपना परिवर्धन प्रारंभ करते हैं। वे बढ़ते हैं, पुष्प उत्पन्न करते हैं और अंततः जीर्ण होकर मर जाते हैं। आरंभ होने से मृत्यु तक की अवधि को आयुकाल (longevity) अथवा आयु अथवा जीवन काल कहते हैं और यह अवधि स्पीशीज़ दर स्पीशीज़ विभिन्न होती है। उदाहरण के लिए कुछ पौधे, जैसे वार्षिक पौधे, अपना जीवन चक्र कुछ महीनों में ही पूरा कर लेते हैं। जबकि अन्य कुछ शताब्दियों तक जीवित रहते हैं। उदाहरण के लिए *जूनिपेरस स्कोफलेरियम* (*Juniperus scophularium*) का जीवन-काल लगभग 3000 वर्ष का होता है। मृत्यु से कुछ ही पहले की अवधि को जीर्णता-काल (senescent period) कहते हैं। इसकी तुलना जंतुओं की वृद्धावस्था से की जा सकती है। इस काल में अवनति होती है क्योंकि जीवनक्षमता में लगातार कमी

और दुर्बलता में वृद्धि हो जाती है। इस प्रावस्था को कुछ समय के लिए बढ़ाया जा सकता है परंतु इसका उत्क्रमण संभव नहीं है।

जीर्णता बहुत तेज़ी से हो सकती है या यह बहुत ही धीमे प्रक्रम के रूप में हो सकती है। पौधे में कभी-कभी कोई एक अंग जीर्ण होने लगता है जबकि सारा पौधा स्वस्थ रहता है। वार्षिक पौधों में पूरा पौधा ही मर जाता है, द्विवार्षिक पौधों में पौधा दो वर्ष बाद मरता है जबकि बहुवर्षी पौधों में हर वर्ष पत्तियां तथा फल गिर जाते हैं परंतु मुख्य पौधा जीवित रहता है। इस प्रकार मोटे तौर पर हम यह कह सकते हैं कि जीर्णता निम्नलिखित किस्मों की हो सकती है :

समग्र जीर्णता (overall senescence) : केवल भूमि की सतह से ऊपर के पौधे के भाग अर्थात् वायुवी भाग मर जाते हैं और भूमिगत भाग जीवित बने रहते हैं। उदाहरण के लिए आलू।

पर्णपाती जीर्णता (deciduous senescence) : केवल पत्तियां जीर्ण होती हैं, जैसे अनेक वृक्षों में। पत्तियों की जीर्णता या विलगन (abscission) तब होता है जब पत्ती के आधार पर कोशिकाओं की एक परत बन जाती है जिसे **विलगन परत (abscission layer)** कहते हैं (चित्र 17.18)। इस परत की कोशिकाओं में सेल्युलेस (cellulase) की अतिसक्रियता देखी जाती है यह एन्ज़ाइम कोशिका-भित्ति के सेल्यूलोस को अपकर्षित करता है। विलगन के दौरान एक और एन्ज़ाइम की मात्रा बढ़ जाती है जिसे पॉलिगैलेक्टुरोनेज़ (polygalacturonase) कहते हैं। यह एन्ज़ाइम पेक्टिन का जल-अपघटन (hydrolysis) कर देता है जो कि कोशिका-भित्ति की मध्य पटलिका क्षेत्र का प्रमुख रचक तत्व होता है। इससे कोशिकाएं पृथक हो जाती हैं और पत्तियां झड़ जाती हैं। इस परत के नीचे पौधा एक रक्षण परत (protective layer) बना लेता है जिसमें बहुत सारी लिग्निनयुक्त (lignified) कोशिकाएं होती हैं। जब पत्ती झड़ जाती है, यह परत ऊतक को सूखने से बचाती है।

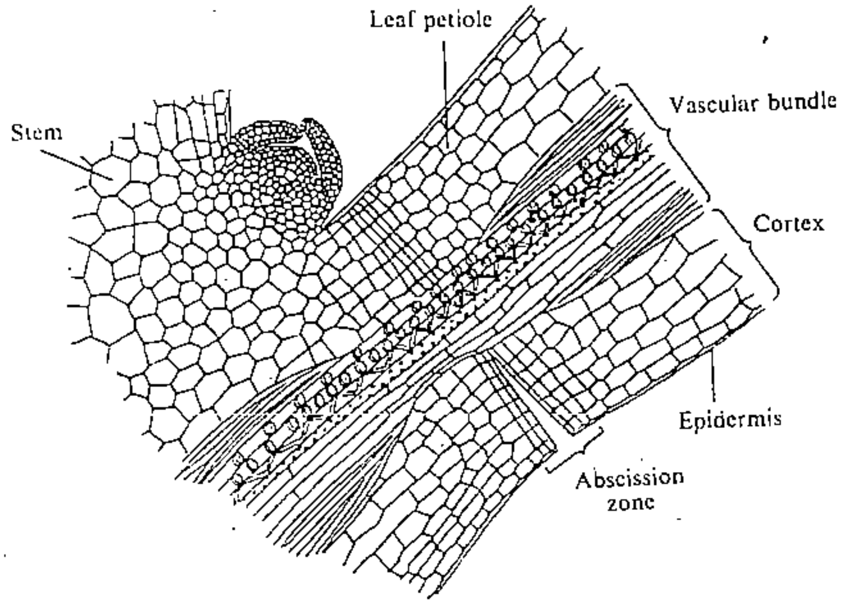

चित्र 17.18: परिपक्व पत्ती के वृंत के आधार के निकट स्थित विलगन क्षेत्र।

वर्धमान जीर्णता (progressive senescence) : इस किस्म में भी पत्तियां झड़ जाती हैं परंतु इसमें नीचे से ऊपर की ओर पत्तियों का विलगन धीरे-धीरे होता है। जैसे ताड़ के वृक्षों पर।

17.5.1 जीर्णता का नियमन

जीर्णता परिवर्धन घटनाक्रम का ही भाग है और यह नियंत्रित प्रक्रम होना चाहिए। आपने देखा होगा कि यदि पत्तियों और फूलों से युक्त टहनियों को आप तोड़ लें और उन्हें फूलदानों में रखें तो वे टहनियां तेजी से जीर्ण होती जाती हैं। यह पता लगाया गया है कि जीर्णता को, बाह्य तथा आंतरिक दोनों ही प्रकार के कारक नियंत्रित करते हैं। बाह्य कारकों में पौधों के हॉर्मोन, दैनिक प्रदीप्तकाल की अवधि, तापमान और पोषण की उपलब्धता, महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आंतरिक कारकों में पौधे का साइज और उसकी आयु, पुष्पन और फलों के परिपक्व होने का ...थ जीर्णता की शुरुआत को तय करते हैं। एक प्रयोग में, जिसमें जीर्णता की सामान्य अवधि 120 दिन थी, जब परिपक्व फलों को पौधों से तोड़ लिया गया तो जीर्णता काल में विलंब देखा गया। तब यह जीर्णता 140 दिनों के बाद हुई। और जब कच्चे फलों और पुष्पों को उनके बनते ही पौधों से तोड़ लिया जाता है तो भी जीर्णता में विलंब देखा गया और इसमें 160 से 180 दिन का समय लगा। इसका अर्थ यह हुआ कि जीर्णता का प्रारंभ जनन-प्रक्रिया शुरू होते ही हो जाता है। संभवतः इसका कारण यह है कि पौधे को फूलों और फलों की वृद्धि के लिए काफ़ी मात्रा में पोषण की आवश्यकता होती है। इसलिए फलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए पत्तियों, और अन्य भागों में संचित पदार्थ को वृद्धिशील फलों में पहुंचाया जाता है। पोषण की मांग इतनी अधिक होती है कि ताजा पोषण भूमि से प्राप्त करके और प्रकाश संश्लेषण से पूरा नहीं किया जा सकता। अतः यह अधिक मांग और कम संभरण का सरल उदाहरण है। स्पष्ट है कि इस कारण पूरे तंत्र का निपात (collapse) हो जाता है। तथापि अधिकांश अन्य प्राणियों की तरह इस प्रक्रिया में पौधा यह सुनिश्चित करता है कि उसके फल पक जाएं और बीज बन जाएं ताकि उसका वंश चलता रहे। यह पैतृक पौधे का स्वयं का त्याग, यह सुनिश्चित करने के लिए है कि उसके बीज अच्छी तरह परिवर्धित हों और वे वृद्धि कर सकें।

पर्यावरण संबंधी तथा अंतर्जात (endogenous) कारकों के अलावा कुछ जैवीय (biotic) कारक भी जीर्णता को प्रेरित करने की भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए चिंचरी (mites), कीटों अथवा परजीवी कवकों के आक्रमण के कारण जीर्णता की प्रक्रिया तेज़ हो जाती है। साथ ही जब आप बगीचे में घूम रहे हों और अनजाने में पत्तियों को या टहनियों और शाखाओं को तोड़ लें तो आप भी उस पौधे में जीर्णता को शुरू करने में योग देते हैं। चित्र 17.19 में उन कारकों की सामान्य विवेचना की गई है जो विभिन्न पौधों में जीर्णता उत्पन्न करते हैं।

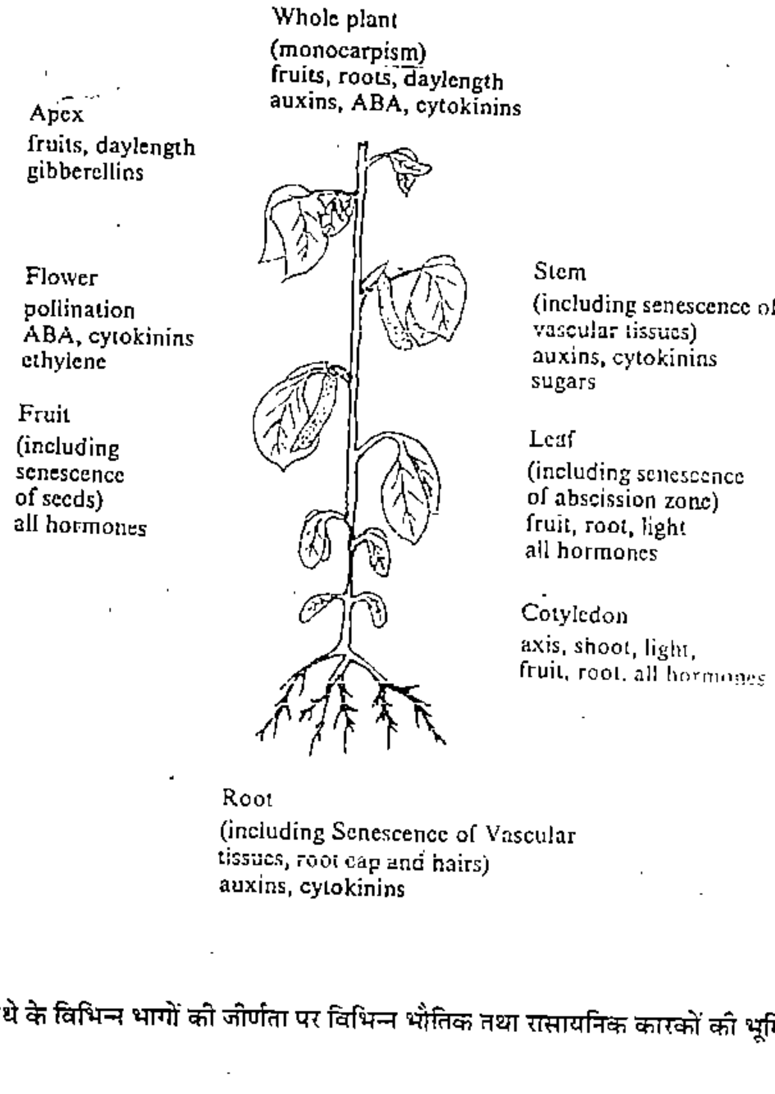

चित्र 17.19: पौधे के विभिन्न भागों की जीर्णता पर विभिन्न भौतिक तथा रासायनिक कारकों की भूमिका।

17.5.2 जीर्णता से संबंधित जैव रासायनिक परिवर्तन

जीर्णता के प्रेरित होते ही अनेक कार्यकीय तथा जैव रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं। उदाहरण के लिए, एक बहुत ही महत्वपूर्ण परिवर्तन क्लोरोफिल की मात्रा में होता है। इसका स्तर घटने लगता है। परिणामस्वरूप CO_2 स्थिरीकरण की क्षमता भी घट जाती है और क्लोरोप्लास्ट की समग्र संरचना — थाइलैकॉइडों के संगठन के रूप में — विक्षुब्ध हो जाती है। कुछ समय तक तो श्वसन की दर स्थायी बनी रहती है परंतु बाद में वह भी घट जाती है और ATP की सप्लाई कम हो जाती है।

यह भी बताया गया है कि अनेक अवकर्षणकारी एन्ज़ाइम जैसे प्रोटिएज़ेज (जो प्रोटीनों का जलापघटन करते हैं), राइबोन्यूक्लिएज़ेज़ (जो न्यूक्लीक अम्लों का जलापघटन करते हैं) और α-ग्लूकॉन हाइड्रोलेज़ेज़ (जो कोशिका-भित्ति को ढीला कर देते हैं), क्लोरोफिलेज़ (जो क्लोरोफिल का अवकर्षण करते हैं) — उत्पन्न होते हैं जिनकी वजह से अपचय (catabolism) होता है और अंत में, समय बीतने पर पौधा विवश होकर मर जाता है।

बोध प्रश्न 4

क) जीर्णता के दौरान पत्तियों में जीर्णता से संबंधित कौन-से परिवर्तन देखे जाते हैं?

....
....
....
....
....

ख) पौधों में जीर्णता को प्रेरित करने वाले विविध कारकों की सूची बनाइए।

....
....
....
....
....

ग) विलगन से संबंधित दो एन्ज़ाइमों के नाम बताइए और उनके प्रकार्य भी लिखिए।

....
....
....
....
....

17.6 ऊतक संवर्धन

आपको ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी (tissue culture technology) द्वारा परखनली में पौधों को उगाने की तकनीक की जानकारी होगी। वैज्ञानिक आशा करते हैं कि यह तकनीक संभवतः पादप-तंत्र, विभेदन के नियमन (regulation of differentiation) तथा वृद्धि को अच्छी तरह से समझने में मदद देगी। इस उपभाग में हम ऊतक-संवर्धन की तकनीक और उसकी संभावनाओं का विवेचन करेंगे।

जर्मनी के वनस्पतिज्ञ गोटलीब हैबरलैंट (Gottlieb Haberlandt) ने पादप कोशिकाओं के संवर्धन की बात सुझाई।

17.6.1 ऐतिहासिक दृष्टिकोण तथा तकनीकों का विकास

आप जानते ही हैं कि निषेचन (fertilisation) के दौरान अंडा (egg) नर-युग्मक (male gamete) के साथ संयुक्त हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप युग्मनज (zygote) बन जाता है।

यह युग्मनज विभाजित होकर भ्रूण को जन्म देता है। बीजांकुरण के बाद भ्रूण वृद्धि करता है और संपूर्ण पौधे का निर्माण करता है। चूंकि संपूर्ण पौधा मूलतः एक ही कोशिका से उत्पन्न होता है, अर्थात् निषेचित अंडे से, इसलिए पौधे की सभी कोशिकाओं की आधारभूत जीनी-संरचना (genetic constitution) एक जैसी होती है। परन्तु केवल युग्मनज से ही भ्रूण का जन्म होता है और वह परिवर्धित होकर पौधा बनाता है। क्या कारण है कि पौधे की कोई अन्य कोशिका जनन करके नया पौधा नहीं बना पाती?

इसे समझने की जिज्ञासा के कारण लोगों ने वृद्धि की परिस्थितियों को नियंत्रित करके पौधे के विभिन्न भागों और ऊतकों को उगाने के प्रयत्न शुरू कर दिए। और यह देखा गया कि यदि किसी पौधे की कोशिका को सही पोषण तथा पर्यावरण की सही परिस्थितियां उपलब्ध कराई जाएं तो वह भी युग्मनज की भांति व्यवहार करने लगता है और भ्रूण को जन्म देता है जो कि बढ़कर नया पौधा बनाता है। पौधे की इस विशेषता को पूर्णशक्तता (totipotency) कहते हैं अर्थात् पौधे की कोई भी कोशिका सिद्धांत रूप में नए पौधे को जन्म दे सकती है (चित्र 17.20)।

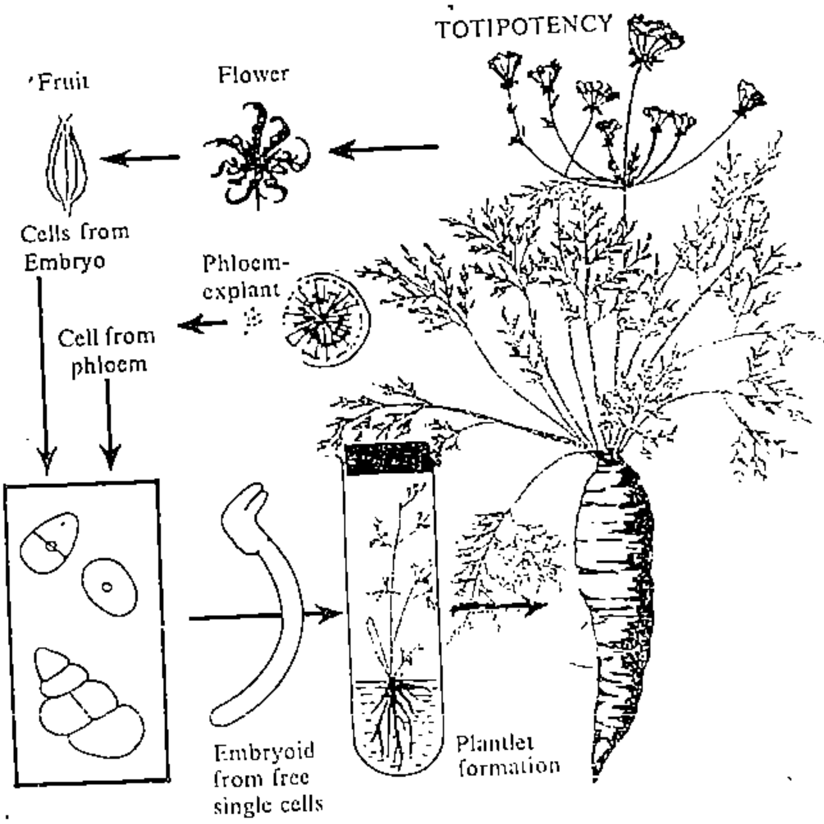

चित्र 17.20: पौधों में पूर्णशक्तता की परिघटना का प्रदर्शन। पौधे के पोषवाह से अथवा भ्रूण से कोशिकाएं ली गई और उन्हें माध्यम में संवर्धित किया गया। उपयुक्त दशाएं उपलब्ध कराने पर एकीय (single) परिवर्धित कोशिका ने परिवर्धित होकर भ्रूणाओं (embryoids) का निर्माण किया जो कि और परिवर्धित होकर छोटी पौद के रूप में तैयार हो गई और उनसे गाजर के पूर्ण पौधे बनाए जा सके।

वास्तव में इस शताब्दी के प्रारंभ से ही पौधों की कोशिकाओं को संवर्धित करने के प्रयत्न किए गए। पादप-कोशिकाओं के संवर्धन से हमारा तात्पर्य कोशिकाओं, ऊतकों अथवा अंगों को प्रयोगशाला में कृत्रिम दशाओं के अंतर्गत विकसित करना है। 1936 तक संवर्धन दशाओं का आंशिक रूप से पता लग गया था। बाद में जब हॉर्मोनों और वृद्धि नियामकों (**growth regulators**) की खोज हुई और पौधों के परिवर्धन में उनकी भूमिकाओं को जाना गया तब वैज्ञानिकों ने उनका पादप-कोशिकाओं के संवर्धन के लिए व्यापक प्रयोग किया।

इस संबंध में और अधिक जानकारी प्राप्त करने से पहले हम ऊतक-संवर्धन के तरीके को जान लें। इससे आपको अगले उपभाग को आसानी से समझने में मदद मिलेगी। हम पौधों के किसी भी भाग को प्रयोग के लिए ले सकते हैं। जो भाग लिया जाता है उसे एक्सप्लांट (explant) अर्थात् कर्तोतक

कहते हैं। (क्योंकि यह पौधे को काट कर लिया जाता है।) इसे रोगाणुरहित (sterilise) कर लिया जाता है और फिर एक माध्यम (medium) में रख दिया जाता है जिसे भी ऑटोक्लैव (autoclave) में रखकर रोगाणुरहित किया जाता है। किसी भी माध्यम में मूलतः अनिवार्य **सूक्ष्मपोषक (essential micronutrient)** तथा **स्थूल पोषक (macronutrients)** तत्व मौजूद होते हैं जो वृद्धि के लिए आवश्यक होते है। साथ ही उसमें कुछ विटामिन और लौह भी मिलाया जाता है। चूँकि कर्तोतक स्वपोषी (autotrophic) नहीं होता इसलिए कार्बन स्रोत के रूप में इसमें सुक्रोज़ मिला दिया जाता है ताकि ऊर्जा उपलब्ध हो सके। पिछली इकाई में आपने वृद्धि तथा परिवर्धन में हॉर्मोनों की भूमिका के बारे में पढ़ा था। इन्हें भी माध्यम में डाल दिया जाता है। माध्यम को या तो इसी रूप में काम में लिया जाता है या इसमें अगार (agar) मिलाकर ठोस बना दिया जाता है, फिर इसे रोगाणुरहित करके परखनलियों अथवा पेट्रीडिशों (petridishes) में रखा जाता है। कर्तोतक पौधों को इसी माध्यम में उगाया जाता है।

ऑटोक्लेव (autoclave) एक बड़े प्रैशर कुकर की तरह होता है। जब इसका ताप 120°C तक बढ़ाया जाता है तो वाष्प (भाग) दाब 15 पौंड प्रति वर्ग इंच तक हो जाता है। इन दशाओं में सूक्ष्मजीव मर जाते हैं और उपकरणों का निर्जमीकरण (sterilisation) हो जाता है।

17.6.2 अंग, ऊतक तथा प्रोटोप्लास्ट संवर्धन

अब पौधों के किसी भी भाग को अजर्म (asceptic) दशाओं में संवर्धित करना संभव हो गया है। अंग संवर्धन के लिए पोषण की आवश्यकताएं स्पीशीज़ दर स्पीशीज़ भिन्न होती हैं। अनेक एकबीज पत्री तथा द्विबीज पत्री पौधों की स्पीशीज़ के मूलों, प्रांकुर शीर्षों, पत्तियों, भ्रूणों, परागकोशों तथा एन्डोस्पर्म का संवर्धन किया जा चुका है। उनमें पुनर्जनन किया गया। वृद्धिशील जड़ों को लंबे समय तक फ्लास्कों में संवर्धन के लिए ज्यों का त्यों रखा जा सकता है। वास्तव में लखनऊ के राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान (National Botanical Research Institute) में मूल संवर्धों को कुछ वर्षों के लिए रखने की तकनीक विकसित कर ली गई है। और जब भी आवश्यकता हो तब इन जड़ों को पौधों में पुनर्जनित किया जा सकता है।

ऊतक संवर्धन में सर्वप्रथम बड़ी सफलता रोजर गोथरेट (Roger Gautheret) ने सन् 1939 में प्राप्त की जिसने गाजर की लगातार वर्धमान होने वाली कोशिकाओं (continuous growing cells) की स्थापना की। 1950 के दशक में स्टीवर्ड (Steward) और स्कूग (Skoog) ने अमरीका में और नित्श (Nitsch) ने फ्रांस में गाजर और तंबाकू की कोशिकाओं का संवर्धन किया और यह दिखाया कि ये कोशिकाएं भ्रूण बना सकती हैं और इन्हें पूरे पौधों के रूप में उगाया जा सकता है। भारत मे ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी को दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभाग में प्रोफेसर पी. महेश्वरी तथा उनके दल ने विकसित किया था।

इसी प्रकार प्रांकुर के शीर्ष, पत्ती के प्राइमोर्डिया और पत्ती के टुकड़ों को भी उपयुक्त दशाओं में संवर्धित किया जा सकता है जिससे कि कैलस (callus) बन जाए और उसमें पौधों का पुनर्जनन हो सके। दिल्ली विश्वविद्यालय में परागकोशों (anthers) के संवर्धन पर एक रोचक खोज की गई थी। जबकि अनेक उदाहरणों में परागकोश की भित्ति कैलस में विकसित हो गई और फिर उससे पौधा बना। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एस.सी. महेश्वरी और डॉ. श्रिप्रा मुखर्जी* ने पता लगाया था कि *दतूरा इनोक्सिया* (*Datura innoxia*) के परागकोशों में मौजूद परागकणों ने विशिष्ट दशाओं में विभाजन शुरू कर दिया और उनसे पौधे विकसित हो गए। चूँकि परागकण अगुणित (haploid) होते हैं, यानि उनमें गुणसूत्रों (chromosomes) की आधी संख्या ही होती है इसलिए परागकणों के विभाजन से बने पौधे भी अगुणित ही रहे। यह घटना अब कई स्पीशीज़ में होती देखी गई है। अगुणित पौधों का कृषि में बड़ा महत्व होता है क्योंकि जनन के उद्देश्य से समयुग्मजी (homozygous) शुद्ध वंशक्रमों (pure lines) को प्राप्त करने में लगने वाला समय लगभग 20 वर्ष से घटकर कुछ ही सप्ताह हो जाता है।

वनस्पतिक कोशिकाओं (somatic cells) से हम द्विगुणित (2N) पौधों को पुनर्जनित कर सकते हैं और परागकणों से अगुणित (N) पौधे तथा यदि हम एन्डोस्पर्मों को संवर्धित करें तो हमें त्रिगुणित (3N) पौधे प्राप्त हो सकते हैं। यह भी दिल्ली विश्वविद्यालय में किए गए शोध कार्यों से संभव हुआ है। संवर्धन के लिए प्रयुक्त ऊतक दो तरीकों से पौधों को पुनर्जनित करता है। या तो कोशिका ही एक निषेचित अंडे के रूप में व्यवहार करने लगती है और उसमें भ्रूणोद्भव (embryogenesis) हो जाता है और इस प्रकार बने भ्रूण विकसित होकर पौद बनाते हैं अथवा कोशिकाएं विभक्त होकर कैलस (callus) बनाती हैं। इस कैलस की कुछ कोशिकाएं प्रांकुर की तरह अथवा मूल-आद्यक (root primordia) के रूप में व्यवहार करने लगती है और पूरे पौधे को जन्म देती है।

पौधों का पुनर्जनन वृद्धि की दशाओं और माध्यम में उपस्थित हॉर्मोनों पर निर्भर होता है। आपने पिछली इकाई में पढ़ा है कि हॉर्मोन एक दूसरे से अन्योन्य क्रिया करते हैं और कार्यकी संबंधी अथवा परिवर्धन संबंधी अनुक्रिया उत्पन्न करते हैं। यह बात बहुत ही बढ़िया तरीके से स्कूग (Skoog) और उनके साथियों ने दिखाई थी जिन्होंने पता लगाया कि ऑक्सिन-साइटोकाइनिन के अनुपात में विविधता द्वारा संवर्धन में प्रांकुरों अथवा मूलों के उत्पन्न होने को नियंत्रित किया जा सकता है।

---

*JNU में कार्यरत।

इससे बिल्कुल भिन्न तरीके से पादप-कोशिकाओं का अध्ययन तथा उनमें उचित बदलाव (manipulate) करना प्रोटोप्लास्टों के संवर्धन के ज़रिए संभव हुआ है। कोशिकाओं की कोशिका-भित्ति को हटा दिया जाए तो उन्हें प्रोटोप्लास्ट कहते हैं। माध्यम की संघटना में परिवर्तिन करके "नग्न कोशिकाओं" (naked cells) से पूरे पौधों को तैयार किया जा सकता है। इस समय कोशिकाओं और प्रोटोप्लास्टों को उगाने की यह तकनीक बहुत से पौधों के लिए मानकीकृत (standardised) कर ली गई है (चित्र 17.21)। प्रोटोप्लास्ट संवर्धन का लक्ष्य है पौधों में कृषि की दृष्टि से महत्वपूर्ण जीनों को प्रविष्ट कराना (introduce genes) और लैंगिक दृष्टि से असंगत-स्पीशीज़ों (incompatible species) के लिए वनस्पतिक संकर (somatic hybrids) प्राप्त करना।

एन्डोस्पर्म (भ्रूणपोष) त्रिगुणित (triploid) होता है क्योंकि यह दुहरे निषेचन के दौरान एक नर युग्मक (N) के 2 केंद्रीय कोशिकाओं (2N) के साथ संलयन द्वारा बनता है।

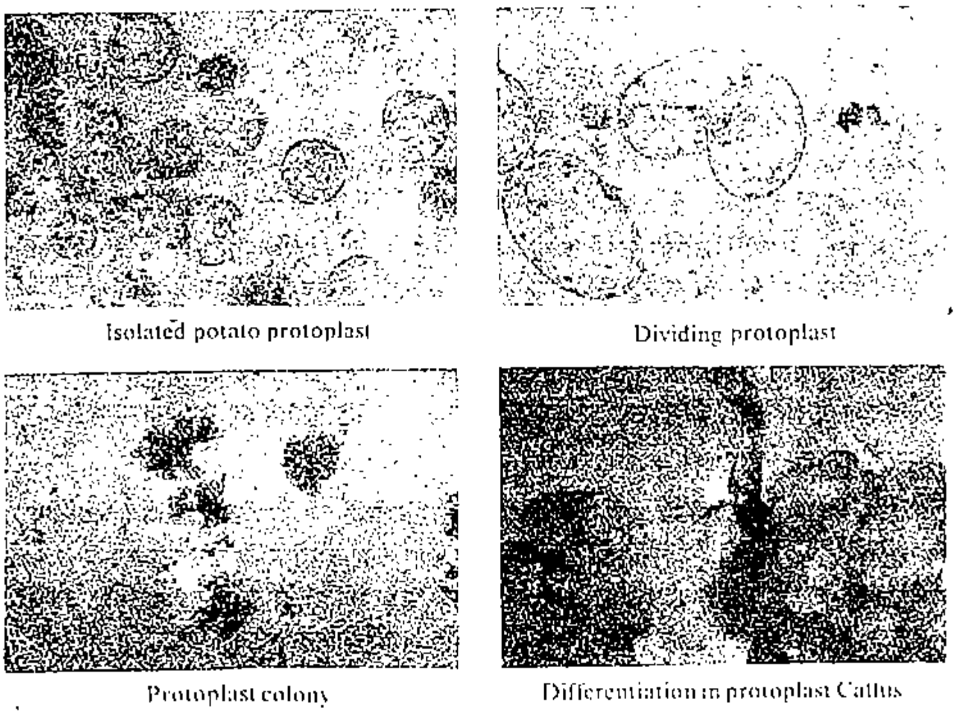

चित्र 17.21: एकल प्रोटोप्लास्ट का विकसित होकर पूर्ण पौधे का रूप लेना। प्रोटोप्लास्ट विभक्त होकर कैलस बनाते हैं जो कि उपयुक्त माध्यम में संवर्धित करने पर पादपकों (plantlets) में विभेदित हो जाता है। यह विशेष प्रयोग आलू के पौधों पर किया गया था।

अब ऊतक संवर्धन तकनीक, पादप परिवर्धन में हॉर्मोनों, रसायनों और प्रकाश की भूमिका का अध्ययन करने का महत्वपूर्ण साधन बन गई है। चूँकि पुनर्जनन संभव होता है इसलिए यह तकनीक पौधों की आकारिकी पर विभिन्न बाह्यजनित कारकों की भूमिका का अध्ययन करने के लिए अद्वितीय अवसर प्रदान करती है क्योंकि इनके प्रभाव का हम निश्चित दशाओं के अंतर्गत अध्ययन कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 5

क) निम्नलिखित कथनों में से कौन-से कथन सत्य हैं। सत्य के लिए स और असत्य के लिए अ लिखिए।

i) अगुणित पौधे परागकोश संवर्धन द्वारा प्राप्त किए जा सकते हैं। ☐

ii) पौधे की विशिष्ट कोशिकाएं ही युग्मनज की तरह व्यवहार कर सकती हैं, यदि उन्हें उपयुक्त तथा अनिवार्य पोषण, हॉर्मोन, विटामिन तथा वृद्धि की दशाएं उपलब्ध कराई जाएं। ☐

iii) अंग-संवर्धन द्वारा पौधों का पुनर्जनन, माध्यम में मिलाए गए वृद्धि हॉर्मोनों पर निर्भर नहीं होता। ☐

iv) "नग्न पादप कोशिकाएं" अर्थात् बिना कोशिका-भित्ति वाली कोशिकाओं को प्रोटोप्लास्ट कहते हैं। ☐

ख) ऊतक-संवर्धन तकनीक किस प्रकार विभेदन तथा वृद्धि के नियमन को समझने में मदद देती है?

....

....

....

....

....

17.7 जैवघड़ियाँ (जैव नियतकालिकता)

अंत में हम पौधों की एक और परिघटना के बारे में पढ़ेंगे जिसे वैज्ञानिक अभी तक अच्छी तरह से समझ नहीं पाए हैं। यह पता लग चुका है कि जंतुओं की तरह जो अपने व्यवहार में आवर्तिता (rythmicity) दर्शाते हैं, पौधों में भी कुछेक परिवर्धन की घटनाएं समय की दृष्टि से नियमित आवर्तिता के साथ होती हैं। ये प्रक्रम आवर्ती होते हैं और यदि ये वाह्य विक्षोभी कारक की अनुपस्थिति में होते हैं तो इन्हें अंतर्जात आवर्तन (endogenous rhythms) कहते हैं। यह बात आपको स्पष्ट हो जाएगी यदि आपने कभी पौधों की पत्तियों की निशा-गतियों (sleep movement) को ध्यान से देखा हो, जैसे — फैसियोलस (*Phaseolus*), माइमोसा (*Mimosa*), ऐल्बिज़िया (*Albizzia*)

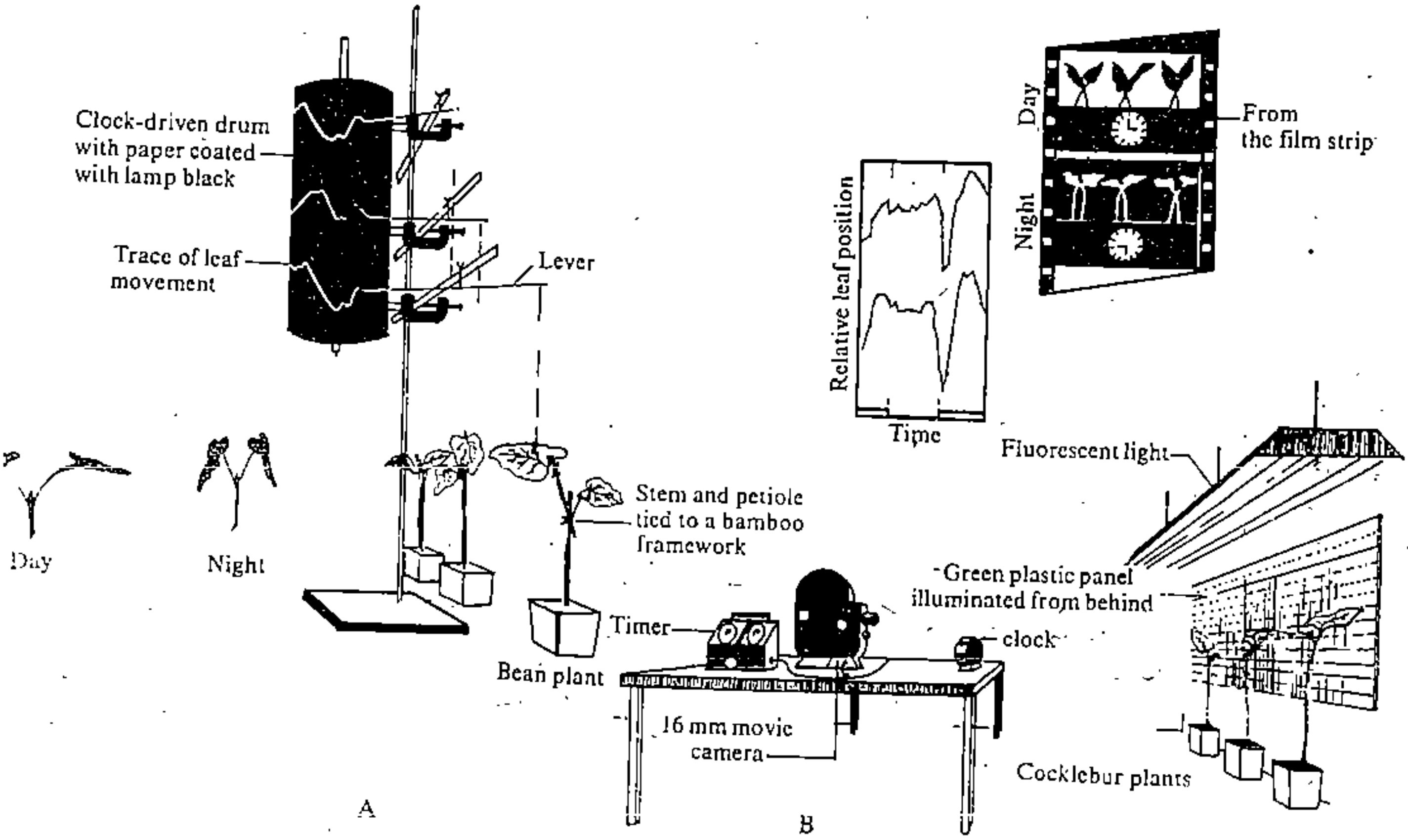

चित्र 17.22: पत्ती की गतियों को रिकॉर्ड करने की विधि।

(A) इस विधि में पौधे की पत्ती को एक धागे द्वारा लीवर से जोड़ दिया गया है जो कि घड़ी की सुई की दिशा में घूमते हुए ड्रम पर लगे मार्कर के संपर्क में है। चूँकि ड्रम घूम रहा है, इसलिए पत्ती की लेश मात्र भी गति को रात और दिन की अवधि में रिकॉर्ड किया जा सकता है। (B) इस विधि में थोड़ी-थोड़ी देर बाद फोटो खींच सकने वाला कैमरा (photographic camera) फिट कर दिया जाता है जो कि थोड़े-थोड़े अंतरालों के बाद पौधे की फोटो खींचता रहता है। ऊपर (दाईं ओर) दिखाए गए अनुसार, डिवेलप की गई फिल्म को देखकर किसी समय पत्ती की स्थिति को रिकॉर्ड किया जा सकता है।

और सेमनिया (*Samanea*) में। इन पौधों में दिन के समय पत्तियाँ खुली रहती हैं और रात्रि के समय ये झुक (droop) जाती हैं। वास्तव में इन गतियों को रिकॉर्ड किया जा सकता है। जैसाकि चित्र 17.22 में दिखाया गया है आवर्तिता को प्रदर्शित करने वाली किसी पत्ती पर धागा बांधकर इसे रिकॉर्ड किया गया था। इस धागे को एक धिरनी पर से घुमाकर एक स्टाइलस (stylus) से बांध दिया गया जो घूर्णी ड्रम को छू रहा था।

प्रश्न उठता है कि हम किस प्रकार पता लगाये कि ये गतियां बाह्य कारकों के प्रभाव से स्वतंत्र हैं? एक प्रयोग में आवर्तिता को प्रकाश द्वारा प्रेरित किया गया और पौधों को कई दिनों तक पूर्ण अंधकार में रखा गया। यह देखा गया कि ठीक उसी प्रकार पत्तियां खुलती और बंद होती हैं जिस प्रकार सामान्य

दशाओं में करती हैं। ये दोलन (oscillations) लगभग 23 घंटे के अन्तराकाल के थे। इस प्रकार के 20-23 दोलनों वाले आवर्तिता को सर्केडियन रिद्म (circadian rhythms) कहते हैं और उस कोशिकीय यंत्रावली को जो पौधे को यह याद रखने और इन आवर्तिताओं को समय पर होने में मदद करती हैं — जैव घड़ी (biological clock) कहते हैं। बड़ी रोचक बात यह है कि जब पौधों को सैटेलाइटों (satellites) पर रखा गया तो भी आवर्तिताएं होती रहीं।

पौधों के काफी उदाहरण हमें ज्ञात हैं जिनमें सर्केडियन रिद्मों को होते देखा गया है और उनका अध्ययन किया गया है। ये हैं : *ईडोगोनियम कार्डियाकम* (*Oedogonium cardiacum*) में *बीजाणुकजनन* (*sporulation*) *फैसियोलस मल्टीफिलोरस* (*Phaseolus multiflorus*) में पत्तियों की गति और *ब्रायोफिलम फेट्शेन्कोइ* (*Bryophyllum fedtschenkoi*) में अंधकार में CO_2 का स्थिरीकरण।

विश्व के विभिन्न भागों में अत्यंत सुंदर किस्म की पुष्प घड़ियों को पर्यटन स्थलों पर लगाया गया है। इनमें से एक कनाडा में स्थित प्रसिद्ध नियाग्रा फॉल (Niagara falls) में लगी हुई है जो सुबह 6.00 से शाम 6.00 बजे तक समय बताती है। इसके सुंदर फूल ठीक सुबह 6.00 बजे, 7 बजे, 8 बजे और इसी क्रम में खुलते हैं जो कि अत्यंत सुदर दृष्य प्रस्तुत करते हैं और देखने लायक है। चित्र 17.24 में यूरोप के एक बगीचे में लगी हुई पुष्प घड़ी के फूलों को दिखाया गया है।

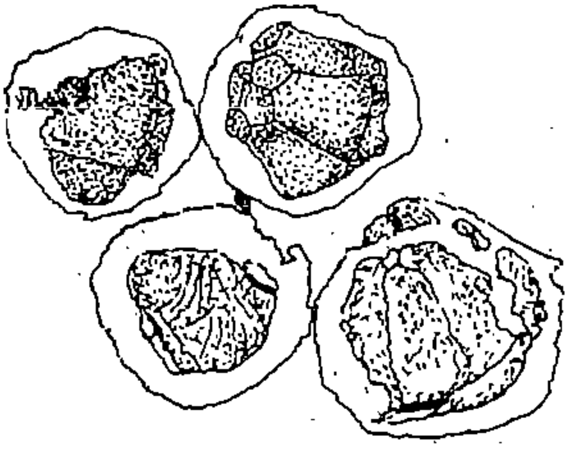

A

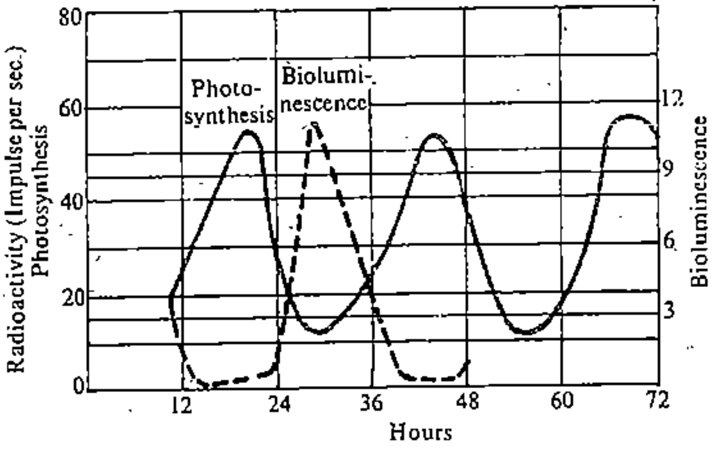

B

चित्र 17.23: *गोनियालेक्स पॉलीड्रा* (*Gonyaulax polyedra*) में आवर्तिता। इस जीव को (A) जो कि एक डाइनोफ्लैजिलेट है जैव-आवर्तिताओं के अध्ययन में व्यापक रूप से प्रयोग में लिया गया है। इसमें तीन प्रक्रियाएं देखी जाती हैं जो भिन्न आवर्तिता को दर्शाती है। इनमें से दो प्रक्रियाओं को (B) में दिखाया गया है। प्रकाश संश्लेषण प्रकाश की उपस्थिति में बढ़ता है और अंधेरे में घटता है जबकि जीव प्रदीप्ति (bioluminiscence) इसके विपरीत होता है। तीसरी प्रक्रिया कोशिका विभाजन की होती है जिसे यहाँ नहीं दिखाया गया है परंतु यह भी आवर्ती व्यवस्था का अनुसरण करती है।

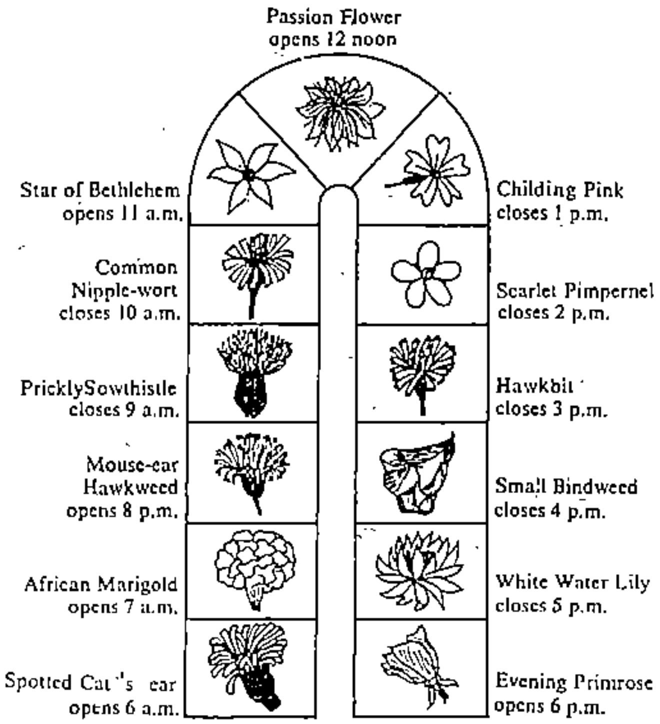

चित्र 17.24: पुष्पी घड़ी।

17.7.1 जैव आवर्तिताओं को प्रभावित करने वाले कारक

आवर्तिताओं को प्रभावित करने वाले कारकों में से दो महत्वपूर्ण कारक हैं — तापमान और प्रकाश जो आवर्तिता की कालावधि तथा तीव्रता को नियमित अथवा प्रभावित करते हैं। यह पता लगाया जा चुका है कि एक बार आवर्तिता निर्धारित हो जाती है तो अनेक सर्केडियन प्रक्रियाएं व्यापक परिसर (broad range) तक तापमान से प्रभावित नहीं होती। कई उदाहरणों में यह दिखाया जा चुका है कि प्रकाश का प्रभाव फ़ाइटोक्रोम द्वारा नियमित होता है। फ़ाइटोक्रोम एक वर्णक-प्रोटीन सम्मिश्र (pigment-protein complex) है जिसके बारे में आप भाग 17.4 में पढ़ चुके हैं। दिन के दौरान P_{fr} रूप की मात्रा में परिवर्तन हो जाता है अर्थात् सुबह से शाम तक। शाम होने पर जब लाल रोशनी कम हो जाती है तब इसका स्तर घट जाता है और आगे अंधकार के बढ़ते जाने के साथ-साथ और कम हो जाता है। सुबह होने पर जब लाल रोशनी अधिक होती है तो P_{fr} का स्तर फिर से बढ़ जाता है। प्रतिदिन होने वाला यह परिवर्तन जैव घड़ी को सुचारू रूप से चलाने वाला एक कारक हो सकता है।

इर्विन बनिंग (Erwin Bünning) पौधों में जैव-घड़ी से संबंधित खोज के संस्थापकों में से एक हैं जो टुबिन्गन, जर्मनी (Tübingen, Germany) के बोटैनिकल इंस्टीट्यूट में अनुसंधाता हैं। सोयाबीन की विभिन्न किस्मों पर शोधकार्य द्वारा उन्होंने यह पता लगाया कि इस पौधे के दीप्तिकालिक (photoperiods) व्यवहार और पत्तियों की नैश-गतियों (sleep movement) में आपसी सहसंबंध होता है। उन्होंने यह भी पता लगाया कि लघु प्रदीप्तिकाली किस्मों में पत्तियों की गति जाहिर थी जबकि दिवा-निरपेक्ष पौधों में पत्तियों की गति कोई खास नहीं थी। इन प्रेक्षणों से यह लगता है कि पौधों की आवर्ती परिघटनाओं पर प्रकाश का प्रभाव होता है।

अभी तक यह स्पष्ट नहीं हो पाया है कि जैव-घड़ी का भौतिक आधार क्या है? निश्चय ही यह कोई विशेषीकृत समय बताने वाला अंग नहीं है। कुछ अक्रम जो कि केंद्रक, प्रोटीन और झिल्ली के स्तर पर प्रभावित होते हैं — इसमें शामिल हैं। तथापि इसकी वास्तविक प्रकृति के बारे में निश्चयपूर्वक जानकारी नहीं है। संभवतः प्रत्येक कोशिका के भीतर कोई ऐसा रसायन होता है जो घड़ी की तरह कार्य करता है। यद्यपि हाल ही में किए गए शोधकार्यों से यह लगता है कि इसमें झिल्ली से आबंध ग्लाइकोप्रोटीनों का हाथ है जो पर्यावरणीय संकेतों को ग्रहण करते हैं और घड़ी को शुरू ...

17.8 सारांश

- पौधे का परिवर्धन बीज के निर्माण से शुरू होता है। बीज में खाद्य पदार्थ और mRNA संचित रहता है जिसका बीजांकुरण के दौरान उपयोग होता है। संचित खाद्य पदार्थों –– जैसे लिपिड, स्टार्च तथा बीज में भंडारित प्रोटीनों — का अवकर्षण पहले से विद्यमान प्रोटीनों तथा संचित mRNA पर हाल ही में संश्लेषित प्रोटीनों अथवा वह जिनका अनुलेखन प्रेरित हुआ है, द्वारा होता है ताकि ऐसे यौगिक बन जाएं जिन्हें वर्धमान भ्रूण अपनी वृद्धि तथा परिवर्धन के लिए काम में ले सके।
- वनस्पतिक वृद्धि के कुछ समय पश्चात् पौधों में जनन-संबंधी परिवर्धन होता है। इस प्रक्रम के दौरान पुष्प पैदा होते हैं। पुष्पन के प्रक्रम का नियमन प्रदीप्त/अप्रदीप्त चक्रों की अवधि द्वारा होता है। पुष्पन प्रक्रम के लिए अप्रदीप्त अवधि अधिक महत्वपूर्ण होती है। पत्तियाँ ही दीप्तिकालिक उद्दीपन का अवगम करती हैं। अवगम के पश्चात् यह संकेत वनस्पतिक मेरिस्टेमों को भेज दिया जाता है जो कि संकेत प्राप्त होने पर पुष्पी मेरिस्टेमों में बदल जाते हैं।
- प्रकाश-संरचना विकासीय घटनाओं (photomorphogenetic events) का नियमन लाल रोशनी तथा सुदूर-लाल रोशनी का अवशोषण करने वाले वर्णक द्वारा होता है जिसे फ़ाइटोक्रोम कहते हैं। यह दो अवस्थाओं में पाया जाता है। सुदूर-लाल रोशनी का अवशोषण करने वाली अवस्था—अर्थात् P_{fr} रूप-जैविक दृष्टि से सक्रिय होता है और पौधों में तेजी तथा धीमी गति से होने वाली अनेक अनुक्रियाओं को प्रेरित करता है। तेजी से होने वाली अनुक्रियाएं झिल्लियों की गुणताओं में परिवर्तन द्वारा मध्यस्त हो सकती है। धीमी अनुक्रियाओं में नई प्राटीनों का निर्माण योग देता है जो कि परिवर्धन की एक अवस्था से दूसरी में बदलाव (transition) को नियंत्रित करती है।
- पौधे पर पुष्प लग जाने पर वह अपना जीवन-चक्र पूरा करता है। इसके पश्चात् पौधे में जीर्णता की प्रावस्था आ जाती है। कई पौधों में, जैसे वृक्षों में जीर्णता एक लगातार होने वाली घटना है जिससे पत्तियां झड़ने लगती हैं। ऐसे पौधों में उसके कुछ भाग ही जीर्ण होते हैं और मर जाते हैं।
- चूंकि पौधे जटिल किस्म के प्राणी होते हैं, इसलिए उनकी अनेक परिवर्धन संबंधी अनुक्रियाओं का *पात्रे में* (*in vivo*) संवर्धन तकनीक द्वारा अध्ययन किया जाता है। इस तकनीक द्वारा पौधे के किसी भी अंग, ऊतक अथवा कोशिका को परखनली में संवर्धित किया जा सकता है और उसमें विभेदन कराया जा सकता है जिससे कि वह पूर्ण पौधा बन जाए। इस प्रकार उचित परिवर्तन करना कई पौधों में संभव हो गया है।
- यद्यपि अधिकांश कार्यकी संबंधित तथा परिवर्धन संबंधी प्रक्रम बाह्य कारकों के नियंत्रण में होते हैं फिर भी कुछ उदाहरणों में ये स्वनियामक होते हैं और इनमें अंतर्जात प्रकार की आवर्तिता देखी जाती है। इन दैनिक आवर्तिताओं की क्रियाविधि की जानकारी अभी तक नहीं हो पाई है परंतु यह पादप परिवर्धन के क्षेत्र में अनिवार्य शोध का विषय है।

17.9 अंत में कुछ प्रश्न

1) किसान फसल की कटाई के समय वर्षा क्यों नहीं चाहते?

....

....

....

....

....

....

....

2) बीजांकुरण में योग देने वाले महत्वपूर्ण एन्ज़ाइमों और हॉर्मोनों की सूची बनाइए। संक्षेप में उनके कार्य भी समझाइए।

....
....
....
....
....
....
....
....

3) कॉलम 1 में दिए गए निम्नलिखित एन्ज़ाइमों का कॉलम 2 में दिए गए कार्यों के साथ मेल बिठाइए।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) सेल्यूलोज़	क) क्लोरोफिल का अवकर्षण करता है।
ii) प्रोटिएज़	ख) कोशिका-भित्तियों में पेक्टिनों का जलापघटन करता है।
iii) पॉलिगैलेक्टुरोनेज़	ग) प्रोटीनों का जलापघटन करके ऐमिनों अम्लों में बदल देता है।
iv) क्लोरोफिलेज़	घ) सेल्यूलोज़ का जलापघटन करता है।
v) राइबोन्यूक्लिएज़	च) कोशिका-भित्ति को ढीला कर देता है।
vi) β-ग्लूकैन हाइड्रोलेज़	छ) RNA का अवकर्षण कर देता है।

4) ऊतक संवर्धन तकनीक के क्या लाभ हैं?

....
....
....
....
....

17.10 उत्तर

बोध प्रश्न

1) क) i) प्रसुप्त ii) प्रोटीनों, mRNA
iii) सजीवप्रजता iv) एबसिसिक अम्ल
v) एल्यूरोन vi) जलापघटक
vii) फ़ाइटिन

2) क) i) वनस्पतिक, पुष्पी ii) अप्रदीप्त काल
iii) दिवा-निरपेक्ष iv) फ्लोरिज़न, पत्तियों
v) अप्रदीप्त काल

ख) निम्नलिखित के संश्लेषण में वृद्धि :
i) DNA, ii) RNA, iii) राइबोसोम, iv) प्रोटीन

3) i) 660, 730 ii) सुदूर-लाल
iii) विलेयशील, साइटोप्लाज़्म iv) कैल्सियम आयन
v) P_{fr}, अनुलेखन

4) क) i) क्लोरोफिल की मात्रा में कमी होना
ii) परिणामस्वरूप CO_2 स्थिरीकरण में कमी होना
iii) क्लोरोप्लास्ट के थाइलैकॉइडों के समग्र संगठन का विदारण।
iv) श्वसन दर में कमी से ATP की सप्लाई में कमी

ख) i) आंतरिक — पौधे की आयु, कितना पुष्पन हुआ है, फलों के पकने का समय
ii) बाह्य — प्रदीप्तकाल की अवधि, तापमान, पोषक तत्व
iii) जैविक — चंचुडी, कीटों और अन्य परजीवियों पर आक्रमण और पत्तियों को तोड़ना।

ग) i) सेल्यूलेज़ — विलगन क्षेत्र में कोशिकाओं की भित्तियों का जलापघटन करता है।
ii) पॉलिगैलेक्टुरोनेज़ — पेक्टिन का जलापघटन करता है जो भित्ति की मध्य पटलिका-क्षेत्र का प्रमुख घटक होता है।

5) क) i) स, ii) अ, iii) अ, iv) स

ख) ऊतक संवर्धन द्वारा हम पृथक रूप में पौधे के बिना, कोशिका विभेदन के लिए आवश्यक उद्दीपन का अध्ययन कर सकते हैं। यह विधि अंतर्दृष्टि प्रदान करती है कि किस प्रकार पौधों में सापेक्षतः अविशेषीकृत तथा अविभेदित संरचनाएं विशिष्ट मेरिस्टेमों में विभेदित हो जाती हैं। इसके अलावा हम प्रोटोप्लास्टों, ऊतकों अथवा अंगों में, उपयुक्त वृद्धि दशाओं के अंतर्गत कृत्रिम रूप से विभेदन को प्रेरित करके लाभ उठा सकते हैं।

अंत में कुछ प्रश्न

1. जब बीज में एक बार भ्रूण बन जाता है तो वह प्रसुप्तावस्था काल में प्रवेश कर लेता है ताकि वह जनक पौधे पर अंकुरित न हो जाए। अनाजों में प्रसुप्तावस्था थोड़े समय के लिए होती है। यदि फसल काटने के समय वर्षा हो जाती है तो गेहूं और जौ के दाने बालों में लगे हुए ही अंकुरित हो जाते हैं। चूँकि अंकुरित दाने मनुष्यों द्वारा खाने के काम में प्रयोग नहीं किए जाते हैं, इसलिए बरसात से किसानों को फसल नष्ट होने का खतरा होता है।

2. i) नीचे दिए गए तीन जलापघटक एन्ज़ाइमों द्वारा वसाओं, प्रोटीनों और कार्बोहाइड्रेटों का सरलतर इकाइयों में अपकर्षण हो जाता है और इस प्रकार भ्रूण को पोषण प्राप्त हो जाता है।
प्रोटीनेज़ — प्रोटीनों का जलापघटन करके घटक ऐमीनों अम्लों में बदल देता है।
एमिलेज़ — स्टार्च को माल्टोज़ इकाइयों में जलापघटन कर देता है।
लाइपेज़ — लिपिडों को वसा अम्लों तथा ग्लिसरॉल में अवकर्षित कर देता है।

ii) न्यूक्लिऐस — न्यूक्लीक अम्ल को न्यूक्लियोटाइडों में अवकर्षित कर देता है जिन्हें नए DNA और RNA के संश्लेषण के लिए निर्माण-सामग्री के रूप में काम में लिया जा सकता है।

iii) β-ऑक्सीकरण के एन्ज़ाइम और ग्लॉयाक्सिलेट चक्र — वसा अम्ल ऐसीटिल CoA में बदल जाते हैं जिनसे सक्सिनेट बनता है। सक्सिनेट ग्लूकोनियोज़िनेसिस में पूर्वगामी है जो ग्लूकोज़ का उत्पादन करता है।

iv) हॉर्मोन — भ्रूण से जिबरेलिक अम्ल निकलता है जो कि एल्यूरोन परत पर क्रिया करता है और α-एमिलेज़ के संश्लेषण को प्रेरित करता है।

3. i) घ), ii) ग, iii) ख, iv) क, v) छ, vi) च

4. इस तकनीक में हम उपयुक्त दशाओं के अंतर्गत प्रोटोप्लास्टों, ऊतकों अथवा अंगों में कृत्रिम रूप से विभेदन की संभावना की खोज कर सकते हैं। यह तकनीक खासतौर से बड़ी संख्या में वांछित किस्मों को तैयार करने में प्रयोग में ली जाती है। कृषि की दृष्टि से उपयोगी उत्परिवर्तियों (mutants) को लाखों पौधों की अपेक्षा लाखों संवर्धित कोशिकाओं में से शीघ्रता से पृथक करना संभव है।

इकाई 18 तनाव के प्रति पौधों की अनुक्रियाएं

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
18.2 तनाव क्या है?
18.3 तनाव की प्रकृति
भौतिक तनाव
रासायनिक तनाव
जैवीय तनाव
18.4 तनाव की स्थिति में अनुकूल बनने के तरीके
कार्यशील अणुओं का बदलना
पौधों की आकारिकी और व्यवहार में बदलाव
वैकल्पिक उपापचयी मार्गों का प्रयोग
18.5 कुछ विशिष्ट तनाव स्थितियों में पौधों की अनुक्रियाएं
18.6 भविष्य में संभावनाएं
18.7 सारांश
18.8 अंत में कुछ प्रश्न
18.9 उत्तर

18.1 प्रस्तावना

इससे पहले की दो इकाइयों में आपने पढ़ा कि हॉर्मोन भीतरी रासायनिक संकेतक है और पर्यावरणीय कारक बाहरी संकेतक है। इनके द्वारा वृद्धि और परिवर्धन का नियंत्रण होता है। इन संकेतकों का अनुभव कोशिका में मौजूद विशेष अणु करते हैं। पाठ्यक्रम की इस आखिरी इकाई में आप पर्यावरणीय तनावों के प्रति पौधों की अनुक्रियाओं के बारे में पढ़ेंगे।

आपको मालूम ही होगा कि पौधों की कुछ विशेष जातियां असहनीय चरम पर्यावरणीय स्थितियों में भी उग सकती हैं जहाँ एक ओर हिमालय के शून्य डिग्री से. भी कम तापमान में पौधे उगते हैं, तो दूसरी ओर राजस्थान में 45° सें. से अधिक गर्मी में भी। पौधों की पानी, तापमान, प्रकाश, पोषक तत्व और मिट्टी की इष्टतम मांग जाति दर जाति अलग-अलग होती है। क्या आपने कभी सोचा है कि तेज प्रकाश में घासें क्यों तीव्रता से पनपती हैं जबकि इस परिस्थिति में कई पौधों में वृद्धि रुक जाती है या अवरुद्ध हो जाती है। ऐसा क्यों होता है कि धान के पौधे जलाप्लवित स्थिति में उगते हैं, पर मकई या गेहूँ के नहीं? तापरागी (thermophile) पौधे 70° सें. से भी अधिक गर्मी में कैसे क्रियाशील रह पाते हैं जबकि उनकी कोशिकाएं भी ऐसे अणुओं से मिलकर बनी होती है, जो मोटे तौर पर बनावट और कार्यों में अन्य जीवों की कोशिकाओं जैसे होते हैं। 70° सें. के तापमान पर भी तापरागी पौधों में उपापचयी अभिक्रियाएं क्यों नहीं भंग होती या एंजाइमों में ऐसी क्या खासियत है, जो एक जाति को तो अत्यधिक तापमान पर दूसरी को अत्यधिक कम तापमान पर पूरी तरह से कार्यशील रहने के योग्य बनाते हैं। इस इकाई में हम इन प्रश्नों के हल ढूंढेंगे। हम यह जानने की कोशिश करेंगे कि कुछ खास पादप कोशिकाओं में ऐसी क्या आण्विक अनुक्रियाएं (molecular responses) होती हैं, जो उन्हें पर्यावरण की चरम स्थितियों—उच्च तापमान, पानी की कमी और प्रकाश तीव्रता को सहने में मदद करती है।

मिट्टी की बहुत कम या ज्यादा pH, अधिक लवणता और खनिजों की कमी से हमारे देश और विश्व में फसलों, सब्जियों, फलों और दूसरे उपयोगी पौधों की पैदावार के लिए सुलभ खेती योग्य भूमि में भारी कटौती होती है। अनुमान है कि विभिन्न प्रकार के तनावों की वजह से पैदावार में

50 प्रतिशत कमी हो जाती है। वैज्ञानिक अब प्रयोगशालाओं और खेतों में विभिन्न तनावों के प्रति पौधों की अनुक्रियाओं का अध्ययन कर रहे हैं। लक्ष्य यह है कि प्राकृतिक वातावरण में पौधों की वृद्धि के लिए अनिवार्य उपयुक्त स्थितियों में परिवर्तन होने पर भी ज्यादा से ज्यादा पैदावार हासिल की जाए। इस इकाई में आप देखेंगे कि विभिन्न प्रकार के तनावों के प्रति पौधों की अनुक्रियाओं पर किए गए प्रारंभिक अध्ययनों के परिणाम काफी उत्साहवर्धक प्रतीत होते हैं। इससे हम यह आशा कर सकते हैं कि आनुवंशिक अभियांत्रिकी (genetic engineering) द्वारा पौधों को आवश्यकतानुसार ढालना संभव हो जाएगा, ताकि तनाव की स्थितियों में भी उनकी क्रियाशीलता को बढ़ाया जा सके।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- तनाव, प्रकाशसंदमन (photoinhibition), शीत-सहनशीलता (cold-hardiness), शीत-पर्यनुकूलन (cold-acclimation) एलिसिटर (elicitor), और परासरण नियमन (osmoregulation) की व्याख्या कर सकेंगे,
- विभिन्न पर्यावरणीय तनावों की व्याख्या कर सकेंगे, जिनका पौधों को सामना करना पड़ सकता है,
- तनाव वाली स्थितियों का सामना करने के लिए पौधों द्वारा अपनाए गए तरीकों की चर्चा कर सकेंगे,
- उदाहरण देकर समझा सकेंगे कि विभिन्न तनाव की स्थितियों का सामना करने के लिए पौधों में किस तरह की अनुक्रियाएं होती हैं,
- हमारे देश के उन क्षेत्रों में उगने वाले पौधों में वांछित बदलाव और प्रजनन की संभावनाओं के बारे में बता सकेंगे, जहाँ पर्यावरण की चरम परिस्थितियां होती हैं।

18.2 तनाव क्या है?

सौरफ्लेक्स (sunflecks) प्रकाश के लघु कटिबंध जो किसी निश्चित स्थल पर थोड़े से समय तक रहते हैं।

तनाव समझने के लिए आइए हम एक ही आवास में रहने वाले प्राकृतिक समुदायों को लें। दो पौधों की सापेक्षिक स्थिति उन्हें किसी पर्यावरणीय कारक, जैसे कि प्रकाश के मामले में बिल्कुल भिन्न स्थितियों में डाल सकती है। किसी वर्षा-बहुल वन को ही लें। इस वन का ऊपरी आवरण अपेक्षतया बड़े पेड़ों से मिलकर बना होता है। वन का यह भाग सबसे अधिक प्रकाश प्राप्त करता है। दूसरी ओर छोटे-छोटे पौधों को छुट-पुट प्रकाश से ही काम चलाना पड़ता है। अगर हम पेड़-पौधों के बाहरी आवरण को ढक कर वन की जमीन को पूर्ण प्रकाश दें, तो क्या होगा? प्राकृतिक स्थिति से विचलन (deviation) होने के कारण इन पेड़-पौधों की वृद्धि पर प्रकाश का बुरा असर पड़ेगा। इस प्रकार इष्टतम पर्यावरणीय स्थितियों में किसी भी प्रकार का विचलन जिसका पौधों की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, तनाव माना जा सकता है।

आप जानते होंगे कि तनाव के कारण हमारे कई कृषि उत्पादों की पैदावार पर बुरा असर पड़ता है। चित्र 18.1 में जैवीय और पर्यावरणीय अवरोधों के कारण पैदावार में पाए गए अंतर को दर्शाया गया है। परन्तु हमें यह भी मानकर चलना चाहिए कि किसी भी आवास में तापमान, प्रकाश, पानी, पोषक तत्वों की आपूर्ति और मिट्टी की विशेषताएं आदि सभी स्थितियां नियंत्रण में नहीं रखी जा सकतीं। न ही इन्हें किसी जाति विशेष के लिए एक अनुकूलतम स्तर पर स्थिर करके रखा जा सकता है। पर चूंकि जातियों का जीवित बने रहना आवश्यक है, इसलिए उन्हें पर्यावरणीय स्थिति में होने वाले विचलनों के लिए स्वयं को उनके अनुकूल ढालना होता है। कृत्रिम रूप से यह अनुकूलन या तो तनाव को सहने वाली किस्मों के प्रजनन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है या ऐसी स्थितियां पैदा की जा सकती हैं, जो पौधों को तनाव सहने में मदद करें। उदाहरण के लिए अगर किसी पोषक तत्व की कमी हो, तो उसे दूर करने की कोशिश की जा सकती है। वही पौधे तनाव पूर्ण स्थितियों में क्रियाशील रह पाते है जो पर्यावरण में होने वाले परिवर्तनों में स्वयं को ढाल लेते हैं।

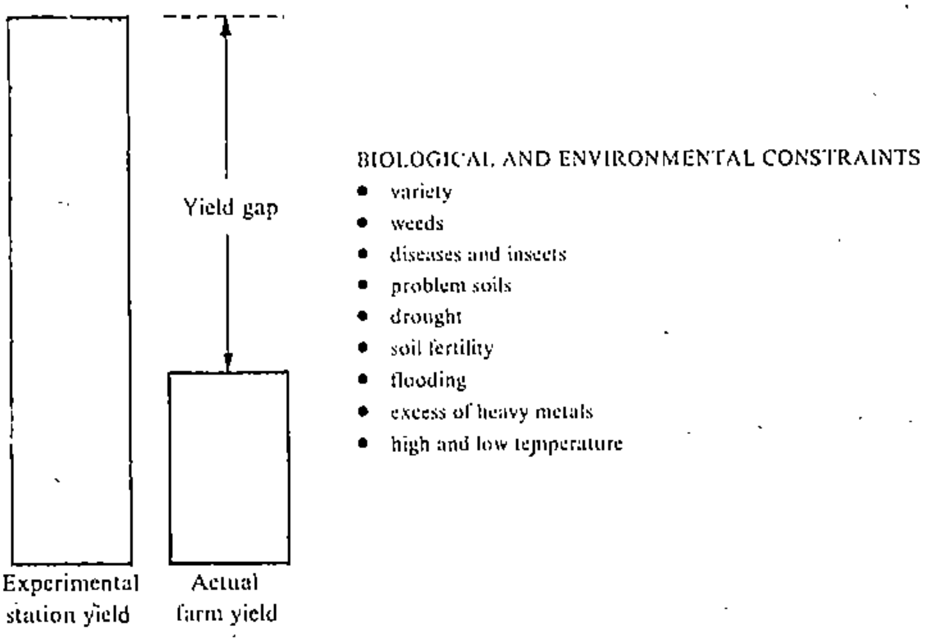

चित्र 18.1: जैवीय और पर्यावरणीय अवरोधों के कारण पैदावार में पाये गये अन्तर का चित्रण।

18.3 तनाव की प्रकृति

जैसा कि पहले भाग में बताया जा चुका है, पादप जातियों की समग्र क्रियाशीलता के लिए आवश्यक पर्यावरणीय स्थितियों में, किसी भी तरह के विचलन को तनाव कहा जा सकता है। अगर आप पर्यावरणीय कारकों का स्मरण करें तो आप उन विभिन्न प्रकार के तनावों को भी बता सकते हैं, जिनका पौधों को सामना करना पड़ सकता है। चित्र 18.2 में संभावित पर्यावरणीय तनावों की एक मोटे तौर पर रूपरेखा दिखाई गई है।

Open University System
in India Genesis

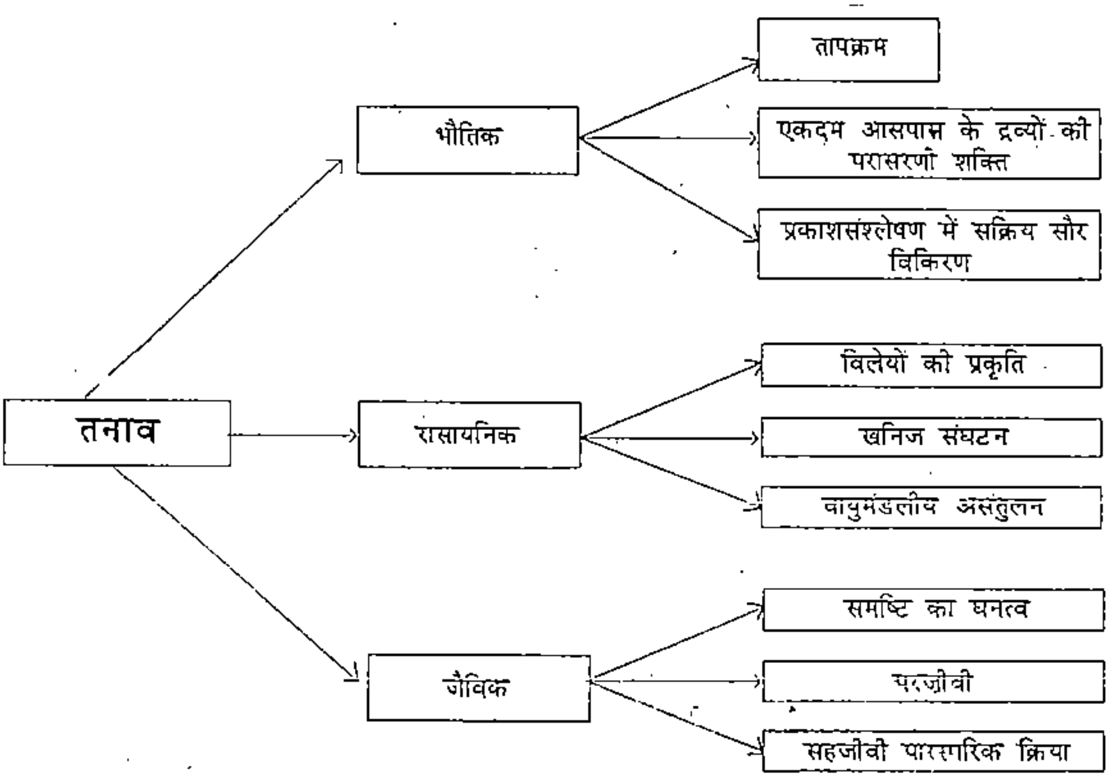

चित्र 18.2: पर्यावरणीय तनाव स्थितियों की प्रकृति।

18.3.1 भौतिक तनाव

नीचे दी गई पर्यावरणीय स्थितियों में भौतिक तनाव पैदा होते हैं :

i) **तापक्रम :** हम ऐसे पौधों और जीवों से परिचित हैं, जो हमारे आसपास के तापक्रम में जीवित रह सकते हैं, यानि तापक्रम का वह परासर जो हमारे जीवित रहने के लिए अनुकूल है। यह तापक्रम 15° सें. से 45° सें. है। मगर हम यह भी जानते हैं कि आर्कटिक प्रदेश में शून्य डिग्री सें. से नीचे और सल्फर स्रोतों में 70° सें. से अधिक तापक्रम पर भी कुछ जीव पनप सकते हैं। उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों के पौधों को तब तनाव का सामना करना पड़ता है, जब जाड़ों में तापमान गिरकर हिमांक पर आ जाता है और दूसरी ओर ऊष्णकटिबंधीय जलवायु के रेगिस्तानों में गर्मी के दिनों में तापमान 55° से. को पार कर जाता है।

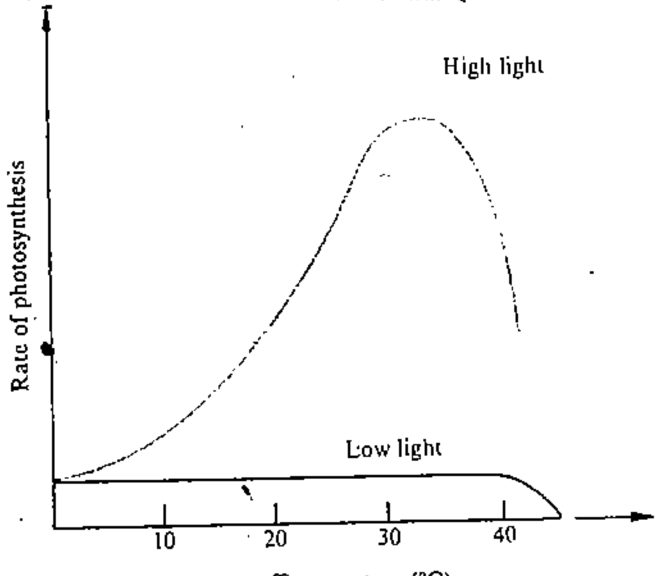

चित्र 18.3: प्रकाश संश्लेषण का दर पर प्रकाश तीव्रता और तापक्रम का प्रभाव।

ii) **एकदम आसपास के द्रव्यों का परासरण :** घुलनशील खनिज लवणों की सुलभता आवास-दर-आवास बिल्कुल अलग-अलग होती है। वास्तव में मिट्टी में मौजूद अधिक लवणता (salinity)

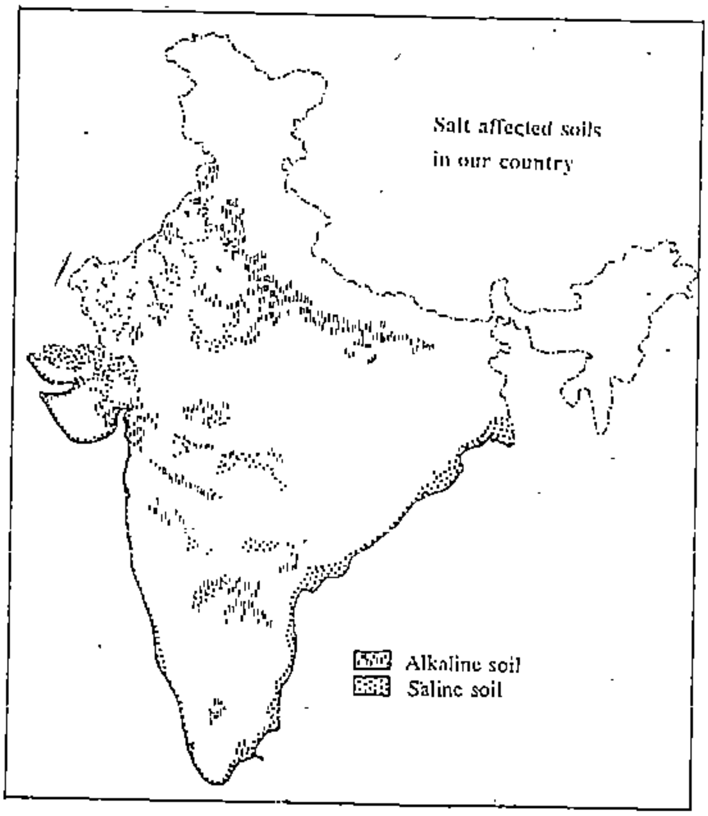

चित्र 18.4: लवणता से प्रभावित भारत में क्षेत्र।

या जल निक्षालितक (leachates) होने के कारण हमारे देश में जमीन के एक बड़े भाग (चित्र 18.4) को "ऊसर भूमि" की श्रेणी में रखा गया है जहां आम फसलें नहीं उगाई जा सकती हैं।

प्रकाश संश्लेषण में सक्रिय सौर विकिरण (PAR) : प्रकाश स्पेक्ट्रम का वह भाग जिसे प्रकाश संश्लेषी वर्णक सीधे ही अवशोषित कर लेते हैं PAR कहलाता है। अभिक्रिया केन्द्र के वर्णकों के प्रकाश अवशोषण के गुण धर्म पौधे में संरक्षित (conserved) रहे हैं परन्तु प्रकाश संग्राही वर्णक भिन्न भिन्न हो सकते हैं। इसलिए विभिन्न जातियों के लिए PAR का स्पेक्ट्रम संघटन (spectral composition) भिन्न हो सकता है।

iii) **प्रकाश संश्लेषण की दृष्टि से सक्रिय सौर विकिरण :** यह आपतित (incident) सौर विकिरण के सीधे-समानुपात (directly proportional) होता है। आप जानते ही होंगे कि पृथ्वी पर ऊष्णकटिबंध क्षेत्र, सबसे अधिक प्रकाश प्राप्त करने वाले हिस्से हैं। साथ ही इन क्षेत्रों में दिवा लम्बाई (day length) में विभिन्नता कम होती है। इसीलिए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि ऊष्णकटिबंध क्षेत्रों में प्रकाश पर निर्भर जीव अधिक होते हैं। घने उगे पौधों के बीच भिन्न जीवों को भिन्न-भिन्न स्तर का प्रकाश उपलब्ध होता है। किसी पौधे के लिए प्रकाश की तीव्रता बढ़ाते जाएं तो उसमें प्रकाश तीव्रता के अनुसार एक निश्चित बिन्दु तक प्रकाश संश्लेषण की दर में वृद्धि देखने में आती है। परंतु उससे अधिक वृद्धि पर या तो प्रकाश संश्लेषण की दर में कोई वृद्धि नहीं होती है, या फिर इसके कारण उसमें संदमन पैदा हो जाता है (चित्र 18.5 देखिए)।

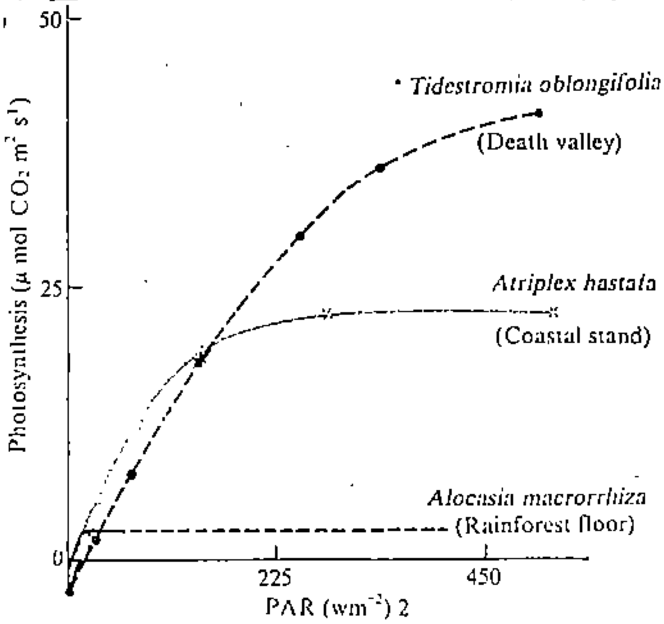

चित्र 18.5: **प्रकाश तीव्रता का प्रकाश संश्लेषण की दर पर प्रभाव।**

इस प्रकार पौधों की प्रत्येक जाति प्रकाश संश्लेषण के लिए एक विशेष प्रकाशसंतृप्तावस्था (photosaturation) अथवा/और प्रकाश संदमन (photoinhibition) दर्शाती है। दूसरे शब्दों में प्रत्येक जाति में प्रकाश तीव्रता को सहने की एक अधिकतम सीमा होती है। इस अधिकतम सीमा से अधिक या कम प्रकाश की तीव्रता मिलने पर उस पर तनाव पड़ता है।

18.3.2 रासायनिक तनाव

कोशिकाओं का जीवन के एक विशेष क्रम में होने वाली उपापचयी रासायनिक अभिक्रियाओं के क्रियान्वयन पर निर्भर होता है। इसके फलस्वरूप वृद्धिशील कोशिका को कुल (net) द्रव्यमान (mass) और ऊर्जा (energy) मिलती हैं। अविकसित कलिकाओं और बीजों जैसी प्रसुप्त कोशिकाओं को भी एक खास मात्रा में ऊर्जा खर्च करने की जरूरत होती है, ताकि वे जीवनक्षम अवस्था में रह सकें। हालांकि इन कोशिकाओं का कुल भार नहीं बढ़ता। विभिन्न उपचय और अपचय मार्ग कोशिका द्रव्य में मिलने वाले रासायनिक घटकों के अनुसार सक्रिय रहते हैं। इस पर बाह्य कोशिकीय वातावरण का इस प्रकार से प्रभाव पड़ता है :

i) **विलेयों की प्रकृति :** किसी विशिष्ट आवास में मिट्टी और पानी की अम्लीय या क्षारीय अभिक्रियाएं उसके भूरासायनिक इतिहास की ओर इशारा करती हैं। इससे हमें उसके गठन और तत्पश्चात् पृथ्वी के दूसरे घटकों में परस्पर क्रिया से लेकर मौजूदा रासायनिक गतिविधियों के बारे में पता चल सकता है। आप जानते होंगे कि ऑक्साइड रूप (भस्म) में खनिज निक्षेप रासायनिक अभिक्रियाओं में सामान्यतया क्षारीय होते हैं। क्लोराइड, सल्फेट और नाइट्रेट की अभिक्रिया अम्लीय या उदासीन होती है पर यह संयुग्मी आयनों की प्रकृति पर निर्भर करती है। आप किसी लवण के अम्लीय और क्षारीय मूलकों को देखकर उसकी अभिक्रियाओं की कल्पना क →

भू-रासायनिक और भू-भौतिक इतिहास : जीवमंडल, संयोगी कटिबंध (conjunctive zone) के करीब, पृथ्वी के ठोस, तरल और गैसीय घटकों के पास विकसित हुआ है। द्रव्यों के एक अत्यधिक गरम पिंड से शुरू होकर यह ग्रह (पृथ्वी) जैसे-जैसे ठंडा होता गया इसमें चट्टानों, जल निकायों और वायुमंडल का निर्माण हुआ। अपनी उत्पत्ति और मौजूदा अवस्था के बीच के इतने बड़े अंतराल में धरती को गलने, ठंडी पड़ने और ठोस बनने, रासायनिक परस्पर क्रियाओं, अपरदन, गैसों व पानी का वहन, निर्मुक्त और अवशोषण आदि जैसे अनेक रासायनिक और भौतिक बदलावों से गुजरना पड़ा। कालक्रम में घटे पृथ्वी के किसी विशेष भाग मे यह प्रक्रम उस भू-भाग का भू-रासायनिक और भू-भौतिक इतिहास है।

हैं। प्राकृतिक दौर में अभिक्रियाएं यौगिकों को उदासीन बनाने की तरफ चलती हैं। इसके फलस्वरूप आवास के गुणों में बदलाव आ जाता है और वह रासायनिक अभिक्रिया की दृष्टि से उदासीन माध्यम बन जाता है। फिर भी, बहुत ज्यादा या बहुत कम सांद्रण वाली मृदाएं पृथ्वी पर पाई जाती हैं, जिन पर कुछ खास पौधें जीवित रहते है।

ii) **खनिज संघटन** : उत्पत्ति के समय या जैव विकास के दौरान जीव तंत्र आयनों के सम्पर्क में आये होंगे। यह संपर्क विशेष रूप से प्रोटीनों को शामिल करते हुए, पदार्थ के उत्प्रेरिक रूपांतरण के समय रहा होगा। ये तत्व जीवन के लिए अनिवार्य रहे हैं। 12वीं इकाई में आप पढ़ चुके हैं कि कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के अलावा पौधों की वृद्धि के लिए मुख्य व ज़रूरी तत्व नाइट्रोजन, फॉस्फ़ोरस, कैल्सियम, पोटैशियम और मैग्नीशियम हैं। इनके साथ-साथ पौधों के स्वस्थ विकास के लिए मैंगनीज, लौह, जस्ता, कोवाल्ट और मॉलिब्डेनम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी बहुत थोड़ी मात्रा में ज़रूरत पड़ती है। आसपास के वातावरण में अगर ये तत्व आवश्यकता से कम मात्रा में मिलें तो पौधों में कमी के लक्षण दिखाई देते हैं। अगर ये तत्व आवश्यकता से अधिक मात्रा में हों, तो भी इनसे पौधों में विषाक्तता पैदा हो जाती है। फलस्वरूप कुंठित वृद्धि (stunted growth) ऊतक क्षय (necrosis) और कायिक (vegetative) तथा प्रजनन (reproductive) अंगों का असामान्य (abnormal) विकास देखने में आता है।

iii) **वायुमंडलीय असंतुलन** : कम से कम दो वायुमंडलीय घटक पौधों के लिए अनिवार्य हैं। ये घटक हैं—ऑक्सीजन और कार्बन-डाइऑक्साइड जो कि गैसीय अवस्था में पाए जाते हैं। जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, वायुमंडलीय नाइट्रोजन को कुछ प्रोकैरियोटी जीवाणु, शैवाल तथा जीवाणु—पादप सहजीवी यौगिकीकृत करके काम में ले सकते हैं। इन गैसों का जैवीय चक्रण (biological cycle) इनकी उपलब्धता को एक समुचित स्थिर सीमा तक बफर (buffer) स्थिति में रखता है परन्तु गहन औद्योगिक गतिविधियां विशेषकर ऐसे उद्योग, जो इन गैसों यानि कार्बन, नाइट्रोजन और सल्फर के ऑक्साइडों को भारी मात्रा में वायुमंडल में छोड़ते हैं। अधिकतर पादप जातियों की क्रियाशीलता पर इनका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं।

18.3.3 जैवीय तनाव

चूँकि प्रकृति में जीव अन्य जीवों से बिल्कुल अलग नहीं रहते, इसलिए समूचे समुदाय में मौजूद दूसरे जीवों की भोजन और अन्य आवश्यकताओं के कारण भी पादप जाति पर तनाव पड़ सकता है। जैवीय तनाव निम्न स्थितियों में होता है।

i) **जनसंख्या घनत्व** : आप जानते ही होंगे कि जनसंख्या में अनियंत्रित वृद्धि के क्या परिणाम हो सकते हैं। ऐसे में साधारण उपभोज्य वस्तुओं और स्थान के लिए आपस में होड़ होगी। परन्तु यह केवल मानव तक ही सीमित नहीं है। घने जंगलों या अन्यत्र पौधों की घनी आबादी में पोषक तत्वों, पानी और प्रकाश संश्लेषण में सक्रिय सौर विकिरण के लिए भी भारी होड़ पैदा हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि पादप जाति को हानि या उसके आसपास में उग रही दूसरी पादप जातियों में कमी होने लगती है। यही कारण है कि फसलों में से खर-पतवार होड़ रोकने के लिए हटा दी जाती है।

ii) **परजीवी** : कई कीड़े और सूक्ष्मजीव पौधों के ऊतकों या पौधों के रस पर आश्रित रहते हैं, इसलिए ऐसे परजीवियों से पौधों को अपना बचाव करना आवश्यक होता है। परजीवियों से बचाव की युक्तियाँ है, परजीवियों के एंज़ाइमों को निष्क्रिय करने वाले संदमकों (inhibitors) तथा जहरीले पदार्थों को उत्पन्न करना है या फिर ऐसे निरोधी (preventive) कायिक और जैवरासायनिक (morphological and biochemical) परिवर्तनों का विकास करना है जो परजीवियों को पौधे के नजदीक जमा होने से रोकते हैं।

iii) **सहजीवी परस्परक्रिया** : सहजीवी सूक्ष्मजीवों के उपस्थित होने से पौधों की विभेदी वृद्धि को बढ़ावा मिलता है। पौधे ऐसे लाभकारी सहजीवियों को पहचान लेते हैं और उनकी मौजूदगी का उपयोग अपने हित में करते हैं। पर यह क्रिया पारस्परिक है। यानि इसमें सहजीवी और पौधा दोनों एक-दूसरे से फायदा उठाते हैं। उदाहरण के लिए *राइज़ोबियम*-फली के बीच सहजीविता को लें। इस सहजीवी संबंध में *राइज़ोबियम* पौधे द्वारा बनाए गए कार्बन का उपयोग करता है, जबकि फली का पौधा जीवाणु द्वारा यौगिकीकृत नाइट्रोजन को प्राप्त करता है।

बोध प्रश्न 1

अगर पौधे के वातावरण में नीचे दिए गए परिवर्तन किए जाएं, तो पौधे पर किस प्रकार का तनाव होगा?

i) शिमला में उगने वाली किसी पादप जाति को गर्मी के दिनों में जैसलमेर ले जाया जाए।

....

ii) किसी सूर्य-अनुरागी (sun-loving) पौधे को दूसरे पेड़-पौधे ढक दें।

....

iii) कई दिनों तक भारी बारिश होने के कारण फसल पानी से भर जाए।

....

iv) भारी यातायात वाली सड़कों की पटरियों के किनारे पर उगने वाले पेड़।

....

v) गंगा नदी के किनारे उगने वाले (अनुकूलित) पौधे को कलकत्ता के नजदीक तटीय इलाकों में उगाया जाए।

....

18.4 तनाव की स्थिति में अनुकूल बनने के तरीके

तनाव की प्रकृति जान लेने के बाद आइए, जरा यह देखें कि पेड़-पौधे तनाव में स्वयं को ढालने के लिए क्या-क्या तरीके या युक्तियां अपनाते हैं। आप जानते ही हैं कि सारे जैवीय प्रकार्य कई प्रकार के अणुओं द्वारा या उनकी मदद से पूरे होते हैं जो कि विशेष ऊतकों और अंगों में बनते हैं। इस कारण पर्यावरण में होने वाले बदलावों के अनुकूल बनने के लिए कोई जीव अपने आपको इन्हीं अणुओं अथवा ऊतकों व अंगों के जरिए ढाल सकता है। इसके लिए वह उन अणुओं या ऊतकों व अंगों में उचित परिवर्तन ला सकता है, जिनका काम पर्यावरणीय परिवर्तनों से प्रभावित होने वाले प्रकार्यों को पूरा करना होता है। अपने चरम प्रभाव में विभिन्न प्रकार के तनाव एक जैसी ही अनुक्रियाओं को जन्म देते हैं। यह अनुक्रियाएं कुछ प्रोटीनों के संश्लेषण का दमन (repression) या अवनमन (derepression) के रूप में हो सकती है। कई प्रोटीनें दूसरी प्रोटीनों की अभिव्यक्ति (expression) को नियमित करती हैं। उन्हें नियामक प्रोटीन (regulatory protein) कहा जाता है (कोशिका विज्ञान की इकाई 14 के पृष्ठ 94 को देखें)। इस तरह तनाव की स्थिति में कार्यशील अणुओं और/या किसी खास काम में लगी कोशिकाओं व ऊतकों में उचित परिवर्तन द्वारा पौधों में अनुकूलन हो सकता है। तनाव की प्रकृति कोई भी हो, जीवों में अनुक्रिया उसमें मौजूद प्रक्रम और मार्गों में परिवर्तन के रूप में उत्पन्न होती है। तनाव की अनुक्रिया के रूप में पौधे की आकारिकी और व्यवहार में होने वाले परिवर्तन साफ दिखाई देते हैं। आइए, पहले हम कोशिका के अणुओं में देखे गए परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त करें।

18.4.1 कार्यशील अणुओं का बदलना

तनाव की स्थिति के अनुकूल बनने के लिए पौधों के जैव अणुओं में गुणात्मक और परिमाणात्मक दोनों तरह के परिवर्तन हो सकते हैं।

1. गुणात्मक परिवर्तन

अणुओं के संरूपण (Conformation) में बदलाव

आपको याद होगा कि किसी भी प्रोटीन में ऐमीनों अम्लों की रेखीय शृंखला किस तरह मुड़कर एक विशिष्ट संरचना बनाती है। अम्लीय अवशेष जैसे कि ग्लूटेमिक और ऐस्पार्टिक अम्ल क्षारीय अवशेषों जैसे कि आर्जिनिन हिस्टिडीन से क्रिया कर आयन बंध (ionic bond) बनाते हैं। सिस्टीन के थायोल समूह प्रोटीन में अंतर शृंखला (inter chain) और अंतः शृंखला (intrachain) डाइसल्फाइड सेतु (bridges) बनाते हैं। ये सेतु प्रोटीनों को उनके वांछित संरूपण में बनाए रखने के लिए बहुत

जरूरी होते हैं। इन परस्परक्रियाओं की सीमा, प्रोटीन में मौजूद वातावरण की प्रकृति से प्रभावित होती है। अगर अधिकांश सिस्टीन अपचित (reduced) अवस्था (SH) में हों, तो प्रोटीन में कम से कम वलन (folding) होंगे। ऐसे खुले या अवलित (unfolded) प्रोटीन अणु अपने वलित संरूपणों की तरह घुलनशील और सक्रिय नहीं होते। तनाव के प्रति अनुक्रिया के रूप में प्रोटीनों की बनावट में जो बदलाव आते हैं उनकी वजह से नीचे दी गई बातें सामने आती हैं।

i) **प्रोटीन की विकृतीकरण के प्रति प्रतिरोधकता** (Resistance against denaturation of protein): जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है प्रोटीनों के विकृतीकरण (denaturation) के प्रति प्रतिरोधकता अम्लीय और क्षारीय ऐमीनों अम्लों की पार्श्व शृंखलाओं (side chains) और प्रोटीन को एक सुरक्षित संरचना देने वाले थायोल (SH) समूह में परिवर्तनों द्वारा पैदा हो सकती है।

ii) **अणुओं के गतिज गुण में बदलाव** (Changes in the kinetic property of molecules) : प्रोटीनों में संरूपणीय परिवर्तन उनकी बंधुता (affinity) और Km को प्रभावित करता है और उसे उप-इष्टतम (sub-optimum) मान से नीचे ले आता है। उदाहरण के लिए तनाव के दौरान पौधों द्वारा विशिष्ट पोषक तत्वों को ग्रहण करने में लगे ग्राही अणुओं (receptor molecules) में परिवर्तन आ सकता है।

2. **परिमाणात्मक बदलाव** (Quantitative changes)

Km-एन्ज़ाइम अभिक्रिया में उच्चतम गति के आधे मान पर क्रियाधार का सांद्रण।

तनाव के कारण तंत्र की क्रियाशीलता में कमी आ जाती है। इस कमी को पूरा करने के लिए सक्रिय जैव-अणुओं में परिमाणात्मक परिवर्तन होते हैं। यह परिवर्तन नीचे दिए गए तरीकों से होते है।

i) छाया में रहने वाले पौधों की तुलना में तेज प्रकाश पाने वाले पौधों में राइब्युलोस बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सिलेस एंज़ाइम की मात्रा में वृद्धि हो जाती है। उच्च प्रकाश तीव्रता के कारण पैदा होने वाली अतिरिक्त अपचयन शक्ति (NADPH) का पूरा फ़ायदा उठाने के लिए एंज़ाइम के स्तर में वृद्धि होनी आवश्यक है (इसके लिए इकाई 13 को पढ़ें)।

ii) किसी संक्रमण के दौरान आक्रमणकारी को खत्म करने के लिए जल अपघटन करने वाले एंज़ाइम (hydrolytic enzyme) के संश्लेषण में वृद्धि होने लगती है। साथ ही परपोषी पौधों में ऐसे संदमकों का संश्लेषण होता है, जो आक्रमणकारी द्वारा पैदा किए जाने वाले नुकसानदायक एंज़ाइमों का मुकाबला करते हैं।

iii) लवणसह (halotolerant) यानि खारेपन में रहने वाली जाति के पौधों में परासरणीय संतुलन (osmotic balance) को कायम रखने के लिए कुछ खास ऐमीनों अम्लों के संश्लेषण में वृद्धि आ जाती है।

iv) जहरीली धातु से होने वाली हानि से बचने के लिए और जहरीले आयनों को दूर रखने के लिए कीलेटी (chelating) अणुओं के संश्लेषण में तेजी आ जाती है।

18.4.2 पौधों की आकारिकी और व्यवहार में परिवर्तन

1. **आकारकीय में परिवर्तन** (Morphological changes)

जलीय पौधों में विभिन्न प्रकार की पत्तियां उगती हैं। ये जरूरत पड़ने पर वायूतक (arenchyma) वायु विदर (air gaps) वाले ऊतक बनाते हैं। कई जलोद्भिद् (hydrophytes) पौधों में एक मोटी क्यूटिकल पाई जाती है। यह उपत्वचा पौधों को कीड़ों द्वारा नुकसान होने से बचाती है, जिससे ऐसे मौकों पर हमला करने वाले रोगाणुओं के संक्रमण से इन पौधों का बचाव हो जाता है।

2. **व्यवहार और परिवर्धन के क्रम में बदलाव** : इस तरह की अनुक्रियाओं को निम्न वर्गों में रखा जा सकता है :

i) **तेजी से होने वाली क्षणिक अनुक्रियाएं** (Quick transient responses) : इन अनुक्रियाओं को वे कारक उकसाते हैं जो अपेक्षतया लघुकाल में ही ज्यादा अन्तर दर्शाते हैं। यानि वे कारक जिनमें बहुत अधिक दैनिक परिवर्तन होते हैं। इस अनुक्रिया का सबसे अच्छा उदाहरण है पौधों द्वारा प्रकाश, नमी (आर्द्रता) और तापमान की स्थितियों में रंध्रों का खुलना

और बंद होना। पौधे उपलब्ध प्रकाश, वायुमंडल में मौजूद नमी व गर्मी की अधिकता या कमी के अनुसार ही अपने रंध्रों को खोलते और बंद करते हैं। ऐसी अनुक्रिया अस्थायी और बडी तेजी से होती है।

ii) **दीर्घकालिक अनुक्रियाएं** (Long-term responses) : पौधे आसपास मौजूद पर्यावरणीय स्थितियों के अनुसार अपने परिवर्धन के क्रम में बदलाव लाते हैं। पत्तियों का परिपक्व होना और उनका गिरना, फूल आना (पुष्पन) तथा बीजों में प्रसुप्ति जैसी पौधों की कुछ विशेषताएं इसी तरह से ढली होती हैं। परिवर्धन क्रम पर तनाव की स्थितियों का दो प्रकार से असर पड़ता है। या तो ये परिवर्धन क्रम को समय से पहले शुरू कर देती है या फिर उसे स्थगित (postpone) कर देती हैं। इसका एक उदाहरण लें। पोषक तत्वों की कमी, विषाक्तता, लवणता, द्रुतशीतन (chilling) और जलाक्रांति (waterlogging पानी का जमाव) आदि से पड़ने वाले तनाव के कारण पादप ऊतकों में एबसिसिक अम्ल के स्तर में वृद्धि हो जाती है। इसकी वृद्धि से पौधे की वृद्धि और उपापचय में कमी आ जाती है। इस कमी से पौधे में पुष्पन और बीज बनने का प्रक्रम स्थगित या समय से पहले शुरू हो सकता है।

18.4.3 वैकल्पिक उपापचयी विधियों का प्रयोग

ऐसी अनुक्रियाओं के सबसे सरल उदाहरण जलाक्रांत स्थिति में जीवित रहने वाले पौधे हैं। पानी में डूबे ये पौधे ऊर्जा पैदा करने के लिए अवायुवीय श्वसन विधि अपनाते हैं।

अब तक हुई चर्चा से हमें पता चल जाता है कि विभिन्न तनाव स्थितियों से बचने, उन्हें दूर करने या सहन करने के लिए पौधों के अपने तरीके होते हैं। अगले भाग में हम आपको तनाव की स्थितियों में पौधों में होने वाली कुछ खास अनुक्रियाओं के बारे में बताएंगे। इससे पहले हम नीचे दिए गए बोध प्रश्नों को हल करेंगे।

बोध प्रश्न 2

नीचे दिए गए कथनों में रिक्त स्थानों को सही शब्दों से भरिए।

i) ....के संरूपण में परिवर्तन, पौधों को तनाव के दौरान .... के प्रतिरोधी बनाता है।

ii) अधिक तीव्रता वाले प्रकाश में .... प्रति एंजाइम की मात्रा कई गुना बढ़ जाती है।

iii) तनाव से बचने के लिए पौधे .... और बीज .... जैसे विकासीय क्रमों को बदल देते हैं।

iv) लवणता और जलाक्रांति की स्थिति में .... बढ़ जाता है।

18.5 कुछ विशिष्ट तनाव स्थितियों में पौधों की अनुक्रियाएं

अब तक आपको यह पता चल गया होगा कि पौधे कुछ निश्चित पर्यावरणीय स्थितियों में इष्टतम स्तर पर क्रियाशील रहने के लिए संगठित होते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि प्रत्येक पौधा केवल एक सीमित परासर तक होने वाले कुछ विशेष पर्यावरणीय परिवर्तनों को ही झेल सकता है यानि कार्यशील रह सकता है। परंतु यह आवश्यक नहीं कि एक जाति के लिए जो स्थिति इष्टतम होती है, वह दूसरी जाति के लिए भी इष्टतम हो। इन स्थितियों में इष्टतम से विचलन होने पर तनाव पैदा होता है और जीवों में अनुकूलन अनुक्रियाओं को शुरू करता है। अतः अनुक्रिया की प्रकृति भी विशेष तनाव स्थिति के अनुसार ही होगी जो इष्टतम में विचलन के कारण पैदा होती है। कुछ खास तनाव स्थितियों में पौधों में होने वाली अनुक्रियाओं को समझने के लिए काफी शोध कार्य किया गया है। इससे जो संकेत मिले हैं उनसे ये आशा की जा सकती है कि किस प्रकार तनाव से होने वाले नुकसानों से पौधों को बचाया जा सकता हैं। आइए, ऐसी पादप अनुक्रियाओं के कुछ विशिष्ट उदाहरणों का विवेचन करें, जिनका अब तक अध्ययन हो चुका है।

जल तनाव

किसी पौधे में मृदा में अत्यधिक लवणता, निम्न या उच्च तापमान या सूखे की स्थिति के परिणामस्वरूप जल तनाव हो सकता है। ऐसा देखा गया है कि जल तनाव की स्थिति में कुछ कार्बनिक यौगिक जैसे सुक्रोस व प्रोलीन (proline) कोशिकाओं में संचित हो जाते हैं और परासरण विभव को कम कर देते हैं। इनका कोशिका के उपापचयी क्रियाकलापों पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है। परंतु कुछ एंज़ाइमों की सक्रियता में कमी आ जाती है जैसे कि नाइट्रेट रिडक्टेस व फेनिल ऐलानिन अमोनिया लायेस (phenyl-alanine ammonia lyase) और कुछ निम्नीकरण (degradative) करने वाले एंज़ाइमों की सक्रियता बढ़ जाती है, जैसे कि α-एमिलेज (α-amylase) और राइबोन्यूक्लिएस (ribonuclease)। ऐसा प्रतिपादित किया गया है कि एंज़ाइम स्टार्च व अन्य अणुओं का एकल इकाइयों में विघटन करते हैं जिससे कोशिका का परासरण विभव अधिक ऋणात्मक हो जाता है। पत्तियों में निम्न जल विभव के कारण प्रकाश संश्लेषण का भी संदमन होने लगता है। पादप जल-संबंध पर इकाई 11 से शायद आपको याद होगा कि पर्ण जल विभव (leaf water potential) स्फीति दाब (turgor pressure), परासरण विभव (osmotic potential) और मैट्रिक विभव (matric potential) का योग होता है। सरल शब्दों में यह ऊतक की जल से संतृप्तता को दर्शाता है। पर्ण जल विभवों में कमी से, प्रकाश संश्लेषण में संदमन दो कारणों से होता है। वे हैं :

क) रंध्रों का बंद होना। इससे गैस विनिमय सीमित हो जाता है और

ख) प्रकाश संश्लेषण की दर में कमी।

निर्जलीकरण के दौरान क्वांटम दक्षता (quantum efficiency — अवशोषित प्रतिग्राम अणु प्रकाश क्वांटम (mole of light quanta) से ग्राम अणु CO_2 का यौगिकीकरण) और दोनों ही उच्च व निम्न प्रकाश तीव्रता पाने वाली पत्तियों में, प्रकाश संश्लेषण की दर का संदमन हो जाता है। इस परिघटना को प्रकाश संश्लेषण का प्रकाशसंदमन कहा जाता है। प्रकाश तंत्र कॉम्पलेक्स के अभिक्रिया केंद्र में अत्यधिक उत्तेजन ऊर्जा (excitation energy) के संचय के कारण संभवतया प्रकाशसंदमन होता है। (प्रकाश संश्लेषण पर इकाई 13 के चित्र 13 को देखें)। इस तरह प्रकाश, जल तनाव को बढ़ाता है। जब कि पौधे की जल तनाव की स्थिति में अनुक्रिया, पहले से ही प्रकाश संश्लेषण को घटाने की होती है।

इकाई 11 में हमने बताया था कि द्वार कोशिकाओं में ABA का स्तर बढ़ जाने के फलस्वरूप रंध्र बंद हो जाते हैं। पत्तियों में ABA के स्तर में आमतौर पर 40 गुना वृद्धि देखी गई है। कुछ मामलों में यह देखने में आया है कि सूखे के प्रति संवेदनशील कृषिजोप जाति (cultivar) में ABA के अनुप्रयोग से वह समलक्षणी दृष्टि (phenotypically) से जलाभावसह (सूखा सहनशील) किस्म में बदल जाती है।

2. क्लोरोप्लास्टों में प्रकाश तनाव

जैसाकि पिछले भाग में बताया गया है, बहुत ज्यादा तीव्रता वाला प्रकाश, अत्यधिक उत्तेजन ऊर्जा के संचय के कारण प्रकाश संश्लेषण का संदमन कर सकता है। परिणामस्वरूप इस ऊर्जा का एक भाग इलेक्ट्रॉन वाहकों के कुंड (pool of electron carriers) में घिरी अपचयित प्लैस्टोक्विनोन में जमा हो जाता है। कम प्रकाश का भी ऐसा ही प्रभाव होता है यदि अंतस्थ इलेक्ट्रॉन ग्राही (terminal electron acceptor) यानि CO_2 सीमाकारी हो। ऐसा निर्जलीकरण के दौरान बाद में रंध्रो के बंद होने पर देखने में आता है।

3. परासरणी तनाव के प्रति अनुक्रिया

i) परासरणी समंजन (Osmotic adjustment) यानि परासरण नियमन

संयोज्य विलेय (compatible solute) : ये खास किस्म के विलेय हैं, जो जल के तनाव के दौरान आस-पास के वातावरण से परासरणी संयोजन रखने के लिए पौधों में ...कता में जमा हो जाते हैं।

यदि घुलनशील पदार्थों (खनिजों और छोटे-छोटे कार्बनिक अणुओं के रूप में मौजूद) का बाहरी माध्यम में सांद्रण बनने लगता है, तो इससे एक प्रवणता पैदा होती है जिससे पादम कोशिकाओं का निर्जलीकरण होने लगता है। विकल्प में कोशिकाओं पर दबाव पैदा होता है जिससे कि विलेय अंदर घुसे और कोशिकाएं अपने निकटतम वातावरण से परासरणी संतुलन (osmotic balance) बनाए रखें। कोई भी जीव ऐसे विकल्पों को बेतरतीब ढंग से नहीं चुनता अतः कई जीव अपने निकटतम वातावरण के साथ परासरणी साम्य प्राप्त करने के लिए कोशिकाओं में कुछ खास संयोज्य यानि उपयुक्त

विलेयों (compatible solute) को जमा कर लेते हैं (तालिका 18.1)। आमतौर पर प्रोलीन और ग्लाइसिनबीटाइन ऐसे दो महत्वपूर्ण कार्बनिक अणु हैं, जो जीवाणु और पादप कोशिकाओं में परासरणी तनाव को कम करने में मदद करते हैं। जल तनाव या उच्च लवण सांद्रण की वजह से कार्बोहाइड्रेटों, ऐमीनों अम्लों, पॉलिहाइड्रिक ऐल्कोहॉल और दूसरे अणुओं (चित्र 18.6) का कोशिकाओं में जमाव होना परासरणी समंजन या परासरण नियमन कहलाता है।

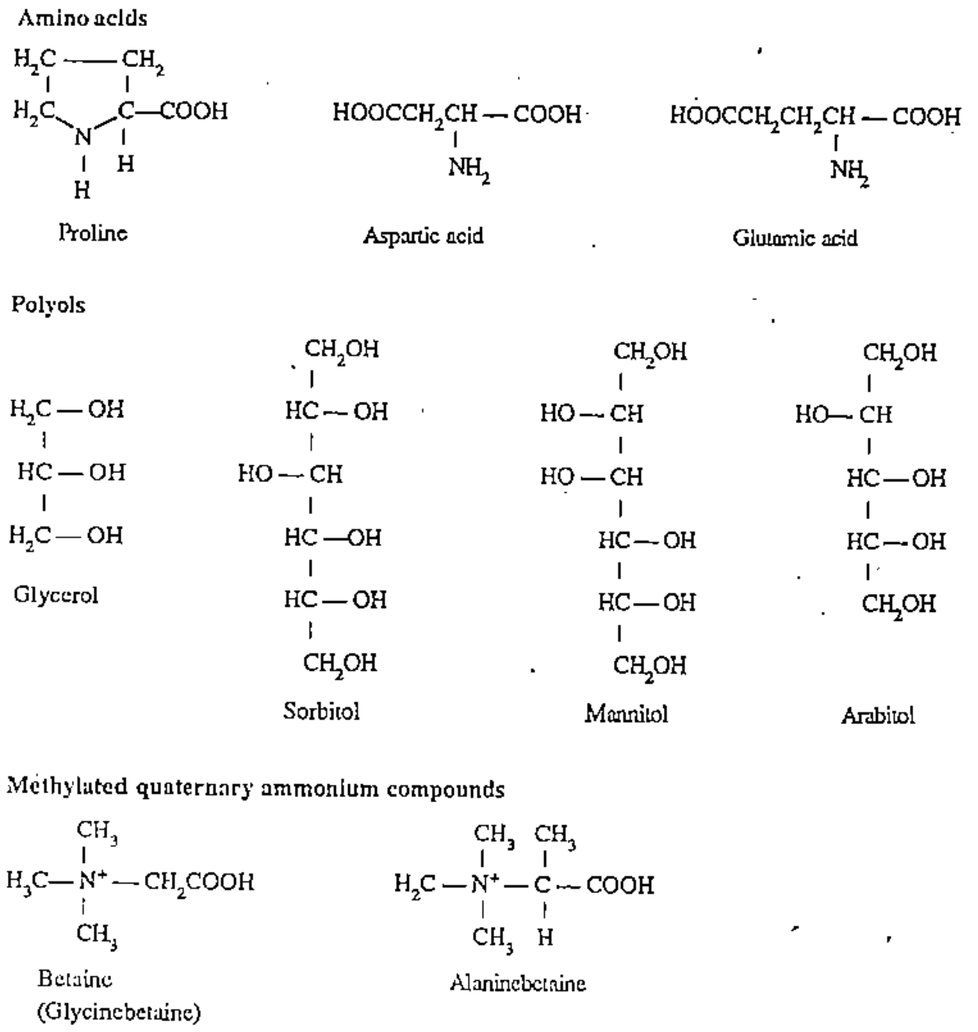

चित्र 18.6: तनावग्रस्त पौधों में पाए जाने वाले संयोज्य विलेयों की आण्विक संरचना।

तनावग्रस्त कोशिकाओं में जमा बीटाइन कोशिकाद्रव्य में परासरणी संतुलन को बनाए रखने के लिए ऑस्मोटिकम (osmoticum) के रूप में काम कर सकती हैं।

ii) पॉलिऐमीनों का संश्लेषण

जैसाकि इस वर्ग के यौगिकों के नाम से पता चल जाता है, पॉलिऐमीनों में कई ऐमीनों अम्लों के समूह होते हैं, जो अकसर ऐल्किल शृंखला (alkyl chain) में हाइड्रोजन की जगह लेते हैं। उदाहरण के लिए प्यूट्रेसीन 1, 4 डाइऐमीनों ब्यूटेन (चित्र 18.7)। यह ज्ञात है कि पॉलिऐमीन RNA तथा DNA की कई संरूपीय अवस्थाओं को स्थिर रखने के लिए महत्वपूर्ण है। ये अकसर कोशिका विभाजन चक्र की महत्वपूर्ण अवस्थाओं से जुड़ी होती हैं। पॉलिऐमीन रोगाणुओं, पौधों और जंतुओं में पाई जाती हैं। पौधों में इनका काम तनाव सहिष्णुता (stress tolerance) को उत्पन्न करने में मदद करना है। अनाज के पौधों की पत्तियों के टुकड़े अगर परासरणी तनाव या निम्न pH के वातावरण में रखें जाएं तो प्यूट्रेसीन के स्तर में 60 गुना वृद्धि देखने में आती है।

$NH_2-(CH_2)_3-NH-(CH_2)_4-NH-(CH_2)_3-NH_2$

Spermine

$NH_2-(CH_2)_3-NH-(CH_2)_4-NH_2$

Spermidine

$NH_2-(CH_2)_4-NH_2$

Putrescine

चित्र 18.7: साधारण पॉलिऐमीनों की आण्विक संरचना।

तालिका 18.16 : तनाव में परासरण नियमन के लिए कुछ जीवों की कोशिकाओं में बढ़ने वाले संयोज्य विलेय

जीव	संयोज्य विलेय
आवृतबीजी पौधे	
ग्लाइकोफ़ाइट्स : क्लोरिस गयाना *(Chloris gayana)*	बीटाइन और प्रोलीन
होर्डियम वल्गेर *(Hordeum vulgare)* (जौ)	
हैलोफाइट : एस्टर ट्रिपोलियम *(Aster tripolium)*,	प्रोलीन
सैलिकोर्निया फ्रूटिकोसा *(Salicornia fruiticosa)*	
ट्राइग्लोचिन मैरिटिमा *(Triglochin maritima)*	
हैल्यफाइट :	
एट्रिप्लेक्स स्पोंजियोसा *(Atriplex spongiosa)*	
स्पार्टिना टाउसेंडी *(Spartina townsendii)*,	
स्वेडा मोनाइका *(Suaeda monoica)*	बीटाइन
सूक्ष्म शैवाल	
क्लोरेला पाइरीनॉइडोसा *(Chlorella pyrenoidosa)* (अलवणजलज)	सुक्रोस
ड्यूनलिएला जातियां *(Dunaliella sp.)* (समुद्री और लवणरागी)	ऐमीनो अम्ल, ग्लिसरॉल
स्कन्डेसमस ऑब्लिक्स *(Scendesmus obliquus)* (अलवणजल)	कार्बोहाइड्रेट (सुक्रोस, रैफिनोस, ग्लूकोस, फ्रुक्टोस)
कवक	
कीटोमियम ग्लोबोसम *(Chaetomium globosum)* स्थलीय जाति।	पॉलिहाइड्रिक ऐल्कोहॉल (मैनिटॉल अरैबिटोल, ग्लिसरॉल)
सैकेरोमाइसीज़ रोक्साइ *(Saccharomyces rouxii)* (उच्चसांद्रतारागी जाति)	अरैबिटोल
जीवाणु	
विभिन्न लवणरागी और गैर-लवणरागी जीवाणु जैसे क्लेबसिएला *(Klebsiella)*, साल्मोनेला *(Salmonella)*, स्ट्रेप्टोकोकस *(Streptococcus)* आदि	ऐमीनो अम्ल (ग्लूटामेट प्रोलीन आदि)

स्रोत : (Flowers et. al. 1977 and Yancey et. al.)

4. भारी धातु जन्य तनाव के प्रति अनुक्रिया

औद्योगिक खनन और वाहित मल उपचार से निकलने वाली कई भारी धातुएं पर्यावरण को दूषित करती हैं। कैडमियम इस वर्ग का एक आम संदूषक है। इससे आदमी के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

यह अकसर पौधों की उपापचयी दर को मंद कर देता है। मगर ऐसे पौधे भी हैं जो इस धातु आयन के विषाक्त सांद्रण में भी सामान्य रूप से फूलते-फलते हैं। कई पादप जातियों में ऐसे निम्न आण्विक भार वाले प्रोटीन पाए जाते है, जो धातु आयनों के साथ बंधने में समर्थ होते हैं। पर्यावरण में भारी धातु आयनों की मौजूदगी के प्रति अनुक्रिया से पौधों में इन प्रोटीनों का संश्लेषण प्रेरित होता है। ये प्रोटीनें पौधों को इन धातुओं को अलग-संचय करने और उन्हें अपने संवेदनशील कोशिकीय स्थलों से दूर रखने में मदद करती हैं।

5. ऊष्मा प्रधात अनुक्रिया (Heat-Shock response)

यह देखा गया है कि यदि वृद्धि करते हुए पादपकों (plantlets) ऊतकों को 42° से. या इससे अधिक तापमान पर स्थानांतरित किया जाता है तो सामान्य प्रोटीनों का संश्लेषण बड़ी तेजी से घटने लगता है और बदले में नये प्रकार की प्रोटीनें प्रकट होती हैं। चूंकि ये प्रोटीनें तापमान में वृद्धि होने पर बनती हैं, इसलिए इन्हें अकसर ऊष्मा प्रधात प्रोटीन (heat-shock protein-HSPs) कहा जाता है। ये प्रोटीनें स्वनियामक (self-regulatory) होती हैं यानि बढ़े हुए तापमान पर इनका संश्लेषण छह से लेकर आठ घंटे के बाद अपने आप बंद हो जाता है, जिसके बाद सामान्य प्रोटीनों का संश्लेषण फिर से शुरू हो जाता है। ऊष्मा प्रधात प्रोटीनें अनेक अणुभार (15 से 102 Kd तक) वाली होती हैं। कई ऊष्मा प्रधात प्रोटीनें भारी धातुओं और आर्सेनाइटों के कारण भी बनती हैं। वास्तव में, अब इन प्रोटीनों को लगभग सभी मुख्य समूहों के प्रतिनिधि (representative) प्राणियों में पाया गया है। सबसे बड़ी रोचक बात यह है कि अगर हम पौधों को पहले से ही अधिक तापमान पर (जैसे — 45° से. के तापमान में दो घंटे के लिए) रखें तो इसके बाद समान तापमान स्थितियों में ऊष्मा प्रधात अनुक्रिया नहीं होती। ऐसा माना जाता है कि ऊष्मा प्रधात प्रोटीनें आवश्यक एंज़ाइमों और न्यूक्लीक अम्लों की विकृतीकरण से रक्षा करती है।

प्रयोगशालाओं के अलावा खेत में उग रहे पौधों में भी ऊष्मा प्रधात प्रोटीनों का संश्लेषण होता देखा गया है। सूखे खेतों में जब गर्मी के दौरान पत्ती का तापमान आसपास के तापमान तक या उससे ज्यादा (40° से. अधिक) पहुंच जाता है तो ऊष्मा प्रधात प्रोटीनों का संश्लेषण ठीक प्रयोगशालायी परिस्थितियों की तरह होने लगता है। ऊष्मा प्रधात अनुक्रिया में, अनुलेखन (transcription) और अनुवादन (translation) के नियंत्रण में परिवर्तन शामिल हैं। सामान्य प्रोटीनों की पहले से मौजूद प्रतिलिपियाँ (transcripts) कुछ समय तक अविकल (intact) रहती हैं जबकि प्रोटीन संश्लेषण रुक जाता है। अब सवाल यह है कि ऊष्मा प्रधात प्रोटीनें, पौधों को ऊष्मा प्रधात से बचाने में किस तरह से मदद करती हैं? ये प्रोटीनें संभवतया जरूरी कोशिकीय प्रोटीनों को ऐसे संरूपण पाने में मदद करती हैं, जो अधिक तापमान में भी सुरक्षित, क्रियाशील और कोशिका द्रव्य में विलेय अवस्था (soluble state) में रहे।

6. शीत के प्रति अनुक्रिया

आइए देखें कि पौधों को जब शून्य डिग्री से कम तापमान वाली ठंडी जलवायु का सामना करना पड़ता है, तब क्या होता है?

अतिशीतलन : यह किसी तरल पदार्थ का हिमांक से नीचे के तापमान पर ठोस पदार्थ के अलग हुए बिना शीतलन होना है। अतिशीतलन उन द्रव्यों में संभव है, जिनमें अणुओं या परमाणुओं के बीच आकर्षण इतना जबर्दस्त होता है कि शीतलन उन्हें एक नियमित स्वरूप में नहीं लगा पाता जो उनके क्रिस्टलीकरण के लिए ज़रूरी है।

अगर तापमान 4° से. प्रति मिनट से अधिक की दर से तेजी से कम हो जाए, तो ऐसे में बाह्य कोशिकीय (extracellular) और अंतःकोशिकीय द्रव्य (intracellular) जम सकता हैं पर अगर शीतलन (cooling) की यह प्रक्रिया धीमे-धीमे यानि 1° से. प्रति मिनट से कम की दर पर हो, तो एक ऐसी अवस्था आएगी, जिसमें बाह्य कोशिकीय द्रव्य जम जाएगा। बदले में ये जमा बाह्य कोशिकीय द्रव्य कोशिका के भीतरी भागों के लिए ऊष्मारोधी का कार्य करेगा। आप इसका आसानी से अंदाजा लगा सकते हैं कि बाह्य कोशिकीय द्रव्यों का जमना कोशिका के लिए उतना घातक नहीं होगा, जितना कि अंतःकोशिकीय द्रव्यों का जमना। एक निश्चित सीमा से अधिक शीतलन कोशिकाओं के लिए विघातक (fatal) हो सकता है। बाह्य कोशिकीय जल के जमने पर जलयोजन का अंतःकोशिकीय जल (intercellular water of hydration) बाहर निकल जाता है। अब चूंकि कोशिका के बाहरी वातावरण का बड़ा भाग बर्फ से गिरा होता है, इसलिए वह कोशिका के चारों ओर दबाव डालता है। इस तरह हिमीकरण या कोशिका द्रव्यों (बाहरी या भीतरी) का जमना निम्न प्रकार के तनाव पैदा कर सकता है :

i) इष्टतम स्तर से **तापमान का गिरना** और इस प्रकार अधिकतर सामान्य कोशिकीय प्रोटीनों की क्रियाशीलता को कम कर देना,

ii) अंतःकोशिकीय जल के अंतरःकोशिकीय अवकाशों में चले जाने के कारण होने वाला **निर्जलीकरण,**

iii) जल के ऐसे गमन से होने वाला **परासरणी** असंतुलन, और

iv) बर्फ जमने और कोशिका संकुचन की वजह से पड़ने वाला **भौतिक तनाव**।

शीत अनुक्रिया से दो शब्द जुड़े हैं। ये हैं—शीत सहनशीलता (cold hardiness) और शीत पर्यनुकूलन (cold acclimation)। आइए अब हम इनके बारे में भी कुछ जान लें।

शीत सहनशीलता (cold hardiness) : बर्फ जमने पर भी पादप ऊतकों की जीवित बने रहने की क्षमता को शीत सहनशीलता कहते हैं।

शीत पर्यनुकूलन (cold acclimation) : शीत परिस्थितियों में पौधों को हिमीकरण-संवेदी (freezing-sensitive) से हिमीकरण-प्रतिरोधी (freezing-resistant) बनाने वाले बदलावों की प्रक्रियाओं को शीत-पर्यनुकूलन कहा जाता है।

ध्यान देने की बात यह है कि शून्य डिग्री तापमान पर कोशिकीय द्रव्य यदा-कदा ही जमता है। बर्फ के जमे बिना शून्य डिग्री से नीचे के तापमानों पर विभिन्न सीमाओं (varying degree) तक इसे अतिशीतित (supercooled) किया जा सकता है। कुछ विशेष यौगिक पानी में शून्य या उससे नीचे के तापमान पर बर्फ के क्रिस्टलों का निर्माण प्रेरित करते हैं। पत्तियों की सतह पर रहने वाले कुछ विशेष जीवाणु ठंडी जलवायु में ऐसी प्रोटीनें बना डालते हैं, जो बर्फ बनने की क्रिया को शुरू कर सकते हैं। इन प्रोटीनों को **हिम नाभिकन प्रोटीन** (ice nucleation proteins) कहा जाता है। पौधे की सतह पर इन प्रोटीनों की मौजूदगी अंतःकोशिकीय हिमीकरण से पहले बाहरी जल को जमाने का काम करती है। इनसे पादप कोशिकाएं ऊष्मारोधित हो जाती है तथा उनका अधिक गंभीर क्षति से आंशिक रूप से बचाव हो जाता है।

जान लेवा तापमानों में पौधों की शीत सहनशीलता और अहिमीकृत जल की प्रतिशत मात्रा के बीच महत्वपूर्ण सहसंबंध (correlation) होता है। आलू में पाई जाने वाली शीत सहनशीलता कोशिका बाह्य का हिमीकरण से बचाव के कारण है। शीत-सहनशील पौधों में शायद ऐसी प्रोटीनें होती हैं, जो हिमांक तापमान में सामान्य प्रोटीनों की तुलना में कहीं ज्यादा स्थिर (stable) होती हैं।

ठंडे वातावरण में अनुकूलन की प्रक्रिया यानि शीत-पर्यनुकूलन को प्रभावित करने वाले कारक हैं—दीप्तिकाल (photoperiod), प्रकाश तीव्रता (light intensity) और उसकी गुणवत्ता (quality), पानी की प्राप्यता और पर्यावरण में पोषक तत्वों के स्तर आदि। आलू के पौधों को दिन-रात कम तापमान में रखकर या फिर धीरे-धीरे चरणों (stepwise) में तापमान को कम करके शीत स्थितियों के लिए अनुकूलित किया जा सकता है। शीत-पर्यनुकूलन की प्रक्रिया में प्लैज्मा झिल्ली में बदलाव, विलयशील प्रोटीनों के स्तर में वृद्धि और मुक्त एबसिसिक अम्ल की मात्रा में अस्थायी वृद्धि शामिल हैं। इनके साथ-साथ शीत-पर्यनुकूलन प्रोटीनों (cold acclimation proteins — CAPs) का संश्लेषण भी होता है। ये प्रोटीनें क्लोरोप्लास्ट की झिल्लियों को हिमीकरण से होने वाले नुकसानों से बचाती हैं।

7. आप्लावन के प्रति अनुक्रिया (Response to flooding)

लम्बे समय तक आप्लावन या पानी का जमावड़ा (जलाक्रांति) बने रहने पर पौधे के डूबे भागों के लिए अवायुवीय (ऑक्सीजन विहीन) स्थिति पैदा हो जाती है। इस स्थिति में ऐल्कोहॉल डिहाइड्रोजिनेस (ADH) एंज़ाइम का संश्लेषण पौधे को अवायुवीय श्वसन द्वारा आवश्यक ऊर्जा पैदा करने में मदद करता है (संदर्भ के लिए LSE-01 की इकाई-12 पढ़ें)।

अवायुवीय वातावरण ऊष्मा प्रघात प्रोटीनों की तरह नए प्रकार की प्रोटीनों के संश्लेषण को प्रेरित करता है। मगर ये प्रोटीनें ऊष्मा प्रघात प्रोटीनों से भिन्न होती हैं। ऊष्मा प्रघात अनुक्रिया की भांति ही अवायुवीय अनुक्रिया पहले से मौजूद प्रोटीनों के संश्लेषण को दबा देती है और अवायुवीय अनुक्रिया प्रोटीनों (anaerobic response proteins-ANP's) के संश्लेषण को प्रेरित करती है।

8. संक्रमण के प्रति अनुक्रिया (Response to infection)

i) हाइड्रोलेसो का उत्प्रेरण (Induction of hydrolases)

रोगाणुओं का हमला होने पर पौधे में अनुक्रिया होती है। हमलावर रोगाणुओं को फैलने से रोकने के लिए पौधे की कोशिकाएं ऐसे एंज़ाइमों का संश्लेषण करती है और उन्हें स्रावित करती हैं, जो इन रोगाणुओं की कोशिका-भित्ति के पदार्थों का जल अपघटन कर देते हैं। बहुत से रोगजनक कवकों की कोशिका भित्तियों के महत्वपूर्ण घटक हैं—काइटिन (chitin) और β-1, 3 ग्लूकैन (β-1, 3 glucan)। इनके विघटन के लिए पादपों में एंजाइमों का होना आवश्यक है। रोगाणुओं का संक्रमण इन बहुलकों के विघटन के लिए काइटिनेस (chitinase) और β-1, 3-ग्लूकैनेस (β-1, 3 glucanase) एंज़ाइमों के निर्माण को प्रेरित करता है। संक्रमण के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप लाइसोज़ाइमों (lysozymes) का संश्लेषण भी प्रेरित होता है।

ii) एथिलीन का उत्पादन (Production of ethylene)

संक्रमण के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप एथिलीन का भी उत्पादन होता है। इसका उत्पादन क्षत (wound) होने या शाकनाशी के अनुप्रयोग से उत्पन्न तनाव को स्थितियों में भी होता है।

iii) प्रतिजीवाणुक पदार्थों का प्रेरण (Induction of antimicrobial substances)

फ़ाइटोऐलेक्सिन (phytoalexin) प्रतिजीवाणुक (antimicrobial) पदार्थ है। जो पौधों की रोगजनको (pathogens) के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। ये पदार्थ संक्रमण स्थल पर जमा हो जाते हैं। उदाहरण के लिए सोयाबीन *(Glycine max)* जब *फ़ाइटोफ्थोरा मैगास्पर्मा (Phytophthora megasperma)* नाम के कवक से संक्रमित होता है, तो इसमें फाइटोऐलेक्सिन ग्लिसेओलीन (phytoalexin glyceollin) नामक रसायन जमा हो जाता है। कवक की कोशिका भित्ति से निकाला गया ग्लूकैन भी ग्लिसेओलीन के संश्लेषण को प्रेरित कर सकता है। ऐसे पदार्थ जो लक्ष्य कोशिका में वैसी ही अनुक्रिया को प्रेरित करते हैं, जैसी रोगाणुओं के कारण पैदा होती है, ऐलिसिटर (elicitor) कहलाते हैं। फाइटोऐलेक्सिन को अगर कृत्रिम जीन अंतरण (artificial gene transfer) के द्वारा पौधों में ही उत्पन्न किया जा सके तो संभवतया रोगरोधी (disease-resistant) फसलें प्राप्त हो सकेंगी।

iv) विषाणुओं के प्रचुरोद्भवन में हस्तक्षेप करने वाले पदार्थों का उत्पादन (Production of substances interfering with virus proliferation)

कभी-कभार पौधे ऐसे रसायनों का संश्लेषण भी करते हैं, जो रोगाणुओं के महत्वपूर्ण प्रकार्यों को अवरुद्ध कर देते हैं। इससे पौधे अपने हमलावर रोगाणुओं के प्रति प्रतिरक्षित या असंक्राम्य (immune) हो जाते हैं। आइए जरा देखें कि किसी पौधे पर लोबिया मोजैक विषाणु (cowpea mosaic virus) का संक्रमण होने पर क्या होता है। लोबिया की कुछ कृपजोप जातियाँ विषाणु के प्रोटीनेज़ एंज़ाइम की क्रियाशीलता अवरुद्ध करने के लिए एक सक्षम निरोधक पैदा करती हैं। प्रोटीनेस एंज़ाइम विषाणु के जीवन चक्र को पूरा करने के लिए आवश्यक होता है। ये किस्में मोजैक विषाणुओं के प्रति असंक्राम्य प्रतीत होती हैं। कई पौधों की विषाणुओं के प्रति पाई जाने वाली प्रतिरोधकता निष्क्रिय (passive) प्रकार की होती है। उदाहरण के लिए यांत्रिक अवरोध (mechanical barrier), विषाणु के लिए संयोज्य संक्रमण स्थल (lack of compatible site) या विषाणु की विषाणु प्रतिकृति (replication) बनाने के लिए उपापचयजों कमी। इसके अतिरिक्त प्रतिरोधकता का एक निश्चित अंश पौधों द्वारा सक्रिय अनुक्रिया के कारण होता है। इसमें विषाणुओं द्वारा संक्रमण, उनका फैलना और साथ ही विषाणु प्रतिकृति में बाधा डालने वाले अवरोधी पदार्थों का संश्लेषण आते हैं।

v) ऊष्मा प्रघात द्वारा पौधों में रोग रोधकता का प्रेरण (Induction of heat resistance in plants by heat shock)

क्लैडोस्पोरियम कुकुमेरिनम (Cladosporium cucumerinum) नामक कवक खीरे के पौधे में संक्रमण कर उसमें रोग पैदा कर देती है। अगर खीरे की पौध को कवक के प्रायोगिक संरोपण (inoculation) से पहले 40 सेकंड तक 50° से. के तापमान वाले पानी में डुबा दिया जाए, तो रोग के लक्षण 60 प्रतिशत कम हो जाते हैं। इस तरह गरम पानी में डालने के 24 घंटे से 30 घंटे बाद प्रतिरोधकता पैदा होती है, जो दो दिन तक प्रभावशाली रहती है। इस प्रकार उपचारित (treated)

जैवरासायनिक युद्ध : जन्तु हॉर्मोन की नकल करने वाले पादप रासायनिक : कीड़े-मकोड़े और शाकाहारी जन्तु बहुत अधिक खाते हैं। वे पौधे की पत्तियाँ और दूसरे हिस्सों को खा जाते हैं। स्वयं को बचाने के लिए पौधों के पास कुछ साधन हैं। इनमें से कुछ पौधे, कीड़ों को मारने के लिए जहरीले रसायन बनाते हैं। जबकि कुछ पौधे कुछ कीड़ों के वृद्धि हॉर्मोनों में गड़बड़ी कर देते हैं। साथ ही ये कायांतरण (morphogenesis) की प्रक्रिया में बाधा पहुंचाकर कीड़ों की वृद्धि और परिवर्धन की अवस्थाओं को रोक देते हैं। देवदार (firs), स्प्रूस (spruce) और यू (yews) जाति के पौधे इसके उदाहरण हैं। अब चूंकि कीड़े वयस्क नहीं बन पाते, इसलिए वे न तो प्रजनन कर पाते हैं और न ही उनकी जनसंख्या बढ़ पाती है। वैज्ञानिक इन पर शोध कार्य कर रहे हैं कि इन समान दिखने वाले (lookalike) हॉर्मोनों को, कृषि कीटों पर काबू पाने के लिए कीटनाशक बनाया जा सकता है या नहीं। इसमें सफलता मिलने से कृषि को नुकसान पहुंचाने वाले कीटों पर काबू किया जा सकेगा।

पौधों में सबसे पहले दिखाई देने वाला प्रभाव एथिलीन के उत्पादन में वृद्धि है। खीरे के पौधे की प्रतिरोधकता बढ़ने के साथ-साथ कोशिका भित्ति से जुड़े घुलनशील परऑक्सीडेस (peroxidase) एंज़ाइम के स्तर में भी वृद्धि आती है।

प्रोटीनेज़ निरोधक (proteinase inhibitor) : तनाव की स्थितियों में पौधे में उत्पन्न होने वाले कुछ खास कारक जो प्रोटीनेज़ एन्ज़ाइमों के रोधक होते हैं और इस प्रकार कुछ प्रोटीनों के जलापघटन को रोकते हैं।

एन्डोपेप्टिडेस (endopeptidase) : यह एन्ज़ाइम प्रोटीन शृंखला का विखंडन एक सिरे से शुरू न करके शृंखला के बीच-बीच में करता है।

ऑलिगोमैरिक खंड (oligomeric fragment): बहुलक जो कम से कम पांच या अधिक इकाइयों का बना हो।

कीड़ों की कायांतरण को बाधा पहुंचाने वाले पादप रासायनिक : इन रसायनों का समूह प्रिकोसीन (precocene) कहलाता है। यह समूह कीड़ों में असामान्य कायांतरण लाता है। यानि उनका कायांतरण समय से पहले हो जाता है। प्रिकोसीन कीड़ों में होने वाले कायांतरण को नियमित करने वाले नव हार्मोन के स्राव में बाधा पहुंचाता है। इससे ऐसे वयस्क कीट बनते हैं, जो असल में लैंगिक रूप से वयस्क नहीं होते और इस तरह प्रजनन नहीं करते। इससे कीटों की जनसंख्या अपने आप कम हो जाती है।

9. क्षत के प्रति अनुक्रिया (Response to wounding)

जल अपघटनकारी एंज़ाइमों के निरोधकों का संश्लेषण (Induction of synthesis of inhibitors of hydrolytic enzymes)

टमाटर के पौधे के किसी हिस्से में चोट लगने या कीड़ों के खाने से जो क्षति होती है, उससे एक कारक का मोचन (release) होता है जिससे समूचे पौधे में दो प्रोटीनेस निरोधकों का संचयन शुरू हो जाता है। ये प्रोटीनेस सेरीन एंडोपेप्टिडेस (serine endopeptidase) के निरोधक होते हैं। कोशिका भित्ति से व्युत्पन्न हुए पेक्टिक ऑलिगोमैरिक खंड (pectic oligomeric fragments) भी प्रोटीनेस निरोधकों को पैदा कर सकते हैं, यानि ये एलिसिटर की तरह काम करते हैं। वास्तव में, कोशिका भित्ति खंडों (cell wall fragments) को पादप प्रतिरक्षा अनुक्रियाओं का सामान्यीकृत (generalised) एलिसिटर माना जाता है। इनमें विभिन्न पौधों में होने वाला फ़ाइटोऐलेक्सिन का संश्लेषण भी शामिल है। कटे पादप ऊतकों में इन खंडों में होने वाले प्रोटीनेस निरोधक के प्रेरण का तरीका भी बिल्कुल यांत्रिक क्षति (mechanical injury) से होने वाली अनुक्रिया जैसा ही होता है।

10. जहरीले पदार्थों से पौधों का बचाव (Protection against toxic substances)

पौधे खुद कई तरह के जहरीले पदार्थ पैदा करते हैं। साथ ही दूसरे पौधों से पैदा होने वाले या पर्यावरण में मौजूद जहरीले पदार्थों के सम्पर्क में भी आ सकते हैं। पौधे इन जहरीले पदार्थों के प्रभाव को एक बड़े नायाब तरीके से रोकते हैं। दरअसल इन्हें पौधों के अंगों के कुछ हिस्सों (जैसे—बीज, जड़ों तथा पत्तियों), या ऊतकों (जैसे—बाह्यत्वचीय परत और स्पंजी पर्णमध्योतक), या कोशिकांगों (जैसे—रसधानियों और क्लोरोप्लास्टों), या फिर कोशिका द्रव्य से बाहरी स्थानों (जैसे—कोशिका भित्ति) तक ही सीमित कर दिया जाता है। इन जहरीले पदार्थों को विखंडित करने वाले एंज़ाइम भी इन्हीं हिस्सों में जमा होते हैं। अपने आप पैदा होने वाले (स्वजन्य) इन विषों को इनके अविषाक्त व्युत्पन्न (non-toxic derivatives) रूपों में जमा किया जाता है। एंज़ाइम जो स्वजन्य जहरीले पदार्थों को रूपान्तरित कर सकते हैं वह दूसरे जहरीले पदार्थों को भी बदल सकते हैं। पौधों ने ऐसे एंज़ाइमों को बड़े शस्त्रागार (arsenal) की तरह विकसित कर लिया है, जो इन जहरीले यौगिकों के रासायनिक रूपांतरण को उत्प्रेरित करते हैं। कभी-कभी एंज़ाइमों का एक छोटा समूह उत्पन्न होता है, जिसमें से प्रत्येक, रसायनों के एक व्यापक समूह की ओर लक्षित होता है। पौधों में दोनों तरह के एंज़ाइम पाए गए हैं।

पौधों में प्रतिरक्षा अवरोधों का प्रेरण (Induction of defensive barriers in plants)

पौधों की तह पर जमा हुए कई तरह के बहुलक बाहरी आक्रमण या तनाव के प्रति एक प्रभावशाली अवरोध बनाते हैं। क्यूटिकल जो संरचनात्मक बहुलक क्यूटिन से बना होता है पौधों और उनके वातावरण के बीच एक बहुत बड़े अवरोधक का काम करता है। अकसर यह घुलनशील लिपिडों के एक जटिल मिश्रण में अंतर्निहित यानि जड़ा (embedded) होता है। ये लिपिड सामूहिक रूप से मोम कहलाते हैं। क्यूटिन हाइड्रॉक्सी वसा अम्लों (hydroxy-fatty acids) और हाइड्रॉक्सी-एपॉक्सी अम्लों (hydroxy-epoxy fatty acids) के एस्टरीकरण से बनता है। इसी तरह मोम में एक अन्य बहुलक अवरोधक सुबेरिन है।

क्षत होने से पादप अंगों में सुबेरिनीकरण (suberisation) की क्रिया शुरू हो जाती है। चाहे क्षत अंग का प्राकृतिक आवरण क्यूटिन युक्त क्यों न हो। शीत स्थितियों का सामना करने वाले पौधों में भी एलिफैटिक बहुलकों (aliphatic polymer) के जमाव में वृद्धि देखने में आती है। खनिज तत्वों की कमी के कारण होने वाली अनुक्रिया में विभिन्न पादप अंगों के सुबेरिनीकरण और क्यूटिनीकरण के स्तर में होने वाले बदलाव शामिल हैं।

नीचे के चित्र 18.8 में हमने पौधों में विभिन्न प्रकार की तनाव स्थितियों में होने वाली अनुक्रियाओं का सार दिया है। इससे आपको विस्तृत पाठ को समझने में आसानी होगी।

तनाव	अनुक्रियाएं
जल तनाव	ऐवसिसिक अम्ल में वृद्धि, प्रकाश संश्लेषण का प्रकासंदमन ABA के स्तर में वृद्धि
प्रकाश तनाव	प्रकाशसंश्लेषण का प्रकाशसंदमन
परासरणी तनाव	संयोज्य आयन—प्रोलीन, बीटाइन और ग्लाइसिन का जमाव पॉलिऐमीनों के स्तर में वृद्धि
ऊष्मा प्रघात	ऊष्मा प्रघात प्रोटीन
शीत अनुक्रिया	प्लैज्मा झिल्ली में बदलाव सुक्रोस का जमाव ऐवसिसिक अम्ल में वृद्धि
आप्लावन या जलाक्रांति	ऐल्कोहॉल डिहाइड्रोजेनेस का उत्पन्न होना अवायुवीय अनुक्रिया प्रोटीन (ANPs), ग्लाइकॉलिसिस मार्ग की प्रोटीन
भारी धातुएं और आर्सेनाइट	धातु को बांधने वाली प्रोटीनें
संक्रमण और घाव	जल-अपघटनकारी एंज़ाइमों का बनना प्रोटीनेज़ निरोधकों का उत्पन्न होना एथिलीन का बनना।

चित्र 18.8: विभिन्न प्रकार के तनावों में पौधों की अनुक्रियाएं।

बोध प्रश्न 3

क) किसी ऊतक का धीरे-धीरे शीतलन करने पर निम्नलिखित घटनाएं होती हैं। इन्हें उस क्रम में रखिए, जिसमें वे घटती है।

1) बाह्यकोशिकीय हिमीकृत (जमा हुआ) द्रव्य कोशिका के भीतरी भागों के लिए ऊष्मारोधक का कार्य करता है।

2) कोशिका के चारों ओर बाह्यकोशिकीय हिमीकृत द्रव्य की मौजूदगी के कारण उस पर पड़ने वाले भौतिक तनाव की वजह से कोशिका का संकुचन होता है।

3) अंतःकोशिकीय द्रव्य अंतरकोशिकीय अवकाशों में आ जाते हैं।

4) बाह्यकोशिकीय द्रव्य जम जाता है।

ख) शीत पर्यनुकूलन से सम्बन्धित परिवर्तनों के बारे में बताइए।

....

....

....

....

ग) नीचे तालिका में दी गई अनुक्रियाओं के आगे तनाव के प्रकार लिखिए।

पौधों की अनुक्रियाएं	तनाव के प्रकार
i) बीटाइन का जमाव	
ii) ऐल्कॉहोल डिहाइड्रोजिनेस (ADH)	
iii) प्रकाशसंदमन	
iv) काइटिनेस	
v) प्रोटीनेस निरोधक	

18.6 भविष्य में संभावनाएं

तनाव की स्थितियों को सहने के लिए पेड़-पौधों ने कई तरह की क्रियाविधियां विकसित कर ली हैं। कई मामलों में हम सुस्पष्ट रूप से समझ सकते हैं कि तनाव वाली स्थितियों में भी पौधे किस तरह से स्वयं को जीवित रखकर कार्यशील रहते हैं। इस जानकारी के आधार पर पौधों की ऐसी किस्मों को कृषि के लिए निर्मित करना और प्रजनन द्वारा बढ़ाना, संभव होना चाहिए, जो हमारे देश या पृथ्वी के अन्य स्थानों पर चरम पर्यावरण की स्थिति को सहन कर सकें। चित्र 18.4 में हमारे देश के लवणता से प्रभावित क्षेत्रों को दिखाया गया है। लवणता को सहन करने वाली किस्मों को लगाने से ऐसे बड़े भू-भागों को हम उपयोग में ला सकते हैं।

तनाव सहनशील किस्मों के विकास का एक तरीका आनुवंशिक अभियांत्रिकी (genetic engineering) तकनीक है। इस तकनीक से हम जीन निकालकर उसे वांछित जीव में आरोपित कर सकते हैं। इससे नए जीवों में अंतरित जीन की अभिव्यक्ति होती है और फिर वे उसी जीव की तरह व्यवहार करने लगते हैं, जिस जीव से उस जीन को निकाला जाता है। यह किसी विशेष परिघटना से जुड़े जीन उत्पादों के निर्माण की ओर संकेत करता है। यदि इस परिघटना में एक या दो प्रोटीनें हों, तब आनुवंशिक अभियांत्रिकी तकनीक द्वारा हम इस लक्ष्य को और भी आसानी से पूरा कर सकते हैं। उदाहरण के लिए बीटाइन संश्लेषण के जीन को अगर किसी परासरणी तनाव के प्रति संवेदनशील पौधे में अंतरित किया जा सके तो पौधा शायद ऐसे तनाव को सहन करने की सामर्थ्य पा लेगा या पौधों में अगर कृत्रिम जीन अंतरण द्वारा फ़ाइटोऐलेक्सिन जैसे किसी एलिसिटर को पैदा किया जा सके, तो पौधों की रोगरोधी किस्मों का विकास किया जा सकेगा।

इन कार्यक्रमों के उद्देश्य साधारण फसली पौधों के लिए नीचे दिए गए गुणों को विकसित करने के लिए हो सकते हैं।

1. प्रकाश संश्लेषण का अ-प्रकाशसंदमन यानि प्रकाश संदमन का निषेध। खास तौर से ऊष्ण-कटिबंधों में। इससे हम उसी अवधि के अंदर जैव भार (biomass) को कई गुना बढ़ा सकते हैं। मगर शर्त यह है कि पानी और कार्बन डाइऑक्साइड की आपूर्ति को अ-सीमाकारी (non-limiting) स्तर पर रखा जाए।
2. मध्यतापरागी परासर से अधिक **उच्च तापमान पर रोधकता** या सहनशीलता पैदा होने पर ऐसे अनेक क्षेत्रों में खेती-बाड़ी की जा सकती है, जो असहनीय तापमान की वजह से बंजर रह जाते हैं। मगर इस लक्ष्य को पाने के लिए अपनायी जाने वाली कार्यनीति वातावरण में मौजूद पानी के स्तर पर निर्भर होगी।
3. खेती-बाड़ी वाली किस्मों में **शीत-सहनशीलता** का विकास कर लेने से, हम दुनिया के कुछेक उन हिस्सों में फसलों को अकसर होने वाले नुकसान को कम कर सकेंगे, जहां जाड़ों में तापमान बहुत कम हो जाया करता है।
4. फसल की किस्मों में **जलाभाव रोधकता** यानि सूखे की विकट स्थितियों में भी क्रियाशील रहने वाली पादप जातियां — हमारे देश की खेती-बाड़ी में बड़ी उपयोगी साबित होगी विशेषकर जहां सिंचाई मुख्य रूप से बारिश पर निर्भर है।

5. पौधों में **लवण-सहनशीलता** से ज्यादा से ज्यादा भू-भाग हरा-भरा बनेगा।
6. खेती के लिए अपनाई गई पादप जातियों में जिस गुण की सबसे ज्यादा तलाश की जाती है वह है, **रोग रोधकता**। इस गुण से मौजूदा पैदावार 20 से 50 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। यह पौधे और जलवायु कटिबंध क्षेत्र पर निर्भर करती है।
7. फसलों में परजीवियों के प्रति सहिष्णुता दो तरह से हासिल की जा सकती है। प्रोटीनेस निरोधकों के उत्पादन से या फिर ऐसे जीवाणुओं के जीन के उत्पादन से, जो पीड़कनाशी (pesticidal) प्रोटीनों के लिए कोड (code) बनाते हों। हालाँकि ऐसी फसलों की पोषण उपयोगिता सीमित रह जाएगी। परंतु कपास की खेती में जहाँ मुख्य रूप से विनौलों का महत्व होता है, 50% तक उपज में बढ़ोतरी की जा सकती है।

18.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा :

- प्रकाश, तापमान, पानी या मृदा आदि पर्यावरणीय स्थितियों की इष्टतम मांग में किसी भी तरह का विचलन, जो किसी जाति के पौधे की वृद्धि व विकास पर हानिकारक प्रभाव डालता है वह उस जाति के लिए तनाव है।
- तनाव निम्न पर्यावरणीय स्थितियों में भिन्निता होने के कारण हो सकता है :
  i) भौतिक : प्रकाश, तापमान, आसपास के द्रव्यों की परासरणी सांद्रता,
  ii) रासायनिक : विलेयों, खनिजों, प्रदूषक गैसों की प्रकृति, तथा
  iii) जैविक : रोगाणु व सहजीवी।
- पौधे अपनी कोशिकाओं के अणुओं की मात्रा और उनकी गुणवत्ता में बदलाव लाकर स्वयं को तनाव के अनुकूल बनाते हैं। तनाव का सामना करने के लिए वे या तो उपयुक्त वैकल्पिक उपापचयी मार्ग अपनाते हैं या फिर अपनी आकारकी और विवर्धन के क्रम को बदल डालते हैं।
- तनाव की प्रकृति के अनुसार पौधों की अनुक्रियाएं भिन्न-भिन्न होती हैं। वे परासरणी संतुलन को कायम रखने के लिए कुछ खास अणुओं के सांद्रण को बढ़ा सकते हैं। या ऐसे नये प्रोटीनों या एंज़ाइमों का संश्लेषण कर सकते हैं, जो उन्हें तापमान, प्रकाश, जल आप्लावन (जलाक्रांति), संक्रमण इत्यादि के कारण पड़ने वाले तनावों को सहने में मदद करते हों।
- तनाव की परिस्थिति में पौधों में होने वाली अनुक्रियाओं का अध्ययन बहुत उपयोगी जानकारी प्रदान करता है। तनावपूर्ण पर्यावरणीय स्थितियों के कारण फसलों, फलों, सब्जियों और दूसरे उपयोगी उत्पादों की पैदावार में होने वाली क्षति को आने वाले भविष्य में कम किया जा सकता है। यह आनुवंशिक अभियांत्रिकी तकनीक और दूसरे साधनों से संभव हो सकेगा। साथ में बंजर पड़ी जमीन को भी खेती-बाड़ी के काम में लाया जा सकेगा।

18.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. तनाव स्थितियों के प्रति अनुक्रिया के फलस्वरूप पौधों में नीचे दिए गए पदार्थ बनते हैं। इन पदार्थों के उत्पादन को प्रेरित करने वाले तनाव (तनावों) के प्रकार लिखिए। साथ में यह भी बताइए कि तनाव का सामना करने के लिए ये पदार्थ क्या कार्य करते हैं?

   i) पॉलिऐमीन,
   ii) धातु-संयोजी प्रोटीनें,
   iii) ऊष्मा प्रघात प्रोटीनें (HSPs),
   iv) अवायुवीय अनुक्रिया प्रोटीन (ANPs),
   v) ऐल्कोहॉल डिहाइड्रोजेनेस (ADH)

   ....
   ....

....
....
....
....
....
....
....
....

2. पौधों में पाए जाने वाले दो एलिसिटरों के नाम बताइए। वे किस तरह की अनुक्रियाओं को प्रेरित करते हैं?

....
....
....
....
....
....

3. पौधों की जहरीले पदार्थों के प्रति कैसी प्रतिक्रिया होती है?

....
....
....

4. जल और प्रकाश दोनों प्रकार के तनावों में प्रकाश संश्लेषण का प्रकाश संदमन क्यों होता है?

....
....
....

18.9 उत्तर

बोध प्रश्न

1) i) तापक्रम ii) प्रकाश, iii) वातन (aeration)
iv) वायुमंडलीय असंतुलन, v) परासरणी

2) i) प्रोटीन, विकृतीकरण, ii) राइब्युलोस बिसफ़ॉस्फेट कार्बोक्सिलेज़, iii) पुष्पन, अंकुरण
iv) एवसिसिक अम्ल

3) क) 4) i, 3) ii, 1) iii, 2) iv

ख) i) घुलनशील प्रोटीनों में वृद्धि
ii) प्लैज़्मा झिल्ली में परिवर्तन
iii) एवसिसिक अम्ल में अस्थायी वृद्धि
iv) शर्करा का जमाव

ग) i) परासरणी तनाव
ii) जलाक्रांति
iii) जल तनाव या प्रकाश तनाव

iv) कवकों का संक्रमण

v) घाव होगा

अंत में कुछ प्रश्न

1. i) **पॉलिऐमीन**—परासरणी तथा दूसरे तरह के तनावों के दौरान इनमें कई गुना वृद्धि हो जाती है। ये न्यूक्लीक अम्लों की विभिन्न संरूपीय अवस्थाओं को स्थिरता प्रदान करते हैं।

   ii) **धातु-संयोजी प्रोटीन**—संवेदनशील स्थलों से विषाक्त धातुओं को दूर रखने के लिए ये प्रोटीने धातुओं के साथ बंध बनाती हैं।

   iii) **ऊष्मा प्रघात प्रोटीनें**—ये महत्वपूर्ण कोशिका प्रोटीनों को अपने संरूपण को कायम रखने में मदद करती हैं ताकि वे घुलनशील अवस्था में रहें तथा कार्यशील रह सकें।

   iv) **अवायुवीय अनुक्रिया प्रोटीन**—ये पौधों को अवायुवीय यानि ऑक्सीजन विहीन स्थिति में जीवित रहने में मदद करती हैं।

   v) **ऐल्कोहॉल डिहाइड्रोजिनेस**—अवायुवीय श्वसन से ATP (ऊर्जा) पैदा करने के लिए इस एन्ज़ाइम द्वारा पाइरुवेट का उपापचयन होता है।

2. i) ग्लूकैन—फ़ाइटोऐलेक्सिन ग्लिसिओलिन जैसे प्रतिजीवाणु पदार्थों के संश्लेषण का प्रेरण और इनका संचय।

   ii) पेक्टिन खंड—प्रोटीनेस निरोधक का बनना या उसके निर्माण का प्रेरण।

3. i) पौधें के कुछ हिस्सों में जहरीले पदार्थों का संचय करते हैं।

   ii) रासायनिक दृष्टि से विषहीन व्युत्पन्नों में रूपांतरित हो जाते हैं।

4. **संकेत** : दोनों स्थितियों में रंध्र बंद हो जाते हैं।

शब्दावली

अल्पलवण मृदोद्भिद् (glycophyte): अपेक्षतया उच्च लवण सांद्रण के प्रति संवेदनशील पौधे।

अवनमन (depression) : किसी दमनकारी कारक का हटना, जिससे अनुलेखन सुगम हो सके।

उत्स्फुटन (bolting) : तने की लंबाई का तेजी से बढ़ना, जिसके बाद अकसर पुष्पन होता है।

कीलेटी अणु (chelating molecules) : ऐसे कार्बनिक अणु जो धातु आयनों को छल्ले के आकार में बांधकर धातु को अघुलनशील लवण के रूप में अवक्षेपित होने से बचाते हैं।

टर्पिनाइड (terpenoids): ऐसे यौगिकों का एक असमान समूह, जिनमें समान पांच कार्बनों वाली एक इकाई मौजूद होती है। (आइसोप्रीन इकाई—अगला सिरा (head)-CH_2-$C(CH_3)$ = CH-CH_3 —पिछला सिरा (tail)। दो इकाइयों वाले यौगिकों डाइटर्पिनॉइड और डेढ़ इकाई वाले यौगिकों को ससक्विटर्पिनाइड (sesquiterpenoid) कहा जाता है।

तापरागी (thermophile) : बहुत ज्यादा तापमान (80°C) में भी जीवित रहने वाले प्राणी। जैसे सल्फर स्रोत में रहने वाला जीवाणु।

दमन (repression) : किसी जीन से लगे नियामक अनुक्रम के साथ किसी कारक का बंधना और अनुलेखन प्रक्रिया को अवरुद्ध करना। यह सामान्यतया प्रोटीन होती है।

पॉलिऑल (polyol) : अनेक हाइड्रॉक्सी समूह वाले यौगिक।

फेनिल-ऐलानिन अमोनिया लायेस (Phenyl-alanine ammonia lyase) : सिनेमिक अम्ल बनाने के लिए फेनिल-ऐलानिन के विखंडन से अमोनिया को अलग होने की अभिक्रिया को उत्प्रेरित करने वाला एंज़ाइम।

लवणमृदोद्भिद् (halophyte) : उच्च लवण सांद्रता में उगने वाले पौधे।

विरोध (antagonism): जब दो यौगिक एक-दूसरे के विपरीत अनुक्रियाएं पैदा करते हैं तो इसे विरोध कहा जाता है।

संकर्म या योगवाहिता (synergism) : इसका मतलब मिलकर काम करना है। दो रसायनों का युग्म प्रभाव दो अलग-अलग घटकों के समूचे प्रभाव से अधिक होता है।

सरकेडियन (circadian) : जैव गतिविधियाँ, जैसे पर्ण गति जैसी घटना जो हर 24 घंटे के अंतराल बाद दुहराई जाती है।